सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

९

(सितम्बर १९०८ – नवम्बर १९०९)

गांधीजी — लंदनमें, १९०९

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

९

(सितम्बर १९०८ – नवम्बर १९०९)

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मन्त्रालय

भारत सरकार

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक ट्रस्ट और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट, और गुजरात विद्यापीठ ग्रंथालय, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि तथा संग्रहालय, नई दिल्ली; भारत सेवक समिति (सर्वेंट्स ऑफ़ इंडिया सोसाइटी), पूना; कलोनियल ऑफ़िस तथा इंडिया ऑफ़िस पुस्तकालय, लन्दन; प्रिटोरिया आर्काइव्ज़, प्रिटोरिया; श्री छगनलाल गांधी, अहमदाबाद; श्री अरुण गांधी, बम्बई; श्री अल्बर्ट वेस्ट; श्री सी० एम० डोक; स्वर्गीय श्री एच० एस० एल० पोलक; श्री लुई फिशर; श्री नारणदास गांधी; श्रीमती सुशीलाबेन गांधी; तथा 'बापूना बाने पत्रो', 'इजिप्टनो उद्धारक अथवा मुस्तफा कामेल पाशानो जीवनचरित्र तथा बीजा लेखो', 'गांधीजीना पत्रो', 'गांधीजीनी साधना', 'जीवननुं परोढ', 'महात्मा', 'लाइफ़ ऑफ़ मोहनदास करमचन्द गांधी', 'एम० के० गांधी: एन इंडियन पेट्रिअट इन साउथ आफ्रिका' (मो० क० गांधी: दक्षिण आफ्रिकामें एक भारतीय देशभक्त), 'एम० के० गांधी ऐंड साउथ आफ्रिकन इंडियन प्रॉब्लम, (मो० क० गांधी और दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी समस्या) तथा 'टॉल्स्टॉय ऐंड गांधी' आदिके प्रकाशक; और 'इंडिया', 'इंडियन ओपिनियन', 'केप टाइम्स', 'गुजराती', 'नेटाल मर्क्युरी', 'रैंड डेली मेल', 'स्टार', तथा 'ट्रान्सवाल लीडर' आदि समाचारपत्रोंके आभारी हैं।

अनुसंधान और संदर्भकी सुविधाके लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, गांधी स्मारक संग्रहालय, इंडियन कौंसिल ऑफ़ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, और सूचना एवं प्रसारण मंत्रालयके अनुसंधान तथा संदर्भ विभाग, नई दिल्ली; साबरमती संग्रहालय और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली; और कागजातकी फोटो-नकलें तैयार करनेमें सहायताके लिए सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालयका फोटो विभाग हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

पाठकोंको सूचना

विभिन्न अधिकारियोंको लिखे गये प्रार्थनापत्र और निवेदन, अखबारोंको भेजे गये पत्र और सभाओंमें स्वीकृत किये गये प्रस्ताव, जो इस खण्डमें सम्मिलित किये गये हैं, उनको गांधीजीका लिखा माननेके कारण वैसे ही हैं जैसे कि खण्ड १ की भूमिकामें दिये जा चुके हैं। जहाँ किसी लेखको सम्मिलित करनेके विशेष कारण हैं, वहाँ वे पादटिप्पणीमें बता दिये गये हैं। 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित गांधीजीके लेख, जिनपर उनके हस्ताक्षर नहीं हैं, उनकी आत्मकथा-सम्बन्धी लेखोंकी सामान्य साक्षी, उनके सहयोगी श्री छगनलाल गांधी और हेनरी एस० एल० पोलककी सम्मति और अन्य उपलब्ध प्रमाण-सामग्रीके आधारपर पहचाने गये हैं।

अंग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करनेमें अनुवादको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है। किन्तु साथ ही अनुवादकी भाषा सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। अनुवाद मूल सामग्रीकी छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारनेके बाद किया गया है और मूलमें व्यवहृत शब्दोंके संक्षिप्त रूप यथासम्भव पूरे करके दिये गये हैं। यह ध्यान रखा गया है कि नामोंको सामान्यतः जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखा जाये। जिन नामोंके उच्चारण सन्दिग्ध हैं उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजीने अपने गुजराती लेखोंमें लिखा है।

मूल सामग्रीके बीचमें चौकोर कोष्ठकोंमें दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गांधीजीने किसी लेख, भाषण, वक्तव्य आदिका जो अंश मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोड़-कर गहरी स्याहीमें छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अंश अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोड़कर, साधारण टाइपमें ही छापा गया है। इस खण्डमें उपलब्ध भाषणोंके परोक्ष विवरण और न्यायालयोंके कार्य-विवरण तथा वे शब्द, जो गांधीजीके कहे हुए नहीं हैं, बिना हाशिया छोड़े, गहरी स्याहीमें छापे गये हैं।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दायें कोनेमें ऊपर दी गयी है, किन्तु जहाँ वह उपलब्ध नहीं है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे और चौकोर कोष्ठकोंमें की गई है और जहाँ आवश्यक हुआ है, उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है।

'सत्यना प्रयोगो अथवा आत्मकथा' और 'दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास' के अनेक संस्करण होनेसे उनकी पृष्ठ-संख्याएँ विभिन्न हैं, इसलिए हवाला देनेमें केवल उनके भाग और अध्यायका ही उल्लेख किया गया है।

साधन-सूत्रोंमें एस० एन० संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध सामग्रीका, जी० एन० गांधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागजपत्रोंका और सी० डब्ल्यू० कलेक्टेड वर्क्स ऑफ़ महात्मा गांधी (सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय) द्वारा संगृहीत पत्रोंका सूचक है।

पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ सामग्री परिशिष्टोंमें दे दी गई है। अन्तमें साधन-सूत्रोंकी सूची, इस खण्डसे सम्बन्धित कालका तारीखवार-वृत्तान्त और इस खण्डकी पारिभाषिक शब्दावली भी दी गई है।

प्रस्तावना

इस खण्डमें सितम्बर १९०८ से नवम्बर १९०९ तक की सामग्री दी गई है। इसका आरम्भ ट्रान्सवालके सत्याग्रह-आन्दोलनमें तेजी आने और अन्त लन्दनसे गांधीजीके जानेके साथ होता है। वे चार महीने तक ट्रान्सवालकी समस्याको बातचीत द्वारा सुलझानेका अनवरत प्रयत्न करते रहे। किन्तु वह निष्फल हुआ। राजनीतिक झगड़ोंको हल करनेके लिए संघर्षके साथ-साथ समझौतेका प्रयत्न करते रहना गांधीजीके सत्याग्रह-दर्शनका मूल तत्त्व था। सार्वजनिक परिस्थितियोंके पीछे जीवनके प्रति सर्वदा ही उनका एक निश्चित नैतिक दृष्टिकोण रहता था। इस कालमें सत्याग्रहकी उनकी कल्पनाके साथ ही हम उनके उक्त नैतिक दृष्टिकोणको भी एक निश्चित स्वरूप प्राप्त करते हुए पाते हैं।

सन् १९०८के अगस्त मासके उत्तरार्द्धमें पंजीयन-प्रमाणपत्रोंकी जो सामूहिक होली जलाई गई, उसने सत्याग्रहके पुनरारम्भके लिए एक नाटकीय पृष्ठभूमि तैयार कर दी थी। सितम्बर २ के सरकारी 'गज़ट' में एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम प्रकाशित हुआ। यह अधिनियम स्वेच्छया पंजीयनको तो वैध करता था, लेकिन १९०७के उस क्षोभजनक अधिनियम २ को रद नहीं करता था जिसे गांधीजीके कथनानुसार स्मट्सने रद करनेका वादा किया था। अधिनियमको रद कराने और शिक्षित भारतीयोंके लिए उपनिवेशमें प्रवेशका अधिकार प्राप्त करनेके लिए गांधीजीको सत्याग्रहके अलावा कोई दूसरा चारा दिखाई नहीं पड़ा। यथार्थ सत्याग्रह आरम्भ करनेसे पहले उन्होंने दूसरे रास्तोंसे परिस्थिति सुधारनेके प्रयत्न किये। सितम्बर ९ को ब्रिटिश भारतीय संघने उपनिवेश-मन्त्रीको एक निवेदनपत्र भेजा। पठानों, पंजाबियों और भूतपूर्व सैनिकों आदि भारतीय समाजके विभिन्न वर्गोंने भी प्रार्थनापत्र भेजे। लगभग इसी समय गांधीजी और उनके सहयोगी हॉस्केनसे मिले और समझौतेके लिए जो कम-से-कम शर्तें हो सकती थीं, उन्हें उनके सामने रखा। लेकिन ये सारे प्रयत्न विफल हुए।

एक शिक्षित भारतीयके नाते प्रवेशके अपने अधिकारको दृढ़तापूर्वक जतानेके विचारसे डर्बनके एक प्रमुख पारसी सज्जन — सोराबजी — नेटालकी सीमा पार करके ट्रान्सवालमें दाखिल हुए। इस घटनाके साथ ही सत्याग्रहने अपने दूसरे चरणमें प्रवेश किया। इस बार गिरफ्तार किये गये सत्याग्रहियोंको सख्त कैदकी सजाएँ दी गईं। स्वयं गांधीजीको ट्रान्सवालकी सीमामें प्रवेश करने, और अपना पंजीयनपत्र न दिखा सकनेके कारण दो-दो बार जेलकी सजा भोगनी पड़ी; वे अपना प्रमाणपत्र तो पहले ही आगको होम चुके थे। अक्तूबर १३, १९०८को उन्हें दो महीनेकी, और फिर फरवरी २५, १९०९को ३ महीनेकी जेलकी सजा हुई, और दोनों बार सख्त कैद मिली। गांधीजीने बादमें लिखा कि जेलमें रहते हुए वे "अपने-आपको ट्रान्सवालका सबसे सुखी आदमी" मानते थे। सामान्य अधिकारोंसे वंचित होकर अपमानजनक जीवन जीनेकी अपेक्षा वे जेल भोगना बेहतर समझते थे। 'इंडियन ओपिनियन' में जेलके अपने अनुभवोंके बारेमें लिखते हुए उन्होंने उन अनेक कष्टोंका जिक्र किया जो उन्हें अन्य भारतीय कैदियोंके साथ भोगने पड़े थे। उदाहरणार्थ, जेलमें खुराक अपर्याप्त और अनुपयुक्त थी। उन्होंने खुराकमें सुधारके लिए प्रार्थनापत्र दिये, और जो खुराक

मिलती थी उसके प्रति असन्तोष और रोष व्यक्त किया, किन्तु किसी विशेष रियायतको केवल अपने लिए लेनेसे इनकार कर दिया। "कठोर कारावास" का मतलब कभी सड़क बनाना, कभी नगरपालिकाके वाटर वर्क्सकी सफाई करना, कभी सैनिकोंकी कब्रोंकी सुधराई करना, कभी जेलके फर्श और दरवाजोंको झाड़ना-पोंछना आदि होता था। गांधीजीने ये सब काम सहर्ष किये। एक बार उन्हें कैदियोंकी वर्दीमें अपना सारा सामान लादे हुए जोहानिसबर्ग रेलवे स्टेशनसे जोहानिसबर्ग जेल तक पैदल ले जाया गया। एक दूसरे मौकेपर वे चोर-डाकुओंकी तरह हथकड़ी पहनाकर गवाही देनेके लिए अदालत पैदल ले जाये गये। गांधीजीने अपने इन अनुभवोंकी बात बिना किसी प्रकारकी कटुता महसूस किये, बड़े शालीन और अक्सर बड़े ही पुरमजाक ढंगसे लिखी। इन अनुभवोंका उनपर अगर कोई असर हुआ तो यह कि तात्त्विक दृष्टिसे सोचनेका उनका स्वभाव और भी दृढ़ हो गया। किन्तु उनके साथ होनेवाले दुर्व्यवहारकी खबर एच० एस० एल० पोलकके द्वारा प्रकाशमें आई और दक्षिण आफ्रिकाके समाचारपत्रोंमें इसकी बड़ी चर्चा हुई। परिणामत: ब्रिटेनकी संसदमें इसपर प्रश्न पूछे गये। अधिकारियोंने कैफियत दी कि गांधीजी किसी विशेष सुविधाके हकदार नहीं थे। सच तो यह है कि गांधीजीने किसी प्रकारकी विशेष सुविधाकी कभी भी इच्छा ही नहीं की। नवम्बर १९०८ में जब कस्तूरबा सख्त बीमार थीं, उस समय गांधीजीका उनके पास होना जरूरी था। वे स्वयं ऐसा चाहते भी थे। लेकिन उन्होंने जुर्माना देकर जेलसे रिहाई पाना स्वीकार नहीं किया।

भारतीयोंका जन-आन्दोलन जारी रहा। धरना देना, बिना परवाना फेरी लगाना और व्यापार करना, माँगनेपर पंजीयन-प्रमाणपत्र न दिखाना, अँगूठोंकी छाप देनेसे इनकार करना, और नेटालकी सीमा पार करके ट्रान्सवालमें प्रवेश-निषेधका उल्लंघन करना — इन सभी रूपोंमें वह चलता रहा। संघर्षका एक नया और महत्त्वपूर्ण पहलू यह था कि जो भारतीय महिलाएँ अबतक रूढ़ियोंके कारण इन सब चीजोंसे अलग रहती आई थीं, वे भी आगे आईं, और सत्याग्रहका समर्थन करनेके लिए उन्होंने एक महिला संघकी स्थापना की। सरकारने आन्दोलनका जवाब गिरफ्तारी, जुर्माने और सख्त कैदकी सजा तथा निर्वासनकी नीति अपनाकर दिया। निर्वासितोंको ट्रान्सवालकी सीमासे बाहर निकालकर पुर्तगाली अधिकारियोंके सहयोगसे डेलागोआ-बेके रास्ते भारत भेज दिया जाता था। जून १९०९ तक जेल जानेवालोंकी संख्या २,५०० तक पहुँच गई थी। अपने अन्तिम चरणमें सत्याग्रह आन्दोलनमें एक नई बात यह पैदा हुई कि बहुत-से प्रमुख भारतीय व्यापारियोंने अपना माल-असबाब तथा अन्य साधन-सामग्री अपने यूरोपीय साहूकारोंको सौंप देना बेहतर समझा, लेकिन व्यापारिक परवाने पानेके लिए अपने पंजीयन-प्रमाणपत्र दिखानेकी अपमानजनक स्थिति स्वीकार करनेसे उन्होंने इनकार कर दिया। इसके फलस्वरूप उन्हें बहुत कष्ट उठाने पड़े, यहाँतक कि कुछ लोग तो दिवालिया हो गये। किन्तु फिर भी सत्याग्रही अपने न्यायोचित संघर्षके सारे परिणाम झेलनेके लिए तैयार थे।

हॉस्केनकी अध्यक्षतामें संगठित यूरोपीय समिति यूरोपीयोंके एक ऐसे वर्गका प्रतिनिधित्व करती थी जो भारतीय समस्याके प्रति उदार दृष्टिकोण अपनानेका समर्थक था। इस समितिने ट्रान्सवालकी सरकारको इस विषयमें अनेक निवेदनपत्र दिये और ब्रिटेनके अखबारोंमें पत्र प्रकाशित कराये। किन्तु इन प्रयत्नोंका कोई ठोस परिणाम नहीं निकला। तथापि धीरे-धीरे

दक्षिण आफ्रिकाके समाचारपत्रोंका रुख सत्याग्रह आन्दोलनके प्रति कुछ मुलायम पड़ा। मई १९०९ में जब गांधीजी जेलसे छूटे, उस अवसरपर 'प्रिटोरिया न्यूज़' ने अपने सम्पादकीयमें कहा कि गांधीजी अन्तरात्माकी आवाजपर कष्ट भोग रहे हैं। उनका उद्देश्य "बहुत उच्च और उनके तरीके शुद्ध हैं।" उसने ट्रान्सवाल सरकारसे अनुरोध किया कि ऐसे व्यक्तिको बारम्बार जेल भेजनेकी जगह उसके सहयोगसे कुछ लाभ उठाना चाहिए। जून १९०९ में भारतीयोंके एक ऐसे वर्गने, जो अबतक सत्याग्रहसे दूर रहा था, एक समझौता-समिति स्थापित की। गांधीजीको इस समितिके प्रयत्नोंकी सफलतामें विश्वास नहीं था, फिर भी उन्होंने समितिके प्रति सद्भाव रखा। समितिकी माँगोंको जब जनरल स्मट्सने ठुकरा दिया तो गांधीजीको इसपर कोई आश्चर्य नहीं हुआ।

गांधीजी स्वयं सत्याग्रह जारी रखनेके पक्षमें थे, किन्तु अपने सहयोगियोंके विचारोंका आदर करते हुए उन्होंने जून १९०९ में समझौता-वार्ताकी दिशामें एक और "प्रयोग" करना स्वीकार कर लिया। सत्याग्रहका अमोघ अस्त्र तो हर हालतमें उनके पास था ही। परि-स्थितियाँ भी समझौता-वार्ताके पक्षमें लगती थीं। दक्षिण आफ्रिकी-उपनिवेशोंका संघ स्थापित करनेके प्रस्तावको अन्तिम रूप दिया जा रहा था। संघ-स्थापनाके इस प्रयत्नको दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय शंकाकी दृष्टिसे देख रहे थे। गांधीजीने भी देखा कि यदि साम्राज्यीय सरकार भारतीयोंको कुछ संवैधानिक संरक्षण दिये जानेका आग्रह नहीं करेगी तो सम्भावना इसी बातकी है कि संघ-सरकारके अधीन भारतीयोंकी दशा और भी खराब हो जायेगी और उन-पर अधिक निर्दय कानून थोप दिये जायेंगे। दक्षिण आफ्रिकाके राजनयिक नेता संघ-विधेयकके मसविदेपर विचार-विमर्शके लिए इंग्लैंड जा रहे थे। यह शीघ्र ही इंग्लैंडकी संसदमें पेश होनेवाला था। आम तौरपर यह अनुभव किया जा रहा था कि साम्राज्यीय सरकारके बीच-बचावसे एक सन्तोपजनक समझौता करानेका यह एक सुअवसर हो सकता है। गांधीजीने यह स्वीकार किया कि परिस्थिति देखते हुए यह उचित प्रतीत होता है कि एक शिष्टमण्डल इंग्लैंड जाये। जून १३ को ब्रि० भा० संघने दो शिष्टमण्डल — एक इंग्लैंड और एक भारत — भेजनेका निश्चय किया। इन शिष्टमण्डलोंका उद्देश्य इंग्लैंड और भारतकी जनताको ट्रान्सवालके संघर्षका महत्त्व बताना और साम्राज्यीय सरकारको हस्तक्षेप करनेके लिए राजी करना था। ट्रान्सवाल सरकारने आकस्मिक जवाबी कार्रवाई करके शिष्टमण्डलोंके ज्यादातर निर्वाचित सदस्योंको गिरफ्तार कर लिया। गांधीजीने सदस्योंको पैरोलपर छुड़ानेके प्रयत्न किये, पर विफल हुए। अस्तु, जून २३ को गांधीजी और हाजी हबीब, इन दो सदस्योंका एक शिष्टमण्डल इंग्लैंडके लिए रवाना हुआ। दूसरे शिष्टमण्डलमें एक ही सदस्य था — श्री पोलक।

जहाजपर गांधीजीकी सर रिचर्ड सॉलोमन, श्री मेरिमैन, श्री श्राइनर और श्री सॉवर-जैसे दक्षिण आफ्रिकी नेताओंसे बातचीत हुई, और उनके मनमें भारतीय संघर्षके प्रति सहानुभूति उत्पन्न करनेमें वे सफल हुए। यात्राके दौरान ही उन्होंने "ट्रान्सवालके भारतीयोंकी समस्या: एक संक्षिप्त वक्तव्य" का मसविदा भी तैयार किया। जुलाई १० को लन्दन पहुँचनेपर संवाद-दाताओंको भेंट देते हुए गांधीजीने यह स्पष्ट कर दिया कि मेरा यह शिष्टमण्डल इंग्लैंडमें दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके परामर्शके अनुसार कार्य करेगा। वे समितिके अध्यक्ष, लॉर्ड ऐम्टहिलसे मिले, और इंग्लैंडमें शिष्टमण्डल किस ढंगसे अपना कार्य करे, इसके बारेमें

विचार-विमर्श किया। लॉर्ड ऍम्टहिलके सुझावपर गांधीजीने "संक्षिप्त वक्तव्य" का प्रकाशन स्थगित कर दिया; साथ ही, यह भी तय किया कि जबतक निजी तौरपर होनेवाली समझौता-वार्ताओंका परिणाम स्पष्ट न हो जाये, तबतक वे सार्वजनिक रूपसे कोई काम न करेंगे। गांधीजीको लॉर्ड ऍम्टहिलमें असीम विश्वास था, और जैसा कि इन दोनोंके बीच हुए पत्र-व्यवहारसे प्रकट होता है, समझौता-वार्ताके बारेमें लॉर्ड ऍम्टहिलकी दी गई समस्त नीति-विषयक सलाहको उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया।

यह इतमीनान हो जानेके बाद कि गांधीजी और उनके सत्याग्रही अनुयायियोंका भारतके अतिवादियोंसे कोई सम्बन्ध नहीं है, लॉर्ड ऍम्टहिलने पूरी शक्तिसे ट्रान्सवालकी समस्याका कोई हल निकालनेका प्रयत्न शुरू किया। उन्हें विश्वास था कि भारतमें बढ़ते हुए असन्तोष और साम्राज्यीय हितोंके विचारसे समस्याको हल करना अत्यावश्यक है। ऐसे छोटे-छोटे मामलोंमें, जिनमें किसी सिद्धान्तका सवाल नहीं था, उन्होंने गांधीजीको समझौता करनेके लिए राजी पाया। लॉर्ड ऍम्टहिल जनरल बोथा और जनरल स्मट्ससे भी मिले, जो संघ-विधेयकके मसविदेके सिलसिलेमें उस समय इंग्लैंडमें ही थे। उन्होंने पहले तो गांधीजीसे यह आश्वासन लिया कि यदि काला कानून रद कर दिया गया और भारतीयोंकी सैद्धान्तिक समानता मान ली गई तो भारतीय आन्दोलनको आगे नहीं बढ़ायेंगे; इसके बाद उन्होंने स्मट्ससे कहा कि संघके निर्माणकी घड़ीमें इन माँगोंको स्वीकार करके ब्रिटिश भारतीयोंको निरुत्तर कर दिया जाये।

हाँ, यह ठीक है कि बातचीत गांधीजीने ही चलाई थी। वे लॉर्ड ऍम्टहिलसे बराबर सम्पर्क बनाये रखकर काम करते रहे; सर मंचरजी भावनगरी और न्यायमूर्ति अमीर अली-जैसे भारतीय नेता, सर रिचर्ड सॉलोमन, सर विलियम ली-वॉरनर और थियोडोर मॉरिसन-जैसे प्रभावशाली दक्षिण आफ्रिकी और अंग्रेज राजनयिकों और रेवरैंड एफ० बी० मायर तथा कुमारी फ्लॉरेन्स विंटरबॉटम-जैसे मित्रोंसे भी मिले।

सरकारी स्तरपर गांधीजी उपनिवेश मन्त्रालयमें लॉर्ड क्रू और इंडिया ऑफ़िसमें लॉर्ड मॉर्लेसे ही ज्यादा मिले-जुले। लॉर्ड क्रू को समझौतेकी कोई आशा नहीं थी और उन्होंने निःसंकोच रूपसे इसे स्वीकार किया। १९०७ के अधिनियम २ के बारेमें भारतीयोंकी आपत्तियोंको उपनिवेश मन्त्रालयकी १८ अगस्त १९०९ को लिखी गई एक टिप्पणीमें "कुटिल या निहायत भावुकतापूर्ण" बताया गया। गांधीजीके इस आग्रहका कि साम्राज्यके नागरिककी हैसियतसे भारतीयोंका, एक नियत संख्यामें ही सही, ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेका कानूनी "अधिकार" मान्य किया जाये, स्मट्सने हठपूर्वक विरोध किया। वे ज्यादासे-ज्यादा इस बातके लिए तैयार थे कि भारतीय प्रवासियोंकी एक सीमित संख्याको स्थायी अधिवासका प्रमाणपत्र दिया जाये। उपनिवेश मन्त्रालयने लाचारी प्रकट करते हुए कहा कि संवैधानिक दृष्टिसे उसके लिए यह सम्भव नहीं है कि वह दक्षिण आफ्रिकी राजनयिकोंसे उक्त मान्यता दिलवा सके। लॉर्ड ऍम्टहिलने हरचन्द कोशिश की कि उपनिवेश मन्त्रालय स्मट्सको गांधीजी द्वारा प्रवासी कानूनमें सुझाया गया संशोधन स्वीकार करनेके लिए किसी प्रकार तैयार करे, लेकिन वे नाकामयाब रहे।

नवम्बर ३ को यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया कि समझौता-वार्ता विफल हो गई है। उपनिवेश मन्त्रालयने गांधीजीको सूचित किया कि वह उन्हें ऐसा कोई आश्वासन देनेमें असमर्थ है कि प्रवास-सम्बन्धी सैद्धान्तिक समानताको मान्यता दिलाई जा सकेगी। नवम्बर ५ को

गांधीजीने जनमत तैयार करनेके लिए अभियान शुरू करते हुए ब्रिटेनके समाचारपत्रोंमें अपना १६ जुलाईका "वक्तव्य" प्रकाशनार्थ भेजा, जिसे वे अबतक लॉर्ड ऍम्टहिलके कहनेसे रोके हुए थे। उन्होंने इमर्सन क्लब, इंडियन सोशल यूनियन, और इंडियन यूनियन सोसाइटी द्वारा आयोजित सभाओंमें भाषण किये, जिनमें उन्होंने ट्रान्सवालके संघर्षका स्वरूप समझाया और जनतासे उसका समर्थन करनेका अनुरोध किया। गांधीजीने ट्रान्सवालके सत्याग्रहियोंसे सहानुभूति रखनेवाले अंग्रेजोंकी ओरसे भेजे जानेवाले एक स्मरणपत्र (मेमोरेंडम) का मसविदा तैयार किया और उसपर हस्ताक्षर कराने और चन्दा जमा करनेके लिए भारतीय और अंग्रेज स्वयंसेवकोंकी सेना तैयार की। ट्रान्सवालके प्रवासी-कानूनके विषयमें उपनिवेश मन्त्रालयको लिखे गये अपने अन्तिम पत्रमें उन्होंने आशा व्यक्त की कि रंगभेदका कलंक दूर करानेके लिए आगे भी लॉर्ड क्रू अपने प्रभावका उपयोग बराबर करते रहेंगे।

नवम्बर १० को गांधीजीने 'डेली एक्सप्रेस' के संवाददाताको बताया कि सत्याग्रह पूरे उत्साहके साथ जारी रहेगा। अगले दिन उन्होंने ब्रिटेनके समाचारपत्रोंसे अपील की कि वे ट्रान्सवालके संघर्षको अपना समर्थन प्रदान करें। नवम्बर १२ को अपनी विदाईके अवसरपर आयोजित एक सभामें उन्होंने ब्रिटेनके नेताओंसे अनुरोध किया कि वे ट्रान्सवालके आन्दोलनको उदार दृष्टिसे समझनेका प्रयत्न करें।

इस तमाम अवधिमें उनके दिमागमें सत्याग्रहका वास्तविक रूप घूम रहा था। उनके लेखों, भाषणों और पत्रोंमें सत्याग्रह-सम्बन्धी उनके विचार भरे पड़े हैं। जर्मिस्टनमें बोलते हुए उन्होंने कहा कि "अनाक्रामक प्रतिरोध" तो गलत नामकरण है। इसके पीछे जो विचार है वह "आत्म-बल" शब्दसे ज्यादा ठीक ढंगसे अभिव्यक्त होता है। यह "उतना ही पुराना है जितना पुराना इन्सान" और ईसा मसीह, डैनियल और सुकरात-जैसे लोगोंने इसका शुद्धतम रूपमें प्रयोग किया है। यह "आत्मबल मन्दिर आदि स्थानोंमें जाने-जैसे बाहरी उपचारोंमें बिलकुल नहीं हैं। सत्य और अभयको विकसित करना उसका पहला पाठ है" (पृष्ठ ३९२)। कष्ट-सहन उसमें सन्निहित है। "सत्याग्रही ज्यों-ज्यों कूटा जाये त्यों-त्यों उसका तेज प्रखर हो और उसकी हिम्मत भी बढ़े" (पृष्ठ ४४६)।

सत्याग्रहके तरीकेको गांधीजी "जीवनकी बहुत-सी बुराइयोंकी अचूक दवा मानते थे (पृष्ठ ३६२)। उनके विचारमें "किसी घोर अन्यायके विरुद्ध सीधा, सरल और शीघ्र न्याय पानेका मार्ग सत्याग्रह ही था।" (पृष्ठ ४४६)। उनका विश्वास था कि दक्षिण आफ्रिकामें कुल मिलाकर सत्याग्रह विफल नहीं हुआ। जून १९०९ में भेदभावकी व्यवस्था करनेवाले कानूनके विरुद्ध उसकी सफलताको उन्होंने उदाहरणके रूपमें बताया। ट्रान्सवालके भारतीयोंकी तरफसे लॉर्ड क्रू ने जो-कुछ कोशिश की थी उसका कारण भी, गांधीजीके अनुसार, भारतीयों द्वारा स्वेच्छासे कष्ट-सहन करना ही था। प्रबुद्ध वर्गोंमें शिष्टमण्डलने जो सहानुभूतिकी भावना उत्पन्न की थी उसकी झलक पादरी मायर द्वारा "विशुद्धतामें बेजोड़ और अत्यन्त निःस्वार्थ भावसे चलाये जानेवाले उस संघर्ष" के अनुमोदनमें मिलती है (पृष्ठ ५४५)।

लन्दनमें अपने अति व्यस्त कार्यक्रमके बावजूद गांधीजी भारतमें पोलकके साथ बराबर सम्पर्क बनाये रहे। उनके लम्बे-लम्बे पत्रोंसे, जिन्हें वे बहुत सुबह बोलकर लिखवाते थे, पूरी नीतिपर उनकी पकड़, छोटी-छोटी तफसीलोंका ध्यान रखनेकी क्षमता और सभी मामलोंमें मानवीय तत्वके प्रति चिन्ता प्रकट होती है।

गांधीजीके मनमें ट्रान्सवालके संघर्षके व्यापकतर परिणामोंका बिल्कुल स्पष्ट चित्र था। भारतकी जनता द्वारा संघर्षके व्यापकतर महत्त्वको समझनेमें देरका कारण, गांधीजीके अनुसार, आंशिक रूपसे उनका आत्म-शक्तिका अज्ञान था। उनकी निश्चित धारणा थी कि "क्या वे यह नहीं देख सकते कि ट्रान्सवालमें चलनेवाले प्रयत्नों और तदनुरूप भारतमें किये जानेवाले प्रयासोंका स्वरूप ही ऐसा है कि वे भारतको उसके लक्ष्यके अधिकाधिक निकट ले जायेंगे, और सो भी बहुत विशुद्ध तरीकेसे?" (पृष्ठ ४६२)। पोलकको लिखे अपने एक पत्रमें उन्होंने हैरत प्रकट करते हुए पूछा कि "क्या वे नहीं देख सकते कि इस लड़ाईके द्वारा हम मातृभूमि भारतकी सेवामें भविष्यके लिए एक अनुशासित सेना तैयार कर रहे हैं। यह सेना ऐसी होगी जो बड़ीसे-बड़ी वहशी ताकतका सामना होनेपर भी अपना जौहर दिखा सकेगी (पृष्ठ ४६२)। हिंसात्मक तरीकोंसे भारतकी स्वतंत्रता-प्राप्ति गांधीजी असम्भव और अवांछनीय मानते थे। उन्होंने पोलकके माध्यमसे अतिवादियोंको बताया कि "वे जो स्वतन्त्रता चाहते हैं, या उनका खयाल है कि उन्हें जिसकी जरूरत है, वह स्वतन्त्रता लोगोंको मारने या हिंसा करनेसे न मिलेगी।" (पृष्ठ ४८०)

यह काल इस दृष्टिसे भी महत्त्वपूर्ण है कि गांधीजीने इसी समय रूसी विचारक काउंट लियो टॉल्स्टॉयसे सम्पर्क स्थापित किया। टॉल्स्टॉयको गांधीजीने "इस सिद्धान्तका सबसे श्रेष्ठ और प्रसिद्ध व्याख्याकार" माना। सत्याग्रह आन्दोलनके बारेमें टॉल्स्टॉयको गांधीजीने लिखा: "मेरी रायमें ट्रान्सवालमें भारतीयोंका यह संघर्ष आधुनिक युगका सबसे महान संघर्ष है। . . . यदि यह आन्दोलन सफल होता है तो वह न सिर्फ अधर्म, असत्य और विद्वेषपर धर्म, सत्य और प्रेमकी विजय होगी, बल्कि बहुत सम्भव है कि वह भारतके लाखों-करोड़ों निवासियों और दुनियाके दूसरे हिस्सोंमें बसनेवाले पददलित लोगोंके लिए एक अनुकरणीय उदाहरण होगा।" (पृष्ठ ५३४) टॉल्स्टॉयने "ट्रान्सवालके अपने प्यारे भाइयों और सहयोगियोंके लिए ईश्वरीय सहायता मिलनेकी कामना व्यक्त की, और रूसमें भी "कठोरतासे कोमलताके, दर्प और हिंसासे विनम्रता व प्रेमके ठीक उसी संघर्ष" का जिक्र किया। (पृष्ठ ४८२-८३)।

इस खण्डमें हम आधुनिक सभ्यताके बारेमें गांधीजीके विचारोंको स्पष्ट होते हुए देखते हैं। मणिलाल गांधीको लिखे अपने पत्रोंमें और 'इंडियन ओपिनियन' को लिखे गये अपने संवादपत्रोंमें वे इस विषयकी चर्चा करते हैं। किन्तु पोलकको लिखे गये अपने अक्तूबर १४ के पत्रमें उन्होंने अपने उन "निश्चित निष्कर्षों" को स्पष्ट रूपसे व्यक्त किया जो उन्हें "सत्याग्रहकी सच्ची भावना" से प्राप्त हुए थे, और जिन्हें उन्होंने शीघ्र ही अपनी पुस्तक 'हिन्द स्वराज्य' में विस्तारसे लिखा। यह पुस्तक उन्होंने इंग्लैंडसे दक्षिण आफ्रिका वापस लौटते हुए जहाजपर लिखी।

विषय-सूची

चित्र-सूची

१. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी[1]

सोमवार [अगस्त ३१, १९०८]

संघर्ष किस प्रकार करें?

यदि समाचार देनेके पहले ऊपरके सवालका जवाब दे दिया जाये, तो पाठक ज्यादा समझ सकेंगे। आसपास देखनेसे जान पड़ता है कि इस बार संघर्षके बहुत सख्त और लम्बा होनेकी सम्भावना है। सरकार बहुत जुल्म करेगी। ऐसा नहीं लगता कि सारे भारतीय मिल-कर एक साथ शक्ति लगायेंगे। जलानेके लिए जितने प्रमाणपत्र आने चाहिए थे, उतने नहीं आये। कुल मिलाकर २,३०० प्रमाणपत्र जलाये गये हैं। यह संख्या बुरी नहीं है, किन्तु संघर्षका अन्त जल्दी लानेके खयालसे कम है।

फिर, यह भी देखा गया है कि कुछ लोग पंजीयन कराने पंजीयन कार्यालय (रजिस्ट्रेशन ऑफिस) जाते रहते हैं। जोहानिसबर्गमें गत शुक्रवारको लगभग २५ भारतीय गये। इस बातसे सरकारको यह अनुमान लगानेका अधिकार है कि बहुत-से भारतीय कानूनकी अधीनता स्वीकार कर लेंगे।

फिलहाल खूनी कानूनको[2] माननेकी बात तो नहीं बची है; फिर भी नये कानूनको[3] न माननेपर ही हमारे शेष संघर्षकी जीत निर्भर है। नया विधेयक (बिल) अभीतक तो कानून नहीं बना है। उसपर सम्राट्के हस्ताक्षर नहीं हुए हैं। किन्तु हस्ताक्षर हो जानेपर भी उसका विरोध करना आवश्यक है।

अब हमें यह भी मान लेना है कि जिन्होंने जलानेके लिए प्रमाणपत्र नहीं दिये, वे संघर्षमें शामिल नहीं होंगे। इसलिए संघर्ष २,३०० भारतीयोंपर आधारित रहा। यह भी मान लेना चाहिए कि इसमें से कुछ फूट जायेंगे। इसी तरह यह भी मान लेना चाहिए कि जिन्हें प्रमाणपत्र नहीं मिले हैं, वे संघर्षमें भाग लेंगे। इस प्रकार हम अनुमान कर सकते हैं कि दो हजार भारतीय जूझेंगे। उनमें से चौथा भाग तो केवल तमिल लोगोंका ही है। उन्होंने कमाल कर दिया है। इस संख्यासे निराश होनेकी आवश्यकता नहीं है। यदि देखें तो वास्तवमें २,००० भारतीय जबरदस्त काम कर सकते हैं; किन्तु ये २,००० सच्चे योद्धा हैं, ऐसा मानना कठिन है। प्रमाणपत्रोंको जलानेका सच्चा अर्थ यह है कि उन्हें जलानेवाले भारतीय

१. शीर्षकका शाब्दिक अर्थ है "संवादपत्र"। ये खरीते हर हफ्ते **इंडियन ओपिनियन**में "हमारे जोहानिसबर्ग संवाददाता द्वारा प्रेषित" रूपमें प्रकाशित किये जाते थे। पहला खरीता मार्च ३, १९०६ को छपा था; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ २१५-१६।

२. एशियाई कानून संशोधन अधिनियम (एशियाटिक लॉ अमेंडमेंट ऐक्ट), जो ट्रान्सवाल एशियाई पंजीयन अधिनियम (ट्रान्सवाल एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) के नामसे भी प्रसिद्ध था। देखिए खण्ड ७, पृष्ठ १९-२५; ७५-८०; ४००-४०५ और परिशिष्ट १।

३. ट्रान्सवाल एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम, १९०८, (ट्रान्सवाल एशियाटिक रजिस्ट्रेशन अमेंडमेंट ऐक्ट, १९०८); पाठके लिए देखिए परिशिष्ट १।

प्रमाणपत्रोंकी परवाह नहीं करते। वे प्रमाणपत्रोंसे मिलनेवाला लाभ छोड़ देंगे, वे न परवाना बतायेंगे, न लेंगे और न सरकारके कानूनको किसी प्रकार मानेंगे तथा यथासम्भव प्रयत्न करके जेल जायेंगे।

अब मैं यह जानता हूँ कि ये २,००० भारतीय ऐसे साहसी नहीं हैं। उनमें से कुछ तो परवाने (लाइसेंस) लेकर बैठे हैं। वे परवानेका उपयोग करते हैं और जब कोई अधिकारी पूछता है तो उसे परवाना दिखाते हैं। इस कोटिके जिन लोगोंने प्रमाणपत्र जलाये हैं उन्हें मैं न जलानेवालोंके बराबर मानता हूँ। अर्थात् २,००० में से एक हजार और निकाल देनेकी जरूरत मानता हूँ। अब जो एक हजार बच गये, वे क्या कर सकते हैं? जवाब यह है कि वे सरकारको हिला सकते हैं और न्याय प्राप्त कर सकते हैं। उनके संघर्ष करनेसे खूनी कानून रद होगा, उच्च शिक्षा-प्राप्त लोगोंके लिए दरवाजा खुला रहेगा और ट्रान्सवालमें होते हुए भी जिनके पास प्रमाणपत्र नहीं हैं, उनमें जो सच्चे हैं, उनके अधिकारोंका संरक्षण होगा। किन्तु क्या अन्य लोगोंके पीछे हट जानेपर भी एक हजार व्यक्ति लड़ेंगे? मेरी मान्यता है कि लड़ेंगे। अन्ततक लड़नेवाले तो हमेशा थोड़े ही होते हैं। यह समझकर कि संघर्ष सच्चा है इसलिए लड़ना चाहिए, वे एक-दूसरेसे बहस नहीं करते। वे, दूसरे क्या करेंगे उसका विचार न करके, जान हथेलीपर रखकर लड़ते हैं।

इन एक हजार लोगोंको जबरदस्त दुःख उठाना पड़ेगा। पैसा जायेगा, सजा होगी, देश-निकाला होगा, मार खानी पड़ेगी, किन्तु इस सबसे क्या होता है? सब चला जाये, आन नहीं जानी चाहिए। भले ही और सब उन्हें छोड़ दें, किन्तु ईश्वर उन्हें नहीं छोड़ेगा।

जो जुर्माना नहीं देते, उनका माल बेचकर वसूल करनेकी ज्यादती बढ़ती जा रही है। प्रिटोरियामें ऐसा ही हुआ, हाइडेलबर्गमें ऐसा ही हुआ और वेरीनिगिंगमें भी ऐसा ही हुआ है। यदि सारे दूकानदार बिना परवानोंके हों तब तो कोई अड़चन न हो; और सामान नीलाम किया जाये तो हमें उसकी चिन्ता न करनी पड़े। किन्तु अलग-अलग व्यक्तियोंके मालकी नीलामीसे होनेवाली हानिको सहन करनेकी शक्ति अभी भारतीयोंमें नहीं आई है। वैसी शक्ति शीघ्र ही न आये, यह बात समझमें आने-जैसी है। बहुत-से भारतीयोंके पास पूरे वर्षका परवाना है, इसलिए थोड़े ही लोगोंके बारेमें विचार करना बच रहता है। उनके लिए ठीक रास्ता यह है कि वे कानूनके मुताबिक, किन्तु नामके लिए, अपनी दूकान गोरोंको बेच दें और व्यापार उनके नामसे करें। श्री गेब्रियल आइज़क ऐसा करनेके[1] लिए तैयार हैं। ऐसा होनेपर मालकी नीलामी बन्द हो सकती है। कोई कहेगा कि ऐसा करनेके बाद तो भारतीय व्यापारियों-के लड़नेकी कोई बात ही नहीं बचती। खुद दुःख सहनेसे बचें और गरीब फेरीवाले मरें — यह कलंक दूर करनेके लिए गोरोंके नामसे व्यापार करनेवाले दूकानदारोंको स्वयं फेरी लगा-कर जेल जाना चाहिए। जिनके पास अपने परवाने हैं, वे नौकरों अथवा अपने आत्मीयोंको जेल जानेके लिए तैयार करें। दूकानदारोंका ऐसा करना लाजिमी है। फेरीवालोंको भी ईर्ष्यावश उपर्युक्त व्यवहार नहीं करना चाहिए। जेल जानेवाले व्यक्तिके बारेमें यह नहीं सोचना चाहिए कि वह मर गया; बल्कि यह मानना चाहिए कि वह अधिक जी रहा है। जेल जानेवाले भारतीयोंको चाहिए कि वे अपने-आपको भाग्यवान मानें। जो जेल नहीं जा सकते,

१. अर्थात्, नाममात्रको इन दूकानोंको रखनेके लिए।

वे अभागे हैं। इसके अतिरिक्त दूकानदार संघर्षमें पैसेकी मदद कर सकते हैं। हमारा ध्येय जैसे बने वैसे सरकारको थका डालना है। सरकारको थकाने, अर्थात् जेल जानेके दो रास्ते हैं। एक तो यह कि फेरीवाले बिना परवानोंके फेरी लगा कर गिरफ्तार हों। उनका माल नीलाम करनेकी बात नहीं है, इसलिए उनपर तो जुर्माना ही होगा। दूसरा रास्ता यह है कि सीमापर अँगूठेकी निशानी, अँगुलियोंकी छाप, हस्ताक्षर आदि न देकर गिरफ्तार हों और जेल जायें। बहुत पैसा पास रखकर किसीको भी फेरी नहीं लगानी चाहिए। साथमें जेवर आदि भी नहीं रखने चाहिए। अँगूठोंके निशान न देनेवालोंके ऊपर मुकदमे चलाये जाने लगे हैं, इसलिए गिरफ्तारी सहज ही हो सकती है। ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके लिए अब बिलकुल सच्चे अनुमतिपत्रवाले लोग ही चाहिए। जिनके पास डचोंके जमानेके पास हैं, उन्हें फिलहाल नहीं आना चाहिए। इसी प्रकार शिक्षित लोगोंको भी फिलहाल नहीं आना चाहिए।

यदि उपर्युक्त पद्धतिसे लड़ें तो अक्तूबर महीने तक सच्चा रंग निखर सकता है। यदि काफी शक्ति जता सकें, तो युद्धका अन्त उसके पहले भी हो सकता है। किन्तु यदि अभी ऐसा न हुआ, तो अक्तूबरमें हो सकता है। उस समय तक बहुत-से भारतीयोंके फेरीके परवाने (लाइसेंस) खत्म हो जायेंगे। हम उम्मीद करते हैं कि सैकड़ों भारतीय अपने परवाने फिर नहीं लेंगे। इसलिए सरकारको पकड़े बिना चारा ही न रहेगा। जिनके प्रमाणपत्र जल चुके हैं, उन्हें तो परवाने मिलनेवाले हैं ही नहीं। इसलिए मुझे आशा है कि इतने भारतीय तो बिना परवानेके रहेंगे ही।

नेटालके सेठ

श्री दाउद मुहम्मद, श्री पारसी रुस्तमजी तथा श्री आंगलिया बहुत परिश्रम कर रहे हैं। उन्हें जोहानिसबर्गमें गुरुवार[1] तारीख २६ को गिरफ्तार नहीं किया गया, इसलिए वे तार देकर १२ बजेकी गाड़ीसे प्रिटोरिया गये। उनके साथ श्री राँदेरी भी थे। वे अंजुमन इस्लामियाके मकानमें प्रमाणपत्र इकट्ठे करनेकी बात कर रहे थे। उसी समय सुपरिंटेंडेंट वेट्सने आकर वारंट दिखाया और उन चारों सज्जनोंको गिरफ्तार कर लिया।[2] उन्हें जमानतपर छोड़नेसे इनकार कर दिया। बादमें यह मालूम हुआ कि उन्हें देश-निकालेका वारंट दिया गया है। अन्तिम गाड़ीसे श्री गांधी प्रिटोरिया गये। वकील श्री ब्लेककी मारफत उन्होंने पुलिसको नोटिस दिया कि सरकारको इस प्रकार वारंट निकालकर ले जानेका अधिकार नहीं है।[3] इस नोटिसका उद्देश्य सर्वोच्च न्यायालयमें जाना नहीं था, केवल सरकारका जुल्म दिखाना था। नोटिसका कोई प्रभाव दिखाई नहीं पड़ा। पुलिस उक्त सेठोंको सवेरेकी गाड़ीसे नेटाल ले गई। कोई बात छुपाकर नहीं रखी गई थी तथा जो मिलना चाहते थे, उन्हें मिलने दिया जाता था। स्टेशनपर कुछ भारतीय इन्हें बिदाई देनेके लिए पहुँच गये थे।

रातके १२ बजे अंजुमन इस्लामियाके मकानपर सभा हुई और फिर प्रमाणपत्र इकट्ठे करनेकी बात चली। हाजी कासिमने कहा है कि वे रविवारको विचार कर बतायेंगे कि मेमन प्रमाणपत्र देंगे या नहीं। बाकी लोगोंने तुरन्त देनेका निर्णय किया।

१. यहाँ "बुधवार" होना चाहिए।
२. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४८०।
३. देश-निकालेके आज्ञा-पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट २।

सार्वजनिक सभा

शुक्रवारको प्रिटोरियामें सार्वजनिक सभा हुई। श्री वगस अध्यक्ष थे। वहाँ काफी लोग उपस्थित थे और उनमें बहुत जोश था। खूब अच्छी तादादमें प्रमाणपत्र जलाये गये, फिर भी मुझे कहना चाहिए कि जितने प्रमाणपत्र आने चाहिए थे, उतने नहीं आये। मद्रासियोंको छोड़कर प्रिटोरियासे केवल ६७ प्रमाणपत्र आये, जो काफी नहीं कहे जा सकते। सभाका विवरण दूसरी जगह दिया जायेगा, इसलिए यहाँ नहीं दे रहा हूँ।

मद्रासियोंकी सभा

तमिल भारतीयोंकी सभा रविवारको अलग हुई। उसमें श्री गांधी उपस्थित थे। मद्रासियोंने कमाल कर दिया है। जान पड़ता है, उनमें से चौथाई लोग जेल हो आये हैं। उनमें बहुत जोश था। सबने कहा कि दूसरे लड़ें अथवा न लड़ें, वे अवश्य लड़ेंगे। उन्होंने पैसा इकट्ठा करना भी निश्चित किया है।

दो कोंकणी छूटे

पिछले हफ्ते जो दो कोंकणी मांस-विक्रेता जेल गये थे, वे छूट गये हैं। उनके कहनेके मुताबिक मालूम होता है कि अब जेलके अधिकारी तकलीफ नहीं देते। वे समाचार लाये हैं कि श्री मूलजी पटेल तथा श्री हरिलाल गांधीकी[1] तबीयत अच्छी है।

झवेर राँदेरी

श्री झवेर राँदेरी सोनीको, जिन्होंने अपने अस्थायी अनुमतिपत्र (परमिट) की अवधि समाप्त होनेपर भी ट्रान्सवाल नहीं छोड़ा था, एक महीनेकी कैदकी सजा हुई है। अपने बयानमें उन्होंने कहा कि मुद्दती अनुमतिपत्रकी अवधि समाप्त हो जानेपर उनका विचार जानेका और बादमें शिक्षित व्यक्तिकी हैसियतसे वापस आनेका था, किन्तु इसी बीच उन्हें पकड़ लिया गया। श्री राँदेरीने अपने बयानमें कहा कि "यह मेरा सौभाग्य है।"

बारह व्यक्तियोंको देश-निकाला

श्री शेलत, श्री जोशी, श्री कीलावाला, श्री मेढ, श्री इब्राहीम हुसेन वगैरह पकड़े गये हैं और उन्हें देश-निकालेका हुक्म हुआ है। ये फिर वापस प्रवेश करेंगे। अभी उन्हें समाज अथवा कुटुम्बियोंकी ओरसे खुराक नहीं पहुँचाई जा रही है। उन्हें उनकी इच्छासे जेल ही की खुराक मिलती है। उन्हें रोटी, आलू इत्यादि दिये गये थे। आज रातको वे फोक्सरस्ट ले जाये जायेंगे।

इब्राहीम उस्मान

श्री इब्राहीम उस्मानके जेल जानेसे यहाँ बड़ी प्रसन्नता हुई है। वे मेमन समाजके मुखिया कहे जा सकते हैं। उनकी बहादुरी मेमन समाजके लिए शोभाकी बात है। उन्होंने ट्रेनमें और चार्ज ऑफिसमें अँगूठेका निशान देनेसे साफ इनकार कर दिया। पुलिसके जवानने बयान देते हुए स्वीकार किया कि वह श्री इब्राहीमको पहचानता है। श्री पोलकने बयानमें कहा कि श्री इब्राहीमको अनुमतिपत्र दिलानेवाले वे थे; अतः श्री इब्राहीमको न पहचाननेका सवाल

१. गांधीजीके ज्येष्ठ पुत्र; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४०१-०२, ४२९-३० और ४३७।

नहीं था। अँगूठेका निशान देना ही अपराध गिना गया। यह कोई छोटी-मोटी ज्यादती नहीं है। किन्तु मुझे आशा है कि ऐसे मामलोंके बाद कोई भारतीय समझौता होने तक अँगूठेकी छाप नहीं देगा।

नादिरशा कामा

श्री नादिरशा कामाको सरकारने बरखास्त कर दिया है। यदि विचार करें तो यह कोई साधारण बात नहीं है। श्री कामाके मनमें ऐसी जबरदस्त धुन थी कि उन्होंने पिछली सार्वजनिक सभामें भाग लिया। इसपर सरकारने उनसे स्पष्टीकरण माँगा। श्री कामाने भाग तो लिया ही था, इसलिए उन्हें बरखास्त कर दिया गया। श्री कामाने इस बरखास्तगीको खुशी-खुशी स्वीकार किया है। इसका मुख्य कारण शिक्षितोंके लिए किया जानेवाला संघर्ष है। शिक्षितोंमें श्री कामाके इस बलिदानके बाद दस गुना जोश बढ़ना चाहिए। समाजने भी श्री कामाको बरखास्तगीके लिए उकसाया, इसलिए अब वह भी संघर्षसे पीछे हट नहीं सकता। मैं श्री कामाको बधाई देता हूँ। सरकारकी गुलामीसे उन्हें जो थोड़ा-बहुत पैसा मिलता था, उन्होंने उसकी परवाह नहीं की। यह आदर्श सबको अपनाना चाहिए।

नेटालवासियोंका सन्देश

श्री दाउद मुहम्मद और उनके साथी निर्वासनके बाद जब चार्ल्सटाउन पहुँचे तब उन्होंने विभिन्न स्थानोंको नीचे लिखे अनुसार तार भेजा :

> ईश्वरपर पूरा भरोसा रखकर हमने कलकी रात प्रिटोरियामें कैदियोंकी कोठरीमें गुजारी, देर-सबेर हम ट्रान्सवालके जेल-महलमें जा पहुँचेंगे और इस तरह देशके प्रति अपने फर्जको कुछ हद तक अदा करेंगे।[1] हमें आशा है कि प्रत्येक भारतीय कठिन दुःख उठाकर भी अपना कर्तव्य पूरा करेगा। जेल पहुँचनेके पहले हम अपने भाइयों तक यह सन्देश पहुँचा रहे हैं।

मुझे आशा है कि प्रत्येक भारतीय इस सलाहको ध्यानमें रखेगा।

स्मरणीय तार

जब श्री दाउद मुहम्मद और नेटालके अन्य नेतागण फोक्सरस्ट पहुँचे, तब श्री उस्मान अहमदने निम्नलिखित तार[2] दिया :

> मैं आप सबको बधाई देता हूँ। ईश्वरपर भरोसा रखिए। उसकी बन्दगी कीजिए। जिस खुदाने नूहको बाढ़से, मूसाको फराऊनसे, इब्राहीमको आगसे, अय्यूबको रोगसे, यूनुसको मछलीके पेटसे, यूसुफको कुएँसे और पैगम्बर साहबको गुफामें से बचाया, वही खुदा हमारे साथ है और वह सदा इन्साफ करता है।

यह तार बहुत उत्साहवर्धक है। मैं श्री उस्मान मुहम्मदको सलाह देता हूँ कि जैसी हिम्मत उन्होंने सेठोंको बँधाई है, वे स्वयं भी हमेशा वैसी हिम्मत रखेंगे। ऊपर जो उदाहरण

१. अर्थात्, उनका इरादा निर्वासनकी आज्ञाका उल्लंघन करके पुनः उपनिवेशमें प्रवेश करने और इस प्रकार जेल जानेका था।

२. इस तारके अंग्रेजी पाठके लिए देखिए **इंडियन ओपिनियन**, ५-९-१९०८।

दिये गये हैं, वैसे उदाहरण सभी शास्त्रोंमें प्राप्त होते हैं। यह जमाना कुछ ऐसा हो गया है कि हम अपने शास्त्रोंके लिखे हुएको किताबोंमें अंकित चीटियोंकी टाँग समझते हैं और ऐसे आदर्शोंको केवल मुखसे बोलकर रह जाते हैं। हम ईश्वरको इतना दूर मानते हैं कि इन उदाहरणोंका असर हमारे कामोंपर बहुत कम होता है। भारतीयोंके लिए यह अवसर कहनेकी अपेक्षा करनेका है। यदि ईश्वरपर सच्चा विश्वास रखकर सारे भारतीय लड़ें, तो २४ घंटोंमें छुटकारा हो जाये।

कैदियोंका संघर्ष

अगस्त १४ को जो मद्रासी देशके लिए जेल गये, मैं आजतक उनके नाम नहीं दे पाया। वे नाम अब नीचे दे रहा हूँ:

सर्वश्री कंगा सामी पिल्ले, सावेरी पिल्ले, आर० पकीरी मुदली, राजू नायडू, सुबरायलू नायडू, एस० पावडे नायडू, मुतरामुतु पत्तर, एम० नाडेसन, कंदासामी, मूनसामी नायडू, वी० वरधन, एस० रंगासामी नायडू, वेंकटसामी अप्पुडु, रंगा पडियाची, आर० जेमिसन, एस० वेलू पडियाची, एस० मुतरामुतु पिल्ले, वी० गोविन्दसामी पडियाची, सी० कंदा मुदले, नरसुमुल्लु, रंगा पडियाची, नायना नायडू, रामा, नागप्पन नायडू।

इनमें से बहुतोंके पास परवाने (लाइसेंस) थे, फिर भी उन्होंने बिना परवानोंके फेरी लगाई।

उनमें से अनेकपर जेलके अधिकारियोंने जुल्म किया और उनसे इतना सख्त काम लिया कि उनकी पीठपर छाले पड़ गये, किन्तु फिर भी उन्होंने उसकी कोई परवाह नहीं की। वे दुबारा भी जेल जानेके लिए तैयार हैं। जेलके मुख्याधिकारीके नाम इसके बारेमें एक हलफिया बयान भेजा गया है और सम्भव है कि अब अधिकारीगण इस प्रकार बरताव न करें। यदि करें भी तो क्या होता है। जितनी अधिक चोट लगेगी, उतनी जल्दी छुटकारा होगा।

क्रिश्चियानामें

श्री इस्माइल ईसप बेलिमपर बिना परवाना व्यापार करनेके जुर्ममें १५ पौंड जुर्माना और न देनेपर एक महीनेकी जेलकी सजा सुनाई गई। श्री बेलिम जेल चले गये। यह पर्याप्त नहीं हुआ, इसलिए अब उनके नौकर श्री इब्राहीम आदमजी लीमड़ाको भी गिरफ्तार किया है। श्री लीमड़ाको सजा हो सकेगी, ऐसा नहीं लगता। क्योंकि [सर्वोच्च] न्यायालयका फैसला है कि नौकरपर बिना परवाना व्यापार करनेका अपराध नहीं लगाया जा सकता।

ई० एम० पटेल

वेरीनिगिंगमें श्री पटेलका माल नीलाम किया गया है। उनपर १ पौंड ७ शिलिंग ६ पेंस जुर्माना हुआ था। इतना जुर्माना वसूल करनेके लिए २० पौंडका माल बेचा गया और कुर्क-अमीनको ६ पौंड ५ शिलिंग ६ पेंस मेहनताना दिया गया। यह तो धेलेका घोड़ा, गिन्नीकी लगामवाली बात हुई। मैं श्री पटेलको बधाई देता हूँ। जब हम इस तरह चारों तरफसे नुकसान उठायेंगे, तभी हमें मुक्ति मिलेगी। अब कौन कह सकता है कि स्मट्स साहब लुटेरोंके दलके सरदार नहीं हैं?[1]

१. गांधीजीने अदालत द्वारा वेरीनिगिंगके भारतीय व्यापारियोंके मालकी नीलामीको "कानून-समर्थित डाका" कहा था, देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४३१, ४४१ और ४४७-४८।

मंगलवार [सितम्बर १, १९०८]

नेटालके अन्य ग्यारह व्यक्ति

नेटालवासियोंकी और भी खबर आई है। कल रातको ११ व्यक्ति जानेवाले थे, उन्हें श्री वरनॉन ले गये हैं। उन्हें देखनेके लिए कितने ही लोग पार्क स्टेशन तक गये थे और कुछ जेलतक गये। उन्होंने बाहरसे खुराक नहीं ली, जेलकी ही खुराक ली। वे सबके-सब तड़के चार्ल्सटाउनसे चलकर फोक्सरस्ट और चार्ज ऑफिस गये तथा वहाँ गिरफ्तार हुए। अब सेठ और शिक्षित, सब फिरसे साथ हो गये हैं। इन सब सज्जनोंने जेलमें ही रहनेका निश्चय किया है। भोजन भी जेलका ही लेते हैं। मेरी सलाह है कि वे कपड़े भी जेलके ही लें। मुकदमा कब चलेगा, सो अभी तय नहीं हुआ है। सरकारको यह देखना बाकी है कि कौन-सा अभियोग लगाया जाये। सच्ची लड़ाई लड़नेवाले जमानतपर नहीं छूटते, खुराक भी बाहरसे नहीं मँगाते और सरकार जो कष्ट देती है उसे सहन करते हैं। मैं अपने भाइयोंको सलाह देता हूँ कि वे कोई छुपाकर मँगाई हुई चीज भी न लें। बीड़ी आदिका व्यसन हो, तो उसे भी छोड़ दें। व्यसन छोड़नेसे शरीर तथा मनको लाभ होता है। किन्तु यदि उसे कुछ न मानें, तो भी देशके लिए व्यसन छोड़ना अच्छा ही कहा जायेगा।

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभा

अगस्त ३१ को [तुर्कीके] माननीय सुलतानको गद्दीनशीन हुए ३२ वर्ष हो गये और उसी तारीखको अल मदीना[1] हेजाज रेलवे खोली गई थी, इसलिए उसकी यादमें इस अंजुमनने एक जबरदस्त सभा की। उसमें बहुत-से मुस्लिम भाई उपस्थित थे। गोरे भी आमन्त्रित थे। तुर्कीके दूत श्री वुल्फगेंग फरेन तथा उनके मित्र श्री पी० आर० क्राउन, जो तुर्किस्तानमें नौकरी कर चुके हैं और जिनको तुर्कीका दूसरे दर्जेका तमगा मिला है, उपस्थित थे। श्री कैलेनबैक तथा श्री आइज़क भी थे। इनके अतिरिक्त श्री गॉडफ्रे, श्री व्यास, श्री कामा, श्री नायडू तथा श्री गांधी भी वहाँ उपस्थित थे।

कार्यक्रम बहुत उत्साहपूर्वक और बहुत अच्छे ढंगसे सम्पन्न हुआ। छः प्रस्ताव पास किये गये। हेजाज रेलवेके लिए उसी समय चन्दा भी शुरू हुआ। श्री हाजी हबीबने १० पौंड लिखाये। हज्जामोंने ९ पौंडसे अधिक इकट्ठे किये। श्री नवाब खाँने उसी समय १ पौंड दिया। और एक गाड़ीवालेने तालियोंकी गड़गड़ाहटके बीच अपनी दिन-भरकी कमाई ५ शिलिंग दे दी। कई स्थानोंसे तार आये थे। सभी स्थानोंपर मुसलमानोंकी दूकानें बन्द कर दी गई थीं। तारोंमें श्री नगदीका तार जानने योग्य है। श्री नगदीने खबर दी थी कि गोरे और जुलू बच्चोंको मिठाई और पारितोषिक बाँटे गये। यह बहुत ही अच्छी बात है। इससे भारतीय और पूर्वके लोगोंका गौरव प्रकट होता है। गोरे दुश्मनों-जैसा काम करते हैं, फिर भी बार्मबाथ्सके भारतीयोंने उनके बच्चोंको मिठाई दी। यह बात उल्लेखनीय और अनुकरणीय है। यहाँ उस्मान मुहम्मदने जुलूस निकाला था। बच्चोंने खेल-कूदमें भाग लिया और उन्हें इनाम दिये गये। शामको आतिशबाजी हुई। सभीको लगा कि हमीदिया अंजुमनका भवन बहुत छोटा है। मैं आशा करता हूँ कि मुस्लिम भाई इस भवनको ऊँचा तथा लम्बा-चौड़ा करके इतना अच्छा कर लेंगे कि वह हमारी धारणाके अनुसार सुन्दर और पूरी तरह उपयोगी भी बन जायेगा।

१. मूलमें यहाँ "हमीदिया" शब्द है।

बुधवार [सितम्बर २, १९०८]

हरि करे सो होय

श्री दाउद मुहम्मद तथा अन्य भाइयोंको निकाल दिया गया था, किन्तु जैसा कि होना था, वापस वे सबके-सब दाखिल हो गये हैं। यही नहीं, श्री दाउद मुहम्मद, श्री पारसी रुस्तमजी तथा श्री आंगलिया जोहानिसवर्ग आ गये हैं और उन्होंने काम फिरसे शुरू कर दिया है। दूसरे भाई फोक्सरस्ट जेलकी हवा खा रहे हैं। इसका अर्थ इतना ही है कि उन्हें जोहानिसवर्ग आनेकी जरूरत नहीं बची। मंगलवारको सबपर मुकदमा चलनेवाला था, किन्तु सरकारने आगामी मंगलवार, तारीख ७ को मुकदमा चलाना तय किया है। इस अवसरका लाभ उठाकर तीन सेठ जोहानिसवर्ग आ पहुँचे हैं। सब अपना-अपना फर्ज अदा कर रहे हैं। उनकी जोहानिसवर्गमें आवश्यकता है। दूसरे लोग जेलमें रहकर अपना कर्तव्य पूरा कर रहे हैं।

सोराबजीका क्या हुआ?

श्री सोराबजी वापस आनेवाले थे, फिर भी सवाल उठ रहा है कि वे वापस क्यों नहीं आ रहे हैं। मुझे यह कहना है कि श्री सोराबजी तो फिरसे दाखिल होनेके लिए बहुत तड़प रहे हैं, किन्तु फिलहाल चार्ल्सटाउनमें ही रहना उनका फर्ज है। इस प्रकार वे अधिक सेवा कर रहे हैं। संघने उन्हें रोक रखा है। संघने उस विषयमें जो प्रस्ताव किया है, सरकारकी ओरसे अभीतक उस प्रस्तावका उत्तर नहीं आया। इस कारण तथा अन्य कारणोंसे वे अभी तुरन्त नहीं बुलाये गये हैं। जब समय आयेगा तब वे दाखिल होंगे। सभी एक ही तरहसे कर्तव्य पूरा नहीं कर सकते। कर्तव्य करना ही सबका काम है, और श्री सोराबजीका कर्तव्य अपने उत्साहको दबाकर प्रतीक्षा करना है।

मूसा ईसप आडिया

श्री मूसा ईसप आडियाको प्रिटोरियामें एक पौंड जुर्माना हुआ। उनका माल जब्त करते हुए आज कुर्क-अमीनने सारी दूकानपर मुहर लगा दी। यह गैरकानूनी बात है। कुर्क-अमीनको इसका कोई अधिकार नहीं है। इसलिए संघने श्री आडियाको दूकान खोलने और कुर्क-अमीनके नाम नोटिस निकलवानेकी सलाह दी है।

दिलदार खाँ

श्री दिलदार खाँ एक गोरेके यहाँ नौकर थे। गोरेने उन्हें बरखास्त कर दिया है, क्योंकि वे कानूनके विरोधमें हलचल करते हैं; और उन्होंने कल हेजाज रेलवे [समारोह] के सम्बन्धमें छुट्टी माँगी थी। श्री दिलदार खाँकी हिम्मतपर मैं उन्हें बधाई देता हूँ।

चन्दा

श्री दाउद मुहम्मद, श्री रुस्तमजी तथा श्री आंगलियाने आते ही काम शुरू कर दिया है। वे चन्दा करने निकले थे। जिन्होंने रकम दी है, उनके नाम अगले हफ्ते देनेकी बात सोच रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-९-१९०८

२. साम्राज्य-सरकारके विचार

हमने अपने अंग्रेजी विभागमें ब्रिटिश संसदमें दिये गये भाषणोंका विवरण छापा है। उनमें उपनिवेश-उपमन्त्री कर्नल सीलीका भाषण पठनीय है। उन्होंने कहा है कि ट्रान्सवाल सरकारसे बातचीत चल रही है। भाषणमें यह भी बताया गया है कि जिन लोगोंको उपनिवेशोंमें रहनेका अधिकार प्राप्त है, उन्हें गोरोंके समान हक दिये जाने चाहिए और पूर्ण नागरिक मानना चाहिए। अब इसपर हम यह कह सकते हैं कि जिन लोगोंको यहाँ रहनेका अधिकार प्राप्त है, उनके हितकी दृष्टिसे उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंको भी उपनिवेशमें प्रवेश करनेकी छूट दी जानी चाहिए। फिर, हम कर्नल सीलीके भाषणसे यह भी देख सकते हैं कि यदि हम पूरा उद्योग करें तो साम्राज्य-सरकार हमारी सहायता कर सकती है। कुंजी हमारे हाथमें है। हमें केवल सत्याग्रही बननेकी आश्यकता है।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, ५–९–१९०८

३. रिचकी स्थिति

श्री रिचके[1] जो पत्र आते हैं, उनसे बड़ा दुःख होता है। समाज बहुत-कुछ करता है, लेकिन [उनकी] कद्र नहीं करता। श्री रिच जो काम कर रहे हैं, उसे बहुत थोड़े ही गोरे और भारतीय कर सकते हैं। श्री रिचको वेतनकी परवाह नहीं है। ऐसे मनुष्यको सदा पैसेकी तंगीमें रखना हमारे लिए शर्मकी बात है।

श्री रिचको पहले ३०० पौंड भेजनेकी बात थी। उसमें से केवल १०० पौंड भेजे गये हैं। बाकीके २०० पौंड भेजना तो अलग, आज उनके पास घर-खर्चके लिए भी पैसे नहीं भेजे जा रहे हैं। यही नहीं, कार्यालयका खर्च चलाना भी मुश्किल हो रहा है। हमें दीर्घसूत्रताकी आदत है, और इसमें हम दूसरोंके कष्टोंका भी खयाल नहीं करते। ऐसी स्थितिमें समिति अधिक दिनों तक चल सकेगी, यह नहीं जान पड़ता। इसलिए प्रत्येक भारतीयका कर्तव्य है कि उससे जितनी बने, उतनी मदद करे। जो लोग बिलकुल बिना पैसेके ऐसा महान संघर्ष चलानेकी आशा करते हैं, वे गलती करते हैं। मुझे उम्मीद है कि समाज श्री रिचके लिए [पैसेका] तत्काल प्रबन्ध करेगा; अन्यथा समितिको टूटते देर नहीं लगेगी और पीछे हमारे लिए केवल हाथ मलना ही रह जायेगा।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, ५–९–१९०८

१. दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति (साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी), लन्दनके मन्त्री एल० डब्ल्यू० रिच। समितिकी स्थापना "दक्षिण आफ्रिकामें बसे हुए भारतीयोंको उचित और न्यायपूर्ण व्यवहार प्राप्त करानेके लिए" १९०६ में हुई थी; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ २४३-४४; खण्ड ७, पृष्ठ २७९-८०; ४१०-११; खण्ड ८, पृष्ठ ६३ और १०२-०३।

४. भारतके राष्ट्रपितामहका जन्मदिन[1]

हमें समस्त भारत और उपनिवेशोंमें रहनेवाले अपने भाइयोंके साथ श्री दादाभाई नौरोजीका जन्मदिवस मनानेका गौरव एक बार फिर प्राप्त हुआ। दादाभाई नौरोजी समकालीन भारतीयोंमें सबसे महान् हैं। कल[2] उन्होंने अपने ८४ वें वर्षमें कदम रखा है। उन्होंने अपना कर्मठ जीवन अपने प्यारे देश और देशवासियोंकी सेवामें व्यतीत किया है। अब वे वृद्ध देशभक्त अवकाश ग्रहण कर भारतमें शान्तिपूर्वक रह रहे हैं। अपनी श्रेष्ठ सेवाओंके कारण उन्हें इस विश्रामका अधिकार भी है। यह याद करके कि श्री दादाभाईने अपना लगभग सारा जीवन अपने देशवासियोंके अधिकारों और स्वतन्त्रताके लिए लड़नेमें बिताया है, दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय, विशेषतः ट्रान्सवालवासी भारतीय, अपने संघर्षके लिए साहस प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए हम, दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीय, उनको सबसे बड़ा मान यही दे सकते हैं कि उनका अनुसरण करें और सम्राट्के प्रत्येक प्रजाजनको जिस पूर्ण स्वतन्त्रताका अधिकार है, उसे जबतक अपने लिए और आनेवाली पीढ़ियोंके लिए प्राप्त न कर लें, तबतक संघर्षसे कभी विचलित न हों।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५–९–१९०८

५. दादाभाईकी जयन्ती

कल भारतके पितामह दादाभाई नौरोजीकी जयन्ती थी। उन्होंने ८४ वें वर्षमें प्रवेश किया है। भारतमें उनकी जयन्ती सर्वत्र सार्वजनिक उत्सवके रूपमें मनाई जाती है। वहाँकी समस्त सार्वजनिक संस्थाएँ अत्यन्त उत्साहपूर्ण समारोह करती हैं और उनको उनके दीर्घ-जीवनके लिए शुभकामनाएँ भेजती हैं। दक्षिण आफ्रिका [के भारतीयों] की सार्वजनिक संस्थाओंकी ओरसे जो सन्देश भेजे गये हैं, उनका विवरण हम अन्यत्र दे रहे हैं। उन्होंने ये सन्देश भेजकर [मात्र] अपने कर्तव्यका पालन किया है। हम उनके दीर्घ-जीवनकी कामना करते हैं और संसारके सिरजनहारसे प्रार्थना करते हैं कि वह हमें और इस पत्रसे जिनका सम्बन्ध है, उन सबको उनके समान शुद्ध हृदय दे। हम अपने पाठकोंको परामर्श देते हैं कि वे उनके देश प्रेमका अनुकरण करें; यही इन सच्चे पितामहका सच्चा स्मरण है। ट्रान्सवालके भारतीयोंको यह याद रखना है कि इन अमर पितामहने हमारे लिए जैसी टेक रखी है वैसी टेक वे स्वयं भी रखें। इस समय दक्षिण आफ्रिकामें हमारी लड़ाई ऐसी है कि उसमें भाग लेनेके लिए

१. देखिए अगला शीर्षक भी।

२. सितम्बर ४को।

६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

सोमवार [सितम्बर ७, १९०८]

डंकनका भाषण

भूतपूर्व उपनिवेश-सचिव श्री डंकनने[2] भाषण करते हुए यह विचार व्यक्त किया है कि अन्ततोगत्वा काले लोगोंको राज-काजमें हिस्सा दिये बिना काम नहीं चलेगा। यदि ऐसा न हुआ, तो गोरे और काले दोनोंका नुकसान होगा। ऐसे विचार वे गोरे व्यक्त करने लगे हैं, जो पहले बड़े-बड़े ओहदोंपर रह चुके हैं। इससे जाहिर होता है कि कुछ ही वर्षोंमें दक्षिण आफ्रिकामें बड़े-बड़े परिवर्तन होंगे।

स्टैलर्डके विचार

श्री स्टैलर्डकी गिनती बहुत होशियार वकीलोंमें की जाती है। उन्हें हम लोगोंसे विशेष प्रेम नहीं है, फिर भी उन्होंने [अपने एक भाषणमें] यह विचार व्यक्त किया है कि भारतीयोंके साथ संघर्षमें जनरल स्मट्स हर बार हारे हैं। वास्तवमें हुआ भी ऐसा ही है। अब जो लड़ाई बाकी है, उसमें भी यदि हम पूरा जोर लगा दें तो वे फिर हारेंगे।

भाणा रामजी

श्री भाणा रामजी नोटिस मिलनेपर भी उपनिवेशसे न जानेके आरोपमें शनिवारको गिरफ्तार कर लिये गये। उनके मुकदमेकी किसीको कोई खबर नहीं थी, इसलिए उन्होंने अपनी पैरवी स्वयं ही की। उन्होंने उपनिवेशसे जानेसे साफ इनकार कर दिया और न्यायाधीश द्वारा दिया गया एक महीनेका सपरिश्रम कारावास स्वीकार किया। वे इस समय जेलमें विराज रहे हैं। भारतीय इस प्रकार निर्द्वन्द्व होकर जेल जाना सीख गये हैं, यह हमारे लिए सौभाग्यकी बात है।

गोशलियाका तार

श्री गोशलियाने, जो अन्य भारतीयोंके साथ फोक्सरस्टकी जेलमें हैं, तार दिया है कि भारतीय कैदी पूपू [मकईका दलिया] नहीं खा सकते, इसलिए वे सुबहके नाश्तेके बिना रह जाते हैं। इसके बावजूद श्री गोशलिया तथा अन्य भारतीय जेल नहीं छोड़ते और वहाँ पड़े हुए हैं, इससे उनकी देशभक्ति प्रकट होती है। खुराकके बारेमें सरकारके साथ अब भी लिखा-

१. देखिए खण्ड ७, पृष्ठ २०२।

२. पैट्रिक डंकन: उक्त पदपर १९०३ से १९०६ तक रहे। भाषणके पाठके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

पढ़ी चल रही है। जिनसे कष्ट नहीं सहा जाता, उन्हें श्री तिलकका[1] उदाहरण याद रखना चाहिए। वे सादी खूराकपर छः वर्ष तक कैसे रह सकेंगे? उनकी अवस्था भी बुढ़ापेकी है। वे यूरोपीय होते तो आज शासकके पदपर बैठे होते। ऐसा कहकर मैं यूरोपीयोंसे द्वेष नहीं करता। भारतीय उनकी तरह पाप करके राजसुख भोगें, इससे तो अच्छा है कि वे पापमुक्त रहकर रूखी-सूखीपर ही गुजारा करें। जो भी हो, कहनेका सार यह है कि हमें जो कष्ट भोगने पड़ रहे हैं, वे महान श्री तिलकके कष्टोंके आगे कुछ नहीं हैं।

मंगलवार [सितम्बर ८, १९०८]

नेटालके सेठोंका काम

श्री दाउद मुहम्मद, श्री पारसी रुस्तमजी तथा श्री आंगलिया फोक्सरस्टसे वापस आनेके बाद हाथपर-हाथ धरकर बैठे नहीं रहे। उन्होंने जोहानिसबर्गमें चन्दा उगाहनेका काम शुरू किया और २०० पौंडसे ऊपर इकट्ठा भी कर लिया। वे हर जगह गये और जहाँ भी गये, सबने निधिमें पैसे दिये। उनके साथ इमाम साहब अब्दुल कादिर बावजीर, श्री काछलिया, श्री व्यास, श्री कामा आदि भी जाते थे। वे शुक्रवारको, नमाजके बाद, क्रूगर्सडॉर्प गये। उनके साथ श्री कामा भी थे। क्रूगर्सडॉर्पमें ३ घंटेके भीतर लगभग ६४ पौंडकी रकम लिखी गई और ६० पौंड नकद मिले। वहाँसे वे रातको वापस लौटे।

शनिवारको सुबहकी गाड़ीसे वे हाइडेलबर्ग गये। वहाँ श्री भायातने प्रारम्भमें ही १६ पौंड देकर अत्यन्त उत्साह प्रदर्शित किया, जिसके फलस्वरूप ४५ पौंड जमा हुए। हाइडेलबर्गसे उसी दिन रातकी गाड़ीसे वे स्टैंडर्टन गये। श्री काछलिया तथा श्री भायात उनके साथ थे। बादमें श्री कामा भी उसी गाड़ीसे उनके साथ हो लिये। स्टैंडर्टनमें गाड़ी रातके २ बजे पहुँचती है, फिर भी उनकी अगवानी करनेके लिए बहुत-से नागरिक उपस्थित हुए थे। भारतीयोंको मैं नागरिक कह रहा हूँ, इसपर किसीको ताज्जुब नहीं होना चाहिए। भारतीय अब गुलाम नहीं, नागरिक ही हैं। हमें [उपनिवेशके शासनमें] साझेदारीका अधिकार है और हम उसी अधिकारके लिए संघर्ष कर रहे हैं।[2] स्टैंडर्टनमें ५३ पौंडकी रकम इकट्ठी हुई।

इतने कामके बाद, मुकदमा चलने तक इन सेठोंको आराम करनेका हक था, किन्तु उन्होंने प्रिटोरियामें गोता लगानेका निश्चय किया। रविवारको रातकी गाड़ीसे वे प्रिटोरियाके लिए रवाना हुए। वहाँ इन्होंने सोमवारकी प्रातः चन्दा उगाहना शुरू कर दिया। [प्रिटोरियामें] उनकी मेजबानी श्री ए० एम० सुलेमानने की। नाश्ता करनेके बाद वे बस्तीसे शहर पहुँचे और उन्होंने मेमन बिरादरीसे चन्दा लेना शुरू किया। श्री हाजी कासिमने ५ पौंड लिखवाये। दो बजे श्री गांधी प्रिटोरिया पहुँच गये और शाम तक उगाही चलती रही। साथमें श्री हाजी कासिम आदि भी थे।

१. तात्पर्य बाल गंगाधर तिलकसे है; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४१२-१३।

२. भारतीय नागरिक नहीं थे, क्योंकि उन्हें राजनीतिक मताधिकार नहीं था। और ट्रान्सवालके विधान-मण्डलमें उन्हें जो प्रतिनिधित्व प्राप्त था, उसका स्वरूप "संरक्षकता" (ट्रस्टीशिप) का था। गांधीजीने पहले भी बराबर इस बातपर जोर दिया था कि भारतीय कोई राजनीतिक अधिकार नहीं चाहते (देखिए खण्ड ६, पृष्ठ २२३)। किन्तु उन्होंने नागरिक अधिकारोंकी माँग अवश्य की। नागरिक अधिकारोंसे उनका तात्पर्य था, "भूस्वामित्व, आवागमन तथा व्यापार-सम्बन्धी अधिकार"। देखिए खण्ड ६, पृष्ठ २६७।

चार बजे वस्तीमें सभा हुई। श्री बगस अध्यक्ष थे। उन्होंने उनका स्वागत किया और बादमें सेठोंने उसका उचित उत्तर दिया। वस्तीमें चन्दा इकट्ठा करनेके लिए समय नहीं रहा; किन्तु वस्तीके भारतीयोंने चन्दा इकट्ठा करनेका वचन दिया है। प्रिटोरियामें २६ पौंडसे अधिक रकम उगाही गई।

प्रिटोरियाकी शक्तिको देखते हुए यह रकम बहुत कम है। किन्तु मेमन सज्जनोंने सहायता कर इतना भी हाथ बँटाया, इससे जाहिर होता है कि वे भी समाजके साथ हैं और इस कानूनके विरुद्ध हैं। उनकी मददका असर सरकारपर भी होना चाहिए। उसकी समझमें यह बात आ जायेगी कि पानीमें लाठी मारनेसे पानी फटता नहीं, और भारतवासी भी एक पानी — एक लहू हैं।

सेठोंने शामको वस्तीसे डर्बन जानेवाली गाड़ी पकड़ी। उनसे मिलने और उन्हें विदाई देनेके लिए जर्मिस्टनमें इमाम साहब, श्री कुवाड़िया, श्री फैन्सी, श्री जीवनजी, श्री उमरजी साले, श्री व्यास आदि उपस्थित थे। जर्मिस्टनमें लगभग ४५ मिनट रुकना पड़ता है। इसका लाभ उठाकर उन्हें जर्मिस्टन [स्टेशन] के होटलमें दावत दी गई। होटलका मालिक अच्छा आदमी था। उसने आनाकानी नहीं की, किन्तु होटलके कमरेके परदे गिरा दिये, ताकि दूसरे लोग न देख पायें। खुशीके नारोंके बीच फोक्सरस्टकी गाड़ी चल पड़ी और सेठ लोग जेल जानेके लिए विदा हो गये। जिस समाजके नेता ऐसी बहादुरी, ऐसी स्वदेश-भक्ति और ऐसा उत्साह दिखायें वह समाज कैसे हार सकता है?

क्रूगर्सडॉर्पकी कहानी

क्रूगर्सडॉर्पके भारतीयोंके बीच बेकारकी फूट-फाट दिखाई पड़ रही है, और यहाँकी सरकार उसका नाजायज फायदा उठाना चाहती है। यहाँके समाचारपत्रोंमें खबर है कि क्रूगर्स-डॉर्पमें भारतीय व्यापारियोंने जोर-जुल्म और मारपीट कर भारतीय फेरीवालोंसे उनके प्रमाण-पत्र लिये। जिन फेरीवालोंपर ऐसे जुल्म किये गये, उन्होंने शिकायतें की हैं और अब जिन व्यापारियोंने जुल्म किया था उनपर मुकदमे चलाये जायेंगे।

कहते हैं, यह घटना तब हुई थी जब नेटालके सेठ सीमा पार करनेसे पहले क्रूगर्सडॉर्प गये थे। नेटालके सेठोंसे पूछा गया तो उन्होंने कहा कि न किसी भारतीयपर जुल्म किया गया है और न किसीको मारा-पीटा गया है। वे कहते हैं कि एक बार मामूली कहा-सुनी हो गई थी; बस अधिकसे-अधिक इतना ही हुआ। अगर बात ऐसी ही हो तो किसी भी भारतीयको इतनी अदूरदर्शिता क्यों दिखानी चाहिए कि वह हमें ही मारनेके लिए सरकारके हाथोंमें एक हथियार बन जाये? मुकदमा मूलतः ही झूठा है, इसलिए सरकारकी हार होगी।

फिर भी ऐसी अफवाहोंका असर यह होता है कि भारतीयोंके कष्टके दिन तनिक और अधिक हो जाते हैं। हरएक भारतीयको यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि यह लड़ाई शरीर-बलकी नहीं है। हमें धमकी अथवा मार-पीटसे काम नहीं लेना है, शरीर-बलका उपयोग नहीं करना है। यही नहीं कि उसका उपयोग सरकारके विरुद्ध नहीं करना है, अपने भाइयोंके विरुद्ध भी नहीं करना है।

यह लड़ाई आत्मबलकी है। इसलिए वह ईश्वरीय है। हम जानते हैं कि शरीरकी अपेक्षा मन अधिक बलवान है, और आत्मबल मनोबलसे भी बढ़कर है। वह सर्वोपरि है। हम इस

विचारको मानते तो हैं, किन्तु उसके अनुसार चलते नहीं हैं। हम उसी हद तक दुःखी हैं और दुःख भोगते हैं, जिस हद तक हमने आत्माको नहीं पहचाना है।

स्टैंडर्टनका परवाना

स्टैंडर्टनके भारतीय व्यापारियोंसे परवाना-अधिकारियोंने पूछा है कि उन्होंने अँगूठोंके निशान देनेसे क्यों इनकार किया है। समितिने उसका जवाब देते हुए कहा है:

(१) अँगूठोंके निशान खूनी कानूनकी रूसे माँगे जा रहे हैं, इसलिए भारतीय अँगूठोंके निशान नहीं देते।

(२) कानून खूनी है, क्योंकि उससे धार्मिक भावनाको चोट पहुँचती है और वह भारतीयोंकी हीनताकी निशानी है।

(३) कानूनके बाहर अँगूठोंके निशान देने हों, तो भी जो लोग हस्ताक्षर कर सकते हैं, वे परवानेके सम्बन्धमें अँगूठोंके निशान नहीं देंगे। यदि हस्ताक्षर करना आता हो और फिर भी अँगूठेके निशान दें तो अँगूठेका निशान देना चमड़ीका अपमान माना जायेगा। हस्ताक्षरके बदले अँगूठेका निशान देना और हस्ताक्षर कर सकनेके बावजूद अँगूठेका निशान देना, इन दोनों बातोंमें अन्तर है।

शामको तीन बजे

अभी-अभी फोक्सरस्टसे तार मिला है कि [नेटालके] तीन सेठों तथा श्री राँदेरियाको तीन-तीन महीनेकी सख्त कैदकी सजा दी गई है। शेष ग्यारह व्यक्तियोंको छः-छः सप्ताहकी जेल दी गई है। इन सबको भी सजा सख्त दी गई है। इस समाचारसे मुझे प्रसन्नता भी होती है और रुलाई भी आती है। प्रसन्नता इसलिए होती है कि भारतीयोंपर जितना अधिक जुल्म होगा, वे [अन्तमें] उतने ही सुखी होंगे और मुक्ति उतनी ही जल्दी मिलेगी। रुलाई इसलिए आती है कि ऐसे कष्ट बुजुर्ग भारतीयोंको झेलने पड़ रहे हैं।

और कैदी

श्री सुलेमान हसन नामक एक फेरीवालेको क्रूगर्सडॉर्पमें बिना परवानेके फेरी लगानेके अपराधमें पाँच शिलिंग जुर्मानेकी अथवा एक दिनकी कैदकी सजा दी गई है। उन्होंने जेल जाना पसन्द किया है।

श्री अली ईसपजी बिना अनुमतिपत्र (परमिट) के उपनिवेशमें रहनेके अपराधमें गिरफ्तार किये गये हैं। उनका मुकदमा ११ तारीखको चलेगा।

क्रिश्चियानामें श्री इब्राहीम लिमदाको[1] दूकान चलानेके अपराधमें १५ पौंड जुर्माने अथवा ६ हफ्तेकी कैदकी और श्री कासिम इब्राहीमको फेरी लगानेके अपराधमें तीन पौंड जुर्माने अथवा ६ सप्ताहकी कैदकी सजा दी गई। दोनों ही नर-रत्नोंने जेल जाना पसन्द किया। दोनोंकी सजा सादी कैदकी है।

ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिकी बैठक

सोमवारको ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिकी[2] एक विशेष बैठक हुई। श्री ईसप मियाँ गैरहाजिर थे, इसलिए श्री कुवाड़ियाने अध्यक्षता की। श्री फैन्सी, इमाम साहब, श्री चेट्टियार,

१. मूलमें, "लिमवादो" है।
२. ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन कमिटी।

श्री नायडू, श्री मॉरिस, श्री इमाम, श्री उमरजी साले, श्री आदम मूसाजी, श्री कुनके और अन्य सज्जन उपस्थित थे। पैसा इकट्ठा करनेके लिए दौरा करनेका निश्चय किया गया और बहुत-से लोगोंके नाम लिखे गये। श्री रिचको १०० पौंड भेजनेका निश्चय किया गया। श्री गांधीने फिलहाल अपना वकालतका धन्धा बन्द कर रखा है, इसलिए उन्होंने संघके कार्यालयका किराया चुकाने और श्री पोलकका खर्च देनेकी तथा 'इंडियन ओपिनियन' में अधिक छपाईसे जो घाटा होता है उसको पूरा करनेके लिए, जबतक संघर्ष चले तबतक, प्रति मास १० पौंड खर्च करनेकी अनुमति माँगी। इस प्रश्नपर मंगलवारको निर्णय नहीं हो सका; इसलिए इसपर विचार स्थगित कर दिया गया।

नेटालके सज्जनोंके जेल जानेका समाचार मिलते ही मंगलवारको तुरन्त समितिकी दूसरी बैठक हुई। उसमें श्री ईसप मियाँ उपस्थित थे। पिछली बैठकमें भाग लेनेवाले बहुत-से सज्जन भी उपस्थित थे। नेटालके सज्जनोंका सम्मान करनेके लिए गुरुवारको ४ बजे सार्वजनिक सभा करने तथा सारी दूकानें और कारोबार बन्द रखनेका निर्णय किया गया। विलायत, भारत, जंजीबार, अदन इत्यादि स्थानोंको तार भेजनेका भी निश्चय किया गया।

श्री ईसप मियाँको हज करने जाना है, इसलिए उन्होंने [संघके अध्यक्ष-पदसे] इस्तीफा देनेकी सूचना दी। किन्तु वे फिलहाल तो सार्वजनिक सभाकी अन्तिम बार अध्यक्षता करेंगे ही।

बैठकमें उनके बाद श्री अहमद मुहम्मद काछलियाको अध्यक्ष-पद सौंपनेका प्रस्ताव पास किया गया।

इस विषयमें अभी अधिक कहनेकी गुंजाइश नहीं है। श्री ईसप मियाँने समाजकी जो सेवा की है, उसका पार नहीं है। बहुत-कुछ उनके साहसपर चल रहा है। समाज उन्हें जितना मान दे, कम ही माना जायेगा। वे छः तारीखको स्टीमरसे हजके लिए रवाना होंगे। आशा है, समाज उनके पहले ही [उनके प्रति] अपना कर्तव्य पूरा करेगा।

श्री काछलियाको जो पद मिला है, वह महान है। निस्सन्देह उन्होंने समाजकी बहुत सेवा की है, वे लोकप्रिय भी हैं और जेल भी जा चुके हैं। इसलिए उनमें पूरी योग्यता है। अध्यक्ष-पद स्वीकार करनेका उनका कोई विचार नहीं था, किन्तु बहुत आग्रह करनेसे उन्होंने उसको स्वीकार कर लिया। श्री इब्राहीम कुवाड़ियाका नाम भी पेश किया गया था, किन्तु उन्होंने श्री काछलियाको अधिक पसन्द किया और कहा कि श्री काछलिया समाजकी अधिक सेवा कर सकेंगे।

श्री काछलियाका उत्तरदायित्व बहुत बड़ा है। नौका मँझधारमें है, उसकी पतवार हाथमें लेना कोई मामूली बात नहीं है। किन्तु ईश्वरपर भरोसा रखकर चलेंगे तो वे स्वीकृत पदको सँभाल ले जायेंगे।

श्री ईसप मियाँ तथा श्री काछलियाके विषयमें अगले सप्ताह विशेष रूपसे लिखनेकी आशा करता हूँ।

स्वयंसेवक

श्री गांधीका वकालतका काम लगभग बन्द हो जानेके कारण श्री मुहम्मद खाँ व्यापारमें जुट गये हैं और श्री जेम्स डोरासामीने संघका काम अवैतनिक रूपसे करनेके लिए कार्यालय आना आरम्भ कर दिया है। मुझे आशा है कि श्री डोरासामीकी तरह अन्य स्वयं-

सेवक भी सामने आयेंगे और काममें मदद पहुँचायेंगे। यदि समाज नेटालके वीरोंको शीघ्र ही मुक्त करवानेके लिए कृतसंकल्प हो, तो जितने कार्यकर्ता मिलें, सबके लिए कार्य है।

नाइल्स्ट्रूम

श्री मोटी रघा पटेल नाइल्स्ट्रूममें बिना परवाना (लाइसेंस) फेरी लगानेके अपराधमें चार दिनकी सख्त कैदकी सजा पाकर जेल गये हैं। श्री नगदीके नाम समन्स जारी किये जा रहे हैं।

क्रूगर्सडॉर्पमें गिरफ्तारी

ऊपर जिस आरोपकी खबर दे चुका हूँ[1], उसमें क्रूगर्सडॉर्पमें श्री इस्माइल काजी, श्री पांडोर, श्री वाजा, श्री वानिया, श्री खुरशेदजी देसाई, श्री दादलानी, श्री मुहम्मद मामूजी दादू और श्री पारसी रुस्तमजीपर वारंट निकाले गये हैं। इनमें श्री रुस्तमजीके सिवा बाकी सबको जमानतपर छोड़ दिया गया है। श्री रुस्तमजी तो पहलेसे ही जेल महलमें विराज रहे हैं, इसलिए अब देखना यह है कि उनका क्या होता है।

बुधवार [सितम्बर ९, १९०८]

सोराबजी

कल [मंगलवारकी] शामको श्री सोराबजी ट्रान्सवालमें प्रविष्ट हो गये। उनका मुकदमा १५ तारीखको चलेगा। श्री सोराबजी श्री कामाके साथ जोहानिसबर्गको रवाना हो गये हैं।

अब्दुल गनी

खबर मिली है कि श्री अब्दुल गनीने फोक्सरस्टमें वापस आते हुए अँगूठेका निशान दिया है। यदि यह बात सच हो तो बहुत ही खेदजनक है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-९-१९०८

१. देखिए पृष्ठ १३-१४।

७. प्रार्थनापत्र : उपनिवेश-मन्त्रीको[1]

जोहानिसबर्ग
सितम्बर ९, १९०८

सेवामें
परममाननीय उपनिवेश-मन्त्री
लन्दन

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघका प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि

प्रारम्भिक

१. ब्रिटिश भारतीय संघ[2] पिछले दो वर्षोंसे ट्रान्सवालमें चालू ब्रिटिश भारतीय संघर्षके सम्बन्धमें, विशेषतः तारीख २ के ट्रान्सवाल 'गजट' में प्रकाशित एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियमके[3] सम्बन्धमें, सम्राट्की सरकारसे प्रार्थना करता है।

२. संघ ट्रान्सवालमें रहनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंका प्रतिनिधित्व करता है।

३. जैसा कि महामहिमकी सरकारको भली भाँति ज्ञात है, पिछले वर्ष ट्रान्सवाल विधान-मण्डल द्वारा जो एशियाई कानून संशोधन अधिनियम (एशियाटिक लॉ अमेंडमेंट एक्ट) पास किया गया है उससे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको बहुत कष्ट पहुँचा है, और आर्थिक हानि हुई है तथा ३५० से अधिक भारतीयोंको, जिन्होंने अपनी अन्तरात्माके हेतु कारावासका कष्ट सहा है, जेल जाना पड़ा है।

कानून बनानेमें उतावली

४. जो कानून अभी 'गजट' में प्रकाशित किया गया है, उसका विधेयक (बिल) के रूपमें पहला वाचन २० अगस्तको हुआ था, और २१ अगस्तको ही वह विधानसभा और विधान-परिषद, दोनोंमें समस्त अवस्थाओंसे गुजरकर पार हो गया। विधेयक 'गजट' में कभी प्रकाशित नहीं किया गया और प्रार्थी संघ जिस समाजका प्रतिनिधित्व करता है, उसको तो वह अधि-नियमके रूपमें प्रकाशित होनेके बाद ही मिला। विधानसभाके एक सदस्यके सौजन्यसे कुछ भारतीय तो उसे सब अवस्थाओंसे गुजरनेके तुरंत बाद पास होते ही देख सके थे, परन्तु समाजके अन्य लोगोंको इस माहकी २ तारीख तक ट्रान्सवालके समाचारपत्रोंमें प्रकाशित उसके सारांशसे ही संतोष करना पड़ा।

कानून सामान्यतः स्वीकार्य

५. प्रार्थी संघ इसे निःसंकोच भावसे स्वीकार करता है कि जिस कानूनकी चर्चा यहाँ की जा रही है वह १९०७ के एशियाई कानून संशोधन अधिनियम २ से अधिक अच्छा है, यद्यपि

१. यह १९-९-१९०८ के इंडियन ओपिनियनमें "ट्रान्सवालके भारतीयोंका साम्राज्य सरकारको प्रार्थनापत्र: पूरा पाठ" शीर्षकसे प्रकाशित किया गया था।

२. ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन।

३. एशियाटिक रजिस्ट्रेशन अमेंडमेंट ऐक्ट।

वह इस दृष्टिसे दोषपूर्ण है कि उसके अनुसार उन एशियाइयोंको, जो ट्रान्सवालमें हैं, किन्तु जिन्हें अभीतक पंजीयन प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) नहीं मिले हैं, यह सिद्ध करनेकी आवश्यकता होती है कि वे युद्धसे ३ वर्ष पहलेसे वहाँ रहते हैं। उनमें से ज्यादातर लोगोंने जायज तरीकेसे देशमें प्रवेश किया है और निहित अधिकार प्राप्त किये हैं। ऐसे एशियाइयोंके उदाहरण भी हैं जो ट्रान्सवालमें युद्धसे पूर्व एक वर्षसे ज्यादा नहीं रहे थे, किन्तु उन्हें पंजीयन प्रमाणपत्र मिल गये हैं। सादर अनुरोध है कि जिन एशियाइयोंको अभीतक पंजीयन प्रमाणपत्र नहीं मिले हैं, किन्तु जो ट्रान्सवालमें हैं, उनके साथ युद्धसे पहले तीन वर्षके निवासके उस कठोर और मनमाने अनुरोधके अनुसार व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए जो उन एशियाइयोंपर लागू होता है, जो अभीतक ट्रान्सवालके बाहर हैं।

६. परवाना (लाइसेंस) देनेसे सम्बन्धित धाराका ठीक-ठीक काममें आना अँगूठा-निशानी सम्बन्धी शर्तोंके उदारतापूर्ण अमलपर ही निर्भर होगा।

अँगुलियोंके निशान

७. विधेयकको दूसरे वाचनके लिए पेश करते हुए उपनिवेश-सचिवने कहा था कि अँगुलियों या अँगूठोंके निशान देनेके मामलेमें आपत्ति नहीं है। प्रार्थी संघकी नम्र सम्मतिमें माननीय मन्त्रीने यह वक्तव्य देकर भारतीय समाजके साथ न्याय नहीं किया; क्योंकि वे भली भाँति जानते थे कि पिछली जनवरीके समझौतेके बाद बहुत-से एशियाइयोंने अँगुलियोंके निशानके विरोधमें बहुत तीव्र आन्दोलन किया था। यद्यपि यह ठीक है कि भारतीय समाजके मुख्य सदस्योंने अँगुलियोंके निशानसे सम्बन्धित आपत्तिको कभी मूलभूत आपत्ति नहीं माना, किन्तु बहुत-से एशियाई, विशेषतः पठान, जो कदाचित १५० से अधिककी संख्यामें इस उपनिवेशमें रहते हैं, इस बातको निःसन्देह सबसे बड़ी आपत्ति मानते थे और अब भी मानते हैं। समझौतेके अन्तर्गत अँगुलियों या अँगूठोंके निशान स्वेच्छासे केवल इसलिए दे दिये गये थे कि सरकारको समाजका वैज्ञानिक वर्गीकरण करनेमें सुविधा हो और समाजकी नेकनीयती और सरकारको सहायता देनेकी इच्छा प्रकट हो। समाजको यह स्वेच्छया कार्य बहुत महँगा पड़ा है। सरकारको उक्त सहायता देनेके कारण [संघके] अध्यक्ष और मन्त्री, दोनोंको अपने देशवासियोंके हाथों गहरी शारीरिक क्षति उठानी पड़ी है।[1] खासे अनुभवके पश्चात् प्रार्थी संघ महामहिम सम्राट्की सरकारको विश्वास दिलाता है कि केवल एशियाइयोंसे किसी बड़ी संख्यामें अनिवार्य रूपसे अँगुलियोंके निशान लेनेसे ऐसा झगड़ा उठ खड़ा होगा। चूंकि ज्यादातर ब्रिटिश भारतीयोंने अधिकारियोंको एक बार ये निशान दे दिये हैं, इसलिए अब उनकी कोई खास जरूरत भी नहीं है। कुछ भी हो, प्रशासन-तन्त्रका वह भाग निर्विघ्न रूपसे काम कर सके, इसके लिए बहुत अधिक उदारता बरतना आवश्यक होगा।

१९०७ के कानून २ को रद्द करनेके विषयमें

८. जैसा कि स्थानीय सरकारकी सेवामें निवेदन किया जा चुका है, १९०७ के एशियाई कानूनके मुकाबले यह कानून भले ही स्वीकार्य हो, प्रार्थी संघ जिस समाजका प्रतिनिधित्व करता है, वह समाज इसके लाभको तबतक स्वीकार नहीं कर सकता जबतक

१. गांधीजीपर १० फरवरी १९०८ को प्रहार किया गया था। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ७४ और ९०-९१।

कानूनकी किताबसे १९०७ का अधिनियम २ हटा नहीं दिया जाता और शिक्षित एशियाइयोंकी स्थिति उचित और न्यायसंगत रूपसे स्पष्ट नहीं कर दी जाती। प्रार्थी संघकी नम्र रायमें, सरकारकी प्रतिष्ठाके लिए ही सही, कानूनका रद किया जाना जरूरी है।

रद करनेका वचन

९. आदरपूर्वक निवेदन है कि माननीय उपनिवेश-सचिवने निश्चित रूपसे वादा किया था कि यदि एशियाई जातियाँ समझौतेका अपना हिस्सा पूरा कर दें, तो कानून रद कर दिया जायेगा। यह मान लिया गया है कि एशियाइयोंने समझौतेके अन्तर्गत अपना कर्तव्य भली भाँति पूर्ण कर दिया है।

१०. किन्तु यह दलील पेश की गई है कि स्वेच्छया पंजीयन (वॉलंटरी रजिस्ट्रेशन) के प्रार्थनापत्रोंकी वापसीकी दरख्वास्तपर फैसला[1] देते हुए न्यायाधीश सॉलोमनने कहा था कि कानूनको रद करनेका वचन सिद्ध नहीं हो पाया है, और इसलिए वैसा कोई वचन नहीं दिया गया था। प्रार्थी संघ महामहिम सम्राट्की सरकारका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता है कि कानूनको रद करनेका प्रश्न अदालतके सामने पेश नहीं था और फैसला उस प्रश्नपर बिलकुल था ही नहीं। अदालतको निश्चय ही यह बताया गया था कि कानूनको रद करनेके सम्बन्धमें प्रार्थीके पास जो सबूत हैं वे सारेके-सारे पेश नहीं किये गये हैं। एक नैतिक आधार देनेके लिए प्रार्थनापत्रके समर्थनमें दिये गये हलफिया बयानोंमें[2] इस विषयके सम्बन्धमें जितना पर्याप्त था उतना कह दिया गया था। प्रार्थीका उद्देश्य यह बताना था कि वह जो अपना स्वेच्छया पंजीयनका प्रार्थनापत्र वापस लेना चाहता है, उसका आधार यह नहीं है कि उसका विचार यों ही बदल गया है, बल्कि यह विश्वास है कि स्थानीय सरकारने अपना वचन भंग कर दिया है।

११. उपनिवेश-सचिवको लिखे गये २९ जनवरीके पत्रमें[3] हस्ताक्षर करनेवालोंका उद्देश्य कानूनको रद करवाना ही था, यह बात स्वयं पत्रसे समझी जा सकती है। उसका एक अंश यह है:

> **इन परिस्थितियोंमें हम एक बार फिर सरकारके सामने विनम्र सुझाव रखेंगे कि सोलह वर्षसे अधिक उम्रके सभी एशियाइयोंको एक निश्चित अवधिके भीतर, उदाहरणार्थ तीन महीनेके भीतर, पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) करा लेनेकी सुविधा दी जाये; इस प्रकार पंजीकृत लोगोंपर *कानून लागू न हो।***

हस्ताक्षर करनेवालोंके सामने जो मूल मसविदा पेश किया गया था, उसमें "कानून" शब्दके आगे "की सजाएँ" शब्द भी थे। ये शब्द इस विचारसे काट दिये गये थे कि जिन्होंने स्वेच्छया पंजीयन कराया है, उन सबपर यदि कानून लागू न हुआ और यदि सभी एशियाइयोंने स्वेच्छया पंजीयन करा लिया, तो कानूनकी किताबमें इस कानूनको रखनेका कोई कारण ही नहीं रहेगा और अधिकारी एशियाइयोंको अनधिकारी एशियाइयोंसे अलग करनेकी व्यवस्था, इसको कानूनी रूप देनेवाले विधेयक (बिल) में, जो पास किया जायेगा, कर दी जायेगी।

१. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ३४०, पाद-टिप्पणी २।
२. वही, पृष्ठ ३०५-०७।
३. वही, पृष्ठ ३९-४१।

१२. किन्तु बात यहीं खत्म नहीं हुई। इस प्रार्थनापत्रके दूसरे हस्ताक्षरकर्ताको, जिसने सम्बन्धित पत्रपर भी हस्ताक्षर किये थे, प्रिटोरिया बुलाया गया और माननीय उपनिवेश-सचिवसे उनकी बातचीत हुई। उस बातचीतमें उनसे यह कहा गया था कि यदि एशियाई अपना इकरार ईमानदारीसे पूरा कर देंगे तो अधिनियम रद करा दिया जायेगा।[1] यह बात ३० जनवरीकी है। उपनिवेश-सचिवके साथ अपनी इस बातचीतके बाद एशियाई पंजीयक (रजिस्ट्रार ऑफ एशियाटिक्स)से चर्चा करनेपर उक्त दूसरे हस्ताक्षरकर्ताके मनमें एशियाई कानूनके रद किये जानेके बारेमें सन्देह उत्पन्न हुआ। इसलिए उन्होंने गत १ फरवरीको अपना सन्देह व्यक्त करते हुए उपनिवेश-सचिवको एक पत्र लिखा।[2]

फरवरी ३ को उन्हें तारसे सन्देश मिला कि वे उपनिवेश-सचिवसे मिलें। वे उनसे मिले भी, और जैसा कि वे सर्वोच्च न्यायालयके सामने अपने हलफिया बयानमें कह चुके हैं, उपनिवेश-सचिवने एशियाई पंजीयककी उपस्थितिमें कानूनको रद करनेका वचन दिया और इस प्रार्थनापत्रके पहले हस्ताक्षरकर्ताकी जानकारीमें उक्त भेंटके बाद कई सभाओंमें ब्रिटिश भारतीयोंके विशाल जनसमूहको इस वचनसे अवगत कराया गया।

१३. पिछली ५ फरवरीको रिचमंडमें की गई एक सभामें उपनिवेश-सचिवने यह कहा: "मैंने उनसे कह दिया है कि कानून तबतक रद नहीं किया जा सकता, जबतक देशमें एक भी एशियाई ऐसा है जिसने पंजीयन न कराया हो।" उन्होंने यह भी कहा कि "जबतक देशका प्रत्येक भारतीय पंजीयन नहीं करा लेता, कानून रद न किया जायेगा।" उक्त उद्धरण गत ६ फरवरीके 'स्टार'से लिया गया है। यही बात उसी तारीखके 'ट्रान्सवाल लीडर'में भी छपी थी।

१४. गत १० फरवरीको पंजीयन कार्यालय (रजिस्ट्रेशन ऑफिस) जाते समय दूसरे हस्ताक्षरकर्तापर बहुत बुरी तरह हमला किया गया, क्योंकि वे अँगुलियोंके निशान देनेके लिए जा रहे थे। कुछ समयके लिए पंजीयन लगभग बन्द हो गया। एशियाई डर गये। उन्हें सरकारके इरादोंके बारेमें सन्देह था। और जो प्रार्थनापत्र दिये गये थे उनमें से कुछकी रसीदें देखनेपर उनका सन्देह पुष्ट हो गया। ये पुराने फार्मोंपर दी गई थीं, जिनका सम्बन्ध १९०७ के एशियाई कानून संशोधन अधिनियम २ से[3] था। ऐसी शंकाओंको निवृत्त करनेके उद्देश्यसे पंजीयक (रजिस्ट्रार)ने अनेक प्रमुख एशियाइयोंसे, और ब्रिटिश भारतीय संघके सहायक अवैतनिक मन्त्रीसे[4] भी जो ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयके वकील भी हैं, यह कहा कि स्वेच्छया पंजीयन (वॉलंटरी रजिस्ट्रेशन) पूरा होनेपर कानून रद कर दिया जायेगा। अधिक लोग स्वेच्छया पंजीयन करायें, इसके लिए एशियाई पंजीयक 'गज़ट' में यह सूचना प्रकाशित करनेके लिए भी तैयार था कि यदि एशियाइयोंने स्वेच्छया पंजीयन करा लिया, तो कानून रद कर दिया जायेगा। पंजीयकने यह सूचना इस प्रार्थनापत्रके दूसरे हस्ताक्षरकर्ताके सामने उसी समय पेश की, जब वे बिस्तरमें ही पड़े थे और कुछ संशोधनोंके बाद दोनोंने आपसमें यह तय किया कि सूचना 'गज़ट'में प्रकाशित की जानी चाहिए। इसी

१. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४३–४६।
२. वही, पृष्ठ ४९–५१।
३. एशियाटिक लॉ अमेंडमेंट ऐक्ट २।
४. हेनरी एस० एल० पोलक।

बीच पंजीयक द्वारा दिये गये मौखिक आश्वासनोंका वांछित परिणाम हुआ और पंजीयन अबाध गतिसे होने लगा। इसलिए पंजीयकने दूसरे हस्ताक्षरकर्तासे दुबारा मिलनेपर पूछा कि क्या सूचनाको अब भी प्रकाशित करना आवश्यक है और दूसरे हस्ताक्षरकर्ताने यह जाननेपर कि पंजीयन अबाध गतिसे हो रहा है, निषेधात्मक उत्तर दे दिया।

१५. फरवरीकी २२ तारीखको दूसरे हस्ताक्षरकर्ताने उपनिवेश-सचिवकी स्वीकृतिके लिए और उनकी अनुमतिसे प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम (इमिग्रेशन रेस्ट्रिक्शन ऐक्ट)का संशोधन करने और एशियाई कानूनको रद करनेके लिए एक विधेयकका मसविदा[1] (ड्राफ्ट बिल)[1] पेश किया। इस पत्रकी पहुँच बाकायदा भेजी गई, किन्तु कानूनको रद करनेके उल्लेखका कोई खण्डन नहीं किया गया।

१६. अन्तमें, यद्यपि उपनिवेश-सचिवने सर्वोच्च न्यायालयके सामने अपने हलफिया बयानमें[2] यह कहा है कि उन्होंने कानूनको रद करनेका वचन कभी नहीं दिया और यद्यपि एशियाई पंजीयकने उस बयानका समर्थन किया है,[3] फिर भी उपनिवेश-सचिवने इस वचनको गम्भीरता-पूर्वक अस्वीकार नहीं किया, जैसा कि विधेयकके दूसरे वाचनमें दिये गये उनके भाषणसे प्रकट होता है; और वे कमसे-कम यह तो स्वीकार करते ही हैं कि दूसरे हस्ताक्षरकर्ताके साथ कानूनको रद करनेके प्रश्नपर उन्होंने खुलकर बातचीत की थी।

१७. जिन ब्रिटिश भारतीयोंको एशियाई पंजीयकने कानूनको रद करनेका आश्वासन दिया था, उनके कुछ वक्तव्य[4] इसके साथ संलग्न हैं।

१८. इसके सिवा प्रार्थी संघ महामहिम सम्राट्की सरकारका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता है कि रद करनेवाले विधेयककी रूपरेखा वस्तुतः बना ली गई थी और उपनिवेश-सचिवने कुछ लोगोंमें इसे निजी तौरपर घुमानेके लिए उसे छापनेका हुक्म भी दे दिया था। वह दूसरे हस्ताक्षरकर्ताको दिखाया गया था और उसे सिर्फ इसलिए वापस ले लिया गया था कि दूसरे हस्ताक्षरकर्ताने उसमें कुछ संशोधन करनेकी प्रार्थना की थी। वे सब संशोधन, कुछ परिवर्तनोंके साथ, उस कानूनमें शामिल कर लिये गये हैं, जिसकी यहाँ चर्चा की जा रही है। उनमें अपवाद केवल वह संशोधन है जो शिक्षित एशियाइयोंके दर्जेको प्रभावित करता है।

कानूनको बरकरार रखना अनावश्यक

१९. उपनिवेश-सचिवके वचनके अतिरिक्त, एक ही विषयसे सम्बन्धित एक ही तरहके दो कानून कायम रखना केवल परेशानी और दुःखजनक परिणामोंका ही कारण हो सकता है। यह कहा गया है कि सरकारका इरादा १९०७ के अधिनियम २ को निःसत्व मानकर चलना है। किन्तु प्रार्थी संघ जिस समाजका प्रतिनिधित्व करता है, उसके लिए लम्बे और तीव्र संघर्षके बाद अनिश्चयकी स्थितिमें रहना असम्भव है। इन दोनों कानूनों द्वारा जो अधिकार दिये गये हैं, वे अज्ञानी, अयोग्य और पूर्वग्रहसे ग्रस्त अफसरों द्वारा ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध काममें लाये जा सकते हैं और उनके परिणाम घातक हो सकते हैं।

—१. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १००-०१।
२ और ३. वही, परिशिष्ट ७।
४. देखिए परिशिष्ट ४।

२०. प्रार्थी संघको यह कहनेकी इजाजत दी जाये कि दूसरे कानूनसे १९०७ के कानून २ का प्रभाव समाप्त नहीं होता। सरकारकी मर्जीसे उन दोनों कानूनोंमें से किसीको भी एशियाई समाजके विरुद्ध काममें लाया जा सका है। इसी प्रकार एशियाइयोंको भी छूट है कि यदि उनसे कोई लाभ हो तो वे दोनोंमें से किसीसे भी लाभ उठा लें।

२१. उदाहरणके लिए, यद्यपि नये कानूनके अन्तर्गत तुर्कीके मुसलमान पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) की परेशानी-भरी पद्धतिसे मुक्त हैं, फिर भी ट्रान्सवालमें आनेवाले किसी तुर्क मुसलमानके विरुद्ध १९०७के अधिनियम २ के अन्तर्गत कार्रवाई की जा सकती है। इसलिए ब्रिटिश भारतीय समाजकी एक मुख्य आपत्ति अब भी ऐसी रह जाती है जिसका निराकरण नहीं होता। उपनिवेश-सचिवने इस सन्दर्भमें जो-कुछ कहा, वह असंगत है। वे कहते हैं:

> वे (एशियाई) इन कठिनाइयोंको इस तरह प्रस्तुत करते हैं कि १९०७ के कानून २ के अन्तर्गत गणराज्यकी संसदके १८८५ के कानून ३ में दी गई एशियाइयोंकी परिभाषा कायम रखी गई और उस परिभाषामें तुर्की साम्राज्यके प्रजाजन तुर्क मुसलमान इस देशके निवासी नहीं माने गये। यह कहा गया कि इस व्यवस्थाके द्वारा तुर्कोंको देशमें न आने देना उद्दिष्ट नहीं है; किन्तु यह इस्लाम-धर्मपर केवल एक लांछन और कलंक लगाना है। किसी भी गोरेका या सरकारका वैसा करनेका रंचमात्र भी इरादा नहीं है। यहाँ तुर्क संख्यामें हमेशा कम रहे हैं। और मुझे बताया गया है कि अब यहाँ तुर्क हैं ही नहीं और कमसे-कम तुर्कीसे इस देशमें उनके किसी बड़ी संख्यामें आनेका कोई भय नहीं है। तुर्कीके जो प्रजाजन यहाँ आते हैं, वे केवल ईसाई हैं तथा कुछ माननीय सदस्योंने जिनके विरुद्ध तीव्र आपत्तिकी है, वे सीरियाई और अन्य लीवान्टी[1] हैं। किन्तु वे ईसाई हैं और तुर्की साम्राज्यके मुस्लिम प्रजाजन इस देशमें भर जायेंगे, ऐसा खतरा कभी पैदा नहीं हुआ और न कभी पैदा होनेकी सम्भावना है। उस आपत्तिको, जो भावनात्मक आधारपर की गई थी और जिसका निराकरण क्रियात्मक आधारपर करनेमें कोई आपत्ति न थी, हमने दूर कर दिया है। माननीय सदस्य देखेंगे कि सदनके सामने प्रस्तुत विधेयक (बिल) से वह प्रतिबन्ध हट जाता है जो किसी व्यक्तिके प्रवेशपर केवल तुर्क साम्राज्यका प्रजाजन होनेसे लगता था।

२२. इसके अतिरिक्त यद्यपि विचाराधीन कानूनसे अवयस्क व्यक्तिगत पंजीयनसे मुक्त हो जाते हैं, किन्तु १९०७ का कानून २ अनुमानतः अवयस्कोंके विरुद्ध प्रयुक्त किया जा सकता है और उससे बेहद तकलीफें पैदा हो सकती हैं।

२३. नये कानूनमें शराब-सम्बन्धी अपमानास्पद धारा कहीं नहीं रखी गई, किन्तु पुराने कानूनके अन्तर्गत कोई भी एशियाई छूटके अनुमतिपत्र (परमिट) की अर्जी दे सकता है। कदाचित यह कहा जायेगा कि यह तो स्पष्ट ही एक सुविधा है। किन्तु प्रार्थी संघकी नम्र सम्मतिमें यह छिपा हुआ अपमान उपनिवेशकी कानूनकी पुस्तकको अभीतक विरूपित कर रहा है।[2]

२४. सरकार अपंजीकृत एशियाईके विरुद्ध दोनोंमें से किसी भी कानूनके अन्तर्गत कार्रवाई कर सकेगी और इस तरह ऐसे एशियाईको कदम-कदमपर तंग कर सकेगी।

१. पूर्वी मध्यसागरके द्वीपों और पड़ोसके देशोंके निवासी।
२. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ १२५।

२५. पुराने कानूनको बरकरार रखनेसे बेईमान एशियाइयोंके लिए जालसाजीका मार्ग खुलता है। यद्यपि नये कानूनमें उपनिवेशके बाहर दक्षिण आफ्रिकाके किसी स्थानसे पंजीयन प्रार्थनापत्र देनेकी व्यवस्था है, फिर भी उसमें ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है जिससे किसी एशियाईको उपनिवेशमें आने, कानूनके अन्तर्गत सात दिन तक रहनेका दावा करने और उस अवधिमें समाजमें घुलमिलकर अनपहचान हो जानेसे रोका जा सके।

२६. जैसा उदाहरण ऊपर दिया गया है, वैसे उदाहरण अनगिनत दिये जा सकते हैं, किन्तु हमारा विश्वास है कि उपर्युक्त उदाहरणसे यह पर्याप्त रूपसे प्रकट हो जायेगा कि यदि उपनिवेशकी कानूनकी किताबमें पुराने कानूनको रहने दिया गया, तो ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति कितनी अनिश्चित हो जायेगी।

२७. यद्यपि अभी नया कानून महामहिमकी सरकारके विचाराधीन ही है, फिर भी स्थानीय सरकारने उन लोगोंपर मुकदमे चलाने शुरू कर दिये हैं जो उस कानूनके दायरेमें आते हैं और जिन्हें उसके अन्तर्गत सुरक्षा प्राप्त है। इस प्रकार एक ब्रिटिश भारतीय,[1] जो सुशिक्षित है और इसलिए जिसकी आसानीसे शिनाख्त की जा सकती है, जिसने लॉर्ड मिलनरकी सलाहके[2] अनुसार स्वेच्छया पंजीयन (वॉलंटरी रजिस्ट्रेशन) कराया था और जिसके पास शान्ति-रक्षा अध्यादेश अनुमतिपत्र (पीस प्रिजर्वेशन ऑर्डिनेंस परमिट) भी है, नया कानून पास होनेके बाद गिरफ्तार कर लिया गया और उसपर अपंजीकृत (अनरजिस्टर्ड) एशियाई होनेके अपराधमें पुराने कानूनके अन्तर्गत मुकदमा चलाया गया। यद्यपि न्यायाधीशने इसपर आश्चर्य प्रकट किया, किन्तु उसके सम्मुख उसे सात दिनके भीतर उपनिवेशसे चले जानेका नोटिस देनेके सिवा कोई अन्य मार्ग न था। इस प्रकार नये कानूनसे सुरक्षित होनेपर भी पुराने कानूनके अन्तर्गत अनेक एशियाइयोंको, जो उपनिवेशके वैध निवासी हैं, मुकदमा चलाकर उपनिवेशसे निकाल बाहर करना सम्भव है।

२८. एक दूसरे भारतीयपर, जिसे अधिकारी भली भाँति जानते हैं, जो पीट रिटीफका व्यापारी है और जिसके पास अधिवास-प्रमाणपत्र हैं, पुराने कानूनके अन्तर्गत अभी-अभी मुकदमा चलाया गया है और उसे जुर्मानेकी या १४ दिनकी सादी कैदकी सजा दी गई है — इसलिए नहीं कि वह उपनिवेशमें रहनेका अधिकारी नहीं है, बल्कि इसलिए कि उसने अँगूठेका निशान देनेसे इनकार कर दिया है। उसके मुकदमेके दरमियान सरकारी पक्षके मुख्य गवाहने स्वीकार किया कि वह उस व्यापारीको ट्रान्सवालके निवासीके रूपमें जानता है और उस वकीलने भी, जो अनुमतिपत्र (परमिट) लेनेके समय उसके साथ था, उसकी गवाही दी और शिनाख्त की। श्री इब्राहीम उस्मान (व्यापारीका यही नाम है) ने जुर्माना देनेकी अपेक्षा, जिसे वे गैरकानूनी वसूली मानते हैं, कैद भोगना ज्यादा पसन्द किया और वे अब महामहिमकी फोक्सरस्ट-जेलमें अपनी सजा काट रहे हैं।[3] श्री इब्राहीम उस्मान अंग्रेजी पढ़ और लिख सकते हैं और रोमन लिपिमें सुन्दर हस्ताक्षर कर सकते हैं।

२९. इस परिस्थितिमें प्रार्थी संघका विश्वास है कि महामहिमकी सरकार नये कानूनको स्वीकृत करनेसे पहले पुराने कानूनको रद करवायेगी।

१. ये मूलजी भाई पटेल थे; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४१५-१६।
२. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३२८।
३. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ४।

शिक्षित भारतीयोंका दर्जा

३०. कानूनकी किताबसे यदि पुराना कानून हटा दिया जाये तो ऐसा लगता है कि, ज़हाँतक प्रवासका सम्बन्ध है, ब्रिटिश भारतीयोंको सम्राट्के अन्य प्रजाजनोंके समान दर्जा देनेमें कोई बाधा नहीं रहेगी।

३१. सन् १९०७ के प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम (इमिग्रेशन रेस्ट्रिक्शन ऐक्ट) १५ में सामान्य शैक्षणिक कसौटीका विधान है। और उसके अन्तर्गत जो एशियाई शैक्षणिक कसौटीमें खरा उतरता है उसके उपनिवेशमें प्रवेश करनेपर अन्यथा कोई रोक नहीं रहती। तब वह एशियाई कानूनके अनुसार पंजीयनका भागी हो जाता है और यदि वह उसकी शर्तें पूरी नहीं करे तो भी वह निषिद्ध प्रवासी नहीं होता, अपंजीकृत (अनरजिस्टर्ड) एशियाई हो जाता है। इस प्रकार श्री सोराबजी शापुरजी प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत उपनिवेशमें आये। उनको बिना रोक-टोकके यहाँ आने दिया गया। सात दिन उपनिवेशमें रहनेके बाद उनपर १९०७ के कानून २ के अन्तर्गत अपंजीकृत होनेके आरोपमें मुकदमा चलाया गया।[1] श्री सोराबजीने स्वेच्छया पंजीयन (वॉलंटरी रजिस्ट्रेशन) के लिए प्रार्थनापत्र दिया था। वह अस्वीकार कर दिया गया था। वे १९०७ के अधिनियम २ को माननेके लिए तैयार न थे। चार्ल्सटाउनके टाउन क्लार्क तथा उस नगरके अन्य अधिकारियोंके बहुत ही अच्छे प्रमाणपत्र उनके पास थे। फोक्सरस्टके न्यायाधीशने उनके प्रार्थनापत्रपर सिफारिश की थी। वे सूरतके हाई स्कूलमें सातवें दर्जे तक पढ़े हैं और चार्ल्सटाउनकी अदालतमें उन्होंने अक्सर दुभाषियेका काम किया है। एशियाई कानूनके अन्तर्गत अभियोग चलाये जानेपर उन्हें उपनिवेशसे जानेका नोटिस दिया गया।[2] ब्रिटिश प्रजाजनकी हैसियतसे उन्होंने उस नोटिसको माननेसे इनकार कर दिया। इसलिए उनपर मुकदमा चलाया गया और उन्हें एक महीनेकी सख्त कैदकी सजा दी गई, जिसके लिए जुर्मानेका विकल्प न था।[3] श्री सोराबजीने अपनी सजा पूरी की और मीयादके अन्तिम दिन वे गोपनीय ढंगसे निर्वासित कर दिये गये।

३२. प्रार्थी संघ सादर और नम्रतापूर्वक निवेदन करता है कि किसी भी ब्रिटिश उपनिवेशमें निर्दोष ब्रिटिश प्रजाजनोंके साथ इस ढंगका बरताव किये जानेका कोई दूसरा उदाहरण नहीं है।

३३. श्री सोराबजीके मामलेसे यह जाहिर होता है कि प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम (इमिग्रेशन रेस्ट्रिक्शन ऐक्ट) से रंगके कारण कोई रोक नहीं लगती। ऐसा लगता है कि पिछली २२ जुलाईको ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयमें ताज बनाम लल्लूका जो मुकदमा[4] चला था उससे भी उपर्युक्त दृष्टिकोण सत्य सिद्ध होता है।

३४. वह एशियाई कानून ही है जिसका उद्देश्य जाहिरमें केवल उनकी शिनाख्त करना है, जिनकी अन्यथा आसानीसे शिनाख्त नहीं की जा सकती, किन्तु जो शिक्षित भारतीयोंके आड़े आता है।

१. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ३३७-४० ।
२. वही, पृष्ठ ३४७-५१ ।
३. वही, पृष्ठ ३७०-७१ ।
४. वही, पृष्ठ ३९१-९२ ।

३५. प्रार्थी संघ सादर यह माँग करता है कि शिक्षित एशियाइयोंको स्वतन्त्र रूपसे प्रवेश करनेका वैसा ही अधिकार होना चाहिए जैसा उन्हें दूसरे उपनिवेशोंमें प्राप्त है। इसमें उनपर केवल एक ऐसी सर्वसामान्य शैक्षणिक कसौटीकी पावन्दी हो जो सवपर लागू होती हो। ऐसे एशियाइयोंसे शिनाख्तकी ऐसी विधियोंका पालन करने और जिन प्रमाण-पत्रों (सर्टिफिकेट्स) की तनिक भी आवश्यकता नहीं है, उनको सदा साथ रखनेकी अपेक्षा करना वहुत अनुचित, अपमानजनक और पतनकारी है।

३६. प्रार्थी संघ महामहिमकी सरकारका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता है कि विदेशी यदि यूरोपीय हों और दक्षिण आफ्रिकाके वतनी यदि शैक्षणिक कसौटीमें उत्तीर्ण हो जायें तो ट्रान्सवालमें आ सकते हैं। इसलिए शिक्षित ब्रिटिश भारतीय उपर्युक्त दोनों वर्गोंसे नीचे रखे गये हैं।

३७. यह ठीक है कि मलायी लोगोंपर, जो दक्षिण आफ्रिकाके निवासी हैं, ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेपर कोई प्रतिवन्ध न हो, किन्तु प्रार्थी संघ यह नहीं समझ पाता कि दक्षिण आफ्रिकामें उत्पन्न हुए भारतीय भी उसी वर्गमें क्यों न रखे जायें। ऐसे वहुत-से भारतीय युवक हैं, जिनके लिए दक्षिण आफ्रिका ही उनका देश है और भारत परदेश।

३८. यह कहा गया है कि शिक्षित भारतीयोंका उपनिवेशमें प्रवेश खुला रखनेसे उप-निवेशमें "अर्द्ध-शिक्षित भारतीय लड़के" भर जायेंगे और वे उपनिवेशवासी आम यूरोपीयोंसे स्पर्धा करेंगे। प्रार्थी संघने यह तर्क भी उपस्थित नहीं किया है। शैक्षणिक कसौटीकी कठोरता-पर आपत्ति न की जायेगी। जिस वातपर नम्रतापूर्वक आपत्ति की जाती है वह है कानूनमें निहित वर्ग और रंग-सम्वन्धी भेदभाव, जो शिक्षित भारतीयोंके साथ भी किया जाता है। शैक्षणिक कसौटीके अन्तर्गत वहुत कम भारतीय प्रतिवर्ष नेटालमें प्रवेश कर पाते हैं।

३९. प्रार्थी संघ तो यह चाहता है कि अत्यन्त सुसंस्कृत और शिक्षित भारतीय, ऊँचे धन्धोंवाले लोग और विश्वविद्यालयोंसे उपाधियाँ-प्राप्त लोग अधिकृत रूपसे उपनिवेशमें प्रवेश कर सकें। ऐसे लोग स्वभावतः अधिवासी समाजकी आवश्यकताओंके लिए जरूरी हैं।

४०. यह भी कहा गया है कि नये कानूनके खण्ड १६ में पुराने कानूनकी तरह ही शिक्षित भारतीयोंको राहत देनेकी व्यवस्था उपलब्ध है। किन्तु ऐसी वात नहीं है। उस खण्डमें केवल स्थायी अनुमतिपत्र (परमिट) की गुंजाइश है और उसके आधारपर उसका स्वामी कोई स्वतन्त्र धन्धा नहीं कर सकता। प्रार्थी संघके विचारमें उस खण्डका मंशा एशियाइयोंको, चाहे वे शिक्षित हों या अशिक्षित, उपनिवेशमें अस्थायी निवासकी सुविधा देना है और उसमें अस्थायी अनुमतिपत्रों (परमिटों)के अन्तर्गत व्यापारियोंको अपने लिए आवश्यक मुनीम और दूसरे नौकर लानेकी सुविधा देनेकी भी व्यवस्था है।

४१. प्रार्थी संघ जो राहत प्राप्त करना चाहता है, वह दूसरी तरहकी है। जो शिक्षित भारतीय परीक्षामें, भले ही वह कितनी ही कड़ी हो, उत्तीर्ण हो सकते हैं उन्हें सामान्य प्रवासी कानूनके अन्तर्गत आना चाहिए और उनपर कोई रोक आदि न लगाई जानी चाहिए।

४२. जो शिक्षित भारतीय उपनिवेशमें हैं यदि उन्होंने पंजीयन कराया है तो केवल इसलिए कि वे उदाहरण प्रस्तुत कर सकें, सरकारको सहायता दे सकें और जिन थोड़े-से लोगोंको उपनिवेशमें प्रवेशकी अनुमति दी जाये उनकी व्यक्तिगत स्वतन्त्रताको अपमानजनक और अनावश्यक प्रतिवन्धोंसे मुक्त कर सकें।

४३. यहाँ यह कह दें कि युद्धसे पहले एशियाइयोंके प्रवासपर कोई रोक न थी। शान्ति-स्थापनाके बाद प्रवास सामान्यतः शान्ति-रक्षा अध्यादेश (पीस प्रिजर्वेशन ऑर्डिनेंस) के अन्तर्गत नियन्त्रित था। एशियाइयोंका प्रवास १९०७ के एशियाई कानून द्वारा नियन्त्रित नहीं होता था; किन्तु उसमें उपनिवेशमें जो एशियाई बस चुके थे उनके पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) की व्यवस्था थी। तब भी जिस तरह शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत यूरोपीय अनुमतिपत्र ले सकते थे, उसी प्रकार एशियाई भी अनुमतिपत्र ले सकते थे और उनमें से बहुतोंने वस्तुतः ऐसे अनुमतिपत्र लिये भी थे। इसके बाद प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम[1] आया, उसने शान्ति-रक्षा अध्यादेशका स्थान लिया और उसमें नवागन्तुकोंके लिए एक सामान्य शिक्षा-परीक्षाकी व्यवस्था की गई।[2] इस तरह एशियाई कानूनके अतिरिक्त उपनिवेशमें शिक्षित एशियाइयोंके प्रवेशमें कभी कोई कानूनी बाधा नहीं रही है। इसलिए यह सही नहीं है, जैसा कि स्थानीय अधिकारियोंने कहा है, कि ब्रिटिश भारतीय कोई नया विवाद उठा रहे हैं। यह प्रश्न पहले-पहल माननीय उपनिवेश-सचिवने उठाया था, जब वे पूर्व-उल्लिखित निरसन-विधेयकके[3] द्वारा प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमको सब शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशपर रोक लगानेकी दृष्टिसे संशोधित करना चाहते थे।

अनाक्रामक प्रतिरोध

४४. प्रार्थी संघको दुःख है कि महामहिमकी सरकारने संघ और १९०६ में लन्दन भेजे गये शिष्टमण्डलकी[4] प्रार्थना नहीं सुनी और १९०७ का कानून २ स्वीकार कर लिया।

४५. प्रार्थी संघ महामहिमकी सरकारका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता है कि शिष्टमण्डलने उसके सामने सितम्बर १९०६ को एम्पायर नाटकघरमें हुई ब्रिटिश भारतीयोंकी सार्वजनिक सभाका चौथा प्रस्ताव प्रस्तुत किया था।[5] वह प्रस्ताव इस प्रकार है:

> **विधान सभा, स्थानीय सरकार और साम्राज्य-अधिकारियों द्वारा मसविदा-रूप एशियाई अधिनियम संशोधन अध्यादेश (ड्राफ्ट एशियाटिक लॉ अमेंडमेंड ऑर्डिनेंस) के सम्बन्धमें ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय समाजकी विनीत प्रार्थना अस्वीकृत कर दी जानेकी अवस्थामें, ब्रिटिश भारतीयोंकी यहाँ समवेत यह सार्वजनिक सभा गम्भीरतापूर्वक और खेदपूर्वक यह निश्चय करती है कि इस मसविदा-रूप अध्यादेशके अपमानजनक, अत्याचारपूर्ण और अब्रिटिश विधानोंके सामने झुकनेकी अपेक्षा ट्रान्सवालका प्रत्येक ब्रिटिश भारतीय अपने-आपको जेल जानेके लिए पेश करेगा, और तबतक ऐसा करना जारी रखेगा जबतक अत्यन्त दयालु महामहिम सम्राट् कृपा करके राहत नहीं देंगे।**

४६. महामहिमकी सरकारपर स्पष्ट ही इस प्रस्तावका बहुत कम असर पड़ा। किन्तु उसके बाद जो कुछ हुआ, उससे प्रकट हो गया है कि सभाकी कार्रवाई संजीदगीसे की गई थी।

१. इमिग्रेशन रेस्ट्रिक्शन ऐक्ट।
२. अधिनियमके पाठके लिए देखिए, खण्ड ७ का परिशिष्ट ३।
३. रिपीलिंग बिल।
४. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ १२०-३५।
५. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४३४।

४७. निम्न अंश स्थानीय सरकारको १९०७ में दिये गये सामान्य प्रार्थनापत्रका[1] है :

जो विषम स्थिति उत्पन्न हो गई है, उसका प्रतिकार केवल इस अधिनियमको पूरी तरह रद करनेसे ही हो सकता है, उससे कम किसी कार्रवाईसे नहीं। हमारी विनीत सम्मतिमें अधिनियम हमारे आत्मसम्मानको गिराने तथा हमारे धर्मोंपर प्रहार करनेवाला है, और इसको खतरनाक मुजरिमोंके सम्बन्धमें ही लागू करनेका खयाल किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त हमने जो गम्भीर शपथ ली है उसके कारण हमारे लिए, साम्राज्यके सच्चे नागरिकों और ईश्वरसे भय करनेवाले लोगोंके रूपमें, अधिनियमके विधानके सम्मुख न झुकना आवश्यक हो गया है, भले ही हमें इसके परिणाम कुछ भी क्यों न भुगतने पड़ें; और जो, हम समझते हैं, जेल, निर्वासन और हमारी जायदादकी बरबादी या जब्ती या इनमें से कोई भी हो सकता है।

४८. इस लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए ३५० से अधिक भारतीयोंने कैदकी सजा भोगी है। अनेक लोगोंने अपना माल-असबाब नीलाम होने दिया है। कुछ लोगोंने अपनी अन्तरात्माकी आवाजको दबानेके बजाय सरकारी अथवा निजी नौकरियोंसे बर्खास्तगी मंजूर की है और लगभग सभीने माली नुकसान उठाया है। कुछ तो सचमुच दरिद्र हो गये हैं।

४९. प्रार्थी संघने अपने प्रति किये गये घोर अन्यायकी ओर ध्यान आकर्षित करनेकी यह विधि इसलिए चुनी है कि यह उनके ब्रिटिश प्रजाजनके दर्जे और मनुष्योचित आत्मसम्मानसे अत्यधिक मेल खाती है।

५०. इस आन्दोलनको अनाक्रामक प्रतिरोध (पैसिव रेजिस्टेन्स) का नाम अधिक अच्छे नामके अभावमें दिया गया है। किन्तु वह वास्तवमें उस कानूनका सविनय विरोध है जो ब्रिटिश भारतीयोंको बहुत नापसन्द है और जिसे बनानेमें उनका कोई हाथ नहीं है।

५१. नम्र निवेदन है कि प्रतिरोध शब्दसे सामान्यतः जो अर्थ समझा जाता है, उस अर्थकी कोई कल्पना उस जन-समुदायके प्रतिरोधसे नहीं मिलती जो व्यक्तिगत कष्ट उठा रहा है।

५२. प्रार्थी संघने अनुभवसे जाना है कि कमसे-कम ब्रिटिश साम्राज्यमें सम्राट्के प्रजाजनोंकी शिकायतें वास्तवमें केवल तभी दूर होती हैं, जब वे यह दिखा देते हैं कि वे राहत प्राप्त करनेके उद्देश्यसे कष्ट उठानेके लिए तैयार हैं।

५३. बचपनसे ही ब्रिटिश भारतीयोंको यह सिखाया गया है कि ब्रिटिश संविधानमें कानूनकी दृष्टिसे सब प्रजाजन समान हैं, किन्तु जब वे इस उपनिवेशमें समानता माँगते हैं, तो उनकी खिल्ली उड़ाई जाती है या वे धृष्ट माने जाते हैं।

५४. ब्रिटिश भारतीयोंको मताधिकार प्राप्त नहीं है और वे, लोगोंके वर्तमान मनोभावोंको देखते हुए, कोई मताधिकार चाहते भी नहीं। इसलिए उनके सामने केवल यही उपाय रह जाता है कि वे शासकोंसे प्रार्थना करें और अपनी सचाई बतानेके उद्देश्यसे अपने विचारोंके लिए कष्ट भोगनेको तैयार रहें।

५५. प्रार्थी संघ भारतीय भावनाको जहाँतक समझ सका है, अधिकतर भारतीय दृढ़-प्रतिज्ञ हैं कि जबतक उनके द्वारा माँगा गया साधारण न्याय प्राप्त नहीं हो जाता, तबतक वे

१. देखिए खण्ड ७, पृष्ठ २३८।

नये कानूनके अन्तर्गत प्राप्त लाभोंको स्वीकार करनेसे इनकार करते रहेंगे और नम्रतापूर्वक कष्ट सहते रहेंगे।

निष्कर्ष

५६. अन्तमें प्रार्थी संघ विनयपूर्वक निवेदन और प्रार्थना करता है कि यदि महामहिमकी सरकार ब्रिटिश संविधानके सिद्धान्तोंके अनुरूप उपनिवेशमें रहनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंको, १९०७ के कानून २ को रद करवाकर और शिक्षित भारतीयोंका दर्जा निश्चित करवाकर, न्याय नहीं दिला सकती, तो १८५८ की[1] गौरवपूर्ण घोषणा वापस ले ली जाये और उनसे कह दिया जाये कि "ब्रिटिश प्रजा" शब्दोंका अर्थ उनके लिए उससे भिन्न होता है जो यूरोपीयोंके लिए होता है। और इस कार्यके लिए हम अनुगृहीत होंगे, आदि, आदि।

ईसप इस्माइल मियाँ
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ
मो० क० गांधी
मन्त्री,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१२८

८. तार: द० आ० ब्रि० भा० समितिको[2]

जोहानिसबर्ग
सितम्बर ९, १९०८

पन्द्रह निर्वासित ब्रिटिश भारतीयोंको पुनः प्रवेश करनेपर भारी सजाएँ। दाउद, रुस्तमजी, आंगलिया, राँदेरियाको तीन महीनेकी सख्त कैद या ५० पौंड जुर्माना। दूसरोंको छः सप्ताहकी सख्त कैद या २५ पौंड जुर्माना। सबका युद्ध-पूर्व निवासी होने या शैक्षणिक योग्यताके आधारपर ट्रान्सवालमें प्रवेशके अधिकारका दावा। कैदियोंमें हालके जूलू अभियानके तीन सार्जेंट, सात मुसलमान, दो पारसी, छः हिन्दू शामिल। अत्यन्त सनसनी। संघर्ष पुनः प्रारम्भ होनेके समयसे सब वर्गों [के लोगों] को सब स्थानोंसे १७५ गिरफ्तारियाँ। इतनी बेहद तकलीफका कारण विधि-पुस्तकमें ऐसा कानून बनाये रखना जो सरकार द्वारा निःसत्व घोषित, और थोड़े-से उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंके पुनः प्रवेशपर प्रतिबन्ध, जो सर्वथा

१. मूलमें "१८५७" है।

२. इसी तारीखको गुजरात भारतीय संघ (गुजरात इंडियन असोसिएशन), जिम्बर्स्ने भी एक तार भेजा था। दोनों तारोंकी प्रतियाँ श्री रिचने १० सितम्बरको उपनिवेश-मन्त्रीको प्रेषित कर दी थीं।

अनावश्यक और अब्रिटिश। आशा है, लॉर्ड एम्टहिल तथा अन्य राहत प्राप्त करानेके लिए अधिकतम प्रयत्न करेंगे। भारतीयोंको सहज न्यायसे निराश न होने दिया जाये।

[मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]
कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१३२

९. भेंट: 'स्टार' के प्रतिनिधिको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर ९, १९०८

फोक्सरस्टके न्यायाधीशने कल उन भारतीयोंको, जो निर्वासित कर दिये गये थे और उपनिवेशमें फिर प्रविष्ट हुए थे, तीन-तीन महीनेकी सख्त कैदकी सजा दी है। भारतीयोंकी विचार-पद्धतिके अनुसार इस सजासे उनके पक्षको बहुत बल मिला है, और यह स्पष्ट है कि वे आशा करते हैं, संघर्षके दौरान इस प्रकारकी घटनाएँ साम्राज्य-सरकारको उनके पक्षमें हस्तक्षेप करनेपर विवश कर देंगी। आज जब 'स्टार' का एक प्रतिनिधि श्री गांधीसे उनके कार्यालयमें मिला तब वहाँ आशाकी एक प्रबल भावना व्याप्त थी। अनाक्रामक प्रतिरोध आन्दोलनके नेता [श्री गांधी] ने कहा:

हालाँकि यह सही है कि हम भारतीयोंने जो माँगा था वह हमें मिल गया है, किन्तु इसमें सरकारके लिए श्रेयकी कोई बात है, ऐसा नहीं झलकता है; क्योंकि वह अदालतोंके लिए लगभग लाजमी-सा कर देती है कि वे उन व्यक्तियोंको, जो अन्तत: सरकारके राजनीतिक विरोधी हैं, ऐसी भारी सजाएँ दें मैं इसे सरकारको दी गई शक्तिका एक प्रतिनिधित्वहीन वर्गके प्रति द्वेषपूर्ण दुरुपयोग समझता हूँ। मेरी रायमें इन सजाओंका नतीजा होगा निष्कासनके हास्यास्पद नाटकका अन्त। किन्तु यदि यह नाटक जारी रखा गया, और यदि मैं अपने देशवासियोंकी मनोदशाको सही-सही जानता हूँ, तो वे निश्चित रूपसे बार-बार प्रवेश करना जारी रखेंगे और ब्रिटिश नागरिककी हैसियतसे अपने अधिकार माँगते रहेंगे। जब मैं कानूनकी निगाहमें समानताके व्यवहारकी बात करता हूँ तब मेरे इस विचारकी खिल्ली उड़ाई जाती है; किन्तु भले लोग मेरे साथ हैं, क्योंकि स्वयं कर्नल सीलीने भी यही दलील पेश की है।[1] मेरी समझमें यही एक चीज है जो सारे साम्राज्यको एक सूत्रमें बाँधती है। कानूनी असमानताका विचार दाखिल करते ही साम्राज्यकी नींव खोखली हो जाती है। इस विचारसे मेरा अभिप्राय

१. उपनिवेश-उपमन्त्री कर्नल जॉन एडवर्ड बर्नार्ड सीलीने ३१ जुलाई, १९०८ को ब्रिटिश लोकसभामें कहा था कि: (क) यदि लोगोंको प्रवेश करने दिया जाये तो उन्हें नागरिक अधिकार अवश्य दिये जाने चाहिए; (ख) यदि किसी मनुष्यको ब्रिटिश झण्डेके नीचे प्रवेश करने दिया जाये तो उसे सम्भाव्य नागरिक होना चाहिए तथा उसको देर-सबेर अन्य सब लोगोंके बराबर ही अधिकार दिये जाने चाहिए; (ग) जो लोग इस समय हमारे साथ हैं, उनसे हमें अच्छा, उदारतापूर्ण और न्यायोचित व्यवहार करना चाहिए। देखिए **इंडिया**, ७-८-१९०८।

यह नहीं है कि उपनिवेशोंको अपने यहाँ आकर बसनेवालोंकी संख्या सीमित करनेका अधिकार नहीं होना चाहिए। स्वर्गीय सर हेनरी पार्कके कथनपर शंका नहीं की जा सकती, किन्तु जब आप एक बार लोगोंको उपनिवेशमें दाखिल कर लेते हैं तब उनके साथ कानूनकी दृष्टिसे एक-जैसा बरताव होना चाहिए। अन्यथा, जैसा श्री डंकनने अभी हालमें ही कहा है, आप गुलामीकी स्थिति पैदा करेंगे, जिसका परिणाम यह होगा कि स्वामियों, अर्थात् शासक-वर्ग, की दशा अन्तमें गुलामोंसे भी बदतर हो जायेगी।[1] इतिहासमें ऐसे एक भी देशका उदाहरण नहीं मिलता जिसमें लोग एक स्वतंत्र राष्ट्र बननेके बाद भी गुलामोंके स्वामी बने रहे हों। यदि हमारे साथ गुलामों जैसा बरताव नहीं किया जाना है तो हमें ऐसे लोग चाहिए जिनकी उपस्थिति हमारे स्वतन्त्र विकासमें सहायक हो। ये लोग निस्सन्देह वे हैं जो सुसंस्कृत और शिक्षित हैं। हम उन्हीं लोगोंकी एक अत्यल्प संख्याके उपनिवेशमें अबाध प्रवेशकी प्रार्थना कर रहे हैं।

यह पूछनेपर कि यदि उपर्युक्त सिद्धान्त स्वीकार कर लिये गये तो क्या भारतीय कठिन शैक्षणिक कसौटीकी शर्त माननेको तैयार होंगे, श्री गांधीने कहा:

यदि वर्तमान प्रवासी-प्रतिबन्धक कानूनमें (इमिग्रेशन रेस्ट्रिक्शन लॉ एक्ट) उल्लिखित परीक्षाके अन्तर्गत एक उचित और कड़ी परीक्षाकी गुँजाइश नहीं है, हालाँकि मैं नहीं मानता कि बात ऐसी है, तो उसमें संशोधन किया जा सकता है, जैसा आस्ट्रेलियामें भी किया गया है। तब प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत कानूनी समानता होगी, किन्तु उस अधिनियमके प्रशासनमें अधिकारियोंको छूट होगी कि स्थितिकी जरूरत देखते हुए परीक्षाकी कड़ाईमें फेर-बदल कर लें। उदाहरणार्थ, आज नेटालमें यूरोपीयोंको लगभग बिना पूछताछ प्रवेश करने दिया जाता है, जबकि भारतीयोंकी कड़ी परीक्षा ली जाती है। यह प्रशासनिक भेदभाव तबतक रहेगा ही जबतक द्वेषभाव मौजूद है।

यह बताये जानेपर कि श्री गांधीके वक्तव्यसे स्थितिमें सुधार नहीं होता, उन्होंने कहा कि उनकी इस स्थितिका आधार लॉर्ड मिलनरका किम्बर्लेमें दिया गया यह भाषण[2] था कि डचेतर गोरों [यूटलैंडरों] को और अधिक तंग न किया जाये।

और श्री गांधीने आगे कहा:

अब हम यूटलैंडर — अपने ही देशमें परदेशी हैं।

[अंग्रेजीसे]

'स्टार', ९-९-१९०८

१. पैट्रिक डंकनने महिला संघ (लीग ऑफ विमेन) की रोजबैंक शाखामें बोलते हुए कहा था: "किसी ऐसे देशमें, जहाँ माना जाता है कि राजनीतिक स्वतन्त्रता है, आबादीके सबसे बड़े हिस्सेको राजनीतिक अधिकारोंसे बिलकुल वंचित रखना एक बड़ा ही कठिन मामला है। यह वस्तुतः गुलामीकी-सी स्थिति है। . . . यह उच्च जातिके लिए उतना ही हानिकर है जितना हीन जातिके लिए।"

२. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४०८।

१०. भाषण: सार्वजनिक सभामें[1]

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १०, १९०८]

श्री गांधीने अपने संक्षिप्त भाषणमें फोक्सरस्टके भारतीयों द्वारा सभाके समर्थनमें भेजे गये एक तारका जिक्र किया। इस तारमें यह समाचार दिया गया था कि उनके नेता सार्वजनिक सड़कोंपर पत्थर तोड़ रहे हैं और जेलमें भोजनके लिए जो कच्चा मांस दिया जाता है, उसे खानेसे इनकार कर रहे हैं। श्री गांधीने कहा कि जो काम अपमानजनक प्रतीत होता है वह उनकी समझमें वस्तुतः सम्मानजनक है। (करतल-ध्वनि)। जिस कारण ये लोग तकलीफें सह रहे हैं उससे उन्हें अपने देशभाइयोंपर गर्व होता है। लेकिन यह शर्मकी बात है कि हमारी सरकार इस ढंगसे काम करती है। यह स्थानीय सरकार या ब्रिटिश सरकारके लिए कोई श्रेयकी बात नहीं है और न भारत सरकारके लिए ही कोई श्रेयकी बात है कि जो लोग उसकी सीमा छोड़कर आये हैं, उनकी रक्षा करनेमें वह सर्वथा लाचार है। इसके अलावा, बॉक्सबर्गसे प्राप्त एक तारमें सूचित किया गया है कि एक फेरीवालेको बिना परवाना (लाइसेंस) व्यापार करनेपर छः सप्ताहकी सख्त कैदकी सजा दी गई है। भविष्यमें कमसे-कम सजा छः सप्ताहकी कैदकी हुआ करेगी। श्री सोराबजी ने कहा कि वे बारह महीनेकी सख्त कैदकी सजा भोगनेको तैयार हैं। किन्तु जो लोग जेलके बाहर हैं, उनके सख्त रवैयेपर ही यह निर्भर करता है कि जेलके भीतर लोग कितने समय तक रहेंगे। (करतल-ध्वनि)

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-९-१९०८

१. यह सभा ब्रिटिश भारतीय संघके तत्त्वावधानमें सत्याग्रहियोंके प्रति सहानुभूति प्रकट करनेके लिए आयोजित की गई थी। सभामें सैकड़ों भारतीय उपस्थित थे। अध्यक्षता श्री ईसप मियाँने की थी।

११. प्रस्ताव : सार्वजनिक सभामें[1]

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १०, १९०८]

[प्रस्ताव ३ :][2] ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सभा श्री ईसप मियाँकी, जिन्होंने इस उपनिवेशके निवासी भारतीयोंके ऊपर भीषणतम संकटके समय ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन)के अध्यक्ष-पदको सँभाला, और अब अपनी मक्का शरीफकी आयोजित यात्राके कारण उक्त पदसे इस्तीफा दे दिया है, बहुमूल्य सेवाओंके लिए हार्दिक आभार व्यक्त करती है; और सर्वशक्तिमान प्रभुसे प्रार्थना करती है कि उनकी प्रस्तावित यात्रा सकुशल हो और वे यथासम्भव शीघ्र अपने देशभाइयोंकी सेवाके लिए उनके बीच वापस लौटें।

[प्रस्ताव ४ :][3] यह सभा संघकी समिति द्वारा संघके अध्यक्ष-पदपर श्री अहमद मुहम्मद काछलियाकी नियुक्तिका समर्थन करती है; और श्री काछलियाको दिये गये इस अपूर्व सम्मानके लिए, और चारों ओर उठते हुए तूफानमें समाजकी नौकाको खे ले जानेकी उनकी क्षमतामें व्यक्त किये गये विश्वासके लिए उन्हें बधाई देती है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-९-१९०८

१२. राँदेरीका मुकदमा[4]

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १२, १९०८ के पूर्व]

आज "बी" अदालतमें श्री एच० एच० जॉर्डनके सामने राँदेरी नामक एक भारतीयपर अस्थायी निवासके अनुमतिपत्र (परमिट) की अवधि समाप्त होनेके बाद और अधिकारियों द्वारा चले जानेकी चेतावनी दी जानेके बावजूद उपनिवेशमें बने रहनेके आरोपमें अभियोग चलाया गया।

उन्होंने अपनेको निर्दोष बताया और श्री गांधीने उनकी पैरवी की।

१. सितम्बर १० की आम सभामें पाँच प्रस्ताव पास किये गये थे। उनमें से तीसरे और चौथे प्रस्तावका अनुमोदन गांधीजीने किया था, और खयाल है, उनका मसविदा भी उन्होंने ही तैयार किया था। पहले, दूसरे और पाँचवें प्रस्तावके लिए देखिए परिशिष्ट ५।

२. यह प्रस्ताव एम० पी० फैन्सीने पेश किया था। श्री जी० पी० व्यासने इसका अनुमोदन और सर्वश्री आमोद मूसाजी, ए० ई० अस्वात और गांधीजीने समर्थन किया था।

३. यह प्रस्ताव इमाहीम कुवाडियाने पेश किया था। इमाम अब्दुल कादिर बावजीरने इसका अनुमोदन और एन० वी० शाह तथा गांधीजीने समर्थन किया था।

४. यह इंडियन ओपिनियनके एक विवरणपर आधारित है। यह रिपोर्ट स्टारसे उद्धृत की गई थी।

सुपरिंटेंडेंट जे० जी० वरनॉनने कहा कि मैंने १५ अगस्तको अभियुक्तसे वह अधिकार-पत्र दिखानेके लिए कहा जिसके बलपर वह एशियाई पंजीयक (रजिस्ट्रार ऑफ एशियाटिक्स्) द्वारा चले जानेकी चेतावनी दी जानेके बावजूद ट्रान्सवालमें ठहरा हुआ है। उसने जवाब दिया कि उसके पास कोई अधिकारपत्र नहीं है, किन्तु उसने उपनिवेशमें रहनेके लिए एक और अर्जी दी है। निर्देश मिलनेपर मैंने अभियुक्तको गिरफ्तार कर लिया।

प्रिटोरिया-स्थित एशियाई पंजीयक कार्यालयके [कर्मचारी] जेम्स कोडीने कहा कि १० मार्चको एशियाई पंजीयकने अभियुक्तको तीन महीने तक ट्रान्सवालमें रहनेका एक अस्थायी अनुमतिपत्र दिया था। अभियुक्तने ९ जूनको इसकी अवधि बढ़ाई जानेके लिए अर्जी दी, जो पत्र द्वारा २४ जुलाईको अस्वीकृत कर दी गई।

न्यायाधीश: आपने उसे तबतक ठहरनेकी इजाजत दी थी?

गवाह: उसने कुछ कारण बताये थे कि वह क्यों ठहरना चाहता है। हमने उन कारणोंकी जाँच की, और तय किया कि अनुमतिपत्र (परमिट) नहीं देना चाहिए।

श्री गांधी: क्या आपको मालूम है कि अभियुक्तके पिता जोहानिसबर्गमें हैं?

गवाह: मैं निश्चित रूपसे नहीं कह सकता।

[गांधीजी:] मुझे पता चला है कि आपका इरादा अनुमतिपत्रकी अवधि समाप्त होनेपर ट्रान्सवालसे चले जाने, और प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम (इमिग्रेशन रेस्ट्रिक्शन ऐक्ट) के अन्तर्गत फिर प्रवेश करनेका था?

राँदेरी गवाहके कटघरेमें खड़े हुए।

[अभियुक्त:] हाँ, किन्तु सौभाग्यवश मुझे यहीं गिरफ्तार कर लिया गया।

अभियुक्तने एक छोटा-सा वक्तव्य देनेकी अनुमति माँगी, किन्तु न्यायाधीशने बताया कि उसकी पैरवी एक अत्यन्त योग्य वकील कर रहे हैं।

[गांधीजी:] इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता।

और अभियुक्त कैदियोंके कटघरेमें वापस चला गया।

सरकारी वकीलने कहा कि अभियुक्तकी स्थिति ऐसी है, मानो अदालतने उससे सात दिनके भीतर उपनिवेशसे जानेके लिए कहा हो और उसने वैसा करनेसे इनकार कर दिया हो।

न्यायाधीशने अभियुक्तको एक मासकी सख्त कैदकी सजा दे दी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-९-१९०८

१३. नेटालकी सभाएँ

नेटालमें सार्वजनिक सभाएँ हो रही हैं। उनमें प्रस्ताव भी पास किये जा रहे हैं। सरकारको अर्जियाँ भेजी जायेंगी। यह सब ठीक हो रहा है। ऐसा करनेकी आवश्यकता है। किन्तु नेटालके भारतीयोंको यह याद रखना है कि उनमें जबतक अर्जियोंके मुताबिक चलनेकी शक्ति नहीं है, तबतक अर्जियाँ निरर्थक हैं। हमें धीरे-धीरे सभी जगह ऐसा ही अनुभव हो रहा है।

हमारी शक्ति सत्याग्रह है, और नेटालमें सत्याग्रह यह है कि प्रत्येक भारतीय बिना परवाना (लाइसेंस) व्यापार करनेका निश्चय करे। यह तो हम जानते हैं कि नये विधेयक[1] (बिल) पास नहीं होंगे; किन्तु आवश्यक यह है कि पुराना कानून[2] — १८९७ का कानून — रद किया जाये। यदि भारतीयोंमें सचमुच ही शक्ति आ गई हो, तो उन्हें ऐसी अर्जी देनी चाहिए कि "जबतक १८९७ के कानूनके अन्तर्गत [प्रशासनिक निर्णयोंके विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालयमें] अपील करनेका अधिकार नहीं दिया जाता, पुराने परवानोंकी रक्षा नहीं की जाती और गिरमिटियों-परसे तीन-पौंडी कर[3] नहीं हटाया जाता, तबतक हम परवानोंके बिना व्यापार करनेका निश्चय करते हैं।"

इससे दोनों अर्थ सिद्ध होते हैं — स्वार्थ भी और परमार्थ भी; स्वार्थ इस प्रकार कि परवानेकी परेशानी खत्म हो जायेगी; और परमार्थ इस प्रकार कि गरीब गिरमिटियोंपर से कर हट जायेगा और उनका हृदय आशिष देगा। यदि भारतीय समाज प्रतिज्ञा कर ले कि जबतक गिरमिटियोंके कष्ट दूर नहीं होते, तबतक वह भी सुखसे नहीं बैठेगा, और कष्ट उठायेगा तो इसका अर्थ बहुत गम्भीर होगा। यदि भारतीय समाज सच्चे मनसे ऐसा करे तो यह राज्य मिल जानेके समान होगा। ऐसा करनेका अर्थ स्वराज्य माना जायेगा।

और सभी देख सकते हैं कि ऐसा करनेके सिवा कोई रास्ता भी नहीं है। किन्तु यह पूछा जा सकता है कि सब लोग ऐसा कब करेंगे और कब हमारी जीत होगी। ऐसा पूछना गलत होगा। बड़े काम करनेवाले लोग आरम्भमें थोड़े ही हुआ करते हैं। हजरत मुहम्मद पहले मुट्ठी-भर व्यक्तियोंको लेकर जूझे। ईसा मसीहके पक्षमें पहले दो-चार व्यक्ति ही थे। हैम्पडनने[4] अकेले ही जहाज-कर देनेसे इनकार किया था। उसके मनमें यह विचार भी न आया कि लोग ऐसा करेंगे या नहीं। स्वर्गीय श्री ब्रैडलॉने[5] सारी लोकसभाको हिला दिया था। भारतके पितामह, दादाभाई पचास साल पहले अकेले ही थे। प्रारम्भिक वर्षोंमें उन्होंने अथक परिश्रम किया। उनकी आवाजमें आवाज मिलाकर यह कहनेवाले बहुत ही थोड़े लोग थे कि ब्रिटिश

१. नेटाल परवाना-विधेयक (नेटाल लाइसेंसिंग बिल); देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २३०-३१।

२. विक्रेता परवाना कानून, (डीलर्स लाइसेंसेज ऐक्ट); देखिए खण्ड २, पृष्ठ ३८४-८६।

३. यह व्यक्तिकर गिरमिटिया भारतीयोंपर गिरमिटकी अवधि समाप्त होनेपर लगाया जाता था।

४. गांधीजीने बराबर हैम्पडनका हवाला एक आदर्श सविनय प्रतिरोधीके रूपमें दिया है; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४८८-८९।

५. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ८५ की पाद-टिप्पणी।

राज्यमें क्या खामियां हैं। आज उनके रोपे हुए वृक्षके फलका रसास्वादन सारी भारतीय जनता कर रही है। और कितने ही लोग उनसे भी आगे जानेको तैयार हैं।[1]

इन उदाहरणोंको ध्यानमें रखते हुए नेटालके भारतीयोंको अपने मनमें ऐसा कमजोर विचार न आने देना चाहिए कि सभी करेंगे तभी बात बनेगी; प्रत्युत उन सभी व्यापारियों और फेरीवालोंको, जो साहस करें, शपथ लेनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–९–१९०८

१४. हँसी या रोदन?

श्री दाउद मुहम्मद, श्री पारसी रुस्तमजी और श्री आंगलिया, ये तीनों सज्जन देशकी खातिर तीन-तीन महीनेकी कैद भोग रहे हैं। उनके साथ अन्य भारतीय भी हैं। वे पढ़े-लिखे लोग हैं। इसका अर्थ क्या है? यदि ऐसी घटना गत जनवरी माससे पहले हुई होती तो भारतीय समाजमें रोष फैल जाता। उस समय ऐसी घटना होती ही नहीं। अब समय आ गया है, इसलिए ऐसी घटना हुई है। फिर भी यह घाव दारुण है।

इन वीर बाँकुरोंके स्त्री-बच्चों और सगे-सम्बन्धियोंके विषयमें अथवा स्वयं उनको [जेलमें] जो कष्ट झेलने पड़ रहे हैं उनके बारेमें सोचकर सभी भारतीयोंको रोना आयेगा, सभी दुःखी होंगे। हम उनके सगे-सम्बन्धियोंके प्रति सहानुभूति प्रकट करते हैं।

किन्तु ये पन्द्रह लोग देशकी खातिर, देशकी प्रतिष्ठाकी खातिर जेल गये हैं और हँसते-हँसते गये हैं। यह जानकर सब भारतीय उमंगमें भरकर हँसेंगे। इस साहसपर इन भारतीयोंको, इनके सम्बन्धियोंको और भारतीय समाजको बधाई देनी चाहिए।

हम हँसे और रोये, बातका अन्त हमें इतनेसे ही न मान लेना चाहिए। जो भारतीय जेलसे बाहर हैं उनका कर्तव्य और भी कठोर होता जा रहा है। उनको जल्दी जेलसे मुक्त कराना हमारे हाथमें है। कोई परवाना (लाइसेंस) न ले, कोई अँगूठेकी या किसी और तरहकी निशानी न दे तथा अपना हौसला बनाये रखे तो ताज्जुब नहीं कि वे कुछ समयमें ही रिहा कर दिये जायें। यदि वे न छूटें तो इसमें भारतीय जातिकी हीनता है; उससे उसकी नाक कटेगी। हमें आशा है कि भारतीय लोग इन वीरोंके पीछे पूरा-पूरा जोर लगानेके लिए तैयार होकर रहेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–९–१९०८

१. जान पड़ता है, गांधीजीका तात्पर्य तिलकसे था; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४१२-१३।

१५. अदालतको सलाम करें

सर हेनरी वेलने सलाम करनेकी बाबत बड़ी सख्त राय जाहिर की है। उनके कानमें भनक पड़ी थी कि उनकी अदालतमें प्रवेश करते समय किसी भारतीयने सलाम नहीं किया। इसलिए उन्होंने कहा कि भारतीयोंको, जो हमेशा सभ्य गिने जाते हैं, अदालतके रुतबेका खयाल करना चाहिए। उन्हें अदालतके सम्मानमें या तो पगड़ी अथवा जूते उतारने चाहिए या दरवाजेसे भीतर आते समय सलाम करना चाहिए। यदि वे तीनोंमें से कुछ नहीं करते हैं, तो उन्हें सजा दी जायेगी। सर हेनरीने [अंग्रेजी] आज्ञाका अनुवाद करवाकर समस्त उपस्थित भारतीयोंको सुनवाया। हरएक भारतीयको यह चेतावनी याद रखनी है। हर जगह न्यायालयमें प्रवेश करते हुए [न्यायाधीशको] सलाम करनेकी प्रथाको निभाना अच्छा है। बहुत-से भारतीय प्रमादवश ऐसा नहीं करते। शिष्टता दिखाना हमारा फर्ज है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–९–१९०८

१६. हमारा झूठ[1]

सर हेनरी वेलने भारतीय खूनके मामलेमें जो आलोचना की है, वह नजर-अन्दाज करने योग्य नहीं है। सर हेनरीने कहा कि कुछ भारतीय अपने मामलेको मदद पहुँचानेके लिए झूठ बोलते हैं।[2] इसलिए बहुत बार सच्चे मुकदमेको भी धक्का पहुँचता है। यह बात कई बार ठीक उतरी है। यदि कोई भारतीय ऐसी बात कहकर अपना बचाव करे कि क्या गोरे अपने मामलोंमें ऐसा नहीं करते, तो वह बचाव ठीक नहीं माना जायेगा। गोरे बेशक झूठ बोलते हैं, किन्तु इसलिए हमें भी वैसी ही आदत डालना आवश्यक नहीं है। जीतेंगे कि नहीं, ऐसा विचार करनेके बदले, हम सचके सिवाय और कुछ नहीं कहेंगे, यही विचार शोभनीय है। सबसे अच्छा रास्ता तो यह है कि हम इस तरह चलें कि हमें किसी वकीलका घर अथवा अदालतका दरवाजा न देखना पड़े। ऐसा क्यों नहीं हो सकता कि भारतीयोंपर कोई दीवानी या फौजदारी मामला अदालतमें हो ही नहीं? हम सत्याग्रहमें पड़े हैं। उसमें यह सब किया जा सकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–९–१९०८

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४२०-२४ भी।

२. भारतीयों द्वारा झूठी गवाही देनेसे सम्बन्धित लेखके लिए देखिए खण्ड ७, पृष्ठ ११।

१७. प्रार्थनापत्र : उपनिवेश-मन्त्रीको[1]

जोहानिसबर्ग
सितम्बर १४, १९०८

[परममाननीय उपनिवेश-मन्त्री
लन्दन]

ट्रान्सवालवासी पठानों और पंजाबियोंके निम्न-
हस्ताक्षरकर्ता प्रतिनिधियोंका प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि:

१. एशियाई कानून संशोधन अधिनियम (एशियाटिक लॉ अमेंडमेंट ऐक्ट) के प्रसंगमें, और प्रार्थियोंको उनके विनम्र प्रतिवेदनके जवाबमें २६ मार्च, १९०८ को दिये गये निम्नलिखित उत्तरके सम्बन्धमें प्रार्थी महामहिम सम्राट्की सरकारसे आदरपूर्वक निवेदन करते हैं:

> मुझे जो आदेश दिया गया है, उसके अनुसार आपको यह सूचित करनेका सम्मान प्राप्त हुआ है कि उपनिवेश-मन्त्रीको आपके १३ जनवरीके पत्रके साथ एशियाई पंजीयन अधिनियमके[2] अन्तर्गत आपकी तथा अन्य लोगोंकी स्थितिसे सम्बन्धित प्रार्थनापत्र प्राप्त हो गया है। लॉर्ड एलगिनने परमश्रेष्ठ लॉर्ड सेल्बोर्नसे आपको यह सूचित करनेका अनुरोध किया है कि उन्होंने आपके प्रार्थनापत्रको ध्यानपूर्वक पढ़ा है; किन्तु, विशेष रूपसे, कानूनके अन्तर्गत पंजीयन-सम्बन्धी कठिनाइयोंके हालमें ही हुए निराकरणको देखते हुए, अब उनको उसके सम्बन्धमें कोई कार्रवाई करनेकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती।

२. जिस प्रार्थनापत्रका उपर्युक्त उत्तर भेजा गया है उसमें प्रार्थियोंने इस प्रकार निवेदन किया था:

> महामहिमके भारतीय सैनिक, सैनिक प्रतिष्ठाका खयाल रखते हुए, इस ढंगसे बाधित रूपसे पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) करवाकर अपनेको अपमानित नहीं करा सकते; और यदि महामहिमकी सरकार सम्राट्के ट्रान्सवाल-स्थित भारतीय सैनिकोंको न्यायोचित व्यवहार दिला सकनेमें असमर्थ हो तो वे मनुष्यके रूपमें और उन ब्रिटिश भारतीय सैनिकोंके नाते, जिन्हें साम्राज्य-रक्षाके लिए अपने प्राणोंकी बाजी लगाने और युद्धके कष्ट सहनेपर गर्व है, अनुरोध करते हैं कि उन्हें कारावास या निष्कासनके अपमानसे बचाया जाये, और वे यह भी इच्छा करते हैं कि सम्राट् आज्ञा दें कि उन्हें दक्षिण-आफ्रिकाके किसी ऐसे समर-स्थलमें जनरल बोथा और जनरल स्मट्स द्वारा गोलीसे उड़ा

१. यह "सैनिकोंका प्रार्थनापत्र" शीर्षकसे छापा गया था, और खयाल है कि इसका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था। देखिए खण्ड ७, पृष्ठ ३८४-८५ भी।

२. एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट।

दिया जाये जहाँ उन्होंने सम्राट् और ब्रिटिश साम्राज्यकी सेवा करते हुए गोलियोंकी बौछार झेली है।

३. जैसा कि हालकी घटनाओंने साबित कर दिया है, जवाबमें जिस निराकरणका उल्लेख किया गया है, वह असफल रहा है; और अब सम्पूर्ण भारतीय समाज कानूनको रद करनेके लिए महामहिम सम्राट्की सरकारके पास प्रतिवेदन भेज रहा है, क्योंकि ऐसा सभी भारतीयोंको बताया गया था कि समझौतेमें उसे रद करनेकी बात शामिल है।

४. चूँकि पूरे भारतीय समाजको, जिसका आपके प्रार्थी प्रतिनिधित्व करते हैं, समझौते-पर अविश्वास था, और कानून रद होनेकी अनिश्चितताके कारण वह अत्यधिक उद्विग्न था, और चूँकि भारतीय समाजके नेताओंने अँगुलियोंके निशान देकर पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) करानेका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया था, इसीलिए उस वर्गके कुछ लोगोंने, जिसका प्रतिनिधित्व आपके प्रार्थी करते हैं, शारीरिक हिंसाका सहारा लेकर उस कार्यके प्रति अपना रोष दिखाया था। हालाँ कि रोष-प्रदर्शनके इस तरीकेका आपके प्रार्थी समर्थन नहीं कर सकते, किन्तु जाहिर है कि उन लोगोंका सन्देह बहुत उचित था।

५. आपके प्रार्थियोंकी स्थिति संक्षेपमें इस प्रकार है:

(क) आपके प्रार्थियोंकी रायमें १९०७ के एशियाई कानून संशोधन अधिनियम २ (एशियाटिक लॉ अमेंडमेंट ऐक्ट नं. २) की सम्पूर्ण भावना उसके अन्तर्गत आनेवाले किसी भी व्यक्तिके लिए अपमानजनक है, विशेष रूपसे उन सैनिकोंके लिए, जिन्हें महामहिम सम्राट्की वर्दी पहननेका गौरव प्राप्त है, और जिन्होंने अपने सम्राट्के लिए रक्त बहाया है।

(ख) आपके प्रार्थी इस गम्भीर शपथसे बँधे हुए हैं कि

(१) वे उपर्युक्त कानून स्वीकार नहीं करेंगे, और उसे रद करवायेंगे;

(२) भारतीय समाजके अन्य सदस्य क्या करना पसन्द करेंगे, इसका खयाल किये बगैर अपनी शिनाख्तके लिए अँगुलियोंके निशान कभी नहीं देंगे।

६. आपके प्रार्थियोंने, तत्कालीन पुलिस कमिश्नर तथा अन्य उच्चाधिकारियोंकी सलाहको मानकर और यह कहे जानेपर कि कानून रद कर दिया जानेवाला है, केवल शान्तिकी खातिर स्वेच्छया पंजीयन करा लिया। इससे आगे जानेमें आपके प्रार्थी असमर्थ हैं। उनकी रायमें कोई अपुरुषोचित रुख अपनाना, और केवल इसलिए कि वे उपनिवेशमें रह सकें, अपमान सहन करना सैनिक-वर्गके सर्वथा विरुद्ध आचरण होगा।

७. आपके प्रार्थी यह निवेदन करनेका साहस करते हैं कि उनकी वर्दी और उनके सेवा-प्रमाणपत्र ब्रिटिश साम्राज्यके किसी भी भागमें आ-जा सकनेके लिए पर्याप्त पारपत्र समझे जाने चाहिए, और उन्हींसे उनकी पूरी शिनाख्त होनी चाहिए।

८. आपके प्रार्थी कानूनी बारीकियों और कानूनी तर्कोंको नहीं समझते। उन्होंने एशियाई कानूनका अध्ययन नहीं किया है। वे सम्राट्के नामपर युद्ध करनेकी बातको छोड़कर अन्य बातोंमें लाचार हैं। वे अंग्रेजी नहीं समझते, लेकिन एशियाई कानूनके बारेमें जो-कुछ थोड़ा-बहुत उन्होंने समझा है, उस कानूनकी भर्त्सनाके लिए उतना ही काफी है।

९. अतः आपके प्रार्थी विनम्रतापूर्वक प्रार्थना करते हैं कि दिये गये वचनके अनुसार एशियाई कानून रद कर दिया जाये, और पंजीयन करानेमें या अन्य किसी मामलेमें उन्हें अपमानित न किया जाये। किन्तु यदि महामहिम सम्राट्की सरकार उन्हें ऐसी राहत दिलानेमें असमर्थ हो, तो वे अपनी यह प्रार्थना दुहराते हैं कि उन्हें दक्षिण आफ्रिकाके किसी ऐसे समर-स्थलमें जनरल बोथा और जनरल स्मट्स द्वारा गोलीसे उड़ा दिया जाये जहाँ उन्होंने सम्राट् और ब्रिटिश साम्राज्यकी सेवा करते हुए गोलियोंकी बौछार झेली है। और आपके प्रार्थी सदैव मंगल-कामना करेंगे, आदि, आदि।

जमादार नवाब खाँ
नकब गुल
मुहम्मद शाह
मीर आलम खाँ
नूरद अली

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, १९-९-१९०८

१८. वली मु० बगस तथा अन्य लोगोंका मुकदमा

[प्रिटोरिया
सितम्बर १५, १९०८]

इसी १५ तारीखको सर्वश्री वली मुहम्मद बगस, इस्माइल जुमा, एल० वल्लभदास और इस्माइल ईसपजी आडिया प्रिटोरियामें मेजर डिक्सनकी अदालतमें पेश हुए। उनपर सामान्य पंसारी-परवानेके[1] बिना व्यापार करने और इस तरह नगरके उपनियमोंका उल्लंघन करनेका अभियोग था। प्रिटोरिया नगरपालिकाकी ओरसे श्री बौविडने और सफाई पक्षकी ओरसे श्री गांधी तथा लिखटेन्स्टाइनने पैरवी की।

सबसे पहले श्री इस्माइल जुमाके मामलेकी सुनवाई हुई। श्री गांधीने बहस शुरू करनेसे पहले सम्मन्सपर आपत्ति की, क्योंकि उसमें १९०३ के अध्यादेश ५८ के अंतर्गत कोई जुर्म नहीं बताया गया था, और अध्यादेशमें सामान्य पंसारी-परवानेके सम्बन्धमें कोई उपनियम बनानेकी व्यवस्था नहीं थी। न्यायाधीशने उनकी आपत्तिको अस्वीकार कर दिया। अभियुक्तने अपनेको निर्दोष बताया। परवाना-अधिकारी (लाइसेंसिंग ऑफिसर) श्री टॉमसने औपचारिक गवाहीमें बताया कि अभियुक्त पंसारीका व्यापार किया करता है। श्री गांधीने सफाई पक्षकी ओरसे कोई गवाह नहीं पेश किया। उन्होंने कहा कि मैंने जो कानूनी आपत्ति उठाई है, उसीपर मेरा सारा मामला आधारित है। अभियुक्तको अपराधी करार दिया गया और ५ शिलिंग जुर्माने या तीन दिन सख्त कैदकी सजा दी गई। श्री इस्माइल जुमाने जेल जाना पसन्द किया।

१. जनरल ग्रोसर्स लाइसेन्स।

इसके बाद श्री वली मुहम्मद बगसका, जो ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन) की प्रिटोरिया शाखाके अध्यक्ष हैं, मामला पेश हुआ। श्री बगसने अपनेको "निर्दोष" बताया। परवाना-अधिकारी श्री टॉमसकी गवाहीके बाद श्री बगसने इस आशयका बयान दिया कि उनके पास पूरे वर्षका सामान्य विक्रेता-परवाना[1] था, और उन्होंने विक्रेता-परवानेका शुल्क भी दे दिया था, किन्तु वह इस कारण अस्वीकृत कर दिया गया कि उन्होंने अँगूठेका निशान देनेसे इनकार कर दिया। न्यायाधीशने उन्हें भी वही सजा दी। श्री बगसके विरुद्ध दो दूकानोंके सिलसिलेमें दो अभियोग थे। प्रत्येक मामलेमें सजा एक ही थी। वे भी खुशी-खुशी जेल चले गये।

सर्वश्री इस्माइल आडिया और एल० वल्लभदासपर भी इसी तरह मुकदमे चलाये गये, उनको भी सजा दी गई, और वे भी जेल चले गये।

एक चीनी व्यापारीकी पुकार हुई, किन्तु वह हाजिर नहीं हुआ, और चूंकि वह जमानतपर था, इसलिए उसकी जमानतमें से एक पौंडकी रकम जब्त कर ली गई।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-९-१९०८

१९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी[2]

ईसप मियाँ

श्री ईसप मियाँने इस्तीफा दे दिया और सार्वजनिक सभामें उनकी सेवाओंका आभार माना गया।[3] श्री ईसप मियाँकी सेवाओंकी कद्र, जैसे-जैसे समय गुजरेगा, अधिक होगी। उन्होंने कठिन प्रसंगपर भारतीय समाजके जहाजका नेतृत्व हाथमें लिया था। उन्होंने अध्यक्षका पद जेल जानेके प्रस्तावको[4] अंजाम देनेके इरादेसे स्वीकार किया था। यह ऐसा समय था जब कोई यह नहीं कह सकता था कि भारतीय समाज क्या करेगा। इसका बहुत-कुछ दारोमदार अध्यक्षके साहसपर ही था। उन्होंने वैसा साहस दिखाया और [संघका] कारोबार चलाया। पिछले वर्ष श्री ईसप मियाँने अपने व्यापारका विस्तार कम कर दिया और वे सरकारके विरोधके लिए कटिबद्ध हो गये। इस वर्ष उनपर हमला हुआ;[5] वे जेल जानेके लिए तत्पर रहे; और उन्होंने सोने या फूलके हारकी तरह दो टोकरियाँ गलेमें लटकाकर फेरीका धन्धा शुरू कर दिया। ऐसा करनेसे समाजकी शक्ति कितनी बढ़ी, इसका अनुमान लगाना कठिन है। अपने इस साहससे श्री ईसप मियाँने समाजको वहाँ पहुँचा दिया जहाँ पहुँचनेपर

१. जनरल डीलर्स लाइसेन्स।
२. यह खरीता गांधीजीने १८ सितम्बरको लिखना आरम्भ किया और १९ सितम्बरको पूरा किया।
३. देखिए "प्रस्ताव: सार्वजनिक सभामें", पृष्ठ ३२।
४. सितम्बर, १९०६ के प्रस्तावको; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४३४।
५. १७ मईको; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २४३, २४९, २६१ और ३०५।

समाजकी प्रतिज्ञा सुरक्षित रह सकती है। अब जो बच रहा है वह बड़ा महत्त्वपूर्ण है, उसे किये बिना समाजका काम चल नहीं सकता और उसके लिए जबरदस्त संघर्ष करना आवश्यक है।

किन्तु ऐसे अवसरपर जहाजका नेतृत्व छोड़नेके लिए श्री ईसप मियाँको कोई दोष नहीं दे सकता। मसजिद, मदरसा तथा सरकारके विरुद्ध संघर्ष, इन तीन बड़े कामोंके लिए उन्होंने तीन बार हजकी यात्रा छोड़ी। अब उन्हें जानेका हक है। जो-कुछ श्री ईसप मियाँने किया है, वैसा ही यदि अन्य भारतीय अध्यक्ष भी कर दिखायें, तो समाजकी जीत निश्चित है।

अहमद मुहम्मद काछलिया

सभी ऐसी आशा लगाये हुए हैं कि समाजको जैसे श्री ईसप मियाँ मिले थे वैसे ही श्री काछलिया मिले हैं। श्री काछलियाका इरादा अध्यक्ष-पद स्वीकार करनेका था नहीं। कहा जा सकता है कि उनको यह पद जबरदस्ती दिया गया है। मैंने तो देखा कि सबका यही विचार था कि श्री काछलिया ही श्री ईसप मियाँकी जगह लें।

श्री काछलिया जेल हो आये हैं। जुलाई ३१, १९०७ को कहे गये उनके शब्दोंकी झंकार अब भी मेरे कानोंमें गूँजती रहती है। उन्होंने कहा था, "मैं जेल जाऊँगा; मेरा सिर भले उतार लिया जाये, लेकिन मैं खूनी कानूनको स्वीकार नहीं करूँगा।" उन्होंने अपने शब्दोंका पालन किया है। वे जेल तो हो ही आये हैं; काम करनेके लिए भी हमेशा तैयार रहते हैं। लोकप्रिय भी वे बहुत हैं। उन्होंने पैसेकी हानि सहनेमें कोई कमी नहीं की। इस प्रकार श्री काछलियाने अनेक शुभ शकुनोंमें अध्यक्ष-पद पाया है।

किन्तु भारतीय जलयान अब भी भीषण तूफानमें ही है। [तूफानसे] बीच समुद्रमें जितना खतरा होता है, किनारेपर पहुँचते समय उससे हमेशा ज्यादा होता है। अर्थात्, रास्ता यद्यपि थोड़ा ही काटना है, फिर भी काम बहुत बाकी है। सम्भव है, हमारे खलासी थक गये हों। जब कोलम्बसके अमरीका जा पहुँचनेका वक्त आया, तभी उसके खलासियोंने विद्रोह कर दिया। किन्तु उसकी हिम्मतके आगे वे पुनः शान्त पड़ गये और अमरीका महाद्वीप उसके हाथ लगा। ऐसा ही हाल भारतीय जलयानका है। किनारा पास आ गया है, किन्तु चट्टानें बढ़ रही हैं। उनके बीचमें से जलयानको ले जाना किसी शक्तिशाली कप्तानका काम है। मैं आशा करता हूँ कि श्री काछलिया वैसी शक्ति दिखायेंगे।

अध्यक्षका अर्थ होता है समाजका सबसे श्रेष्ठ व्यक्ति। उसके गुणोंसे ही समाजके गुणोंका अन्दाजा लगाया जायेगा। फिर, यदि वह प्रमुख सत्याग्रहकी लड़ाईमें भाग ले रहा हो, तब तो उसमें मरणपर्यन्त सत्य, मरणपर्यन्त ईश्वरपर विश्वास, मरणपर्यन्त साहस, समाजके लिए पैसा, माल-मिल्कियत और जान हाजिर करने और दे देनेकी तत्परता, अत्यन्त प्रामाणिकता, अत्यन्त निर्भयता, अत्यन्त निर्मलता और अत्यन्त विनय तथा नम्रता आदि गुण होने चाहिए। भारतीय समाजके अध्यक्षमें इतने गुण हों, तभी सत्याग्रहका रूप खिलेगा और सत्याग्रहकी ऐसी जय होगी कि सारी दुनिया देखेगी।

मैं तो खुदा — ईश्वर — से माँगता हूँ कि वह श्री काछलियाको ये समस्त गुण दे। मैं सारे भारतीय समाजको ऐसी ही प्रार्थना करनेकी सलाह देता हूँ।

कुछ पुरानी खबरें

अधिक कामके कारण कुछ खबरें देनेको रह गई हैं। अपने कागज उलटते हुए जो सामने आ रही हैं, उन्हें यहाँ दे रहा हूँ।

श्री इस्माइल मूसा जीन तथा श्री ईसप आमद कानमवालाको हाइडेलबर्गमें जुर्माना हुआ और अगर वे जुर्माना न दें, तो उनका माल बेचनेकी बात थी। श्री जीनने जुर्माना दे दिया है। श्री ईसप आमदने नहीं दिया। उन्होंने सरकारसे कह दिया है कि यदि माल बेचना हो, तो बेच दिया जाये। अभीतक उनका माल बेचा नहीं गया है।

वेरीनिगिंगमें जिस तरह श्री पटेलका माल बेचा गया, उसी तरह श्री इब्राहीम इस्माइलका माल भी बेचा गया है। उनके मालका भी अधिकांश भाग बेच दिया गया। ऐसा अन्धेर है। एक जगह कोई परवाह नहीं करता[1] और दूसरी जगह माल बेच दिया जाता है। अन्धेर नगरी चौपट राजा-जैसी बात है।

क्रूगर्सडॉर्पके भारतीय

क्रूगर्सडॉर्पका मुकदमा[2] समाप्त हो गया है। मुकदमा शुक्रवारको हुआ था। श्री काजी तथा श्री पांडोरका मुकदमा समाप्त होनेके बाद सरकारी वकीलकी हिम्मत दूसरे मुकदमे चलानेकी नहीं हुई, इसलिए उसने उन्हें वापस ले लिया। श्री काजी तथा श्री पांडोरके मुकदमे दो घंटे चले। उन दोनोंके बयान सुन चुकनेके बाद न्यायाधीशने कहा कि मुकदमेमें दम नहीं है और श्री काजी तथा श्री पांडोर निरपराध हैं। श्री काजीने अपनी गवाही अंग्रेजीमें दी। मुकदमा समाप्त होनेके बाद श्री छोटाभाईके यहाँ सभा की गई। उसमें श्री गांधीने संघर्षके विषयमें समझाया।[3] उन्होंने कहा, अब सब भारतीय एकमत हो गये हैं। श्री दादलानीने श्री गांधीको दावत दी। उस समय लगभग २५ भारतीय पंगतमें सम्मिलित हुए।

कोंकण और कानम

गुरुवारको जिस समय सार्वजनिक सभा समाप्त हो रही थी तभी समाचार मिला कि बाहर कुछ टंटा हो रहा है। उसपर श्री पोलक वहाँ दौड़े गये। श्री अब्दुल गनी भी गये। देखते क्या हैं कि लाठियोंकी मार तथा पत्थरोंकी वर्षा हो रही है। उन्होंने तथा अन्य भाइयोंने बीच-बचाव किया, इसलिए लोगोंको ज्यादा चोट नहीं आई। अनजाने श्री पोलक ज्यादा पिट जाते, किन्तु श्री सोराबजी, तथा श्री नोगामा इन दो पारसी भाइयोंने चोटोंको अपने ऊपर झेल लिया। श्री सोराबजीकी आँख बच गई, किन्तु कपालपर सख्त चोट आई है। दो कोंकणी भाइयोंको भी खासी चोट लगी है। दो कानमियोंको भी थोड़ी चोट लगी है। श्री पोलकके पहुँचेपर मामूली चोट आई है। झगड़ा केवल नौजवानोंके बीच मामूली-सी बात-पर हुआ था, उसका रूप इतना बड़ा हो गया।

समझौता

फिरसे दोनों समाजोंके नेताओंके बीच समझौता हो जाये, इस उद्देश्यसे रविवारको श्री हाजी हबीबके घर नेताओंकी बैठक की गई। श्री गांधीने बैठककी अध्यक्षता की थी।

१. अदालतके हुक्मकी तामील करानेकी।
२. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ १६।
३. इस भाषणकी रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

श्री हाजी हबीब, श्री मौलवी साहब, श्री काछलिया, श्री अब्दुल गनी, श्री भाईजी, श्री शहाबुद्दीन इत्यादिके भाषण हुए और दोनों समाजोंके प्रतिनिधियोंने नीचे दिये गये दस्तावेजपर दस्तखत किये।

दस्तावेज[1]

हम कोंकणी तथा कानमिया कौमके नेतागण खुदाको साक्षी रखकर लिखते हैं कि इन दोनों कौमोंके नौजवानोंके बीच तकरार होनेका हमें दुःख है और हम एक-दूसरेसे माफी माँगते हैं और माफी चाहते हैं। हम अपनी-अपनी कौमके नौजवानोंको समझानेकी जिम्मेदारी लेते हैं और उनके [कार्योंकि] लिए अपनेको उत्तरदायी मानते हैं। हम उन्हें सलाह देते हैं कि यदि उनका कोई अपमान हो जाये, तो वे हमें खबर दें, किन्तु एक-दूसरेसे लड़ें नहीं।

मैं इस दस्तावेजको बहुत महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। यदि नेतागण इस प्रकार अपने कर्तव्यको समझते हैं, तो अन्तमें किसीका भला होना ही चाहिए। तरुणोंकी शोभा इस बातमें है कि वे नेताओंके कौलका पालन करनेके लिए लड़ाई-झगड़ा बिलकुल बन्द कर दें। यदि पठान, कोंकणी और कानमिये अपनेको बड़ा बहादुर मानते हैं, तो उन्हें अपनी शक्तिका उपयोग कौमकी रक्षा करनेमें करना चाहिए। नेताओंको याद रखना चाहिए कि ऊपरका दस्तावेज खुदाको साक्षी रखकर लिखा गया है और इसलिए उनपर बहुत जबरदस्त जिम्मेदारी है। जवानोंको हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि वे बिलकुल न झगड़ें। मैं आशा करता हूँ कि कानमिये कोंकणियोंसे मिलते हुए पहले सलाम करेंगे और कोंकणी कानमियोंसे मिलते हुए वैसा ही करेंगे। बैठक समाप्त होनेके बाद श्री हाजी हबीबने सभी सज्जनोंका चाय-बिस्कुटसे सत्कार किया तथा श्री उस्मान अहमदने सुलहसे सम्बन्धित गीत सुनाये।

सार्वजनिक सभा

सार्वजनिक सभाका अधिक हाल दूसरे स्थानपर मिलेगा; तथापि मैं श्री अब्दुल गनीका किस्सा यहीं कह दे रहा हूँ।[2] यह बात असंदिग्ध रूपसे सिद्ध हो गई है कि श्री अब्दुल गनीने अँगूठेकी छाप दी है। उन्होंने सभासे इसकी माफी माँगी और पश्चात्ताप प्रकट किया। उन्होंने कहा कि उनका इरादा अँगूठेकी छाप देनेका बिलकुल नहीं था, किन्तु आनेकी जल्दीमें डरके मारे ऐसा हो गया। फिरसे भूल नहीं होगी, ऐसा कहा; और स्वयं संघर्षमें चुस्त रहनेका वचन दिया तथा दूसरोंसे भी चुस्त रहनेका अनुरोध किया। श्री अब्दुल गनीने ऐसा किया, इसलिए अब हममें से किसीको उनसे कुछ कहना नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि उक्त महोदय अब हमेशा लड़ाईमें आगे बढ़कर हिस्सा लेंगे तथा कौमकी सेवा करेंगे।

अली ईसप

श्री अली ईसपपर आज मुकदमा चला। उनपर पंजीयन रजिस्ट्रेशन न करानेका आरोप लगाया गया था। इस मुकदमेमें श्री पोलक हाजिर थे। श्री अली ईसपको सात दिनमें देश छोड़नेकी हिदायत की गई है।

१. इस दस्तावेजपर १२ व्यक्तियोंने सही की थी और इसके ८ गवाह थे, जिनमें एक गांधीजी भी थे।

२. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ १६।

मूलजीभाई पटेल

श्री पटेल शुक्रवारको छूटनेवाले थे, इसलिए बहुत-से व्यक्ति उन्हें लेनेके लिए जेल तक गये। किन्तु तभी मालूम हुआ कि श्री पटेलको देशसे बाहर निकाला जायेगा। उन्हें जेपी स्टेशनसे ले जाया गया और वे शनिवारको चार्ल्सटाउन पहुँचे। कुछ भारतीय उनसे मिलनेके लिए जर्मिस्टन गये थे। श्री पटेलकी तबीयत अच्छी है और उनका साहस बरकरार है। वे थोड़ी ही अवधिमें वापस प्रवेश करेंगे तथा और जो कष्ट भोगना पड़ेगा उसे भोगेंगे। उनके साथ पुलिसका बरताव ठीक रहा।

सोराबजी शापुरजी

श्री सोराबजी शापुरजी यहाँसे बहुत साहसके साथ आज सवेरेकी गाड़ीसे जेल भोगनेके लिए फोक्सरस्ट गये हैं। उन्होंने सार्वजनिक सभामें ही बता दिया था कि चाहे जितनी सजा क्यों न हो, वे भोगनेके लिए तैयार हैं। उन्हें दुःख इतना ही रहा कि संघने उन्हें उनका हक होनेपर भी नेटालके सेठोंसे पहले जेल नहीं जाने दिया। श्री काछलिया, श्री अस्वात, श्री व्यास, श्री पोलक, श्री जीवनजी, श्री नायडू, श्री गांधी आदि उनकी बिदाईके समय उपस्थित थे।

श्री इब्राहीम उस्मान शुक्रवारको यहाँ आ गये। श्री काछलिया इत्यादि उन्हें लेने गये थे। वे श्री काछलियाके मेहमान हैं।

नेटालके कैदी

श्री दाउद मुहम्मद तथा जो अन्य नेतागण जेलमें हैं, वे हद कर रहे हैं। सरकार उनकी पूरी कसौटी करना चाहती है, उनसे सख्त मेहनत लेती है, उन्हें रास्तोंपर पत्थर तोड़नेके लिए बाहर निकालती है। वे इस कामको भी उत्साहसे करते हैं। उनका यह सन्देश है कि जबतक निर्णय नहीं होता, तबतक वे जेलमें रहकर सारे कष्ट उठायेंगे। उन्हें सख्त मेहनतका काम दिया जाता है, किन्तु उससे मैं दुःखी नहीं हूँ। यह सब हम भोगेंगे तभी हममें वास्तविक योग्यता आयेगी। सिपाहीका काम सारे कष्ट उठाना है। सत्याग्रहके सिपाहीके लिए तो यही पाठ है, यही जप है। सच्ची लगन हो तो पत्थर तोड़ना भी सुखकर बन जाता है।

रुस्तमजीका पत्र

श्री रुस्तमजीने सजा मिलनेके बाद निम्नलिखित पत्र भेजा है:

> आज हम चार आदमियोंको तीन-तीन महीनेकी सजा हुई है। इससे हम बहुत खुश हैं। सबको हिम्मत बँधाइये। कोई किसी भी तरह न घबराये। यदि लोग हमारे कर्तव्य-पालनकी कद्र करना चाहते हों तो सार्वजनिक सभामें कहिए कि सभी भाई काफी पैसा इकट्ठा करें।

सेठ जल्दी कैसे छूटें?

प्रत्येक भारतीयके मनमें यह प्रश्न बसा हुआ है। जवाब सहज है:

(१) [परवाना (लाइसेंस) हो तब भी] कोई परवानेसे व्यापार न करे।
(२) परवाना न लिया जाये।
(३) अवसर मिलते ही तुरन्त जेल-यात्रा की जाये।

(४) नेटालके जिन भारतीयोंका [इस उपनिवेशमें बसनेका] हक हम मानते हैं, वे नेटालमें दाखिल हों।
(५) दाखिल होनेवाले भारतीय अँगूठेके निशान कदापि न दें।
(६) माल बेचा जाये तो उसकी परवाह न करें।

मानापमानका सवाल

देखता हूँ, जो लोग हमारी लड़ाईमें शामिल होनेके विचारसे ट्रान्सवालमें प्रवेश करते हैं, उनमें से किसी-किसीके मनमें अपने मानापमानका विचार रह जाता है। यह अवसर मानापमानके विचारका नहीं है। सभी भारतीयोंको चाहिए कि वे मानको ताकपर रखकर भारतके सेवकको हैसियतसे आयें। आदर-सत्कारका समय नहीं है। जो सेवा कर रहे हैं, उनके पास अवकाश नहीं है। श्री सोराबजी आये। उन्हें जितना मान दिया जाता, कम था। किन्तु किसीको अवकाश नहीं था। हमारे बीच अब जेल जाना एक साधारण बात हो गई है। सभी सेवक हैं, फिर किसको मान दें? अभी यह ऐसा ही कठिन प्रसंग है और यदि ऐसा ही बना रहा, तो भी कोई हर्ज नहीं है।

हम सच्चे अथवा अच्छे आदमीको मान देते हैं। यदि देखा जाये, तो वास्तवमें इसमें समाजकी थोड़ी-बहुत हीनता ही है, क्योंकि इसका मतलब है, हममें अच्छे और सच्चे आदमी इतने कम हैं कि हम उनका धूम-धामसे स्वागत करते हैं। जिन वस्तुओंकी कमी होती है, उनका भाव बढ़ता है। यदि ऐसा अवसर आये कि समाजमें सभी अच्छे हो जायें, तो फिर भले ही किसी व्यक्तिको मान न दिया जाये, वह समाज संसारमें तो मान पायेगा ही। अंग्रेज किसी सामर्थ्यवान आदमीपर लट्टू हो जाते हैं। इसके दो अर्थ हैं — एक तो यह कि उनमें वास्तविक सामर्थ्यकी कमी हो गई है, दूसरा यह कि वे लोग शरीर-बलको बहुत महत्त्व देते हैं।

इसलिए हमारा फर्ज तो यह है कि सभी भारतीय अच्छे, सत्यवादी, धैर्यवान, और स्वदेशाभिमानी देश-सेवक बनें। यदि ऐसा हो गया, तो मानापमानका प्रश्न नहीं बचेगा। मेरी किसीने कीमत नहीं की, ऐसा विचार भी मनमें नहीं आयेगा। कीमत तो इसीमें है कि जिस समय जो-कुछ मिले और जगतके रचयिताको जो-कुछ देना रुचे उसीमें सन्तोष मानकर सत्कर्मोंमें दिन गुजारे जायें।

मंगलवार, [सितम्बर १५, १९०८]

गलतफहमी

श्री मुहम्मद खाँके श्री गांधीके कार्यालयसे जानेके कारण कुछ लोग ऐसा समझ रहे हैं कि वे निःशुल्क सार्वजनिक कामसे पीछे हट गये। ऐसा समझना ठीक नहीं है। श्री मुहम्मद खाँने अवैतनिक रूपसे भी रहनेकी बात की थी, किन्तु वैसा करनेकी जरूरत नहीं थी। उन्हें साधारण रूपसे कमाई करनेकी अच्छी सुविधा मिल रही थी, इसलिए श्री गांधीकी सलाहसे वे गये हैं।[1] श्री डोरासामीकी अवैतनिक मदद स्वीकार कर ली गई है, क्योंकि वे तो खाली बैठे थे। भारतीय ईमानदारीसे कमायें और धन-संचय करें, इसकी भी जरूरत है। सभी कमाना छोड़कर स्वयंसेवक नहीं बन सकते। श्री डोरासामीको जीविकाकी अन्य सुविधाएँ हैं, इसीलिए वे संघकी मदद कर सकते हैं।

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ १६।

समितिकी बैठक

ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन) की समितिकी बैठक बुधवार तारीख ९ को हुई। उसमें श्री ईसप मियाँकी गैरहाजिरीमें श्री इब्राहीम कुवाड़ियाने अध्यक्षता की। इमाम अब्दुल कादिर बावजीर, श्री फैन्सी, श्री करोड़िया, श्री उमरजी, श्री लछीराम, श्री वी० जी० महाराज आदि हाजिर थे। चूँकि श्री गांधीने कार्यालयका काम लगभग बन्द कर दिया है और श्री पोलक पूरी तरह सार्वजनिक काममें गुथे हुए हैं, इसलिए अगस्तसे उनका [श्री पोलकका] खर्च तथा कार्यालयका किराया संघने अपने ऊपर लेनेका निर्णय किया है।[1] ऐसा करनेसे टाइपिस्ट आदिके खर्चके अलावा फिलहाल संघका खर्च प्रति मास ३५ पौंड बढ़ गया है। श्री गांधीका सारा निजी खर्च श्री कैलेनबैक उठाते हैं। वे रहते भी उन्हींके साथ हैं।

अहमद ईसप दाउद

कुछ महीने पहले श्री अहमद ईसप दाउदपर बिना परवाने (लाइसेंस) के फेरी लगानेका आरोप लगाया गया था। जब अदालतमें उनका नाम पुकारा गया, तब वे कहीं बाहर गये हुए थे, इसलिए मजिस्ट्रेटने उनकी जमानत रद कर दी। बादमें श्री अहमद आ पहुँचे, किन्तु मजिस्ट्रेटने अधिकार न होनेके कारण जमानतके अपने हुक्ममें फेरफार नहीं किया। इसलिए अटर्नी जनरलको दरख्वास्त दी गई। उन्होंने जमानत वापस करनेका हुक्म किया और मुकदमा चलानेकी आज्ञा दे दी। शनिवार (तारीख १२) को मुकदमा चला, किन्तु श्री क्रॉसने यह कहकर मुकदमा खारिज कर दिया कि श्री अहमद तो बिना परवानेके फेरी करते थे। मुकदमा परवाना न दिखानेके बारेमें था, इसलिए वह लागू नहीं होता। इस मुकदमेमें कोई सार नहीं है। देखनेकी बात इतनी ही है कि श्री मुहम्मद दाउद जेल जाना चाहते थे। उन्होंने जेल जानेके लिए ऊपरकी कोशिश की, किन्तु सजा नहीं मिली।

प्रिटोरियाके मुकदमे

नगरपालिकाने प्रिटोरियाके प्रमुख श्री वली मुहम्मद बगस, श्री इस्माइल आडिया, श्री इस्माइल जुमा, श्री लालशाह वल्लभदास उर्फ मंगलभाई पटेल तथा एक चीनीपर बिना परवाना पंसारी (ग्रोसर) का व्यापार करनेकी बाबत मुकदमा चलाया है। उनके मुकदमे आज हैं।[2] इसके लिए श्री गांधी प्रिटोरिया गये हैं। इनमें से कईके पास पूरे वर्षके लिए सामान्य विक्रेता परवाना[3] है, किन्तु नगरपालिका उसके सिवा पंसारीके कारोबारका परवाना माँगती है। पिछले छः महीनोंके सामान्य विक्रेता परवाना तो इनमें से कईके पास थे, किन्तु अब वे अँगूठेकी छाप देनेसे इनकार करते हैं और इसीलिए उन्होंने परवाने नहीं लिये। इसमें बचाव-पक्षकी ओरसे दलील यह दी जानेवाली है कि नगरपालिकाको पंसारीका परवाना माँगनेका हक ही नहीं है। नगरपालिकाको दूसरे प्रकारका परवाना माँगनेका हक है, किन्तु फिलहाल वह उनके

१. पिछली बैठकमें इस विषयपर विचार-विमर्श स्थगित कर दिया गया था; देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ १४-१५।

२. देखिए पिछला शीर्षक भी।

३. जनरल डीलर्स लाइसेन्स।

नियमोंमें नहीं है। यदि यह दलील ठीक हो, तो मुकदमा खारिज हो जाना चाहिए। श्री वली मुहम्मद वगसके ऊपर दो सम्मन्स हैं, क्योंकि उनकी दो दुकानें हैं।

बुधवार, [सितम्बर १६, १९०८]

प्रिटोरियाके भारतीयोंका मुकदमा मेजर डिक्सनके सामने हुआ। श्री गांधी तथा श्री लिखटेंस्टाइन उपस्थित थे। जिस दलीलका ऊपर जिक्र कर चुका हूँ, वह पेश की गई। मजिस्ट्रेट विचारमें पड़ गये, किन्तु उन्होंने निर्णय यही दिया कि नगरपालिकाको पंसारीका परवाना (ग्रोसर्स लाइसेंस) माँगनेका हक है। पहले श्री इस्माइल जुमाका मुकदमा हुआ। चूँकि उपर्युक्त दलील पेश की जा चुकी थी, इसलिए मजिस्ट्रेटका मन नरम पड़ गया। नगरपालिकाका वकील भी बहुत जोरदार नहीं था, इसलिए भारतीयोंकी ओरसे गवाही नहीं दी गई। परिणामतः न्यायाधीशने पाँच शिलिंग जुर्माना अथवा तीन दिनकी सख्त कैदकी सजा दी। श्री इस्माइल जुमा तुरन्त ही इसे स्वीकार करके जेल चले गये। उसके बाद श्री वली मुहम्मदके दो मुकदमे हुए। उनका भी यही नतीजा हुआ। तत्पश्चात् श्री आडियाकी बारी आई और उसके बाद लालशाह वल्लभदास उर्फ श्री मंगलदास पटेलकी बारी आई। सभीको यही सजा दी गई और सभी हँसते-हँसते जेल चले गये। सच कहें तो उन्हें केवल एक ही दिनकी जेल हुई। मंगलवारको चार बजे गये थे। वह तो कुछ भी नहीं रहा। बुधवार पूरा दिन जेलमें रहकर गुरुवारको सुबह बाहर आ जाना है।

यद्यपि उक्त सज्जनोंको जेलकी सजा हो गई है, फिर भी जो दलील दी गई थी, उसके विषयमें अपील करनेकी बात चल रही है; क्योंकि उसमें से कुछ फायदा निकलनेकी सम्भावना है। यदि पंसारीका परवाना लेना निश्चित ही हो, तो इस प्रकार कुछ समय तक लोग उस परवानेसे मुक्त रह सकते हैं। यदि ऐसा हो सका तो दो काम निकलेंगे। हम जेल भी जा सकेंगे और फिलहाल कानूनका दिया हुआ एक बहाना हमारे हाथ आ जायेगा। श्री वली मुहम्मद प्रिटोरियामें अध्यक्ष हैं। इसलिए यद्यपि उन्हें नाममात्रको ही जेलकी सजा मिली है, फिर भी यह साधारण बात नहीं है कि अध्यक्ष जेल भेजे गये। मैं श्री वली मुहम्मद और उसी प्रकार प्रिटोरियाके अन्य भाइयोंको भी मुबारकबादी देता हूँ।

पाठकोंको याद होगा कि श्री इस्माइल जुमा अबतक दो बार जेल जा चुके हैं। यह तो अभी-अभीकी बात है कि श्री आडियाको एक पौंडका जुर्माना हुआ था और उनका माल नीलाम किया गया था।

दुःखकी बात यह है कि उक्त सज्जनगण तो जेल गये, किन्तु सम्मन्स निकलते[1] ही कुछ अन्य भारतीय डर गये। उन्हें मालकी नीलामीका डर हुआ, इसलिए उन्होंने अँगूठेकी निशानी देकर तत्काल परवाने ले लिये। कहा जाता है कि ऐसे २० लोग हैं। ऐसी घटनाओंसे ही संघर्ष लम्बा होता जाता है। यदि सभी भारतीय हिम्मत रखें, तो हम थोड़े ही दिनोंमें नेटालके व्यापारियोंको छुड़वा सकते हैं। फिर, प्रिटोरियामें व्यापारियोंके सम्मानके लिए जब दूकानें बन्द करनेकी बात चली, तब बहुतोंने दूकानें बन्द नहीं कीं। यह भी खराब बात है; इसे स्वार्थयुक्त दृष्टि ही कहा जायेगा। जब भारतीय कौमके स्तम्भ कहे जानेवाले लोग जेल

१. समन्स किन लोगोंके नाम निकाले गये थे, यह बात मूलमें स्पष्ट नहीं है।

गये, तब कुछ भारतीयोंसे एक दिनके लिए भी व्यापार बन्द करते नहीं बना। कहा जा सकता है कि अभी हम लोगोंको बहुत-कुछ सीखना है।

क्रूगर्संडॉर्पमें दो मद्रासी श्री संगरन और आइकट धोबी बिना परवाना काम करनेके अपराधमें पकड़े गये थे। उनपर मुकदमा चला। न्यायाधीशने उन्हें एक पौंड जुर्माना अथवा तीन दिनकी जेलकी सजा दी। उन्होंने जेल जाना कबूल किया। उनकी तरफसे पैरवी करनेके लिए कोई भी खड़ा नहीं हुआ था। वे अपनी इच्छासे ही जेल चले गये।

इब्राहीम उस्मान

[श्री इब्राहीम उस्मान] पीट रिटीफ गये हैं, जहाँ उनकी दूकान है। यदि कोई उन्हें गिरफ्तार करे, तो वे गिरफ्तारीके लिए तैयार हैं।

नेटालके कैदियोंका सन्देश

श्री पोलक मंगलवारको श्री दाउद मुहम्मद आदिसे मिले थे। वे सब मजेमें हैं। श्री दाउद मुहम्मद तथा रुस्तमजीके बदनपर आने योग्य कपड़े जेलमें न होनेके कारण उनके लिए खास कपड़े तैयार किये जा रहे हैं। बाकी लोगोंको काम सौंप दिया गया है। सभीमें बहुत उत्साह और साहस है। वे आशा करते हैं कि हम बाहरवाले लोग बराबर काम करते रहेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–९–१९०८

२०. भेंट : रायटरको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर १६, १९०८

आज रायटरके एक प्रतिनिधिने श्री गांधीसे भेंट की। श्री गांधीने उससे कहा कि भारतीय एक ऐसा प्रवासी कानून स्वीकार करनेके लिए तैयार हैं, जिसमें किसी यूरोपीय भाषामें शिक्षा-परीक्षाकी व्यवस्था हो। यह परीक्षा कितनी कड़ी हो, इसका निर्णय वे जनरल स्मट्सकी मर्जीपर छोड़ देनेको तैयार हैं। परन्तु जब एक बार कोई भारतीय उपनिवेशमें आ जाये, तब उसे कानूनी समानता मिलनी चाहिए। इसका अर्थ है कि १९०७ का कानून रद किया जाना चाहिए। श्री गांधीने कहा कि भारतीय इस बातसे इनकार करते हैं कि वे शिक्षाके सम्बन्धमें कोई नया मुद्दा उठा रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया, २५–९–१९०८

२१. पत्र: जेल-निदेशकको[1]

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर १७, १९०८

जेल-निदेशक
प्रिटोरिया

महोदय,

आपका इस महीनेकी १६ तारीखका कृपा-पत्र, संख्या ६६७, मिला। मेरे संघको इस बातका अत्यन्त खेद है कि उसने जो मुद्दा उठाया है वह अभीतक गलत समझा जा रहा है।

मेरा संघ यह जानता है और स्वीकार करता है कि स्वास्थ्यकी दृष्टिसे मक्कीका दलिया पूर्णतः पौष्टिक आहार है; किन्तु मेरे संघने तो यह मुद्दा उठाया है कि आहार निर्धन वर्गके भारतीयों तक की आदतोंके अनुकूल नहीं है। मक्कीका दलिया भारतीयोंका राष्ट्रीय भोजन नहीं है। निःसन्देह आपको विदित है कि यद्यपि वह स्वास्थ्यकी दृष्टिसे उपयुक्त है तथापि कैदियोंको उसके साथ हमेशा रोटी भी दी जाती है। रोटी निश्चय ही स्वास्थ्यकी दृष्टिसे यूरोपीयोंके लिए भारतीयोंकी अपेक्षा ज्यादा जरूरी नहीं है। आप यह भी जानते हैं कि वतनी कैदियोंको मक्की दोपहरके भोजनमें दी जाती है। यह भी स्वास्थ्यकी दृष्टिसे उपयुक्त है; फिर भी समितिने, जो जानकारी उसके पास अवश्य रही होगी उसके आधारपर, भारतीय बन्दियोंके दोपहरके भोजनमें मक्कीके स्थानपर चावल रखा। भोजन-तालिका बनानेवाली समितिने जिस कारणसे प्रेरित होकर भारतीय बन्दियोंके लिए दोपहरके भोजनमें मक्कीके स्थानपर चावल निर्धारित किया, मेरा संघ उसी कारणसे नाश्तेमें मक्कीके दलियाके स्थानपर अन्य आहारकी माँग करता है।

यदि भारतीय बन्दियोंकी भोजन-तालिकाके खिलाफ अबतक शिकायत नहीं की गई, तो इसका कारण यह है कि यहाँ भारतीय बन्दी बहुत कम रहे हैं। किन्तु इस समय शिकायत करना केवल इसलिए ही उचित नहीं है कि ट्रान्सवालकी जेलें भारतीयोंसे भरी हुई हैं, बल्कि इसलिए भी उचित है कि वस्तुतः ये भारतीय अपराधी नहीं हैं और मेरे संघके विचारमें दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजकी उच्चतम श्रेणीके लोग हैं।

यदि मेरे संघके बार-बार किये गये निवेदनोंपर ध्यान नहीं दिया गया है तो इससे भारतीय समाज केवल यही निष्कर्ष निकाल सकता है कि मेरे संघकी उचित प्रार्थना राजनीतिक कारणोंसे ठुकराई जाती है, और इसका उद्देश्य भारतीय समाजको भूखा रखकर एक ऐसा कानून स्वीकार करनेके लिए मजबूर करना है जो उसे नापसन्द है।

१. जेल-निदेशक: डायरेक्टर ऑफ प्रिजन्स। यह तथा १८ और २५ सितम्बरको जेल-निदेशकको लिखे दो अन्य पत्र, २१ और २८ सितम्बरको उपनिवेश-सचिवके नाम लिखे दो पत्रोंके साथ, **इंडियन ओपिनियनमें** प्रकाशित किये गये थे। शीर्षक था, "क्या भारतीय भूखों मारकर झुकाये जायेंगे? जेलकी भोजन-तालिकाकी फिरसे चर्चा"।

इसलिए मैं यह आशा करनेकी धृष्टता करता हूँ कि आप कृपया माँगी गई राहत देकर इस प्रकारके किसी भी सन्देहको दूर कर देंगे।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ३–१०–१९०८

२२. पत्र: 'स्टार' को[1]

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १७, १९०८

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'

महोदय,

कदाचित् आप मुझे यह कहनेकी अनुमति देंगे कि आप जो भारतीय दृष्टिकोणको लगातार गलत रूपमें प्रस्तुत करते रहे हैं वह, अब ऐसा प्रतीत होता है, अनजानमें होनेकी अपेक्षा जानबूझकर किया गया है। आप कहते हैं कि मैं "किसी भी शैक्षणिक कसौटीको, चाहे वह कितनी ही कड़ी क्यों न हो, स्वीकार करनेके लिए तैयार हूँ, बशर्ते कि वह यूरोपीयों और एशियाइयोंपर निष्पक्ष" भावसे लागू की जाये। मैं अबतक जो-कुछ कहता आया हूँ, यह उसके बिलकुल विपरीत है। मेरा कहना यह है कि कानूनमें एक सामान्य शैक्षणिक कसौटी हो; किन्तु अमलमें वह निष्पक्ष भावसे नहीं, बल्कि भेदभावके साथ लागू की जाये। कानूनमें मन्त्रीको अपनी विवेकबुद्धिका प्रयोग, जैसे चाहे वैसे, करनेका पूरा अधिकार है। यदि उसे विवेकबुद्धिके

१. यह पत्र २६–९–१९०८ के **इंडियन ओपिनियन**में "श्री गांधीका उत्तर" शीर्षकसे प्रकाशित किया गया था। **स्टार**ने इसपर सम्पादकीय टिप्पणीमें लिखा था: "...हम...आज सवेरेके टाइम्सकी ओर ध्यान आकर्षित करते हैं।...उसने निष्कर्ष निकाला है कि प्रमाण उपनिवेश-सचिवके पक्षमें है और वर्तमान झगड़ेकी जड़ यह है कि श्री गांधी...ऐसी रियायतें प्राप्त करना चाहते हैं जो गत जनवरीमें समझौता करते समय श्री स्मट्सके खयालमें नहीं थी। [श्री गांधी] किसी भी शैक्षणिक कसौटीको, चाहे वह कितनी ही कड़ी क्यों न हो, स्वीकार करनेके लिए तैयार हैं, बशर्ते कि वह यूरोपीयों और एशियाइयोंपर निष्पक्ष भावसे लागू की जाये। किन्तु उनका आग्रह यह है कि जिन लोगोंको वर्तमान कानून या नये प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम (इमिग्रेशन रेस्ट्रिक्शन ऐक्ट) के अन्तर्गत प्रविष्ट होने दिया जाये उनके साथ पूर्ण "समानता" का बरताव किया जाये। यदि हम शैक्षणिक कसौटीको बहुत कठोर बना दें तो हमें कई यूरोपीयोंके न आ सकनेका अन्देशा है... यदि वर्तमान स्तरको कायम रखें और १९०७ के एशियाई कानूनको रद कर दें तो हम उससे असंख्य एशियाइयोंके लिए उपनिवेशके द्वार खोल देते हैं।... समझौतेकी कोई गुंजाइश नहीं है, मुख्यतः [इसलिए कि] श्री गांधीको भेदजनक कानूनकी समस्त कल्पना ही अस्वीकार है।"

प्रयोगका अधिकार न हो, तो वह उसे दे दिया जाये।[1] भारतीय इसके लिए बिलकुल तैयार हैं। मैंने यह बात जनता और आपके प्रतिनिधिके सम्मुख एक बार नहीं, अनेक बार कही है। इसमें कोई चाल होनेका प्रश्न भी नहीं है, जैसा आपने पहले एक टिप्पणीमें कहा है। जबतक ऐसे लोग, जो एक ही स्तरके नहीं हैं, एक ही झंडेके नीचे रहते हैं, तबतक प्रशासनिक असमानता सदा रहेगी। मेरी माँग तो केवल यह है कि कानूनमें, विशेषत: शिक्षित भारतीयोंके सम्बन्धमें, व्यक्तियोंका लिहाज कतई न किया जाना चाहिए। आप 'टाइम्स'का प्रमाण देते हैं; किन्तु यदि आप मुझे यह कहनेके लिए क्षमा करें तो, 'टाइम्स' सिर्फ उसी बातका ढिंढोरा पीटता है जिसे जनरल स्मट्स या उनकी ओरसे कोई अन्य व्यक्ति उसको भेज देता है। इस समय 'टाइम्स'के पास इस मामलेके सम्बन्धमें पूरे तथ्य नहीं हैं।

मैं इस बातका जोरोंसे खण्डन करता हूँ कि मेरे देशवासी अब एक नया प्रश्न उठा रहे हैं। संक्षेपमें तथ्य निम्न हैं: युद्धसे पूर्व भारतीयोंका प्रवास बेरोकटोक होता था। सन्धि होनेके बाद प्रवास सामान्यत: शान्ति-रक्षा अध्यादेश (पीस प्रिज़र्वेशन ऐक्ट) के अन्तर्गत नियन्त्रित था; इसके अन्तर्गत नये शिक्षित एशियाई देशमें प्रवेश कर सकते थे। सन् १९०७ के एशियाई कानूनमें केवल उन लोगोंके पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) की व्यवस्था थी, जिन्हें देशमें रहनेका अधिकार था, किन्तु जनरल स्मट्सकी स्वीकारोक्तिके अनुसार उससे प्रवास नियन्त्रित नहीं होता था। शान्ति-रक्षा अध्यादेशका स्थान प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम (इमिग्रेशन रेस्ट्रिक्शन ऐक्ट)ने लिया और उसमें एक सामान्य शैक्षणिक कसौटी रखी गई। तब एशियाई [पंजीयन] अधिनियम (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) बनाया गया और उसके खण्ड २ के उपखण्ड ४ के अन्तर्गत भारतीयोंके उचित अधिकार धोखेसे छीन लिये गये, यद्यपि उसमें इसका उल्लेख नहीं था; किन्तु चूँकि भारतीयोंने एशियाई कानूनको कभी स्वीकार नहीं किया है और सदा अकथनीय कष्ट सहते हुए लगातार दृढ़तापूर्वक उसको रद करनेकी माँग की है, इसलिए उनपर एक नया मुद्दा दाखिल करनेका आरोप कैसे लगाया जा सकता है?

कानूनको रद करनेका समय आनेपर अपना वचन पूरी तरह भंग करके चार शर्तोंपर[2] कानूनको रद करनेका प्रस्ताव करनेवाले जनरल स्मट्स ही थे इनमें से तीन शर्तोंको उन्होंने अनाक्रामक प्रतिरोधके दबावमें आकर और अपने कानूनके प्रशासनको ठप होते देखकर वापस ले लिया। चौथी शर्तको[3] वे वापस नहीं लेते; और जबतक यह बात स्वीकार नहीं की जाती तबतक अवश्य ही ब्रिटिश भारतीयों और अन्य एशियाइयोंकी दृष्टिमें वे बेईमानीके आरोपके अपराधी रहेंगे।

मुझे यह कहते हुए दु:ख होता है कि आप और प्रगतिवादी नेता, जो कहते हैं कि उन्हें साम्राज्य-हित हृदयसे प्रिय है, और जो एक प्रगतिशील दलका नेतृत्व करनेका दावा करते

१. बादमें इसके उत्तरमें स्टारने लिखा था: "हम इस आरोपका जोरदार खण्डन करते हैं कि हमने श्री गांधी या उनके समाजको जानबूझकर गलत रूपमें प्रस्तुत किया है।. . .ऊपरकी बातोंके जवाबमें हम यह कहेंगे कि कोई भी विनियम या मन्त्री द्वारा जारी किया गया आदेश संसदके कानूनकी स्पष्ट धाराओंको दरकिनार नहीं कर सकता। कानून अमलमें लानेके लिए बनाये जाते हैं। यदि सरकार. . .इस मामलेमें ऐसी धाराओंपर अमल करनेमें असमर्थ रहती है. . .तो वह एक ऐसी बेईमानी करती है जो राजनयिकोंके उपयुक्त नहीं है।" गांधीजीने इसका जो प्रत्युत्तर भेजा उसके लिए देखिए "पत्र : 'स्टार' को", पृष्ठ ५४-५५।

२. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २९७-९९ और पृष्ठ ३०८-१०।

३. शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशके सम्बन्धमें।

हैं, बेईमानीका पक्ष ले रहे हैं। क्या मैं ऐसा ही एक अन्य उदाहरण दे सकता हूँ? जनरल बोथाने वेरीनिगिंग (फ्रेनिखन) की सन्धिके सम्बन्धमें "वतनी" शब्दकी व्याख्या यह की थी कि उसके अन्तर्गत एशियाई भी आते हैं। लॉर्ड मिलनर और सर रिचर्ड सॉलोमनने इसको गलत बताया, किन्तु जनरल बोथाने जो व्याख्या की थी उसको उन्होंने मान लिया; और उस व्याख्याके कारण ही आज एशियाई लोग नगरपालिका-मताधिकारसे वंचित हैं।[1] फिर, जनरल बोथाने कहा कि लॉर्ड किचनरने उनके लोगोंको तत्काल स्वशासन प्रदान करनेका वचन दिया है। इस सम्बन्धमें भी अंग्रेजोंकी प्रतिष्ठाको बेदाग रखनेके लिए साम्राज्य-सरकारने उस वचनको उसी अर्थमें स्वीकार कर लिया जिसमें जनरल बोथाने उसे समझा था। क्या एशियाई कानूनको रद करनेके सम्बन्धमें और ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें अंग्रेजोंकी प्रतिष्ठा या उपनिवेशकी प्रतिष्ठा अलग-अलग तरीकोंसे नापी जायेगी?

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
स्टार, १७-९-१९०८

२३. भेंट: 'स्टार' को

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १७, १९०८]

श्री गांधीने 'स्टार' के प्रतिनिधिको भेंटके दौरान कहा कि [अधिकारियोंने] मेरे पुत्रको निर्वासित करके[2] मेरे साथ कठोर बरताव किया है। मैं कल उससे मिलनेके लिए व्यग्र था और मैंने उसके बारेमें सम्बन्धित अधिकारीको अर्जी देकर पूछताछ की थी। अधिकारीने उस समय बताया कि अबतक उसे इस विषयमें कोई जानकारी नहीं मिली है और सत्ताधारी उसके सम्बन्धमें क्या कार्रवाई करना चाहते हैं, यह समाचार वह अगले दिन प्रातः देगा। आज प्रातः जब मैं जेल गया तब मुझे समाचार मिला कि हरिलालको ७ बजे ले गये।

श्री गांधीने कहा कि यदि सरकारको मुझसे यह वचन लेना था कि किसी प्रकारका प्रदर्शन न किया जायेगा तो मैं उसको ऐसा वचन पहले दे चुका हूँ। मैं अब भी उसे वैसा वचन देनेके लिए तैयार था। हरिलाल जेपी स्टेशनपर गाड़ीमें था; किन्तु गाड़ीकी खिड़कियाँ बन्द थीं, और वे जर्मिस्टनमें भी बन्द ही रखी गईं। लोगोंने खिड़कियोंकी दरारोंसे बातें कीं और ऐसा जान पड़ता था कि तमाशबीनोंको ये बातें बड़ी मजेदार लग रही हैं। श्री गांधीने तार द्वारा अपने पुत्रको सूचित किया है कि वे उपनिवेशमें फिर शीघ्र ही प्रवेश करें। यह तार उनको सीमापर मिल जायेगा।[3]

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, १९-९-१९०८

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३५६-५७।

२. हरिलाल गांधी १७ सितम्बर, १९०८ को निर्वासित किये गये थे।

३. हरिलाल १९ सितम्बर, १९०८ को उपनिवेशमें पुनः प्रविष्ट हुए और उनको २१ सितम्बर तक के लिए फिर जेल भेज दिया गया। २१ सितम्बरको उनपर से मुकदमा उठा लिया गया।

२४. पत्र: जेल-निदेशकको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर १८, १९०८

जेल-निदेशक[1]
प्रिटोरिया

महोदय,

भारतीय कैदियोंको भोजन-तालिकाके सम्बन्धमें आपका तार संख्या ४५६ प्राप्त हुआ। यदि आप कृपापूर्वक छोटी और लम्बी सजा पाये हुए भारतीय और अन्य कैदियोंके लिए स्वीकृत तालिकाकी एक प्रति मेरे पास भेज देंगे तो मेरा संघ आभारी होगा।

इसके अतिरिक्त मैं आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ कि इस आन्दोलनके सिलसिलेमें मैं स्वयं प्रिटोरिया जेलमें था और तब कैदियोंको किसी खास प्रार्थनाके बिना घी मिलता था। मैंने यह भी देखा कि भारतीय कैदियोंको, जो हमें प्रिटोरिया जेलमें मिले थे, घी मिलता था। जोहानिसबर्गके कैदियोंका भी कहना है कि उन्हें प्रारम्भसे ही घी मिलता था और सब भारतीय कैदियोंको, जो एशियाई कानूनके अन्तर्गत मुकदमा आरम्भ होनेके समय जोहानिसबर्ग जेलमें थे, घी मिलता था। एक कैदीका कहना है कि उसने वास्तवमें वह छपी हुई तालिका पढ़ी थी जिसमें मक्कीके दलिये और चर्बीकी जगह ४ औंस चावल और १ औंस घी दिया जानेका उल्लेख था। मेरे संघका यह भी कहना है कि भोजन-तालिकाका, जो छपी हुई थी, जोहानिसबर्गमें जेलके अधिकारियों द्वारा इतनी कड़ाईसे पालन किया जाता था कि चीनी कैदियोंको मक्कीका दलिया और चर्बी दी जाती थी, क्योंकि वे चावलको उस तालिकामें शामिल नहीं किये गये थे जो भारतीय कैदियोंके लिए निश्चित की गई थी।[2] इसलिए यदि आप कृपापूर्वक जाँच करके आवश्यक राहतके लिए आज्ञा जारी करें तो मेरा संघ कृतज्ञ होगा।

मैं आपका ध्यान एक बार फिर इस तथ्यकी ओर दिलाता हूँ कि किसी मुसलमान या शाकाहारी हिन्दूके प्रति उसके भोजनमें पशुकी चर्बी शामिल करनेसे बड़ा कोई और अपराध नहीं हो सकता। मैं इतना और कहना चाहता हूँ कि हालमें ही जोहानिसबर्ग जेलसे रिहा होकर आये कैदियोंने मेरे संघको बताया है कि उन्हें अपनी चावलकी खुराकके साथ १ औंस घी मिलता था।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ३–१०–१९०८

१. डायरेक्टर ऑफ़ प्रिजन्स।
२. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १४३-४९।

२५. पत्र : 'स्टार' को[1]

जोहानिसबर्ग,
सितम्बर १८, १९०८

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'

महोदय,

मेरे इस कथनका कि शायद आपने मुझे जानबूझकर गलत रूपमें पेश किया है, आपने जोरसे खण्डन किया है; इससे मुझे प्रसन्नता हुई है। आपके इस खण्डनसे मुझे आशा होती है कि शायद मैं आपको अब भी यह विश्वास दिला सकता हूँ कि भारतीयोंकी माँग न्यायपूर्ण है। अब मैं मानता हूँ कि उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंके लिए द्वार खुले रखनेमें आपको कोई एतराज नहीं है। यदि ऐसा हो तो सवाल "हाँ या ना" का न होकर "कैसे" का है।

आप मेरे हलको यह कहकर अस्वीकार करते हैं कि वह एक ऐसी "बेईमानी है जो राजनयिकोंके उपयुक्त नहीं है", और फिर भी संसार-भरके राजनयिकोंने उसीका सहारा लिया है। शान्ति-रक्षा अध्यादेश (पीस प्रिजर्वेशन ऐक्ट) की रूसे गवर्नरको अनुमतिपत्र (परमिट) जारी करनेके सम्बन्धमें पूर्ण विवेकाधिकार प्राप्त है। गोरे ब्रिटिश प्रजाजनोंको वह माँगने-भरसे मिल जाता है; दूसरे यूरोपीयोंको उतनी आसानीसे तो नहीं, किन्तु बहुत कम कठिनाईसे प्राप्त हो जाता है; लेकिन ब्रिटिश भारतीयोंको अत्यधिक कठिनाइयाँ झेलनेके बाद मिलता है। गवर्नरने भारतीयोंके सम्बन्धमें उस अध्यादेशके अमलकी गरजसे यहाँतक किया कि एक पृथक् विभाग[2] ही खोल दिया। इसमें अन्याय तो था, किन्तु बेईमानी नहीं थी; क्योंकि ऐसा खुलेआम किया गया था। गवर्नरको विवेकाधिकार प्राप्त था और जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा, उन्होंने प्रमुख समाजके हितके लिए उसका इस प्रकार पक्षपातपूर्ण उपयोग किया। यदि विभागमें कभी भ्रष्टाचार न रहा होता और वास्तविक शरणार्थियोंके दावोंके सम्बन्धमें सदा ही अत्यधिक कृपणतासे काम न लिया गया होता तो भारतीय पक्षपातपूर्ण प्रशासनकी ओर अँगुली न उठाते।

आपने जनरल स्मट्सपर शासन-सेवाके रिक्त स्थानोंपर बोअरोंकी नियुक्ति करनेके सम्बन्धमें विवेकाधिकारके अनुचित उपयोगका आरोप लगाया है; परन्तु यह राजनयिकोचित है अथवा नहीं, यह परिणामोंसे प्रकट होगा।

नेटालमें शैक्षणिक कसौटीके सम्बन्धमें प्रवासी अधिकारी (इमिग्रेशन ऑफिसर) को विवेकाधिकार प्राप्त है। मैं शपथपूर्वक कह सकता हूँ कि यूरोपीयोंकी तो परीक्षा ली ही नहीं जाती। भारतीयोंकी परीक्षा ली जाती है, और वह भी कड़ी। कुछ वर्ष पूर्व नेटालमें

१. यह २६-९-१९०८ के इंडियन ओपिनियनमें "समाधान सम्भव", शीर्षकसे प्रकाशित किया गया था।

२. एशियाई कार्यालय; यह १९०३ में बन्द कर दिया गया; देखिए खण्ड ४, पृष्ठ १७

अब्दुल्ला ब्राउन[1] नामक एक आयरिशकी परीक्षा ली गई थी, क्योंकि वह तुर्की टोपी पहने हुए था; परन्तु उसके अन्य गोरे साथी बिल्कुल छोड़ दिये गये थे। बादमें स्वर्गीय श्री एस्कम्ब और श्री ब्राउन इस बातपर खूब हँसे। श्री ब्राउनको इस हास्यास्पद स्थितिका एहसास तो हुआ; किन्तु उन्होंने यह खयाल नहीं किया कि परीक्षामें कुछ बेईमानी है।

आज यही केपमें हो रहा है।

तथ्य यह है कि कानूनी असमानता एक सम्पूर्ण प्रजातिके लिए अपमानजनक होगी। प्रशासनिक भेदभावका मतलब होगा पूर्वग्रहको तरह देना और भारतीयों द्वारा उसकी स्वीकृतिका अर्थ होगा इस प्रकारके पूर्वग्रहको उदारतापूर्वक और, मैं तो कहता हूँ, राजनयिकोचित मान्यता देना कहलायेगा। साथ ही इसका अर्थ इस तथ्यको मान लेना भी होगा कि यदि हम इस देशमें रहना चाहते हैं तो हमें यूरोपीय प्रजातियोंकी प्रधानताके सामने सिर झुकाना पड़ेगा।

कुछ भी हो, यदि आप इस बातसे सहमत हैं कि मुट्ठी-भर सुशिक्षित एशियाइयोंको बिना अपमानित किये सुरक्षित रूपसे आने दिया जाये तो, निश्चय ही, सरकार और प्रगतिवादी दलकी सम्मिलित बुद्धिसे कोई ऐसा हल निकले बिना नहीं रह सकता, जो यूरोपीयों और भारतीयों, दोनोंको मान्य हो और जिससे एक ऐसी स्थिति समाप्त हो जाये जिसे साम्राज्यका कोई भी शुभेच्छु उदासीन भावसे नहीं देख सकता।

आपका, आदि,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

स्टार, १८-९-१९०८

२६. ईसप मियाँ और उनके उत्तराधिकारी

ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष-पदसे श्री ईसप मियाँके त्यागपत्र दे देनेके कारण जोहानिसबर्गमें हुई १० तारीखकी सार्वजनिक सभा उल्लेखनीय थी।[2] बड़े ही कठिन अवसरपर श्री ईसप मियाँने संघकी पतवार अपने हाथमें ली थी। किसी कमजोर व्यक्तिके अध्यक्ष होनेसे भारतीय समाजपर महान संकट और सर्वनाश आ सकता था। श्री ईसप मियाँ शक्तिशाली और दृढ़ सिद्ध हुए। स्थानीय सरकार जिन शैतानी ताकतोंकी प्रतिनिधि है, उनसे लड़नेके लिए उन्होंने पिछले वर्ष अपना कारोबार लगभग बन्द कर दिया। उन्होंने अपनी हजकी यात्रा तीसरी बार मुल्तवी की। उनकी पत्नीकी मृत्यु हो गई; किन्तु उन्होंने पतवार हाथसे नहीं छोड़ी। सारा संसार जानता है कि उन्होंने सचाईकी खातिर अपने ही देशवासीके हाथों गहरी शारीरिक क्षति उठाई।[3] पिछले जनवरी माहके समझौतेसे और नये पंजीयन

१. अगस्त १९०४ में तीसरी बार डर्बनके मुख्य नगर-न्यायाधीश और महापौर निर्वाचित; देखिए खण्ड ४, पृष्ठ २५७-५८; उस बाजार-नोटिसके जन्मदाता जिसमें नेटालमें एशियाइयोंका व्यापार केवल बस्तियों तक सीमित कर देनेका प्रस्ताव था।

२. देखिए "प्रस्ताव: सार्वजनिक सभामें" पृष्ठ ३२।

३. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २४३-४५ और २४९।

अधिनियम (रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) के पेश किये जानेसे उन्होंने यह दिखा दिया है कि अपने उद्देश्यमें दृढ़ विश्वास और साहससे क्या किया जा सकता है। श्री ईसप मियाँ केवल ट्रान्सवालके ही नहीं, बल्कि सारे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके धन्यवादके पात्र हैं। उनका भार श्री काछलियाके योग्य कन्धोंपर आ पड़ा है। श्री काछलिया भारतीय दलके तपे हुए सैनिक हैं उन्होंने अपने ध्येयके लिए कारावास भोगा है। उन्होंने पूरे मनसे काम किया है और वे सदा श्री ईसप मियाँके योग्य सहयोगी रहे हैं। सभी मानते हैं कि श्री ईसप मियाँका स्थान लेनेके लिए वे सबसे अधिक उपयुक्त व्यक्ति हैं। हम आशा करते हैं कि वे समाजकी अपेक्षाओंको पूरा करेंगे। उनका काम बहुत कठिन है। भारतीय नौका अब भी तूफानी समुद्रमें फँसी हुई है। और उन्हें अपनी समस्त शक्ति, धैर्य और शान्तिकी तथा जनसाधारणसे सुलभ सारे सहयोगकी आवश्यकता होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-९-१९०८

२७. नेटालका मामला

नेटालके भारतीयोंको बहुत सोच-विचार कर चलना चाहिए। प्रार्थनापत्रों और सभाओंसे दिन बदलनेवाले नहीं हैं। प्रार्थनापत्रोंके पीछे बल होना चाहिए।

न्यूकैसलका परवाने (लाइसेंस)का मामला विचार करने योग्य है। उसके अनुसार नगरपालिकाओंको अमुक प्रकारके ही परवाने देनेका हक है।[1] उनमें से भिन्न प्रकारके परवाने सन् १८९७ के कानून [१८][2] के अन्तर्गत मिल सकते हैं। अब ऐसा कहा जा सकता है कि १८९७ का कानून नगरपालिकाओंकी सत्ता बढ़ा नहीं सकता। यानी, नगरपालिकाओंकी सत्ता कम हो गई। इससे हमें कुछ सुविधाएँ मिल सकती हैं।

इस कारण नेटालकी सरकारने एक नया विधेयक (बिल) तैयार किया है, जिसका उद्देश्य न्यूकैसलके इस मुकदमे [से प्राप्त लाभ] को धो डालना है। इसका कड़ा विरोध करनेकी आवश्यकता है। नेटालकी संसद तो [हमारे] प्रार्थनापत्रको रद्दीकी टोकरीमें फेंक देगी। बड़ी सरकार भी हमारी कुछ सुनेगी नहीं। यानी ऐसे दिन आये हैं कि एक तरफ कानूनके क्षेत्रमें शायद हमें विजय मिले तो दूसरी तरफ संसद हमारी उस विजयपर पानी फेर दे।[3]

इसका एक ही इलाज है कि हमें अपने बलपर लड़ना चाहिए। यह बल है सत्याग्रह। नेटालके व्यापारियोंको परवाना लिये बिना व्यापार करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-९-१९०८

१. सन् १८५० के अध्यादेश ३ के अन्तर्गत।
२. विक्रेता परवाना-कानून (डीलर्स लाइसेंसेज़ ऐक्ट)।
३. नये कानून बनाकर।

२८. पत्र : अखबारोंको[1]

जोहानिसबर्ग
सितम्बर १९, १९०८

सेवामें
सम्पादक

महोदय,

मैंने जेल-निदेशकको[2] एक पत्र लिखा है, जिसकी प्रति प्रकाशनार्थ आपकी सेवामें भेज रहा हूँ। ब्रिटिश भारतीय संघने स्वेच्छया कष्ट सहना तय किया है और ब्रिटिश भारतीयोंको भी वैसी ही सलाह दी है। लेकिन, मैं नहीं जानता कि साथके पत्रमें जिस बरतावका विवरण दिया हुआ है, वह उपनिवेशियोंकी मनुष्यताको शोभा देता है या नहीं। हम नहीं चाहते कि हमारे साथ विशेष कैदियों-जैसा व्यवहार किया जाये, लेकिन इतना तो चाहते ही हैं कि इस प्रबुद्ध देशमें ब्रिटिश भारतीय कैदियोंसे थोड़ी मानवताका बरताव हो।

आपका, आदि,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
रैंड डेली मेल, २१-९-१९०८

२९. पत्र : जेल-निदेशकको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर १९, १९०८

जेल-निदेशक
प्रिटोरिया

महोदय,

मेरे संघको सैयद अली नामक एक ब्रिटिश भारतीयका, जिन्होंने हालमें वॉक्सबर्गमें जेलकी सजा भुगती है, गुजरातीमें लिखा पत्र मिला है। मैं नीचे इस पत्रके महत्त्वपूर्ण अंशका स्वतन्त्र अनुवाद दे रहा हूँ। यह पत्र इसी १७ तारीखको स्प्रिंग्ज़से लिखा गया है।

> मैं अपने और आपके बीच ईश्वरको साक्षी बनाकर यह लिखता हूँ। १९ अगस्त, १९०८ को मजिस्ट्रेटने, परवाने (लाइसेंस)के बिना व्यापार करनेके जुर्ममें, मुझे १० [शि०]

१. यह जेल-निदेशकके नाम लिखे गये पत्रके साथ प्रकाशित किया गया था; देखिए अगला शीर्षक। *रैंड डेली मेल*ने इसे "जेलका जीवन : एक भारतीयकी शिकायत : काफिरोंसे भी बुरा बरताव" शीर्षकसे २१-९-१९०८ के अंकमें प्रकाशित किया था। पत्र-व्यवहार २६-९-१९०८ के *इंडियन ओपिनियन*में भी छपा था।

२. डायरेक्टर ऑफ़ प्रिजन्स।

जुर्मानेकी अथवा सात दिनकी सख्त कैदकी सजा दी। मैंने कैदकी सजा मंजूर की। मैं जब जेलमें दाखिल हुआ तब एक काफिर मेरे पास आया और उसने मुझसे कपड़े उतारकर नंगा हो जानेके लिए कहा। मैंने वैसा ही किया। उसके बाद मुझे उसी अवस्थामें कुछ दूर नंगे पैर चलाया गया और काफिरोंके साथ २५ मिनट तक ठंडे पानीमें खड़ा रखा गया। फिर मुझे बाहर निकाला गया और एक दफ्तरमें ले जाया गया। उसके बाद मुझे पहननेके लिए कुछ कपड़े तो दिये गये किन्तु चप्पलें नहीं दी गईं। इसलिए मैंने जेलरसे चप्पलोंकी माँग की। पहले तो उसने इनकार कर दिया, पर बादमें मुझे फटी हुई चप्पलें दे दी गईं। मैंने मोजे माँगे तो उसने मुझे गालियाँ दीं (जो अनुवाद योग्य नहीं हैं)। मैंने अपनी माँग फिर दुहराई तो उसने कहा, "देखो, मैं तुम्हें कोड़े लगाऊँगा।" तब मैं डर गया और यदि मैं दुबारा बोलता तो उसने मुझे जरूर पीटा होता।

अगस्त २० को मुझे पाखानेकी बाल्टियाँ ले जाने और खाली करनेका काम दिया गया। मैंने जेलरसे इस कामके बारेमें शिकायत की तो मुझे ठोकरें और तमाचे मिले। फिर भी मैंने अपनी शिकायत जारी रखी और कहा कि पत्थर तोड़नेका काम खुशीसे करूँगा, लेकिन मुझे इन बाल्टियोंको ले जाने और खाली करनेके कामसे मुक्त कर दिया जाये। मुझे फिर ठोकरें मारी गईं। मैं लाचार हो गया और मुझे वे बाल्टियाँ ले जानी पड़ीं।

शनिवार, २२ अगस्तको मुझे फिर करीब आधे घंटे तक ठंडे पानीमें रखा गया। पानी बेहद ठंडा था। मैं काँप रहा था। ईश्वर ही जानता है, कितना ठंडा था वह। इसके बाद मुझे कुछ ज्वर हो आया। मेरे सीनेमें दर्द होने लगा। २५ तारीखको मुझे रिहा कर दिया गया। रिहा करते वक्त जेलरने मुझसे कहा, "यदि तुम मरना चाहो तो फिर आ सकते हो।" मैंने तुरन्त जवाब दिया, "अच्छी बात है, यदि तुम मार सको तो मार डालना।" इसके बाद मैं ११ बजेकी गाड़ीसे स्प्रिंग्ज़ लौट आया। और तभीसे मैं बीमार हूँ, मेरी छातीसे खून आता है और मैं डॉक्टरकी सलाहके अनुसार चल रहा हूँ। . . .

मेरे साथ काफिर कैदियोंसे भी ज्यादा बुरा व्यवहार किया गया। सौभाग्यसे मैं एक ही हिन्दुस्तानी था। ईश्वरको धन्यवाद है कि मैं बच गया। लोगोंपर मेरा जो भी पैसा निकलता था, वह सब डूब गया है; लेकिन मैं उसकी परवाह नहीं करता। मैं आशा करता हूँ कि समाज अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षा कर सकेगा।

मेरा संघ नहीं जानता कि ऊपर दिया गया विवरण कहाँतक सही है; लेकिन मेरी नम्र रायमें, देखनेसे तो यही लगता है कि घटनाकी पूरी जाँच वांछनीय है और मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आप जाँच करायेंगे ही। इस बीच मैं आपके द्वारा सरकारको यह सूचित कर देनेकी धृष्टता करता हूँ कि उपर्युक्त विवरणको सच मानकर मेरे संघने यही सलाह दी है कि जिसे संघ नैतिक सिद्धान्त मानता है उसकी रक्षाके लिए सारी कठिनाइयोंके बावजूद कष्ट सहना जारी रखा जाये।

मैं इतना और कह दूँ कि उक्त पत्रका लेखक, जैसा कि उसके नामसे प्रकट है, पैगम्बरका सीधा वंशज है और जब मुसलमानोंको यह मालूम होगा कि वॉक्सवर्ग जेलमें ऐसे

व्यक्तिसे अत्यन्त गन्दा काम कराया गया है तब उनके मनमें जो कड़वाहट और नाराजी पैदा होगी उसपर कुछ कहनेकी जरूरत नहीं।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
रैंड डेली मेल, २१-९-१९०८

३०. पत्र : डब्ल्यू० हॉस्केनको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर १९, १९०८

श्री विलियम हॉस्केन, संसद-सदस्य[1]
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय,

एशियाई इस समय जिस भारी संघर्षमें रत हैं उसमें आप साम्राज्य-प्रेमी तथा ईसाई सज्जन होनेके नाते जो कृपापूर्ण दिलचस्पी ले रहे हैं, उसके लिए हम, नीचे हस्ताक्षरवाले लोग, आपके बहुत आभारी हैं।

आपने आज अपने कार्यालयमें बुलाई गई बैठकमें, जिसमें श्री कार्टराइट, श्री पोलक तथा हम लोग उपस्थित थे, हमें बताया था कि एशियाई कौमें, जिनका अधिकांश भाग ब्रिटिश प्रजाजन हैं, जो उत्पीड़न सह रही हैं उससे जनरल स्मट्सको सचमुच दुःख है। हम इस भावनाकी सराहना करते हैं। आपने यह भी कहा था कि जनरल स्मट्सका खयाल है, उन्हें हमारी माँगको पूरा करनेमें कोई अपरिहार्य कठिनाई न होगी। इसलिए हम निम्न निवेदन करते हैं :

जनरल स्मट्स तथा प्रगतिवादी विरोधी दलके[2] नेताओंको यह वचन देना चाहिए कि संसदके आगामी अधिवेशनमें एशियाई कानून रद कर दिया जायेगा और ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन) के द्वारा की गई प्रार्थनाके अनुसार उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंका दर्जा सुरक्षित कर दिया जायेगा।

जहाँतक दूसरे प्रश्नकी बात है अपनी प्रामाणिकता सिद्ध करनेके लिए, मान लीजिए, वर्षमें केवल छः ही ऐसे भारतीयोंको प्रवेश दिया गया तो भी हमें पूरा सन्तोष हो जायेगा। इसलिए महत्त्वका मुद्दा तो यह है कि वे सामान्य शैक्षणिक कसौटीके अन्तर्गत प्रवेश पानेमें समर्थ हों। किसी प्रकारका कानूनी भेदभाव नहीं होना चाहिए। यदि कानूनपर अमल इस तरह किया जाये कि

१. दक्षिण आफ्रिकी व्यापार मण्डल संघ (असोसिएशन ऑफ़ चैम्बर ऑफ़ कॉमर्स ऑफ़ साउथ आफ्रिका) के भूतपूर्व अध्यक्ष। दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंके मामलेसे उनकी सहानुभूति थी। देखिए खण्ड ७, पृष्ठ १०८ और ४७३ और खण्ड ८, पृष्ठ २६।

२. ट्रान्सवाल-संसदमें एक राजनीतिक दल।

केवल उक्त संख्यामें ही प्रवेश मिल सके तो भी हमें कोई आपत्ति न होगी। इस प्रकारके अमलके लिए पूर्वोदाहरणका अभाव नहीं है। केप और नेटालमें आजकल ऐसा ही किया जा रहा है। हमारे विचारमें प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम (इमिग्रेशन रिस्ट्रिक्शन ऐक्ट) के अन्तर्गत इस प्रकारका विवेकाधिकार दिया गया है। किन्तु यदि जनरल स्मट्सका खयाल दूसरा हो तो हमें इसमें कोई आपत्ति नहीं है कि कानूनमें इस प्रकारका संशोधन कर दिया जाये जिससे उन्हें अधिकसे-अधिक विवेकाधिकार मिल जाये।

ये दो मुख्य प्रश्न शेष हैं। वास्तवमें ये दोनों प्रश्न एक भी हैं, क्योंकि यदि १९०७का कानून २ रद कर दिया गया तो प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम उपनिवेशमें प्रवेश करनेवाले उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंके मार्गमें बाधक न होगा। हम इस प्रश्नको इसलिए अलग रखते हैं कि हम यह प्रकट करना चाहते हैं कि प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत उपलब्ध सुविधाओंसे अनुचित लाभ उठानेकी हमारी कोई इच्छा नहीं है, बल्कि हमने निहायत नेकनीयतीसे यह घोषणा की है कि हम उपनिवेशमें एशियाइयोंका अनियन्त्रित प्रवास नहीं चाहते। हम केवल इतना ही कहते हैं कि यदि अधिवासी एशियाइयों (रेजिडेंट एशियाटिक्स) के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार करना है और यदि सम्पूर्ण एशियाई राष्ट्रको अपमानित नहीं करना है, तो शिक्षित एशियाइयोंके साथ सामान्य प्रवासी-कानूनके अन्तर्गत व्यवहार किया जाये और उन्हें किसी पंजीयन अधिनियम (रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) के नियन्त्रणमें आनेके लिए विवश न किया जाये।

दूसरे प्रश्न, अर्थात् उन लोगोंको पुनः पंजीयन प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) प्रदान करना जिन्होंने उन्हें जला दिया है तथा श्री सोराबजीको बहाल करना, हमारे मतमें, प्रशासन-सम्बन्धी छोटी बातें हैं, जो मुख्य मुद्देके हल हो जानेपर आसानीसे तय की जा सकती हैं।

हम यह जिक्र कर दें कि जहाँ नया कानून[1], जिसपर हाल ही में सम्राट्की स्वीकृति मिली है, बहुत मुनासिब है, वहाँ उसमें एक या दो खामियाँ भी हैं। उदाहरणार्थ, उन लोगोंको, जो पहलेसे उपनिवेशमें हैं और जो वैध रूपसे उपनिवेशमें प्रविष्ट हुए हैं, अपने दावोंके सम्बन्धमें ३ वर्षके अधिवासका प्रमाणपत्र पेश करनेके लिए नहीं कहा जा सकता, क्योंकि कुछ ऐसे लोगोंको भी पंजीयन-प्रमाणपत्र उपलब्ध हो चुके हैं, जिन्होंने ऐसे सबूत नहीं दिये हैं। यह भी महसूस किया जाता है कि यदि परवानों (लाइसेंस) के प्रार्थनापत्रोंपर अँगूठेका निशान लगानेके सम्बन्धमें अधिकसे-अधिक उदारता नहीं बरती जाती तो उस विशिष्ट खण्डसे अत्यधिक विक्षोभ उत्पन्न होगा।

हम समझते हैं कि जिस समझौतेकी बात चल रही है उसका परिणाम यदि शुभ निकला तो समझौता होनेके साथ-साथ ही वे लोग छोड़ दिये जायेंगे जो इस समय जेलकी सजा काट रहे हैं।

१. एशियाई वैधीकरण पंजीयन कानून, १९०८ (एशियाटिक्स वैलिडेशन रजिस्ट्रेशन ऐक्ट, १९०८)। ट्रान्सवाल संसदमें इस कानूनके विधेयकपर बहसमें भाग लेते हुए श्री हॉस्केनने कहा था कि यद्यपि मेरे खयालसे "विधेयकमें उठाये गये सब मुद्दोंकी व्यवस्था है" और मुझे आशा है कि भारतीय लोग इसे स्वीकार कर लेंगे, फिर भी मेरा मतभेद एक बात — शैक्षणिक कसौटी — पर है। मेरे खयालसे "धर्म-गुरुओं या अन्य योग्य व्यक्तियोंको निवासके अनुमतिपत्र न देना" इस विधेयककी ऐसी संकीर्ण व्याख्या करना है कि मैं इससे सहमत नहीं हो सकता। बादमें जिन सदस्योंने श्री स्मट्सके एशियाई पंजीयन संशोधन विधेयक (एशियाटिक्स रजिस्ट्रेशन एमेंडमेंड बिल) का समर्थन किया उनमें श्री हॉस्केन भी थे।

अन्तमें हम नम्रतापूर्वक कहना चाहते हैं कि सरकारकी अवज्ञा करनेका हमारा कोई इरादा नहीं है, और हम इस देशमें शान्ति एवं सम्मानके साथ उपनिवेशके आम कानूनोंका पालन करते हुए रहना चाहते हैं। हमें बहुत ही अनिच्छासे किन्तु कर्तव्यकी पुकारपर एशियाई कानूनका तीव्रतम विरोध करना पड़ा है। हमें इस वक्त इसके कारणोंकी छानबीन करनेकी आवश्यकता नहीं। किन्तु हम निवेदन करते हैं कि कानूनके प्रति हमारे विरोधको अवज्ञाके अर्थमें न लिया जाये।

हम इतना और कहना चाहते हैं कि उन नेताओंने, जो इस समय फोक्सरस्ट जेलमें हैं और जो दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजके श्रेष्ठ लोगोंका प्रतिनिधित्व करते हैं, सजा होनेके बाद तुरन्त हमें सन्देश भेजा था कि वे अधिकसे-अधिक कष्ट उठानेके लिए तैयार हैं, किन्तु हम उनके कष्टोंकी कोई चिन्ता न करें और संघर्षको तबतक जारी रखें जबतक हमें वह चीज हासिल न हो जाये, जिसके हम अपने-आपको समुचित अधिकारी मानते हैं।

आपकी इच्छानुसार हम इस पत्रको अत्यन्त गोपनीय रखेंगे। आप हमें जो सन्देश भेजेंगे उसे भी ऐसा ही समझेंगे।

आपने जो कृपापूर्ण दिलचस्पी ली है, उसके लिए तथा जनरल स्मट्सने जो आश्वासन आपके द्वारा भेजे हैं उनके लिए आपको पुनः धन्यवाद।

आपके सच्चे,

अ० मु० काछलिया
ईसप इस्माइल मियाँ
इमाम अ० का० बावजीर
लिअंग क्विन
सी० के० टी० नायडू
फू किम्सन
मो० क० गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४८७९) से।

३१. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर २१, १९०८

माननीय उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

मैं आपकी सेवामें इस पत्रके साथ जेल-निदेशक (डायरेक्टर ऑफ प्रिज़न्स)को भेजे गये अपने पत्र[1] और उनके उत्तरकी नकलें भेज रहा हूँ। यदि आप कृपया निदेशकको प्रेषित पत्रमें की गई प्रार्थना स्वीकार कर लेंगे तो मेरा संघ अनुगृहीत होगा।

आपका, आदि,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ३–१०–१९०८

३२. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी[2]

जेलके कष्ट

यह साबित होता जा रहा है कि कष्टोंका प्याला हमें पूराका-पूरा पीना पड़ेगा। श्री सैयद अली वॉक्सवर्गसे सात दिनकी सजा भोगकर आये हैं। वहाँ उन्हें असीम कष्ट था। उनको सख्त कैदकी सजा दी गई थी। उनसे टट्टीकी बाल्टियाँ उठवाई गईं, उन्हें बहुत देर तक ठंडे पानीमें रखा गया, ठोकरें मारी गईं। यह कष्ट कैसे सहा जा सकता है? श्री काछलियाने उनके बारेमें जेल-निदेशकको पत्र[3] लिखा है। समय आनेपर सुनवाई होगी। किन्तु सुनवाई हो अथवा न हो, हम बाल्टियाँ भी उठायेंगे और ठोकरें भी खायेंगे, इसीमें हम अपना गौरव मानेंगे। जब हमें बाल्टियाँ उठाते हुए प्रसन्नता होगी, तभी हमारे बन्धन टूटेंगे, तभी माना जायेगा कि हमने सत्याग्रहको समझ लिया है। सत्याग्रहका अर्थ है, जिसे हम सत्य समझते हैं उसे मरणपर्यन्त न छोड़ना, सत्यके लिए चाहे जितनी तकलीफें उठानी पड़ें, सब उठाना। कष्ट किसीको नहीं पहुँचाना चाहिए, क्योंकि कष्ट पहुँचानेसे सत्यका उल्लंघन होता है। इतना

१. देखिए "पत्र : जेल-निदेशकको", पृष्ठ ४९-५०।
२. गांधीजीने यह खरीता २० सितम्बरको लिखना शुरू किया और २३ सितम्बरको समाप्त किया।
३. देखिए "पत्र : जेल-निदेशकको", पृष्ठ ४९-५०।

सब सहनेकी शक्ति आ जाना ही सच्ची जीत है। यह भेद जान लेनेके बाद, सरकार चाहे जितनी बाधाएँ उपस्थित करे, हम उनका प्रतिकार कर सकते हैं। इसलिए, मैं आशा करता हूँ कि भारतीय श्री सैयद अलीके कष्टोंसे घबरानेके बजाय आवश्यकता पड़नेपर जेल जानेके लिए आतुर रहेंगे।

नेटालके कैदी

अब नेटालके कैदियोंको सड़कोंपर पत्थर तोड़नेके लिए बाहर नहीं ले जाया जाता। इससे मुझे तो निराशा हुई है। यदि उन्हें पत्थर तोड़नेका कष्ट [आगे भी] उठाना पड़ता, तो मुक्ति जल्द मिलती। वे सन्देश भेजते रहते हैं कि उनकी चिन्ता न की जाये। उन्हें चाहे जितनी कैद दी जाये, वे भोगनेके लिए तैयार हैं, और उससे प्रसन्न होंगे। हमें उनका खयाल करके उतावलीमें कोई समझौता नहीं करना चाहिए। उनके लिए यही कहना उचित है; लेकिन हमारे लिए उचित यह है कि हम उन्हें जरूरतसे ज्यादा एक मिनट भी जेलमें न रहने दें, और उन्हें जल्दी मुक्त करानेके लिए, जैसे बने वैसे, दूसरे लोग अविलम्ब जेल जायें।

अक्तूबरमें सच्चा अवसर

जो लोग अपने बहादुर नेताओंकी मुक्ति चाहते हैं, उनका कर्तव्य सीधा-साधा है। अक्तूबरमें बहुत-से भारतीयोंके पानीकी परीक्षा हो जायेगी। सितम्बरके अन्ततक अनेक फेरीवालोंके परवानों (लाइसेंस)की अवधि समाप्त होगी। फिर वे क्या करेंगे? उनका कर्तव्य है कि यदि अँगूठेके निशान दिये बिना, माँगने-भरसे ही परवाने मिल जायें, तो भी वे तबतक परवाने न लें जबतक हमारी माँगें पूरी नहीं की जातीं, और बिना परवानोंके बेधड़क फेरी लगायें। यदि ऐसा किया जायेगा तो यह सरकारको सहन न होगा। निदान, उसे फेरीवालोंको जेल भेजना ही पड़ेगा। यदि फेरीवालोंने इतनी हिम्मत दिखाई तो मुक्ति शीघ्र ही मिलेगी; बल्कि मैं तो दावेके साथ कहता हूँ कि अक्तूबरके मध्यतक हम निश्चिन्त होकर बैठनेकी स्थितिमें पहुँच जायेंगे, और जो लोग हमारे लिए जेल गये हैं उन्हें रिहा करा सकेंगे।

फेरीवालोंका संघर्ष

यह संघर्ष वास्तवमें व्यापारियोंके लिए है, और व्यापारियोंमें भी फेरीवालोंके लिए। फेरीवालोंकी मार्फत जीत भी जल्द हो सकती है। हम इस देशमें इस तरहका संघर्ष करके यह सिद्ध कर दे सकते हैं कि फेरी लगानेमें अप्रतिष्ठाकी कोई बात नहीं है, उसमें गरीबी भले ही हो। लेकिन यह सोचकर कि गरीबीमें गौरव है, उन्हें अपना सिर ऊँचा रखना चाहिए, शिक्षा भी प्राप्त करनी चाहिए, अपना रहन-सहन ऊँचा रखना चाहिए, और आपसमें कलह नहीं करना चाहिए। मैं चाहता हूँ, वे सच्चे अर्थमें शिक्षित बनें। यह उनके हाथमें है। दक्षिण आफ्रिकामें उन्हें अभी बहुत-कुछ करना शेष है। मैं उन्हें तथा भारतीय समाजको समझाना चाहता हूँ कि इस संघर्षसे वे राजघरानोंकी-सी प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकते हैं।

धरनेदारोंकी आवश्यकता

फेरीवालोंने जनवरीमें वीरता दिखाई थी। इस समय भी उन्होंने वीरता दिखाई है। फिर भी हम अभी कायर हैं। हमपर नजर रखनेकी जरूरत है। इसमें अचरजकी कोई बात नहीं है। अतः, हरएक गाँवमें धरनेदार नियुक्त किये जाने चाहिए। उन्हें परवाना दफ्तर

(लाइसेंसिंग ऑफिस) की चौकसी करनी है और यह देखना है कि कोई भी व्यक्ति परवाना (लाइसेंस) लेने न जाये। इसे सम्भव करनेके विचारसे हर जगह कौमी नेताओंको चौकसीके काममें जुट जाना चाहिए। यदि इतना हो जाये तो शायद ही कोई परवाना लेने जायेगा।

धरनेदारोंका कर्तव्य

धरनेदारोंको यह स्मरण रखना चाहिए कि उन्हें न किसीपर जबरदस्ती करनी है, और न किसीको धमकी देनी है। उन्हें अपनी लाठियाँ घरमें ही छोड़कर आना है। हमारी शक्ति तो हमारी जिह्वामें है। जिह्वाका उपयोग भी उचित हो। गाली-गलौज नहीं करना है। समझा-बुझाकर नम्रताके साथ प्रत्येक भारतीयको उसका कर्तव्य बताया जाये। क्रूगर्सडॉर्पका मामला[1] याद रखें। हमें अपना व्यवहार ऐसा रखना चाहिए कि कोई हमपर जोर-जबरदस्ती करनेका झूठा आरोप भी न लगा सके।

जिनके पास पूरे वर्षके परवाने हैं वे अपने परवानोंका उपयोग न करें, बल्कि उन्हें संघको सौंप दें।

जो जेलकी जोखिम नहीं उठा सकते, उनके लिए तो अधिक अच्छा यही है कि वे कुछ दिन फेरी न लगायें। किन्तु परवाना लेने जाना तो बुरी बात है।

फिर मद्रासी

श्री चोकलिंगम बिना परवाना व्यापार करनेके जुर्ममें गिरफ्तार कर लिये गये थे। वे शनिवारको सात दिनकी कैदकी सजा भोगने जेल गये। उन्होंने जुर्माना देनेसे इनकार कर दिया था। श्री गॉडफ्रे उनकी पैरवी करने गये थे।

श्री ईसपजी कानमियापर नया पंजीयन-प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) न लेनेका आरोप था। उन्हें [उपनिवेश छोड़कर चले जानेके लिए] सात दिनका नोटिस मिला। उनका मुकदमा शनिवारको पेश हुआ। उसमें श्री गॉडफ्रे भी मौजूद थे।

कैदियोंकी खुराक

कैदियोंकी खुराकके बारेमें लिखा-पढ़ी अभी चल ही रही है। अभी पूपू [मकईके दलिये] की शिकायत भी दूर नहीं हो पाई है। इसी बीच जेल-निदेशक (डायरेक्टर ऑफ़ प्रिजन्स) लिखता है कि जनवरी महीनेमें भारतीय कैदियोंको जो घी दिया जाता था, वह एक खास रियायत थी। धारामें घीकी इजाजत नहीं है। जोहानिसबर्ग [जेल] में अब भी घी दिया जाता है, किन्तु फोक्सरस्टमें नहीं दिया जाता। इसीलिए यह सवाल उठा। श्री काछलियाने इस विषयमें एक कड़ा पत्र[2] लिखा है, और इंग्लैंडको तार भी भेजे गय हैं। देखें, क्या होता है। खुराक अच्छी मिलती है अथवा नहीं, इससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है। हममें एसा संकल्प होना चाहिए कि यदि सरकार यह जुल्म भी ढायेगी तो हम इसे भी बरदाश्त करेंगे।

ईसा हाजी सुमार

स्टैंडर्टनके पुराने व्यापारी श्री ईसा हाजी सुमार विलायत-भ्रमण करके वापस आ गये हैं। मुझे आशा है कि वे संघर्षमें पूरा भाग लेकर मदद पहुँचायेंगे।

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ १३-१४।
२. देखिए "पत्र: जेल-निदेशकको", पृष्ठ ५३।

नया विधेयक

नये विधेयकपर[1] सम्राट्के हस्ताक्षर हो गये हैं। यह कानून लाभदायक है। परन्तु, जबतक दो सवालोंका[2] फैसला नहीं हो जाता तबतक, जिस प्रकार हमने काले कानूनके अपमान नहीं सहे, उसी प्रकार हम नये कानूनका लाभ भी नहीं उठायेंगे। [इसके अतिरिक्त] जिन्हें हमने जेल भेजा है, वे जबतक छूट नहीं जाते, तबतक हमें नये कानूनका लाभ अवश्य ही नहीं उठाना है।

शाही मेहमान

जोहानिसबर्गके श्री मगन जीवन, श्री गुरुनायन, श्री चेटी पराग — ये तीन भारतीय सात दिनोंकी कैदकी सजा भोगनेके लिए आज जेल गये। वे परवानों (लाइसेंस) के बिना व्यापार कर रहे थे। इन सबकी पैरवी श्री जॉर्ज गॉडफ्रेने की। रूडीपूर्टसे समितिने तार दिया है कि श्री डाह्या रघाको भी बिना परवाना फेरी लगानेके जुर्ममें सात दिनकी सजा दी गई है।

दुःखकी बात

मुझे दुःखके साथ सूचित करना पड़ रहा है कि सरकारने श्री मूलजीभाई पटेल तथा श्री हरिलाल गांधीपर से मुकदमा[3] उठा लिया है। इन दोनों तरुणोंका दुर्भाग्य है कि ये नेटालके बहादुर जेलियोंकी सेवामें उपस्थित नहीं हो सके।

विशेष दुःखकी बात

मुझे समाचार मिला है कि श्री हसन मियाँने[4] डर्बनसे जाते समय फोक्सरस्टमें अपने अँगूठेकी निशानी लगाई।

आदम मुहम्मद गुल

[केपकी] ब्रिटिश भारतीय लीगके अध्यक्ष श्री आदम मुहम्मद गुल यहाँ आये हैं। उन्होंने अपना प्रमाणपत्र जलानेके लिए संघको सौंप दिया है। फोक्सरस्ट पहुँचनेपर पुलिसने उनसे अँगूठेका निशान नहीं माँगा, और यदि माँगा भी होता, तो वे देते नहीं।

बेलिम

श्री बेलिम क्रिश्चियानामें एक महीनेकी सख्त कैदकी सजा भोगनेके बाद १९ तारीखको छूट गये। उन्हें बधाईके तार मिले हैं। पाठकोंको याद होगा कि श्री बेलिमके साझेदारको भी एक महीनेकी सजा हुई थी, इसलिए उन्होंने दूकान [का स्वामित्व] एक गोरेके नाम करके उसे चलाया, किन्तु बन्द नहीं किया।

१. एशियाई पंजीयन संशोधन विधेयक (एशियाटिक्स रजिस्ट्रेशन अमेंडमेंट बिल)।

२. (क) एशियाई पंजीयन कानूनको, जो १९०७ के कानून २ के नामसे विदित है, रद न करना और (ख) सभी प्रजातियोंपर लागू किसी एक सामान्य कानूनके अन्तर्गत "उच्च शिक्षा-प्राप्त एशियाइयों" के निरन्तर प्रवेश और प्रवासकी व्यवस्था करना।

३. देखिए "भेंट: 'स्टार' को", पृष्ठ ५२; और खण्ड ८, पृष्ठ ४०१-०२ और ४२९-३० भी।

४. ईसप मियाँके पुत्र।

एक करुण पत्र

"कानूनके कष्टोंसे पीड़ित एक गरीब भारतीय" नामसे एक भारतीय लिखता है:

> अब यदि किसी तरह इस कानूनसम्बन्धी समस्याका हल निकल आये तो हम जैसे-तैसे भारत पहुँच जायें, अन्यथा मृतप्राय ही हैं। वर्तमान स्थितिमें अधिक कष्ट मध्यमवर्गीयोंको है। बड़े-बड़े व्यापारियोंको, जो पूंजीवाले हैं, उधार मिलना अभी बन्द नहीं हुआ है, किन्तु [मध्यमवर्गके व्यापारियोंको] जो गोरे पहले दो-चार सौका माल मँगा देते थे, वे अब पाँच शिलिंगका माल देनेसे भी इनकार कर देते हैं। वे कहते हैं कि जबतक कानूनके सम्बन्धमें समझौता नहीं हो जाता तबतक वे हमारे साथ व्यापार बन्द रखेंगे। ऐसी हालतमें यदि हम गरीबोंके हितके खयालसे किसी प्रकारका समझौता हो जाये, तो हमें जीवित रहनेका अवसर मिले। कृपया कुछ ऐसा उपाय करें जिससे हमें और अधिक कष्ट सहन न करने पड़ें।

इस पत्र-प्रेषकसे सहानुभूति हुए बिना नहीं रह सकती। फिर भी हमें कहना चाहिए कि ऐसा लिखना भूल है। यह मानना बिलकुल गलत है कि पूँजीदारोंकी कोई हानि नहीं है। बड़ोंकी बड़ी हानि हुई है और छोटोंकी छोटी। इसी प्रकार [इस संघर्षके] हर भारतीय सैनिकको हानि उठानी पड़ी है। यदि गोरे माल नहीं देते, तो [लोग उनके पास न जायें;] उनके कोई सुर्खाबके पर तो लगे नहीं हैं। हमें गोरोंके द्वारा खड़े किये गये अड़ंगोंके मुकाबलेके लिए तैयार रहना ही चाहिए। देशके लिए पैसेका नुकसान उठानेमें दुःख नहीं मानना चाहिए। किन्तु इतना कहनेके बाद मैं स्वीकार करता हूँ कि ऊपरके पत्रमें जो विचार व्यक्त किया गया है, वह बहुत-से भारतीयोंका विचार है। संघर्ष इसी बातको ध्यानमें रखकर चलाया जा रहा है। समाज जितना बोझ उठा सकता है, नेता उसपर उतना ही बोझ डालनेकी तजवीज करते हैं। ऐसा सोचकर किसी भी भारतीयको हिम्मत नहीं हारनी चाहिए।

क्रूगर्सडॉर्प

क्रूगर्सडॉर्पके फेरीवालोंके विषयमें समाचारपत्रोंमें यह खबर प्रकाशित हुई है कि वे फेरी लगानेके लिए नहीं निकलते। इसपर श्री खुरशेदजी देसाई सूचित करते हैं कि यह खबर बिलकुल झूठी है। वहाँके भारतीय फेरीवाले बिना परवाना (लाइसेंस) अपना व्यापार कर रहे हैं।

नये कानूनके विषयमें

आजसे नया कानून लागू हो गया है। अब उसके अनुसार पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) करानेके बारेमें नोटिस निकाला जायेगा। कहा जाता है कि नोटिसमें ३० नवम्बर तक की मीयाद दी जायेगी। तबतक ट्रान्सवालमें रहनेवाले भारतीयोंको अनुमतिपत्र (परमिट) ले लेने चाहिए। इस विषयमें [ध्यान देने योग्य बात यह है कि] जो लोग अभी उपनिवेशसे बाहर हैं और जिनके पास पीला अनुमतिपत्र नहीं है, उन्हें एक वर्षके भीतर प्रार्थनापत्र देना है। परन्तु, स्मरणीय है कि इन दोनों तरहके लोगोंको फिलहाल कुछ नहीं करना है। उतावलीकी जरूरत नहीं है। जबतक समझौता नहीं हो जाता, तबतक इस कानूनका लाभ लेना बिल्कुल मुनासिब नहीं है। इसके लिए अभीसे अनुमतिपत्र कार्यालयपर धरना देनेकी जरूरत होगी। यदि ऐसा किया जाये और परवाने न लिये जायें, तो समाधान तुरन्त हो जायेगा।

उलझन

'ट्रान्सवाल लीडर' में प्रकाशित हुआ है कि यदि प्रतिवर्ष केवल ६ शिक्षित भारतीय आ सकें, तो भारतीय तुष्ट हो जायेंगे।[1] इसपर बहुत पूछताछ की जा रही है। कोई कहता है कि संघर्ष [प्रतिवर्ष] केवल छः भारतीयोंके प्रवेशके लिए किया जा रहा है; कोई कहता है कि यह तो बिलकुल नई बात है। किन्तु यह गलतफहमी है। हमारी माँग यह है कि कमसे-कम कानूनमें तो सभी शिक्षित लोगोंको एक-सा हक हासिल होना चाहिए। हम कह चुके हैं कि [सब प्रवासियोंके लिए] कानून एक ही हो, भले ही [अधिकारियोंकी इच्छानुसार] परीक्षा इतनी कठिन ली जाये कि एक भी भारतीय न आ सके। कहनेका अर्थ यह हुआ कि कानूनके मुताबिक शिक्षितोंकी जो परीक्षा ली जायेगी, उसमें यदि वे उत्तीर्ण हो जायेंगे तो प्रविष्ट हो सकेंगे। फिर गोरोंकी सरल परीक्षा लें अथवा एकदम लें ही नहीं और भारतीयोंकी कठिन परीक्षा लें — उसका विरोध नहीं किया जा सकता। यदि ऐसा हो तो हमें कोई आपत्ति नहीं होगी। तब सवाल उठता है कि इसमें फायदा क्या है? इसके उत्तरमें हम कह सकते हैं कि यदि एक सीमित संख्यामें भारतीयोंके प्रवेशकी अनुमति हो, तो भी कानूनमें प्रतिबन्धका कलंक हमारे लिए शोभनीय नहीं है। किन्तु, यदि हमने इसी ढंगसे सोचा तब तो सम्भव है, एक भी भारतीय न आ पाये, इसके बदले छःका आना तो निश्चित हो ही जाता है। हमारा संघर्ष कानूनके अनुसार दरवाजा बन्द किया जानेके विरुद्ध है। यदि दरवाजा कानूनके अनुसार बन्द हो गया तब तो उसे खोलना मुश्किल होगा। किन्तु, यदि अधिकारी [एशियाइयोंको] मात्र परीक्षामें अनुत्तीर्ण करके दरवाजा बन्द रखें तो उसका उपाय किया जा सकता है। नेटाल और केपमें कानून ऐसा ही है। वहाँ गोरोंकी परीक्षा नहीं ली जाती, किन्तु भारतीयोंकी परीक्षा प्रतिवर्ष कठिन होती जाती है। आस्ट्रेलियामें ऐसा कानून अब भी है, फिर भी वहाँ सैकड़ों गोरे प्रविष्ट होते हैं। किन्तु भारतीयोंकी परीक्षा इतनी कठिन ली जाती है कि वहाँ अबतक एक भी भारतीय प्रवेश नहीं पा सका है। किन्तु जब आस्ट्रेलियाके लोगोंका भ्रम मिट जायेगा अथवा अधिकारी अच्छे होंगे तब वे भारतीयोंको उचित परीक्षा लेकर प्रविष्ट होने देंगे। इसलिए जो छः भारतीयोंके प्रवेशकी बात कही गई है, वह उपनिवेशके लोगोंको संतोष देने और भारतीय समाजके रुखका औचित्य बतानेके लिए कही गई है। कानून एक, पर उसका प्रशासन अलग-अलग — यह हुआ उपर्युक्त माँगका अर्थ। इस प्रकार इस माँगमें और जो माँग सार्वजनिक सभामें की गई थी तथा जिसे श्री स्मट्सने अल्टिमेटम[2] [अन्तिम चेतावनी] कहा था, उसमें कोई अन्तर नहीं है।

१. सितम्बर १२ के **ट्रान्सवाल वीकली इलस्ट्रेटेड**में प्रकाशित हुआ था कि ". . . श्री गांधीने कहा है, यदि सरकार प्रतिवर्ष छः शिक्षित भारतीयोंको — अधिकको नहीं — प्रवेश करनेकी अनुमति दे देगी तो, जहाँतक मामलेके इस हिस्सेका सम्बन्ध है, स्वयं वे और उनका समाज सन्तोष करनेके लिए वचनबद्ध हो जायेंगे। . . . यदि प्रतिवर्ष पूरे छःके-छः व्यक्ति भी आ जायें, तो भी उस भयानक आक्रमणसे ट्रान्सवाल बर्बाद हो जायेगा, इसमें हमें सन्देह है। एशियाई लोगोंके प्रवासके सम्बन्धमें हदबन्दीके इस सिद्धान्तको साम्राज्यके प्रायः सभी सदस्य मानते हैं।" देखिए "पत्र: हॉस्केनको", पृष्ठ ५९-६१ भी।

२. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४५६-५९।

चीनियोंकी ओरसे मदद

श्री क्विनने चीनी संघकी ओरसे लन्दनकी [द० आ० ब्रि० भा०] समितिको[1] भेजनेके लिए ५० पौंड दिये हैं। पाठकोंको याद होगा कि पहले भी चीनी-संघकी ओरसे इतनी ही रकम श्री रिचको भेंट की गई थी। श्री अस्वातकी ओरसे जो मामला[2] सर्वोच्च न्यायालयमें चलाया गया था, उसके खर्चमें भी चीनी-संघने सहायता दी थी।

कांग्रेसकी ओरसे मदद

[भारतीय राष्ट्रीय] कांग्रेसका तार आया है कि उसने लन्दनकी [द० आ० ब्रि० भा०] समितिको तारसे १०० पौंड भेजे हैं। यह पहले ही हो जाना था। अब भी ठीक समयपर ही हुआ है।

बुधवार [सितम्बर २३, १९०८]

फोक्सरस्टके कैदी

हरिलाल गांधी फोक्सरस्ट जेलसे छूटकर आ गये हैं। वे [जेलमें] नेटालवासियोंके साथ तीन रात रहे। वे खबर लाये हैं कि कैदियोंका स्वास्थ्य अच्छा है। उन्हें जो भी काम सौंपा जाता है, उसे वे बड़ी खुशीसे करते हैं। अब वे [सड़कपर पत्थर तोड़नेके लिए] बाहर नहीं भेजे जाते; बल्कि उन्हें जेलके भीतर ही बगीचा आदि साफ करनेका काम दिया जाता है। वे "विक्रम जैसो पर-दुःखभंजन रुस्तम एक भयो है",[3] यह गीत गाते हुए मस्त रहते हैं।

नये कानूनके अन्तर्गत विनियम

नये कानूनके अन्तर्गत विनियम (रेगुलेशन्स) प्रकाशित किये जा चुके हैं। इनका विवेचन अगले हफ्ते किया जायेगा। फिलहाल तो इतना ही कहता हूँ कि पहले विनियमोंके मुकाबले ये विनियम बहुत अच्छे हैं। फिर भी उनमें कुछ खामियाँ हैं। इनका निराकरण जब समझौता होगा, तभी किया जा सकेगा। किन्तु मैं आशा करता हूँ कि प्रत्येक भारतीय धीरज रखेगा। किसीको भी उतावलीमें अर्जी देनेकी जरूरत नहीं है।

तमिलोंका काम

मद्रासियोंका काम अत्यन्त अच्छा है। इतना ही नहीं कि वे जेल जाते रहते हैं, बल्कि वे पैसे इकट्ठे करनेमें भी नहीं चूकते। उन्होंने संघको ८२ पौंड १ शिलिंगका चेक दिया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि जो जेल जाते हैं, वे उदारतासे पैसे भी देते हैं। जो एक दिशामें शक्ति लगाते हैं, वे सभी दिशाओंमें शक्ति लगा सकते हैं।

ईसप इस्माइल बेलिम[4]

श्री बेलिम क्रिश्चियानासे लिखते हैं कि जेलमें पहले हफ्ते उन्हें भोजन बनानेका काम दिया गया, दूसरे हफ्ते फुटकर काम दिया गया और अन्तिम हफ्तेमें बाहर सड़कपर काममें

१. दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति (साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी)।
२. स्वेच्छया पंजीयन (वॉलंटरी रजिस्ट्रेशन) के कागजात लौटानेके सम्बन्धमें।
३. मूल गुजराती इस प्रकार है:
"विक्रम जेवो पर-दुःखभंजन रुस्तम एक थनारो"।
यहाँ "रुस्तम" शब्द स्पष्टतः पारसी रुस्तमजीके लिए प्रयुक्त हुआ है।
४. वे सितम्बर १९को छोड़ दिये गये थे। देखिए पृष्ठ ६५।

लगाया गया। भोजन दूसरी जगहों-जैसा ही था। तकलीफ उन्हें सिर्फ इस बातसे हुई कि खाना खाते समय टोपी उतरवा ली जाती थी। वे लिखते हैं कि मैंने स्वदेशके लिए कष्ट उठाकर मात्र अपना कर्तव्य ही निभाया है; यदि फिर कष्ट उठाना पड़ेगा, तो उसके लिए भी तैयार हूँ।

समझौता?

समझौतेकी बात भी श्री हॉस्केनने चलाई थी। उनके साथ श्री स्मट्सकी बातचीत हुई। इसके बाद उन्होंने काछलिया, श्री इमाम अब्दुल कादिर बावजीर, श्री क्विन, श्री फिन्सन, श्री नायडू और श्री गांधीको [विचारार्थ] बुलाया। उन्होंने श्री कार्टराइट तथा श्री डेविड पोलकको भी बुलाया। अन्तमें इन सबने श्री हॉस्केनके नाम एक पत्र[1] लिखकर सार्वजनिक सभामें की गई मूल मांगोंको फिर दुहराया। श्री हॉस्केनने यह पत्र श्री स्मट्सको भेज दिया। आज श्री स्मट्सका जवाब आया है। उसमें वे लिखते हैं कि मांगें तो पहले-जैसी ही हैं और इसलिए स्वीकृत नहीं की जा सकतीं। इसमें निराश होनेकी कोई बात नहीं है। जनरल स्मट्सको ठोंक-बजाकर यह देख लेनेका अधिकार है कि हम नये कानूनको मानते हैं या नहीं। समझौता तभी होगा जब हम इस परीक्षामें उत्तीर्ण होंगे और भगवा पहनकर फकीर बननेके लिए तैयार हो जायेंगे।

विलायतके समाचारपत्र

विलायतके समाचारपत्र हमें सलाह दिया करते हैं कि अब हमें चुप बैठ जाना चाहिए, आपत्ति नहीं करनी चाहिए और कानूनको स्वीकार कर लेना चाहिए। यह सीख तो बड़ी समझदारीकी है, किन्तु मान्य करने योग्य नहीं है। इसको मान्य करनेकी आवश्यकता भी नहीं है। इस तरहकी बातें पहले भी कही जा चुकी हैं। हमारा कर्तव्य एक ही है: हमारी मांग उचित है, इसलिए जबतक वह स्वीकार नहीं की जाती तबतक हमें जूझते रहना है, नये कानूनका लाभ नहीं उठाना है, और जेलोंको भर देना है।

वली मुहम्मद

श्री वली मुहम्मद प्रिटोरियाकी जेलमें पाँच दिन गुजारकर धूम-धामसे बाहर आ गये हैं। उन्होंने बताया है कि जेलमें पूपू [मकईका दलिया] दिया गया, किन्तु उसे चर्बी मिला हुआ होनेके भयसे किसीने नहीं खाया। सारे कैदियोंको एक कतारमें खड़ा कर दिया गया। श्री इस्माइल जुमा उसमें शामिल न हुए, इसलिए उन्हें ठोकरें मारी गईं। जब गवर्नरके सामने यह शिकायत करनेका वक्त आया तब मुख्य वार्डरने शिकायत नहीं करने दी। अस्पतालमें जमीन धोने, कचरेकी बाल्टियाँ उठाने और कपड़ा धोनेका काम कराया जाता था। ऐसे कष्ट होनेपर भी प्रत्येक भारतीयको जेल जानेके लिए तत्पर रहना है। प्रिटोरियाके भारतीय कैदियोंने देशके लिए जेल जाकर दुःख उठाये, इसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-९-१९०८

1. देखिए "पत्र: डब्ल्यू० हॉस्केनको", पृष्ठ ५९-६१।

३३. पत्र : जेल-निदेशकको[1]

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर २४, १९०८

जेल-निदेशक
प्रिटोरिया

महोदय,

मेरे इसी २१ तारीखके पत्रके उत्तरमें आपका २३ तारीखका पत्र, संख्या १०७७/०८/८३५, मिला। उसकी प्राप्ति सादर स्वीकार करता हूँ। शिकायतके सम्बन्धमें आपने जो जाँच की है उसके लिए धन्यवाद स्वीकार करें।

अब मैं शिकायत करनेवाले व्यक्तिका हलफिया बयान[2] पत्रके साथ भेज रहा हूँ। जैसा कि आप देखेंगे, वह अपने बयानपर कायम है। उसके लिए गवाह पेश करना निस्सन्देह अत्यन्त कठिन है; किन्तु वह जबसे रिहा किया गया है तबसे निमोनियासे पीड़ित है। इससे प्रकट होता है कि उसको यह बीमारी अवश्य ही जेलमें हुई होगी। मेरा और कई ब्रिटिश भारतीयोंका भी, जो अभी हाल ही कैद भुगतकर आये हैं, यह अनुभव है कि गवर्नरसे शिकायत करना आसान बात नहीं है, क्योंकि एक तो कैदी बहुत भयभीत रहते हैं, और दूसरे, उनको अंग्रेजी या तो आती नहीं, या काफी नहीं आती। शिकायत करनेवाले व्यक्तिका कहना है कि यदि कोई सरकारी या सार्वजनिक जाँच की जाये तो वह उसमें पेश होने और गवाही देनेके लिए बिल्कुल तैयार है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-१०-१९०८

१. जेल-निदेशक (डायरेक्टर ऑफ प्रिजन्स) के नाम लिखा यह पत्र **इंडियन ओपिनियन**के ३-१०-१९०८ के अंकमें "दुःखजनक आरोप : जाँचकी आवश्यकता" शीर्षकसे प्रकाशित किया गया था।

२. सैयद अलीका हलफनामा, जो यहाँ नहीं दिया जा रहा है; देखिए "पत्र : जेल-निदेशकको", पृष्ठ ५७-५९।

३४. पत्र : जेल-निदेशकको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर २५, १९०८

जेल-निदेशक
प्रिटोरिया

महोदय,

ट्रान्सवालकी जेलोंमें भारतीय कैदियोंके लिए जो भोजन-तालिका लागू है, उससे सम्बन्धित प्रश्नके बारेमें आपका इसी २४ तारीखका पत्र मिला।

यह बात मुझे प्रथम बार मालूम हुई कि सारे ट्रान्सवालमें बजाय एक भोजन-तालिका होनेके, जैसा कि मेरे संघका अनुमान था, अनेक भोजन-तालिकाएँ लागू हैं, जो विभिन्न जेलोंमें एक-दूसरीसे भिन्न हैं। मेरे संघको लगता है कि भेदभावके इस सिद्धान्तसे उन लोगोंपर बड़े कष्ट आते हैं जिनके विरुद्ध भेदभाव किया जाता है और यदि आप मेरे संघको यह बतायेंगे तो प्रसन्नता होगी कि क्या सारे ट्रान्सवालमें भारतीय कैदियोंके लिए एक नियत भोजन-तालिका निश्चित करनेका सरकारका इरादा है। और यह प्रश्न खुराककी स्वल्पताके प्रश्नसे, जिसका उदाहरण जोहानिसबर्गमें मिलता है, और जिसकी ओर मेरा संघ बार-बार ध्यान आकर्षित कर चुका है, बिलकुल अलग है।

इस कथनके विरुद्ध कि घीका दिया जाना एक कृपाका कार्य है और खुराक-सम्बन्धी नियमका विषय नहीं, मैं फिर आपत्ति प्रकट करता हूँ, क्योंकि मैं इस तथ्यको जानता हूँ कि गत जनवरीमें जोहानिसबर्गकी जेलमें छपी हुई भोजन-तालिकामें घी सम्मिलित था। भारतीय कैदियोंके सम्बन्धमें, जहाँ नियमोंमें चर्बी देनेकी व्यवस्था है वहाँ चर्बी खानेमें भारतीयोंकी धार्मिक आपत्तिको देखते हुए, क्या अधिकारियोंका इरादा चर्बीके बजाय अन्ततः घी देनेका है, यह सूचित करें तो मेरे संघको प्रसन्नता होगी।

आपके जिस पत्रका उत्तर दे रहा हूँ उससे इन सन्देहोंकी पुष्टि होती है कि सरकार भारतीयोंको एक ऐसा भोजन, जिसके वे जीवनमें बिलकुल अभ्यस्त नहीं रहे, स्वीकार करनेके लिए बाध्य करके उन्हें भूखों मारकर उनसे आत्मसमर्पण कराना चाहती है। मेरे संघको यह देखकर दुःख होता है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–१०–१९०८

३५. नेटाल कैसे सहायता कर सकता है

ट्रान्सवालकी लड़ाईमें नेटालने गत वर्ष भारी सहायता की थी।[१] इस बार तो हद कर दी है। नेटालके प्रमुख और शिक्षित भारतीय जेलमें जा बैठे हैं।

किन्तु ऐसा होनेसे नेटालका इस आन्दोलनसे गहरा सम्बन्ध हो गया है। अब इसपर भी ट्रान्सवालके समान ही बोझा आ पड़ा है। नेटालके बन्दियोंको[२] शीघ्रतासे बन्धन-मुक्त करवाना जितना ट्रान्सवालका कर्तव्य है, उतना ही नेटालका भी हो गया है। ट्रान्सवालका जो कर्तव्य है, वह हमारी जोहानिसबर्गकी चिट्ठीमें[३] बताया गया है। इसलिए अब नेटालका विचार करें।

नेटालका एक कर्तव्य तो यह है कि वह लन्दनकी [द० आ० ब्रि० भा०] समितिका[४] खर्च चलानेके लिए नियमित रूपसे पैसे भेजता रहे। इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए शीघ्रतासे चन्दा इकट्ठा किया जाना चाहिए। यह सन्तोषकी बात है कि यह कार्य आरम्भ कर दिया गया है।[५]

दूसरा कर्तव्य यह है कि दूसरे नेता, जो ट्रान्सवालके अधिवासी रह चुके हैं, और बैरिस्टर, डॉक्टर आदि उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीय ट्रान्सवालमें प्रवेश करें और श्री दाउद मुहम्मदका साथ दें। फिर, जिनके पास ३ पौंडी पंजीयन प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) या अनुमतिपत्र (परमिट) हैं उनको ट्रान्सवाल भेजा जाये। इनमें से कोई भी सीमापर अपने अँगूठेकी छाप न दें और इस प्रकार वे [भारतीयोंके] उचित अधिकारोंकी प्राप्तिके लिए जेलोंको भर दें। यदि इस उपायका अवलम्बन किया जाये तो कुछ ही दिनोंमें संघर्षका अन्त हो जायेगा, और बहुत-से भारतीय अपने समाजमें आई हुई नई शक्तिकी परीक्षा कर सकेंगे।

ऐसा करनेसे निस्सन्देह नेटालका बहुत लाभ होगा। उसे अभी बहुत मोर्चे लेने हैं। उसे व्यापारिक कानूनको रद कराना है, गिरमिटियोंके दुःखोंका अन्त कराना है और अत्याचारपूर्ण ३ पौंडी करको समाप्त कराना है। यदि इस सब कार्यमें बहुत-से नेता अपनी नई शक्तिकी आजमाइश करेंगे तो वह भविष्यमें बहुत काम आयेगी। जब गोरे यह देख लेंगे कि हममें ऐसी शक्ति आ गई है तो वे हमसे छेड़खानी करनेसे पूर्व सोचेंगे अवश्य।

नेटालके बन्दरगाहमें जल्दी ही बम्बईसे एक जहाज आयेगा। उसमें बहुत-से भारतीय ट्रान्सवालके हैं। उन्हें समझाना, सारी स्थितिसे वाकिफ कराना, और ऐसा इन्तजाम करना कि वे ट्रान्सवालमें प्रवेश करते समय अँगूठेकी निशानी कतई न दें — यह सब नेटालके भारतीयोंका

१. देखिए खण्ड ७, पृष्ठ १४४ और २११-१२।

२. दाउद मुहम्मद, पारसी रुस्तमजी और आंगलिया।

३. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ६२-६४।

४. दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति (साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी)।

५. नेटाल भारतीय कांग्रेसने समितिको १०० पौंड भेजे थे; देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ १५।

कर्तव्य है। इस कामके लिए तुरन्त स्वयंसेवक नियुक्त कर दिये जाने चाहिए। हम इन सुझावोंको ओर प्रत्येक भारतीयका ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–९–१९०८

३६. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर २८, १९०८

माननीय उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

आपका ता० २४ का पत्र संख्या ९/ई/४४६७ मिला, जिसमें आपने मेरे संघको सूचित किया है कि आप ट्रान्सवालकी जेलोंकी भोजन-तालिकासे सम्बन्धित नियमोंके प्रशासनमें अधिकारियोंके काममें हस्तक्षेप करनेमें असमर्थ हैं।

मेरे संघके २१ तारीखके पत्रके[1] बाद मुझे जेल-निदेशक (डायरेक्टर ऑफ प्रिज़न्स) का एक और पत्र मिला है, जिसमें मेरे संघको सूचित किया गया है कि "अनेक भोजन-तालिकाएँ लागू हैं जो विभिन्न जेलोंमें भिन्न-भिन्न हैं।" मैं बहुत कृतज्ञ होऊँगा, यदि आप कृपापूर्वक मेरे संघको सूचित करेंगे कि आपके उस पत्रमें, जिसका यह उत्तर है, उल्लिखित वह विशिष्ट भोजन-तालिका कौन-सी है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–१०–१९०८

१. देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ ६२।

३७. पत्र : जेल-निदेशकको[1]

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर ३०, १९०८

जेल-निर्देशक
प्रिटोरिया

महोदय,

श्री वासन रणछोड़ने मुझे सूचित किया है कि वे अभी-अभी जर्मिस्टन जेलसे छूटे हैं। वहाँ उन्होंने ३ दिनकी सख्त कैदकी सजा काटी। वे मेरे संघको सूचित करते हैं कि उस अवधिमें उन्हें जो भोजन दिया गया, उसमें नाश्तेके समय मकईका दलिया, दोपहरके भोजनमें चर्बीमें पकाई हुई या चर्बी मिलाई हुई मकई, और शामके भोजनमें मकईका दलिया होता था। इस भोजनका कोई विकल्प नहीं था।

यदि ये आरोप सही पाये जायें तो मेरे संघको आपसे तत्काल यह आश्वासन पाकर हर्ष होगा कि जहाँ-कहीं चर्बीका उपयोग किया जाता है वहाँ उसकी जगह घी का उपयोग किया जायेगा। मुझे आपको यह स्मरण दिलानेकी आवश्यकता नहीं है कि कट्टर मुसलमान या हिन्दूके लिए चर्बीके साथ पकाया हुआ भोजन धार्मिक दृष्टिसे अपवित्र है। मुसलमान किसी ऐसे पशुकी चर्बी खा सकता है जो विधिपूर्वक हलाल किया गया हो, और हिन्दू तो, हो सकता है चर्बी बिल्कुल खाये ही नहीं।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–१०–१९०८

१. जेल-निदेशक (डायरेक्टर ऑफ़ प्रिज़न्स) को लिखा यह पत्र १०–१०–१९०८ के **इंडियन ओपिनियन**में इस शीर्षकसे छपा था — "क्या भारतीय भूखों मारकर झुकाये जायेंगे? और पत्र-व्यवहार"।

३८. पत्र : 'इंडियन ओपिनियन' को[1]

जोहानिसबर्ग
सितम्बर ३०, १९०८

सम्पादक
'इंडियन ओपिनियन',

महोदय,

जेल-निदेशक (डायरेक्टर ऑफ प्रिजन्स) की ओरसे मेरे संघको नीचे दिये गये कुछ और सन्देश प्राप्त हुए हैं :

इसी २४ तारीखके आपके उस पत्रके[2] सम्बन्धमें, जिसके साथ आपने सैयद अलीका वॉक्सबर्ग जेलमें उसके साथ हुए व्यवहारसे सम्बन्धित हलफनामा भेजा है, मुझे यह कहना है कि ईस्ट रैंडके जेलोंके गवर्नरने मामलेकी जाँच कर ली है और मुझे उनसे उसका विवरण मिल गया है।

मुझे इस बातकी प्रतीति हो गई है कि सैयद अलीके साथ जेलके नियमोंके अनुसार व्यवहार किया गया था और वर्तमान स्थितियोंमें मामलेकी और ज्यादा जाँच करनेका मेरा इरादा नहीं है।

ट्रान्सवालकी जेलोंमें कैद ब्रिटिश भारतीयोंके लिए ट्रान्सवालमें लागू भोजन-तालिकाके विषयमें लिखे हुए आपके इसी २५ तारीखके दूसरे पत्रके[3] सम्बन्धमें मुझे आपको यह सूचना देनी है कि फिलहाल मिली हुई सलाहके अनुसार मैं मौजूदा भोजन-तालिकामें परिवर्तन करानेकी दृष्टिसे कोई लिखा-पढ़ी करनेको तैयार नहीं हूँ।

दिखाई देता है कि सैयद अलीने अपनी शिकायतोंकी खुली अदालती जाँचकी जो प्रार्थना[4] की है वह अस्वीकृत कर दी जायेगी। भारतीय कैदियोंके लिए ट्रान्सवालकी जेलोंमें लागू भोजन-तालिकाके सम्बन्धमें मेरे संघको अब यह निश्चय हो जाना चाहिए कि भारतीय कैदियोंको भूखों मारकर झुकनेके लिए बाध्य करना और इस तरह ब्रिटिश भारतीय समाजपर दबाव डालनेका प्रयत्न करना ट्रान्सवाल सरकारकी निश्चित नीति है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ३–१०–१९०८

१. यह "दिल दहलानेवाले आरोप : जाँचकी आवश्यकता", शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।
२. देखिए "पत्र : जेल-निदेशकको", पृष्ठ ७०।
३. देखिए "पत्र : जेल-निदेशकको", पृष्ठ ७१।
४. देखिए "पत्र : जेल-निदेशकको", पृष्ठ ५७-५९।

३९. तार: द० आ० ब्रि० भा० समितिको[1]

जोहानिसबर्ग
सितम्बर ३०, १९०८

कल एक भारतीयको उपनिवेश न त्यागनेपर एक महीनेकी कड़ी कैद; दूसरेको सात दिनमें उपनिवेश-त्यागकी आज्ञा; नया वैधीकरण कानून[2] इक्कीस सितम्बरसे लागू और अक्तूबरमें पंजीयनकी[3] दरख्वास्त देने और पंजीयकके निर्णयके विरुद्ध अपीलका अधिकार; फिर भी दोनों एशियाई कानूनके अन्तर्गत दण्डित। आज एक शिक्षित भारतीय एशियाई कानूनके अन्तर्गत एक महीनेकी कैद भुगतकर रिहा। एशियाई कानूनके अन्तर्गत जेलके दरवाजेपर फिर गिरफ्तार। समाज दंग। ज्ञात हुआ पुराना कानून प्रशासनिक दृष्टिसे प्रभावहीन। भविष्यमें वैधीकरण कानून लागू होनेवाला। समाजका पुराने कानूनको रद करनेका आग्रह।

[मो० क० गांधी०]

[अंग्रेजीसे]
कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१३२

४०. भेंट: 'नेटाल मर्क्युरी' को

[डर्बन
सितम्बर ३०, १९०८]

ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके हितोंके जोरदार समर्थक श्री मो० क० गांधी आजकल डर्बन आये हुए हैं। कल उनसे इस पत्रके एक प्रतिनिधिने भेंट की।

यह पूछा जानेपर कि इस समय वे डर्बन किस उद्देश्यसे आये हैं, उन्होंने बताया कि मैं यहाँ उन भारतीयोंके प्रश्नके सिलसिलेमें आया हूँ जिन्हें युद्धसे पहले ट्रान्सवालके निवासी होनेके कारण ट्रान्सवालमें वापस जानेका अधिकार है। मैं विशेषकर उन भारतीयोंसे मिलने आया हूँ जो जर्मन जहाज 'गवर्नर' से आनेवाले हैं। यह जहाज अच्छी संख्यामें ट्रान्सवालके लिए भारतीय यात्री ला रहा है।

ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी वर्तमान स्थितिके सम्बन्धमें किये गये एक प्रश्नके उत्तरमें श्री गांधीने कहा कि लड़ाईकी शक्ल अब यह रह गई है कि जिन्हें ट्रान्सवालमें रहनेका अधिकार है,

१. दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति या साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी, लन्दन।
२. न्यू वैलिडेशन ऐक्ट।
३. रजिस्ट्रेशन।

उन्हें उपनिवेशमें प्रवेश करनेकी अनुमति होगी; किन्तु वे सरकारको शिनाख्तके सम्बन्धमें तबतक कोई सहायता न देंगे जबतक दो मुख्य प्रश्न तय नहीं हो जाते।

भेंटकर्ताने प्रश्न किया: "ब्रिटिश भारतीयोंके कानून-पालक स्वभावसे इस रुखकी संगति कैसे बैठती है?" श्री गांधीने उत्तर दिया कि मेरे मतसे भारतीयोंके रुखमें कोई भी विद्रोह नहीं है। याद यह रखना चाहिए कि ट्रान्सवालकी संसदमें ब्रिटिश भारतीयोंका कोई प्रतिनिधित्व नहीं है। और अपनी आवाज सुनानेका उनके पास एकमात्र कारगर तरीका उन कानूनोंको माननेसे इनकार करना है जिनके पास करनेमें उनका कोई हाथ नहीं है और जो उनकी अन्तरात्मा अथवा आत्म-सम्मानपर चोट करता है। उन्होंने कहा, भारतीयोंकी मान्यता यह है कि जनरल स्मट्स एशियाई कानूनको रद करनेके लिए वचनबद्ध हैं, किन्तु वे कहते हैं कि वे उसे "प्रभावहीन कानून" मानकर चलेंगे। भारतीय कहते हैं कि यह काफी नहीं है और मैं देखता हूँ कि अब भी पुराना कानून किसी भी प्रकार "प्रभावहीन" नहीं है। इन स्थितियोंमें भारतीयोंने जनरल स्मट्ससे माँग की है कि कानूनको रद करके अपने वचनका पालन करें और जबतक यह नहीं हो जाता तबतक उन्हें [भारतीयोंको] नये कानूनसे प्राप्त लाभोंको स्वीकार न करनेकी सलाह दी गई है। श्री गांधीके विचारमें यह भारतीय समाजका एक त्याग है, जिसकी सराहना समस्त दक्षिण आफ्रिकाके उपनिवेशियोंको करनी चाहिए।

इसके बाद प्रश्न यह किया गया: "परन्तु शिक्षा-सम्बन्धी प्रश्नके विषयमें आप क्या कहते हैं?" श्री गांधीने कहा कि इसका उत्तर बहुत सीधा-सादा है। यदि कानून रद कर दिया जाता है तो ट्रान्सवालका प्रवासी कानून लगभग वही होगा जो नेटालका है। ब्रिटिश भारतीय कहते हैं कि साम्राज्य-सरकार और वे लोग, जो साम्राज्यसे प्रेम करते हैं, ट्रान्सवालको केवल जाति और रंगके आधारपर पृथक्करणकी नई नीति स्थापित करनेकी अनुमति न दें। ट्रान्सवालका वर्तमान प्रवासी कानून, पुराने एशियाई कानूनकी सहायतासे, ऐसा ही विधान प्रस्तुत करता है। इसलिए भारतीयोंका विचार है कि ऐसी बात न होनी चाहिए।

उन्होंने कहा, ट्रान्सवालके लोग नेटालके अर्ध-शिक्षित युवकोंके आक्रमणके खयालसे डर गये हैं; किन्तु इसका कारण केवल अज्ञान है। भारतीय अपने अर्ध-शिक्षित देशबन्धुओंके अधिकारोंके लिए नहीं लड़ रहे हैं। वे भारतकी प्रतिष्ठाके लिए और एक सिद्धान्तके लिए लड़ रहे हैं — उसी सिद्धान्तके लिए जिसकी स्थापना श्री चैम्बरलेनने उपनिवेशीय प्रधान मन्त्री-सम्मेलनमें की थी और वह यह था कि प्रतिबन्ध किसी उचित आधारपर लगाया जाना चाहिए, रंग या प्रजातिके आधारपर नहीं।[1] श्री गांधीने कहा कि एक बार कानूनकी निगाहमें शिक्षित भारतीयोंका दर्जा समानताके आधारपर स्थापित हो जाये तो स्वयं मेरा शैक्षणिक कसौटीकी कठोरताके सम्बन्धमें कोई झगड़ा नहीं रह जाता। मुझे मुख्य अन्तर यह प्रतीत होता है: ट्रान्सवालके लोग, बल्कि सारे दक्षिण आफ्रिकाके लोग, ब्रिटिश भारतीयोंको बुराईके रूपमें सहन करते हैं। इसके विपरीत भारतीयोंका दावा यह है कि जो लोग दक्षिण आफ्रिकाके अधिवासी हो गये हैं वे उस भावी जातिके अंग बन जायें जिसका निर्माण हो रहा है और उनको शिष्टता और संस्कृतिके

१. देखिए खण्ड २, पृष्ठ ३९६-९८।

मार्गपर आगे बढ़नेमें हर प्रकारसे प्रोत्साहित भी किया जाये। जब मैं यह बात कहता हूँ तो मैं केवल कुछ दिन पहलेके श्री पैट्रिक डंकनके इस कथनको ही दुहराता हूँ कि स्वतन्त्र और स्वशासित दक्षिण आफ्रिकामें किसी ऐसे जनसमुदायकी कल्पना करना असम्भव न होगा जो दासताकी अवस्थामें रहता हो या जिसकी स्थिति निम्न और कानूनकी दृष्टिसे हीन हो।

श्री गांधीने विश्वासपूर्वक कहा कि ऐसे किसी अपमानके विरुद्ध यह कदम उठानेमें मेरे देशवासियोंको उन सबकी सहानुभूति और सहायता मिलनी चाहिए, जो दक्षिण आफ्रिकासे अपनी मातृभूमिके रूपमें प्रेम करते हैं और जो उसका हित चाहते हैं। मैं यह एक बात बिलकुल स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि भारतीय अब दक्षिण आफ्रिकाके किसी भी भागमें एशियाइयोंका अबाध प्रवास नहीं चाहते, और उनकी इच्छा यह भी नहीं है कि बिना समझे-बूझे आम तौरसे व्यापारिक परवाने (ट्रेड लाइसेंस) दिये जानेके सम्बन्धमें कोई विनियम (रेगुलेशन) ही न हों। किन्तु इन दो मान्यताओंकी स्थापनाके बाद कोई भेदभावकारी कानून न बनाया जाना चाहिए, अन्यथा मैं केवल उसी बातको फिर कहूँगा जिसे इतनी बार कह चुका हूँ——यानी दक्षिण आफ्रिकामें साम्राज्य-विघटनके बीज बो जायेंगे। यह नहीं हो सकता कि वे भारतको ब्रिटिश ताजके उज्ज्वलतम रत्नके रूपमें भी रखें और उस रत्नको हर तरफसे प्रहारका लक्ष्य भी बनायें।

इसके बाद श्री गांधीने इस प्रश्नका, कि सामान्यतः भारतीयोंपर संघीकरणका क्या प्रभाव होगा, निम्न उत्तर दिया: यह वही प्रश्न है जिसका उत्तर मैं जोहानिसबर्गमें बनाई घनिष्ठतर ऐक्य संघकी[1] बैठक में दे चुका हूँ।[2] मैंने वहाँ कहा था कि संघीकृत दक्षिण आफ्रिकाका अर्थ जबतक केवल गोरी जातियोंका ही नहीं, बल्कि उन सब रंगदार और श्वेत ब्रिटिश प्रजाजनोंका एकीकरण नहीं होता, जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकाको अपना देश बना लिया है, तबतक ब्रिटिश भारतीयोंके लिए संघीकृत दक्षिण आफ्रिकाका अर्थ उनकी स्वतन्त्रतापर और भी अधिक प्रतिबन्ध लगाना होगा। ऐसे संघीकरणमें सभी यह अपेक्षा करते हैं कि भारतीयोंसे सम्बन्धित कानूनके निर्माणमें उदार सिद्धान्तोंको सम्मुख रखा जाये, किन्तु वहाँ तो प्रायः केपमें भारतीयोंको मताधिकारसे वंचित करनेकी और नेटालमें उनपर और अधिक निर्योग्यताएँ लगानेकी चर्चा सुनाई देती है। जहाँतक एशियाई कानूनका सम्बन्ध है, ऑरेंज रिवर कालोनी संघीकरणके लक्ष्यके अधिकसे-अधिक समीप पहुँची मालूम होता है। उस उपनिवेशमें एशियाई केवल घरेलू नौकरके रूपमें हैं। वहाँ उनका अन्य कोई आधार बिलकुल नहीं है। प्रत्येक व्यक्तिको यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि जिन भारतीयोंके निहित स्वार्थ हैं, जिनको अपने बाल-बच्चे पढ़ाने हैं और परिवारोंका भरण-पोषण करना है, वे ऐसी स्थितिसे, जैसी मैंने बताई है, कभी सन्तुष्ट न होंगे और उसको वे तबतक स्वीकार न करेंगे जबतक एक जोरदार लड़ाई न लड़ लेंगे। मेरे खयालमें नहीं आता कि साम्राज्य-सरकार ऐसी संघीकरण योजनाको कैसे पसन्द कर सकती है, जिसका अर्थ एशियाइयों और वतनियोंको लगभग दासताकी स्थितिमें पहुँचा देना होगा।

१. क्लोज़र यूनियन सोसाइटी।

२. देखिए खण्ड ८, "भाषण : घनिष्ठतर ऐक्य संघमें", पृष्ठ ४५९-६२।

इसके बाद जिस दूसरी बातकी चर्चा हुई वह इस प्रश्नके अन्तर्गत आ जाती है: "ट्रान्सवालमें स्थानीय नेता जेल भेजे गये हैं, इस सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीयोंकी भावना कैसी है?"

श्री गांधीने उत्तर दिया कि जो-कुछ मैं देख सकता हूँ उससे तो भावना बहुत कटु प्रतीत होती है। मेरे देशवासी यह समझनेमें असमर्थ हैं कि एक ब्रिटिश उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंको ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेका साहस करनेके कारण कारावासके कष्ट क्यों भोगने पड़ते हैं। तीनों नेता ट्रान्सवालकी लड़ाईसे पूर्वके अधिवासी हैं। इससे स्थिति और अधिक दुखदायी लगती है। उनके साथ तीन शिक्षित भारतीय भी कारावास भोग रहे हैं। ये जूलू विद्रोहके[1] समय डोलीवाहक थे और सार्जेन्टके पदपर नियुक्त थे। यह स्मरणीय है कि इनकी सेवाएँ इतनी मूल्यवान मानी गई थीं कि सर हेनरी मैककॉलमने उनकी विशेष रूपसे सराहना की थी। और ये भूतपूर्व सार्जेन्ट अपने पदकोंके अधिकारी तो हैं ही, जिन्हें वे रिहा होनेपर प्राप्त करेंगे। यह हर किसीको अजीब लगेगा कि ऐसे लोगोंको केवल ट्रान्सवालमें प्रवेशका साहस करनेपर कड़ी कैदकी सजा दी जाये। जेलमें भेजे गये नेताओंमें से एक — श्री दाउद मुहम्मद — को प्रत्येक प्रमुख डर्बन-निवासी जानता है और वे नेटाल भारतीय कांग्रेसके अध्यक्ष हैं। दूसरे श्री पारसी रुस्तमजी भी उतने ही प्रसिद्ध हैं। और, तीसरे श्री एम० सी० आंगलिया एक प्रमुख व्यापारी और कांग्रेसके मन्त्री हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने अंग्रेजी और फ्रेंचमें बहुत अच्छी शिक्षा प्राप्त की है। इसलिए डर्बनके भारतीय यह अनुभव करते हैं कि उन्हें इसलिए कष्ट सहन करने हैं, कि ये नेता अपनी अवधिकी समाप्तिसे पूर्व मुक्त कराये जा सकें। इसलिए वे ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके लिए ऐसे और अधिक भारतीय भेजनेकी उपयुक्ततापर विचार कर रहे हैं जिन्हें वहाँ जानेका अधिकार है, ताकि वे उन कष्टोंमें हिस्सा बँटा सकें, जो उनके नेताओंको सहन करने पड़ रहे हैं। यह बिलकुल स्पष्ट है कि जनरल स्मट्सने दक्षिण आफ्रिका-भरमें ब्रिटिश भारतीयोंकी एक अप्रत्यक्ष सेवाकी है। वे एक-दूसरेके इतने करीब कर दिये गये हैं जितने करीब वे पहले कभी नहीं थे; और वे अपनी स्थितिको समझने एवं यह अनुभव करने लगे हैं कि यदि उन्हें अपने-आपको दक्षिण आफ्रिकामें आत्म-सम्मानी लोगोंके रूपमें मान्य कराना है तो उन्हें कन्धेसे-कन्धा भिड़ाकर काम करना और बहुत कष्ट सहन करना होगा।

श्री गांधीने कहा कि जो बन्दी मुक्त हुए हैं; उनकी मार्फत इन नेताओंसे इस आशयकी खबरें मिली हैं कि वे बिलकुल खुश हैं, यद्यपि सरकार उन्हें ऐसा भोजन देकर, जो भारतीयोंकी आदतोंके अनुकूल नहीं है, बिलकुल भूखों मार रही है। नेता कहते हैं कि वे तबतक जेलमें रहेंगे जबतक आन्दोलन समाप्त नहीं हो जाता और ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके उचित अधिकारोंको मान्यता नहीं दी जाती। उनमें से अधिकतर सार्वजनिक सड़कोंपर पत्थर तोड़नेके लिए भेज दिये गये हैं। श्री गांधीने आगे कहा कि ज्यादातर नेता बहुत कमजोर हैं और श्री दाउद मुहम्मद बूढ़े हैं एवं मुश्किलसे कोई बोझ उठा सकते हैं; किन्तु उन्हें अपने देशसे इतना प्रेम है कि, ज्ञात हुआ है, उन्हें जो भी काम दिया जाता है, उसे वे अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक करते हैं।

१. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ३७-८७९।

भेंटकर्ताने फिर प्रश्न किया: "क्या आपका खयाल है कि यहाँकी हलचलका भारतमें भी कोई असर होता है?" श्री गांधीने उत्तर दिया, बेशक, मेरा खयाल है कि असर होता है। पिछली जनवरीमें बम्बईमें सर आगाखांके सभापतित्वमें जो सभा हुई थी, उसमें लोग बहुत बड़ी संख्यामें उपस्थित हुए थे। इस प्रश्नपर आंग्ल-भारतीय और भारतीय पूर्णतः एक हैं, और इसी प्रकार मुसलमान, हिन्दू, ईसाई और पारसी भी एक हैं। बम्बईकी इस सभामें जो विरोध-प्रदर्शन किया गया वह जोरदार और सर्वसम्मत था। अभी हालमें जो सूचना मिली है उससे प्रकट होता है कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंके प्रति व्यवहार और तज्जनित् कष्टसे ब्रिटिश भारतपर गहरा प्रभाव पड़ा है। श्री टी० जे० बेनेटने, जो भारतके एक प्रमुख समाचारपत्रके मालिक हैं, कुछ दिन पहले 'लन्दन टाइम्स' को एक पत्रमें लिखा था कि उन्होंने अभी हालकी अपनी भारत-यात्राओंमें यह देखा है कि अमीर और गरीब, महाराजा और मामूली लोग इस व्यवहारपर घोर रोष प्रकट करते हैं और सब आश्चर्य करते हैं कि साम्राज्य-सरकार इसकी छूट देकर आखिर कर क्या रही है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इस प्रश्नके सम्बन्धमें लॉर्ड मॉर्लेपर भारतके कई भागोंसे दबाव डाला जा रहा है। भारतके जो लोग साम्राज्यके अत्यन्त गहरे मित्र हैं वे ट्रान्सवालमें और दक्षिण आफ्रिकामें भी भारतीयोंको उचित व्यवहार प्राप्त करानेके उद्देश्यसे आकाश-पाताल एक कर रहे हैं।

अब भारतीयोंको प्रभावित करनेवाले स्थानीय प्रश्नोंपर आते हुए हमारे प्रतिनिधिने श्री गांधीसे पूछा कि पिछले अधिवेशनमें स्वीकृत भारतीयोंसे सम्बन्धित विधेयकोंके बारेमें आपका खयाल क्या है।

इस प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा कि यदि भारतीयोंसे सम्बन्धित इन विधेयकोंपर सम्राट्की स्वीकृति मिल जाये तो वस्तुतः मुझे बहुत आश्चर्य होगा। उनमें एक सिद्धान्तकी स्थापना की गई है, जो मुआवजेका नहीं, बल्कि जब्तीका सिद्धान्त है। ब्रिटेनके शराब परवाना-कानून (लिकर लाइसेंसिंग लेजिस्लेशन) और व्यापारिक परवाना कानूनको समान बताया गया है। निश्चय ही दोनोंकी कोई तुलना नहीं की जानी चाहिए। शराबके परवानोंको एक बुराई और राष्ट्रीय पतनका कारण माना जाता है। प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि शराब-घर यदि बिलकुल समाप्त न किये जायें तो सीमित कर दिये जायें। इसलिए स्वाभाविक है कि इन परवानोंके सम्बन्धमें कानून बनाया जायेगा, या बनाया ही जाना चाहिए। बहुत-से शराब-घरोंको बन्द कर दिया जाये, इस सम्बन्धमें सभी दल एकमत हैं; किन्तु व्यापारिक-परवानों (ट्रेड लाइसेंस) के सम्बन्धमें, स्थानीय पूर्वग्रह जो भी हों, कोई भी गम्भीरतापूर्वक यह नहीं कह सकता कि इनको शराब परवानोंके समान मानना चाहिए। मेरे विचारमें, जबतक भारतसे गिरमिटिया मजदूरोंको प्रलोभन देकर बुलानेकी प्रणाली जारी है, तबतक, जहाँतक भारतीयोंका सम्बन्ध है, निश्चय ही नेटालमें कोई शान्ति न होगी। परवाना कानून केवल एक बेकार ऊपरी उपचार है। यदि गिरमिटियोंका प्रवास रोक दिया जाये तो हम देखेंगे कि भारतीयोंकी समस्या स्वतः हल हो जायेगी। नेटालमें वर्तमान आबादीके लिए काफी गुंजाइश है, और यूरोपीयोंकी आबादी स्वतन्त्र भारतीय आबादीके मुँहकी रोटी छीने बिना निश्चित रूपसे बढ़ेगी। किन्तु यदि गिरमिटकी प्रथा जारी रखी गई तो अवश्य ही भारतीय

आबादीमें जबरदस्ती वृद्धि होगी और, फलस्वरूप, आन्दोलन होगा। निःसन्देह नेटालके कुछ उद्योगोंको गिरमिट-प्रथा बन्द होनेसे प्रारम्भमें कुछ क्षति पहुँचेगी; किन्तु मैं यह सोचे बिना नहीं रह सकता कि उपनिवेशमें एक स्थायी दुःखद दृश्य मौजूद रहे, इसकी अपेक्षा तो उन उद्योगोंको क्षति पहुँचने देना अधिक अच्छा है। उन विशेष उद्योगोंको मुआवजा दे दिया जाये, यह भी एक तरीका हो सकता है। किन्तु गिरमिटिया मजदूरोंको लाना जितनी जल्दी हो सके, बन्द करना चाहिए।

अन्तमें श्री गांधीने कहा कि इस मामलेमें भारतीयोंपर सदैव भरोसा किया जा सकता है, वे इस प्रथाको बन्द करनेके लिए उतने ही व्यग्र हैं जितना कोई उपनिवेशी हो सकता है। मैं केवल यही आशा करता हूँ कि श्री ईवान्स, जिन्होंने इस प्रथाके विरुद्ध अपना जिहाद आरम्भ किया है, तबतक सन्तुष्ट होकर न बैठेंगे जबतक यह प्रथा समाप्त नहीं कर दी जाती।

[अंग्रेजीसे]

नेटाल मर्क्युरी, १-१०-१९०८

४१. तार: उपनिवेश-सचिवको[1]

[डर्बन]
अक्तूबर, २, १९०८

माननीय उपनिवेश-सचिव
पी० एम० वर्ग[2]

नेटाल भारतीय कांग्रेसको ज्ञात हुआ है कि कुछ ब्रिटिश भारतीय 'गवर्नर'[3] से आये हैं। उनके पास ट्रान्सवाल निवासके प्रमाण हैं। प्रवासी अधिकारी जहाजपर चढ़नेके अनुमतिपत्र नहीं देता। यात्रियोंमें कुछ नाबालिग बच्चे हैं जिनके माता-पिता ट्रान्सवालमें से उन्हें लेने आये हैं। अधिकारी कानूनी सलाहकारोंको यात्रियोंसे मिलनेकी अनुमति नहीं देता। कांग्रेस इसे क्रूरता और अन्याय मानती है। प्रार्थना है, यात्रियोंसे मिलनेकी अनुमति दें और अधिकारीको आदेश दें कि जहाजपर चढ़नेके अनुमतिपत्र दे। कांग्रेस आश्वासन देती है ये लोग ट्रान्सवाल जा रहे हैं।

नाइसली[4]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ४८८९) से।

१. तारपर "प्रेषकके वास्ते" करके गांधीजीके हस्ताक्षर थे। इसकी एक प्रति एल० डब्ल्यू० रिचने ६ अक्तूबरको उपनिवेश-उपमन्त्रीको प्रेषित कर दी थी।

२. पीटरमैरित्सबर्ग।

३. जहाजका नाम

४. नेटाल भारतीय कांग्रेसका तारका पता।

४२. तार : द० आ० ब्रि० भा० समितिको[1]

डर्बन
अक्तूबर २, १९०८

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति

लन्दन

कांग्रेस स्तब्ध। कोमाटीपूर्टमें ८० से अधिक गिरफ्तार। नाबालिग बच्चों सहित बम्बईसे आये ट्रान्सवाल प्रमाणपत्र-धारी तेरह भारतीयोंको ट्रान्सवालके निकासी पास (ट्रांजिट पास) देनेसे इनकार। कारण, वे नया कानून न मानेंगे। ट्रान्सवाल अधिकारी उन्हें धमका रहा है। नेटाल अधिकारी उसकी सहायता कर रहे हैं। कानूनी सलाहकारको उनसे मिलनेकी अनुमति नहीं दी गई।[2] कांग्रेस इसे नाजायज दबाव मानती है। नतीजा होगा लोग ट्रान्सवालकी अदालतोंमें अधिकारके लिए लड़नेके अवसरसे वंचित हो जायेंगे।

नेटाल भारतीय कांग्रेस

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९१३); और कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१३२ से।

१. दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति (साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन) को भेजे इस तारका गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखित मूल अंग्रेजी मसविदा कटा-फटा है और उसका केवल पहला पृष्ठ उपलब्ध है। इस पृष्ठके अन्तिम शब्द हैं "लीगल ऐडवाइज़र" (कानूनी सलाहकार)। किन्तु पूरा तार कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्समें उपलब्ध है। इस तारकी एक प्रति श्री एल० डब्ल्यू० रिचने ३ अक्तूबरको उपनिवेश-उपमन्त्रीको भेज दी थी।

२. डर्बनके एक प्रसिद्ध वकील रोमर रॉबिन्सनने २ अक्तूबर, १९०८ के अपने पत्रमें भारतीय प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारी (इंडियन इमिग्रेशन रिस्ट्रिक्शन ऑफिसर) को लिखा था: "मुझे यह भी बताया गया गया है कि इन भारतीयोंके कानूनी सलाहकारकी हैसियतसे मुझे उनसे मिलनेकी अनुमति देनेसे इनकार कर दिया गया है; और इस प्रकार उन्हें वह सुविधा तक नहीं दी गई है, जो जेलमें अपराधीको भी प्राप्त होती है। क्या बात वास्तवमें ऐसी है? यदि नहीं तो कृपया मुझे उनसे मिलनेकी लिखित अनुमति प्रदान करें।"

४३. पादरियोंके लिए मसविदा

[अक्तूबर २, १९०८][1]

डेलागोआ-बे से कोमाटीपूर्टके रास्ते ट्रान्सवालमें अपने घरोंके लिए जाते हुए बहुत-से भारतीय यात्रियोंके साथ किये गये कथित दुर्व्यवहारसे क्षुब्ध होकर हम जोहानिसबर्गवासी पादरी, धर्म और मानवताके नामपर, ट्रान्सवाल सरकारसे अनुरोध करते हैं कि वह इन आरोपोंकी तत्काल सावधानीपूर्वक जाँच कराये और प्राप्त प्रमाणोंके आधारपर ऐसी कार्रवाई करे जिससे न्यायकी रक्षा हो।

हम यह प्रार्थना भी करते हैं कि जेलके भोजनकी कुछ चीजोंके सम्बन्धमें एशियाइयोंकी धार्मिक आपत्तियोंका खयाल रखा जाये तथा वर्तमान कठिनाइयोंके सन्तोषजनक समाधानके लिए एक बार फिर सच्चा प्रयास किया जाये।

डोक
फिलिप्स
हॉवर्ड
टिटकम्ब
कैनन बेरी
डॉ० हंटर
बेरी
लेंडर ब्लॉप[2]

पेंसिलसे लिखे मूल अंग्रेजी मसविदे (एस० एन० ४८८५) से।

४४. नेटालके गिरमिटिया

डर्बनका 'नेटाल ऐडवर्टाइज़र' नामक समाचारपत्र निश्चित रूपसे भारतीय समाजका शत्रु है, किन्तु उसके सम्पादकसे भी भारतीय गिरमिटियोंका दुःख सहन करते नहीं बनता। उसने एक बड़ी टिप्पणीमें यह सिद्ध किया है कि गिरमिट प्रथाके कारण भारतीय जिस स्थितिमें रहते हैं, उसमें और दासतामें बहुत अन्तर नहीं है। इन गिरमिटियोंका कारोबार प्रवासी-न्यास (इमिग्रेशन ट्रस्ट) नामका मण्डल चलाता है। इस मण्डलके सदस्योंका चुनाव गिरमिटियोंको नौकर रखनेवाले गोरे करते हैं। उनके हाथमें गिरमिटियोंके लिए आवश्यक चिकित्सकोंका भी चुनाव है। डॉक्टरोंपर गिरमिटियोंका सुख बहुत हद तक निर्भर रहा करता है। अब यदि डॉक्टरोंकी रोजी गिरमिटियोंके मालिकोंपर आधारित हो, तो साधारण तौरपर वे डॉक्टर

१. यह मसविदा अनुमानतः लगभग उसी समय लिखा गया था जब गांधीजीने उपनिवेश-सचिवको तार भेजा था। देखिए पृष्ठ ८१ और पिछला शीर्षक।

२. हस्ताक्षरकर्ताओंके नाम गांधीजीकी लिखावटमें हैं।

स्वतन्त्र विचार प्रकट नहीं कर सकते। उदाहरणके लिए, यदि कोई डॉक्टर ऐसा कहे कि अमुक भारतीय काम करनेके योग्य नहीं है, तो उस गिरमिटियाके मालिकको न केवल बीमारीकी उस अवधिमें उसके श्रमके लाभसे वंचित रहना पड़ेगा, बल्कि उसकी दवा-दारूका खर्च भी उठाना पड़ेगा। इस तरह यदि कोई डॉक्टर अपने कर्तव्यका पालन करता है, तो उसपर मालिकके नाखुश हो जानेकी सम्भावना है; और जब अपने कर्तव्यके साथ अपने स्वार्थका सवाल खड़ा हो जाता है, तब बहुत-से आदमी कर्तव्यको तिलांजलि देकर स्वार्थ साधने लगते हैं। इसलिए 'ऐडवर्टाइज़र' का कहना है कि डॉक्टरोंको गिरमिटियोंके मालिकोंके अंकुशसे बाहर रखना चाहिए। जो भारतीयोंका संरक्षक (प्रोटेक्टर) कहलाता है, उसकी स्थिति भी लगभग वैसी ही विषम है जैसी कि डॉक्टरोंकी। यह संरक्षक न्यासी-मण्डल (ट्रस्ट बोर्ड) का सदस्य होता है और चूँकि उसके अधिकतर सदस्य गिरमिटियोंके मालिक हैं इसलिए संरक्षककी आवाज नक्कारखानेमें तूतीकी आवाज-जैसी हो जाती है। इसके अतिरिक्त 'ऐडवर्टाइज़र' कहता है कि यदि गिरमिटिये काम छोड़ बैठें, तो उन्हें जेल भोगनी पड़ती है। साधारण नौकर नौकरी छोड़ता है, तो उसका मालिक उसपर फकत दीवानी दावा दायर कर सकता है, किन्तु गिर-मिटियेके भाग्यमें तो कैदखाना ही है। 'ऐडवर्टाइज़र' कहता है कि इस स्थितिका नाम दासता है। और फिर उसके सम्पादक उपनिवेशके गोरोंको सलाह देते हुए कहते हैं कि भारतीयोंको गिरमिटके अधीन लाना बन्द किया जाये और गिरमिटके कानूनमें फेरफार किया जाये। गिरमिटियोंकी स्थितिको सुधारनेका यह बहुत उपयुक्त अवसर है। लेकिन हम मानते हैं कि गिरमिटियोंकी स्थितिमें वास्तविक सुधार असम्भव-सी बात है। गिरमिट [की प्रथा] बन्द करना ही उसका वास्तविक उपाय है। मॉरिशसके एक भारतीयकी गिरमिटगिरीका अनुभव हिन्दुस्तानके किसी समाचारपत्रमें प्रकाशित हुआ है। हम उसे संक्षेपमें दूसरी जगह दे रहे हैं।[1] सम्भव है कि उस लेखमें कुछ अतिशयोक्ति हो, फिर भी इतना तो निश्चित है कि गिरमिट बहुत भयानक वस्तु है और संसारके किसी भी भागमें गिरमिटिया भारतीयोंकी हालत अच्छी नहीं पाई जाती। संसारका इतिहास देखनेसे मालूम होता है कि पहले गुलामोंको सामान्यतः पशुओंकी जगह और पशुओंकी तरह रखा जाता था और ज्यों ही अंग्रेजी जनताके प्रयत्नसे कानूनसम्मत गुलामी बन्द हुई, त्यों ही वह दूसरे रूपमें दाखिल हो गई। फिलहाल जहाँ-जहाँ भारतीय अथवा दूसरी कौमके गिरमिटिये देखे जाते हैं, वहाँ-वहाँ अथवा उसके आसपास पहले गुलाम रखे जाते थे। सम्पत्तिशाली व्यक्तिकी प्रवृत्ति दूसरे व्यक्तियोंको जबरदस्ती दबाकर रखनेकी होती है। इसलिए इस प्रवृत्तिसे उत्पन्न दुःखोंको दूर करनेका एक ही इलाज है कि कानून उनके अधिकारोंकी हद बाँध दे, यानी गिरमिटके द्वारा लोगोंकी मजदूरीसे लाभ उठानेका रास्ता कानूनसे बन्द कर दिया जाये। इसलिए नेटालके भारतीयोंका इस विषयमें मुख्य कर्तव्य तो यह है कि बड़े आन्दोलन द्वारा — सत्याग्रहका भी प्रयोग करके — गिरमिटका रिवाज खत्म करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–१०–१९०८

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है

४५. सच्ची शिक्षा

लोग हमें कितनी ही बार कह और लिख चुके हैं कि ट्रान्सवालमें सत्याग्रहका जो संघर्ष चल रहा है, जिसे हम प्रोत्साहन दे रहे हैं तथा जिसके लिए हम अपनी कुर्बानियाँ कर रहे हैं, उसकी सारीकी-सारी मेहनत बेकार है। हमारे ये सलाहकार हमसे यह भी कहते हैं कि दक्षिण आफ्रिकामें मुट्ठी-भर भारतीय निवास करते हैं, उनके लिए ऐसा प्रयास करना ठीक नहीं लगता। और फिर किसी-न-किसी दिन भारतीयोंको यह देश छोड़ना ही पड़ेगा। इसलिए यह सब चुनाई बालूके पायेपर की गई चुनाई-जैसी मानी जायेगी।

ऐसे विचारोंसे हमारे अनेक पाठकोंके मनमें शंका उत्पन्न हो गई है। अतः इसके बारेमें थोड़ा विचार करें।

ऊपरका तर्क नितान्त भ्रामक है, ऐसा हम निःसंकोच कह सकते हैं। इस प्रकारकी दलील पेश करनेवाले सत्याग्रहके गम्भीर अर्थ और उसकी खूबीको नहीं समझते। यह विचार कि अन्ततोगत्वा दक्षिण आफ्रिकासे भारतीयोंको निकलना ही पड़ेगा, कोरी निराशाका है। ऐसा होनेकी हमें कोई सम्भावना दिखाई नहीं देती। भारतीय समाजमें थोड़ा बहुत भी सत्याग्रह हो तो यह माननेका कोई कारण नहीं है कि हमें यह देश छोड़ना ही पड़ेगा।

यदि देश छोड़ना पड़े, तो भी सत्याग्रहका लाभ तो मिल ही चुका होगा। सत्याग्रह इसलिए नहीं किया जाता कि उससे अधिकार मिलते हैं। हकका प्राप्त होना तो परिणाम है; सत्याग्रह परिणामपर दृष्टि रखे बिना किया जा सकता है। अन्य प्रयासोंके अन्तमें वांछित फल न मिले, तो प्रयास व्यर्थ माना जाता है। उदाहरणार्थ, कोई व्यक्ति किसीको मारकर उसकी जायदाद छीन लेनेका इरादा करता है और फिर उसे मार नहीं पाता अथवा जायदाद प्राप्त नहीं कर पाता, तो हाथ मलकर रह जाता है और सम्भवतः उसे अपने जीवनसे हाथ धोना पड़ता है। सत्याग्रहमें, फल प्राप्त होता है या नहीं, इसकी परवाह नहीं की जाती, क्योंकि फल न मिलनेपर भी इसमें हाथ मलनेकी बात नहीं रहती। भले ही ट्रान्सवालके संघर्षके अन्तमें खूनी कानून कायम रह जाता; किन्तु जो सत्याग्रही हैं वे तो विजयी ही रहते। उनके प्रयाससे समाजका नुकसान नहीं होता। यही बात दूसरे शब्दोंमें रखें तो कहा जा सकता है कि सत्याग्रह सच्ची शिक्षा है। हम शिक्षा अमुक उद्देश्यसे — मान लीजिए कि जीविका कमानेके उद्देश्यसे — लेते हैं, फिर भी सम्भव है, जीविका न मिले। शिक्षा तब भी व्यर्थ नहीं जाती। इसी प्रकार सत्यका पालन किया हो, उसके लिए दुःख उठाया हो, और इससे हमारा मनोबल बढ़ा हो, तो यह अमूल्य शिक्षा — लाभ — कभी व्यर्थ नहीं जाती। जो सत्याग्रही हुए और रहे हैं, वे संसारके किसी भी भागमें जाकर अपने सत्याग्रहका लाभ उठा सकते हैं।

इसके सिवाय यदि सत्याग्रहके नतीजेकी जाँच करें, तो वह हमेशा एक ही होता है — यानी अच्छा। जब उसका कोई परिणाम न निकले तो समझना चाहिए कि वैसा सत्याग्रहकी कमजोरीके कारण नहीं, बल्कि हम सत्याग्रहमें चुस्त नहीं रहते, इसलिए हुआ है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–१०–१९०८

४६. हमारा काम

जो लोग इस समाचारपत्रके प्रकाशनमें लगे हुए हैं, वे गोरे हों चाहे भारतीय, उनका उद्देश्य मनुष्यमात्रकी सेवा करना है। भारतीय समाजकी सेवा करना गोरों और फीनिक्समें रहनेवाले भारतीयों, दोनोंका पहला काम हो गया है। उसका कारण स्पष्ट है। भारतीयोंके लिए तो भारतीयकी सेवा उचित ही है, यदि वे उसे न करें और मनुष्य-मात्रकी सेवाका ढोंग करें तो वह ढोंग ही होगा, सेवा नहीं होगी। उसे सेवा नहीं कहा जा सकेगा। जो गोरे हमारे साथ हो गये हैं, वे पहले अपना धन्धा करते थे। उनके सामने गोरे समाजकी सेवा करनेकी कोई बात नहीं थी। उनका इरादा स्वार्थमय जीवन छोड़कर परमार्थमय जीवन व्यतीत करनेका था; इसलिए उन्होंने इस समाचारपत्रमें सहयोग देना निश्चित किया। हमारी ऐसी ही धारणा है।

किन्तु हमारा काम केवल अखबार निकालकर बैठ रहनेका नहीं है। जो लोग फीनिक्समें विचारपूर्वक रह रहे हैं उनका हेतु अपनेको शिक्षित करना तथा उस शिक्षाका लाभ भारतीय जनताको देना है। इस कारण समाचारपत्रका काम करनेवालोंमें जो लोग पढ़ानेका काम कर सकते हैं, वे अपना अमुक समय उन बच्चोंकी शिक्षामें लगाते हैं जिनका लालन-पालन फीनिक्समें हो रहा है। इस प्रकारका प्रबन्ध कुछ महीनोंसे चल रहा है। यह शिक्षा देनेके लिए उन्हें कोई वेतन नहीं मिलता, वे वेतनकी आशा भी नहीं रखते।

फीनिक्समें फिलहाल इतने थोड़े बच्चे हैं कि उनके लिए मदरसेकी निजी इमारत बनाना आवश्यक नहीं है। श्री कॉर्डिज़ने[1] इस कामके लिए अपना मकान दे रखा है।

शिक्षा, गुजराती तथा अंग्रेजी, दोनों माध्यमोंसे दी जाती है। और शारीरिक विकासकी ओर ध्यान दिया जाता है। बच्चोंमें नीतिकी भावनाका पोषण हो, इस बातपर विशेष ध्यान दिया जाता है।

हमारा उद्देश्य यह है कि ऐसी शिक्षा सभी भारतीय बालकोंको दी जा सके। अभी विशेषतः उन्हींको शिक्षा देनेका विचार है जो फीनिक्समें रहते हैं; क्योंकि बच्चोंका व्यवहार पाठशालामें एक प्रकारका और घरमें दूसरी प्रकारका रहे, तो उससे उनका हित-साधन नहीं होता।

इस पाठशालाकी बात जिन लोगोंने सुनी है, उनमें से कुछ लोग अपने बच्चोंको फीनिक्समें रखनेकी माँग कर रहे हैं। किन्तु हमारे पास छात्रावास अथवा पाठशालाकी इमारतकी सुविधा न होनेके कारण हम उनकी माँगको स्वीकार नहीं कर पाये हैं।

ऐसे मकान बनानेकी सुविधा हमें दिखाई नहीं देती। उन इमारतोंको बनानेके लिए पैसेकी जरूरत है। इसलिए हमारे पाठकोंमें से जो उक्त पद्धतिके अनुसार पाठशालाकी स्थापनाकी आवश्यकता मानते हों, उन्हें चाहिए कि वे हमें अपने विचार लिख भेजें और यदि

१. एक जर्मन थियॉसॉफिस्ट, जो गांधीजीके प्रति प्रेम-भाव रखते थे और कुछ समय तक फीनिक्स स्कूलके व्यवस्थापक रहे थे। उनकी मृत्यु सन् १९६० में सेवाग्राममें हुई।

हमें उनसे पैसेकी मदद मिले तो हम पाठशाला और छात्रावास बनानेके लिए तैयार हैं। उसमें होनेवाले खर्चके लिए न्यासी (ट्रस्टी) नियुक्त किये जा सकते हैं, और इमारतके खर्चका सारा हिसाब प्रकाशित किया जा सकता है। यह काम बड़ा है, इसलिए हम बहुत सोच-विचारके बाद अपने पाठक-वर्गके सामने इसे रख रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–१०–१९०८

४७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी[1]

रुस्तमजीका सन्देश

कैदियोंकी तरफसे श्री रुस्तमजीने कहलाया है: "समझौतेके विषयमें उतावली न कीजिएगा। सबकी सही ले लीजिएगा।" ये उन्हींके शब्द हैं। इनसे जेलवासियोंकी हिम्मत प्रकट होती है और यह भी जाहिर होता है कि भारतीयोंका अपना कर्तव्य क्या है।

चेतावनी

ज्ञात हुआ है कि 'गवर्नर' नामक जहाज भारतीय मुसाफिरोंको लेकर डर्बन आनेवाला है, तथा श्री चैमने उन मुसाफिरोंसे जहाजपर ही अर्जी लेंगे। इसपर डेलागोआ-बेके मुसाफिरोंको चेतावनी देनेके लिए श्री इस्माइल मंगा, श्री इस्माइल हलीमभाई, श्री होरमसजी एदलजी, श्री नानजी दुलभदास तथा श्री बृजदास लालचन्दके नाम फौरन तार दिये गये कि वे मुसाफिरोंको सावधान कर दें कि वे सरकारी जालमें न फँसें, वे डर्बन उतरें और वहाँसे संघर्ष करनेके लिए ट्रान्सवाल जायें। हिसाबमें एक दिनका फर्क पड़ गया, इसलिए किसी व्यक्तिको विशेष रूपसे भेजना सम्भव नहीं हुआ। श्री कामा तथा श्री नगदी जानेके लिए तैयार हो चुके थे।

जेलियोंकी खुराक

ब्रिटिश भारतीय संघ और सरकारके बीच कैदियोंकी खुराकके सम्बन्धमें झड़प होती रहती है। एकके बदले दो तकलीफें आ पड़ी हैं। सुबह पूपू दिया जाता है। तत्सम्बन्धी लड़ाई श्री काछलिया लड़ रहे हैं। अब जेलके अधिकारी कहते हैं कि भिन्न-भिन्न जेलोंमें भोजनकी व्यवस्था अलग-अलग है। इस विषयपर सरकारसे विभिन्न नियमावलियोंकी नकलें माँगी गई हैं।

'डेली मेल' में टीका-टिप्पणी

उक्त विषयपर गत शनिवारके 'डेली मेल' ने टिप्पणी दी है कि कारावासमें भारतीयोंको दी जानेवाली खुराकके बारेमें सारे उपनिवेशमें कोई एक निश्चित पद्धति नहीं है। यह बहुत आश्चर्यजनक बात है। एक जेलमें भारतीयोंको उनकी अपनी खुराक दी जाती है और दूसरे स्थानपर उन्हें मक्कीका आटा और चर्बी दी जाती है और यदि वे इसे न लें, तो उन्हें भूखा

१. गांधीजी इस समय डर्बनमें थे, इसलिए अनुमानतः मूल पत्रमें वर्णित वे घटनाएँ जो डर्बनके बाहर घटित हुई थीं, उनकी लिखी नहीं मानी जा सकतीं। अनुवादमें चिट्ठीके उन अंशोंको छोड़ दिया गया है।

रह जाना पड़ता है। 'डेली मेल' कहता है, हमें लगता है कि जो शिकायत की गई है वह यथार्थमें ध्यान देने योग्य है। एक सच्चा हिन्दू चर्बीको छूनेके वदले अपनी मौत पसन्द करेगा। इस देशमें हम जिसे जेलकी सजा देते हैं, उसे वहाँ भूखा रखनेकी सजा नहीं देते। जेलमें यदि कोई गोरा शाकाहारी हो और उसे हम मांसाहार करनेके लिए वाध्य करें तथा वह न खाये तो उसे भूखा रहनेको कहें अथवा किसी यहूदीसे ऐसा कहें कि तुम्हें चर्बी खानी हो तो खाओ और कुछ नहीं मिलेगा, तव तो जवरदस्त कोलाहल उठ खड़ा होगा। अथवा जो सोडा-ह्विस्की न पीता हो उससे कहें कि तुम्हें पीनेके लिए सोडा या ह्विस्की मिलेगी और अगर नहीं पियोगे तो प्यासे रहना पड़ेगा, तो वड़ा शोरगुल मच जायेगा। भारतीय चाहे जिस जेलमें हों, उन्हें उनका चावल और घी तो दिया ही जाना चाहिए।

चैमने नाकाबिल?

श्री चैमने अपने पदके[1] लिए विल्कुल अयोग्य हैं, ऐसा श्री गांधी जनरल स्मट्सको कई वार वता चुके हैं। श्री भाईजीको[2] एक महीनेकी कैदकी सजा हुई, यह तो ठीक हुआ। मैं इसके लिए श्री भाईजीको वधाई देता हूँ। किन्तु जव श्री मूलजी पटेल तथा श्री हरिलाल गांधीको छोड़ दिया गया तव श्री भाईजीको सजा किस खयालसे दी गई है? श्री भाईजीके पास भी अनुमतिपत्र (परमिट) और पंजीयन प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) हैं। जिसप्रकार ऊपरके दोनों व्यक्तियोंको नये कानूनके अन्तर्गत अर्जी देनेका अधिकार है, उसी प्रकार श्री भाईजीको भी है। श्री भाईजी अर्जी देनेवाले नहीं हैं, यह दूसरी वात है। किन्तु सही कहा जाये, तो सरकारको दो महीने तक उन्हें पकड़नेका कोई हक नहीं था। श्री पोलकने इस मामलेकी वहुत ही कड़ी आलोचना की है। और यह मुकदमा होनेसे हमारा फायदा ही हुआ है। किन्तु यह सब लिखनेमें मेरा उद्देश्य यह है कि श्री चैमनेको हटानेके लिए इस वार व्रिटिश भारतीय संघको अर्जी देना जरूरी हो जायेगा। मैं श्री चैमनेके पेटपर लात नहीं मारना चाहता, किन्तु जो अधिकारी अपने कामको विल्कुल ही न समझे, उससे समाजका कोई लाभ होनेवाला नहीं है।

दूसरी ओर देखें तो ऐसा जान पड़ता है कि श्री चैमनेकी वेवकूफीके कारण भारतीय समाजको लाभ हुआ है। यदि उन्होंने गम्भीर भूलें न की होतीं, तो हमारा छुटकारा जितनी शीघ्रतासे हुआ है उतनी शीघ्रतासे कदापि न होता। और जो-कुछ वाकी रह गया है, उससे भी श्री चैमनेकी भूलोंके कारण हमको जल्दी ही छुटकारा मिलेगा।

हिम्मतसे भरा पत्र

"कानूनके दुःखसे पीड़ित एक गरीव भारतीय" ने, जिसका पत्र मैं पहले दे चुका हूँ,[3] इस वार अपना नाम "कष्टोंकी परवाह न करके सत्याग्रहमें जूझ जानेवाला" रखकर लिखा है कि उक्त पत्र उसने हारकर नहीं लिखा। उसने वहुत-से लोगोंके विचारोंको सिर्फ प्रकट किया है। वह लिखता है कि मनके साथ हम तन और धनका नाता नहीं जोड़ते। जो कदम आप

१. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४२८-२९ खण्ड ७ पृष्ठ ३५९-६० और ४०६।

२. यह नाम है।

३. देखिए 'जोहानिसवर्गकी चिट्ठी', पृष्ठ ६६।

उठायेंगे वह सभीके लिए है, ऐसा मानकर आनेवाली आफतोंका स्वागत करते हुए मैं उन्हें स्वीकार करूँगा। जो हिम्मतके साथ सत्यपर विश्वास रखकर सत्याग्रहका अवलम्ब लिये रहता है, वह विजयी होता है।

मैं इस सत्याग्रहीको बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि वह अन्ततक अपने आग्रह-पर डटा रहेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-१०-१९०८

४८: तार: द० आ० ब्रि० भा० समितिको

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ३, १९०८

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति[1]
[लन्दन]

अट्ठावन भारतीयोंपर कोमाटीपूर्टमें मुकदमा चलाया गया है। उपनिवेशके बाहरसे नये कानूनके अन्तर्गत अर्जी दिये बिना उपनिवेशमें आनेके कारण नये कानूनके साथ मिलाकर प्रवासी कानून भी लागू। सबके पास शान्ति-रक्षा अनुमतिपत्र,[2] मिलनर पंजीयनपत्र (मिलनर रजिस्ट्रेशन) या अन्य प्रवेश अधिकारपत्र मौजूद। सभी लम्बे अर्सेसे ट्रान्सवालके अधिवासी। भारत यात्रासे अभी-अभी लौटे। दो मासके कारावास या २५ पौंड जुर्मानेकी सजा। अलावा, नामंसूख एशियाई कानूनमें प्रवेशके बाद आठ दिनके भीतर पंजीयनकी अर्जी देनेका अधिकार होनेपर भी निर्वासन-आदेश। सत्रह नाबालिग, औसत उम्र ग्यारह वर्ष, उपर्युक्तके बच्चे रोक दिये गये। समाज क्षुब्ध। पुराने अधिवासियों, उनके बच्चोंके साथ निषिद्ध प्रवासियों-जैसा व्यवहार। बहुत बड़े हित खतरेमें। लोगोंका निर्वासन न होना चाहिए। समाज पुराने कानूनको रद कराने और कठिनतम प्रशासनिक परीक्षाके अन्तर्गत सुसंस्कृत भारतीयोंके प्रवेशकी व्यवस्था करवानेपर दृढ़। अत्यधिक कष्टककी आशंका।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१३२; गवर्नरकी दफ्तरी फाइल: १८/१/१९०८-भाग ३ और १०-१०-१९०८ के 'इंडियन ओपिनियन' से।

१. साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी।
२. पीस प्रिजर्वेशन परमिट।

४९. तार : द० आ० ब्रि० भा० समितिको

जोहानिसवर्ग
अक्तूवर ५, १९०८

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति[1]
लन्दन

भारत-यात्रासे डेलागोआ-वेके रास्ते सपरिवार ट्रान्सवाल लौटते भारतीयोंमें संघके भूतपूर्व अध्यक्षके भाई, पत्नी, वच्चे, ८० वर्षकी लकवेसे वीमार वूढ़ी माँ शामिल। कोमाटीपूर्टमें १७ नावालिग रेलगाड़ीसे उतारे गये। वहाँ ८० स्त्री, पुरुष, वच्चे एक छोटे गन्दे कमरेमें ठूँस दिये गये थे। स्त्री-वच्चे सारी रात सारे दिन खुलेमें रखे गये। सव दो दिन विना भोजन। भूखे स्त्री-वच्चोंको रोजोंके कारण आगे जानेकी अनुमति। शेष काफिरोंके मोटर-ठेलोंमें वारवर्टन भेजे गये। पुलिसने वहाँके भारतीयोंको उन्हें खाना देनेसे रोका। वकील करना पड़ा। नावालिग अव भी कैद। दो रास्ते — स्थानीय लोगोंसे खैरात या जेल। साम्राज्य-सरकारसे वर्वर, अमानुषिक व्यवहार रोकनेके लिए तुरन्त हस्तक्षेपकी प्रार्थना। कुछ जेलोंमें धार्मिक दृष्टिसे अशुद्ध भोजन प्रदान। फलतः आंशिक भुखमरी।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स : २९१/१३२, तथा गवर्नरकी दफ्तरी फाइल : १८/१/१९०८-भाग ३ से।

१. साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन।

५१. सेठ शीघ्र क्यों नहीं छूटते?

बहुत-से भारतीय उपर्युक्त प्रश्न कर रहे हैं। उत्तर यह है कि हमारे सत्याग्रहमें कसर है। सत्याग्रहका संघर्ष त्रैराशिक-जैसा है। गाड़ी जितनी मजबूत हो, उतना ही बोझ हम उसपर लाद सकते हैं। अधिक बोझ लादनेसे गाड़ी टूट भी जा सकती है। सत्याग्रहरूपी गाड़ीके विषयमें भी वैसा ही समझना चाहिए। सेठ लोग समाजके लिए जेल गये हैं। उनके दुःखोंकी गाड़ी अन्य भारतीयोंका सुखरूपी बोझा उठा सकती है, इसमें सन्देह नहीं है। किन्तु यदि उस गाड़ीको आगे बढ़ानेके लिए दूसरे उसकी धुरीमें हाथ लगायें, तो वह तेजीसे चल सकती है। यदि धुरीमें हाथ लगानेवाले लोग न मिलें, तो वह रास्तेमें पड़ी रहेगी। गाड़ी टूट जायेगी, सो बात तो नहीं है, किन्तु मंजिलपर पहुँचनेमें वक्त लगेगा। इसमें सत्याग्रहका कोई दोष नहीं है। जो समय बीतता चला जा रहा है उससे जाहिर होता है कि सत्याग्रह जितना चाहिए उससे कम है; इसलिए गाड़ीकी चाल धीमी है। यदि सत्याग्रहमें भाग लेनेवाले लोग अधिक हो जायें, तो तुरन्त छुटकारा हो सकता है। यह समझना बिलकुल आसान है।

नेटालमें सेठोंको बिदा देनेके लिए सैकड़ों भारतीय गये। उनके पीछे जानेके लिए उनमें से बहुत-से तैयार थे। किन्तु अब जब समय आ पहुँचा है, तब नेटालसे केवल तेरह भारतीय सामने आये हैं। काम करनेके लिए बहुत लोग तैयार थे; किन्तु समय आनेपर वे नजर नहीं आते। हरएक ऐसा सवाल करता मालूम होता है कि मुझे इससे क्या फायदा? किन्तु वे यह बात भूल जाते हैं कि सत्याग्रह दूसरोंके ही लाभके लिए चल सकता है। उसमें अपना लाभ भी शामिल है, यह ध्यान रखनेकी जरूरत नहीं है। नेटालने ऐसा नहीं किया। इसमें नेटालका दोष नहीं है। इससे केवल इतना ही जाहिर होता है कि हमें अभी पूरा अनुभव नहीं है, सहनशक्ति नहीं है, ज्ञान नहीं है। ये सब बातें हमें समय पाकर आयेंगी। तबतक वांछित परिणाम होनेमें समय लगे तो हमें अधीर नहीं होना चाहिए।

इस बीच जो लोग सत्याग्रहको समझते हैं उन्हें उसमें चुस्त रहना चाहिए। अकेला मनुष्य भी सत्याग्रही रह सकता है। और यदि वह ऐसा करे तो कहा जायेगा कि उसने अपने कर्तव्यका पूरा पालन कर लिया। इससे अधिक करनेकी बात ही नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-१०-१९०८

५२. नेटालके कुछ प्रश्न

नेटालके भारतीयोंकी स्थिति हम दिनोंदिन बिगड़ती देख रहे हैं। यहाँकी वर्तमान सरकार एकदम खराब, बिना पेंदीकी और भारतीयोंके सम्बन्धमें लापरवाह है।

व्यापारियोंको परवानों (लाइसेंस) की तकलीफ शुरू होगी।

मुक्त गिरमिटियोंको कर देना पड़ता है, इससे वे पिसे जा रहे हैं।

जो गिरमिटीमें गुलामी भोग रहे हैं, उनके मालिक उनका बुरा हाल कर रहे हैं।

नये जुल्मी कानून बनते जा रहे हैं।

पाठशालाओंको जो धन दिया जाया करता था उससे कम दिया जाने लगा है। चौदह वर्षसे अधिक उम्रवाले बच्चोंको प्रवेश नहीं दिया जाता।

इस सबके लिए क्या उपाय किया जाये? अर्जी दें या नहीं? अर्जीसे फायदा होगा? अगर न हुआ तब क्या किया जाये? सत्याग्रहकी लड़ाई छेड़नेकी बात की जाये, तो सब अलग-अलग लड़ें या साथ-साथ?

इन तमाम सवालोंके जवाब हमें धैर्यपूर्वक खोज निकालने चाहिए। अर्जी तो देनी ही चाहिए, किन्तु उसके पीछे बल चाहिए। वह बल सत्याग्रहसे प्राप्त होता है।

किन्तु सत्याग्रह तो वही व्यक्ति कर सकता है, जिसने सत्यको जान लिया है। यदि हम सत्यको जानकर उसके मुताबिक आचरण करते हों, तो उपर्युक्त दुःख हो ही नहीं सकता। तो प्रश्न यह है कि सत्याग्रहकी लड़ाई कैसे लड़ी जाये। उत्तर यह है कि सत्याग्रहकी लड़ाई लड़नेका अर्थ यह है कि हम धीरे-धीरे सत्य ग्रहण करते रहें। जिस हद तक हम उसे ग्रहण करेंगे, उस हद तक [हमारे] दुःखका नाश होगा।

प्रत्येक विषयपर सत्याग्रह किस प्रकार किया जा सकता है, इसपर बादमें विचार करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-१०-१९०८

५३. कैदियोंकी स्थिति[1]

शनिवार, [अक्तूबर १०, १९०८]

जिस तरह जनवरीमें जोहानिसबर्ग जेल भारतीयोंसे भर गयी थी, उसी तरह इस समय फोक्सरस्ट जेल भी भर गई है। भारतीय उसमें आते ही जा रहे हैं। इस समय जेलमें ३७ भारतीय हैं। इनमें से निम्नलिखित १७ लोग सजा काट रहे हैं:

सर्वश्री दाउद मुहम्मद, पारसी रुस्तमजी, एम० सी० आंगलिया, शापुरजी राँदेरिया, सोरावजी शापुरजी, आजम सेदू पटेल — इनमेंसे हरएककी तीन-तीन महीनेकी सजा हुई है। सर्वश्री काजी कालामियाँ दादामियाँ, उमर उस्मान, मूलजी उका मायावसो, इब्राहीम हुसेन, इस्माइल ईसप, वली आमदजी राँदेरवाला, मोहनलाल परमानन्ददास कीलावाला, हरिशंकर ईश्वर जोशी, मोहनलाल नरभेराम गोशलिया, सुरेन्द्रराय वापुभाई मेढ और उमियाशंकर मंछाराम शेलत — इनमेंसे हरएक छः-छः हफ्तेकी सजा काट रहे हैं।

नीचेके १९ लोगोंपर मुकदमे चलनेको हैं। जमानतपर छूट आनेके बजाय वे हवालातमें पड़े [वहाँकी] हवा खा रहे हैं।

सर्वश्री मावजी, करसनजी कोठारी, रतनशी मूलजी सोढा, खत्री दामोदर दुलभ गणदेवी, खत्री डाह्या नरसी, झीणाभाई वल्लभभाई उगी, भीखाभाई कल्याणजी उगी, लालभाई नथुभाई, वसनजी लालभाई, मूनसामी इलेरी, मूलजी रतनजी, हीरा मूलजी, राघवजी रघुनाथ मेहता, रविकृष्ण तालेवंतसिंह, दावजी अहमद, करसन जोगी, लक्ष्मण वर्ताचलन, मोरार मकन, पकीरी नायडू और मो० क० गांधी।

इनमेंसे श्री मावजी करसनजी कोठारी आज ही जमानतपर छूटकर सबकी अनुमतिसे शहर गये हैं। उद्देश्य यह है कि डर्बनसे आनेवाली गाड़ीपर ध्यान रखा जाये। ऐसा लगता है कि चार्ल्सटाउनमें तीन मद्रासियोंने कानूनकी शरणमें जानेका प्रार्थनापत्र दिया है। ऐसे लोगोंको ठीक-ठीक जानकारी देनेकी आवश्यकता होनेके कारण श्री मावजीसे जमानत दिलाना निश्चित हुआ। उनके जेल जानेके बाद कोई दूसरा प्रबन्ध करना पड़ेगा।

रमजान शरीफ

सभी मुसलमान कैदी विधिपूर्वक रमजान रखते हैं। उनके लिए श्री काजी विशेष रूपसे भोजन बनाकर लाते हैं। गवर्नरने यह भोजन लानेकी खास इजाजत दे दी है। इसके सिवाय उन्हें कमरेमें घड़ी रखने और लालटेन जलानेकी इजाजत भी मिली हुई है। सब नियमित रूपसे नमाज पढ़ते हैं और चैनसे रहते हैं।

१. यह फोक्सरस्ट जेलसे लिखा गया जान पड़ता है। गांधीजी ७ अक्तूबरको गिरफ्तार होनेके बाद वहीं अपना मुकदमा चलनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। यह फोक्सरस्ट-स्थित "विशेष संवाददाता द्वारा प्रेषित" रूपमें प्रकाशित हुआ था।

जेलमें काम

रोजा रखनेवालों और उसी तरह अन्य भारतीय कैदियोंको फिलहाल बहुत थोड़ा काम दिया जाता है। श्री शेलत तथा श्री मेढ रसोईमें व्यस्त रहते हैं। बाकी लोग कमरे साफ करनेका अथवा ऐसा ही कोई फुटकर काम करते हैं। इन कामोंमें किसी प्रकारकी मेहनत अथवा तकलीफ महसूस नहीं होती। यदि कोई बीमार दीख पड़ता है, तो उसे कामसे बिलकुल मुक्त कर दिया जाता है। जेलर आदि सभी अधिकारी ठीक बरताव करते हैं। टोपी उतारनेके बदले सलाम करनेसे काम चल जाता है। वैसे यह तुच्छ बात है। अंग्रेजी ढंगकी टोपी लगानेवाले टोपी उतारनेको ज्यादा सुविधाजनक मानते हैं। फिर भी इस विषयमें अधिकारी परेशान नहीं करते, यह बतानेके लिए उक्त खबर दे रहा हूँ। पारसियोंको अपना विशेष कुरता और जनेऊ (सदरा और कस्ती) पहनने और अपने ही ढंगकी टोपी लगानेकी इजाजत मिल गई है।

जेलमें खुराक

खुराकमें सवेरे पूपू, दोपहरको पर्याप्त चावल और हरी सब्जी (जैसे करमकल्ला आदि) और शामको काफी चावल और सेम मिलते हैं। भोजन अपने ही हाथका बना होनेके कारण खाने योग्य होता है। पूपूसे होनेवाली मुश्किलका जिक्र छोड़ दें, तो भोजनमें केवल घी-सम्बन्धी कमी ही कही जा सकती है। यहाँकी जेलके नियमोंके अनुसार घी अथवा चर्बी, कुछ भी भारतीय कैदीको नहीं मिल सकता। इसलिए डॉक्टरसे शिकायत की गई है और डॉक्टरने इस विषयमें जाँच करनेके लिए कहा है। अतः आशा की जा सकती है कि घी दिये जानेका हुक्म हो जायेगा। थोड़ा-बहुत पूपू प्रायः सभी कैदी खा लेते हैं।

उपवास

केवल श्री रतनजी सोढा कुछ भी नहीं खाते हैं। वे और उनके साथी भारतीय बुधवारको दाखिल हुए थे। बुधवारको उन्होंने रेलगाड़ीमें खाया था; उसके बाद कुछ भी नहीं खाया है। उन्होंने केवल थोड़ी मूँगफली एक दिन खाई थी। वे यह उपवास अपनी इच्छासे कर रहे हैं। फिलहाल इसे कुछ और समय तक चलाते रहनेका इरादा रखते हैं। वे इसका कारण यह नहीं कहते कि उन्हें यहाँकी खुराक नापसन्द है; बल्कि उपवास कबतक किया जा सकता है, इसे जाननेके लिए प्रयोग कर रहे हैं।

जेलकी बनावट

जेलमें भारतीय ऐसे आरामसे रहते हैं कि उसे महल ही माना जा सकता है। जेलकी बनावट भी बहुत अच्छी है। इमारत पत्थरकी बनी हुई है। कोठरियाँ बड़ी-बड़ी हैं। हवा और प्रकाशकी ठीक सुविधा है। बीचमें चौक है, जिसमें काले पत्थरका फर्श है। नहानेके लिए तीन फव्वारे हैं, जिनमें से पानी खूब निकलता है। उनके नीचे मजेका स्नान किया जा सकता है। जिनके मुकदमे चले नहीं हैं, उन्हें रोटी और चीनी भी मिलती है। चौकपर काँटेदार तारोंकी जाली है। बन्दोबस्त होते हुए भी दो हबशी [एक बार] टीनका छप्पर तोड़कर भाग गये। इसलिए अब लोहेकी मजबूत छत बना दी गई है।

देश-निकाला हुआ

श्री झीणाभाई वल्लभभाई, श्री भीखा कल्याण तथा मुहम्मद हुसेनको देश-निकालेका हुक्म हुआ है। कल शुक्रवारको उन्हें निष्कासित किया गया। इसके पहले उन्हें तेरह दिन तक जेलमें व्यर्थ ही रखा गया। इनमें से श्री झीणाभाई तथा श्री भीखाभाई सीमाके उस पार पहुँचाये जानेके तुरन्त बाद वापस आ गये। कलकी रात उन्होंने फोक्सरस्टमें पुलिस स्टेशनपर बिताई। आज यहाँ उनका स्वागत किया गया। श्री मुहम्मद हुसेन कोंकणी डर गये और चार्ल्सटाउनमें ही रह गये।

सोराबजी तथा आजम

उक्त दोनों सज्जन लम्बी कैद भोगकर तप गये हैं। उन्हें आज तीन बजे सीमासे निष्कासित किया गया। इसका हेतु जरा भी समझमें नहीं आता। जो हो, वे जाते ही तुरन्त वापस आ जायेंगे, इसलिए ऐसा होकर रह जायेगा मानो सरकारने दिल्लगी की है।

रविवार, [अक्तूबर ११, १९०८]

भारतके उक्त दोनों बहादुर सिपाही, जो अनेक संघर्षोंमें जूझ चुके हैं, सीमाके उस पार जानेके तुरन्त बाद वापस आ गये। सीमाके उस पार होनेके बाद तुरन्त ही एक पल खोये बिना वे ट्रान्सवालकी सीमामें कूद पड़े और जो भाई साहब सीमा पार करानेके लिए गये थे, उन्हींके हाथ गिरफ्तार हो गये तथा फिर किंग एडवर्ड होटलमें दाखिल हो गये। चार्ल्सटाउनके सारे भारतीय उनसे मिलनेके लिए निकल पड़े थे। उन्हें निराश होना पड़ा। उन्हें उनकी मेहमानी करनेका अवसर तक प्राप्त न हो सका। जो बेचारा चीनी श्री सोराबजी तथा श्री आजमजीके साथ सीमाके पार कर दिया गया था, उसे चार्ल्सटाउनका अधिकारी खींचकर ले गया। इससे जाहिर होता है कि भारतीयोंका सम्मान बढ़ गया है। गोरोंको उनसे कुछ भय लगने लगा है। अदालत उक्त चीनीका कुछ नहीं कर सकती और प्रवासी अधिकारी (इमिग्रेशन ऑफिसर) भी उसे रोक नहीं सकते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-१०-१९०८

ऑलिवर गांधी : "मेहरबान, थोड़ा और दें।"

Resident
The Magistrate

11-10-1908 Volksrust
Sr. 4897 L.4.10

The petition of the undersigned ~~Indian~~ prisoners at His Majesty's Gaol at Volksrust

Humbly sheweth that

Your petitioners are prisoners at His Majesty's Gaol at Volksrust either serving imprisonment or awaiting trial.

Your petitioners are British Indians

Your petitioners find on perusing the diet scale for British Indians that no fat is at all supplied with their food. The scale ~~The~~ consists merely of mealie pap, vegetables and rice for convicted prisoners bread being added to the

प्रार्थनापत्र : रेजिडेंट मजिस्ट्रेटको

(देखिए पृष्ठ ९७)

५४. प्रार्थनापत्र : रेजिडेन्ट मजिस्ट्रेटको[1]

फोक्सरस्ट जेल
अक्तूबर ११, १९०८

आवासी मजिस्ट्रेट[2]
फोक्सरस्ट

नीचे हस्ताक्षर करनेवाले फोक्सरस्ट जेलके
बन्दियोंका प्रार्थनापत्र

सविनय निवेदन है कि :

आपके प्रार्थी सम्राट्की फोक्सरस्ट-स्थित जेलके बन्दी हैं और या तो सजा काट रहे हैं या उनपर मुकदमा चलनेवाला है।

आपके प्रार्थी ब्रिटिश भारतीय हैं।

ब्रिटिश भारतीयोंके लिए निश्चित आहार-तालिकाका अवलोकन करनेपर आपके प्रार्थियोंको मालूम हुआ कि उन्हें खानेके साथ चिकनाई बिलकुल नहीं दी जाती।

सजायाफ्ता कैदियोंकी आहार-तालिकामें केवल मकईका दलिया, सब्जियाँ तथा चावल होता है। मुकदमेकी प्रतीक्षा करनेवाले बन्दियोंके आहारमें रोटी और जोड़ दी जाती है।

आपके प्रार्थी देखते हैं कि वतनियोंको नियमित रूपसे चर्बी दी जाती है और यूरोपीयोंको मांस दिया जाता है, जिसमें चर्बी पर्याप्त मात्रामें होती है।[3]

आपके प्रार्थियोंके नम्र विचारके अनुसार जो आहार ब्रिटिश भारतीय बन्दियोंको दिया जाता है वह स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अपूर्ण है, क्योंकि भारतीय आहारमें चिकनाईका अभाव रहा करता है।

इसके अलावा आपके प्रार्थी धार्मिक-कारणोंसे सामिष भोजन अथवा मांससे प्राप्त स्निग्ध पदार्थ[4] खानेमें असमर्थ हैं; इसलिए जिस दिन मांसकी बारी होती है उस दिन वे मांस या उसकी जगह लेने योग्य आहारके बिना ही रह जाते हैं।[5]

१. गांधीजीने आरम्भमें यह प्रार्थनापत्र अपने हाथसे लिखा और फिर, जैसा कि स्पष्ट है, कुछ सुधार करते हुए लिखाया था, जो बादमें स्वीकार किया गया। परन्तु यह दूसरा मसविदा भी भेजनेके पूर्व संशोधित किया गया था।

२. रेजिडेंट मजिस्ट्रेट।

३. पहले मसविदेमें यहाँ ये शब्द थे: "आपके प्रार्थी देखते हैं कि यूरोपीयों और वतनियोंको नियमित रूपसे चर्बी दी जाती है।"

४. पहले मसविदेमें "अथवा मांससे प्राप्त स्निग्ध पदार्थ" — ये शब्द नहीं थे।

५. पहले दो मसविदोंमें यहाँ नीचेके अनुच्छेद थे, किन्तु अन्तिम मसविदेमें उन्हें छोड़ दिया गया था:
"आपके मुसलमान प्रार्थियोंको, रमजानका महीना होनेके कारण, गत कुछ दिनोंसे बाहरसे भोजन लेनेकी कृपापूर्वक अनुमति दे दी गई है।
"उक्त अनुमतिके परिणामस्वरूप चर्बी तथा मांसकी जगह ले सकनेवाले आहारके अभावसे उत्पन्न कठिनाई थोड़े-से लोगों तक ही सीमित रह गई है।
"किन्तु अब अन्य अनेक बन्दियोंके आ जानेसे कठिनाई बढ़ गई है।"

आपके प्रार्थियोंने उपर्युक्त कमीके बारेमें कई बार शिकायत की है; किन्तु बड़ी संख्यामें अन्य भारतीयोंके आ जानेके कारण कठिनाई बढ़ गई है।[1]

इसलिए आपके प्रार्थी निवेदन करते हैं कि

(१) सामान्य भारतीय आहार-तालिकामें घी शामिल किया जाये।

(२) जिन दिनों मांसकी बारी होती है उन दिनों मांसकी जगह कोई शाकाहार — जैसे, दाल या हरी सब्जियाँ — देनेका आदेश दिया जाये।

आपके प्रार्थी एक और प्रार्थना करते हैं कि यदि जेल-निदेशक (डायरेक्टर ऑफ प्रिज़न्स)-की अनुमति आवश्यक मानी जाये तो माँगी गई राहतके लिए इस पत्रका विवरण [उन्हें] तार या टेलीफोन द्वारा भेज दिया जाये।

इस न्यायके लिए आदि, आदि,

दाउद मुहम्मद
पारसी रुस्तमजी
एम० सी० आंगलिया
मो० क० गांधी
और ३३ अन्य[2]

हस्तलिखित मूल दफ्तरी अंग्रेजी प्रति की फोटो-नकल (एस० एन० ४८९३) से।

५५. सन्देश: सत्याग्रहियों और दूसरे भारतीयोंको[3]

[फोक्सरस्ट जेल
अक्तूबर १३, १९०८]

जेलकी सजा होनेके बाद सजाकी अवधितक मुझे 'इंडियन ओपिनियन' में लिखनेका लाभ नहीं मिलेगा, इसलिए सत्याग्रहियों और अन्य भारतीयोंसे दो शब्द कहनेकी अनुमति चाहता हूँ।

जेलमें रहनेवालोंकी अपेक्षा बाहर रहनेवालोंकी जिम्मेदारियाँ अधिक हैं। सच्चा कष्ट तो उन्हें उठाना है जो बाहर रहकर सच्ची सेवा करना चाहते हैं। जेलमें कष्ट है, यह बात अधिकांशतः एक भ्रम है। यहाँ तो मैं सब लोगोंको दिन-भर आमोद-प्रमोद करते देखता हूँ। कभी-कभी बुरे अधिकारी कष्ट देते हैं, किन्तु उसका उपाय तुरन्त हो सकता है। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि देशके लिए जेल आनेमें कोई भारतीय पीछे नहीं हटेगा।

सत्याग्रह सरल भी है और कठिन भी। सत्यका ही आग्रह रखनेसे सारे दुःख दूर हो सकते हैं, अब यह बात सबको समझमें आसानीसे आ जानी चाहिए। सत्यका पालन — दुःख दूर करने

१. यह अनुच्छेद पहले मसविदेमें नहीं था; संशोधन करते समय दूसरेमें जोड़ा गया था।

२. हस्ताक्षर करनेवाले ३७ व्यक्तियोंमें से २१ ने अंग्रेजीमें, १० ने गुजरातीमें, और एकने तमिलमें हस्ताक्षर किये थे; बाकी पाँचने अँगूठोंके निशान लगाये थे।

३. यह संदेश गांधीजीने १३ अक्तूबरको अपने मुकदमेकी सुनवाईके एक दिन पहले फोक्सरस्टसे भेजा था।

लिए दुःख सहना — कठिन लगता है। फिर भी ज्यों-ज्यों विचार करता हूँ, त्यों-त्यों सिवा सत्याग्रहके कोई दूसरा उपाय अपने अथवा किसी दूसरेके दुःखोंके [निवारणके] लिए सूझ नहीं पड़ता। मुझे तो ऐसा भी लगता है कि उसके सिवाय कोई सच्चा इलाज दुनियामें है ही नहीं। ऐसा हो या न हो, किन्तु हम तो अब यह समझने लगे हैं कि सत्याग्रहसे विजय पाना [ज्यादा] ठीक रास्ता है। यदि बात ऐसी हो तो मैं आशा करता हूँ कि जो-कुछ शुरू किया है उसे सारे भारतीय लगनके साथ पूरा करेंगे और हम फिरसे "आरम्भशूर"[1] की उपाधि पा जायेंगे।

जो-जो राष्ट्र ऊँचे उठे हैं, उन्होंने पहले कष्ट सहन किये हैं, यह बार-बार स्मरण रखना चाहिए। यदि हम ऊँचे उठना चाहते हों, तो हमारे लिए भी यही उपाय है।

हमें सोचना चाहिए कि नेटाल उद्योगपतियोंको जेल भेजकर हम सबने अपने सिरपर कितनी बड़ी जिम्मेदारी ले ली है। उनका अनुसरण करते हुए अपना सर्वस्व अर्पित कर देना बहुत बड़ी बात नहीं है। वे जेल अपने स्वार्थके लिए नहीं गये हैं।

जो भारतीय जेल जाते हैं उन्हें समझना चाहिए कि इससे उन्हें कोई व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं साधना है। यह ध्यानमें रखना चाहिए कि जेल जानेपर भी शायद वे ट्रान्सवालमें न रह सकें। सभीको कुछ बलिदान करके समाजके लाभ, सम्मान और नामकी रक्षा करनी है।

इस संघर्षमें हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई, बंगाली, मद्रासी, गुजराती, पंजाबी—इस प्रकारके भेद नहीं हैं। हम सभी भारतीय हैं और भारतके लिए लड़ रहे हैं। जो ऐसा नहीं समझता, वह देशका सेवक नहीं, शत्रु है?

मैं हूँ सत्याग्रही,
मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, १७–१०–१९०८

५६. तुलसीकृत 'रामायण' का सार[2]

[अक्तूबर १४, १९०८ के पूर्व]

आजकल भारतीय प्रजाके पुत्र विदेश-यात्रा बहुत करते हैं। विदेशमें अपने धर्मका खयाल रखना सबके लिए कठिन होता है। परन्तु, हिन्दुओंके लिए तो और भी कठिन है। लेखकका मत है कि साधारण हिन्दू धर्मका रहस्य जानना केवल सब हिन्दुओंका ही नहीं, सारे भारतीयोंका काम है।

साधारण हिन्दू धर्म सबको मान्य होने लायक है। उसका रहस्य नीतिमें समाया हुआ है। इस दृष्टिसे कहा जा सकता है कि सभी धर्म सच्चे और समान हैं, क्योंकि नीतिसे अलग कोई धर्म हो ही नहीं सकता।

१. जान पड़ता है मूलमें 'नहीं' शब्द प्रेसकी भूलसे छूट गया है जिसके बिना 'आरम्भशूर' शब्दका प्रयोग यहाँ ठीक नहीं बैठता।

२. यह **इंडियन ओपिनियन**के विज्ञापन-स्तम्भमें प्रकाशित हुआ था। इसका मसविदा गांधीजीका तैयार किया जान पड़ता है। स्पष्टतः, यह और आगेके दो लेख गांधीजीने १४ अक्तूबरसे पहले ही लिख लिये होंगे, क्योंकि उसी दिन उनपर मुकदमा चलाया गया और उन्हें दो महीनेकी सजा दी गई।

बात जो भी हो, साधारण हिन्दू धर्मका रूप रामायणमें हूबहू देखा जा सकता है। मूल 'रामायण' संस्कृतमें है। उसे थोड़े ही लोग पढ़ते हैं। उसका अनुवाद दुनियाकी बहुत-सी भाषाओंमें हुआ है। यह रचना भारतकी सभी प्राकृत भाषाओंमें भी उपलब्ध है। इन सभी अनुवादोंको परखें तो तुलसीदासजीकृत हिन्दी 'रामायण' के सामने कोई अनुवाद टिकने योग्य नहीं है। सच पूछा जाये तो तुलसीदासजीकी भक्ति ऐसी अनन्य थी कि उन्होंने अनुवाद करनेके बदले उसमें अपने ही भावोंको गाया है; मद्रासके अलावा भारतका ऐसा एक भी हिस्सा नहीं है, जहाँ तुलसीदासजी की 'रामायण' से कोई हिन्दू सर्वथा अनजान निकले। ऐसी 'रामायण' भी विदेशोंमें और स्वदेशमें भी सभी लोग पूरी नहीं पढ़ते। पढ़नेका अवकाश नहीं मिलता। ऐसी पुस्तकें संक्षिप्त रूपमें प्रकाशित की जायें तो भारतीयोंके लिए बड़ी कल्याणकारी हों। इसी उद्देश्यसे हमने पुस्तकको संक्षेपमें प्रकाशित करनेका इरादा किया। उसका पहला काण्ड हम तुरन्त ही जनताकी सेवामें पेश कर रहे हैं। हमारा उद्देश्य यह नहीं है कि यह संस्करण मूल 'रामायण' के बदलेमें काम आये। हम चाहते हैं कि सार पढ़ लेनेपर, जिन्हें अवकाश हो और जो भक्ति-रसमें भीने हो गये हों, वे मूल भी पढ़ें। इस सारांशमें कथाका मुख्य भाग तोड़ा नहीं गया है। लेकिन क्षेपक, लम्बे वर्णन और पेटेकी कुछ बातें छोड़ दी गई हैं।

हम चाहते हैं कि जो सारांश जनताकी सेवामें पेश किया जा रहा है, उसे हर भारतीय पढ़े, उसका मनन करे और जिस नैतिकताका चित्रण इसमें सजीवतासे किया गया है, उसे ग्रहण करे। यदि रातको तथा अवकाश की दूसरी घड़ियोंमें भारतीय घर-घरमें 'रामायण' का पाठ करें तो हम अपना प्रयत्न सफल मानेंगे।

दूसरे काण्ड जैसे-जैसे छपते जायेंगे, वैसे-वैसे हम प्रकाशित करते जायेंगे। अन्तमें उन सभीको एक साथ बँधवाया जा सकता है। मूल्य सोच-विचार कर जहाँतक हो सका है, कम रखा गया है, ताकि पुस्तक सभी भारतीय खरीद सकें।

हिन्दी लिपि और भाषा जानना हर भारतीयका फर्ज है। उस भाषाका स्वरूप जाननेके लिए 'रामायण'-जैसी दूसरी पुस्तक शायद ही मिलेगी।

मूल्य: १ शिलिंग। डाकखर्च: १ पेनी।
इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स, नेटाल

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-१०-१९०८

५७. संघर्ष

[अक्तूबर १४, १९०८ के पूर्व]

जान पड़ता है, संघर्ष अब किनारे लगता जा रहा है, क्योंकि सरकारने अधिक जुल्म ढाना शुरू कर दिया है। श्री सोराबजी तथा श्री आजमका बाहर निकाला जाना, उनका तुरन्त वापस आना, उनको तुरन्त ही सजा होना, बारबर्टनके ५८ भारतीयोंका जेल भेजा जाना, उन्हें देश-निकाला देना — इस सबसे मालूम होता है कि सरकारको जो जोर आजमाना है, उसका अन्त आता जा रहा है। उसका खजाना खुटनेपर आ गया है। वह अपना सारा गोला-बारूद खर्च किये डाल रही है। परन्तु यह याद रखना चाहिए कि अन्तका समय बड़ा कठिन होता है। सब कष्ट झेले जा सकते हैं, परन्तु अन्तके कष्ट [धैर्यपूर्वक] झेलनेवाले विरले ही होते हैं। इसलिए हम आशा करते हैं कि भारतीय अन्तके कष्टोंसे नहीं डरेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–१०–१९०८

५८. कुछ भारतीयोंको

[अक्तूबर १४, १९०८ के पूर्व]

ट्रान्सवाल, नेटाल तथा दक्षिण आफ्रिकाके कुछ अन्य भागोंमें भी कुछ भारतीयोंको शराबकी गहरी लत लग गई है। यह धर्म-विरुद्ध तो है ही, शरीर और मनको भी कमजोर करती है। जिन्हें यह कुटेव लग गई है उनके लिए सत्याग्रह संघर्षमें भाग लेना मुश्किल है। हमारा उद्देश्य शराबसे होनेवाली हानिके विषयमें लिखना नहीं है। वह तो बहुत लिखा जा चुका है। हम इतना ही कहना चाहते हैं कि जिन्हें यह कुटेव हो, उन्हें कोशिश करके इसे छोड़ देना चाहिए। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो यह व्यर्थ कष्ट देगी और अनेक बार चाहकर भी वे अच्छे कामोंमें हाथ नहीं बँटा सकेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–१०–१९०८

५९. पत्र : जे० जे० डोकको

[फोक्सरस्ट]
बुधवार, [अक्तूबर १४, १९०८]

प्रिय श्री डोक,

मैं आपको यह पत्र अदालतसे लिख रहा हूँ। मुझे आशा थी कि अपना फैसला होनेसे पहले मैं आपको कुछ[1] भेज सकूँगा। किन्तु मैं दूसरे कामोंमें बहुत व्यस्त रहा हूँ। शुभ-कामनाओंके लिए आपको बहुत-बहुत धन्यवाद। मेरा विश्वास केवल ईश्वरपर है। इसलिए मैं बिल्कुल प्रसन्न हूँ।[2]

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० ४०९२) से।
सौजन्य : सी० एम० डोक।

६०. सन्देश : भारतीय तरुणोंके नाम[3]

[फोक्सरस्ट
अक्तूबर १४, १९०८][4]

मैं नहीं जानता कि जिनसे मेरा व्यक्तिगत सम्पर्क कभी नहीं हुआ उन लोगोंके नाम सन्देश भेजनेका मुझे कोई अधिकार है या नहीं; लेकिन लोगोंकी यही इच्छा थी और मैंने उसे मान लिया है। तो, मेरे विचार ये हैं :

१. डोक अपनी पुस्तक—**मो० क० गांधी : दक्षिण आफ्रिकामें एक भारतीय देशभक्त (एम० के० गांधी : ऐन इंडियन पेट्रिअट इन साउथ आफ्रिका)** के लिए सामग्री एकत्र कर रहे थे। इसलिए उन्होंने स्पष्ट ही गांधीजीके ८ तारीखके पत्रके उत्तरमें उन्हें ९ अक्तूबरको लिखा था, "यदि आप मुझे स्पिअन कॉपके युद्धसे आगेकी सामग्री दें तो मैं आपका आभारी हूँगा। 'कड़ी मशक्कत' से बाकी बचे वक्तमें आप प्रयत्न करें और आपको जो-कुछ याद आ सके उसे क्रमशः लिख लें। यदि आप इन थोड़े-से मोहलतके दिनोंमें भी यह कर सकें तो बहुत बड़ा काम होगा।" देखिए परिशिष्ट ६।

२. अपनी पुस्तक (पृष्ठ १५०) में डोकने अन्तिम दो वाक्य उद्धृत किये हैं और कहा है कि ये वाक्य १४ अक्तूबर १९०८ को गांधीजीके मुकदमेकी पेशीसे कुछ पहले लिखे गये थे।

३. श्री डोकने अपनी पुस्तक—**मो० क० गांधी : दक्षिण आफ्रिकामें एक भारतीय देशभक्त (एम० के० गांधी : ऐन इंडियन पेट्रिअट इन साउथ आफ्रिका)** के २० वें अध्यायमें इसे उद्धृत करते हुए लिखा है कि मैंने गांधीजीसे इस पुस्तकके लिए स्वदेशमें रहनेवाले भारतीयोंके नाम एक सन्देश लिख भेजनेका अनुरोध किया था और वह मुझे मिल भी गया।

४. श्री डोककी पुस्तकमें इस सन्देशकी तिथि "अक्तूबर, १९०८" रखी गई है। हो सकता है कि यह १४ अक्तूबरको, जिस दिन गांधीजीको सजा सुनाई गई थी, लिखा गया हो।

ट्रान्सवालमें चलनेवाले संघर्षसे भारतको कोई मतलब ही न हो, ऐसी बात नहीं है। हम ऐसे व्यक्तियोंके निर्माणमें लगे हैं जो संसारके प्रत्येक भागमें अपने आपको सुयोग्य सिद्ध कर सकें। हम अपने संघर्षमें यह मानकर चल रहे हैं कि :

(१) शारीरिक प्रतिरोधके मुकाबले अनाक्रामक प्रतिरोध हर हालतमें बेहद अच्छा है।

(२) यूरोपीयों और भारतीयोंके बीच कहीं कोई प्राकृतिक दीवार नहीं है।

(३) ब्रिटिश शासकोंका भारतमें कुछ भी मंशा क्यों न रहा हो, ब्रिटेनकी आम जनता यही चाहती है कि उसके साथ न्याय किया जाये। ब्रिटेन और भारतकी जनताके सम्बन्धोंको तोड़ना अनिष्टकारी होगा। यदि हमें भारतमें या कहीं और स्वाधीन व्यक्तियों-जैसा बरताव मिलता है या हम ऐसा बरताव पानेके अपने अधिकारका आग्रह करते हैं, तो केवल ब्रिटेन और भारतकी जनताके बीच ही परस्पर लाभकारी सम्बन्ध नहीं बनते, बल्कि उससे संसारका भी धार्मिक, और इसीलिए सामाजिक तथा राजनीतिक, रूपसे भी बड़ा भला होगा। मेरी अपनी राय है कि सभी राष्ट्र एक-दूसरेके पूरक होते हैं।

ट्रान्सवालमें चलनेवाले संघर्षके लिए अनाक्रामक प्रतिरोधका तरीका अपनाना मैं इनमें से प्रत्येक विचारके आधारपर उचित मानता हूँ। मुमकिन है, यह औषधि देरसे काम करती हो, पर मैं इसे उन मुसीबतोंके लिए ही नहीं, जिनका हमें ट्रान्सवालमें सामना करना पड़ रहा है, बल्कि भारतीय जनताको पीड़ित करनेवाली राजनीतिक और सभी प्रकारकी अन्य बीमारियोंके लिए भी रामबाण मानता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

'एम० के० गांधी : ऐन इंडियन पेट्रियट इन साउथ आफ्रिका'

६१. दावजी आमोद और दूसरोंका मुक़दमा[1]

[फोक्सरस्ट
अक्तूबर १४, १९०८]

गत बुधवारको सहायक आवासी मजिस्ट्रेट (असिस्टेंट रेजिडेंट मजिस्ट्रेट) श्री डी' विलियर्सकी अदालतमें दावजी आमोदका मामला पेश हुआ। सरकारकी तरफसे मुकदमेकी पैरवी श्री मेंज कर रहे थे। आरोप यह था कि दावजी आमोद निषिद्ध प्रवासी हैं और उन्होंने नये पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) कानून (१९०८ सं० ३६) के अनुसार उपनिवेशके बाहरसे पहले अर्जी दिये बिना प्रवेश किया है। श्री गांधीने अभियुक्तकी तरफसे बचाव करते हुए कहा कि वह निरपराध है। अभियुक्त उपनिवेशमें पहले आया था। उसके पास अनुमतिपत्र (परमिट) और पंजीयन प्रमाणपत्र भी था। फिर भी उसे गिरफ्तार कर लिया गया। इसके बाद उसने उपनिवेश छोड़ देनेका और नये कानूनके अनुसार पंजीयनके लिए नेटालसे अर्जी देनेका वादा किया था, परन्तु जब कॉरपोरल कैमरॉनने उसे

१. यह गांधीजीके मुक़दमेके विवरणके साथ "फिर फोक्सरस्ट—श्री गांधीको सजा" शीर्षकसे "इंडियन ओपिनियनके लिए विशेष" रूपमें प्रकाशित हुआ था। गांधीजीके मुक़दमेके लिए देखिए अगला शीर्षक।

अर्जीका नमूना बताया, तब उसने उपनिवेशके बाहर जानेसे इनकार कर दिया और इसपर वह पुनः गिरफ्तार कर लिया गया।

जिरहके बीच कॉरपोरल कैसरॉनने स्वीकार किया कि अभियुक्तपर प्रवासी कानूनके खण्ड २ के उपखण्ड ३, ५, ६, ७ और ८ लागू नहीं होते और न उसको उपनिवेशके बाहर निकाल देनेके विषयमें कोई हुक्म है। यह माननेके लिए भी कोई कारण नहीं है कि अभियुक्तने जो दस्तावेज पेश किये हैं, वे कानूनके अनुसार उसके नहीं हैं।

श्री गांधीने कहा कि अभियुक्तको अधिकार है कि वह १९०७ के एशियाई कानून २के अनुसार, जो रद नहीं किया गया है, उपनिवेशमें आ सकता है। और चूंकि उसने अपना अनुमतिपत्र (परमिट) बता दिया है इसलिए वह निषिद्ध प्रवासी भी नहीं माना जा सकता। प्रवासी कानूनके खण्ड ४ के उपखण्डके मातहत भी उसने कोई अपराध नहीं किया है।

मजिस्ट्रेटने अभियुक्तको दोषी करार दिया, किन्तु कहा कि उसपर उपनिवेश छोड़कर न जानेके लिए प्रभाव डाला गया है। उसे १५ पौंड जुर्माने अथवा एक महीना कठोर कारावासकी सजा सुना दी गई।

करसन जोगी और अन्य आठ व्यक्तियोंपर भी, जिनमें दो नाबालिग थे, यही आरोप लगाया गया और हीरजी मूलजीको छोड़कर उन्हें भी यही सजाएँ दी गईं। हीरजी मूलजी एक बारह वर्षका लड़का है। उसे पाँच पौंड जुरमाने या चौदह दिनकी सादी कैदकी सजा सुनाई गई।

रतनजी सोढा, मावजी करसनजी, रविकृष्ण तलेवंतसिंह और रतनजी रघुनाथपर भी निषिद्ध प्रवासी होनेका अभियोग लगाया गया। अभियुक्तोंने अपनेको निरपराध बताया। पहले तीनने कहा कि उन्हें शैक्षणिक कसौटीके अनुसार उपनिवेशमें प्रवेशका अधिकार है। और पहले दो तथा रतनजी रघुनाथने कहा कि वे लड़ाईसे पहले ट्रान्सवालमें रहते थे। मावजी करसनजीने कहा कि वे सम्राट्की स्वयंसेवक सेनाके भूतपूर्व सदस्य हैं, और उन्होंने गत बोअर युद्धमें जो सेवाएँ कीं उनके लिए उन्हें एक पदक भी दिया गया था, तथा इस हैसियतसे भी उन्हें प्रवेशका अधिकार है। रविकृष्णका जन्म ही दक्षिण आफ्रिकामें हुआ था।

अभियुक्तोंकी तरफसे गवाही देते हुए श्री गांधीने कहा कि अभियुक्तोंको उपनिवेशमें आनेकी सलाह देनेकी सारी जिम्मेवारी उनकी है। अधिकांशमें अभियुक्त उन्हींकी सलाहसे प्रभावित हुए हैं, यद्यपि उन्होंने निःसन्देह अपनी स्वतन्त्र बुद्धिसे भी काम लिया है। [श्री गांधीने यह भी कहा कि] उन्होंने अभियुक्तोंको जो यह सलाह दी, उसमें राज्यके सबसे बड़े हितोंका पूरी तरहसे विचार कर लिया था।

जिरहमें श्री गांधीने स्वीकार किया कि उन्होंने अभियुक्तोंको एक सार्वजनिक सभामें और अलग-अलग भी ['उपनिवेशमें'] प्रवेश करनेके लिए कहा था। उस समय शायद एकके सिवा अन्य अभियुक्तोंके मनमें उपनिवेशमें प्रवेश करनेकी बात नहीं आई थी। निःसन्देह, उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि उन्होंने अभियुक्तोंको प्रवेश करनेमें मदद दी, ट्रान्सवालमें

प्रवेश करनेके लिए उन्हें प्रोत्साहित किया और सहायता भी दी। और हमेशाकी भाँति इस वार भी वे अपने इस कार्यके परिणामोंको भोगनेके लिए तैयार हैं।

अभियुक्त दोषी पाये गये और उन्हें बीस पौंड जुर्माने या छः हफ्तेकी कठिन कारावासकी सजा सुना दी गई।

इसके बाद दया नरसीका मामला पेश हुआ। उनपर नये पंजीयन अधिनियम (रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) के मातहत अँगूठेकी छाप देनसे इनकार करनेका आरोप था, यद्यपि उन्होंने अपना अनुमतिपत्र (परमिट) पेश कर दिया था। उन्होंने (जेलके नियमोंके अनुसार) अपनी अँगुलियोंकी छाप जेलमें दे दी थी, जहाँ कि वह अपने मामलेकी सुनवाईकी राह एक हफ्तेसे देख रहे थे। उन्हें दस पौण्ड जुर्माने अथवा एक महीना सपरिश्रम कारावासकी सजा सुना दी गई। सूनसामी एल्लरीपर भी यही अभियोग था। उन्हें भी यही सजा सुनाई गई।

भीखाभाई और झीणाभाईपर, जिन्हें देशसे बाहर निकाल दिया गया था किन्तु जो उसी समय फिर लौट आये थे, निषिद्ध प्रवासी होनेका अभियोग लगाया गया। उन्हें बीस पौंड जुर्माने या छः हफ्ते कठोर कारावासकी सजा सुनाई गई।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–१०–१९०८

६२. फोक्सरस्टमें मुकदमा[1]

[फोक्सरस्ट
अक्तूबर १४, १९०८]

इसके बाद स्वयं श्री गांधीपर नये कानूनके अन्तर्गत यह आरोप लगाया गया कि उन्होंने अधिकारियोंके माँगनेपर भी अपने अँगूठों और अँगुलियोंकी छाप नहीं दी। उन्होंने यह अभियोग स्वीकार कर लिया और कोई कागज-पत्र पेश नहीं किया। और जब उनसे विनियम ९ (रेगुलेशन ९) के मातहत शिनाख्त पेश करनेके लिए कहा गया तो उन्होंने इनकार कर दिया।

श्री गांधीने बयान देते हुए कहा :

मैं समझता हूँ कि इस न्यायालयका एक अधिकारी[2] होनेके नाते, मुझे पंजीयन प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) पेश करनेसे और अपने अँगूठों या अँगुलियोंकी छाप देनेसे इनकार करनेके बारेमें अपनी कुछ सफाई अवश्य देनी चाहिए। १९०७ के एशियाई कानून २ को लेकर सरकार और ब्रिटिश भारतीयोंके बीच कुछ मतभेद रहे हैं। ब्रिटिश भारतीय संघके मन्त्रीके रूपमें मैं ब्रिटिश भारतीयोंका प्रतिनिधित्व करता हूँ। और उनसे आवश्यक सलाह-

१. दावजी आमोद और अन्य व्यक्तियोंके मुकदमेके बाद गांधीजीका मामला अदालतमें पेश हुआ था। देखिए पिछला शीर्षक।

२. अभिप्राय 'वकील' होनेसे है।

मशविरा करनेके बाद, अपने देशवासियोंको यह सलाह देनेकी जिम्मेदारी मैंने अपने ऊपर ले ली है कि वे इस कानून द्वारा थोपे गये बुनियादी बन्धनोंको तो स्वीकार न करें पर कानून मानकर चलनेवाली प्रजाकी तरह इसके उल्लंघनके फलस्वरूप मिलनेवाली सजाको स्वीकार कर लें। बात सही हो या गलत, पर अन्य एशियाइयोंकी भाँति मेरा भी यही विचार है कि और बातोंके साथ-साथ यह कानून हमारे अन्तःकरणको चोट पहुँचाता है। और मुझे लगा — आज भी मुझे ऐसा ही लगता है — कि इस कानूनके बारेमें अपनी भावना प्रकट करनेका एशियाइयोंके सामने केवल एक यही मार्ग रह गया है कि वे इसके अन्तर्गत दी गई सजाको स्वीकार करते चलें; और मैं मानता हूँ कि मैंने उस नीतिके अनुसार इससे पहले आनेवाले अभियुक्तोंको इस कानूनके आगे सिर झुकानेसे इनकार करनेकी सलाह दी थी। मैंने उनको १९०८ के कानून ३६ के बारेमें भी यही सलाह दी थी। सो इसलिए कि ब्रिटिश भारतीयोंकी रायमें, सरकारने जितनी राहत देनेका वचन दिया था, उतनी दी नहीं गई। अब मैं न्यायालयके हाथमें हूँ और वह जो सजा दे, मुझे स्वीकार्य होगी। अभियोक्ताओं और जनता सभीने मेरे साथ जो शिष्टाचार बरता है, उसके लिए मैं उनको धन्यवाद देता हूँ।

श्री मेंजने कहा कि इस मामलेको दूसरे मामलोंसे भिन्न मानना चाहिए। उन्होंने कहा, चूँकि श्री गांधीने स्वयं स्वीकार किया है कि उनका अपराध अन्य अभियुक्तोंसे अधिक है, इसलिए उनको अधिकतम दण्ड (१०० पौंड जुर्माना या तीन महीनेका सपरिश्रम कारावास) दिया जाना चाहिए।

मजिस्ट्रेटने श्री गांधीको दोषी करार दिया। उन्होंने अपना निर्णय देते हुए कहा कि धर्मके आधारपर उठाई गई आपत्तियोंके प्रश्नपर विचार करना मेरा काम नहीं है। मेरा काम तो केवल कानूनके मुताबिक काम करना है। कानूनका आम तौरपर उल्लंघन किया गया है। श्री गांधीको उस रूपमें देखनेका मजिस्ट्रेटने आज बड़ा दुःख माना, और कहा कि फिर भी उनमें और अन्य अभियुक्तोंमें अन्तर किया जाना जरूरी है। मजिस्ट्रेटने श्री गांधीको २५ पौंड जुर्माने या दो महीनेकी सपरिश्रम कारावासकी सजा दी।

बेशक किसीने भी जुर्मानेकी राशि अदा नहीं की और सभी मुसकराते हुए जेल चले गये। श्री गांधी विशेष प्रसन्न थे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–१०–१९०८

६३. सन्देश: भारतीयोंको[1]

[फोक्सरस्ट
अक्तूबर १४, १९०८]

अन्ततक दृढ़ रहें। संकट झेलना ही हमारा उपाय है। और इतना करनेके बाद हम जीते हुए ही हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–१०–१९०८

६४. तार: उपनिवेश-मन्त्रीको[2]

फोक्सरस्ट
नवम्बर ७, १९०८

सेवामें
उपनिवेश-मंत्री
[लन्दन]

फोक्सरस्टके पचहत्तर ब्रिटिश भारतीय कैदी जिनमें नेटाल भारतीय कांग्रेसके अध्यक्ष उपाध्यक्ष और मन्त्री हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके अध्यक्ष [और] ब्रिटिश भारतीय संघके मन्त्री शामिल हैं परम कृपालु महामहिम राजराजेश्वरकी सेवामें निष्ठापूर्वक बधाइयाँ भेजते हैं और वे जिन हालतोंमें जेल काट रहे हैं उनकी ओर समादरपूर्वक ध्यान आकर्षित करते हैं।

फोक्सरस्टके ब्रिटिश भारतीय कैदी

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१३२

१. इसे गांधीजीने "फोक्सरस्टमें अपनी जेल-यात्रासे पहले अन्तिम सन्देश" के रूपमें भेजा था। इसपर इंडियन ओपिनियनमें "दृढ़ रहो" शीर्षकसे सम्पादकीय लेख लिखा गया था। यह सन्देश, जो गुजराती विभागमें भी प्रकाशित हुआ था, १८ अक्तूबरको जोहानिसबर्गमें एक बड़ी सार्वजनिक सभामें पढ़ा गया था।

२. यह तार भारत-मन्त्रीकी मार्फत सप्तम एडवर्डको उनकी ५७ वीं जन्मतिथिपर, जो नवम्बर ९ को पड़ती थी, भेजा गया था। अनुमानतः इसका मसविदा गांधीजीने बनाया था; वे उस समय फोक्सरस्ट जेलमें बन्दी थे। रायटरने भी ऐसा ही एक सन्देश जोहानिसबर्ग कारागारके "अन्तःकरणके आदेशपर आपत्ति करनेवाले" बन्दियोंकी ओरसे ९ नवम्बरको तार द्वारा भेजा था।

६५. पत्र : ए० एच० वेस्टको

कैदीका नाम : मो० क० गांधी

[फोक्सरस्ट जेल]
ट्रान्सवाल
नवम्बर ९, १९०८

प्रिय वेस्ट,

आपका तार मिला। इससे मुझे दुःख तो हुआ, किन्तु आश्चर्य नहीं हुआ। मैं विना जुर्माना दिये यहाँसे नहीं निकल सकता और वैसा मैं करूँगा नहीं। जब मैंने संघर्ष शुरू किया था तब यह समझ लिया था कि इसकी क्या कीमत देनी पड़ेगी। यदि यही होना है कि श्रीमती गांधी मुझे छोड़कर चली जायें और स्नेहशील पति उन्हें सान्त्वना देनेके लिए भी न पहुँच सके तो फिर ऐसा सही।[1]

आप सब उनके लिए जो-कुछ कर सकते हों अवश्य करें। मैं हरिलालको वहाँ जानेके लिए तार[2] कर रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि आप या कोई और रोज एक बुलेटिन निकालें — इसका यह अर्थ नहीं है कि तब मैं कुछ मदद कर सकूँगा। कृपया मुझे तारसे खबर दें कि बीमारी ठीक-ठीक क्या है। मैं उन्हें भी लिख रहा हूँ।[3] मैं आशा किये हूँ कि वे यह पत्र मिलने तक जीवित होंगी और इतने होशमें होंगी कि पत्रको समझ सकें। अधिकारीगण मेरे पत्र मुझे रोज-के-रोज देते रहेंगे। श्रीमती गांधीके नाम पत्र नत्थी है। मणिलाल यह पत्र उन्हें पढ़कर सुना दे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री ए० एच० वेस्ट
मैनेजर
'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स, नेटाल

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४०९) से।
सौजन्य : ए० एच० वेस्ट

१. श्रीमती कस्तूरबा गांधी रक्तस्रावसे पीड़ित थीं और उनकी हालत चिन्ताजनक थी। जैसा कि १६-१-१९०९ के **इंडियन ओपिनियनसे** ज्ञात होता है, जनवरी १०, १९०९ को उनका ऑपरेशन हुआ था। देखिए **आत्मकथा** भाग ४, अध्याय २८ भी।

२. यह तार उपलब्ध नहीं है।

३. देखिए अगला शीर्षक।

६६. पत्र : श्रीमती कस्तूरबा गांधीको

[फोक्सरस्ट जेल]
नवम्बर ९, १९०८

प्यारी कस्तूर,

तुम्हारी तबीयतके बारेमें आज श्री वेस्टका तार मिला। मेरा हृदय फटा जा रहा है, मैं रो रहा हूँ। लेकिन तुम्हारी सुश्रूषा करने आऊँ, ऐसी स्थिति नहीं है। सत्याग्रह संघर्षको मैंने अपना सब-कुछ अर्पित कर दिया है। इसलिए मुझसे आना हो ही नहीं सकता। जुर्माना दूँ तभी आ सकता हूँ, और जुर्माना मुझसे दिया नहीं जायेगा। तुम जरा हिम्मत रखो और नियमपूर्वक खाओ-पिओ तो अच्छी हो जाओगी। फिर भी मेरी बदनसीबीसे कहीं ऐसा हो कि तुम चल बसीं, तो मैं इतना ही कहूँगा कि मेरे जीते-जी तुम मेरे वियोगमें भी मर जाओ तो इसमें कुछ बुरा नहीं है। तुमपर मेरा इतना स्नेह है कि तुम मरकर भी मेरे मनमें जीवित रहोगी। तुम्हारी आत्मा तो अमर है। मैं तुमसे विश्वासपूर्वक कहता हूं कि यदि तुम चली ही जाओगी तो मैं तुम्हारे पीछे दूसरी शादी नहीं करूँगा। ऐसा मैं कई बार कह भी चुका हूँ। तुम ईश्वरमें आस्था रखकर प्राण त्यागना। तुम मर जाती हो तो वह भी सत्याग्रहके लिए ही होगा। हमारा संघर्ष मात्र राजनीतिक नहीं है। यह संघर्ष धार्मिक है, इसलिए अत्यन्त शुद्ध है। उसमें मर जायें तो क्या और जीवित रहें तो क्या? आशा है, तुम भी ऐसा ही सोचकर तनिक भी खिन्न नहीं होगी। इतना मैं तुमसे माँगे लेता हूँ।

मोहनदास

[गुजरातीसे]

'बापूना बाने पत्रो', इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, फीनिक्स, १९४८

६७. जेलसे सन्देश[1]

हम तो एक ही उम्मीद करते हैं कि हरएक आदमी इस लड़ाईमें पूरी तरह मुस्तैद रहेगा और जो प्रण लिया है उसे कभी नहीं छोड़ेगा — फिर चाहे लड़ाई आठ दिन चले, चाहे आठ महीना, चाहे आठ वर्ष और चाहे उससे भी ज्यादा। जो लोग हारकर लड़ाईको छोड़ दें, उनपर किसी तरहका जुल्म करना हमारा काम नहीं है। जो जुल्म करेगा, वह इस लड़ाईको समझता नहीं, ऐसा मैं मानता हूँ। लड़ाई इतनी लम्बी हो गई है, इसके कारण भी हम ही हैं। हम विचार करके इन कारणोंको दूर कर दें तो वह आज ही खत्म हो जाये।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-१२-१९०८

१. यह जोहानिसबर्गमें १९०८ के एशियाई पंजीयन संशोधन कानून (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन अमेंडमेंट ऐक्ट) के मुताबिक पंजीयनकी मीयाद खत्म होनेसे पहले बुलाई गई भारतीयोंकी सार्वजनिक सभामें पढ़ा गया था।

६८. भेंट : जर्मिस्टन स्टेशनपर[1]

[जर्मिस्टन
दिसम्बर १२, १९०८]

[श्री गांधीने कहा :] मैंने सब आरोपोंके सम्बन्धमें सुना है; किन्तु मुझे जो थोड़ी-सी बात कहनी है, वह बादमें कहूँगा। जेलमें एक-एक मिनट मैंने सुखसे बिताया है।

[दूसरे सवालके जवाबमें उन्होंने कहा :] जेलमें मेरे साथ अच्छा बरताव किया गया। मेरी शिकायत जेलके नियमोंके विरुद्ध है। अधिकारियोंका तो नियमोंके अनुसार चलना कर्तव्य है।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, १९-१२-१९०८

६९. भाषण : जोहानिसबर्गके स्वागत-समारोहमें

[जोहानिसबर्ग
दिसम्बर १२, १९०८]

अध्यक्ष महोदय, नेटालके प्रतिनिधियो, तमिल तथा अन्य भाइयो,

आज मैं आपसे दो महीने दस दिन बाद मिल रहा हूँ। मैं तो समझता हूँ, मैं जेलमें नहीं, बाहर ही था; और आज अपनेको जेलमें आया मानता हूँ। बाहरवाले लोगोंको जेल-वालोंसे ज्यादा जिम्मेदारियाँ निभानी हैं। जबतक बाहरवाले पूरा जोर नहीं लगाते, तबतक बेड़ियाँ टूटनेकी नहीं। फोक्सरस्टके स्टेशन मास्टरने जब मुझे जेलसे छूटनेके लिए मुबारकबादी दी, तो उसे भी मैंने यही बताया कि जेलमें तो मैं आज ही प्रवेश कर रहा हूँ; अब मेरे माथे जेलकी बनिस्बत बहुत ज्यादा सख्त काम आ पड़े हैं।

जिस देशमें लोगोंपर अन्याय और जुल्म बरपा हो, उन्हें अपने वाजिब हक भी न मिलें, [वहाँ] लोगोंका सच्चा कर्तव्य जेलमें रहना ही है। और मैं मानता हूँ, जबतक प्रतिबन्ध-रूपी बेड़ी नहीं टूटती तबतक जेलमें ही रहकर दिवस बिताना सच्चे और खुदापर भरोसा करनेवाले लोगोंका असली धर्म है।

आज स्टेशनपर जो दृश्य देखा, उसके बारेमें दो शब्द कहना चाहता हूँ। मैंने भारतीयोंकी जो सेवा की, वह कौमको पसन्द आई। मैंने एक दिन पत्थर तोड़नेका काम किया, जेलमें रहा, तथा और भी जो-कुछ किया, उसकी आप कद्र करते हैं और इसीलिए यहाँ इतनी बड़ी तादादमें इकट्ठे हुए हैं। जहाँ खुदा है, वहाँ सत्य है; और जहाँ सत्य है, वहाँ खुदा। मैं खुदासे डरकर ही चलनेवाला आदमी हूँ। मैं सत्यको ही चाहता हूँ, इसीलिए खुदा मेरे पास है।

१. गांधीजी अपनी रिहाईके बाद जब १२ दिसम्बरको फोक्सरस्टसे जोहानिसबर्ग जा रहे थे, तब उनसे जेलमें किये गये दुर्व्यवहारके सम्बन्धमें यह भेंट की गई थी।

सत्यकी राह चलना कौमको पसन्द न भी हो, लेकिन खुदाको पसन्द है। इसलिए, कौम विरुद्ध हो, तो भी मैं वही करूँगा जो खुदाको पसन्द है। आजका उत्साह ठीक था। उससे जाहिर होता है कि हमने सत्याग्रहकी जो लड़ाई शुरू की है, उसमें आप सब और जो यहाँ नहीं आ पाये हैं वे भी शामिल हैं। मैं तो स्टैंडर्टन, हाइडेलबर्ग आदि जगहोंमें कहता आया हूँ कि सर्वोच्च न्यायालयमें हार हो या जीत, उसपर हमारी लड़ाई निर्भर नहीं करती। हमें तो सत्यके लिए स्त्री-बच्चे, माल-मिल्कियत — सबका त्याग करना पड़े, तो हम वह भी करेंगे। चाहे जो भी तकलीफ आये, हम भोगेंगे, और सत्यकी आवाज खुदाके दरबार तक पहुँचायेंगे। उस आवाजकी गूंज जब जनरल स्मट्सके कानोंमें पहुँचेगी, तो उनके दिलमें खुदा उतरेगा और कहेगा कि ये लोग हकदार हैं, हक प्राप्त करनेके लिए दुःख सहते हैं और अब तो बहुत हो चुका। तब जाकर हमारी माँगें पूरी होंगी। आपके हक बड़ी सरकार नहीं देगी, दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति भी नहीं देगी। किन्तु खुदाके दरबारमें और उसे बीचमें रखकर यदि आप सचाईके रास्तेसे लड़ाई लड़ेंगे तो अध्यक्ष महोदयका कहना है, आपके बन्धन आठ दिनमें टूट जायेंगे; लेकिन मैं तो कहता हूँ, उसमें २४ घंटे भी नहीं लगेंगे। खुदा सब जगह है; वह सब-कुछ देखता है, सब-कुछ सुनता है। मैं तो कहता हूँ कि ज्यों ही वह खुदा उनके दिलमें उतरेगा, हमारा छुटकारा हो जायेगा। जितनी तकलीफ उठानी चाहिए, उतनी हम नहीं उठाते; उठायेंगे तो तुरन्त बेड़ियाँ टूट जायेंगी। कल और कहूँगा, इसलिए आज अब ज्यादा नहीं कहता। आज सभी भाई एकत्र हुए हैं, इसके लिए मैं आभार मानता हूँ, और चाहता हूँ कि मेरे शब्दोंको अपने मनमें अंकित कर सब खुदासे माँगें कि जो मेरे दिलमें है, वही सबके दिलमें हो।[1]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-१२-१९०८

७०. भाषण : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी स्वागत सभामें[2]

[जोहानिसबर्ग
दिसम्बर १३, १९०८]

मैंने कल कहा था कि हमें जीत मिली है। हमारी जीत हमारी तकलीफोंकी बदौलत मिली है; समाजके पन्द्रह सौ लोग जेल हो आये हैं, यह बात जीतके बराबर है। सात हजारमें से पन्द्रह सौ लोग जेल काट आये, इसे मैं जीत ही मानता हूँ। सरकारसे हमने जो माँगा वह नहीं मिला, इसलिए दुनियवी दृष्टिकोणसे तो यही कहा जायेगा कि जीत नहीं मिली। अध्यक्ष महोदयने कहा है कि मैं समाजका नेता हूँ इसलिए मैं जो कहूँ, आप वही करें। लेकिन, यह ठीक नहीं है। मैं समझता हूँ, मेरा फर्ज यह है कि मैं जो सुनूँ, मुझे जैसा सूझे, आपसे अर्ज कर दूँ, और [फिर] आप जैसा कहें वैसा करूँ। मेरे कहनेके मुताबिक चलना-न-चलना आपकी

१. इसके बाद गांधीजी अंग्रेजीमें बोले। अंग्रेजी भाषणकी रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

२. गांधीजी और इमाम अब्दुल कादिर बावजीरके जेलसे छूटनेपर उनके सम्मानमें १३ दिसम्बर, १९०८ को हमीदिया मस्जिदमें यह सभा की गई थी।

मर्जीपर है। हम आज भी हरएक बातमें ढीले हैं, और इसीसे नियमित नहीं हैं। नियमित हो जायें तो हर काम जल्दी कर सकेंगे। मैं दो बातें अर्ज करता हूँ: एक तो यह कि हमने पहली लड़ाई रामसुन्दरसे शुरू की और दूसरी सोरावजीसे।[1] श्री सोरावजीको जैसा लिखा वैसा मैंने दूसरोंको भी लिखा। उत्तरमें सबसे पहला पत्र सोरावजीका आया। मैं सोरावजीको उतना नहीं जानता था जितना कि रामसुन्दरको, और इस बारेमें सन्दिग्ध था कि वे अन्त तक कैसा निभायेंगे। मैं तो आदमी जैसा कहता है वैसा मान लेता हूँ। सोरावजीने क्या किया, सो समाजने देखा। फोक्सरस्ट जेलमें मेरे साथ ७५ कैदी थे। मैंने पाया कि सोरावजी उनमें सबसे अधिक नरम, शान्त-प्रकृति और दृढ़ व्यक्ति हैं। कोई चाहे उनसे कुछ कहे, कुछ बोले, वे उसकी परवाह न करके सह लेते थे। उनके साथ रहकर मैंने उनकी कीमत बहुत अच्छी तरह आँक ली है।

दूसरे, इमाम साहब, मूसाजी तथा उन दो मद्रासियोंमें से, जिन्हें छः-छः सप्ताहकी सजा हुई थी, मैं इमाम साहबके साथ काफी रहा हूँ। मैं चिन्तित था कि [ऐसी] सेहत और शरीर लेकर ये [सब-कुछ] कैसे बर्दाश्त कर पायेंगे। लेकिन, मैंने देखा कि जो भी कष्ट आया, उन्होंने उठाया; जो भी काम आया, उन्होंने किया। हमीदिया इस्लामिया अंजुमन और कौमकी भी तकदीर बुलन्द है कि अंजुमनको ऐसे अध्यक्ष मिले हैं। एक बार जब जेलरने [कैदियोंको] घास काटनेके लिए चलनेका हुक्म दिया तो कोई नहीं उठा। इमाम साहबको लगा कि यह हमारा फर्ज है। जब वे खुद उठे तो दूसरे लोग कहने लगे कि ये इमाम हैं, इसलिए इन्हें न ले जाइये, बल्कि उस समय वे लोग शरमा गये। हमारी ऐसी ही आदतें हमारे संघर्षको लम्बा करती हैं। दूसरोंके छूट जानेपर हम थोड़े ही लोग रह गये। मूसा इसाकजीने भोजन बनानेका काम अपने मत्थे लिया। इमाम साहबने साथ देना मंजूर किया। रातके तीन बजे उठकर वे भोजन पकाने जाते थे। समाजमें ऐसे भारतीय हैं तो मैं जीत मिल गई ही मानता हूँ। जेल जानेवालोंको मेरी खास सलाह है कि वे जेलके कानून-कायदेके मुताबिक चलेंगे। खुदाको सामने रखकर काम करेंगे तो बेड़ी टूटते देर नहीं लगेगी। खोटे अनुमतिपत्रवालोंके लिए तो हमें बिल्कुल लड़ना ही नहीं है। पहलेकी लड़ाई समाप्त हो चुकी है। अब तो यह लड़ाई भारतमें रहनेवाले करोड़ों भारतीयोंकी नाक रखनेके लिए है। साम्राज्य-सरकार तो भारतीयोंको दक्षिण आफ्रिकासे निकाल बाहर करनेका उपाय कर रही है। वह चाहती है कि हम वहाँ रहें जहाँकी आबोहवा अच्छी नहीं है। इसलिए सरकारको अपनी मर्दानगी बता देना मैं जरूरी समझता हूँ। हमें अब झूठे लोगोंके लिए नहीं लड़ना है, लेकिन सच्चे इल्म सिखानेवाले पढ़े-लिखे लोग आयें तो हम इज्जतसे रह सकते हैं। और जबतक हम इतना भी नहीं जानते, तबतक जीत नहीं हो सकती। देखता हूँ, कुछ लोग नामके भूखे हैं। ऐसी बात उनके दिलमें क्यों होनी चाहिए? जो देश-सेवा करना चाहते हैं, खुदापर भरोसा रखते हैं, उन्हें नाम मिले तो क्या और न मिले तो क्या? सच्चे सत्याग्रहीको उसकी परवाह नहीं होती। वह तो बस काम करता जाता है। नेटालके सज्जनोंने मुझे लड़ाईके अन्ततक साथ देनेका वचन दिया है, और वही वचन आज तीनों नेताओंसे मैं फिर माँगता हूँ। उन सज्जनोंने बड़ी जबरदस्त उगाही की और [वे

१. आशय सत्याग्रह संघर्षके पहले और दूसरे दौरसे है। देखिए खण्ड ७, पृष्ठ ३५१-५६, और खण्ड ८, पृष्ठ ३३७-४०, ३४७-५१ और ३७०-७१।

जिनके पास भी गये उन] सभी भाइयोंने उनका मान रखा, यह देखकर मुझे सन्तोष हुआ है। पिछली आम सभामें[1] चार प्रस्ताव पास हुए थे। उनमें से दूसरा प्रस्ताव श्री कामाने सभीको समझा दिया था; और आज फिर मैं समझाता हूँ। [प्रस्ताव यह था] कि "जबतक सरकार इन्साफ नहीं देती, तबतक हम खुदाको बीचमें रखकर लड़ेंगे।" अगर आपने कसम सोच-समझकर ली हो तो सब हाथ उठायें।[2] यह मस्जिदकी पाक इमारत है; याद रखिए कि ऐसी जगह आपने खुदाके नामपर हाथ उठाया है। सेठ रुस्तमजीने मुझे जेलमें पढ़नेके लिए धर्म-सम्बन्धी एक पुस्तक भेजी थी। उसमें लिखा है कि अच्छे काम करनेवालेको खुदा प्यार करता है। आपने खुदाकी कसम लेकर जो इकरार किया है, वह अच्छी तरह सोच-समझकर ही किया होगा; तब फिर आप जीतेंगे क्यों नहीं? हर धर्म-ग्रन्थमें लिखा है कि "जो मेरे साथ है, उसकी मुराद मैं पूरी करता हूँ।" सरकार दौलत और शरीर ले जा सकती है, लेकिन रूह — आत्मा — नहीं। मैंने जो-कुछ कहा है, उसे आप अच्छी तरह समझ कर करेंगे, तो आपने जो दो चीजें माँगी हैं, वे ही क्यों — आप जो भी चाहेंगे, सब मिलेगा। इस लड़ाईकी गूंज हिन्दुस्तान और सारी दुनियामें पहुँच चुकी है। उसे और भी जोरदार बनाइये।

[इसके बाद हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी ओरसे गांधीजीको माला पहनाई गई। उन्होंने धन्यवाद देते हुए कहा:]

इस हारको मैं हीरेका हार मानता हूँ। मैं समझता हूँ, आपने यह हार मुझे मान देनेके लिए नहीं, बल्कि दिलसे पहनाया है; और यही समझकर मैं अहसान मानता हूँ। दाउद सेठका छोटा लड़का विलायतसे लिखता है कि हममें एकता क्यों नहीं है? हमीदिया इस्लामिया अंजुमन मुसलमानोंका है। उसकी ओरसे मुझे हार पहनाया गया है, इसे मैं अपना सम्मान समझता हूँ। हिन्दू और मुसलमान, ये दोनों आँखें सलामत रहेंगी, तो आप सुखी रहेंगे। अगर तेरह हजार भारतीय खुदापर भरोसा रखकर लड़ेंगे और दोनों कौमें एक होकर रहेंगी, तो हम हिन्दुस्तानपर भी काबू रख सकेंगे। यहाँ [की बातों] का असर स्वदेशपर भी पड़ेगा, और सभी एक हो जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-१२-१९०८

१. यह २९ नवम्बरको हुई थी।

२. सभीने हाथ उठाया।

७१. भाषण : तमिल स्वागत-सभामें[1]

[जोहानिसबर्ग
दिसम्बर १४, १९०८]

यह हार[2] तमिल कौमको, जिसने अच्छा काम किया है, शोभा देता है। इसलिए मैं इस हारको, जो मुझे पहनाया गया है, आपके अध्यक्षको पहनाता हूँ। मुझे ज्यादा कुछ नहीं कहना है। यदि आपको ऐसा लगता हो कि तमिल कौमने बहुत अच्छा काम किया है तो आप भी उसके जैसा कर दिखायें। यदि आप पीछे रहेंगे तो आपके विरुद्ध जितना कहा जाये, कम होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-१२-१९०८

७२. नायडू-सज्जनों और दूसरोंका मुकदमा[3]

[जोहानिसबर्ग
दिसम्बर १८, १९०८]

'ट्रान्सवाल लीडर' ने लिखा है कि प्राप्त समाचारोंके अनुसार, कल सुबह (तारीख १८ को) जब बहुत-से भारतीय सन् १९०८ के कानून संख्या ३६ के पालनार्थ वॉन ब्रैंडिस स्क्वेयरमें स्थित पंजीयन कार्यालय (रजिस्ट्रेशन ऑफिस) की ओर जा रहे थे, तब "अनाक्रामक" प्रतिरोधियोंने [उनका प्रवेश रोकते हुए] तुरन्त वहाँ धरना दे दिया। पुलिसको बुलाया गया जिसने वहाँ पहुँचते ही धरनेदारोंकी टोलीमें से चारको गिरफ्तार कर लिया। इनमें सी० के० टी० नायडू भी थे। उसी समय इन चारकी जगहपर दूसरे चार आकर खड़े हो गये, किन्तु वे भी गिरफ्तार कर लिये गये। तब वहाँ भारतीयोंकी भीड़ एकत्र हो गई। फिर और भी गिरफ्तारियाँ हुईं और अन्तमें कोई २७ आदमियोंका, उनपर पंजीयन-प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) बतानेसे और अँगूठे तथा उँगलियोंकी छाप देनेसे इनकार करनेका अभियोग लगाकर, चालान कर दिया गया।

१. गांधीजीने यह भाषण एक स्वागत-समारोहमें दिया था, जो उनके तथा इमाम अब्दुल कादिर बावजीर, और कुछ नेटाल भारतीयोंके सम्मानमें आयोजित किया गया था।

२. भाषणसे पहले गांधीजीको हार पहनाया गया था।

३. सी० के० टी० नायडू, एल० आर० नायडू, एल० डी० नायडू, और ए० वी० चेट्टीके मुकदमेका विवरण इंडियन ओपिनियनमें "धरनेदार गिरफ्तार — नेता अदालतमें" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

उसी दिन बादमें गिरफ्तार भारतीयोंको गवर्नमेंट स्क्वेयरमें मुकदमेकी सुनवाईके लिए ले जाया गया। इनकी गिरफ्तारीकी खबर बाहर फैल गई थी और जब श्री गांधी उनकी तरफसे पैरवी करनेके लिए पहुँचे तब उनके साथ कोई २०० भारतीय थे।

पहले चार अभियुक्तोंमें सी० के० टी० [नायडू], एल० आर० [नायडू] और एल० डी० नायडू तथा ए० वी० चेट्टी थे। अभियुक्तोंने कहा कि वे निरपराध हैं।

सरकारकी तरफसे पैरवी करते हुए श्री सैम्युएलने कहा कि यह अभियोग रांदेरियाके मामले-जैसा है। सारी परिस्थितियाँ वैसी ही हैं। और सवाल यह है कि जबतक रांदेरियाकी अपीलका फैसला नहीं हो जाता तबतक सरकार इस मामलेको आगे बढ़ाये या नहीं।

श्री जॉर्डन: इन्हें गिरफ्तार क्यों किया गया है?

श्री सैम्युएल: इन्हें तो ऊपरसे मिली हिदायतोंके अनुसार गिरफ्तार किया गया है। यह भी आरोप है कि ये धरना दे रहे थे और जो एशियाई लोग कानूनका पालन करना चाहते थे उन्हें बाधा पहुँचा रहे थे। मैं ऐसा केवल एक पक्षकी तरफसे ही कह रहा हूँ और सम्भव है कि यह सही न हो।

श्री जॉर्डनने कहा कि जो खबरें मिली हैं, वे अगर सही हैं तो [अभियुक्तोंका] यह व्यवहार अत्यन्त चिन्त्य है। इस कथनसे जान पड़ता है कि "मेरे सामने भारतीयोंने शपथपूर्वक इस आशयके जो बयान दिये हैं कि इन धरनेदारोंके कारण पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) करानेमें उन्हें डर लगता है, वे सत्य हैं। मेरे सामने जिन अभियुक्तोंके मुकदमे पेश हुए हैं उनमें से कईने मुझसे कहा है कि उन्हें डर दिखाया गया है और अब उनकी कहानियाँ मुझे सच्ची लगने लगी हैं।"

श्री गांधी: अगर कानूनका पालन करनेके लिए उत्सुक भारतीयोंको ये कठघरेमें खड़े लोग डराते रहे हैं तो निश्चय ही कानूनमें ऐसी कोई धारा जरूर मिल जायेगी जिसे भंग करनेका आरोप इनपर लगाया जा सके। परन्तु इनपर सन् १९०८ के कानून ३६ की धारा ९ के अन्तर्गत अभियोग क्यों लगाया जा रहा है? जबतक लड़ाई चल रही है तबतक चौकसी तो होती ही रहेगी। हाँ, अगर ये दूसरे लोगोंको डर दिखाते रहे हैं तो इन्हें अवश्य सजा दी जाये। परन्तु मेरे विद्वान मित्र श्री सैम्युएल तो कहते हैं कि उन्हें इस बातपर विश्वास ही नहीं होता।

श्री जॉर्डन: मेरे सामने लोगोंने आकर शपथपूर्वक कहा है कि उन्हें उनके स्वदेशवासियोंने डराया है।

श्री गांधी: कुछ लोग तो ऐसे रहेंगे ही जो कुछ भी कह देंगे।

श्री जॉर्डन: और मुझे भय है कि जिसे आप बिना सोचे-समझे चौकसी कहते हैं (हँसी) वह जबतक आपके मित्रोंको करने दी जायेगी तबतक वे ऐसा कहना जारी रखेंगे।

श्री गांधी: जो भी हो, इन चार आदमियोंपर तो इस धाराके मातहत कोई अभियोग नहीं लगाया जा सकता, क्योंकि कानूनमें एशियाई पंजीयक (रजिस्ट्रार ऑफ एशियाटिक्स) जैसे किसी अधिकारीका उल्लेख ही नहीं है।

श्री जॉर्डन: अच्छा! अगर भारतीय पंजीयन करा ही नहीं सकते तो आपने यह धरना क्यों लगवा रखा है?

श्री गांधी : हम तो उन लोगोंको, जो अपनी मनुष्यताको भूल जाते हैं, केवल यह याद दिलाना चाहते हैं कि संसारमें सामाजिक बहिष्कार नामकी भी कोई चीज है।

श्री जॉर्डन : मैं नहीं मानता कि यह सामाजिक बहिष्कार है। मेरा तो खयाल है कि लोगोंको इस बातका वाजिब डर है कि कहीं उनके हाथ-पाँव न तोड़ दिये जायें।

श्री गांधी : अगर ऐसा होता तो पाँच सौ आदमी अपना पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) नहीं करवा सकते थे और शेष समाजके साथ वे इतनी अच्छी तरह हिल-मिलकर नहीं रह सकते थे और न लड़ाईके लिए चन्दा ही देते रह सकते थे।

श्री जॉर्डन : ठीक है; तो अभियुक्तोंको अनिश्चित कालके लिए हवालातमें वापस भेजा जाता है।

श्री गांधी : अगर कहीं भी आतंकसे काम लिया जा रहा हो और संघके अधिकारियोंका ध्यान उधर दिला दिया जाये तो वे अपनी शक्ति-भर सरकारकी मदद करेंगे।

इसी प्रकार दूसरे गिरफ्तार भारतीयोंको भी वापस हवालात भेज दिया गया।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-१२-१९०८

७३. भारी संघर्ष

ट्रान्सवालमें जो संघर्ष चालू है, वह कैसा भारी है, यह बात दिन-प्रति-दिन प्रकट होती जाती है। कानूनको रद होना ही है; यह माँग महत्त्वपूर्ण है, इसमें सन्देह नहीं। फिर भी ज्यों-ज्यों वक्त गुजरता है त्यों-त्यों संघर्षका सच्चा स्वरूप देखनेका लाभ मिलता जाता है। हम पहले बता चुके हैं कि ट्रान्सवालके भारतीय केवल ट्रान्सवाल-सरकारके विरुद्ध ही नहीं लड़ रहे हैं, बल्कि वे साम्राज्य-सरकारके विरुद्ध भी लड़ रहे हैं। इसके अलावा हम कह चुके हैं कि ट्रान्सवालके भारतीय सिर्फ अपने ही लिए नहीं लड़ रहे हैं, बल्कि दक्षिण आफ्रिकाके सारे भारतीयोंके लिए, विशेषतः बाहर रहनेवाले सभी भारतीयोंके लिए और ठीक सोचें तो समस्त भारतके लिए लड़ रहे हैं। हालमें ही इस विचारको इंग्लैंडसे समर्थन मिला है। कर्नल सीलीने जो भाषण दिया उसका सार और श्री रिच द्वारा दिया गया उसका उत्तर हम दूसरी जगह दे रहे हैं। उस भाषणमें कर्नल सीलीने जो-कुछ कहा है वह विचारणीय है। भारतीयोंको अच्छी जलवायुके देशमें बसनेके लिए न जाना चाहिए। गोरे और काले नहीं मिल सकते। उनके मिलापसे दोनोंका नुकसान है। भारतीय भात खानेवाले हैं और उनसे स्पर्धा कर गोरोंका निर्वाह नहीं हो सकता। इन वाक्योंसे साम्राज्य-सरकारका विचार प्रकट होता है। इनका अर्थ यह हुआ कि वे भारतीयोंको इतना हीन मानते हैं मानो वे गोरोंकी गुलामी करनेके ही योग्य हों। कर्नल सीली इसी भाषणमें कहते हैं कि जो भारतीय इस समय ट्रान्सवाल और अन्य उपनिवेशोंमें रहते हैं उनको तो इज्जतके साथ रहने देना चाहिए। साथ वे यह भी कहते हैं कि जनरल बोथा जो-कुछ कर रहे हैं, वह ठीक है। अर्थात् कर्नल सीलीका हमें इज्जतके साथ रखनेका विचार केवल ढोंग है। कर्नल सीलीके भाषणका यह अर्थ भी हुआ कि जहाँ गोरे अपना घर बना

रहे हैं, उस मुल्कमें आबाद भारतीयोंको धीरे-धीरे निकाल देना चाहिए। इसलिए ट्रान्सवालके भारतीयोंको समस्त भारतके भारतीयोंका भार उठाना है। इसको उठाना सहज काम है और ट्रान्सवालके भारतीय इसे उठायेंगे, यह हम बादमें बतायेंगे। कर्नल सीलीके विचार ब्रिटिश नीतिमें परिवर्तनके सूचक हैं। इनसे ब्रिटिश राजनीति कलंकित होगी और यदि ये विचार बहुत फैलेंगे और उनको व्यवहारमें लाया जायेगा तो ये ब्रिटिश साम्राज्यकी अवनतिके लक्षण हैं। इसलिए भारतीय जो टक्कर ले रहे हैं, उसमें ब्रिटिश साम्राज्यका हित भी आ जाता है। जो ब्रिटिश साम्राज्यका नाश हुआ देखना चाहते हैं वे ही कर्नल सीलीके विचारका समर्थन करेंगे। सब उपनिवेश ऐसे ही हैं। इसलिए वे ब्रिटिश साम्राज्यके शत्रु हैं। भारतीय सत्याग्रही इसी विचारके विरुद्ध लड़ते हैं और लड़ेंगे, इसलिए वे ब्रिटिश साम्राज्यके मित्र माने जा सकते हैं।

इस तरह विचार करनेपर हमारे पाठक सहज ही समझ सकते हैं कि ट्रान्सवालका संघर्ष तुच्छ अनुमतिपत्रों (परमिट)के लिए नहीं है, थोड़े-से भारतीय आ सकें, इसके लिए नहीं है, बल्कि यह तो महान लड़ाई है। यह लड़ाई शाही है। भारतीयोंने बलीसे टक्कर ली है, फिर भी हम कह सकते हैं कि हमारी जीत हो सकती है। किसीको यह न सोचना चाहिए कि यह तो ऐसी ही बात है जैसे चींटा रावको मटकी उठाये। ऐसा कहनेवाला सत्याग्रहका — सत्यका — बल नहीं समझ सकता। जो काम करोड़ोंसे नहीं हो सकता उसे मुट्ठी-भर लोग कर सकते हैं, ऐसे उदाहरण हम हमेशा आँखोंसे देखते रहते हैं। ऐसी ही बात ट्रान्सवालके भारतीयोंकी है। वहाँ भारतीय थोड़े हैं, इसीलिए ठीक तरह संघर्ष कर सकते हैं। बहुत-से भारतीयोंको समझाने, उनको सत्याग्रहकी विशेषता एकाएक बताने और उनका विरोध मिटानेमें समय लग सकता है। किन्तु यदि थोड़े ही से लोगोंमें सत्यका बीज पड़कर फूट निकले तो बादमें उस पौदेकी डालियोंको दूसरे स्थानोंमें रोपकर उनसे अगणित पौदे पैदा किये जा सकते हैं। यह न समझना चाहिए कि राईका पहाड़ नहीं बनेगा। यह भी होता रहता है। यही खलकके खालिककी खूबी है। पर्वत रजकणोंसे ही बना है। कैसे बना है, यह सोचें तो हम पागल हो जायेंगे। किन्तु वह बना है, यह हम देख सकते हैं। जैसे हम यह मानते हैं कि थोड़े-से भारतीयोंसे ही यह काम पूरा पड़ जायेगा, वैसे ही, यह काम सरल है, हम यह भी कह चुके हैं। यह सरल है, अब हम यह कहनेके कारणपर विचार करें। सत्याग्रहकी लड़ाई जैसे-जैसे जमती जाती है वैसे-वैसे हम देखते जाते हैं कि यह लड़ाई ऐसी है जिसे गरीब भी लड़ सकते हैं। पैसेवाले पैसेका बोझा उठाते-उठाते थक जाते हैं, इसलिए उनसे सत्यका बोझा उठाया नहीं जाता। इसलिए ट्रान्स-वालके भारतीयोंको गरीबी इख्तियार करनी है। यह कैसे हो सकता है, यह सोचें तो हार बैठेंगे। इसमें क्या है? पैसा आज है, कल नहीं है। वह तो चोरी भी चला जाता है, इसलिए उसे हम ही छोड़ देंगे और उसके बदले सत्यकी तलवार हाथमें ले लेंगे। इस तरह सोचनेकी शक्ति और उसके अनुसार चलनेकी शक्ति कदाचित् ही मिलती है। फिर, हम कह चुके हैं कि लड़ाई चालू रहेगी ही। क्यों न चालू रहेगी? कौममें कुल मिलाकर एकता दिखाई देती है। सैकड़ों भारतीय जेलमें डुबकी लगाकर पवित्र हो चुके हैं। उन्होंने जेल-जीवनकी सुन्दरता देखी है, इसलिए उनका पीछे हटना सम्भव नहीं है। और ट्रान्सवालके बहुत-से भारतीय गरीब ही हैं, इसलिए उनके पीछे हटनेकी बात रहती ही नहीं। ऐसे भारतीयोंके सम्मुख हम कर्नल सीलीके भाषणको रखते हैं और उनसे प्रार्थना करते हैं कि आप इस भारी

संघर्षके यशको मृत्यु-पर्यन्त हाथसे न जाने दें और अपना नाम और भारतका नाम सारी दुनियामें अमर कर दें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-१२-१९०८

७४. नेलसनको पुस्तक भेंट: दो शब्द[1]

[जोहानिसबर्ग]
दिसम्बर २३, १९०८

श्री जी० नेलसनको

फोक्सरस्टमें मेरी कैदके दौरान कानूनकी सीमाओंमें रहते हुए की गई उनकी अनेक कृपाओंके लिए।

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजीसे।

सौजन्य: गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली

७५. वर्षका लेखा-जोखा

अंग्रेजी वर्ष अब समाप्त हो रहा है। हमारी स्थिति ऐसी है कि हम अपना संवत् अंग्रेजी संवत्के बराबर महत्त्वपूर्ण नहीं मानते। हमारे काम-काज अंग्रेजी अथवा यूरोपीय वर्षपर आधारित होते हैं। हम यह आभास देना नहीं चाहते कि यह स्थिति खेदजनक है। किन्तु अभी तो इससे हमारी पतितावस्था ही प्रकट होती है। यदि हम सच्चे अर्थोंमें स्वतन्त्र होते तो यह बात असाधारण न मानी जाती। हम संसारके सब भागोंसे भली-भाँति मिलजुल कर रहना चाहते हैं, इसलिए पारस्परिक सुविधाकी दृष्टिसे यूरोपीय वर्षका उपयोग करें तो यह बुरा न माना जायेगा। किन्तु यह सब एक अलग विषय है। इस लेखका उद्देश्य वर्षका लेखा-जोखा पेश करना है।

नेटालकी स्थितिको जाँचें तो हम देखते हैं कि नेटाल-सरकार हमारे विरुद्ध बहुत-से कानून बनाना चाहती थी; किन्तु साम्राज्य-सरकारने उनकी मंजूरी नहीं दी। गिरमिटिया मजदूर अब आगे लाये जायें या नहीं, इसपर विचार करनेके लिए एक कमीशन मुकर्रर किया गया है। सम्भव है, इसका परिणाम कुछ ठीक निकले; किन्तु विधेयक नामंजूर कर दिये गये हैं, यह कोई विशेष प्रसन्नताकी बात नहीं है। अपनी आन्तरिक स्थितिकी दृष्टिसे [नेटाल भारतीय] कांग्रेसने अच्छा काम किया है। किन्तु कांग्रेसका आर्थिक संकट बना ही रहता है, यह स्थिति उसके कर्णधारोंके लिए विचारणीय है। लोगोंमें काफी जोश नहीं है। व्यापार नष्ट हो गया है। जमीनका दाम घट जानेसे बहुत-से भारतीय गरीब हो गये हैं। नौकरोंको भी कष्ट सहने पड़ते हैं। भारतीयोंमें

१. गांधीजीने फोक्सरस्ट जेलके (जहाँ उन्होंने अपनी कैदकी सजा काटी थी) वार्डरको टॉल्स्टॉयकी कृति — **किंगडम ऑफ गाड इज़ विदिन यू** की एक प्रति भेंटमें दी थी। उसपर उन्होंने उपर्युक्त शब्द लिख दिये थे।

हत्याएँ बढ़ गई हैं। पुलिस कुछ कर नहीं सकती और भारतीयोंमें अपना बचाव करनेकी ताकत है, ऐसा जान नहीं पड़ता। इन तथ्योंसे प्रकट होता है कि भारतीय स्वतन्त्र नहीं हैं — उनमें स्वतन्त्र होनेकी योग्यता भी नहीं है। कारण, वे अपने जान-मालकी रक्षाके लिए दूसरोंपर निर्भर रहते हैं। उनमें शिक्षाकी कमी है। एक तरफ सरकार शिक्षाके साधन छीनती जा रही है। हायर ग्रेड स्कूलोंकी हालत खराब है। दूसरी तरफ हम स्वयं अपनी शिक्षाकी कोई व्यवस्था नहीं करते, और पुस्तकालय-जैसी संस्था बन्द हो जाती है, तो भी परवाह नहीं करते। सन्तोषकी बात इतनी ही है कि कुछ युवकोंको उनके माँ-बापने शिक्षाके लिए इंग्लैंड भेज दिया है। इसमें माँ-बापने तो अपना कर्तव्य पूरा कर दिया; किन्तु यह कोई भी नहीं कह सकता कि उनका क्या बनेगा — घड़ा या गगरा; अभी तो मिट्टीका लोंदा चाकपर चढ़ा है।

केपमें सब मामला ठण्डा दिखाई देता है। वहाँ भारतीयोंको जो मौका है उसे वे खो रहे हैं। वहाँ दो विरोधी दल हैं; वे आपसमें लड़ते रहते हैं। इस स्थितिसे तीसरा पक्ष, जो दोनोंका शत्रु है लाभ उठा सकता है। वहाँका व्यापारिक कानून और प्रवासी कानून बहुत हानिकर हैं। वहाँ भी आन्तरिक स्थिति दयनीय है।

रोडेशियामें ट्रान्सवाल-जैसा कानून बननेका खतरा था। वह खतरा बिलकुल मिटा तो नहीं है, किन्तु उसपर साम्राज्य-सरकारकी मंजूरी मिलनेकी बहुत कम सम्भावना है।

डेलागोआ-बेकी हालत वैसी ही खराब है, जैसी वहाँकी हवा। भारतीय समाज सो रहा है। वहाँ जो कानून बनाया जाता है वह कैसा है, यह कोई पूछनेवाला दिखाई नहीं देता। वहाँ लोगोंका विचार यह दिखाई देता है कि अपना व्यापार ठीक चलता रहे और हमें पैसा मिलता रहे, इतना काफी है।

ऐसा जान पड़ता है कि ऑरेंज रिवर कालोनीमें भारतीय नहींके बराबर हैं। वहाँकी स्थितिमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। फेरफार कब होगा, यह भारतीयोंके हाथमें है।

ऐसा जान पड़ता है कि सबकी बाजी ट्रान्सवालके हाथमें है। नेटाल और ट्रान्सवालमें कानून बननेसे रुका, इसका मुख्य कारण ट्रान्सवालका संघर्ष ही माना जा सकता है। इस संघर्षने अब ऐसा रूप लिया है कि उसकी प्रशंसा सारे संसारमें हो रही है। भारतीय समाजकी प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई है। भारतके नगर-नगरमें ट्रान्सवाल [के भारतीयोंकी स्थिति] के सम्बन्धमें सभाएँ की जा रही हैं। इंग्लैंडमें भी चर्चा चल रही है। चार महीनेमें लगभग दो हजार लोग जेल जा चुके हैं। लोग तकलीफें बर्दाश्त करनेमें बहादुरी दिखा रहे हैं। और चारों ओरसे उनको संघर्षके लिए शाबाशी मिल रही है। लोगोंको नया हथियार मिला है। उनमें नया बल आया है। हमें इस बलकी विशेषता अभी दिखाई नहीं दी है। जनरल स्मट्सने दगा की है, लेकिन चूँकि भारतीय सत्याग्रही हैं, इसलिए उनकी यह दगा भी फायदेमन्द हो गई है। यह सत्यकी विशिष्टता है। उसके सम्मुख असत्य झुकता है, क्योंकि वह सत्यके मुकाबले टिक नहीं सकता। इसके अलावा लड़ाई ज्यों-ज्यों लम्बी होती जाती है त्यों-त्यों लोग ज्यादा जोर पकड़ते जाते हैं। लड़ाईके दूसरे तरीकोंसे लोग हमेशा अखीरमें कमजोर हो जाते हैं। इसका कारण यही है कि सत्यका सेवन करनेसे कमजोरी आ ही कैसे सकती है! वे उसका सेवन जितना करेंगे, उनका बल उतना ही बढ़ेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-१२-१९०८

७६. पत्र : मगनलाल गांधीको

सोमवारकी रात [दिसम्बर २८, १९०८][1]

चि० मगनलाल,

तुम्हारे पत्र मिले। जगतसिंहका मामला दुःखद है। मेरे विचारसे इसमें विशेष दोष हिन्दुओंका है। कारण, उनका कर्तव्य विशेष था, और वे उसमें चूक गये हैं।

जगतसिंहके ब्रह्मचर्यपर मोहित नहीं होना है। लक्ष्मण तथा इन्द्रजीत, दोनों ब्रह्मचारी और निद्राजीत थे। इसीलिए दोनों पराक्रमी भी थे। किन्तु, एकका पराक्रम आसुरी था और दूसरेका देवोचित। मतलब यह कि ब्रह्मचर्यादि व्रत आत्मार्थ हों, तभी वे पवित्र और सुखकर होते हैं। असुरोंके हाथमें पड़कर तो वे दुःखकी ही वृद्धि करते हैं। यह बात बहुत गम्भीर है, फिर भी इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि यह है यथार्थ। भगवान् पतंजलिने अपने 'योगदर्शन' में यह बहुत अच्छी तरह समझाया है। हमारे धर्मकी सीख भी तो यही है। 'मदनुग्रहाय' शब्द कंठस्थ कर लेने लायक है। यदि इसमें कुछ समझमें न आये अथवा कोई शंका हो तो पूछना।

तुम्हें आवेश आ जाता है, इसमें मुझे आश्चर्य नहीं होता। जैसे-जैसे गहरे उतरोगे और अनुभव प्राप्त करोगे, वैसे-वैसे तुम्हारा मन शान्त होता जायेगा, और तुम्हारे मनोवेगके शमित हो जानेपर तुम्हारा आत्मबल निखरेगा। हर पग उठाते समय, हर काम करते समय विचारपूर्वक उसका विश्लेषण करो और सोचो कि "क्या यह आत्मोन्नतिके लिए है?" और यह प्रश्न कि उससे हिन्दू धर्म ऊँचा उठेगा या नहीं, देश उन्नति करेगा या नहीं, पहले प्रश्नके भीतर ही आ जाता है। जो कदम उठानेसे आत्मोन्नति नहीं होती हो, उससे न देश चढ़ सकता है, न धर्म बढ़ सकता है।

यह स्वामीजीकी[2] उतावली प्रकृतिका परिणाम जान पड़ता है। बात बड़े खेदकी है। ऐसे ही परिणामोंको दृष्टिगत करके कविश्री[3] मुझसे बार-बार कहा करते थे कि इस युगमें धर्मगुरुओंसे डरकर चलना चाहिए। अनुभव भी ऐसा ही हो रहा है। सभी अपने-अपने मतको दृढ़ करनेका आग्रह रखते हैं। यही आग्रह यदि आत्मदर्शनके लिए रखें, तो अपना भी कल्याण हो और अन्तमें दूसरोंका भी। अन्यथा दोनों अधोगतिको प्राप्त होंगे।

श्रीमती पोलक कल चलेंगी। यह पत्र भी उसी दिन मिल जायेगा। तुम मैरित्सबर्ग गये होगे तो देरसे भी मिल सकता है।

शेष दूसरे पत्रमें।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४७८१) से।

१. यह पत्र कभी १९०८ के अन्तिम दिनोंमें लिखा गया था।

२. स्वामी शंकरानन्द।

३. श्रीमद् राजचन्द्र, देखिए खण्ड १ पृष्ठ ९१-९२

७७. नया वर्ष

पिछले वर्षका लेखा-जोखा हम ले चुके हैं।[1] अपनी जाँच-पड़ताल हमने विदेशी सम्वत्‌के अनुसार की, इससे हमें दुःख हुआ। हर विदेशी चीजकी जगह हम स्वदेशी दाखिल कर सकें तो दुःखका कारण न रहे। नये वर्षमें हम ऐसा करनेकी कोशिश करें, तो सहज ही सुखी हो सकते हैं। स्वदेशीमें बड़ा और गम्भीर अर्थ समाया हुआ है। स्वदेशीका अर्थ सिर्फ इतना ही नहीं है कि स्वदेशकी वस्तुओंका उपयोग किया जाये। उसका समावेश तो स्वदेशीमें हो ही जाता है, किन्तु उसके सिवा और जिस चीजका समावेश उसमें होता है वह ज्यादा बड़ी और ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। हम अपने बलपर जूझें, यह स्वदेशी है। "अपने बलपर जूझने" का अर्थ भी जानना चाहिए। "अपने बल" में हमारे शारीरिक, मानसिक और आत्मिक, तीनों तरहके बलका समावेश होजाता है। तब फिर हमें [इनमें से] किस बलके सहारे जूझना है? इस प्रश्नका उत्तर छोटा-सा है। आत्मा सबसे बढ़कर है; मनुष्य-जाति उसीकी नींवपर खड़ी है। और उसी रास्ते लड़नेमें अनाक्रामक प्रतिरोध या सत्याग्रह है। इसलिए भारतीयोंके लिए [सफलताकी] सही कुंजी यही है।

इस वर्ष ट्रान्सवाल और नेटालपर बहुत-कुछ निर्भर होगा। ट्रान्सवालकी लड़ाई चल रही है। नेटालमें परवाने (लाइसेंस) का सवाल खड़ा होनेवाला है। यदि ट्रान्सवालमें भारतीय लड़ाईसे हट जाते हैं तो नेटालपर उसका तुरन्त ही खराब असर होगा; क्योंकि सम्भावना ऐसी है कि नेटालमें इस वर्ष बहुत-कुछ इसी लड़ाईपर निर्भर रहेगा। नेटालमें सरकारके पास फरियाद करनेसे कुछ मिलनेवाला नहीं है। तब फिर कैसे मिलेगा? इस प्रश्नका उत्तर ट्रान्सवाल देता है। यानी, इस वर्ष क्या होगा, इस प्रश्नका उत्तर इस बातपर आधारित है कि ट्रान्सवालके भारतीय अन्ततक लड़ेंगे या नहीं।

यह आशा की जा सकती है कि जिस कौमके लगभग दो हजार लोग जेल हो आये हैं वह कौम हारेगी हरगिज नहीं, भले ही उसमें कुछ देशद्रोही भी क्यों न मौजूद हों। इस तरह विचार करनेपर प्रत्येक भारतीय देख सकता है कि यह वर्ष कैसा निकलेगा, यह बात उसीके हाथमें है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २-१-१९०९

१. देखिए "वर्षका लेखा-जोखा", पृष्ठ ११८-१९।

७८. फीनिक्सकी पाठशाला

इस पाठशालामें [बच्चोंके] प्रवेशके लिए हमारे पास कितने ही माता-पिताओंके पत्र आये हैं। पढ़ानेके लिए हम तैयार हैं। परन्तु बच्चोंको रखनेमें कुछ आर्थिक कठिनाइयाँ आती हैं। उन्हें दूर करनेकी हम कोशिश कर रहे हैं। इस सम्बन्धमें, आशा है, हम अगले अंकमें विशेष जानकारी दे सकेंगे।

इस बीच, जो लोग बच्चोंको पाठशालामें भेजना चाहते हैं, वे हमें उसकी लिखित सूचना दें। इसी तरह, यदि वे यह भी सूचित करेंगे कि वे आर्थिक सहायता कितनी दे सकते हैं, तो निर्णय तुरन्त किया जा सकेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१–१९०९

७९. नेटाल आनेवाले भारतीय यात्री

नेटाल आनेवाले भारतीय यात्रियोंकी असुविधाएँ बढ़ती जा रही हैं। इसमें दोष अधिकांशतः हमारा ही दिखाई देता है। कुछ यात्री [उपनिवेशमें] प्रविष्ट होनेके लिए अधीर हो जाते हैं। यदि उन्हें प्रवेशका अधिकार नहीं है तो वे उसकी परवाह नहीं करते। फलतः उनके कारण अन्य लोगोंको कष्ट उठाने पड़ते हैं। यदि इस सम्बन्धमें दोष हमारा है, तो उसका उपाय भी हमारे हाथमें होना चाहिए। हममें जब और जैसे-जैसे न्याय-बुद्धि बढ़ेगी तब और वैसे-वैसे हमारे कष्टोंका अन्त होगा। अन्य सब उपाय झूठे हैं और उनको बादलमें थिगली लगाने जैसा समझना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१–१९०९

८०. सत्याग्रहसे सबक

मैरित्सबर्गमें ग्रीन नामके एक गोरे सज्जन हैं। उन्होंने व्यक्ति-कर देनेसे इनकार कर दिया। इसपर वे न्यायाधीशके सामने पेश किये गये। उन्होंने साफ-साफ बयान दिया कि यह कर अन्यायपूर्ण है; इसलिए वे यह देना नहीं चाहते। न्यायाधीशने उन्हें कैदकी सजा दी है, और वे इस समय यह सजा भोग रहे हैं। यह उदाहरण अनोखा है। श्री ग्रीन दूसरोंको नहीं उकसाते। वे व्यक्ति-करको अन्यायपूर्ण मानते हैं। उन्हें बड़े-बड़े भाषण देना नहीं आता, इसलिए उन्होंने अपने मनमें ही निश्चय किया कि वे स्वयं यह कर न देंगे। फलस्वरूप उन्हें कैदकी सजा दी गई और वे उसे पसन्द करते हैं। इसीको कहते हैं सत्याग्रह। जिन्हें सत्य प्रिय होता है, वे दूसरोंका अन्धानुकरण नहीं करते। वे सत्यकी खातिर स्वयं ही कष्ट सहन करते रहते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१–१९०९

८१. मेरा जेलका दूसरा अनुभव [१][1]

प्रस्तावना

मुझे सन् १९०८ की जनवरीमें जेलका जो अनुभव हुआ था, उसकी तुलनामें मैं इस बारके अनुभवको ज्यादा अच्छा समझता हूँ। इसमें मुझे बहुत-कुछ सीखनेको मिला है, और मैं मानता हूँ कि इससे दूसरे भारतीयोंको भी लाभ होगा।

सत्याग्रहकी लड़ाई कई तरहसे लड़ी जा सकती है। लेकिन राजनीतिक दुःखोंको टालनेका मुख्य उपाय जेल जाना ही दिखलाई पड़ता है। मैं मानता हूँ कि हमें समय-समयपर जेल जाना पड़ेगा, और सो केवल वर्तमान लड़ाईके लिए ही नहीं, बल्कि आगे हमारे ऊपर जो दूसरे कष्ट आयेंगे उनके लिए भी यही उपाय है। इसलिए जेलके विषयमें जानने-जैसा जो भी हो वह सब जान लेना हम भारतीयोंका फर्ज है।

मैं पकड़ा गया

जिस समय श्री सोराबजी जेल गये उस समय मैंने चाहा था कि मैं भी उनके पीछे ही जेल पहुँचूँ तो अच्छा, नहीं तो कहीं ऐसा न हो कि उनके छूटनेके पहले ही कौमकी लड़ाई पूरी हो जाये। मेरी यह इच्छा पूरी नहीं हुई। वही इच्छा बादमें जब नेटालके बहादुर नेता जेल गये तब प्रबल हो उठी और [इस बार] पूरी भी हुई। मुझे डर्बनसे वापस आते हुए ७ अक्तूबर [१९०८] को फोक्सरस्ट स्टेशनपर पकड़ा गया; क्योंकि मेरे पास स्वेच्छया पंजीयन प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) नहीं था और मैंने अपनी अँगुलियोंकी छाप देनेसे इनकार कर दिया था।

डर्बन जानेमें मेरा उद्देश्य नेटालसे पढ़े-लिखे भारतीयोंको और ट्रान्सवालके पुराने भारतीय निवासियोंको ले आना था। ऐसी उम्मीद थी कि नेटालके नेताओंके पीछे भारतीयोंकी खासी बड़ी संख्या नेटालसे आनेके लिए तैयार हो जायेगी। सरकारका भी यही खयाल था। इस-लिए फोक्सरस्ट जेलके जेलरको वहाँ सौसे भी ज्यादा भारतीयोंके लिए व्यवस्था कर रखनेका हुक्म मिला था। और प्रिटोरियासे तम्बू, कम्बल, बर्तन आदि भेजे गये थे। जिस समय कुछ भारतीयोंके साथ मैं फोक्सरस्ट स्टेशनपर उतरा उस समय वहाँ पुलिस भी काफी थी। लेकिन यह सारा प्रयत्न व्यर्थ गया। जेलर और पुलिस दोनोंको निराश होना पड़ा, क्योंकि डर्बनसे मेरे साथ बहुत ही थोड़े भारतीय आये थे। उस गाड़ीमें तो सिर्फ छः ही थे। आठ व्यक्ति और उसी दिनकी दूसरी गाड़ीमें डर्बनसे चले। इस तरह कुल मिलाकर चौदह भारतीय आये। हम सबको पकड़कर जेल ले जाया गया। दूसरे दिन मजिस्ट्रेटके सामने पेश किया गया; लेकिन मुकदमा सात दिनके लिए मुल्तवी कर दिया गया। हम लोगोंने जमानतपर छूटनेसे इनकार कर दिया। श्री मावजी करसनजी कोठारीको, जो अर्शकी बीमारीसे पीड़ित होते हुए भी

१. जेलके अपने पहले अनुभवपर लिखे गांधीजीके लेखोंके लिए देखिए खण्ड ८।

जेल आये थे, बीमारी बढ़ जानेके कारण और फोक्सरस्टमें धरनेदारोंकी जरूरत होनेके कारण दो दिन बाद जमानतपर छुड़ा लिया गया।

जेलकी स्थिति

हम जेलमें पहुँचे उस समय श्री दाउद मुहम्मद, श्री रुस्तमजी, श्री आंगलिया — जिनसे लड़ाईका दूसरा दौर शुरू हुआ था — श्री सोराबजी अडाजनिया तथा दूसरे भारतीय करीब पच्चीसकी संख्यामें वहाँ थे। उस समय रमजानका महीना चल रहा था, इसलिए मुसलमान भाई रोजा रखते थे। उनके लिए शामके समय श्री ईसप सुलेमान काजीकी ओरसे खाना आता था। इस सुविधाके लिए जेल-अधिकारियोंसे विशेष अनुमति प्राप्त कर ली गई थी। इसलिए वे रोजा ठीकसे रख सकते थे। यद्यपि बाहरकी जेलोंमें बत्तीकी सुविधा नहीं होती, फिर भी रमजानके कारण बत्ती तथा घड़ी रखनेका हुक्म दे दिया गया था। सब लोग श्री आंगलियाके नेतृत्वमें नमाज पढ़ते थे। रोजा रखनेवालोंको शुरूके दिनोंमें तो सख्त काम दिया गया था, लेकिन बादमें उन्हें ऐसा काम नहीं दिया गया।

बाकी भारतीय कैदियोंके लिए हमारे ही लोगोंको रसोई बनानेकी इजाजत थी। यह काम श्री उमियाशंकर शेलत और श्री सुरेन्द्रराय मेढने सम्भाला था, और बादमें जब कैदियोंकी संख्या बढ़ी तब श्री जोशी भी उनके साथ लग गये थे। जब इन भाइयोंको देश-निकाला हो गया तब रसोईका काम श्री रतनशी सोढा, श्री राघवजी तथा श्री मावजी कोठारीपर आया। उसके बाद फिर जब आदमी बहुत ज्यादा हो गये तब उसमें श्री लालभाई और उमर उस्मान भी शामिल हो गये। इन रसोई बनानेवालोंको सुबह दो या तीन बजे उठना पड़ता था और शामके पाँचसे छः बजेतक उसीमें लगे रहना पड़ता था। जब बहुत-से कैदियोंको छोड़ दिया गया तब रसोईका काम श्री मूसा ईशाकजी और इमाम साहब बावजीरने लिया। इस तरह जिन भारतीयोंने हमीदिया इस्लामिया अंजुमन (हमीदिया इस्लामिक सोसाइटी) के अध्यक्ष और एक व्यापारीके — जिनमें से किसीने भी रसोईका काम सच पूछिए तो कभी किया ही नहीं था — हाथकी रसोई चखी, उनको मैं बहुत भाग्यवान मानता हूँ। जब इमाम साहब और उनके साथके लोग छूटे, तब रसोईके कामका यह उत्तराधिकार मुझे मिला। मुझे उसका कुछ अनुभव था, इसलिए बिल्कुल असुविधा नहीं हुई। मुझे यह काम कुल चार ही दिन करना पड़ा। अब (यानी जब यह लेख लिखा जा रहा है) इस कामको श्री हरिलाल गांधी करते हैं। हम जेलमें दाखिल हुए उस समय रसोई कौन करता था, यह बात ऊपर दिये गये उपशीर्षकके अन्दर आती नहीं है; तो भी पाठकोंकी जानकारीके लिए यहाँ दे दी है।

हमारे जेलमें दाखिल होनेके समय सोनेकी तीन कोठरियाँ थीं। भारतीय कैदियोंका समावेश उन्हींमें किया गया था। इस जेलमें भारतीयों और वतनियोंको अलग-अलग ही रखा जाता था।

जेलकी व्यवस्था

पुरुषोंकी जेलके दो विभाग हैं: एक यूरोपीयोंके लिए और दूसरा वतनियोंके लिए, जिसमें गोरोंसे भिन्न बाकी कैदियोंको जगह दी जाती है। इसलिए यद्यपि भारतीयोंको वतनियोंके विभागमें रखा जा सकता था, तो भी जेलरने उनके रहनेकी व्यवस्था गोरोंके विभागमें कर दी थी।

कैदियोंके लिए छोटी-छोटी कोठरियाँ होती हैं और हरएक कोठरीमें दस-पन्द्रह अथवा ज्यादा कैदी रखनेकी व्यवस्था होती है। कैदखाना पूरा पत्थरका बना हुआ है। कोठरियाँ ऊँची हैं। दीवारोंपर पलस्तर है, और फर्श हमेशा धोया जाता है, इसलिए खूब साफ रहता है। दीवारोंपर भी अकसर चूना पोता जाता है, इसलिए हमेशा नई जैसी दिखती हैं। आँगन काले पत्थरका है और हमेशा धोया जाता है। उसमें तीन आदमी एक साथ नहा सकें, ऐसे फुहारेदार नलकी व्यवस्था है। दो पाखाने हैं और बैठनेके लिए बेंचें हैं। ऊपर कँटीले तारोंकी बनी हुई जाली जड़ी है। जाली इसलिए लगाई गई है कि कैदी दीवारपर चढ़कर भाग न जाये। हरएक कोठरीमें हवा और प्रकाशकी अच्छी व्यवस्था है। उसमें कैदियोंको शामके छः बजे बन्द कर देते हैं और सवेरे छः बजे खोलते हैं। रातके समय कोठरियोंमें बाहरसे ताला लगा दिया जाता है। यदि किसीको रातके समय कुदरती हाजत हो तो वह कोठरीके बाहर नहीं जा सकता, इसलिए कोठरीमें ही हाजत रफा करनेके लिए कीटाणु-नाशक पानीसे भरा हुआ बर्तन हमेशा रखा रहता है।

खुराक

मैं जिस समय फोक्सरस्ट जेलमें पहुँचा उस समय वहाँ भारतीय कैदियोंको सुबहके समय पूपू [मकईका दलिया] और दोपहर तथा शामको चावल और कुछ शाक दिया जाता था। शाकमें ज्यादातर आलू होते थे। घी बिलकुल नहीं मिलता था। जो कच्ची जेलमें थे[1] उन्हें उस खुराकके सिवा सुबह पूपूके साथ एक औंस चीनी और दोपहरको आधा पौंड डबल-रोटी मिलती थी। कच्ची जेलवाले कुछ लोग अपनी डबल-रोटी और चीनीमें से थोड़ा हिस्सा पक्की जेलवालोंको दे देते थे। कैदियोंको हफ्तेमें दो दिन मांस पानेका हक था। किन्तु हिन्दुओं अथवा मुसलमानोंको मांस न मिलनेके कारण उसकी एवजमें कोई दूसरी चीज मिलनी चाहिए थी। इसलिए हम लोगोंने अर्जी[2] दी और उसका परिणाम यह हुआ कि हमें एक औंस घी और मांसके दिन उसकी एवजमें आधा पौंड सेमकी दाल देनेका हुक्म हुआ। इसके सिवा, जेलकी बाड़ीमें चौलाईकी जो भाजी अपने-आप उगती थी उसे तोड़ने देते थे, और जब-तब बाड़ीमें से प्याज ले आनेकी अनुमति भी थी। इसलिए घी और सेमकी दालका हुक्म मिलनेके बाद खुराकके विषयमें कहनेके लिए ज्यादा नहीं रह जाता। जोहानिसबर्गकी जेलमें खुराक कुछ अलग है। वहाँ चावलके साथ सिर्फ घी मिलता है, शाक नहीं मिलता। शामके समय दो दिन हरी भाजी और पूपू मिलता है, तीन दिन सेमकी दाल मिलती है और एक दिन आलू और पूपू मिलता है।

यह खुराक हमारी आदतके अनुसार तो पर्याप्त नहीं कही जा सकती; फिर भी सामान्यतः बुरी नहीं कही जायेगी। बहुतेरे भारतीयोंको पूपूसे नफरत है, इसलिए वे उसे जान-बूझकर नहीं खाते। किन्तु मैं तो इसे बड़ी भूल मानता हूँ। पूपू मीठा लगता है और शक्तिप्रद है। इस देशमें वह गेहूँकी जगह ले सकता है। यदि उसमें शक्कर मिलाई जाये, तो वह बहुत स्वादिष्ट लगता है। लेकिन शक्कर न मिलाई गई हो तो भी भूख लगनेपर खाया जाये तो मीठा मालूम होता है। पूपू खानेकी आदत हो जाये तो यही नहीं कि ऊपर बताई हुई खुराकमें मनुष्य भूखा न मरेगा; उससे उसका शरीर मजबूत भी बनेगा। उसमें कुछ फेरफार किया जाये तो वह पूरी

१. हवालाती अथवा विचाराधीन कैदी।

२. देखिए "प्रार्थनापत्र: रेजिडेन्ट मजिस्ट्रेटको", पृष्ठ ९७-९८।

तरह सम्पूर्ण खुराकका काम दे सकता है। लेकिन दुःखकी बात यह है कि हम ऐसे स्वाद-लोलुप हो गये हैं और हमने अपनी आदतोंको ऐसा बिगाड़ा है कि हमें अपनी आदतके मुताबिक खुराक न मिले तो हम आपा खो बैठते है । ऐसा अनुभव हुआ मुझे फोक्सरस्टमें, और उससे मैं बहुत दुःखी हुआ। खुराककी शिकायत हमेशा होती रहती थी, और ऐसी चीख-पुकार अक्सर मची रहती थी मानो, खुराक ही हमारा जीवन हो या हम खानेके लिए ही जीते हों। ऐसा आचरण सत्याग्रहीको शोभा नहीं देता। खुराकमें फेरफार करानेकी कोशिश करना हमारा कर्तव्य है; लेकिन हमारा कर्तव्य यह भी है कि यदि फेरफार न हो तो जो मिलता हो उसीमें सन्तोष मानकर हम सरकारको बता दें कि हम उससे हारनेवाले नहीं हैं। कुछ भारतीय केवल खुराककी असुविधाके कारण जेलसे डरते हैं। उन्हें विचारपूर्वक खुराकके विषयमें अपनी लालसाओंको छोड़ना है।

पक्की जेल मिली

जैसा मैं ऊपर कह चुका हूँ, हम सब लोगोंका मुकदमा सात दिन तक मुल्तवी रहा; इसलिए १४ अक्तूबरको मुकदमा चला। उसमें कुछ भारतीयोंको एक माहकी और कुछको छः सप्ताहकी सख्त कैदकी सजा मिली। एक बालकको, जो ग्यारह वर्षका था, १४ दिनकी सादी कैद मिली। मैं इस भयसे चिन्तित था कि सरकार मेरे ऊपरसे कहीं मुकदमा उठा न ले। दूसरोंके मामले खत्म होनेके बाद मजिस्ट्रेटने मुकदमा कुछ समयके लिए मुल्तवी रखा, इसलिए मैं ज्यादा घबड़ाया। पहले तो बात ऐसी चल रही थी कि मेरे ऊपर स्वेच्छया पंजीयन प्रमाणपत्र न बताने और अँगुलियोंकी छाप न देनेका जुर्म ही नहीं, बल्कि दूसरे अनधिकारी भारतीयोंको ट्रान्सवालमें दाखिल करनेका जुर्म भी लगाया जायेगा। मैं इसी सोच-विचारमें पड़ा हुआ था तभी मजिस्ट्रेट कचहरीमें वापस आये और मेरे मामलेकी पुकार हुई। मुझे २५ रुपये दण्ड अथवा दो माहकी सख्त कैदकी सजा मिली। इससे मैं बहुत खुश हुआ और यह सोचकर अपनेको भाग्यवान समझने लगा कि मुझे दूसरे भाइयोंके साथ कैदमें रहनेका अवसर मिला।

जेलके कपड़े

जेलमें पहुँचनेपर हमें कैदीके कपड़े दिये गये। एक छोटा परन्तु मजबूत पाजामा, मोटे कपड़ेकी कमीज, उसके ऊपर पहननेका एक ढीला जाकेट, एक टोपी, एक तौलिया, मोजे और सैंडल — इतनी चीजें मिलीं। मुझे लगता है कि ये कपड़े काम करनेके लिए बहुत अनुकूल हैं; टिकाऊ और सादे हैं। ऐसे कपड़ोंके खिलाफ हमें कोई शिकायत नहीं हो सकती। ऐसे कपड़े हमेशा पहनने पड़ें तो भी इसमें घबड़ानेकी कोई बात नहीं है। गोरोंको कुछ अलग किस्मके कपड़े मिलते हैं। उन्हें पेंदीदार टोपी मिलती है और घुटनों तक पहुँचनेवाले मोजे तथा दो तौलियोंके अलावा रूमाल भी मिलता है। रूमाल भारतीय कैदियोंको भी देनेकी जरूरत जान पड़ती है।

(क्रमशः)

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१–१९०९

८२. भेंट : 'नेटाल मर्क्युरी' को

[डर्बन
जनवरी ५, १९०९]

नेटालवासी भारतीयोंके सुप्रसिद्ध नेता श्री गांधी, जिन्होंने पिछले वर्ष ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके आन्दोलनमें प्रमुख भाग लिया है, इस समय डर्बन आये हुए हैं और कल उनसे 'नेटाल मर्क्युरी' के प्रतिनिधिने भेंट की थी।

उसने श्री गांधीसे ट्रान्सवालकी वर्तमान स्थितिकी रूपरेखा बताने और विशेषतः यह बतानेकी प्रार्थना की कि आन्दोलनका दूसरा चरण, जिसे "अनाक्रामक प्रतिरोध आन्दोलन" कहा जाता है, किन कारणोंसे आरम्भ हुआ। श्री गांधीने कहा :

मैंने 'मर्क्युरी' की अभी हालकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ पढ़ी हैं, जिनमें कहा गया है कि हम इस आन्दोलनको उसी शिष्टता और शालीनता नहीं चला रहे हैं जिससे हमने इसे आरम्भ किया था। मैं कहना चाहता हूँ कि जब मैंने यह बात पढ़ी, मुझे बहुत दुःख हुआ; क्योंकि मैंने तो सदा यही समझा है कि 'मर्क्युरी' भारतीयोंसे उनके संघर्षके सम्बन्धमें मतभेद रखता हो या मतैक्य, हमें उसने उचित तरीकोंसे लड़ने और नेकनीयती रखनेका श्रेय सदा ही दिया है। मैं निस्संकोच कह सकता हूँ कि हमने अपने संघर्षमें शिष्टता और शालीनताको भी नहीं छोड़ा। हमने जब यह संघर्ष आरम्भ किया था, सोच-विचारकर किया था। हमारी इच्छा यथासम्भव शुद्धसे-शुद्ध शस्त्र काममें लेनेकी थी और उस समय हमने जो सिद्धान्त स्थिर किये थे, उनका हमने त्याग नहीं किया है।

इन सिद्धान्तोंकी संक्षेपमें परिभाषा पूछी जानेपर श्री गांधीने कहा :

हम सब प्रकारकी हिंसाके अवलम्बनसे दूर रहे हैं और स्वयं कष्ट सहकर सरकारको केवल यह बतानेका प्रयत्न कर रहे हैं कि हम उस कानूनको न मानेंगे जो, हमारे खयालसे, हमारी अन्तरात्माको ठेस पहुँचाता है और अन्यथा आपत्तिजनक है। इसे अधिक अच्छा शब्द न मिलनेके कारण "अनाक्रामक प्रतिरोध" कहा गया है। सीधी-सादी भाषामें कहें, तो यह वस्तुतः बुराईका उत्तर बुराईसे न देकर धैर्यपूर्वक बुराईसे लड़ना है। इसलिए इस संघर्षमें हिंसा करने या डराने-धमकानेका कोई प्रश्न नहीं हो सकता। साथ ही मैं यह भी स्वीकार करता हूँ कि भारतीय समाजके कुछ सदस्य इस उद्देश्यके लिए अपने उत्साहके अतिरेकमें उन लोगोंके विरुद्ध धमकियोंका प्रयोग करनेमें नहीं हिचकिचाते हैं, जिन्होंने साथ छोड़ दिया है और कानूनको माननेका [निर्णय किया है]; किन्तु जब कभी ऐसे कार्य नेताओंकी नजरमें आये हैं, उनका उपाय तत्काल किया गया है; और ऐसे कार्योंसे अपने-आपको विलग कर लेनेका पूरा उद्योग किया गया है। हमपर यह आरोप भी लगाया गया है कि हमने नेटालके भारतीयोंको संघर्षमें भाग लेनेके लिए बुलाया है। यह सच नहीं है। नेटालके जो भारतीय ट्रान्सवाल गये हैं उन्हें ट्रान्सवालमें निवास करनेका अधिकार है। वे वहाँ इसलिए गये हैं कि उन्हें लगा, यदि वे मूलतः ट्रान्सवालके निवासी होनेके नाते हमारे तपमें भाग न लें तो उसके फलको भोगनेके

अधिकारी भी नहीं हो सकते। उनको वहाँ जानेका अधिकार है, क्योंकि नये कानूनके अन्तर्गत जो भारतीय लड़ाईसे पहले तीन सालतक ट्रान्सवालमें रहा है, वह वहाँ वापस जानेका अधिकारी है। मैं देखता हूँ, यह भी कहा गया है कि हम संघर्षके इस दूसरे दौरमें ऐसा लाभ उठानेका प्रयत्न भी कर रहे हैं जिसका अधिकार अनाक्रामक प्रतिरोध आरम्भ करनेके या गत जनवरीका समझौता किया जानेके समय हमें प्राप्त नहीं था। यह भी गलत है। समझौतेके समय स्थिति पूर्णतः स्पष्ट थी। भारतीय १९०७ के एशियाई कानूनको रद करानेके लिए लड़ रहे थे। इसका अर्थ यह नहीं है कि हमें देशमें रहनेके अधिकारी प्रत्येक एशियाईकी पूरी शिनाख्तपर एतराज था। हमने जिस बातपर एतराज किया था, वह थी १९०७ के कानूनमें निहित भावना और उसके कुछ आपत्तिजनक खण्ड। हमने दरअसल तरीकोंपर एतराज किया था। उदाहरणके लिए अँगुलियोंके निशानोंके प्रश्नपर — जिसके लिए मुझे वस्तुतः शारीरिक चोटें सहनी पड़ीं — मैंने संघर्षके दौरान कभी यह नहीं कहा कि अँगुलियोंके निशान देना स्वतः आपत्तिजनक है। संघर्ष वस्तुतः इसलिए छेड़ा गया था कि भारतीयोंके प्रत्येक आवेदन-निवेदनकी और उनकी प्रत्येक पोषित भावनाकी पूरी अवहेलना की गई थी।

इसके बाद श्री गांधीने जो समझौता किया गया था उसका उल्लेख किया और कहा :

जहाँतक समझौतेका सम्बन्ध है, यद्यपि यह सच है कि उसमें १९०७ के एशियाई कानूनको रद करनेके सम्बन्धमें स्पष्ट शब्दोंमें कुछ नहीं कहा गया है, फिर भी उसकी लिखित शर्तोंके गर्भित अर्थसे कोई भी यह निष्कर्ष निकाल सकता है। किन्तु जैसा मैंने प्रायः कहा है, और अब फिर कहता हूँ, जनरल स्मट्सने विचारपूर्वक किन्तु मौखिक रूपसे यह वचन दिया था कि यदि ब्रिटिश भारतीय समझौतेका अपना भाग पूरा कर देंगे, अर्थात् स्वेच्छया पंजीयन (वालंटरी रजिस्ट्रेशन) करा लेंगे, तो वे कानूनको रद कर देंगे। समस्त दक्षिण आफ्रिका जानता है, हमने वैसा कर दिया है। मैं यह भी कह दूँ कि जनरल स्मट्सने समझौता होनेके तीन दिन बाद अपना यह वचन रिचमंडमें भाषण[1] देते हुए दोहराया था। और यद्यपि उस भाषणकी ओर उनका ध्यान आकर्षित किया गया है, फिर भी उन्होंने उसका खण्डन कभी नहीं किया और न उसमें कोई किन्तु-परन्तु ही जोड़ी है। यदि यह कानून रद कर दिया गया होता तो निश्चय ही किसी तरहका आन्दोलन न होता और न शिक्षित भारतीयोंके दर्जेका प्रश्न ही उठता, क्योंकि जैसा ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयके हालके फैसलेसे सिद्ध हो गया है, शिक्षित भारतीय ट्रान्सवालके प्रवासी-कानूनके अन्तर्गत निषिद्ध प्रवासी नहीं हैं। उनका प्रवेशका अधिकार केवल १९०७ के एशियाई कानूनके द्वारा प्रभावित हुआ है और छीना गया है। इसलिए १९०७ के एशियाई कानूनको रद करनेसे शिक्षित एशियाइयोंको फिर अधिकार प्राप्त हो जाता।

भेंटकर्ता : आपका मतलब तो दरअसल नये आनेवाले लोगोंसे है?

श्री गांधी : हाँ; और यह याद रहे कि ये शिक्षित भारतीय लड़ाईसे पहले या उसके बाद शान्ति-रक्षा अध्यादेश (पीस प्रिज़र्वेशन ऑर्डिनेन्स) से प्रभावित नहीं हुए थे; इसलिए शिक्षित एशियाइयोंका प्रश्न किसी भी अर्थमें नया प्रश्न नहीं है। इसका उल्लेख अब प्रमुख रूपसे और पृथक् रूपसे उस विवादके कारण किया गया है जो कानूनको रद करनेके सम्बन्धमें और उसको रद करनेके लिए किये गये जनरल स्मट्सके प्रस्तावके सम्बन्धमें तथा ऐसी कुछ

१. देखिए खण्ड ८, परिशिष्ट ८।

दूसरी शर्तोंको पूरा करनेके सम्बन्धमें उठाया गया है, जिनका जनवरीके समझौतेके वक्त कोई खयाल नहीं था। इन शर्तोंमें एक शर्त यह थी कि हम शिक्षित भारतीयोंके अधिकारोंको छोड़ दें और ट्रान्सवाल प्रवासी कानूनके अन्तर्गत उनका निषिद्ध प्रवासी माना जाना मंजूर कर लें। मैं दावा करता हूँ कि इस प्रकारका सौदा कोई भी स्वाभिमानी भारतीय स्वीकार नहीं कर सकता। जहाँतक इस मामलेकी खूबियों और खामियोंका सम्बन्ध है, इस समय इस विवादका स्वरूप विशुद्ध सैद्धान्तिक हो गया है। सभी स्वीकार करते हैं कि, १९०७ का कानून उपनिवेशीय दृष्टिकोणसे भी, यदि प्रत्यक्ष हानिकर नहीं तो व्यर्थ अवश्य है। सर्वोच्च न्यायालयने, अपने अभी हालमें दिये गये दोनों फैसलोंमें ऐसा ही कहा है। भारतीयोंकी शिनाख्त या उनके पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) के लिए इसकी आवश्यकता नहीं है। यह बात पिछले सालके नये कानूनसे सन्तोषजनक रूपमें पूरी हो जाती है। इन शिक्षित भारतीयोंके सम्बन्धमें यह मान लिया गया है कि यदि हमें इस देशमें एक प्रगतिशील समाजके रूपमें रहना है तो हमें अपनी आवश्यकताएँ पूरी करनेके लिए कुछ अत्यन्त उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंको लानेका अधिकार है। शिक्षित भारतीयोंके सम्बन्धमें एकमात्र कठिनाई यह है कि जहाँ जनरल स्मट्स कहते हैं, वे केवल रियायतके तौरपर और अस्थायी अनुमतिपत्र (परमिट) लेकर ही आ सकते हैं, वहाँ हम यह मानते हैं कि उनको आनेका अधिकार ही होना चाहिए, बशर्ते कि वे प्रवासी अधिकारी (इमिग्रेशन ऑफिसर) द्वारा लागू की गई शिक्षा-परीक्षा पास कर लें। हमने यह भी कहा है कि यह परीक्षा इतनी कड़ी हो सकती है कि उससे किसी भी वर्षमें ऐसे केवल छः व्यक्ति ही ट्रान्सवालमें आ सकें। यह आसानीसे किया जा सकता है, यह बात नेटाल, केप और आस्ट्रेलियामें चालू व्यवस्थासे सिद्ध हो जाती है। आस्ट्रेलियामें, जहाँतक मैं जानता हूँ, शिक्षा-परीक्षासे एक भी एशियाई नहीं जाने दिया गया है।

श्री गांधीने आगे कहा:

अब अनाक्रामक प्रतिरोधियोंसे कहा गया है कि यद्यपि ये दोनों बहुत ही उचित माँगें अनाक्रामक प्रतिरोध आरम्भ किये जानेसे पहले स्वीकार की जा सकती थीं, अब स्वीकार नहीं की जा सकतीं; क्योंकि अनाक्रामक प्रतिरोधके सम्मुख झुकनेका वतनी लोगोंके मस्तिष्कपर बुरा प्रभाव पड़ सकता है। व्यक्तिगत रूपसे मेरा विचार यह है कि यह भय बिलकुल निराधार है। पहले तो, यदि हमारी माँगें उचित हैं तो हम अनाक्रामक प्रतिरोधी भले ही हों, वे स्वीकार की जानी चाहिए; और दूसरे, यदि वतनी लोग हमारे तरीकोंको अपना लें और शारीरिक हिंसाके स्थानपर अनाक्रामक प्रतिरोधसे काम लें तो इससे दक्षिण आफ्रिकाको निश्चित लाभ ही होगा। अनाक्रामक प्रतिरोधी अनुचित करते हैं तो वे उससे अपने आपको ही हानि पहुँचाते हैं। जब वे उचित करते हैं, तब उन्हें हर कठिनाईके बावजूद सफलता मिलती है। नेटालमें यह आसानीसे देखा जा सकता है। जब बम्बाटाको लगा कि व्यक्ति-कर लगाना अनुचित है, उन्होंने इन्स्पेक्टर हंटकी हत्या कर दी। अगर इसके बजाय वे केवल अनाक्रामक प्रतिरोधको अपनाते तो इतना रक्तपात न होता और बहुत-सा रुपया बच जाता। दूसरी ओर, अगर समष्टि रूपमें वतनी लोगोंको व्यक्ति-कर अखरता न होता, तो बम्बाटाका अनाक्रामक प्रतिरोध व्यर्थ हो जाता। इसके विपरीत, यदि वतनी लोग कर लगानेपर किसी बड़ी संख्यामें आपत्ति करते तो सरकार चाहे जितना बल-प्रयोग करती, वह सम्भवतः उन लोगोंसे कर वसूल करनेके लिए

काफी न होता; वे किसी प्रकारके उपद्रवका आश्रय लिये बिना चुपचाप बैठे रहते और कर देनेसे इनकार करते रहते। इसलिए मेरी सम्मतिमें दक्षिण आफ्रिकाके उपनिवेशियोंको वल-प्रयोगके स्थानमें अनाक्रामक प्रतिरोधका तो स्वागत करना चाहिए। और आखिर, क्या यह मूसाके दाँतके बदले दाँतके कानूनकी जगह ईसाके बुराईका प्रतिवाद बुराईसे न करनेके कानूनकी स्थापना नहीं है?

भेंटकर्ता: सार-रूपमें कहें, तो मेरा खयाल है कि यदि वादा किया गया था तो आप उस वादेपर जोर दे रहे हैं; या, वादा किया गया हो या न किया गया हो, आप १९०७के एशियाई कानूनको रद करनेका आग्रह कर रहे हैं, क्योंकि आप केवल यह चाहते हैं कि ट्रान्सवालमें शिक्षित भारतीयोंके आनेके अबाध अधिकारकी स्थापना कर दें। यही बात है न?

श्री गांधी: निश्चय ही, यदि वे परीक्षा पास कर सकें।

भेंटकर्ता: लेकिन साम्राज्य-सरकारने यह रुख इख्तियार किया है कि एक स्वशासित उपनिवेशकी सरकार जिसे चाहे प्रवेश करनेसे रोक सकती है; कमसे-कम मोटे तौरपर यही स्थिति ग्रहण की गई है। दूसरी ओर आप एक ऐसे हकका दावा करते हैं जिसे साम्राज्य-सरकार स्वशासित उपनिवेशका हक बताती है; और कहते हैं कि वह एक वर्ग-विशेषको आनेसे नहीं रोक सकती।

श्री गांधी: मेरे खयालसे साम्राज्य-सरकारने किसी भी अवस्थामें यह रुख इख्तियार नहीं किया है कि स्वशासित उपनिवेशको जिसे चाहे आनेसे रोकनेका पूरा अधिकार है। लेकिन अगर ऐसी बात कही गई है, तो यह अबतक काममें लाई गई उपनिवेशीय नीतिका त्याग है। मेरा यह खयाल नहीं है कि साम्राज्य-सरकार किसी ऐसे कानूनको पास कर देगी। साम्राज्य-सरकारने ट्रान्सवालके प्रवासी-कानूनके सम्बन्धमें भूल की—अर्थात् उसके किसी भी खण्डमें एशियाइयोंका उल्लेख नहीं था, सिर्फ अत्यन्त अप्रत्यक्ष रूपसे उल्लेख था; लेकिन ट्रान्सवाल सरकारने एक खण्डकी ऐसी व्याख्या की है, जिसका यह परिणाम होता है। साम्राज्य सरकारको उसे स्वीकार करनेके बाद अब प्रभावकारी हस्तक्षेप करनेमें बहुत कठिनाई हो रही है। अगर साम्राज्य-सरकार अब यह कहे कि स्वशासित उपनिवेशोंको चाहे जिसे आनेसे रोकनेका पूरा अधिकार है तो इससे अबतक काममें लाई गई उपनिवेशीय नीतिमें एक नई बात जुड़ती है। आप जानते हैं कि १८९७ में स्वर्गीय श्री एस्कम्बने एशियाइयोंको इस उपनिवेशमें आनेसे रोकनेके सम्बन्धमें श्री चेम्बरलेनके सामने कानूनका एक मसविदा पेश किया था। श्री चेम्बरलेनने तब कहा था कि वे उसे पास न करेंगे। उन्होंने सुझाव दिया था कि जो भी प्रवेश-निषेध कानून बने वह जाति-विशेषपर नहीं, बल्कि सबपर लागू होना चाहिए। उस सुझावको मान लिया गया और तबसे नेटालके कानूनका अनुकरण सभी उपनिवेशोंमें किया जा चुका है। लेकिन मेरा खयाल है कि साम्राज्य-सरकारके मन्त्रियोंने चाहे जिसे आनेसे रोकनेके उपनिवेशोंके अधिकारके सम्बन्धमें जो-कुछ कहा है उस बारेमें आपको कोई निश्चित घोषणा नहीं मिलेगी।

यह पूछा जानेपर कि ट्रान्सवालमें इस समय स्थिति क्या है, श्री गांधीने कहा:

आज स्थिति यह है कि भारतीय पिछले दो वर्षसे संघर्ष कर रहे हैं और २,००० से अधिक लोग ट्रान्सवालकी जेलोंमें गये हैं—अर्थात् ट्रान्सवालकी वास्तविक भारतीय आबादीका एक-तिहाई भाग और ट्रान्सवालकी सम्भावित भारतीय आबादीका छठा भाग। इससे कुछ प्रतिनिधि

यूरोपीयोंका भी विश्वास प्राप्त हो गया है और फलस्वरूप एक छोटी समिति बनाई गई है, जिसके अध्यक्ष श्री डब्ल्यू० हॉस्केन हैं। इस समितिने ब्रिटिश भारतीयोंको वचन दिया है कि वह उनके संघर्षमें, आवश्यकता पड़ी तो, कैदका सामना करनेकी हद तक भी तबतक सहायता देगी जबतक उनकी माँगें, जिन्हें ये मित्र उचित मानते हैं, मान नहीं ली जातीं। सरकारका खयाल है कि वह हमें भूखों मारकर झुका सकेगी। यह बिलकुल सच है कि शायद कुछ लोग थक जायें और घुटने टेक दें; लेकिन मेरा विश्वास है कि हममें ऐसे लोगोंकी संख्या बहुत बड़ी और पर्याप्त है जो सब कठिनाइयोंके बावजूद संघर्ष जारी रखेंगे। कुछ लोग ऐसे हैं, जिन्होंने अपना कारोबार बेच दिया है, हर चीज छोड़ दी है और केवल संघर्ष चला रहे हैं; क्योंकि उनका खयाल है कि यह एक बड़े सिद्धान्तका सवाल है। और यदि मेरा अनुमान सत्य है, तो मैं यही कह सकता हूँ कि फल केवल एक ही हो सकता है, अर्थात् यह कि हमारी माँगें मान ली जायेंगी। यह काम कितनी जल्दी या देरसे होगा, यह हमारी अपनी शक्तिपर निर्भर होगा। फिर इंग्लैंडमें हमारी ब्रिटिश भारतीय समिति है। इसके अध्यक्ष लॉर्ड एम्टहिल भी इसी उद्देश्यसे काम कर रहे हैं। वे कभी भारतके कार्यवाहक वाइसराय थे। इस समितिमें कई प्रभावशाली आंग्ल-भारतीय हैं, जिनका अनुभव बहुत व्यापक है और मेरा खयाल है कि यदि हममें पर्याप्त धैर्य हो तो हमें सभीकी सहानुभूति मिल सकेगी। इस बीच ट्रान्सवाल सरकारने फिर सक्रिय कार्रवाई शुरू कर दी है। मुझे एक तार मिला है जिसमें कहा गया है कि लगभग ३० भारतीय निर्वासित कर नेटाल भेजे जा चुके हैं, वे ट्रान्सवालमें फिर प्रविष्ट हो गये हैं और अब मुकदमे चलाये जानेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। मुझे मालूम हुआ है कि इस बार उनपर एक अलग धाराके अन्तर्गत मुकदमे चलाये जायेंगे, इसलिए वे कैदकी सजा भुगतेंगे। नेटालके नेता और ३३ दूसरे व्यक्ति न्यायाधीशके सम्मुख शायद कल लाये जायेंगे। उनका भी यही हाल होगा। इस तरह ट्रान्सवालकी जेलोंको भरनेकी प्रक्रिया आरम्भ हो गई है। देखना यह है कि वे इस कार्यको पूरा करते हैं या नहीं। जाहिर है, सरकार यह सोचती है कि इन कड़ी कार्रवाइयोंसे और न्यायाधीशों द्वारा कानूनमें निहित पूरी सजाएँ दी जानेसे भारतीय झुक जायेंगे तथा कानूनको मान लेंगे। लेकिन मेरा खयाल ऐसा नहीं है।

भेंटकर्ता: क्या ट्रान्सवालके वैध-निवासी, कानूनपालक भारतीयोंको मौजूदा कानूनोंके खिलाफ कोई ठोस शिकायतें हैं?

श्री गांधी: अवश्य। यद्यपि हम इस समय किन्हीं ऐसी शिकायतोंके आधारपर नहीं लड़ रहे हैं, फिर भी शिकायतें तो हैं ही। उदाहरणके लिए, कानूनको सबसे ज्यादा माननेवाले भारतीयको भूमिके स्वामित्वसे वंचित कर दिया गया है और वह खास बस्तियोंको छोड़कर देशमें दूसरी जगह जमीनका कोई टुकड़ा नहीं खरीद सकता। यह एक अत्यन्त ठोस शिकायत कही जा सकती है। लेकिन हम जिस चीजके लिए लड़ रहे हैं, यह उससे अलग है। इस संघर्षके पीछे जो सिद्धान्त है या कभी था वह धार्मिक है, अर्थात् १९०७ के कानूनसे लोगोंकी धार्मिक भावनाओंको ठेस लगती है। लेकिन अब मुख्य उद्देश्यके मूलमें भारतीय जातिकी प्रतिष्ठा है, क्योंकि अब हमारे साथ या तो इस हैसियतसे व्यवहार किया जायेगा कि हम साम्राज्यके अभिन्न अंग हैं, या इससे कि हम उसके अभिन्न अंग नहीं हैं।

भेंटकर्ता: यह एक बहुत व्यापक सिद्धान्त है। लेकिन जैसा मैं समझता हूँ, इस सब मामलेमें ट्रान्सवालमें शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशके अधिकारका सवाल सारभूत है। अगर

ऐसा है तो साम्राज्य-सरकारका वह वक्तव्य मौजूद है, जिसका उल्लेख किया जा चुका है। अर्थात्, साम्राज्य-सरकार उस स्वशासित उपनिवेशसे झगड़ना नहीं चाहती जो प्रवेशका उक्त अधिकार देनेसे इनकार करता है।

श्री गांधी: तो, उस अवस्थामें हम स्थानीय सरकार और साम्राज्य-सरकार दोनोंसे लड़ेंगे। लेकिन मेरा अब भी विश्वास है कि साम्राज्य-सरकार हमारे साथ है।

भेंटकर्ता: इस समय एक प्रकारका गतिरोध है। आप केवल इसलिए लड़ रहे हैं कि स्थिति इतनी असह्य हो जाये जिससे साम्राज्य-सरकारको कोई कार्रवाई करनी पड़े।

श्री गांधी: देखिए, मुझे इस संघर्षकी भावनामें इतना अधिक विश्वास है कि मैं अनुभव करता हूँ कि साम्राज्य सरकारके हस्तक्षेप करनेसे पहले दक्षिण आफ्रिकाके सब उपनिवेश कहेंगे, "नहीं, हमें ये उचित माँगें अवश्य पूरी कर देनी चाहिए।" ट्रान्सवालमें इसके लक्षण दिखाई दे रहे हैं और कुछ प्रमुख यूरोपीय, जिन्होंने शुरूमें हमारे संघर्षका दूसरा दौर प्रारम्भ करनेकी निन्दा की थी, अब जोरसे हमारा समर्थन कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

नेटाल मर्क्युरी, ६-१-१९०९

८३. दूकानदार बनाम फेरीवाले

पेट बनाम अन्य अंग

एक बार पेट और शरीरके अन्य अंगोंके बीच भारी झगड़ा हो गया। हाथोंने कहा, "हम कोई काम नहीं करेंगे; काम करते-करते थक गये; सदा मुखमें भोजन पहुँचाते हैं, किन्तु पेट खाता है और बिगाड़ता है। हमें उससे कोई सहायता तो मिलती ही नहीं।" पैरोंने कहा, "हम बिलकुल चलेंगे ही नहीं। पेटकी बेगार व्यर्थ ही की। मजा करता है केवल पेट; राजा भी वही कहा जाता है। हमारे हाथ तो टहल करना ही रहा।" इसी तरह अन्य अंग भी बड़बड़ाने लगे। पेटने उनको बहुत समझाया और कहा कि "तुम मेरा काम नहीं देख सकते। हाथ तो मुँहमें भोजन रखकर निवृत्त हो जाते हैं। पैर भोजन-सामग्री लाकर आराम करते हैं। किन्तु मुझे चौबीसों घंटे काम करना पड़ता है, भले ही तुम मेरे कामको न देखो। यदि मैं एक मिनट भी आराम करूँ तो तुम सबका काम बन्द हो जाये। तुम काम न करोगे तो सबसे पहले तुम्हींको हानि उठानी पड़ेगी। मैं तो कुछ समय तक काम चला सकूँगा, यद्यपि तुम्हारे [सहयोगके] बिना अन्तमें मरना मुझे भी होगा। किन्तु तुम सब काम न करोगे तो मुझसे पहले तुम मर जाओगे, यह निश्चित समझ लो।" अंगोंने यह बात नहीं मानी। उन्होंने काम बन्द रखा। चौबीस घंटेके भीतर ही हाथ-पैर और दूसरे अवयव ढीले पड़ गये। उन्हें पश्चात्ताप हुआ। पेटको कुछ भोजन न मिला था; इससे वे बहुत चिन्तित हुए। अन्तमें उनके सामने पेटके कथनकी सच्चाई सिद्ध हो गई। उन्होंने देखा कि पेटका काम कुछ कम नहीं है। चूँकि वह बहुत-से अंगोंके लिए काम करता है, इसलिए उसका काम बिखर जाता है और किसी एक अंगको अधिक दिखाई नहीं देता।

किन्तु जब उन्होंने काम बन्द किया तब उन्हें तुरन्त ही मालूम हो गया कि पहली कठिनाई तो उन्हींको हुई।

यह कहानी मुझे उन कतिपय पत्रोंसे याद आई जो मुझे मिले हैं। इन पत्र-लेखकोंने व्यापारियोंपर बहुत-से आरोप लगाये हैं। कुछने उनके लिए अपशब्द भी कहे हैं। कुछने उन्हें धमकी भी दी है। जेल जानेसे बचनेके लिए कुछ लोग धीरे-धीरे धार्मिक बहाने भी बनाने लग गये हैं। ये सब व्यापारियोंसे उसी प्रकार द्वेष करने लगे हैं जिस प्रकार अंगोंने पेटसे किया था। ये कहते हैं कि ट्रान्सवालके व्यापारियोंने फेरीवालोंसे दगा की है। उन्होंने उनको मार डाला है। उनको तो जेल भेज दिया, और स्वयं ऐश-आराम करते हैं। एक पत्र-लेखक जहाँ एक ओर फेरीवालोंका उल्लेख अत्यन्त आदरपूर्वक करता है, वहाँ दूसरी ओर कहता है कि वे सभाओंमें खुलकर बोल नहीं सकते, क्योंकि व्यापारियोंसे दबते हैं। हमने इन पत्रोंको छापा नहीं है, क्योंकि इनसे समाजकी प्रतिष्ठा बढ़नेकी नहीं है। इन सब आरोपोंका कारण यह है कि कुछ व्यापारियोंने अपना व्यापार अपनी पत्नियों या गोरोंके नाम चढ़ा दिया है। व्यापारियोंका कर्तव्य है कि वे पेटकी भाँति अपना हृदय उदार रखें और फेरीवालोंको मिठाससे समझायें। हमारा समाज दीर्घ कालसे दासता भोगता आ रहा है, उसने स्वतन्त्रता देखी नहीं है। इसलिए आज जब सत्याग्रहकी तलवारकी बदौलत स्वतन्त्रता देखनेका समय आया है और गुलामीसे छुटकारा मिल रहा है, तब इसको पचाना छोटे और बड़े सभीको मुश्किल मालूम हो रहा है। कोई किसी दूसरेको अपनेसे चढ़ता देखता है तो सहन नहीं कर सकता। इसमें आश्चर्य कुछ नहीं है। जितने राष्ट्र स्वतन्त्र हुए हैं उन सभीको ऐसी अन्तरकी पीड़ा हुई ही है। बच्चेके जन्मसे पूर्व माँको मृत्यु-जैसी पीड़ा होती है, तब कहीं बच्चा जनमता है। इसी प्रकार हमें स्वतन्त्रता-रूपी बच्चेको देखनेसे पहले सरकार द्वारा दी गई पीड़ा ही नहीं भोगनी होगी, बल्कि आपसी व्यवहारकी पीड़ा भी सहनी होगी। व्यापारियोंपर ऊपर बताये गये आरोप बिना सोचे लगाये गये हैं। जिन व्यापारियोंने अन्तिम समयमें अपना व्यापार गोरोंके नाम चढ़ा दिया है, उन्होंने न तो पैसेका लोभ किया है और न वे जेलसे ही डरे हैं। उनमें से बहुत-से जेल जानेके लिए तैयार ही हैं। व्यापारको दूसरेके नाम देनेका हेतु यही है कि हम जानबूझकर सरकारके हाथमें गोला-बारूद न सौंप दें, जिसका उपयोग वह हमारे ही विरुद्ध करे। हमें फेरीवालोंको याद दिला देना चाहिए कि जब जनवरी [१९०८]में भारतीयोंपर हाथ डाला गया तब मुख्य प्रहार नेताओंपर ही हुआ था। स्टैंडर्टनके लगभग सभी व्यापारी जेल भोग चुके हैं। संघके अध्यक्ष श्री काछलिया जेल हो आये हैं। श्री अस्वात और श्री नगदी प्रयत्न-पूर्वक जेल गये और सजा काटकर आये। इसी प्रकार इस समय श्री इब्राहीम काजी जेल काट रहे हैं। जब उन्होंने अपना व्यापार गोरेको सौंपा, तभी उन्हें जेल जानेका अवसर मिला। मिडेलबर्गमें श्री भाभाने जेल भोगी और क्रिश्चियानामें श्री बेलिम जेल गये। श्री मुहम्मद मियाँ इस समय भी कैद भोग रहे हैं। इस प्रकार बहुत-से व्यापारी जेल जा चुके हैं। जो लोग नेटालसे विशेष रूपसे सहायता करनेके लिए आये हैं वे भी नेटालके प्रमुख दूकानदार हैं। इसलिए दूकानदारोंपर आरोप लगाना उचित नहीं है। फेरीवालोंको यह समझ लेना है कि वे दूकानदारोंसे ईर्ष्या नहीं करेंगे। दूकानदार जेल जायें तो इतनेसे वे सन्तोष मानें। उनको दूकान-दारोंने बर्बाद कर दिया, यह कहनेसे प्रकट होता है कि वे जेल जाना गलती मानते हैं। असलमें हमें यह मानना चाहिए कि जिन्होंने हमें जेल भेजा है उन्होंने हमें फायदा पहुँचाया है।

जो जेल गया है, उसने कमाया है; जो नहीं गया, उसने गँवाया है। जिन्होंने देशकी खातिर पैसा गँवाया है उन्होंने ही असलमें पैसा कमाया है। जो अपने पैसेसे चिपके रहे और अपने देश, प्रतिष्ठा और प्रतिज्ञा आदिको तिलाञ्जलि दे बैठे वे पैसा होनेपर भी कंगाल हैं। इसलिए हम आशा करते हैं कि हमारे पत्र-लेखक और उनके मतसे सहमत अन्य भारतीय हमारे कथनपर विचार करके संघर्षका त्याग नहीं करेंगे, बल्कि उसमें जमे रहेंगे और गफलतमें पड़कर जीती बाजीको हार न बैठेंगे।

यदि फेरीवालोंके लिए इस प्रकार सोचना उचित है, तो व्यापारी भी यों ही नहीं छूट सकते। यह नहीं कहा जा सकता कि उनकी ओर अँगुली उठाने-जैसी कोई बात ही नहीं है। निःसन्देह उनमें से कुछ लोग डरपोक हैं, और कुछने पैसेको ही परमेश्वर मान रखा है। वे संघर्षके संचालनमें शक्ति नहीं लगाते। कुछ लोग केवल लम्बे-लम्बे भाषण देनेवाले ही हैं। सब व्यापारियोंको पेटके उदाहरणसे शिक्षा लेनी चाहिए। पेटको स्वयं जितना मिलता है, उसकी अपेक्षा वह अंगोंको अधिक देता है। जहाँ अंग एक निश्चित समय तक ही काम करते हैं वहाँ पेट — अपने लिए नहीं, वरन् अंगोंके लिए — चौबीसों घंटे काम करता है। इसी प्रकार व्यापारियोंको फेरीवालोंके और अपने ऊपर आश्रित अन्य लोगोंके हितोंकी रक्षा करनी चाहिए, उन्हें बड़ा होनेपर भी छोटा और सेठ होनेपर भी चाकर बनना है। काम न चले तभी व्यापार दूसरोंके नाम चढ़ाया जा सकता है। किन्तु यह अन्तिम उपाय है और आधे डरपोक लोगोंके लिए है। हम यह आशा करते हैं कि जो लोग शेर बनकर बैठे हैं, जो वीर सत्याग्रही हैं, वे तो किसी दूसरे-तीसरेके नामसे परवाना (लाइसेंस) न लेंगे और अपने धन्धेको समेटकर फिलहाल गरीबी इख्तियार करके समाजकी सेवा करेंगे। इसीमें बड़प्पन है, यही सच्ची सेठाई है। यह तो नहीं कहा जा सकता कि फेरीवालोंको किसीने शिकायतका मौका दिया ही नहीं है। किन्तु यदि सब व्यापारी अपने-अपने कर्तव्यका पालन करें और स्वार्थ त्यागकर परमार्थ करें तो किसीके लिए कुछ शिकायत करनेकी बात रहेगी ही नहीं। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी दृष्टि अब ट्रान्सवालके व्यापारियोंपर लगी है। फेरीवालोंको स्वतन्त्र रहकर लड़ाई लड़नी है; किन्तु यदि वे हार मान बैठें तो इसमें थोड़ा-बहुत दोष व्यापारियोंका भी माना जायेगा। दिन-प्रति-दिन ट्रान्सवालका कर्तव्य कठिन होता जाता है। हम खुदासे प्रार्थना करते हैं कि वह व्यापारियों, फेरीवालों और उसी प्रकार अन्य सब भारतीयोंको भी सुबुद्धि दे, दृढ़ रखे और इस महान् कार्यमें उनपर जो कष्ट आयें उनको सहन करनेका साहस प्रदान करे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-१-१९०९

८४. नेटालके शेष नेता

सभी भारतीय यह जानना चाहेंगे कि नेटालके जो नेता ट्रान्सवाल जाकर देशकी खातिर अपने सर्वस्वकी आहुति दे चुके हैं, उनके अतिरिक्त शेष नेटाली नेता क्या कर रहे हैं। हमारा जोहानिसबर्गका संवाददाता नेटालके सम्बन्धमें जो प्रश्न उठाता है वह समझने और सोचने योग्य है। दक्षिण आफ्रिकाका प्रत्येक भारतीय ट्रान्सवालके संघर्षमें सहायता देनेके लिए बँधा है। नेटालका कर्तव्य दोहरा है। किन्तु हमें खेदके साथ कहना पड़ता है कि जो नेता पीछे रह गये हैं वे अपना कर्तव्य पर्याप्त रूपसे पूरा नहीं कर रहे हैं। इससे हम सबको अपना सिर नीचा कर लेना चाहिए। इन नेताओंका पहला कर्तव्य तो यह है कि वे कांग्रेस-कोषमें धन-संग्रहकी तैयारी करें। कांग्रेसका खजाना खुट गया है। उसपर कर्ज है। श्री रॉबिन्सनका विधेयक हमारे ऊपर झूल रहा है। नेटालके वीर जेल जायेंगे तो तार देना कांग्रेसका कर्तव्य हो जायेगा; उसके लिए क्या होगा? वह रुपया कहाँसे लायेगा? ट्रान्सवालमें जेल जानेवाले भारतीयोंके बाल-बच्चे भूखों मरेंगे तो क्या कांग्रेस सहायता न करेगी? यदि करेगी तो कहाँसे करेगी?

उगाहीका काम बहुत बार आरम्भ किया गया और वह बहुत बार बन्द हुआ। बड़ी संस्थाओंका काम ऐसे नहीं चलता।

मेनलाइनका[1] व्यर्थका झगड़ा चल ही रहा है। इस सम्बन्धमें मेनलाइनके नेताओंकी ओरसे श्री मुहम्मद इब्राहीम और श्री खरसानी फोक्सरस्ट जेलमें श्री दाउद मुहम्मदसे मिल आये थे। समझौता लगभग हो गया था, किन्तु पीछे सब पलट गया मालूम होता है। मेनलाइनके भारतीय नेताओंका यह स्पष्ट कर्तव्य है कि वे इस समय झगड़ा उठानेके बजाय आर्थिक सहायता दें। यदि वे समझ सकें तो सीधी बात तो यह है कि उनकी माँग स्वीकार करने योग्य है; बल्कि वह स्वीकृत हुई-जैसी ही है। उनकी माँग यह है कि समितिमें मेनलाइनके पर्याप्त सदस्योंको आनेका अधिकार दिया जाये। यह अधिकार तो सदासे दिया हुआ ही है। फिर भी वे अपने इस अधिकारकी समुचित रक्षाका आश्वासन प्राप्त कर सकते हैं। झगड़ेकी दूसरी बात यह है कि २५ पौंडसे अधिक रकम खर्च करनेके लिए उनकी स्वीकृति ली जाये। यह मामला छोटा है, फिर भी कांग्रेस इस आशयका प्रस्ताव स्वीकृत कर सकती है। मेनलाइनके लोगोंको समझना चाहिए कि वे इन अधिकारोंको प्राप्त कर सकें, यह व्यवस्था करना दूसरोंका काम नहीं है, बल्कि उनका अपना काम है। कांग्रेस इस सम्बन्धमें "ना" कह ही नहीं सकती। किन्तु इसी कारण उगाहीका सारा काम अटकाये रखना कतई शोभनीय नहीं है। हमें आशा है कि मेनलाइनके लोग अपना कर्तव्य पूरा करनेसे न चूकेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-१-१९०९

1. नेटाल कांग्रेसका एक पक्ष।

८५. हिन्दू-मुस्लिम दंगा

कलकत्तामें हिन्दू और मुसलमान लड़ पड़े, यह खबर तारसे रायटरने दी है। कहा जाता है कि इसमें कुछ लोग मारे भी गये हैं। कुछ हिन्दुओंने मसजिदपर आक्रमण किया था; इससे मुसलमान भड़क उठे। उन्होंने विरोधमें आक्रमण किया। सरकारी सेना बीचमें आई। खबरसे जान पड़ता है कि दंगा अभी दबा नहीं है। खबरमें क्या सच है और क्या झूठ, यह कोई नहीं जान सकता। किन्तु यह तो प्रतीत होता ही है कि इस झगड़ेका कारण कोई गोरा अधिकारी है। ऐसी कोई बात दिखाई नहीं देती जिसके कारण हिन्दुओं और मुसलमानोंको आपसमें लड़ना पड़े। अधिकारी अदूरदर्शितावश समझते हैं कि दोनों कौमोंमें तकरार होनेमें उनका लाभ है। इस समय भारतमें स्थिति ऐसी गम्भीर है कि यदि दोनों कौमें लड़ मरें तो, बहुत-से अधिकारियोंका खयाल है, सरकार निश्चिन्त होकर बैठ सकती है। यह विचार करना चाहिए कि इस समय विदेशोंमें रहनेवाले भारतीयोंका क्या कर्तव्य है। हमें यह स्पष्ट दिखाई देता है कि हम चाहे हिन्दू हों या मुसलमान, हमें किसी भी पक्षका समर्थन न करना चाहिए। एक तीसरे पक्षने हममें झगड़ा कराया है, यह समझकर हमें अपने देशमें अपने लोगोंके बीच विरोध होनेपर दुखी होना चाहिए और खुदा या परमात्मासे मसजिदों और मन्दिरोंमें प्रार्थना करनी चाहिए कि "हमारे देशमें हम लोगोंके बीच बार-बार जो झगड़े हो जाते हैं वे समाप्त हो जायें।" इसीमें भारतका कल्याण है। हमें विश्वास है, प्रत्येक देशभक्त भारतीय ऐसा मानेगा।

हम जिस सत्याग्रहकी लड़ाई लड़ रहे हैं वह लगभग सभी मामलोंमें लागू किया जा सकता है। हमें यह समझकर निश्चिन्त रहना चाहिए कि यदि कौमोंके बीच झगड़े हों तो उनको शान्त करनेके लिए भी इस शस्त्रका उपयोग किया जा सकता है।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, ९–१–१९०९

८६. वैंकूवरके भारतीय

कैनडामें वैंकूवरके भारतीय पर्याप्त दृढ़ताका परिचय देते मालूम हो रहे हैं। वहाँकी सरकारने उन्हें [वहाँसे] निकाल कर मलेरियावाले प्रदेशमें बसानेका जाल रचा था, किन्तु वे उसमें फँसे नहीं। और अब वे ब्रिटिश हॉंडुरास जानेके बजाय वैंकूवरमें ही रहनेवाले हैं। उनकी ओरसे हॉंडुरास प्रदेशका निरीक्षण करनेके लिए जो दो भारतीय गये थे, उन्होंने बताया है कि हॉंडुरासमें भारतीय रह ही नहीं सकते। उनका कहना है कि उन्हें रिश्वतका लालच दिया गया था, ताकि वे झूठी रिपोर्ट दें, किन्तु उन्होंने रिश्वतकी परवाह नहीं की। उन्होंने अपनी दृष्टि अपने भाइयोंके हितपर ही रखी। ये दोनों भारतीय बधाईके पात्र हैं।

वैंकूवरके भारतीय ऐसे-वैसे नहीं हैं। हालमें इसका दूसरा उदाहरण भी हमारे सामने आया है। वहाँके अखबारोंमें एक समाचार प्रकाशित हुआ है कि प्रोफेसर तेजमाल सिंहने,

जो वहाँ रहते हैं और जिन्होंने एम० ए० की परीक्षा पास की है, हजारों सिखों और दूसरे भारतीयोंके समक्ष भाषण करते हुए कहा :

> आजकल भारतमें जो लड़ाई चल रही है उसमें तो देश कानूनके अनुसार लड़ेगा, किन्तु यदि उससे न्याय नहीं मिला तो वहाँ कोई ऐसा भारतीय जाग उठेगा जो लोगोंको हथियारोंसे सुसज्जित होकर गोला-बारूदकी लड़ाई लड़नेकी प्रेरणा देगा। भारतमें गोरे अधिकारियोंको असीम सत्ता दे दी जाती है, जिससे कई गोरोंका दिमाग ऐसा चढ़ गया है कि वे लोगोंको कुछ समझते ही नहीं। सिखोंकी आँखें खुलती जा रही हैं। वे समझने लगे हैं। भारत न्यायकी माँग कर रहा है। श्री कनिंघम कुछ वर्ष पहले इतिहासमें लिख गये हैं कि यदि इंग्लैंड न्याय नहीं देगा तो भारतमें कोई ऐसा योद्धा पैदा होगा जो सब-कुछ जीत लेगा। कोई भी राज्य अविश्वासकी नींवपर टिक नहीं सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-१-१९०९

८७. फीनिक्सकी पाठशाला

इस पाठशालाके बारेमें लिखनेका हमने पिछले सप्ताह संकेत किया था।[1] अब हम नीचे लिखे अनुसार जानकारी दे सकते हैं।

भोजनकी व्यवस्था

फीनिक्समें काम करनेवालोंमें जो कुछ लोग परिवार-सहित रहते हैं वे अपने घरमें भोजन करानेके लिए आठ बच्चे तक ले सकते हैं। विचार यह है कि जो बच्चे लिये जायें, उन्हें अपने ही बच्चोंकी भाँति रखा जाये। ऐसी प्रथा भारतमें पहले थी। उसे जैसे सम्भव हो वैसे फिर प्रारम्भ किया जाये। बच्चेको लेनेकी शर्त इतनी ही है कि उसकी तन्दुरुस्ती अच्छी हो। किसी भी जातिका भारतीय बालक लिया जा सकेगा। खाने-पीनेमें किसी तरहका भेद नहीं किया जायेगा। बच्चोंको वही भोजन कुछ फेरफारके साथ दिया जायेगा, जो घरवाले करते हैं; अर्थात् नीचे लिखे अनुसार दिया जायेगा :

आधी बोतल दूध, दो औंस घी, आटा, मकईका दलिया, दाल, चावल, ताजे फल, हरे शाक, चीनी, रोटी, कच्ची मेवे (मुख्यतः मूँगफली)।

ऊपर लिखे अनुसार भोजन नियमसे दिया जायेगा, और जैसा बच्चोंके लिए अनुकूल जान पड़ेगा उस हिसाबसे दिनमें कमसे-कम तीन बार और ज्यादासे-ज्यादा चार बार दिया जायेगा। इसमें से कौन-सी खानेकी चीज किस समयके भोजनमें देनी है, यह बात हमारे अपने साधारण नियमके अनुसार, अथवा अनुभवसे जैसा अधिक उपयुक्त जान पड़ेगा उसके मुताबिक निश्चित की जायेगी।

१. देखिए "फीनिक्सकी पाठशाला", पृष्ठ १२२।

इस भोजनमें चाय, काफी या कोको शामिल नहीं है। अपने ज्ञान तथा अनुभवके आधारपर हमारी यह धारणा है कि चाय-जैसी चीजें बड़े लोगोंके लिए भी नुकसानदेह हैं, परन्तु बच्चोंके लिए तो विशेष रूपसे। कुछ डॉक्टर यह मानते हैं कि चाय आदि चीजोंके चलनसे लोगोंमें रोगोंकी वृद्धि हुई है।

फिर, चाय, कोको और काफी सामान्यतः गुलामीकी हालतमें काम करनेवाले मजदूरों द्वारा पैदा की जाती है। उदाहरणार्थ, नेटालमें गिरमिटिया लोग काम करते हैं और चाय तथा काफी उगाते हैं। कोको कांगोमें होता है और वहाँ तो गिरमिटिया काफिरोंपर काम लेते समय जो जुल्म किया जाता है उसकी हद नहीं है। हम जानते हैं कि ज्यादातर चीनी भी गुलामीकी मजदूरीसे ही पैदा होती है। इस सबकी जाँच बारीकीसे करना सम्भव नहीं है। फिर भी हमारा खास खयाल है कि ऊपरकी तीनों चीजोंका इस्तेमाल जितना कम किया जाये, उतना अच्छा।

इसके अलावा, भारतमें जब हम स्वदेशीकी भावना अपना रहे हैं, तब इन तीनों वस्तुओंको बहुत हद तक छोड़ देना ही ज्यादा ठीक मानना चाहिए। इन दलीलोंको खास चाय-जैसी चीजोंके खिलाफ यहाँ देनेकी जरूरत नहीं है। इतना ही कहना काफी है कि बच्चोंको इनकी जरूरत नहीं है।

खानेका खर्च

हम देखते हैं कि खानेका खर्च हर महीने कमसे-कम एक गिन्नी आता है। इसमें हजामत आदिका खर्च भी आ जाता है। केवल भोजन-सामग्री ही एक पौंडकी होती है। कपड़े धुलवानेका खर्च एक शिलिंग अलग लगाया है। हजामत वगैरहका खर्च हमने अलगसे नहीं लगाया; क्योंकि फीनिक्समें हजामत ज्यादातर आपसमें ही कर ली जाती है। इसलिए उसपर खर्च नहीं करना पड़ता।

रहनेकी व्यवस्था

जैसे खानेका इन्तजाम ऊपर लिखे अनुसार हो जायेगा, वैसे रहनेका सम्भव नहीं होगा। उतने मकान नहीं हैं, और परिवारोंमें बच्चोंको जैसे चाहिए वैसे रखनेकी गुंजाइश नहीं है। इसलिए बच्चोंके एक ही जगह सोनेके लिए मकान बनानेकी जरूरत होगी। इसके बननेके पहले हमें बच्चोंको दाखिल करनेकी सूरत दिखाई नहीं देती। दाखिल होनेवाले बच्चोंमें और जिन परिवारोंमें वे खाना खायेंगे उनमें इस समय रहनेवाले बच्चोंमें कोई भेद नहीं है, यह बतानेके लिए ही हमने इस समय रहनेवाले बच्चोंको भी दाखिल होनेवाले बच्चोंके साथ सुलानेका इरादा किया है। इस प्रकार लगभग बीस बच्चोंके सोने लायक मकान बनानेकी जरूरत है। अनुमान है कि इस मकानको बनाने और बच्चोंके नहाने-धोनेकी सुविधाके लिए टंकीका प्रबन्ध करनेमें २०० पौंड लग जायेंगे। जो लोग अपने बच्चोंको भेजना चाहते हैं, वे यदि इस समय इतना खर्च उठा लें तो बच्चोंकी व्यवस्था हो सकती है। इस खर्चका तखमीना हमने वास्तुकार (आर्किटेक्ट) श्री कैलेनबैक और देशी मिस्तरीकी सलाहसे तैयार किया है। यह मकान उनकी मिल्कियत होगी जो उसके लिए रुपया देंगे। इसमें शर्त इतनी होगी कि जबतक पाठशाला चलेगी तबतक उनका कोई भी हक नहीं होगा। यदि पाठशाला बन्द हो जाये तो रुपया लगानेवाले मकानको उठा ले जा सकते हैं।[1] यह रकम जो लोग अपने बच्चे भेजनेके लिए तैयार हैं वे या तो स्वयं अपने पाससे भेजें या दूसरोंसे

१. मकान लकड़ी और टीनकी चादरोंके बनाये जाते थे।

चन्दा करके भिजवायें। जो लोग इसके लिए रुपया देंगे वे सार्वजनिक कामके लिए रुपया दे रहे हैं, ऐसा समझना चाहिए। फीनिक्सवासी इस समय काममें इतने गुँथे हुए हैं कि उनसे चन्दा इकट्ठा करनेका प्रयास नहीं हो सकता।

पोशाक

बच्चोंकी पोशाक हमेशा एक-सी रखनेमें बहुत सुविधा रहती है। हमारे खयालसे नीचे लिखे अनुसार कपड़ोंकी जरूरत है:

	शि० पें०
१ बालोंका ब्रश	१ – ६
३ आधे पायजामे	६ – ०
३ कुर्ते	६ – ०
४ चड्डियाँ	४ – ०
२ जोड़ी चप्पलें या जूते	६ – ०
१ धूपकी टोपी	२ – ०
२ रातकी पोशाकें	४ – ०
२ तौलिये	२ – ०
२ हाथ पोंछनेके अँगोछे	१ – ०
४ रूमाल	१ – ०
पौंड	१–१३–६

हर बच्चा टोपी वही पहने जो उसकी जातिमें प्रचलित हो। ऊपर जिस धूप-टोपीका जिक्र किया है वह केवल धूपमें काम करते वक्त पहननेकी है। यह पोशाक पहनानी है या नहीं, यह माँ-बापकी मर्जीपर है। यदि उनका विचार इतना खर्च न करनेका अथवा बच्चोंको इतनी सादगी न सिखानेका हो तो वे ऊपर बताई गई पोशाकका ध्यान रखकर बच्चोंके साथ एक छोटी पेटी या बण्डलमें सामान भेज दें। हमारी सलाह तो यह है कि वे बच्चोंके साथ कुछ न भेजें और हमें १ पौंड १३ शिलिंग ६ पेंस भेज दें तथा ऊपर कहे अनुसार पोशाक बनवाने और पहनानेकी इजाजत दे दें। ऊपर कही गई पोशाक एक बरसके लिए है।

सोनेकी व्यवस्था

हमारा इरादा सोनेके लिए चारपाइयाँ देनेका नहीं है; बल्कि जैसे तख्त जेलोंमें इस्तेमाल किये जाते हैं वैसे तख्तोंकी व्यवस्था करनेका है। ऐसा लगता है कि यह तन्दुरुस्तीके लिए ज्यादा अच्छा होगा। हम बच्चोंको गद्दे देनेके बजाय कम्बलोंके ऊपर सुलाना अधिक आरोग्यप्रद मानते हैं। किन्तु इस सम्बन्धमें माँ-बापोंकी मर्जीके मुताबिक फेरफार कर देंगे। हमारे विचारसे बच्चोंको नीचे लिखे अनुसार वस्तुओंकी जरूरत होगी:

	शि० पें०
३ कम्बल	१०–०
१ तकिया	१–०
४ चादरें	४–०
२ तकियेके गिलाफ	१–०
	१६–०

माँ-बाप इस हिसावसे सामान भेज सकते हैं अथवा हम खरीद देनेके लिए तैयार हैं। कपड़ों और कम्बलों वगैरहका खर्च माँ-बापकी मर्जीपर छोड़ते हुए हिसाब यह लगाया गया है कि माँ-बापको हर महीने एक गिन्नीका खर्च उठाना पड़ेगा। प्रवेश-शुल्क प्रति बालक एक पौंड रखा जायेगा। यह शुल्क बच्चेके वास्ते जरूरी किताबें लेनेके लिए है। उतनेकी किताबें ली ही जायेंगी, यह आवश्यक नहीं है। किन्तु पाठशालामें भी बच्चोंपर दूसरे फुटकर खर्च होते हैं; और वे इसी रकममें से चलाने हैं। आगे बढ़े हुए बच्चोंके लिए जो किताबें जरूरी जान पड़ें वे माँ-बापको लेनी होंगी।

शिक्षक

ऊपर जो-कुछ लिखा है, उससे स्पष्ट हो जायेगा कि हमने कोई मासिक शुल्क नहीं रखा है। ऐसा करनेका कारण केवल यह है कि शिक्षकोंकी जीविका छापेखाने [इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस] से जो-कुछ मिलता है, उससे चल जाती है। और छापेखानेकी मंजूरीसे हरएक शिक्षक एक निश्चित समयपर पढ़ाने आता है। हालमें पाठशालाके लिए एक समिति बनानेकी योजना भी की गई है। उस समितिमें शिक्षा-पद्धति वगैरहके सम्बन्धमें विचार हुआ करेगा।

शिक्षकोंमें श्री पुरुषोत्तमदास देसाई (प्रिंसिपल), श्री वेस्ट, श्री कॉर्डिस, कुमारी वेस्ट आदि हैं।

पढ़ाई

इस पाठशालाका मुख्य उद्देश्य बच्चोंके चरित्रका विकास करना है। कहा जाता है कि सच्ची शिक्षा वह है जिसमें बालक स्वयं पढ़ना सीखें, अर्थात् उनमें ज्ञान प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न हो। अब, ज्ञान तो बहुत तरहका होता है। कुछ ज्ञान हानिकर भी होता है। तब यदि बालकोंके चरित्रका निर्माण न हो तो वे औंधा ज्ञान सीखने लगते हैं। हम देखते हैं कि शिक्षा मनमाने ढंगसे दी जानेके कारण ही कुछ लोग नास्तिक हो जाते हैं और कुछ बहुत पढ़-लिख जानेपर भी बुराइयोंमें फँस जाते हैं। इसलिए बालकोंके चरित्रको दृढ़ करनेमें सहायता देना इस पाठशालाका मुख्य हेतु है। इस हेतुकी परिणति श्री हसन मियाँ और श्री रविकृष्णमें दिखाई देती है। श्री हसन मियाँ इंग्लैंडमें जाकर जो-कुछ कर रहे हैं, हम उसकी कुछ कल्पना कर सकते हैं। श्री रविकृष्ण आज देशकी खातिर जेल भोग रहे हैं। ये दोनों फीनिक्सकी पाठशालासे गये हैं।

बालकोंको उनकी अपनी भाषा, अर्थात् गुजराती या हिन्दी और सम्भव हो तो तमिल और अंग्रेजी, अंकगणित, इतिहास, भूगोल, वनस्पति-विज्ञान और प्रकृति-विज्ञान भी पढ़ाये जायेंगे। ऊँची कक्षाओंमें बालकोंको बीज-गणित और रेखागणित भी पढ़ाया जायेगा। अनुमान है कि इस तरह मैट्रिक्युलेशन तक की तैयारी हो सकती है।

धर्म-शिक्षाके लिए माँ-बाप चाहे जिस धर्म-गुरुको भेज सकते हैं। हिन्दू बालकोंको हिन्दू माँ-बापोंकी मर्जीके मुताबिक हिन्दू-धर्मके मूल तत्त्वोंकी शिक्षा दी जायेगी। भारतीय ईसाई बालकोंको ईसाई धर्मके तत्त्वोंकी शिक्षा श्री वेस्ट और श्री कॉर्डिस देंगे। यह शिक्षा थियॉसफीकी शिक्षाओंपर आधारित होगी। इस्लाम माननेवाले बालकोंके लिए यदि किसी मौलवीकी व्यवस्था हो सके तो हम करना चाहते हैं। मुसलमान बालकोंको शुक्रवारको डर्बन जानेकी छूट दी जायेगी। हमारा खयाल है कि किसी भी समाजकी शिक्षा उसके धर्मकी शिक्षाके बिना निकम्मी है, अतः धार्मिक वृत्तिके माता-पिताओंका कर्तव्य है कि वे अपने बालकोंको धर्मकी

शिक्षा और लौकिक शिक्षा, दोनों साथ-साथ दें। गहराईसे सोचें तो मालूम होगा कि हम जिसको लौकिक शिक्षा कहते हैं वह भी धर्मको दृढ़ करनेवाली तालीम ही है। हमारे विचारमें इस उद्देश्यसे हीन शिक्षा प्रायः हानिकर होती है।

बालकोंके मनमें भारतके प्रति प्रेम उत्पन्न करने और उनको देशभक्त बननेमें सहायता देनेके लिए भारतका प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास पढ़ाया जायेगा।

इसके बाद बताने लायक कुछ नहीं रहता। हमें आशा है कि जो अपने बालकोंको पाठशालामें भेजना चाहते हों, वे उन्हें भेजेंगे। मकानकी दिक्कत है; उसको दूर करना माता-पिताका कर्तव्य है। यह बतानेकी जरूरत नहीं कि पाठशालाके विवरण, खर्च आदि नियमपूर्वक प्रकाशित किये जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-१-१९०९

८८. उच्चतर विद्यालय

सरकारका इरादा स्पष्टतः यह है कि भारतीय लड़कोंको उच्चतर विद्यालयों (हायर ग्रेड स्कूलों) और अन्य सरकारी स्कूलोंसे धीरे-धीरे निकाल दिया जाये। इसका उपाय अपनी खुदकी पाठशालाएँ खोलना है, यह तो हम बता ही चुके हैं; और फीनिक्सकी पाठशालाके सम्बन्धमें भी यह बात कह चुके हैं।[1] फिर भी, सरकारका विरोध करना तो जरूरी है। सरकारका विरोध करने और न्याय प्राप्त करनेके दो मार्ग हैं—एक तो न्यायालयके द्वारा और दूसरा, प्रार्थनापत्र आदिके द्वारा। न्यायालयके द्वारा हमारे लिए रास्ता है या नहीं, यह भली भाँति विचार किये बिना नहीं कहा जा सकता। एक बार अर्जी दी गई थी, उसे सर्वोच्च न्यायालयने खारिज कर दिया, इस बातसे कोई विशेष अनुमान बाँधा नहीं जा सकता। इसलिए किसी अच्छे वकीलसे मामलेको समझकर उसकी सलाह हो तभी कानूनके अनुसार लड़ना उचित है। यदि ऐसा करना सम्भव न हो, तो प्रार्थनापत्र देना चाहिए, और बड़ी सरकार तक जाना चाहिए। मगर यह सब करनेके पीछे जोर तो चाहिए ही। वह जोर सत्याग्रहके द्वारा आजमाया जा सकता है। यह कैसे हो सकता है, इसका विचार यहाँ करनेकी आवश्यकता नहीं है। यह विवेचन बादमें किया जा सकेगा। इस बीच नेताओंको ऊपर बताये उपाय जितनी जल्दी सम्भव हो, करने चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-१-१९०९

१. देखिए पिछला शीर्षक।

८९. मेरा जेलका दूसरा अनुभव [२]

काम

सख्त सजा पाये हुए कैदियोंसे सरकारको हर रोज नौ घंटे काम लेनेका अधिकार है। कैदियोंको हमेशा शामके छः बजे कोठरियोंमें वन्द कर दिया जाता है। सुवह साढ़े पाँच वजे उठनेकी घंटी वजती है और छः वजे कोठरीका दरवाजा खोला जाता है। कोठरीमें वन्द करते समय और कोठरीसे निकालते समय कैदियोंकी गिनती की जाती है। गिनती विधिपूर्वक और जल्दी हो सके, इसलिए कैदियोंको अपने-अपने विस्तरके पास सावधानीसे खड़े रहनेका हुक्म होता है। हरएक कैदीको अपना विस्तर लपेटकर उचित स्थानपर रखकर तथा हाथ-मुँह धोकर छः बजेसे पहले तैयार हो जाना पड़ता है और सात वजे अपने काममें लग जाना होता है। काम कई प्रकारके करने होते हैं। पहले दिन हमें आम रास्तेके पास जो खुली जमीन है उसे खोदनेके लिए ले जाया गया था, ताकि उसमें वुवाई की जा सके।[1] लगभग तीस भारतीय कैदियोंको ले गये थे। जिनकी हालत काम करने लायक नहीं थी, उनका जाना जरूरी नहीं था। हमें काफिरोंके साथ ले गये थे। जमीन वहुत कड़ी थी और उसे कुदालीसे खोदना था, इसलिए काम सख्त था। धूप तेज पड़ रही थी। काम करनेकी जगह जेलसे करीव डेढ़ मील दूर रही होगी। हम सव भारतीय कैदी काममें उत्साहसे जुट गये। लेकिन कामकी आदत वहुत कम लोगोंको थी। इसलिए सभी वहुत ज्यादा थक गये। काम करनेवालोंमें वावू तालेवन्तसिंहका लड़का रविकृष्ण भी था। उसे काम करते देखकर मुझे वहुत परेशानी हो रही थी। लेकिन उसकी मेहनत देखकर मैं खुश हो रहा था। दिन ज्यों-ज्यों चढ़ता गया त्यों-त्यों कामका वोझ ज्यादा भारी होता गया। सन्तरी वहुत तेज स्वभाव का था। "चलाओ, चलाओ" की पुकार लगाता रहता था। उसकी यह पुकार सुनकर भारतीय कैदी घवड़ा जाते थे। कुछको मैंने रोते हुए भी देखा। एक आदमीका पाँव सूजा हुआ देखा। यह सव देखकर मेरा दिल रोता था। फिर भी मैं सवसे कहता था कि सन्तरी क्या कहता है, उसकी परवाह किये विना सवको अपना काम सच्चे दिलसे करते जाना चाहिए। मैं खुद भी थक गया। हाथमें वड़े-वड़े छाले उठ आये। उनसे पानी झरने लगा। कमर झुकाना मुश्किल मालूम होता था, और कुदालीका वजन मन-भर जैसा लगता था। मैं तो ईश्वरसे यही प्रार्थना करता रहता था कि मेरी लाज रख; मुझे अशक्त न वना; और मुझे इतनी ताकत दे कि मैं अपना काम वरावर करता रहूँ। इस तरह ईश्वरपर भरोसा रखकर मैं अपना काम करता जाता था। लेकिन मैं सुस्तानेके लिए जरा रुका, तो सन्तरी मुझे डाँटने-फटकारने लगा। मैंने उससे कहा, डाँट-फटकारकी जरूरत नहीं है, मुझसे जितनी कड़ी मेहनत हो सकेगी, मैं करूँगा। इसी समय श्री झीणाभाई देसाईको मैंने मूर्छित होते देखा। अपनी जगहसे मैं हट नहीं सकता था, इसलिए कुछ देर तक मैं रुका रहा। सन्तरी वहाँ गया। मैंने देखा कि मुझे जाना ही चाहिए, इसलिए मैं दौड़ा। दूसरे दो भारतीय साथी भी

१. वादमें यह एक विवादका विषय बन गया; देखिए परिशिष्ट ७।

आ गये। हम लोगोंने झीणाभाईके [मुख और सिर]पर पानी छिड़का। उन्हें होश आया। दारोगाने दूसरोंको तो कामपर वापस भेज दिया, लेकिन मुझे उनके पास बैठने दिया। झीणाभाईके सिरपर काफी ठण्डा पानी डाला तब कहीं उन्हें आराम महसूस हुआ। सन्तरीसे मैंने कहा कि वे पैदल चलकर नहीं जा सकेंगे। इसपर उसने गाड़ी मँगवा दी और मुझे हुक्म दिया कि मैं उन्हें गाड़ीमें ले जाऊँ। झीणाभाईके माथेपर पानी डालते हुए मैं सोचने लगा: "मेरे शब्दोंपर विश्वास रखकर कितने ही भारतीय जेल आये हैं। यदि मैंने उन्हें गलत सलाह दी हो तो मुझे कितना पाप लगेगा? मेरे कारण मेरे इन भाइयोंको कितना दुःख उठाना पड़ता है?" ऐसा सोचकर मैंने गहरी साँस ली। ईश्वरको साक्षी मानकर मैं फिर सोचने लगा और गहरे विचारमें डूब गया। बादमें मैं हँस पड़ा। मुझे प्रतीति हुई कि मैंने जो सलाह दी है वह ठीक ही है। यदि दुःख भोगनेमें ही सुख है, तो फिर दुःखसे घबड़ानेका कोई कारण नहीं है। यह तो मूर्खोंकी ही बात थी। अगर मृत्युका प्रसंग उपस्थित हो तो भी मैं दूसरी सलाह नहीं दे सकता। मैंने सोचा कि जन्म-भरके बन्धनकी अपेक्षा इस तरह दुःख भोगकर बेड़ियोंसे मुक्त हो जाना ही हमारा कर्तव्य है, और तब निश्चिन्त होकर मैं झीणाभाईको हिम्मत रखनेकी सलाह देने लगा।

गाड़ीके आते ही झीणाभाईको उसमें सुलाकर मैं ले गया। मैंने बड़े दारोगासे शिकायत की। उसकी जाँच हुई और सन्तरीको फटकार मिली। झीणाभाईको फिर दोपहरमें कामपर नहीं ले जाया गया। उसी तरह चार अन्य भारतीय कैदी भी अशक्त दिखे। बाकी सब फिर काममें लगे। दोपहरमें बारह बजेसे एक बजे तक काम करना पड़ता है। इस समय हमारी देख-रेख गोरे सन्तरीके बदले एक काफिर सन्तरीको सौंपी गई थी। यह काफिर सन्तरी गोरे सन्तरीकी अपेक्षा अच्छा था। वह बहुत नहीं टोकता था। कभी-कभी ही बोलता था। इसके सिवा, इस समय काफिरों और भारतीयोंको उसी जगह लेकिन अलग-अलग हिस्सोंमें काम दिया गया था। हम लोगोंको उनकी तुलनामें कुछ नर्म जमीन खोदनेको दी गई थी।

जिस व्यक्तिने यह ठेका लिया था, उसके साथ मेरी बात हुई। उसने कहा कि भारतीय कैदियोंके कामसे उसे नुकसान होनेकी सम्भावना है। मेरी यह बात उसने स्वीकार की कि भारतीय एकाएक काफिरों-जितनी मेहनत नहीं कर सकते। इसके सिवा, मैंने उससे कहा कि भारतीय लोग सन्तरीके डरसे काम करनेवाले नहीं हैं; वे तो सिर्फ खुदाका डर रखकर उनसे जितना बनेगा उतना काम करेंगे। लेकिन अपना यह विचार मुझे बादमें काफी हद तक बदलना पड़ा। ऐसा क्यों करना पड़ा, यह हम आगे देखेंगे।

दूसरे दिन हमें फिर बाहर निकाला गया, लेकिन गोरे सन्तरीके साथ न भेजकर एक काफिर सन्तरीके साथ भेजा गया। यह सन्तरी भी पिछले दिनवाला काफिर नहीं था। उससे कह दिया गया था कि वह हमें बिल्कुल न टोके।

(क्रमशः)

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-१-१९०९

९०. पत्र : 'रैंड डेली मेल' को[1]

फीनिक्स
जनवरी ९, १९०९

सम्पादक
रैंड डेली मेल
[जोहानिसवर्ग]

महोदय,

मैं देखता हूँ, इस सम्बन्धमें अब भी कुछ सन्देह मौजूद है कि ट्रान्सवालमें रहनेवाले मेरे देशवासी, जो पिछले दो सालोंसे भयंकर कठिनाइयोंके बावजूद लड़ रहे हैं, क्या चाहते हैं। इसलिए मैं आपकी अनुमतिसे भारतीयोंका मामला यथासम्भव संक्षेपमें बतानेका प्रयत्न करूँगा।

हम जो-कुछ चाहते हैं, वह निम्नलिखित है :

(१) १९०७ के कानून २ को रद कराना;

(२) उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंके ट्रान्सवालमें दूसरे प्रवासियोंके समान प्रवेशके अधिकारको, उस शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षाके अन्तर्गत, जिसका उपनिवेशके प्रवासी कानूनमें विधान है, कानूनी मान्यता दिलाना। यह शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षा इतनी प्रशासनिक कठोरतासे लागू की जाये कि एक वर्षमें छः से ज्यादा उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीय उपनिवेशमें न आ सकें।

पुराने कानूनका रद किया जाना इन कारणोंसे आवश्यक है :

(१) यह देशके सम्मानका प्रश्न है, क्योंकि यह दावा किया जाता है कि जनरल स्मट्सने कानूनको रद करनेका वचन दिया है।

(२) १९०७ का दूसरा कानून १९०८ के नये कानूनके विरुद्ध है और जैसा सर्वोच्च न्यायालयके अभी हालके एक निर्णयसे सिद्ध हो गया है, दो असमान कानूनोंको, जिनका एक ही उद्देश्य हो, साथ-साथ अमलमें रखनेसे भयंकर परिणाम हो सकते हैं।

(३) अभी हालकी घटनाओंसे प्रकट हो गया है कि १९०७ के कानून २ को, जैसा कभी* जनरल स्मट्सने कहा था, अमलसे बाहर रखनेका इरादा नहीं है।

(४) कानून अभीतक उपनिवेशकी विधान-संहितामें मौजूद रहकर तुर्क मुसलमानोंको ठेस पहुँचाता* है और इसलिए उससे भारतीय मुसलमानोंकी धार्मिक भावनाओंको अब भी ठेस लगती है।

(५) यदि सरकार ब्रिटिश भारतीयोंको तंग करना चाहे तो वह कानूनकी अत्यन्त आपत्तिजनक धाराओंको लागू करनेके लिए स्वतन्त्र है।

१. इस पत्रकी, जो रैंड डेली मेलको लिखा गया प्रतीत होता है, दफ्तरी नकलमें शीर्षकके शब्द कटे हुए हैं और उनकी जगह "श्री कार्टराइटके लिए वक्तव्य" शब्द लिख दिये गये हैं। मूल प्रति तारिकाका चिह्न (*) लगे हुए स्थानोंपर कटी हुई है इसलिए यह अनुवाद सम्पादित प्रतिसे किया गया है।

शिक्षित ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें जनरल स्मट्सने कहा था कि ऐसे लोग यदि एशियाई पंजीयन अधिनियम (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट)के अन्तर्गत प्रार्थनापत्र देंगे तो उनके प्रवेशपर कोई आपत्ति न की जायेगी। यह अत्यन्त असन्तोषजनक है, क्योंकि

(१) एशियाई कानूनके अन्तर्गत दिये गये अधिकारोंमें केवल अस्थायी अनुमतिपत्रों (टेम्परेरी परमिट्स)का उल्लेख है;
(२) ऐसे अस्थायी अनुमतिपत्र लम्बे अर्सेके हों तो भी उनसे उनके मालिक निषिद्ध प्रवासी हो जायेंगे;
(३) इन अनुमतिपत्रोंके आधारपर इसलिए उनके मालिक अपना धन्धा न कर सकेंगे;
(४) अस्थायी अनुमतिपत्रोंसे उनके मालिक सरकारकी दयापर निर्भर हो जायेंगे।

ऐसी अनिश्चित अवस्थाके बजाय भारतीय यह चाहते हैं कि उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंका स्वतन्त्र प्रवासियोंके रूपमें ट्रान्सवालमें प्रवेशका असन्दिग्ध अधिकार कायम रखा जाये, बशर्ते कि अधिकारियों द्वारा रखी गयी किसी भी शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षामें वे पास हो जायें।

यदि यह आपत्ति की जाये कि कानूनमें ऐसा कोई अधिकार सुरक्षित नहीं है जिसके अन्तर्गत मन्त्री कठिन या भेदभावपूर्ण परीक्षाएँ रख सकें — मैं यह नहीं मानता कि वर्तमान कानून इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए पर्याप्त नहीं है — तो मेरे देशवासी अपने विरुद्ध प्रशासनिक भेदभावके सम्बन्धमें कोई आपत्ति न करेंगे। इस प्रकार मन्त्रीको कोई भी शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षा रखनेका, विभिन्न वर्गोंके लिए विभिन्न परीक्षाएँ रखनेका भी, अधिकार दिया जा सकता है। ऐसे मामलोंमें मन्त्रीका निर्णय अन्तिम हो और उसके विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालयमें अपील न की जा सके। ऐसी कठोर परीक्षाके अन्तर्गत सरकारको किसी भी साल उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंका प्रवेश छः तक सीमित करनेका अधिकार होगा।

मेरे देशवासी शिक्षित भारतीयोंके सम्बन्धमें प्रजातीय (रेशियल) प्रतिबन्ध लगानेपर रोष प्रकट करते हैं, क्योंकि वे इसे राष्ट्रीय अपमान समझते हैं। इसलिए यद्यपि यह जनरल स्मट्सकी दृष्टिमें बहुत-कुछ भावुकताका प्रश्न है, किन्तु भारतीयोंकी दृष्टिमें यह महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तका प्रश्न है।

हम चाहे मांग करें या न करें, १९०७ के कानून २ का रद किया जाना आवश्यक है। प्रवासी-कानूनमें भी संशोधन आवश्यक है, क्योंकि उसकी कई धाराओंकी सर्वोच्च न्यायालयने कड़ी निन्दा की है। तब इसके संशोधनके समय ही इसको एशियाई कानूनकी खराबीसे मुक्त रख कर उसको इस प्रकार क्यों न बदल दें, जिससे मन्त्रीको शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षा लागू करनेके सम्बन्धमें अतिरिक्त अधिकार मिल जायें? जबतक शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षाके अन्तर्गत किसी एक वर्षमें छः उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीय आने दिये जायेंगे तबतक भारतीय, अपनी ओरसे, इस परीक्षाके प्रशासनके सम्बन्धमें अनाक्रामक प्रतिरोध न करनेका वचन देते हैं।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९१४) से।

११. नेटालमें भारतीयोंकी शिक्षा

उच्चतर भारतीय विद्यालयों (हायर ग्रेड इंडियन स्कूलों) में सरकार अब १४ वर्षसे ज्यादा उम्रके लड़कोंको नहीं जाने देगी, इस विषयपर हम गत सप्ताह लिख चुके हैं।[1] इस सम्बन्धमें जो उपाय करने हों, फौरन किये जाने चाहिए। ज्यादा छानबीन करनेपर ऐसा मालूम होता है कि मुकदमा दो तरहसे लड़ा जा सकता है। एक तो अधिक उम्रके लड़कोंको दाखिल न करनेके निर्णयके खिलाफ और दूसरे, भारतीय लड़कोंको अंग्रेजी स्कूलोंमें दाखिल करानेके लिए। दूसरे प्रकारके मुकदमेमें शायद जीत हो सकती है। पहले मुकदमेमें जीतकी सम्भावना कम है। फिर भी वह लड़ने लायक है। उसमें सरकारकी पोल खुलेगी। दूसरा मुकदमा चलाकर लड़कोंको अंग्रेजी स्कूलोंमें भेजनेकी जरूरत नहीं है, किन्तु यदि उसमें हमारी जीत हो तो उन्हें उच्चतर विद्यालयोंमें ज्यादा सुविधाएँ मिल सकेंगी।

ये दोनों ही प्रकारके मुकदमे लड़नेके लिए पैसेकी जरूरत है। भारतीय माँ-बाप पैसा निकालें तो कुछ बन सकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१-१९०९

१२. प्रवासी-आयोग

नेटालके प्रवासी-आयोग (इमिग्रेशन कमिशन) की बैठक मंगलवारसे डर्बनमें आरम्भ हुई है। इसमें जिसको गवाही देनी हो वह दे सकता है। कांग्रेसका कर्तव्य है कि वह इस सम्बन्धमें गवाही दे। इसके अलावा लोग निजी हैसियतसे भी गवाहियाँ दे सकते हैं। हमारे विचारसे भारतीय तो एक ही प्रकारकी गवाही दे सकते हैं; और वह है — गिरमिटकी प्रथा बन्द करनेके पक्षमें। गिरमिट और गुलामीमें बहुत फर्क नहीं है। हम लोग मान लेते हैं कि गिरमिटमें आनेवाले भारतीयोंको कुछ लाभ हुआ है। किन्तु आर्थिक फायदा उठाकर वे गुलाम बने, यह तो नुकसान ही माना जायेगा। जो लोग इस तरहकी गुलामी भोगते हैं वे तो देशके लिए गये-गुजरे ही हैं। उनकी गुलामीसे देशको कोई लाभ नहीं होता। जबतक मनुष्य स्वतन्त्र होकर काम न कर सके तबतक उसके कामका लाभ जातिको मिलता ही नहीं। दूसरे कारणोंपर विचार करें तो भी, गिरमिट प्रथाको बन्द करना ही उचित है। इसलिए इस तरहकी गवाही आयोगके सामने पेश की जानी चहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१-१९०९

१. देखिए "उच्चतर विद्यालय", पृष्ठ १४१।

९३. मेरा जेलका दूसरा अनुभव [३]

हमें जितना बने उतना काम ईमानदारीके साथ करनेको कहा गया था। जो काम हमें सौंपा गया था वह भी हलके किस्मका था। नगरपालिकाकी जमीनमें, आम रास्तेके पास ही, गड्ढे खोदने और भरने थे। इसमें विश्राम मिल सकता था। लेकिन, मुझे अनुभव हुआ कि यदि केवल ईश्वर ही हमारे कामका साक्षी हो तो हम कामचोर सिद्ध होते हैं, क्योंकि लोगोंके काममें मुझे ढिलाई नजर आई।

मेरा यह निश्चित मत है कि ऐसी कामचोरी हमारे लिए कलंककी बात है। और हमारी लड़ाईमें जो शिथिलता आई है, उसका कारण भी यही है। सत्याग्रहका रास्ता जितना आसान है उतना ही कठिन भी है। हमारी नीयत सच्ची होनी चाहिए। हमें सरकारसे वैर नहीं है। हम सरकारको अपना दुश्मन नहीं मानते। हम सरकारसे लड़ते हैं, उसका कारण यह है कि हम उसकी भूल सुधारना चाहते हैं और उसकी बुरी आदत छुड़ाना चाहते हैं। हम उसका बुरा नहीं चाहते। उसके खिलाफ लड़नेमें भी हमारा उद्देश्य उसकी भलाई ही है। इस दृष्टिसे तो हमें जेलमें अपनी शक्तिके अनुसार काम करना ही चाहिए। और यदि हम यह मानते हों कि हमें नीतिके अनुसार काम करनेकी जरूरत नहीं है, तो सन्तरीकी हाजिरीमें जो पूरा काम करते हैं, वह नहीं करना चाहिए। यदि काम करना उचित नहीं है, तो हमें सन्तरीकी परवाह न करके उसकी मुखालफत करनी चाहिए, और उसके फलस्वरूप यदि हमारी सजा बढ़ती हो तो उसे भोग लेना चाहिए। लेकिन ऐसा तो कोई भारतीय मानता नहीं। जो काम नहीं करते वे मात्र आलस्य और कामचोरीके कारण ही ऐसा करते हैं। ऐसा आलस्य और ऐसी चोरी हमें शोभा नहीं देती। सत्याग्रहीके नाते, हमें जो काम मिले, करना ही चाहिए। और यदि हम सन्तरीका डर रखे बिना काम करें, तो हमें तकलीफ न उठानी पड़े। अपनी शक्तिके बाहर काम करनेकी तो बात ही नहीं रहेगी। कामचोरीकी इस टेवके कारण जेलमें लोगोंको कुछ कष्ट भोगना पड़ा था।

इतना कहनेके बाद अब मैं फिर कामकी बातपर आता हूँ। इस तरह दिन-प्रति-दिन हमारा काम हलका होता गया। मैं जिस टोलीमें गया था उस टोलीको बादमें जेलका बगीचा साफ करने और उसमें बुवाई आदि करनेका काम मिला। इसमें मुख्यतः मकई बोने, आलूकी क्यारियाँ साफ करने और उनके पौधोंपर मिट्टी चढ़ानेका काम था।

फिर दो दिन हमें नगरपालिकाका तालाब खोदनेके लिए ले गये। उसमें खोदने, मिट्टीका ढेर लगाने और फिर उसे ठेलागाड़ीमें भरकर ले जानेका काम था। यह काम सख्त था। इसका अनुभव सिर्फ दो दिन मिला। मेरा पहुँचा सूज गया, जो मिट्टीके उपचारसे अच्छा हुआ।

यह जगह चार-पाँच मील दूर थी, इसलिए हमें ठेले (ट्रॉली) में ले जाते थे। अपनी रसोई हमें वहीं तालाबपर पकानी पड़ती थी। इसलिए खानेका कच्चा सामान और लकड़ी भी साथमें ले जाते थे। इससे भी ठेकेदारको सन्तोष नहीं हुआ। हम काफिरोंकी बराबरी न कर सके। दो दिन तालाबपर काम करानेके बाद हमें दूसरा काम सौंपा गया। आजतक

अधिकतर काम करने योग्य भारतीयोंको ही साथ ले जाते थे। अब वैसा करनेके वदले हमें दो हिस्सोंमें वाँट दिया गया। कुछको सैनिकोंकी कब्रोंके आसपास उगी हुई घास खोदकर निकालनेके लिए भेजा और कुछको कब्रिस्तान साफ करनेके लिए भेजा। कुछ दिन तक इस तरह चला। इसी बीच वारवर्टनके मुकदमेके वाद लगभग पचास भारतीय छूट गये।

उसके वाद हमें हमेशा वगीचेमें काम मिलता रहा। उसमें खोदना, लुनना, नींदना आदि काम करने पड़ते थे। इस कामको भारी नहीं कहा जा सकता और मानना होगा कि यह वहुत तन्दुरुस्ती देनेवाला था। लगातार नौ घंटे तक ऐसा काम करनेके कारण पहले तो जी ऊवता है, पर आदत हो जानेपर ऐसा नहीं होता।

इस कामके सिवा हरएक कोठरीमें पेशाव आदिकी जो वाल्टी होती है, उसे उसी कोठरीके आदमीको उठाकर ले जाना पड़ता है। मैंने देखा कि ऐसा काम करनेमें हमारे लोगोंको वहुत हिचक होती है। सच पूछिए तो इसमें हिचक का कोई कारण नहीं है। काम करनेमें अप्रतिष्ठा या दोष मानना गलत है। इसके सिवा, जेल जानेवालेकी ऐसी वृत्ति निभ नहीं सकती। कई वार यह सवाल उठता था कि कोठरीसे पेशावकी वाल्टी कौन ले जायेगा। अगर हम सत्याग्रहकी लड़ाईका तत्त्व पूरी तरह समझ लें, तो यह सवाल उठना ही नहीं चाहिए, वल्कि ऐसा काम करनेके लिए हमारे बीच स्पर्धा होनी चाहिए और जिसके हिस्सेमें आये उसे वह काम करनेमें अपना सम्मान समझना चाहिए। कहनेका मतलव यह कि मान इसमें नहीं है कि सरकार वैसा काम हमें सौंपे, लेकिन जव हमें वह काम करना ही है, तो फिर करनेवालोंमें से जो पहले उसके लिए तैयार होगा वह विशेष मानका पात्र होगा।

जव हम कष्ट उठानेके लिए तैयार हुए हैं, तो फिर एक-दूसरेसे ज्यादा कष्ट उठानेके लिए भी हमें तैयार रहना चाहिए और जिसे ज्यादा कष्ट उठाना पड़े उसे उसमें अधिक सम्मानका अनुभव करना चाहिए। ऐसा उदाहरण श्री हसन मिर्जाने पेश किया था। श्री हसन मिर्जा फेफड़ोंके वहुत बुरे रोगसे पीड़ित हैं और उनका स्वास्थ्य बड़ा नाजुक है। फिर भी उन्होंने अपने हिस्सेमें जो भी काम आया उसे खुशीसे किया। इतना ही नहीं, उन्होंने इस वातकी भी परवाह नहीं की कि इसका उनकी तवीयतपर क्या असर होगा। एक वार एक काफिर सन्तरीने उन्हें वड़े दारोगाका पाखाना साफ करनेका काम सौंपा। उन्होंने तुरन्त उसे स्वीकार कर लिया। ऐसा काम उन्होंने कभी नहीं किया था, इसलिए उन्हें उलटी हो गई। लेकिन इसकी उन्होंने परवाह नहीं की। वे दूसरा पाखाना साफ कर रहे थे, इतनेमें मैं वहाँ जा पहुँचा और मैंने उन्हें यह काम करते हुए आश्चर्यके साथ देखा। उनके प्रति मेरा प्रेम उमड़ आया। पूछताछ करनेपर पहलेवाले पाखानेकी घटनाका पता लगा। एक वार उसी काफिर सन्तरीको शायद वड़े अफसरने आज्ञा दी कि भारतीयोंके लिए खास तौरसे रखे गये पाखाने साफ करनेके लिए दो भारतीय कैदियोंको वुलाया जाये। सन्तरी मेरे पास आया और उसने दो आदमियोंकी माँग की। मुझे लगा कि इस कामके लिए तो मैं ही ज्यादा योग्य माना जा सकता हूँ, इसलिए मैं ही गया।

मुझे तो ऐसे कामसे कोई नफरत है ही नहीं। मैं ऐसा मानता हूँ कि इस किस्मका काम करनेकी हमें आदत डालनी चाहिए। ऐसे कामके प्रति हम नफरत रखते हैं, उसीका यह नतीजा है कि हमारे आँगन और पाखाने ज्यादातर गन्दे दिखाई पड़ते हैं। इतना ही नहीं,

इसी कारणसे हम महामारियाँ पैदा करते हैं या फैलाते हैं। हम ऐसा मान बैठे हैं कि पाखाने तो हमेशा गन्दे ही होते हैं। इसीलिए हमपर बार-बार गन्दगीका आरोप लगाया जाता है। ऐसा काम न करनेके कारण ही एक भारतीय कैदी को "सॉलीटरी सेल" यानी कालकोठरीमें बन्द होनेकी सजा भोगनी पड़ी थी। सजा भोगनेमें मैं दोष नहीं मानता; लेकिन यह सजा भोगनेकी जरूरत नहीं थी। इसके सिवा, हम ऐसे काममें आनाकानी करके पीछे हटें, यह उचित नहीं है। जब मैं इस कामके लिए जाने लगा तब सन्तरीने दूसरोंको उलाहना देते हुए उन्हें भी उस कामके लिए चलनेको कहा। इस तरह इस हुक्मकी बात फैल गई और तुरन्त ही श्री उमर उस्मान तथा श्री रुस्तमजी मेरी मददके लिए दौड़ पड़े, यद्यपि काम बहुत कम था। इस बातको लिखनेका हेतु यह दिखाना है कि जब सरकारने उनसे ऐसा काम कराया, तो उसे करनेमें उन्होंने भी अपना सम्मान माना। यदि हम, जेलमें जो काम हमें मिलता है, उसके प्रति घृणाका भाव रखें, तो हम खरी लड़ाईमें हिस्सा नहीं ले सकते।

जोहानिसबर्ग ले गये

फोक्सरस्ट जेलमें हमें कैसा काम करना पड़ता था, उसका विवरण मैंने ऊपर दे दिया है। लेकिन मेरे पूरे दो माह उसी जेलमें नहीं बीते। मुझे कुछ दिनोंके लिए अचानक जोहानिसबर्ग भेज दिया गया था। वहाँ जो-कुछ हुआ, वह जानने लायक है। अक्तूबर २५ को मुझे वहाँ ले जाया गया। इसका कारण यह था कि मुझे दर्जी डाह्याभाईके मुकदमेमें गवाही देनी थी। इसके सिवा दूसरे कारणोंकी सम्भावनाके बारेमें भी काफी तर्क-वितर्क हुआ। बहुत-से लोग ऐसी भी आशा करते थे कि शायद श्री स्मट्ससे मुलाकात होगी। पीछे मालूम हुआ कि ऐसी कोई बात नहीं थी। मुझे ले जानेके लिए जोहानिसबर्गसे एक खास दारोगाको भेजा गया था। इस दारोगाको और मुझे रेलका एक डिब्बा मिला था। टिकट दूसरे दर्जेका था, उसका कारण तो यह था कि उस गाड़ीमें तीसरे दर्जेके डिब्बे थे ही नहीं। ऐसा मालूम होता है कि कैदियोंको तीसरे दर्जेमें ही ले जाते हैं। रास्तेमें भी मेरी पोशाक कैदीकी ही थी। मेरा सामान मुझसे ही उठवाया गया। जेलसे स्टेशन तक चलकर जाना था। जोहानिसबर्ग पहुँचनेके बाद वहाँसे जेल तक सामान उठाकर पैदल जाना पड़ा। इस बातकी अखबारोंमें बहुत टीका हुई। विलायतकी संसदमें भी इस प्रसंगको लेकर सवाल पूछे गये। कई लोगोंको बहुत दुःख हुआ। सबको ऐसा लगा कि मुझ-जैसे राजनीतिक कैदीको जेलकी पोशाकमें पैदल बोझा उठवाकर नहीं ले जाना चाहिए था।[1]

लोगोंका मन इस घटनासे दुखे, यह बात समझमें आने-जैसी है। जब श्री आंगलियाने सुना कि मुझे इस तरह जाना है तब उनकी आँखोंमें आँसू भर आये। श्री नायडू तथा श्री पोलकको इसकी खबर मिल गई थी, इसलिए वे मुझसे स्टेशनपर मिले। वे भी मेरी स्थिति देखकर रुआँसे हो गये, लेकिन इसमें दुःख माननेका कोई कारण नहीं है। इस देशमें राजनीतिक और दूसरे कैदियोंके बीच सरकार कोई फर्क रखे, यह सम्भव नहीं है। वह हमें जितना ज्यादा दुःख दे और हम उसे जितना ज्यादा सहें, उतनी ही जल्दी हमारा छुटकारा होगा। इसके सिवा, विचार करनेसे मालूम होगा कि कैदीकी पोशाक पहनना, पैदल चलकर जाना और अपने सामानका बोझ उठाना — इस सबमें दुःखकी कोई बात नहीं है। लेकिन दुनिया

१. देखिए परिशिष्ट ८।

तो ऐसी बातको दुःखरूप ही मानेगी, और इसीलिए विलायतमें इस बातको लेकर इतना हल्ला मचा।

रास्तेमें सन्तरीकी ओरसे कोई तकलीफ नहीं हुई। सन्तरी खुद खुली अनुमति न दे तो जेलकी खुराकके सिवा कोई दूसरी खुराक न खानेका मेरा निश्चय था। इसलिए आज तक मैं जेलकी ही खुराकपर निभता आया था। रेलमें मेरे साथ खाना रखा नहीं गया था। सन्तरीने मुझे जो कुछ खाना चाहूँ सो खानेकी छूट दे दी। स्टेशन मास्टरने मुझे पैसे देनेकी इच्छा प्रकट की। उसके मनमें भी मेरे लिए बहुत सहानुभूति उमड़ आई थी। मैंने उसका उपकार माना, पर पैसे लेनेसे इनकार कर दिया। श्री काजी स्टेशनपर हाजिर थे। उनसे मैंने दस शिलिंग लिये। उससे मैंने सन्तरीके लिए और अपने लिए ट्रेनसे खानेकी चीजें खरीदीं।

हम जोहानिसबर्ग पहुँचे, उस समय शाम हो गई थी। इसलिए मुझे दूसरे भारतीय कैदियोंके पास नहीं ले जाया गया। जेलमें मुख्यतः जहाँ बीमार काफिर कैदी थे, उनकी कोठरीमें मुझे बिस्तर दिया गया। इस कोठरीमें मेरी रात बहुत दुःख तथा भयमें बीती। मुझे इस बातका पता नहीं था कि दूसरे ही दिन मुझे अपने लोगोंके बीचमें ले जायेंगे। मैं सोचता था, मुझे इसी जगह रखेंगे। इससे मैं भयका अनुभव करता रहा। मैं बहुत घबराया। फिर भी, मनमें यह निश्चय किया कि मेरा कर्तव्य तो यही है कि जो भी दुःख आ पड़े, उसे मैं सहन करता रहूँ। 'भगवद्गीता' मेरे साथ थी। उसे मैंने पढ़ा। समयोचित श्लोक पढ़कर उनका मनन किया और धीरज रखा।

चिन्तित होनेका कारण यह था कि काफिर और चीनी कैदी जंगली, खूनी और अनैतिक आचरणवाले मालूम हुए। उनकी भाषा मैं जानता न था। एक काफिरने मुझसे सवाल पूछना शुरू किया। उसमें भी मुझे गन्दा हँसी-मजाक मालूम हुआ। मैं उसे समझ नहीं सका और मैंने कोई जवाब नहीं दिया। तब उसने मुझसे टूटी-फूटी अंग्रेजीमें पूछा: "तुझे यहाँ इस तरह क्यों लाये हैं?" मैंने छोटा-सा उत्तर दिया और फिर चुप हो गया। बादमें चीनीने सवाल पूछना शुरू किया। वह ज्यादा बुरा आदमी मालूम हुआ। मेरे बिस्तरके पास आकर वह मुझे देखने लगा। मैं चुप रहा। बादमें वह काफिर कैदीके बिस्तरके पास पहुँचा। वहाँ दोनोंने एक-दूसरेसे गन्दा हँसी-मजाक करना शुरू किया और एक-दूसरेके दोष बताने लगे। ये दोनों कैदी खून अथवा बड़ी चोरीके अपराधमें पकड़े गये थे। यह सब देखकर मुझे नींद तो कैसे आती? दूसरे दिन गवर्नरको यह सब बताऊँगा, ऐसा सोचकर बहुत रात गये मैं थोड़ा सोया।

वास्तविक दुःख तो इसे कहना चाहिए। सामान ढोना आदि तो कुछ नहीं है। जो अनुभव मुझे हुआ वह दूसरे भारतीयोंको भी होता होगा, वे भी डरते होंगे, ऐसा सोचकर इस विचारसे मैं खुश हुआ कि ऐसे दुःखका अनुभव मैंने भी किया। मैंने निश्चय किया कि इस अनुभवके बाद मैं सरकारके साथ इस सम्बन्धमें अधिक लड़ाई चलाऊँगा और जेलमें होनेवाली ऐसी बातोंमें सुधार करवाऊँगा। यह सब सत्याग्रहकी लड़ाईका अप्रत्यक्ष लाभ है।

दूसरे दिन उठते ही मुझे दूसरे भारतीय कैदियोंके पास ले जाया गया, इसलिए ऊपरकी बात गवर्नरसे कहनेका प्रसंग नहीं आया। लेकिन सरकारसे इस बातपर लड़ाई करनेका विचार मेरे मनमें अब भी है कि भारतीयोंको काफिर अथवा दूसरे कैदियोंके साथ न रखा जाये। जब मैं पहुँचा, उस समय भारतीय कैदियोंकी संख्या लगभग पन्द्रह थी। उनमें तीनके सिवा

बाकी सब सत्याग्रही थे। तीन आदमी दूसरे गुनाहोंमें पकड़े गये थे। इन कैदियोंको काफिरोंके साथ रखा जाता था। मेरे पहुँचनेपर बड़े दारोगाने आज्ञा दी कि हम सबको अलग कोठरी दी जाये। मुझे यह देखकर बहुत खेद हुआ कि कुछ भारतीय कैदी काफिरोंके साथ उनकी कोठरीमें सोनेमें खुश रहते हैं। उसका कारण यह था कि वहाँ चोरीसे तम्बाकू आदि मिल सकती हैं। यह बात हमारे लिए लज्जाजनक है। काफिरोंके प्रति या दूसरोंके प्रति हमें तिरस्कार-भाव नहीं होना चाहिए। लेकिन यह भी नहीं भूलना चाहिए कि उनके और हमारे बीच साधारण व्यवहारमें एकता नहीं है। इसके सिवा, जो लोग उनके साथ उसी कोठरीमें सोनेकी माँग करते हैं, उनका हेतु भिन्न रहता है। इसलिए यदि हमें आगे बढ़ना हो, तो अपने मनसे ऐसे भाव निकाल देना जरूरी है।

(क्रमशः)

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–१–१९०९

९४. पत्र: श्रीमती चंचलबेन गांधीको

फोक्सरस्ट

शनिवार [जनवरी १६, १९०९][1]

चि० चंचल[2],

मैं पकड़ा गया; निर्वासित किया गया; फिर पकड़ा गया और तब जमानतपर छूटा। अब जोहानिसबर्ग जाऊँगा। यह विशेष समाचार तुम मणिलालसे जान लेना।

तुम्हारे साथ मेरी बहुत, बल्कि कुछ भी, बात नहीं हुई, इससे मेरा मन दुःखी है; किन्तु मेरी स्थिति ही ऐसी बेढंगी है।

तुमसे मैंने उस दिन जानबूझ कर ही लिखाया था। तुम्हें ऐसे काममें कुशल बनाना चाहता हूँ। रामी[3] बड़ी हो जाये तब तो तुम्हें अपने पास भी रख लूँगा। यह निश्चित समझ लेना कि अगर फिलहाल, जैसे हो वैसे, हरिलालके साथ रहनेका विचार छोड़ दोगी तो तुम दोनोंका कल्याण होगा। हरिलाल अकेला रह कर बनेगा और अपने दूसरे कर्तव्य पूरे करेगा। तुम्हारे प्रति उसका प्रेम केवल तुम्हारे साथ रहनेमें ही नहीं है। बहुत बार प्रेमकी खातिर ही अलग रहना पड़ता है। तुम्हारे बारेमें भी यही बात है। मैं हर तरहसे देखता हूँ कि तुम्हारा वियोग ही तुम्हारे लिए सुखकर है। मगर वह सुखकर एक ही तरहसे रह सकता है कि तुम वियोगसे अकुलाओ नहीं। लड़ाई पूरी होने तक हरिलालको जोहानिसबर्गमें रहना पड़ेगा, ऐसा मुझे प्रतीत होता है।

१. गांधीजी इस तारीखको फोक्सरस्टमें गिरफ्तार किये गये थे। उस समय वे कस्तूरबाको, जो फीनिक्समें सख्त बीमार थीं, देखकर जोहानिसबर्ग जा रहे थे।

२. गांधीजीके ज्येष्ठ पुत्र हरिलालकी पत्नी।

३. चंचलबेनकी पुत्री।

तुम्हारी स्थितिको देखते हुए मैं तुमको वालक मानना नहीं चाहता। मैं चाहता हूँ, घरका कार्य-भार तुम और मणिलाल उठाओ। घरकी हरएक वस्तुको सँभालना, रामा[1] और देवाको[2] ठीक तरह रखना, उनके सामान की सार-सँभाल करना, उन्हें स्वयं भी ऐसा ही सिखाना, उनको साफ-सुथरा रखना और उनके नाखूनोंकी सफाईका ध्यान रखना — यह सब तुम दोनोंको करना है। बा[3] तो जब स्वस्थ होगी तब होगी। स्वस्थ होनेपर भी कोई फर्क तो पड़ना नहीं है। तुमको घरकी मालकिनकी तरह ही व्यवहार करना है। हम बहुत ही गरीब हैं, यह न भूलना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५२६) से।

९५. पत्र : 'इंडियन ओपिनियन' को

जोहानिसबर्ग
जनवरी १९, १९०९

सेवामें
सम्पादक
'इंडियन ओपिनियन'

महोदय,

'इंडियन ओपिनियन' का इस सप्ताहका अंक जबतक प्रकाशित होगा तबतक मैं शायद जेल-महलमें बैठा होऊँगा। इसलिए मैं वर्तमान स्थितिके सम्बन्धमें भारतीय समाजसे दो शब्द कहना जरूरी समझता हूँ।

कुछ भारतीय ढीले पड़ गये हैं, इसमें शक नहीं। कईने लड़ाई छोड़ दी है और कई दूसरे अब छोड़ी, अब छोड़ीकी स्थितिमें दिखाई देते हैं।

कुछ पठानोंके दस्तखतोंसे 'स्टार' में एक चिट्ठी[4] प्रकाशित हुई है, जिसमें वे इस-प्रकार लिखते हैं:

> हम पठान, आपके अखबारके जरिये सरकारको और आमजनताको खबर देते हैं कि ब्रिटिश भारतीय संघने एशियाई-दफ्तर और परवाना-दफ्तरकी निगरानीके लिए धरनेदारोंका एक स्वयंसेवक-दल बनाया है। धरनेदार खाकी वर्दियाँ पहनते हैं और सिपाहियोंके-जैसे पट्टे बाँधते हैं। इनमें से कुछको हमने सड़कोंपर फक्कड़पनसे चक्कर काटते देखा है। पठान सरकारकी मदद करना चाहते हैं। ये धरनेदार उनको रोकने और वफादार भारतीयोंको सरकारके विरुद्ध खड़ा करनेके लिए नियुक्त किये गये हैं।

१. गांधीजीके तृतीय पुत्र रामदास।
२. गांधीजीके कनिष्ठ पुत्र देवदास।
३. कस्तूरबा गांधी।
४. जनवरी १८, १९०९ को लिखे गये इस पत्रका शीर्षक था, "धरनेदारोंके विरुद्ध विद्रोह"।

> इसलिए हम पठान, जिन्होंने स्वर्गीया महारानी विक्टोरियाका और वर्तमान सम्राट् और सम्राज्ञीका — खुदा उनको सलामत रखे — नमक खाया है, गांधी और पोलकके इन स्वयंसेवकोंको धमकी देनेवाला कहते हैं। हम सरकारसे निवेदन करते हैं कि वह हमारे इस काममें विरुद्ध पक्ष न ले। गांधी हमेशा हमारे धर्मकी तौहीन करते हैं और हमारे पैगम्बरका अपमान करते हैं; इतना ही नहीं, वे हमेशा देशके अमन-चैनमें खलल डालते रहते हैं। यदि सरकार उनको और उनकी स्वयंसेवकोंकी टुकड़ीको उपनिवेशसे बाहर न निकाल सकती हो तो हम सरकारकी खातिर यह काम जल्दी कर सकेंगे। आप यह पत्र प्रकाशित कर देंगे तो हम आपके आभारी होंगे।

मैंने कहा है कि इस पत्रपर पठानोंके दस्तखत हैं; किन्तु मैं यह नहीं कह सकता कि यह उनका लिखा हुआ है। एक दिन वह था जब पठानोंने सरकारको दर्खास्त देकर कहा था कि "आपके कानूनको हम मानें, इससे तो यही अच्छा है कि आप हमें तोपके गोलेसे उड़ा दें।" आज पठान उसी कानूनको मान लेंगे अथवा दूसरोंसे उसके मनवानेमें मदद करेंगे, यह सम्भव नहीं दिखता। यदि यह सम्भव हो जाये तो यह उनके लिए और हमारे लिए लज्जाकी बात होगी।

तब यह पत्र कैसे लिखा गया? मुझे विश्वास है कि इसके पीछे एक प्रसिद्ध भारतीयका हाथ है। कुछ गोरे भी अपनी स्वार्थसिद्धिके लिए भारतीय समाजके विरुद्ध प्रपंच रच रहे हैं। बहुत-से भारतीय खुद जले हुए हैं, और इसलिए वे दूसरोंको जलानेके इरादेसे सारी कौमको डुबाना चाहते हैं। ये दोनों तरहके लोग अपने इस खेलमें पठानोंका उपयोग करना चाहते हैं। पठान खुद लिखना-पढ़ना जानते नहीं, इसलिए सरलतासे बहकावेमें आकर दस्तखत कर देते हैं। उनको ऐसा करनेसे पहले विचार करना चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि कोई भारतीय उन्हें [पठानोंको] शुद्ध बुद्धिसे यह पत्र पढ़ा देगा। यदि वे चाहे जिस कागजपर विचार किये बिना दस्तखत करेंगे तो उनकी तलवारको बट्टा लगेगा। तलवारका प्रयोग जब बुरे प्रयोजनके लिए होता है तब उसको मैं तो लोहेके जंग खाये टुकड़ेके समान मानता हूँ।

जिस व्यक्तिने यह पत्र लिखा है या लिखाया है उसने धरनेदारोंको धमकी दी है। किन्तु पठानोंको समझ लेना चाहिए कि उनका हाथ किसी भारतीयपर न उठेगा।

उसमें जो-कुछ मेरे विरुद्ध लिखा गया है, उसके सम्बन्धमें मुझे ज्यादा कहना नहीं है। लेखक हिन्दुओं और मुसलमानोंमें लड़ाई कराना चाहता है। मैं मुसलमानोंके पैगम्बरोंका अपमान करता हूँ, यह आरोप लगाना बिल्कुल अज्ञानकी बात है। मुझे तो ऐसा खयाल सपनेमें भी नहीं आता। सच्चा हिन्दू-धर्म दूसरेके धर्मका अपमान करनेमें है ही नहीं। मैं मानता हूँ कि मैं उसी धर्मका पालन करनेवाला हूँ। मेरा जीवन हिन्दुओं और मुसलमानोंमें एकता कैसे हो, यह खोजनेमें ही लगा हुआ है। तो फिर मुझसे मुसलमानोंके पैगम्बरोंका अपमान कैसे हो सकता है? किन्तु जो कौमके दुश्मन हैं वे झगड़ा करानेके लिए चाहे जैसी बातें करके संगठन तोड़ना चाहते हैं; और उनका इरादा उसमें पठानोंको घसीटनेका है।

ऐसे समयमें समाजके जो लोग समझदार और जातीय हितके आकांक्षी हैं उन्हें सावधान रहना चाहिए। पहली बात तो यही है कि उन्हें हर व्यक्तिकी धमकीसे डरना नहीं है। भारतीय समाज सरकारसे सत्याग्रहके द्वारा लड़ता है। वैसे ही वह उन भारतीयोंसे भी लड़ेगा जो भारतीय समाजके शत्रु होंगे। डर एक खुदाका — ईश्वरका रखना है। जो समाजका

बुरा करना चाहते हैं वे अज्ञानी हैं, ऐसा समझकर उनपर हमें तरस खाना चाहिए। किन्तु हमें उनसे दबना नहीं है। यह लड़ाई लम्बी हो गई है — अभी और लम्बी होगी। सभी लोग समझ सकते हैं कि लड़ाई लम्बी हुई है, इसके कारण हम ही हैं। अब इसे छोटा करना भी हमारे ही हाथमें है। इसका उपाय यही है कि जो लोग लड़ाईको समझते हैं उन्हें पूरा उत्साह दिखाना चाहिए। उनको रोषमें आना या घबराना नहीं है। फिर, ज्यों-ज्यों हमारे विरुद्ध जोर लगाया जाये, त्यों-त्यों हमें ज्यादा जोर लगाना चाहिए। जो लोग लड़ाईको इस रूपमें समझते हैं, उनको ज्यादा नुकसान उठाना और ज्यादा कष्ट सहना है। लड़ाईका सच्चा मुद्दा यह है कि हमें अपनी जान खोकर, अपना माल गँवाकर भी खुश रहना है; और यह सब निर्भीक भावसे करना है। इसीमें अपना भी और अपनी कौमका भी लाभ समझना है। ऐसा होगा, तभी लड़ाई जीती जायेगी।

श्री पोलकपर जो चोट की गई है वह हम सभीको लजानेवाली है। श्री पोलकने भारतीय समाजकी जो सेवा की है, उसका मूल्य आँकना मेरे लिए तो सम्भव नहीं है। मैं उनके गुणोंका वर्णन नहीं कर सकता। वे हमारी लड़ाईके तत्त्वको जितना समझते हैं, उतना शायद ही कोई भारतीय समझता हो। ऐसे व्यक्तिके विरुद्ध ऊपर बताये गये पत्रमें जो-कुछ लिखा गया है, वह बताता है कि हमारी ग्रह-दशा कठिन है।

मैं उस पत्रको लिखानेवाले और लिखनेवालेको नहीं जानता। मैं तो ईश्वरसे यही प्रार्थना करता हूँ कि वह उसको, पठानोंको और समस्त भारतीयोंको सद्बुद्धि दे और भारतीय समाजने अपने सिरपर जो बड़ा काम लिया है, उसमें वह अन्ततक मजबूत रहे।

जातिका सेवक और सत्याग्रही,
मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, २३–१–१९०९

९६. पत्र: अखबारोंको[1]

जोहानिसबर्ग
जनवरी २०, १९०९

[महोदय,]

भारतीय समाज पिछले ढाई सालसे चलती आ रही अपनी लड़ाईके तीसरे और शायद अन्तिम दौरमें प्रवेश कर रहा है। अभीतक इस बातकी जरूरत महसूस नहीं हुई थी कि ब्रिटिश भारतीय व्यापारी अपना माल-मता पूरी तरहसे होम दें और अपनेको कंगाल बना डालें। लड़ाईमें भाग लेनेके लिए अपनेको मुक्त करनेकी दृष्टिसे उन्होंने अपना व्यापार काफी हद तक कम तो किया है, किन्तु उसे पूरी तरहसे छोड़ा नहीं है। यह कथन कि किसी अन्यायी सरकारके अधीन केवल वे लोग ही धनका संग्रह या उसकी रक्षा कर सकते हैं, जो उसके अन्यायका

१. यह २३–१–१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित हुआ था। गांधीजी काछल्यिाके साहूकारोंकी २२ जनवरीको हुई सभामें हाजिर थे और अनुमान है, इस पत्रका मसविदा उन्होंने ही तैयार किया था। देखिए "पत्र: 'रैंड डेली मेल' को", पृष्ठ १५९–६० भी।

समर्थन करते और उसमें हिस्सा लेते हैं, प्रस्तुत मामलेमें सही सिद्ध होनेवाला है। हमें अपने जालमें फँसानेके उद्देश्यसे, और यह देखकर कि हमें जेलका कोई डर नहीं रह गया है, फौजदारी कानूनके अन्तर्गत कुछ नियम[1] बनाये गये हैं, जिनमें उन लोगोंका माल बेचनेकी पद्धति निर्धारित की गई है जिन्हें मजिस्ट्रेट कैदकी सजाका विकल्प दिये बिना जुर्मानेकी सजा देंगे। जाहिर है कि इस नई चालका लक्ष्य भारतीय व्यापारी हैं। इसलिए उन्हें स्वेच्छामूलक कंगाली, जबरदस्ती लादी गई कंगाली या अपयशका सामना करनेकी जरूरत आ पड़ी है। वे अपने साहूकारको या अपनेको हानि पहुँचाकर एक अन्यायी सरकारको धन प्राप्त करानेकी इच्छा नहीं कर सकते हैं। वे अपयशके भागी भी नहीं होना चाहते। इसलिए एक व्यापारीके नाते और ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षकी हैसियतसे, अपने स्वदेश-भाइयोंको मेरी तो यही सलाह है कि वे फिलहाल व्यापार करना छोड़ दें और साहूकारोंका जो भी माल उनके पास हो उसे साहूकारोंको वापिस कर दें, या अपनी दूकानें बन्द कर दें। [इस दिशामें] उदाहरण पेश करनेके लिए मैंने खुद ही पहला कदम उठानेका निश्चय किया है और मैं ऐसा खूब सोच-विचारकर कर रहा हूँ, हालांकि मनमें कुछ हिचकिचाहट जरूर है। इस महत्त्वपूर्ण कदमके सम्बन्धमें संघकी राय जाननेके लिए विधिपूर्वक मत-संग्रह न तो किया जायेगा और न किया जा सकता है। उन सारे भारतीय दूकानदारोंसे, जो अभीतक हमारी लड़ाईके प्रति वफादार रहे हैं, यह आशा करना बड़ा कठिन है कि वे अपना सारा माल बेच देंगे और हममें से कुछने जो दुर्गम रास्ता चुना है उसका अनुगमन करेंगे। वे इस अवसरके अनुरूप ऊँचे न उठ सकते हों तो भी मैं मानता हूँ कि वे, यदि उपनिवेशियोंकी नहीं तो, अपने स्वदेश-वासियोंकी हितकामनाके हकदार हैं; कारण, उन्होंने पिछले तीस महीनोंमें संकटों और कठिनाइयोंका मुकाबला किया है। फिर भी, यदि हम पैसेकी तुलनामें अपने सिद्धान्तका ज्यादा मूल्य करते हैं तो मैं अपने स्वदेशवासियोंको एक यही सलाह दे सकता हूँ कि वे अवसरके तकाजेके अनुसार ऊपर उठें और यह अन्तिम कदम उठायें। तभी उपनिवेशी, यदि समझना चाहेंगे तो, यह समझेंगे कि जहाँतक भारतीयोंका ताल्लुक है, हमारी इस लड़ाईका उद्देश्य व्यापारपर हमारा मौजूदा नियंत्रण बनाये रखना, अनुचित प्रतिस्पर्धा करना या जिन लोगोंको इस देशमें रहनेका अधिकार नहीं है उन्हें यहाँ ला बसाना नहीं है। जहाँतक हमारा सम्बन्ध है, सवाल सिर्फ, राष्ट्रीय सम्मान और अपने ईमानकी रक्षाका है।[2] दूसरे शब्दोंमें, हम यह दिखानेकी कोशिश कर रहे हैं कि हम दक्षिण आफ्रिकाके नागरिक होनेके योग्य हैं। यह सम्भव

१. ये नियम १९०३ के अध्यादेश १ की धारा २८० के अन्तर्गत ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयके न्यायाधीशों द्वारा बनाये गये थे। इन नियमोंमें दीवानी मामलोंकी ही तरह जुर्मानेकी वसूलीके वारंटकी तामील करनेकी, ताजके डिगरीदार साहूकारकी जगह लेनेकी, जितना माल वारंटकी तामीलीका खर्च और उसमें उल्लिखित धनराशिकी भरपाईके लिए काफी हो, कुर्क-अमीनके उतना माल जब्त कर सकनेकी, और वसूल हुए जुर्मानेकी राशिके अनुपातमें कैदकी मीयाद घटानेकी व्यवस्था की गई थी। देखिए **इंडियन ओपिनियन,** ९-१-१९०९।

२. यूरोपीय व्यापारियोंने ऐसा नहीं समझा; उनकी प्रतिक्रिया भिन्न प्रकारकी थी। जनवरी २१ के **नेटाल मर्क्युरी**में प्रकाशित एक विशेष तारमें कहा गया था, "यह याद रखना चाहिए कि एशियाई सवालपर सरकारका समर्थन करनेमें व्यापारी समाज अभीतक लगभग एकमत रहा है। इसलिए ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षने जो रुख अख्तियार किया है उसका यह अर्थ लगाया गया है कि श्री गांधी और उनके साथी आन्दोलनकारी उन्हें छकानेकी कोशिश कर रहे हैं।"

है कि लड़ाईकी इस अन्तिम मंजिलमें बहुत-से भारतीय लड़खड़ा जायें। हम यह भी देखते हैं कि लड़ाई लम्बी चलेगी। हमारे ही अन्दर मौजूद द्वेषी व्यक्तियोंके द्वारा और ऐसे यूरोपीयोंके द्वारा, जिनका इस बातमें स्वार्थ है, हमारे खेमेमें फूटके बीज बोनेकी कोशिश की जा रही है। हमें इन सारी बातोंकी कल्पना थी, किन्तु वे हमें अपने अपनाये हुए रास्तेसे विचलित नहीं कर सकतीं। और बहुतोंके पिछड़ जानेके बाद हमारी संख्या बड़ी रहे चाहे छोटी, हम तबतक कष्ट सहते रहेंगे जबतक हमारे साथ न्याय नहीं किया जाता।

आपका, आदि,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–१–१९०९

९७. पत्र: लेनदारोंको[1]

[जोहानिसबर्ग
जनवरी २०, १९०९]

[सज्जनो,]

मुझे आपको यह खबर देते हुए दुःख होता है कि मेरे लेनदारोंकी एक बैठक रिसिक स्ट्रीट और ऐंडर्सन स्ट्रीटके नाकेपर ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यालय, २१-२४ कोर्ट चेम्बर्समें शुक्रवार २२ तारीखको सायंकाल ३ बजे बुलाई जायेगी। इस बैठकको बुलानेका कारण मेरी मालीहालत नहीं है। परन्तु मैं, ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षकी हैसियतसे, अब अपना व्यापार अपने लेनदारों या अपने-आपको जोखिमसे बाहर रखकर नहीं चला सकता; क्योंकि मैं देखता हूँ कि सरकारने उन ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंको बर्बाद करनेका इरादा कर लिया है, जिन्होंने तबतक एशियाई रजिस्ट्रेशन कानूनको माननेसे इनकार कर दिया है जबतक जनरल स्मट्सका वादा पूरा नहीं किया जाता और शिक्षित भारतीयोंका दर्जा पक्की नींवपर नहीं रखा जाता। मैं कह दूँ कि, स्पष्टतः कानून-विभागकी हिदायतोंपर, मजिस्ट्रेट बिना परवानोंके व्यापार करनेवाले व्यापारियोंपर भारी जुर्माने कर रहे हैं और उन्हें बदलेमें कैदकी छूट भी नहीं है। 'गजट' में नियम छाप दिये गये हैं, जिनमें इन जुर्मानोंकी वसूलीके लिए मालको बेचनेका तरीका बताया गया है।

यह कहकर मैं कड़े जुर्माने करनेवाले मजिस्ट्रेटोंकी या इन नियमोंको बनानेवाली सरकारकी शिकायत नहीं करता। अपनी समझके अनुसार उन्हें अपने कानूनोंको जबरदस्ती मनवानेका हक है। मेरा दावा केवल यह है कि ब्रिटिश भारतीयोंको भी अपने कष्ट-सहनसे उन

१. सम्भव है कि ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष अ० मु० काछलियाके हस्ताक्षरोंसे युक्त यह पत्र और पिछला शीर्षक दोनों एक साथ लिखे गये हों।

कानूनोंका विरोध करनेका अधिकार है, जिन्हें वे अपने राष्ट्रीय सम्मान और अपनी अन्तरात्माके प्रतिकूल समझते हैं। इस स्थितिमें, जबतक संघर्ष चलता है, मेरे सामने इसके सिवा और कोई रास्ता खुला नहीं रहा है कि मेरे पास जो-कुछ है उसको बिकने देनेके बजाय मैं अपने लेनदारोंको सौंप दूं, क्योंकि आखिर मैं उनकी ओरसे इसका न्यासी (ट्रस्टी) हूँ। मैं जानता हूँ कि मुझे अपने-आपको इस मालको रकममें बदलने और अपने लेनदारोंका पावना नकदमें चुकानेके लिए जिम्मेदार समझना चाहिए। परन्तु सार्वजनिक हित मेरे निजी हितसे ज्यादा जरूरी है। इसलिए यह देखते हुए कि मैं अपने मालको इस तरह नीलाम नहीं कर सकता जिससे मेरे लेनदारोंको लाभ हो, मैंने यही तय किया है कि मैं उनको इकट्ठा करूँ, उनके सामने अपनी हालत रखूँ और उनसे कहूँ कि वे मेरे माल और दूसरी मिल्कियतको ले लें। अगर संघर्ष सौभाग्यसे निकट भविष्यमें समाप्त हो जाये — या जब भी समाप्त हो — तो मैं इस मालको खुशीसे ज्योंका-त्यों ले लूंगा और अपने लेनदारोंके लाभके लिए बेचूंगा। परन्तु अपने मालकी बिक्रीके बारेमें मैं आगामी बैठकमें अपने-आपको पूरी तरह अपने लेनदारोंके हाथोंमें सौंप दूंगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-१-१९०९

९८. भेंट : 'नेटाल मर्क्युरी' के प्रतिनिधिको

[जोहानिसबर्ग
जनवरी २१, १९०९]

मुलाकातमें श्री गांधीने कहा : इस कदमके कारण[1] भारतीय कौमको इतना अधिक आत्म-त्याग करना पड़ेगा कि सब भारतीय व्यापारी इस विचारको — जो मुझे नेटालमें रहते सूझा था — अपनानेके लिए तैयार होंगे या नहीं, यह अभी शुरूकी हालतमें बताना मुश्किल है। भारतीयोंके लेनदारोंमें समुद्र-पारीय ब्रिटिश पेढ़ियाँ, स्थानीय थोक और खुदरा व्यापार करनेवाली पेढ़ियां, बैंक, दूकानदार और भारतकी पेढ़ियाँ हैं। अगर भारतीय एकमत हो सकें तो इनका नुकसान कई हजार पौंड तक पहुँच जायेगा। इंग्लैंडकी थोक व्यापारी पेढ़ियोंने यहाँ भारतीय व्यापारियोंको बहुत माल दिया है। अगर यहांके भारतीय अपनी जायदादें और दूकानें उनको सौंप दें तो यहांके थोक व्यापारियोंको या तो इस नुकसानके व्यापारको बन्द करनेके लिए मजबूर होना पड़ेगा या एशियाई दूकानदारोंको मैनेजरों या मुनीमोंके रूपमें रखना पड़ेगा, ताकि वे रजिस्ट्रेशन-कानूनोंके बावजूद व्यापार कर सकें। अगर किसी भी तरहके लेनदारोंने भारतीयोंके मालको सरेबाजार बिकवानेका फैसला किया तो भारतीय व्यापारी तो बिलकुल बर्बाद हो ही जायेंगे, परन्तु उन लेनदारोंको भी भारी नुकसान होगा। श्री गांधीने कहा कि

१. यह सुझाव दिया गया था कि साहूकारोंका जो भी माल भारतीयोंके पास हो वे उसे वापस कर दें या अपनी दूकानें बन्द कर दें। देखिए "पत्र : अखबारोंको", पृष्ठ १५४-५६।

भारतीयोंकी सफलता उनके एकमत रहनेपर निर्भर है। इसलिए ट्रान्सवालके जिन-जिन भारतीयोंपर इसका असर होगा उन सबको सूचना भेज दी जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-१-१९०९

९९. काछलियाके लेनदारोंकी बैठकमें पैरवी[1]

[जोहानिसबर्ग
जनवरी २२, १९०९]

... श्री गांधीने, जो काछलियाकी ओरसे बोले, कहा कि लेनदार जो भी कार्रवाई उचित समझें, करनेके लिए स्वतन्त्र हैं। व्यापारियोंने मेरे मुवक्किलमें जो विश्वास किया है उसका जवाब वे उनमें अपना विश्वास प्रकट करके देना चाहते हैं। अगर वे चाहें तो उनकी मालियतका उपयोग व्यापारको चालू रखकर ज्यादासे-ज्यादा लाभके खयालसे कर सकते हैं, या उनका पूरा माल बेच सकते हैं। श्री काछलिया व्यापारको जारी नहीं रख सकते।

अध्यक्षने यह कहकर बैठक समाप्त कर दी कि वे लेनदारोंके बहुमतके प्रतिनिधिकी हैसियतसे कोई फैसला करनेके लिए तैयार नहीं हैं; लेकिन वे श्री काछलियाको उनका पूरा-पूरा पावना चुकानेके लिए अगले सोमवारकी दोपहर तक की मुहलत देते हैं।

श्री गांधीने कहा कि उनके मुवक्किल मुहलत नहीं चाहते।[2]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१-१९०९

१. लेनदारों और अखबारोंको लिखे गये पत्रोंके मुताबिक (देखिए पृष्ठ १५४-५७) श्री अ० मु० काछलियाके लेनदारोंकी एक बैठक ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यालयमें हुई थी। व्यापारी-न्यास (मर्चेंट्स ट्रस्ट) के श्री हॉलने अध्यक्षता की। श्री काछलियाने अपना हिसाबका चिट्ठा पेश किया, जिसमें मोटे तौरपर ७,५०० पौंडकी मालियत और ३,८०० की देनदारी दिखाई गई थी। उन्होंने कहा कि वे अपने लेनदारोंको नकद भुगतान नहीं कर सकते, जबकि श्री हॉलने पूरे भुगतानकी माँग की। जनवरी २३, १९०९ के रैंड डेली मेलमें बैठकका पूरा विवरण प्रकाशित हुआ था।

उसी दिन इससे पहले जोहानिसबर्ग व्यापारसंघ (चेम्बर ऑफ कॉमर्स) की कार्यकारिणीने अपने वस्त्रादिके थोक व्यापार विभागके इन प्रस्तावोंका अनुमोदन किया था कि अगर कोई एशियाई "अपनी मालियत अपने लेनदारोंके सुपुर्द करनेके खयालसे उनकी कोई बैठक" बुलाये "और उसकी यह कार्रवाई अनाक्रामक प्रतिरोध आन्दोलनका ही एक हिस्सा हो तो ऐसे लेनदारोंको चाहिए कि वे, सिवा उस हालतके जब देनदार एशियाईने अपनी पूरी देनदारीका भुगतान कर दिया हो, जायदादकी जब्तीके लिए अर्जी दें।"

२. बाकी लेनदारोंने श्री हॉलके फैसलेका विरोध नहीं किया, और बैठक समाप्त कर दी गई।

१००. पत्र : 'रैंड डेली मेल'को[1]

जोहानिसबर्ग
जनवरी २२, १९०९

सेवामें
सम्पादक

महोदय,

शायद आप मुझे अपने सम्पादकीय लेखकी[2] और जिसे आप ब्रिटिश भारतीय समाजका "सबसे नया कदम" कहते हैं उसपर की गई अपनी टिप्पणियोंकी थोड़ी टीका करनेकी अनुमति देंगे। आपकी टिप्पणियोंसे जो बहुत-से गौण प्रश्न उठते हैं, उनपर मैं विचार नहीं करूँगा। परन्तु मैं कहना चाहता हूँ कि जिस संघर्षको मेरे देशवासी चला रहे हैं, आप या तो उसकी भावनाको नहीं समझते या उसे समझनेकी परवाह नहीं करते। सबसे नये कदमका मंशा यूरोपीय व्यापारियोंको कार्रवाई करनेके लिए दबाना नहीं है। आपके संवाददाताको उन्हीं प्रश्नोंके उत्तर दिये गये थे जो उसने पूछे थे।[3] इसलिए बहुत-सी बातें बतानेके लिए रह गई हैं। वह मुझसे प्रश्नकी केवल एकपक्षीय जानकारी ले गया था।

भारतीय व्यापारी यह नहीं चाहते कि उनके इस सबसे नये कदमसे एक भी यूरोपीय व्यापारीको नुकसान पहुँचे। इसके विपरीत, उन्होंने अपनी मर्जीसे अपने लेनदारोंका भी नुकसान उठाना मंजूर किया है। अपने लेनदारोंको नोटिस देकर श्री काछलियाने उन्हें केवल यह सूचित किया है कि जो माल उन्हें सौंपा गया था उसको सरकारकी कार्रवाईसे —शायद आप इसमें यह जोड़ेंगे कि ब्रिटिश भारतीयोंकी कार्रवाईसे भी —खतरा हो गया है। श्री काछलियाने अपने लेनदारोंके सामने अपना जो हिसाबका चिट्ठा पेश किया[4] उसपर कोई भी देनदार गर्व कर सकता है; और उन्होंने अपने लेनदारोंके सामने जो बयान दिया है, उसे मैं पूरी तरह सम्मानजनक मानता हूँ। उन्होंने कागजपर ही पूरा और सही-सही हिसाब नहीं दिखाया है, बल्कि यह भी कहा है कि वे लेनदारोंको अपना माल सौंपकर ही उनसे भरपाईकी रसीद लेना नहीं चाहते, बल्कि उन्हें उस मालपर कोई घाटा हो तो वे उसे अपनी भविष्यकी कमाईसे पूरा करनेके लिए तैयार हैं, बशर्ते कि जिस देशको उन्होंने अपना लिया है उसकी सरकार उन्हें कमाई करने दे।

हमारे इस सबसे नये कदमका यह अर्थ कदापि नहीं है कि ब्रिटिश भारतीय व्यापारी यों ही अपने लेनदारोंकी बैठक बुलायें और स्थितियोंके दबावसे उन्हें कुछ हद तक अपनी हानिमें शामिल करें। सब ब्रिटिश भारतीय केवल यूरोपीयोंके ही देनदार नहीं हैं। शायद श्री काछलियाके ५० प्रतिशत लेनदार भारतीय हैं। कुछ भी हो, ब्रिटिश भारतीय व्यापारी

१. यह ३०-१-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में "श्री गांधीका पत्र" शीर्षकसे छपा था।
२. देखिए परिशिष्ट ९।
३. इस भेंटकी रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।
४. देखिए पिछला शीर्षक।

निम्न श्रेणियोंमें विभक्त किये जा सकते हैं: (क) जिनके लेनदार यूरोपीय और भारतीय दोनों हैं; (ख) जिनके लेनदार केवल यूरोपीय हैं; (ग) जिनके कोई लेनदार नहीं हैं।

इन तीनों श्रेणियोंके व्यापारियोंको सलाह दी गई है कि वे अपने कारोबार वन्द कर दें, और अपनी सम्पत्तिको बेच दें। इस तरह आप देखेंगे कि ब्रिटिश भारतीयोंको केवल थोड़ी हद तक यूरोपीय लेनदारोंको कष्ट देना पड़ेगा। इसलिए सबसे नये कदममें दवाव डालनेकी बात कतई नहीं है। अगर आपका मतलव यह हो कि यूरोपीय लेनदारोंको अब इस मामलेमें अधिक दिलचस्पी लेनी पड़ेगी तो मैं इस आरोपको मंजूर करता हूँ। परन्तु इसका केवल इतना ही अर्थ है कि मेरे देशवासियोंके कष्ट-सहनका प्रभाव फिर पड़ा है। अनाक्रामक प्रति-रोध इसमें है कि प्रतिरोधी केवल सब प्रकारके कष्टोंको सहन करें। इसे कानूनकी अवज्ञा कहना भाषाका व्यभिचार है। और ब्रिटिश भारतीयोंका मुनाफेके साथ अपने सब मालको सौंप देना, जिसका नतीजा आर्थिक हानि होता है, और अपनी मर्जीसे गरीबीको स्वीकार करना पतन कैसे कहा जा सकता है?

आपने धरना देनेके सम्बन्धमें आक्षेप किया है और उसे धमकी देना कहा है। जब मुक्ति-सेना (साल्वेशन आर्मी) और ऐसी ही दूसरी लोक-हितैषी संस्थाओंके सेवा-प्रयत्नोंको कानूनकी खुली अवज्ञा, दवाव, और धमकी कहा जायेगा, तभी भारतीयोंके मामलेमें धरनेको धमकी कहना ठीक होगा।

आपका, आदि,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

रैंड डेली मेल, २३-१-१९०९

१०१. लड़ाईका अर्थ क्या है?

अब माना जा सकता है कि ट्रान्सवालकी लड़ाईका तीसरा दौर शुरू हो गया है। हमारी संवादकी चिट्ठियोंसे जाना जा सकता है कि कुछ भारतीय घुटने टेकने लगे हैं। उनमें कुछ फूट भी है, ऐसा जान पड़ता है। इससे दुःखी होनेकी कोई बात नहीं है। ऐसा तो हमेशा हरएक लड़ाईमें हुआ करता है। आखिरी सीढ़ी चढ़ना बहुत कठिन होता है। बहुत कम घोड़े दौड़में शामिल होते हैं, परन्तु सब अन्ततक नहीं दौड़ते — दौड़ सकते नहीं। कुछ सुस्त होनेके कारण नहीं दौड़ते। कुछ थककर दौड़ना छोड़ देते हैं। कुछ दौड़ते-दौड़ते जान छोड़ देते हैं; और थोड़े ही सही-सलामत अन्ततक पहुँच पाते हैं। ऐसा ही हर जातिके इतिहासमें होता है। इसलिए ऊपर लिखे अनुसार घटनाएँ होती हैं तो उनमें निराश होनेकी कोई भी बात नहीं है। दो वर्ष तक हजारों भारतीय जोर-शोरसे लड़ते रहे। इस लड़ाईमें अखीर तक पहुँचनेवाले मनुष्य होंगे ही।

हमें अभी यह खूनी कानून रद करवाना है और पढ़े-लिखे लोगोंके हकोंकी रक्षा करनी है। परन्तु हमारी लड़ाईका अर्थ इतना ही नहीं है।

हमें संघर्ष करते हुए शिक्षा प्राप्त करनी है, चतुर बनना है, और दिखा देना है कि हम नामर्द नहीं, मर्द हैं। यह भी लड़ाईका एक अंग है। मगर इसमें पूरी लड़ाई नहीं आ जाती।

इस लड़ाईका मुख्य हेतु तो यह है कि हम मर्द बनें, एक जाति बनना सीखें, आज जो हम बकरे बने हुए हैं, इस स्थितिसे निकलकर शेर बनें, और दुनियाको दिखा दें कि हम एक हैं, हम भारतके सपूत हैं और उसके लिए मिटनेको तैयार हैं।

महान थोरो कह गये हैं कि एक खरा आदमी एक लाख खोटे लोगोंसे बढ़कर है। हममें से कितने खरे हैं, यह हम जानना चाहते हैं। यह बात इस लड़ाईमें मालूम हो जायेगी। खरा होना सीख लेना कानूनको तोड़नेसे कहीं ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। दूसरोंको झुकते देखकर खुद भी हिम्मत हार बैठना बुरा है। यही नामर्दी है।

गोरी जातियां हमपर यह आक्षेप करती हैं कि हम आरम्भमें तो बहादुरी दिखाते हैं, लेकिन समय आनेपर ढीले पड़ जाते हैं। हम यह सिद्ध कर देना चाहते हैं कि ऐसी कोई बात नहीं है। हमें ट्रान्सवालकी शक्तिशाली सरकार मोम नहीं बना सकती।

यही सोचना सच्चा धर्म है और इसीलिए हम इस धर्म-युद्धमें अपने प्राण अर्पण करनेको तैयार हैं। यह बात बता देना इस लड़ाईका एक अंग है। और यही मुख्य अंग है। शेष तो उसके जरिये खुद ही हमारे हाथ आ जायेगा।

ऐसी महान विजय प्राप्त करनेके लिए महान पराक्रमकी आवश्यकता है। सो किस प्रकार आये? ट्रान्सवालमें दूकानदार बड़ेसे-बड़े भारतीय हैं। उन्हें अपनी योग्यताका परिचय देना है, और इसके लिए उन्हें भिखारी बनना है। भिखारी बननेमें ही उनका तथा जातिका हित है। जिस राज्यमें राजा अत्याचारी होता है उस राज्यमें अत्याचारमें भाग लेनेवाली प्रजा ही सुखी या पैसेवाली हो सकती है। लुटेरे राज्यमें अच्छे आदमी पैसा इकट्ठा नहीं कर सकते। ऐसे राज्यमें सीधे लोग तो केवल दुःख सह कर ही रह सकते हैं। आज ट्रान्सवालके भारतीयोंकी दशा ऐसी ही है। ट्रान्सवालकी सरकार भारतीयोंकी मान-मर्यादा और सम्पत्ति लूट लेना चाहती है। उसे भारतीय कैसे लुट जाने देंगे? पुराने जमानेमें लोग जब-कभी अत्याचारी सरकारके विरुद्ध लड़ते थे तब वे अपनी स्त्रियोंकी मान-मर्यादा बचानेके लिए पहले उन्हें मार डालते थे। ट्रान्सवालके भारतीय आज सत्याग्रहकी लड़ाई लड़ रहे हैं। उन्हें अपने धनको उन्हीं स्त्रियोंकी तरह कुर्बान करना होगा। यदि वे ऐसा नहीं करेंगे तो उनकी लाज जायेगी और उनका धन तो कड़वा विष बन जायेगा। किसी भी धर्ममें परमेश्वर और पैसा, दोनोंकी पूजा एक साथ [सम्भव] नहीं मानी गई। सभी धर्म सिखाते हैं कि यदि ईश्वरकी उपासना करनी है तो धनको तिलांजलि देनी पड़ेगी। यदि हमने यह लड़ाई ईश्वरका स्मरण करके और उसपर विश्वास रखकर छेड़ी है तो फिर धनका त्याग करना ही होगा। जब हमें धनकी आवश्यकता पड़ेगी, तब वही ईश्वर हमारे पास धन भेज देगा।

इटलीमें अपनी सम्पत्ति-सहित दबकर तीन लाख व्यक्ति मर गये, यह ईश्वरकी लीला है। इसे ध्यानमें रखकर हमें सदा अपनी मान-मर्यादाकी रक्षा करनी चाहिए। मान-रक्षा अपने हाथकी बात है; धनकी रक्षा अपने हाथमें नहीं है। आशा है, भारतीय धनका त्याग करके मानकी रक्षा करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-१-१९०९

१०२. मेरा जेलका दूसरा अनुभव [४]

(४)

जोहानिसबर्गकी जेलमें एक दूसरा दुःखद अनुभव भी हुआ। इस जेलमें अलग-अलग प्रकारके दो विभाग हैं। एक विभागमें सख्त सजा पाये हुए काफिर तथा भारतीय कैदी रहते हैं। दूसरे विभागमें गवाही देनेवाले और ऐसे कैदी रहते हैं जिन्हें दीवानी जेल मिली होती है। उसमें सख्त सजा पाये हुए कैदियोंको जानेका हक नहीं होता। हम दूसरे विभागमें सोते थे। लेकिन विभागके पाखाने आदिका उपयोग हम अधिकारपूर्वक नहीं कर सकते थे। पहले विभागके पाखानोंमें जानेवाले कैदियोंकी संख्या इतनी ज्यादा होती है कि पाखाना जाना एक बड़ी समस्या हो जाती है। कुछ भारतीयोंको यह कष्ट बहुत खलता है। उनमें एक मैं भी था। मुझसे सन्तरीने कहा था कि दूसरे विभागके पाखानोंका उपयोग करनेमें आपत्ति नहीं है। इसलिए मैं वहाँ गया। उन पाखानोंमें भी भीड़ तो होती ही है। इसके सिवा वे खुले रहते हैं। उनमें दरवाजे नहीं होते। मैं ज्यों ही बैठा त्यों ही एक मोटा-ताजा, मजबूत और विकराल काफिर आया। उसने मुझसे उठ जानेके लिए कहा और गालियाँ देने लगा। मैंने कहा कि अभी उठता हूँ। तबतक तो उसने मुझे दोनों हाथोंसे दबोचकर उठा लिया और बाहर फेंक दिया। सौभाग्यसे मैंने खिड़कीकी चौखट पकड़ ली, जिससे मैं गिरा नहीं। इससे मैं घबराया नहीं। मैं तो वहाँसे हँसकर चल दिया; लेकिन जिन एक-दो भारतीय कैदियोंने यह घटना देखी, वे बहुत दुःखी हुए और रो पड़े। जेलमें वे कोई मदद तो कर नहीं सकते थे, इसलिए अपनी लाचारीपर उन्हें खेद हुआ। इस प्रकारका कष्ट दूसरे भारतीयोंको भी भोगना पड़ा है, यह मैंने बादमें सुना। इस घटनाकी चर्चा मैंने गवर्नरसे की और कहा कि भारतीय कैदियोंके लिए एक स्वतन्त्र पाखानेकी खास जरूरत है, और यह भी बताया कि काफिर कैदियोंके साथ भारतीय कैदियोंको बिल्कुल नहीं रखना चाहिए। गवर्नरने तुरन्त हुक्म दिया कि बड़ी जेलमें से एक पाखाना भारतीय कैदियोंके लिए खोल दिया जाये; और दूसरे दिनसे पाखानेकी तकलीफ दूर हो गई।[1] उपर्युक्त परिस्थितिमें मुझे चार दिन तक साफ पाखाना नहीं हुआ, इसलिए मेरी सेहतको भी नुकसान पहुँचा।

जब मैं जोहानिसबर्गमें था उस बीच मुझे तीन-चार बार अदालतमें जाना पड़ा था। मुझे वहाँ श्री पोलक और अपने लड़केसे मिलनेकी अनुमति मिली थी। दूसरे लोग भी कभी-कभी मिल जाते थे। अदालतमें मुझे घरकी खुराक मँगानेकी छूट थी, इसलिए श्री कैलेनबैक मेरे लिए रोटी, पनीर आदि वस्तुएँ लाते थे।

जब मैं इस जेलमें था, उस समय सत्याग्रही कैदियोंकी संख्या बहुत बढ़ गई थी। एक बार तो पचाससे भी ज्यादा हो गई थी। अधिकांशको एक पत्थरपर बैठकर छोटी हथौड़ीसे बारीक कंकड़ी फोड़नेका काम सौंपा जाता था। दस-एक आदमियोंको फटे हुए कपड़े सीनेका काम दिया गया था। मुझे सीनेकी मशीनपर टोपियाँ सीनेका काम सौंपा गया था। सीनेकी

१. बादमें इस घटनाकी चर्चा अखबारोंमें भी हुई; देखिए परिशिष्ट १०।

मशीन चलानेका काम पहले-पहल मैंने यहीं सीखा। यह काम मुश्किल नहीं था, इसलिए सीखनेमें विशेष समय नहीं लगा।

अधिकतर भारतीय कैदी कंकड़ी फोड़नेका काम ही करते थे। इसलिए मैंने भी उस कामकी माँग की। लेकिन सन्तरीने कहा कि बड़े दारोगाका उसे ऐसा हुक्म है कि मुझे बाहर न निकाला जाये। इसलिए उसने मुझे कंकड़ी फोड़नेके लिए जानेकी अनुमति नहीं दी। एक दिन ऐसा हुआ कि मेरे पास मशीनपर अथवा बिना मशीनके सीनेका काम नहीं था। इसलिए मैंने पुस्तकें पढ़ना शुरू किया। रिवाज यह है कि हरएक कैदीको जेलका कुछ-न-कुछ काम करना ही चाहिए। इसलिए सन्तरीने मुझे बुलाकर पूछा, "आज क्या तुम बीमार हो?"

मैंने जवाब दिया: जी नहीं।

प्र०: तो तुम कोई काम क्यों नहीं कर रहे हो?

उ०: मेरे पास जो काम था वह पूरा हो चुका है। मैं कामका ढोंग नहीं करना चाहता। मुझे काम दें तो मैं करनेके लिए तैयार हूँ। अन्यथा खाली समयमें बैठा-बैठा पढ़ता रहूँ तो उसमें क्या आपत्ति है?

प्र०: यह तो ठीक है, लेकिन जिस समय बड़ा दारोगा या गवर्नर आये उस समय तुम स्टोरमें रहो तो अच्छा।

उ०: मैं ऐसा करनेके लिए तैयार नहीं हूँ। मैं गवर्नरसे भी कहनेवाला हूँ कि स्टोरमें काफी काम नहीं है, इसलिए मुझे कंकड़ी फोड़नेके लिए भेजा जाये।

प्र०: तब ठीक है। पर मैं अनुमतिके बिना तुम्हें कंकड़ी फोड़नेके लिए नहीं भेज सकता।

इस घटनाके कुछ ही देर बाद गवर्नर आया। मैंने उसके सामने सारी हकीकत रख दी। उसने कंकड़ी फोड़नेके लिए जानेकी अनुमति तो नहीं दी, लेकिन यह कहा कि तुम्हें वैसा करनेकी जरूरत नहीं है; क्योंकि तुम कल ही फोक्सरस्ट वापस भेजे जा रहे हो।

डाक्टरी जाँच — कैदियोंका नंगा किया जाना

फोक्सरस्टकी जेल छोटी थी। इसलिए कुछ सुविधाएँ जो वहाँ मिल जाती थीं, वे जोहानिसबर्गकी बड़ी जेलमें नहीं मिल सकती थीं। उदाहरणके लिए, फोक्सरस्ट जेलमें श्री दाउद मुहम्मदको सिरपर बाँधनेके लिए शाल दिया जाता था और पाजामा तो दूसरे लोगोंको भी दिया जाता था। श्री रुस्तमजी, श्री सोराबजी और श्री शापुरजीको अपनी-अपनी टोपी पहननेकी अनुमति थी। जोहानिसबर्ग जेलमें ऐसा होना मुश्किल था। इसी तरह जोहानिसबर्ग जेलमें जब कैदी पहली बार दाखिल होते हैं, तब डॉक्टर उनकी जाँच करता है। इस जाँचका हेतु यह है कि कैदियोंको कोई संक्रामक रोग हो तो उसकी दवा की जाये और उन्हें दूसरे कैदियोंसे अलग रखा जाये। इस कारण कैदियोंकी पूरी जाँच की जाती है। कुछ कैदियोंको उपदंश आदि रोग होते हैं, इसलिए सबके गुह्य अवयवोंकी जाँच की जाती है। अतएव कैदियोंको बिल्कुल नंगा करके उनकी जाँच की जाती है। काफिरोंको तो लगभग पन्द्रह मिनट तक नंगा खड़ा रखा जाता है, जिससे डॉक्टरका समय बचे। भारतीय कैदियोंको थोड़ी सुविधा है; उनसे उनका पाजामा जब डॉक्टर आता है तभी उतरवाया जाता है। बाकी लोगोंके कपड़े पहलेसे ही उतरवा दिये जाते हैं। लगभग सभी भारतीय कैदी पाजामा उतरवानेके इस रिवाजके खिलाफ हैं; फिर भी अधिकतर लोग सत्याग्रहकी लड़ाईका विचार करके आनाकानी नहीं

करते, यद्यपि मनमें तो दुःखी होते ही हैं। इस सम्बन्धमें मैंने डॉक्टरसे वात की। उसने कुछ कैदियोंकी जाँच उन्हें स्टोरमें ले जाकर की, लेकिन हमेशा वैसा करनेके लिए वह सहमत नहीं हुआ। इस सम्वन्धमें संघने लिखा-पढ़ी की है।[1] लिखा-पढ़ी अव भी चल रही है। इस वारेमें सरकारसे लड़ना उचित है। जेलमें यह वहुत पुराना रिवाज है, इसलिए उसे एकाएक तो वे नहीं वदलेंगे। तव भी उसके वारेमें विचार किया जाना चाहिए।

पुरुषोंके वीच हों फिर, अपने अवयव छिपानेकी जरूरत नहीं है। इसके सिवा, दूसरा आदमी हमारे गुह्य अवयवोंकी ओर देखेगा ही, ऐसा माननेका कोई कारण नहीं है। हमारा मन निर्दोष हो तो प्रकृतिके दिये हुए ये अवयव छिपानेकी हमें क्या आवश्यकता है? मैं जानता हूँ कि मेरे ये विचार सभी भारतीयोंको विचित्र मालूम होंगे। फिर भी, मुझे लगता है कि इस सम्वन्धमें हमें गहरा विचार करना चाहिए और देखना चाहिए कि सच वात क्या है। इस तरहकी अड़चनें खड़ी करनेसे हमें अन्तमें अपनी लड़ाईमें नुकसान होता है। पहले भारतीय कैदियोंकी जाँच डॉक्टर विल्कुल नहीं करता था। पर एक वार दो-तीन भारतीयोंसे उसने कुछ सवाल पूछे, जिनके जवावमें उन्होंने कहा कि उन्हें कोई रोग नहीं है। डॉक्टरको कुछ सन्देह हो गया, इसलिए उसने ऐसा जवाव पानेपर भी उन कैदियोंकी जाँच की और वे झूठे निकले। तवसे डॉक्टरने भारतीय कैदियोंकी भी पूरी जाँच करनेका निर्णय किया। इससे हम देख सकते हैं कि जव हमारी राहमें कोई अड़चन आती है तव उसका कारण ज्यादातर हम खुद ही होते हैं।

जोहानिसवर्गसे वापस आया

जैसा कि ऊपर कहा गया है, मुझे ४ नवम्वरको फोक्सरस्ट वापस ले गये। उस समय भी मेरे साथ एक सन्तरी था। मेरी पोशाक कैदीकी ही थी; लेकिन उस वार मुझे पैदल नहीं चलाया गया, गाड़ीमें स्टेशन ले जाया गया। अलवत्ता, टिकट दूसरे दर्जेका नहीं, तीसरे दर्जेका था। रास्तेके लिए मुझे आधा पौंड डवल-रोटी और डिव्वेवाला गोमांस दिया गया। मांस लेनेसे मैंने इनकार कर दिया और नहीं लिया। रास्तेमें सन्तरीने दूसरा आहार लेनेकी अनुमति दी। स्टेशनपर पहुँचा तो वहाँ कुछ भारतीय दर्जी खड़े थे। उन्होंने मुझे देखा। वात तो हो नहीं सकती थी। मेरी पोशाक आदि देखकर उनमें से एक भाई रोने लगा। मुझे पोशाक आदिका कोई दुःख नहीं है, इतना कहनेका भी अधिकार नहीं था। इसलिए मैं यह सव देखता रहा। हम दोनोंको एक अलग डिव्वा दिया गया था। उसके पासके डिव्वेमें एक दर्जी यात्री था। उसने अपने खानेमें से थोड़ा खाना मुझे दिया। हाइडेलवर्गमें श्री सोमाभाई पटेल मिले। उन्होंने खानेके लिए स्टेशनसे खरीदकर कुछ चीजें मुझे दीं। जिस वहनसे उन्होंने यह सव खरीदा था, उसने पहले तो हमारी लड़ाईके प्रति अपनी सहानुभूति दिखानेके लिए मूल्य लेनेसे इनकार कर दिया; लेकिन वादमें जव श्री सोमाभाईने वहुत आग्रह किया तव उसने नामके लिए सिर्फ

१. नवम्वर २४ और दिसम्वर १, १९०८ को लिखे अपने दो पत्रोंमें ब्रिटिश भारतीय संघने ट्रान्सवाल जेलके गवर्नरसे इस वातके विरुद्ध आपत्ति प्रकट की थी कि कैदियोंको डॉक्टरी जाँचके लिए घंटे-भरसे भी ज्यादा समय तक खुलेमें नंगा रखा जाता है। इन प्रार्थनापत्रोंका उत्तर देते हुए जेल-निदेशकने इस वातसे इनकार कर दिया कि कैदियोंको जाँचके लिए अपेक्षित समयसे अधिक देरतक उक्त स्थितिमें रखा जाता है। यह पत्र-व्यवहार १९-१२-१९०८ के **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित हुआ था। ट्रान्सवालके मन्त्रियोंने भी जनवरी ३०, १९०९ की एक टिप्पणीमें इस आरोपका खण्डन किया था।

छः पेनी लेना स्वीकार किया। श्री सोमाभाईने स्टैंडर्टनको तार कर दिया था, इसलिए वहाँ भी कुछ भारतीय भाई स्टेशनपर आये थे और खानेकी चीजें लाये थे। इस प्रकार रास्तेमें मैंने और सन्तरीने भरपेट खाना खाया।

फोक्सरस्ट पहुँचा तो स्टेशनपर मुझे श्री नगदी और श्री काजी मिले। वे दोनों रास्तेमें कुछ दूरतक साथ-साथ आये। उन्हें थोड़ी दूर रहकर साथ चलनेकी अनुमति सन्तरीने दे दी थी। स्टेशनसे अपना सामान उठाकर मुझे फिर पैदल चलना पड़ा। समाचारपत्रोंमें इस बातकी भी काफी चर्चा हुई थी।

मैं फिर फोक्सरस्ट पहुँच गया, इसलिए सब भारतीय बहुत खुश हुए। मुझे श्री दाउद मुहम्मदवाली कोठरीमें रखा गया था, इसलिए हम रातको देरतक एक-दूसरेके अनुभवोंकी बातें करते रहे।

भारतीय कैदियोंकी स्थिति

मैं जब फोक्सरस्ट पहुँचा तब भारतीय कैदियोंकी स्थितिमें फर्क आ गया था। ३० की जगह कैदियोंकी संख्या ७५ हो गई थी। जेलमें इतने लोगोंके रहने लायक जगह नहीं थी। इसलिए आठ-एक तम्बू लगाये गये थे। रसोईके लिए प्रिटोरियासे खास चूल्हा आया था। इसके सिवा, जेलके पास जो नदी बहती थी, उसमें कैदी अक्सर नहानेके लिए जा सकते थे। इस तरह वे कैदीके बजाय लड़वैये मालूम होते थे; और कैदखाना कैदखाने जैसा नहीं, बल्कि सत्याग्रही सैनिकोंकी छावनी-जैसा मालूम होता था। फिर सन्तरी अच्छा व्यवहार करें या बुरा, इसकी क्या परवाह थी? सच तो यह है कि अधिकतर सन्तरी सब मिलाकर अच्छे ही थे। श्री दाउद मुहम्मदने हरएक सन्तरीका कोई-न-कोई नाम रख दिया था। एकका नाम उन्होंने "ऊकलो" रखा था; दूसरेका "मफूटो"। इस तरह अलग-अलग नाम रखे थे।

मुलाकाती

फोक्सरस्ट जेलमें मुलाकातके लिए भारतीय काफी संख्यामें आते थे। श्री काजी तो हमेशा आते ही रहते थे। कैदियोंकी बाहरकी व्यवस्था वे जी लगाकर करते थे और मुलाकातके लिए जितने मौके मिलते, सबका लाभ उठाते थे। श्री पोलक कार्यवश लगभग हर सप्ताह आते थे। नेटालसे श्री मुहम्मद इब्राहीम तथा श्री खरसानी कांग्रेसके मेन लाइनके चन्देकी वसूलीके सिलसिलेमें खास तौरसे आये थे। ईदके दिन तो नेटालके लगभग सौ भारतीय सेठ आकर मिल गये थे। उस दिन तारोंकी तो मानो वर्षा ही हो गई थी।

विविध विचार

जेलमें सामान्यतः बहुत सफाई रखी जाती है। ऐसा न हो तो बीमारीके फूट निकलनेमें देर न लगे। पर कुछ बातोंमें गन्दगी भी रहती है। एक-दूसरेका ओढ़नेका कम्बल हमेशा बदल जाता है। चाहे जैसे मैले-कुचैले काफिरका ओढ़ा हुआ कम्बल कभी-कभी किसी भारतीय कैदीके हिस्सेमें भी आ सकता है। उसमें अक्सर जुँएँ पड़ गई होती हैं; उसमें से बदबू आती है। नियम तो यह है कि प्रतिदिन उसे धूपमें आधे घंटे सूखनेके लिए डालना चाहिए। लेकिन ऐसा शायद ही होता है। जिसे सफाई की आदत हो, ऐसे व्यक्तिके लिए कम्बलकी यह असुविधा कोई छोटी चीज नहीं है।

ऐसा ही बहुत बार पहननेके कपड़ोंके बारेमें भी होता है। जो कपड़े एक कैदीने पहने हों वे उस कैदीके छूटनेपर हमेशा धोये नहीं जाते। उन्हें बिना धोये ही दूसरे कैदियोंको पहननेके लिए दे दिया जाता है। यह बहुत परेशान करनेवाली बात है।

कैदियोंको जगहकी कमीका विचार न करते हुए बहुत भारी संख्यामें भर दिया जाता है। जोहानिसबर्गकी जेलमें केवल २०० कैदियोंकी जगह थी; वहाँ लगभग ४०० कैदी रखे जाते थे। इसलिए एक कोठरीमें कानूनके अनुसार जितने कैदी रखने चाहिए, कई बार उससे दूने कैदी रखे जाते हैं और कभी-कभी उनके लिए पूरे कम्बल भी नहीं मिलते। यह तकलीफ मामूली नहीं है। लेकिन कुदरतका कानून है कि मनुष्य अपने किसी विशेष दोषके बिना जिस स्थितिमें जा पड़ता है, उसके अनुकूल शीघ्र ही बन जाता है। भारतीय कैदियोंका भी ऐसा ही हुआ। ऊपर बताई हुई खटकनेवाली कठिनाइयोंमें भी भारतीय कैदी मजेमें रहे। श्री दाउद मुहम्मद न सिर्फ स्वयं सारे दिन हँसते रहते थे, बल्कि अपने हास्य-विनोदसे सब भारतीय कैदियोंको भी हँसाते रहते थे।

जेलकी एक दुःखद घटनाका उल्लेख करता हूँ। एक बार कुछ भारतीय कैदी एक जगह बैठे थे। इतनेमें एक काफिर सन्तरी वहाँ आया। उसने कुछ घास काटने जानेके लिए दो भारतीयोंकी माँग की। जब कुछ देर तक कोई न बोला तब श्री इमाम अब्दुल कादिर तैयार हो गये। ऐसा होनेपर भी कोई उनके साथ जानेको न उठा। सबके-सब दारोगासे कहने लगे कि वे हमारे इमाम हैं; उनको न ले जाओ। ऐसा कहनेसे दुहरी बुराई हुई। एक तो हरएकको घास काटने जानेके लिए तैयार होना चाहिए था, वह नहीं किया। और जब कौमका नाम रखनेके लिए इमाम साहब तैयार हुए, तब उनका पद प्रकट कर दिया। वे घास काटनेके लिए तैयार हुए, तब भी कोई दूसरा तैयार नहीं हुआ; ऐसा करके हमने अपनी निर्लज्जताका ही परिचय दिया।

(क्रमशः)

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-१-१९०९

१०३. पत्र: लेनदारोंके नाम[1]

जोहानिसबर्ग
जनवरी २३, १९०९

सज्जनो,

मैंने जोहानिसबर्गके व्यापारी, श्री अ० मु० काछलियाके लेनदारोंकी बैठकका विवरण[2] पढ़ा है। मैं बता दूँ कि मेरी हालत बहुत-कुछ श्री काछलियाकी-सी है। सरकारने जो कार्रवाई की है और जिसका हवाला श्री काछलियाने दिया है, उसके कारण मेरा माल खतरेमें पड़ गया

१. शायद श्री काछलियाके पत्रकी तरह ई० एम० अस्वातके इस पत्रका मसविदा भी गांधीजीने ही तैयार किया था। ई० एम० अस्वातने यह पत्र अपने लेनदारोंके पास भेजा था। बादमें वे श्री काछलियाके जेल चले जानेपर उनकी जगह ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यवाहक अध्यक्ष चुने गये थे।

२. देखिए "काछलियाके लेनदारोंकी बैठकमें पैरवी", पृष्ठ १५८।

है। परवाना लेना मेरे लिए मुमकिन नहीं। अब सवाल यह है कि मेरे पास जो माल है उसका मैं क्या करूँ? मेरी देनदारी लगभग २,००० पौंडकी है और मालियत ४,००० पौंडकी। श्री काछलियाके लेनदारोंने अपनी बैठकमें जो फैसला किया है और श्री काछलियाके-जैसे मामलोंमें यूरोपीय व्यापारियोंकी सम्मिलित रूपसे की गई कार्रवाईकी जो खबर मिली है उसको देखते हुए, मैं अपने लेनदारोंकी बैठक नहीं बुला रहा हूँ; बल्कि आपको सिर्फ अपनी स्थितिके बारेमें सूचना देता हूँ। अगर आप चाहें तो मुझे बैठक बुलानेमें या आपकी बुलाई बैठकमें शरीक होकर अपने लेनदारोंके सामने अपनी स्थिति रखनेमें खुशी होगी। आप इस सम्बन्धमें और जो भी जानकारी लेना चाहें वह रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्सके नुक्कड़पर स्थित २१–२४ कोर्ट चैम्बर्समें ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यालयसे ले सकते हैं, और अगर आप इसी पतेपर पत्र-व्यवहार करें तो मैं आपका आभार मानूंगा।

ई० एम० अस्वात

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–१–१९०९

१०४. पत्र : अखबारोंको[1]

जोहानिसबर्ग
जनवरी २३, १९०९

[महोदय,]

श्री अ० मु० काछलियाने आत्मत्यागका जो बहुत बड़ा कदम उठाया है उसके लिए मैं भारतीय संघके एक समयके मन्त्री और एक व्यापारीकी हैसियतसे उन्हें बधाई देता हूँ। मेरे खयालसे वे ब्रिटिश भारतीय समाजके और खास तौरसे ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंके अधिकतम धन्यवादके पात्र हैं, क्योंकि उन्होंने उनको रास्ता दिखाया है। श्री काछलियाके कार्यपर अपनी पसन्दगी जाहिर करनेका सबसे अच्छा तरीका मुझे यही लगता है कि मैं उनके पीछे चलूं। इसलिए मैंने अपने लेनदारोंसे लिखा-पढ़ी शुरू की है।

मैं देखता हूँ कि श्री काछलियाके इस कदमके नीतियुक्त होनेके बारेमें शंका प्रकट की गई है,[2] और उसका यह अर्थ लगाया गया है कि ब्रिटिश भारतीय व्यापारी यूरोपीय थोक पेढ़ियोंपर दबाव डालना चाहते हैं।[3] उनका यह कदम नीतियुक्त है या अनीतियुक्त — यह तो बहुत-कुछ अपनी-अपनी रायकी बात है। मेरे धर्मकी शिक्षाके अनुसार, अगर कोई व्यापारी अपने लेनदारोंका पूरा रुपया चुकानेकी ज्यादासे-ज्यादा कोशिश करता है और अपने मालपर आ सकनेवाले खतरेके बारेमें उनको आगाह भी कर देता है तो उसका यह काम तारीफके

१. अनुमान है कि इस पत्रका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था और इसे ई० एम० अस्वातके हस्ताक्षरसे भेजा गया था।

२. जोहानिसबर्ग व्यापार-संघ (जोहानिसबर्ग चैम्बर ऑफ़ कॉमर्स) की कार्य-समितिके जनवरी २२ के प्रस्तावमें।

३. देखिए "पत्र : 'रैंड डेली मेल'को", पृष्ठ १५९-६०।

लायक माना जाता है। इसे उसका समाज, जिससे उसका नाता है, बहुत पसन्द करता है। जहाँतक दबावकी बात है, मुझे विश्वास है कि जिन्होंने इस शब्दका प्रयोग किया है, उन्होंने ऐसा जल्दबाजीमें किया है। यह बिल्कुल साफ है कि अगर ब्रिटिश भारतीय व्यापारी व्यापारिक परवाने (लाइसेंस) नहीं लेते तो परवानोंके बिना व्यापार करनेके जुर्ममें उनपर मुकदमे चलाया जाना बहुत उचित होगा। सरकार मानती है कि उसका पक्ष ठीक है। इसलिए उसे परवाना-कानूनकी अवहेलना करनेवाले व्यापारियोंके साथ हर तरहकी कड़ाई करनेका पूरा अधिकार है। तब वह भारतीय देनदार क्या करे जिसके पास बहुत-सा माल मौजूद है और जिसे अपनी अन्तरात्माका खयाल रखना है? उसके पास इतना नकद रुपया तो है नहीं कि वह तत्काल अपने सभी लेनदारोंका पावना चुका दे। वह अपने लेनदारोंका खयाल किये बिना और उनकी अनुमति लिये बिना अपना माल नीलाम भी नहीं कर सकता। वह यह भी देखता है कि उसके पास जितनी मालियत है वह उसके लेनदारोंका पावना चुकानेके लिए काफी है। राजनीतिक कारणोंको छोड़ दें तो ऊपर बताई गई स्थितिमें मेरे खयालसे एक देनदारके लिए इसके अलावा दूसरा कोई सम्मानजनक मार्ग नहीं हो सकता कि वह अपने लेनदारोंको अपनी सारी हालत बता दे; अपने-आपको उनके हाथोंमें सौंप दे और कह दे कि वह उनके कहनेके मुताबिक ऐसा हर काम करनेके लिए तैयार है जिसे वे अपने लाभकी दृष्टिसे वांछनीय समझें। वह सिर्फ अपनी अन्तरात्माके विपरीत न जायेगा। मेरे इस कामका एक राजनीतिक अर्थ लगाया जायेगा; परन्तु वह अनिवार्य है। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि यह काम सरकार द्वारा पैदा की गई स्थितिपर आधारित है। परन्तु मैं अपनी ओरसे जनताको विश्वास दिला सकता हूँ कि जहाँतक इस कदमके राजनीतिक पहलूका सम्बन्ध है, मैंने इसे यूरोपीय थोक पेढ़ियाँ क्या कार्रवाई कर सकती हैं, उसका खयाल किये बिना उठाया है। मैं इतना ही चाहता हूँ कि मेरे लेनदारोंका बचाव हो जाये और मुझे और मेरे देशवासियोंको अपनी इच्छाके सामने झुकानेके लिए सरकारकी मुझसे आर्थिक सहायता लेनेकी चाल है — जिसे मैं अन्यायपूर्ण, अनीतियुक्त और अनुचित मानता हूँ — भी बेकाम हो जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–१–१९०९

१०५. भेंट: 'रैंड डेली मेल' के प्रतिनिधिको[1]

[जोहानिसबर्ग
जनवरी २५, १९०९]

. . . उनका [श्री गांधीका] कहना है कि उन्हें उपनिवेशियोंकी न्याय-भावनापर पर्याप्त भरोसा है और उनका विश्वास है कि ज्यों ही उपनिवेशियोंको सब तथ्य पूरी तरह ज्ञात हो जायेंगे, वे एशियाइयोंको "उनके अधिकार" दे देंगे।

उन्होंने कल बातचीतमें कहा कि भारतीय काफिरोंके साथ यूरोपीयोंकी अपेक्षा अधिक अच्छा और शिष्टताका बरताव करते हैं; बहुत-कुछ इसी वजहसे उन्हें उनका व्यापार मिला है। उन्होंने इस बातको गलत बताया कि भारतीय यूरोपीय दूकानदारोंसे माल सस्ता बेचते हैं, लेकिन यह स्वीकार किया कि वे अपने कर्मचारियोंको यूरोपीय दूकानदारोंकी अपेक्षा कम वेतन देते हैं।

लोग जो यह दोष देते हैं कि भारतीयोंने लेडीस्मिथ और पॉचेफस्ट्रूमको यूरोपीय व्यापारियोंके लिए व्यापारके अयोग्य बना दिया है, इसका उत्तर देते हुए श्री गांधीने कहा कि वेरुलमकी तरह लेडीस्मिथका बहुत-कुछ कारोबार गिरमिटिया भारतीयोंसे चलता है। इसलिए वहाँ भारतीयोंकी दूकानोंका खुलना स्वाभाविक ही है।

उन्होंने कहा कि यदि यूरोपीय व्यापारियोंने ऐसा कड़ा और अड़ियल रुख अख्तियार किया, जैसा कहा गया है कि वे अख्तियार करेंगे, और यदि उन्होंने भारतीयोंको देशसे निकलवाने-के खयालसे उनकी जायदादोंकी जब्तीकी अर्जी दी तो हरएक भारतीय लौटकर भारत चला जायेगा और अनाक्रामक प्रतिरोधी बन जायेगा।

अन्तमें उन्होंने कहा: "मैं स्वयं भारत सरकारके लिए सरदर्द बननेका प्रयत्न करूँगा। और तबतक सन्तुष्ट न हूँगा जबतक दक्षिण आफ्रिकामें एशियाई व्यापारियोंको उनके अधिकार नहीं मिल जाते, या जबतक यह घोषित नहीं कर दिया जाता कि दक्षिण आफ्रिका अब ब्रिटिश उपनिवेश नहीं है।"

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१-१९०९

१. प्रस्तुत भेंटका विवरण २६-१-१९०९ के रैंड डेली मेलमें इस प्रस्तावनाके साथ प्रकाशित हुआ था कि ४० प्रमुख भारतीय व्यापारियोंने अपना कारोबार बन्द करनेके सम्बन्धमें श्री काछलियाके उदाहरणका अनुसरण करनेका निर्णय किया है; देखिए "पत्र: काछलियाके लेनदारोंको", पृष्ठ १५६-५७। रिपोर्टमें यह भी सूचित किया गया था कि क्रूगर्सडॉर्प और जोहानिसबर्गमें इस कार्रवाईके परिणामोंके सम्बन्धमें विचार करनेके लिए कुछ सम्मेलन होनेवाले हैं। "इस बीच, श्री गांधी आन्दोलनको अपना सक्रिय समर्थन दे रहे हैं और संघर्षके परिणामके सम्बन्धमें उनमें बहुत उत्साह दिखलाई पड़ता है।"

१०६. पत्र: सर चार्ल्स ब्रूसको[1]

[जोहानिसबर्ग]
जनवरी २७, १९०९

प्रिय महोदय,

आप ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके मामलेकी लगातार जो वकालत करते रहे हैं, उसके लिए मैं ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन) की ओरसे आपको नम्रतापूर्वक धन्यवाद देता हूँ। साम्राज्यके विशिष्ट सदस्योंकी सहानुभूतिसे मेरे संघर्ष-निरत देशवासियोंको बहुत प्रोत्साहन मिलता है और वह सहानुभूति उस लड़ाईके लिए, जो कभी-कभी अनन्त प्रतीत होती है, उन्हें बल देती है। हम सब यह अनुभव करते हैं कि हम केवल अपने उद्देश्यके लिए नहीं लड़ रहे हैं, बल्कि साम्राज्यकी नेकनामीके लिए भी लड़ रहे हैं।

आपका, आदि,
अ० मु० काछलिया
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

सर चार्ल्स ब्रूस, जी० सी० एम० जी०
लन्दन

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–२–१९०९

१. (१८३६–१९२०); मॉरिशसके गवर्नर, १८९७–१९०४; साम्राज्य और साम्राज्यीय नीति-विषयक अनेक पुस्तकोंके लेखक; १९०८ में **एम्पायर रिव्यू** में छपे लेखोंके आधारपर ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी समस्यापर एक पुस्तिका प्रकाशित की; अक्सर इस समस्यापर अखबारोंमें भी लिखा करते थे। ४ नवम्बर, १९०८ के **मॉर्निंग पोस्ट**में एक पत्र भेजकर उसकी इस दलीलको गलत बताया कि महारानी विक्टोरियाकी १८५८ की घोषणाकी शर्तोंमें भारतकी सीमाओंसे बाहरके ब्रिटिश भारतीयोंके अधिकार नहीं आते। उन्होंने घोषणा की अपनी व्याख्याके समर्थनमें लॉर्ड सेल्बोर्नके १८९७ में दिये गये भाषणका हवाला देते हुए कहा कि उक्त घोषणामें हमें जिन "कर्तव्योंका दायित्व" सौंपा गया है उनसे भारतके बाहर रहनेवाले भारतीयोंको वंचित रखना "साम्राज्यके अस्तित्वको सीधे नामंजूर करना है।"

१०७. पत्र : लॉर्ड कर्जनको

[जोहानिसबर्ग]
जनवरी २७, १९०९

सेवामें
परममाननीय लॉर्ड कर्ज़न[1]
जोहानिसबर्ग

महानुभाव,

मैं आपके इसी २६ तारीखके उस पत्रकी[2] पहुँच सादर स्वीकार करता हूँ जो मेरे संघके तारके[3] जवाबमें भेजा गया है। तारमें आपसे प्रार्थना की गई थी कि सरकार और जिस समाजका मेरा संघ प्रतिनिधित्व करता है उसके बीच इस समय दुर्भाग्यसे जो संघर्ष चल रहा है, उसके सम्बन्धमें आप एक शिष्टमण्डलसे मिलना मंजूर करें।

ट्रान्सवालवासी ब्रिटिश भारतीयोंके मामलेमें इतनी दिलचस्पी लेनेके लिए मेरा संघ महानुभावका बहुत अहसानमन्द है। संघको दुःख है कि आप यहाँ बहुत कम ठहरेंगे; इस वजहसे उसको आपके प्रति सम्मान प्रकट करनेके लिए आपकी सेवामें शिष्टमण्डल भेजनेका मौका न मिल सकेगा।

मैं अब इस पत्रके साथ इस वक्त जैसी हालत है उसका बहुत संक्षिप्त विवरण, सर चार्ल्स ब्रूस द्वारा प्रकाशित एक पुस्तिका,[4] जिसमें स्थितिका काफी अच्छा सार दे दिया गया है, और महामहिमकी सरकारको उपनिवेश-मन्त्रीकी मार्फत दी गई अर्जी[5] [की नकल] भेज रहा हूँ।

ट्रान्सवालमें इस खास मामलेमें संघकी सहायता करनेके लिए प्रभावशाली यूरोपीयोंकी एक समिति बना दी गई है; इसलिए मैंने महानुभावका पत्र उस समितिके अध्यक्ष श्री हॉस्केनको[6] दिखा दिया है। मुझे मालूम हुआ है कि वे भी आपको एक पत्र लिख रहे हैं।

अगर महानुभाव और ज्यादा जानकारी चाहें तो मेरा संघ खुशीसे भेजेगा।

१. (१८५९–१९२५); भारतके वाइसराय और गवर्नर जनरल, १८९९–१९०५; ब्रिटेनके विदेश-मन्त्री, ११९९–१९२४

२. लॉर्ड कर्ज़नने लिखा था, "मैं जोहानिसबर्गमें अभी आया हूँ और मेरे पास बहुत कम वक्त है। मैं यहाँ कल तमाम दिन व्यस्त रहूँगा, पूरा गुरुवार बाहर बीतेगा और शुक्रवारकी सुबह चला जाऊँगा। इसलिए मेरा खयाल है कि मैं शिष्टमण्डलसे नहीं मिल सकता। लेकिन अगर आपका संघ गुरुवारकी शाम तक अपने मामलेका भरसक पूरा विवरण तैयार करके दे देगा तो मैं रास्तेमें उसका अध्ययन करूँगा।"

३. यह उपलब्ध नहीं है।

४. यह प्राप्त नहीं है; इससे पहले शीर्षककी पाद-टिप्पणी भी देखें।

५. देखिए "प्रार्थनापत्र: उपनिवेश-मन्त्रीको", पृष्ठ १७-२८।

६. उन्होंने यूरोपीय समितिके प्रधानकी हैसियतसे ६ जनवरीको लन्दनके **टाइम्स**को एक पत्र लिखा था, जिसकी एक नक़ल एल० डब्ल्यू० रिचने उपनिवेश-मन्त्रीको भी भेज दी थी। देखिए परिशिष्ट ११।

महानुभावकी इच्छाके अनुसार महानुभाव और संघके बीचका सारा पत्र-व्यवहार गुप्त रखा जायेगा।

मैं इस पत्रको इस आशाके साथ समाप्त करता हूँ कि महानुभावके हस्तक्षेपसे इस संघर्षका सुखद अन्त होगा।

महानुभावका आज्ञाकारी सेवक,

[संलग्न कागज]

भारतीय स्थितिका विवरण
परम माननीय लॉर्ड कर्जनकी सेवामें भेजनेके लिए

भारतीयोंकी माँगें

ब्योरेकी बातोंके अलावा, स्थानीय सरकार और ब्रिटिश भारतीयोंके बीच नीचे लिखे दो खास सवाल हैं:

१. १९०७ के एशियाई कानून २ का रद किया जाना।
२. पढ़े-लिखे भारतीयोंका दर्जा।

माँगोंके बारेमें दलीलें

पहले सवालके बारेमें, भारतीयोंकी दलील यह है कि जनरल स्मट्सने एशियाई कानूनको रद करनेका वादा किया था। यह वादा लिखा नहीं गया, लेकिन जनवरी १९०८ का समझौता[1] होनेके तीन दिन बाद, जनरल स्मट्सने अपने रिचमंडके भाषणमें,[2] जिसका खण्डन कभी नहीं किया गया है, यह कहा था: "मैंने उनसे यह कहा है कि जबतक देशमें एक भी ऐसा एशियाई है जिसने पंजीयन न कराया हो तबतक यह कानून रद न किया जायेगा", और फिर यह कहा कि "जबतक देशमें हरएक भारतीय पंजीयन न करा ले तबतक कानून रद न किया जायेगा।"

लेकिन, इस वादेके अलावा, उपर्युक्त कानून अव्यावहारिक बताया गया है। सर्वोच्च न्यायालयके अभी हालके फैसलोंसे इस रायका समर्थन होता है; और १९०८ के कानूनसे, जो उस वादेको थोड़ा-बहुत पूरा करनेके लिए पास किया गया था, १९०७ का एशियाई कानून २ परिणाम-रूपमें निष्प्रभाव हो गया।

अब इस बारेमें कोई शक नहीं किया जा सकता कि भारतीय यही समझते थे कि स्वेच्छया पंजीयन (वॉलंटरी रजिस्ट्रेशन) करा लेनेकी शर्तपर कानूनको रद करनेका वादा किया गया। ब्रिटिश भारतीयोंने इस विश्वासके साथ ही स्वेच्छया पंजीयन कराया था। प्रमुख भारतीयोंने भारतीयोंसे सम्बन्ध रखनेवाले समझौतेके हिस्सेको पूरा करनेकी उत्सुकतामें अपनेतईं बहुत खतरा उठाकर वैसा किया, क्योंकि अपनी मर्जीसे अँगुलियोंकी छाप देनेपर भी बहुत-से भारतीयोंने नाराजी जाहिर की थी। संघके मन्त्रीपर पंजीयन कार्यालयमें जाते समय पाशविक हमला किया गया था, और उसके बाद संघके तत्कालीन अध्यक्षपर उसी वजहसे हमला किया गया था।

१. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४३-४४।
२. देखिए खण्ड ८, परिशिष्ट ८।

सिर्फ अँगुलियोंकी छाप देनेकी बात कभी मूल आपत्ति नहीं बनाई गई। आपत्ति कानूनकी भावनापर की गई थी, क्योंकि कानून इस झूठे आरोपपर आधारित था कि अनधिकारी ब्रिटिश भारतीय बड़े पैमानेपर संगठित रूपसे ट्रान्सवालमें आ रहे हैं।

पढ़े-लिखे भारतीयोंके दर्जेके बारेमें हमारी आपत्ति यह है कि जनरल स्मट्स ट्रान्सवालके प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम (इमिग्रेंट्स रिस्ट्रिक्शन ऐक्ट)की व्याख्या ऐसी करते हैं जिससे अपेक्षित शिक्षा-प्राप्त ब्रिटिश भारतीय निषिद्ध प्रवासी हो जाते हैं और उनपर वह निषेध १९०७ के एशियाई कानूनसे लगाया गया है।

ब्रिटिश भारतीयोंका कहना यह है कि ऐसा निषेध जातीयताकी नींवपर आधारित होनेसे साम्राज्यीय नीतिके खिलाफ जाता है; जब प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमपर मंजूरी दी गई थी तब साम्राज्यीय नीतिके खिलाफ जानेका कोई इरादा नहीं था; और किसी भी हालतमें ब्रिटिश भारतीय मानते हैं कि वे ऐसी जातीय निर्योग्यताको मंजूर नहीं कर सकते जिससे, श्री चेम्बरलेनके[1] शब्दोंमें, "महामहिम सम्राट्के करोड़ों प्रजाजनोंका अपमान होता है।"

ब्रिटिश भारतीयोंका कहना है कि शिक्षा-सम्बन्धी योग्यता-प्राप्त भारतीयोंको कानूनमें समान अधिकार दिया जाये। उसके बाद अगर कानूनपर इस तरह अमल किया जाये कि शिक्षा-परीक्षा देनेपर ऊँची शिक्षा पाये हुए छः से ज्यादा भारतीय [एक वर्षके अन्दर] उपनिवेशमें न आ सकें, तो उनको इसमें कोई आपत्ति नहीं होगी। कानूनके अमलमें ऐसी असमानता इस समय केप, नेटाल और आस्ट्रेलियामें मिलती है। ब्रिटिश भारतीय इस पूर्वग्रहको मंजूर करके इसके आगे झुक गये हैं, लेकिन उनका कहना है कि प्रवासके मामलेमें जातीय भेदभाव दाखिल करना असह्य होगा।

अनाक्रामक प्रतिरोध

इस उद्देश्यको पूरा करनेके लिए ब्रिटिश भारतीयोंने प्रार्थनापत्रों और शिष्टमण्डलोंके द्वारा अपना पूरा जोर लगा दिया है। उन्होंने अपनी एक सार्वजनिक सभामें[2] यह गम्भीर प्रतिज्ञा की थी कि वे १९०७ के एशियाई कानूनके आगे न झुकेंगे और १९०८ के कानूनके लाभ तबतक न उठायेंगे जबतक ऊपर बताई गई शिकायत दूर नहीं की जाती। इसलिए बहुत-से भारतीयोंने इस प्रतिज्ञाके मुताबिक कैद भोगी है। यह संघर्ष अबतक दो सालसे ज्यादा अर्सेतक चल चुका है और २,००० से ज्यादा भारतीय कैदकी सजा भुगत चुके हैं। इनमें से ज्यादातरकी सजा सख्त थी। सैकड़ों लोग देशसे निकाले गये हैं और वे उसी वक्त लौट आये हैं। बहुत-से परिवार माली तौरपर बर्बाद हो चुके हैं। बहुत-से भारतीय व्यापारियोंने भारी नुकसान उठाया है। कुछने तो अपना कारोबार भी बन्द कर दिया है। संघके अध्यक्षने अपनी मालमताका कब्जा [अपने लेनदारोंको] देना मंजूर किया है,[3] ताकि सरकार उसे बिना परवाने व्यापार करनेके जुर्ममें किये गये जुर्मानोंकी वसूलीमें जब्त न कर ले। कई भारतीय व्यापारी उनके उदाहरणका अनुसरण करनेके लिए तैयार हैं। बेशक कुछ भारतीयोंने अपनी कमजोरीकी वजहसे एशियाई कानूनोंको मंजूर कर लिया है और अभी कुछ औरोंके भी हार मान लेनेकी सम्भावना है;

१. जोज़ेफ चेम्बरलेन, (१८३६-१९१४); उपनिवेश-मन्त्री, १८९५-१९०३।
२. देखिए खण्ड ७, पृष्ठ ८०-२।
३. देखिए "पत्र : लेनदारोंको", पृष्ठ १५६-५७

लेकिन बहुत सावधानीसे जाँच करनेपर [कहा जा सकता है कि] ब्रिटिश भारतीय संघकी पूरी कार्यकारिणी एक रहकर, सत्याग्रहपर तबतक कायम रहेगी जबतक न्याय नहीं किया जाता।[1]

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९१६–१७) से।

१०८. पत्र: हरिलाल गांधीको

बुधवार [जनवरी २७, १९०९][2]

चि० हरिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। देखता हूँ कि तुम दुःखी हो। तुम्हें वियोगसे[3] सुख मिलेगा या नहीं, इस सम्बन्धमें मुझे तुम्हारा मत स्वीकार करना ही चाहिए। फिर भी मैं इतना तो देख ही सकता हूँ कि तुम्हें लम्बे अर्सेतक जेल भोगनी पड़ेगी। इस विषयमें तुम्हारा विचार जानना चाहता हूँ। साफ-साफ लिख भेजो। जान पड़ता है, लड़ाई लम्बी खिंचेगी। इसके जल्द खत्म होनेके भी कुछ आसार दिखाई पड़ते हैं। सम्भव है, लॉर्ड कर्जन हस्तक्षेप करें। तुम्हारी गैरहाजिरीमें चंचोकी बाबत क्या इन्तजाम करना चाहिए, यह भी लिखना। विशेष समय मिलनेपर लिखूँगा।

तुमने "पाई देकर पत्थर लेने" की जो बात कही है, वह मैं समझ नहीं सका। वह तुमने किस सिलसिलेमें लिखी है?

शायद तुम्हारे ५ तारीखसे पहले यहाँ आनेकी जरूरत न होगी।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च:] 'भागवत'का पाठ हुआ या नहीं?

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५३३) से।

१. लॉर्ड कर्जनने २ फरवरी १९०९ को जवाब देते हुए लिखा था कि जनरल बोथा और स्मट्ससे जो बातचीत हुई उसमें मुझे ब्रिटिश भारतीयोंसे उदारता और न्यायका बरताव करनेका विश्वास दिलाया गया है। मुझे लगता है कि इस मामलेपर बादमें एक बड़े सवालके रूपमें साम्राज्य-सरकार और संघ सरकारके बीच लिखा-पढ़ी होगी। देखिए परिशिष्ट १२।

२. तारीखका निश्चय लॉर्ड कर्जनके सम्भावित हस्तक्षेपके उल्लेखके आधारपर किया गया है; देखिए "पत्र: लॉर्ड कर्जनको", पृष्ठ १७१-७२। लॉर्ड कर्जनने स्मट्स और बोथाके साथ अपनी बातचीतके परिणामोंसे गांधीजीको अपने २ फरवरीके पत्र द्वारा अवगत कराया था।

३. देखिए "पत्र: श्रीमती चंचलबेन गांधीको," पृष्ठ १५१-५२।

१०९. पत्र: श्रीमती चंचलबेन गांधीको

गुरुवार [जनवरी २८, १९०९][1]

चि० चंचल,

बहुत दिन बाद तुम्हारा पत्र मिला। मैं देखता हूँ, तुम्हारा मन अव्यवस्थित है। इससे मुझे दुःख होता है। फिर भी तुम्हारी आन्तरिक भावनाओंको ही हमेशा जानना चाहता हूँ। मैं दुःखी हूँगा, इस खयालसे तुम्हें अपनी भावनाएँ कभी छुपानी न चाहिए।

तुम पीहरके बाहर हो, यह मानती हो, सो ठीक नहीं है। मैं तुम्हें बहू नहीं, पुत्री ही समझता हूँ। यदि बहू समझता तो तुम्हें बच्ची मानता। पुत्री समझता हूँ, इसलिए तुम्हें बच्ची मानना नहीं चाहता। तुम्हारे लिए मेरे मनमें कितना स्नेह है, यह तुम नहीं समझ सकी। नहीं समझ सकती, यह मैं समझता हूँ। मैं जैसे मणिलालको बालक मानना नहीं चाहता, वैसा ही तुम्हें अपने बारेमें भी समझना चाहिए। यदि मैंने तुमसे श्वसुर-बहूका सम्बन्ध रखा होता, अर्थात् यदि अन्तर रखा होता तो मैं अपने स्वभावके अनुसार पहले तो तुम्हारे मनको जीतनेका प्रयत्न करता और जब तुम्हारे मनमें अभेद-बुद्धि पैदा होती, तभी मैं तुमसे खुलकर काम लेता। किन्तु मैंने मान लिया था कि जब तुम्हारा सम्बन्ध हरिलालके साथ हुआ, उससे पहलेसे मैंने तुम्हें लड़की समझकर गोदमें खिलाया है,[2] इसलिए तुम श्वसर-बहूका सम्बन्ध भूल जाओगी। उसे तुमने नहीं भुलाया। अब प्रयत्न करना।

मैं ऐसा बरताव कर ही नहीं सकता जिससे तुम्हारा अकल्याण हो अथवा तुम्हें कोई कष्ट हो। भारतमें वियोगकी अवस्थामें कल्याण माननेवाली स्त्रियाँ बहुत हुई हैं। दमयन्ती नलसे वियुक्त होकर अमर हो गई। तारामती हरिश्चन्द्रसे अलग हुई तो उससे दोनोंका कल्याण हुआ। द्रौपदीका वियोग पाण्डवोंको सुखद हुआ और द्रौपदीकी दृढ़ताकी सराहना तो समस्त हिन्दू जाति करती है। तुम्हें यह न समझना चाहिए कि ये घटनाएँ हुईं ही नहीं। बुद्धदेव पत्नीका त्यागकर अमर हो गये और उनकी पत्नी भी अमर हुईं। ये उदाहरण छोरके — आत्यन्तिक — हैं। इनसे मैं तुम्हें इतना ही बताना चाहता हूँ कि तुम्हारे वियोगसे तुम्हारा अकल्याण न होगा। वियोगसे तुम्हारे चित्तको दुःख होता है, यह स्वाभाविक है। यह प्रेमका लक्षण है। परन्तु उससे तुम्हारा अकल्याण ही होगा, ऐसी बात नहीं है। कल्याण या अकल्याण वियोगके हेतुपर निर्भर होता है। बाका और मेरा वियोग लगभग अनिवार्य था, अर्थात्, उसे मैंने नहीं चुना था, फिर भी वह हम दोनोंके लिए कल्याणकर सिद्ध हुआ। यह उदाहरण देकर मैं तुम्हारे मनमें यह जमाना नहीं चाहता कि तुम्हें वियोग सदा सहना है। लड़ाईके दिनोंका वियोग तुम्हें कष्ट न दे, इस कारण मैं यह लिख रहा हूँ। लड़ाई खत्म होनेके बाद मैं तुम्हारे वियोगका कारण कम ही हूँगा। फिर भी यह तुम्हारे मनकी वृत्ति बदलनेका प्रयत्न है। जब तुम समझ लोगी और तुम्हें इसकी आदत पड़ जायेगी तो यह बात भी हो जायेगी।

१. यह पत्र पिछले २७-१-१९०९ को हरिलाल गांधीके नाम लिखे पत्रके बादका लिखा जान पड़ता है। उक्त पत्रमें गांधीजीने संघर्षके दौरान श्री हरिलाल गांधीसे चंचलबेनके अलग रहनेकी बात लिखी थी।

२. चंचलबेनके पिता श्री हरिदास वोरा और गांधीजीमें घनिष्ठ मित्रता थी।

इस पत्रको सम्हालकर रखना। इसे वार-वार पढ़ना। जो वात समझमें न आये वह मुझसे पूछना। तुम दोनों ही इसे पढ़ना। इसे लिखनेका हेतु तुम्हारा कल्याण है, जिसके लिए मैं वरावर तत्पर हूँ। किन्तु मेरे विचारोंको तुम्हें मानना ही चाहिए, यह आग्रह नहीं है। मेरी इच्छा यह है कि तुम दोनों अपने स्वतन्त्र वलसे वढ़ो।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५२७) से।

११०. पत्र: मगनलाल गांधीको

[फोक्सरस्ट]
जनवरी २९, १९०९

चि० मगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम मुझे जो-कुछ विशेष वातें लिखनेवाले हो, मेरे जेल पहुँचनेसे पहले ही लिख भेजो। मेरी जमानतकी अवधि चौथी तारीखको खत्म हो जायेगी,[1] यह ध्यानमें रखना।

कमरुद्दीन सेठसे मिलते रहना। इसमें लाभ ही है। "रसरी आवत-जाततें, सिलपर परत निसान।" मेरा उत्साह ऐसा है कि हो सकता है, मुझे दक्षिण आफ्रिकामें अपने ही भाइयोंके हाथों मौत भोगनी पड़े। ऐसा हो, तो तुम्हें हर्षित होना चाहिए। इससे हिन्दू और मुसलमान एक हो जायेंगे। इस लड़ाईमें दो प्रकारके आन्तरिक संघर्ष भी चल रहे हैं। इनमें से एक है हिन्दुओं और मुसलमानोंको संगठित करनेका। उसके विरुद्ध जातिके शत्रु प्रयत्न करते ही रहते हैं। ऐसे महान् प्रयत्नमें किसीको तो शारीरिक वलिदान देना ही पड़ेगा। वह बलिदान मैं ही दूँ तो मेरी मान्यता है, मैं सौभाग्यशाली हूँगा और मेरे साथी तथा तुम सव भी सौभाग्यशाली होओगे।

मैंने तुम्हें श्री सुब्रह्मण्यमसे[2] भेंट करनेके लिए लिखा था। वे पादरी हैं। वे मुझे कुल मिलाकर ठीक आदमी जान पड़े हैं।

मेरे लिए जो प्रयत्न हो रहा है, वह कौन कर रहा है? पता लगे तव लिखना। मैं इस सम्वन्धमें फिलहाल तो किसीको नहीं लिखूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९१८) से।

१. गांधीजी १६ जनवरी, १९०९ को फोक्सरस्टमें गिरफ्तार किये गये थे और स्वयं अपनी जमानतपर छोड़े गये थे। उनके मुकदमेकी सुनवाई ४ फरवरीके वजाय २५ फरवरी, १९०९ को हुई थी और उन्हें तीन महीनेकी सजा दी गई थी।

२. क्वीन स्ट्रीट वेज्लियन इंडियन चर्च, डर्बनके पादरी।

१११. श्री काछलियाका आत्मत्याग

ट्रान्सवालके [ब्रिटिश भारतीय] संघका हरएक अध्यक्ष अपने पूर्वगामीसे ज्यादा योग्य साबित हुआ है, इससे प्रकट होता है कि भारतीय समाज आगे बढ़ रहा है। श्री काछलिया जेल जा चुके हैं। अब उन्होंने स्वेच्छापूर्वक गरीबी अपनानेका इरादा जाहिर किया है। श्री काछलियाकी आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी है कि कोई ऐसा नहीं कह सकता कि उनके पास था ही क्या और उन्होंने दिया ही क्या। उन्हें [अपने व्यापारमें] खासा मुनाफा है, तो भी वे उसे छोड़नेके लिए तैयार हो गये हैं। उनके लेनदार उन्हें दिवालिया घोषित करा देंगे, इसकी उन्हें परवाह नहीं है। वे इसमें अपना मान समझते हैं। इसीको हम बड़ी कमाई कह सकते हैं। यह सब श्री काछलिया देशके लिए कर रहे हैं। वे अपनी टेक रखना चाहते हैं। यह सच्चा आत्मबलिदान — सच्चा आत्मत्याग — है। हम श्री काछलियाको बधाई देते हैं।

इस सत्कार्यकी छूत लगनी शुरू हो गई है। श्री अस्वातने श्री काछलियाकी वीरताका अनुकरण किया है। उन्हें भी हम बधाई देते हैं।

यह दूकानदारोंकी कसौटीका अवसर आया है। दूकानदारोंके पक्षमें बचाव हम कई बार लिख चुके हैं। उन्होंने नुकसान सहा है। उनमें से कई जेल भी गये हैं। हम इस सबका उल्लेख समय-समयपर करते रहे हैं। किन्तु सभी दूकानदारोंकी खरी कसौटीका समय आज आया है। उन्होंने फेरीवालोंकी तरह सारी तकलीफें एक साथ नहीं उठाईं; अब उसका समय आया है। श्री काछलिया और श्री अस्वातने करके दिखा दिया है। देखना है, दूसरे दूकानदार क्या करते हैं। लगभग चौवालीस दूकानदारोंने अपनी सही देकर यह कहा है कि वे परवाने (लाइसेंस) नहीं लेंगे और अपनी दूकानें बन्द रखेंगे। जो ऐसा करनेके लिए तैयार हैं, उनका कर्तव्य है कि वे सामने आयें और श्री काछलियाके कामको बल पहुँचायें। हमारी शेष लड़ाईका दारमदार दूकानदारोंपर है। यदि लड़ाई ज्यादा लम्बी चली तो उसकी जोखिम दूकानदारोंके सिर पड़ेगी।

सभी जानते हैं कि अपने दिवालिया होनेसे श्री काछलियाकी इज्जत गई नहीं, बल्कि बढ़ी है। लेनदार भी यह जानते हैं कि दोष श्री काछलियाका नहीं है। श्री काछलियाने अपने पदकी शोभा बढ़ाई है। तब फिर दूसरे दूकानदार डरेंगे किसलिए? उन्हें डरना तो पाँव पीछे हटानेसे चाहिए। लड़ाईके समय आगे बढ़नेमें डर होता ही नहीं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–१–१९०९

११२. अंग्रेजी हवा

आजकल जब स्वदेशीकी भावना प्रवल हो रही है, कुछ साधारण वातोंको याद रखनेकी जरूरत है। हम देखते हैं कि वहुत-से भारतीय युवक थोड़ी-वहुत अंग्रेजी पढ़नेके वाद मानो अपनी भाषाको भूल गये हों, या मानो अंग्रेजी कोई वड़ी शानदार भाषा है, यह वतानेके लिए, अथवा अन्य कारणोंसे, जहाँ जरूरत नहीं है वहाँ भी अंग्रेजी भाषाका उपयोग करते हैं। वे एक-दूसरेके साथ वातचीत करते समय अच्छी गुजराती, हिन्दी या उर्दू छोड़कर टूटी-फूटी अंग्रेजी वोलते हैं। एक-दूसरेसे पत्र-व्यवहार भी अंग्रेजीमें करते हैं। ऐसा करनेवाले युवक अपनी स्वदेशीकी भावनाको विदेशी भाषामें ऐसे कठिन शब्दोंका, जिन्हें वे खुद भी नहीं समझ सकते, प्रयोग करके प्रकट करते हैं और फिर वैसा करके गर्व अनुभव करते हैं। यह वहुत सामान्य किन्तु वड़ा दोष है। जो जाति अपने जातीय भावकी रक्षा करना चाहती है उसमें अपनी भाषाके प्रति प्रेम और ममत्व तो होना ही चाहिए।

हम वोअरोंका ही उदाहरण ले लें। उनकी अनीतिसे हमें सरोकार नहीं है। उनमें देशभक्ति तो भरपूर है। हमें उसीका अनुकरण करना है। डचोंके वालकोंके लिए अंग्रेजी भापाकी वहुत जरूरत है, फिर भी वे अपने बच्चोंको स्थानिक डच, जिसे वे "टाल" कहते हैं, पढ़ाते हैं। इस "टाल" भाषाकी पुस्तकें थोड़ी ही हैं। फिर भी वे मानते हैं कि वे अन्तमें उस भाषाको शक्तिशाली वना लेंगे। यह सम्भव है। उनमें इतना उत्साह है, इसीलिए वे राज्यका नियन्त्रण अपने हाथोंमें ले सके हैं।

यहूदी लोग अपनी भाषा यीडिशसे वोअरों-जितना तो नहीं, फिर भी वहुत प्रेम रखते हैं। यह भाषा थोड़े दिन पहले विलकुल ग्रामीण थी। वड़े-वड़े यहूदी मानते हैं कि जव यहूदियोंको यीडिशसे सच्चा प्रेम होगा तभी वे राष्ट्र वन सकेंगे।

फिर, हमारी अपनी भाषाको हमें मान देना चाहिए। उसको समृद्ध करना और उसमें वहुत-सी पुस्तकें पढ़ना-लिखना हमारा कर्तव्य है।

इस लेखका अर्थ यह नहीं है कि हमें अंग्रेजी नहीं सीखनी है अथवा उसकी परवाह कम करनी है। वह भाषा शासकोंकी और वैसे ही लगभग विश्वकी भाषा वन गई है, इसलिए उसे हरएकके लिए सीखना जरूरी है। काम पड़नेपर उसका उचित उपयोग करना आना चाहिए। उसको अच्छी तरहसे लिखना और पढ़ना सीखनेकी जरूरत है। परन्तु जिस तरह कुछ युवक करते हैं उस तरह करनेसे कोई अर्थ-सिद्धि नहीं होती। कोई कम पढ़ा-लिखा व्यक्ति अपने जैसे ही कम पढ़े-लिखे व्यक्तिको अंग्रेजीमें पत्र लिखे तो उसमें किसीका कोई लाभ नहीं। उससे पूरी-पूरी गलतफहमी होगी और खराव लिखनेकी आदत वढ़ेगी। अच्छा नियम तो यह जान पड़ता है कि जिसको पत्र लिखें यदि वह व्यक्ति हमारी मातृभाषा न जानता हो तो वहाँ अंग्रेजीका उपयोग किया जाये। हम अंग्रेजी तो सीखें, मगर अपनी भापा न भूलें। अपनी भापा सीखनेके वाद अंग्रेजी सीखें, अथवा दोनों भाषाएँ साथ-साथ सीखें, और ऊपरका नियम याद रखें। जिनको अपनी भापाका अभिमान नहीं है और जो उसे पूरी तरह नहीं जानते, उनमें स्वदेशीका सच्चा उत्साह नहीं हो सकता है। गुजराती भापा भारतकी दूसरी भापाओंकी तुलनामें वहुत

दरिद्र अवस्थामें है; और हम देखते हैं कि स्वदेशीके उत्साहमें भी गुजरात सबसे पीछे है। गुजराती भाषाकी उन्नति करना गुजरातियोंका कर्तव्य है। वैसा करनेसे हम सब सच्चे भारतीय बन सकेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१-१९०९

११३. तुर्कोंका उदाहरण

तुर्कीमें संसदकी स्थापना हुई कि अंग्रेज तुरन्त झुक गये। ब्रिटिश लोकसभाके तीन सौसे ज्यादा सदस्योंने [तुर्कीकी] संसदके प्रति अपनी शुभकामनाएँ भेजी हैं। उसपर प्रधान-मन्त्री श्री ऐस्क्विथके भी हस्ताक्षर हैं। कहा जाता है कि जो सदस्य हाजिर थे उन सभीने हस्ताक्षर किये। जो लोग तुर्कीमें संसदकी स्थापनाका अधिकार प्राप्त कर सके वे कौन थे, अब इसका विवरण अखबारोंमें आ रहा है। आस्ट्रिया तुर्कीसे भिड़ा, तो तुर्कीने तलवार म्यानसे निकाले बिना और बन्दूकसे गोली दागे बिना उसे जोरोंका थप्पड़ मारा। पाठकोंको याद होगा कि तुर्क जातिने आस्ट्रियाके मालका बहिष्कार किया था। यह बहिष्कार आस्ट्रियाके कुछ झुक जानेपर भी अभी तक समाप्त नहीं हुआ है। अखबारी खबरोंके अनुसार आस्ट्रियाके अनुमानसे इस थोड़े-से समयमें आस्ट्रियाकी १७,००,००० पौंडकी क्षति हुई है। तुर्कीके अनुमानसे यह क्षति ३०,००,००० पौंडकी हुई है। जब माल-जहाज आस्ट्रियासे माल लेकर तुर्कीके बन्दरगाहोंमें पहुँचे तब आस्ट्रियाके राजदूतने माल उतरवानेके लिए बहुत दौड़-धूप की, किन्तु तुर्क अधिकारियोंने उसकी कोई सुनवाई नहीं की। बोझा ढोनेवालोंतकने अपनी मजदूरी की परवाह नहीं की। बन्दरगाहमें आस्ट्रियाके मालको उतारनेवाला एक भी तुर्क नहीं मिला। इसपर आस्ट्रियाकी सरकारने सुल्तानको कड़ा विरोधपत्र लिखा। इससे तुर्क लोग समझ गये कि आस्ट्रियाको असह्य आघात लगा है और बहिष्कारका जोर दुगुना हो गया। पहले तो आस्ट्रियासे आनेवाली फेज (तुर्की) टोपी और दियासलाईका बहिष्कार किया गया। पीछे ज्यों-ज्यों लोगोंको यह पता चलता गया कि आस्ट्रियासे क्या-क्या माल आता है त्यों-त्यों वे दूसरे मालका भी बहिष्कार करते गये। पेरिसमें युवक तुर्की दल (यंग टर्क पार्टी) के प्रसिद्ध नेता अहमद रजा पाशासे किसीने पूछा तो उन्होंने कहा, "हमने बेशक आस्ट्रियाका बहिष्कार किया है और वह अभी चालू रहेगा। आस्ट्रियाको नुकसान होता है, यह देखना हमारा काम नहीं है। यह तो हमने हाथ आड़ा देकर अपना बचाव-भर किया है। पहला वार आस्ट्रियाने किया था, अब वह उसका स्वाद चखे।" अखबारोंका कहना है कि इस भारी बहिष्कारसे ही इस्तम्बूल और विएनाके बीच सन्धिकी बातचीत शुरू हुई।

यह लड़ाई जातीय सम्मानके लिए लड़ी गई है और इस सम्मानकी रक्षा करनेमें गरीब और अमीर, किसीने भी अपने नुकसानकी परवाह नहीं की। इसीलिए आस्ट्रियाको चुपचाप दब जाना पड़ा। यह उदाहरण ट्रान्सवालके भारतीयोंके लिए अच्छी तरहसे हृदयंगम कर लेने योग्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१-१९०९

११४. मेरा जेलका दूसरा अनुभव [५]

धर्म-संकट

मैंने अभी आधी सजा ही काटी थी कि फीनिक्ससे तार आया कि श्रीमती गांधी बहुत बीमार हैं, हालत चिन्ताजनक है, अतः मुझे वहाँ पहुँचना चाहिए।[1] इस खबरको सुनकर सब लोग बहुत दुखी हुए। मेरा फर्ज क्या है, इस विषयमें मुझे कोई सन्देह नहीं हुआ। जेलरने पूछा, अब आप जुर्माना भरकर जाना चाहेंगे या नहीं? मैंने तुरन्त उत्तर दिया कि मैं कभी जुर्माना भर ही नहीं सकता। सगे-सम्बन्धियोंसे बिछोह होना भी हमारी लड़ाईका एक हिस्सा है। जेलर सुनकर हँसा। उसे खेद भी हुआ। मेरा यह निर्णय पहली नजरमें कठोर-जैसा मालूम होगा, लेकिन मुझे विश्वास है कि ऐसी स्थितिमें सच्चा निर्णय यही था। मैं देश-प्रेमको अपने धर्मका ही एक हिस्सा समझता हूँ। उसमें सारा धर्म नहीं आता, यह बात सही है। लेकिन देश-प्रेमके बिना धर्मका पालन पूरा हुआ नहीं कहा जा सकता। धर्मके पालनमें स्त्री-पुत्रादिका वियोग सहन करना पड़े, तो वह भी करना चाहिए। [प्रसंग आनेपर] उन्हें खो देनेके लिए भी तैयार रहना चाहिए। यही नहीं कि इसमें निर्दयताकी कोई बात नहीं है; बल्कि यही हमारा कर्तव्य है। जब इसी तरह हमें मरण-पर्यन्त लड़ना है, तो फिर दूसरा विचार हो ही नहीं सकता। लॉर्ड रॉबर्ट्सने हमारे कामसे कम दर्जेके काममें अपना एकमात्र पुत्र खो दिया; और चूँकि खुद लड़ाईमें फँसे हुए थे, इसलिए वे उसे दफन करनेके लिए भी नहीं जा सके।[2] ऐसे उदाहरणोंसे दुनियाका इतिहास भरा हुआ है।

काफिरोंका झगड़ा

जेलमें कुछ काफिर कैदी बहुत क्रूर प्रकृतिवाले होते हैं। उनमें लड़ाई-झगड़ा तो होता ही रहता है। कोठरीमें बन्द किये जानेके बाद वे आपसमें लड़ते रहते हैं और कभी-कभी सन्तरीसे भी लड़नेके लिए तैयार हो जाते हैं। इन कैदियोंने सन्तरीको दो बार पीटा भी था। ऐसे कैदियोंके साथ भारतीय कैदियोंको बन्द करनेमें जोखिम है, यह तो स्पष्ट ही है। यद्यपि भारतीय कैदियोंको लिए ऐसा प्रसंग नहीं आया; लेकिन सरकारी कानून जबतक यह कहता है कि भारतीय कैदियोंको काफिरोंके साथ गिना जाये, तबतक स्थिति खतरनाक ही कही जायेगी।

जेलमें बीमारी

जेलमें बहुत-से कैदियोंको कोई खास बीमारी नहीं हुई। श्री मावजीके विषयमें मैं कह चुका हूँ। श्री राजू नामके एक तमिल भाई थे। उन्हें जोरोंकी पेचिश हो गई थी। उनकी तबीयत बहुत कमजोर हो गई थी। उसका कारण उन्होंने यह बताया कि उन्हें हर रोज तीस प्याला चाय पीनेकी आदत थी; जेलमें चाय न मिलनेसे ही ऐसा हुआ। उन्होंने चाय माँगी थी, लेकिन चाय तो मिल नहीं सकती थी। पर उन्हें दवा दी गई और जेलके डॉक्टरने

१. देखिए "पत्र: ए० एच० वेस्टको", पृष्ठ १०८।

२. देखिए आत्मकथा, भाग ३, अध्याय १०।

दो पौंड दूध और डबल-रोटी देनेका भी हुक्म दिया। उनकी तबीयत इससे फिर ठीक हो गई। श्री रविकृष्ण तालेवंतसिंहकी तबीयत अन्ततक खराब ही रही। इसी तरह काजी और श्री बावजीर अन्ततक बीमार रहे। श्री रतनसी सोढा चातुर्मास करते थे और इसलिए एक ही बार खाते थे। खुराक जैसी चाहिए वैसी न मिलनेके कारण, वे भूख सह तो लेते थे, लेकिन अन्तमें उनके शरीरपर सूजन आ गई थी। इसके सिवा और भी कुछ लोगोंको मामूली बीमारियाँ हुईं।

लेकिन सब मिलाकर अनुभव यह रहा कि बीमार भारतीयोंने भी हार नहीं मानी। देशके लिए वे यह सारा कष्ट उठानेके लिए तैयार थे।

कुछ अड़चनें

अनुभव यह हुआ कि बाहरके कष्टोंकी अपेक्षा भीतरी कारणोंसे होनेवाले कष्ट ज्यादा दुःखदायी थे। हिन्दू-मुसलमान तथा ऊँच-नीचके भेदका आभास कभी-कभी जेलमें भी मिल जाता था। जेलमें सभी वर्गों और सभी वर्णोंके हिन्दू एक साथ रहते थे। इससे यह बात स्पष्ट हो गई कि हम स्वराज्य चलानेके कितने अयोग्य हैं; यद्यपि यह भी समझमें आ गया कि स्वराज्य हम चला ही नहीं सकते, सो भी नहीं है क्योंकि अंतमें इस तरहकी सभी अड़चनें समाप्त हो गईं।

कुछ हिन्दू यह कहते थे कि हम मुसलमानोंके हाथका बनाया हुआ खाना नहीं खा सकते। मैं अमुक आदमीके हाथका बनाया हुआ खाना नहीं खा सकता—ऐसा कहनेवाले मनुष्यको हिन्दुस्तानके बाहर कदम ही नहीं रखना चाहिए। मैंने यह भी देखा कि काफिर या गोरे हमारे अन्नको छूलें, तो उसमें इन लोगोंको कोई आपत्ति नहीं होती थी। एक बार एक भाईने ऐसा सवाल उठाया कि अमुक आदमी तो ढेढ़[1] है, उसके पास मैं नहीं सो सकता। यह प्रसंग भी हमारे लिए लज्जाजनक था। इस सवालकी गहराईमें जानेपर मालूम हुआ कि ऐसी आपत्तिका कारण यह नहीं था कि आपत्ति उठानेवाले भाईको स्वयं इसमें कोई बाधा थी। इसके पीछे कारण यह था कि यदि इस घटनाकी खबर देशमें पहुँची, तो उनके जातिवाले लोग आपत्ति करेंगे। मैं तो ऐसा मानता हूँ कि इस तरह ऊँच-नीचके ढोंगसे और जातिके अत्याचारके डरसे हम सत्यको छोड़कर असत्यका पोषण कर रहे हैं। यदि हम जानते हैं कि ढेढ़का तिरस्कार करना ठीक नहीं है, और तब भी जातिके या दूसरे किसीके गलत डरसे सत्यका त्याग करते हैं तो हम सत्याग्रही कैसे कहे जा सकते हैं? मैं तो चाहता हूँ कि इस लड़ाईमें भाग लेनेवाले भारतीय जातिके खिलाफ, कुटुम्बके खिलाफ और जहाँ अधर्म देखें वहाँ उसके खिलाफ सत्याग्रही बनकर लड़ें। मेरा निश्चित मत है कि वे ऐसा नहीं करते, इसीलिए लड़ाईमें इतना ढीलापन है। हम सब भारतीय हैं। तो फिर एक ओर आपसमें निरर्थक भेद रखकर लड़ना और दूसरी ओर (सरकारसे) हक माँगना, इन दोनों बातोंका मेल नहीं बैठता। अथवा, देशमें हमारा क्या होगा, इस डरसे यदि हम जो सही है वह नहीं करते, तो फिर अपनी लड़ाइयोंमें हम कैसे जीतेंगे? डरकर कोई काम छोड़ देना तो कायरताका लक्षण है। और सरकारके खिलाफ हमारा जो महायुद्ध चल रहा है, उसमें कायर भारतीय आखिरतक टिक नहीं सकते।

१. अन्त्यजोंकी एक जाति।

जेल कौन जा सकता है?

ऊपर दिये गये उदाहरणोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यसनी, जात-पाँतके गलत भेद माननेवाला, झगड़ालू, हिन्दू-मुसलमानमें फर्क करनेवाला और रोगी — ये सब जेल जानेके लिए अयोग्य माने जाने चाहिए। ऐसे लोग वहाँ जायेंगे तो ज्यादा समय तक नहीं टिक सकेंगे। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि देश-हितके लिए, सम्मान समझकर जेल जानेवाले लोगोंको शारीरिक मानसिक तथा आत्मिक तीनों दृष्टियोंसे स्वस्थ होना चाहिए। रोगी आदमी आखिरमें थक जायेगा। हिन्दू-मुसलमानमें भेद करनेवाला, मैं ऊँचा और दूसरा नीचा — ऐसा विचार रखनेवाला, व्यसनमें फँसा हुआ तथा चाय, बीड़ी या दूसरी किसी वस्तुके पीछे पागल बना हुआ आदमी अन्ततक नहीं लड़ सकता।

जेलमें मैंने क्या पढ़ा?

यद्यपि सारे दिन कैदीको जेलमें काम रहता है, तो भी सुबह-शाम और रविवारके दिन कुछ पढ़नेका समय मिल सकता है। और जेलमें कोई दूसरी झंझट नहीं होती, इसलिए पढ़नेका काम शान्त मनसे किया जा सकता है। समय बहुत कम मिलता था, फिर भी मैंने महान लेखक रस्किनकी दो पुस्तकें, महान थोरोके निबन्ध, 'बाइबल' का कुछ हिस्सा, गैरिबाल्डीका जीवन-चरित्र (गुजरातीमें), लॉर्ड बेकनके निबन्ध (गुजरातीमें) तथा हिन्दुस्तानसे सम्बन्धित दूसरी दो पुस्तकें पढ़ीं। रस्किन और थोरोकी पुस्तकोंमें ढूँढ़नेपर सत्याग्रहके तत्त्व भी मिल सकते हैं। उपर्युक्त गुजराती पुस्तकें सबके पढ़नेके लिए श्री दीवानने भेजी थीं। इसके सिवा, 'भगवद्गीता' तो लगभग हमेशा ही मैं पढ़ता था। इस अध्ययन और मननका परिणाम यह हुआ कि सत्याग्रहके विषयमें मेरा मत अधिक दृढ़ हो गया है और आज मैं कह सकता हूँ कि जेलसे थोड़ा भी घबड़ाने या ऊब उठनेका कोई कारण नहीं है।

दो प्रकारके विचार

ऊपर जो-कुछ लिखा गया है, उसे पढ़कर हमारे मनमें दो प्रकारके विचार उठ सकते हैं।

एक तो यह कि जेलमें जाकर बन्धन भोगना, मोटी, खुरदरी और खराब पोशाक पहनना, जैसा-तैसा खाना, सन्तरीकी लातें सहना, काफिरोंके बीचमें रहना, जो काम दिया जाये, वह रुचे या न रुचे फिर भी करना, अपने नौकर होने लायक सन्तरीकी हमेशा तावेदारी करना, अपने सगे-सम्बन्धियों या दोस्तोंसे न मिल सकना, किसीको पत्र न लिख सकना, आवश्यक वस्तुओंका न मिलना, लुटेरों और चोरों आदिके साथ एक जगह रहना और सोना — यह सब कष्ट किसलिए उठाया जाये? इससे तो मरना भला। जुर्माना देकर छूटना अच्छा, लेकिन जेल जाना अच्छा नहीं। भगवान करे, जेल किसीको न हो। यदि कोई इस तरह सोचे तो वह निर्बल हो जायेगा, जेलसे डरेगा और वहाँ जो धर्मकार्य करना है सो नहीं करेगा।

दूसरा विचार जो हमारे मनमें उठ सकता है, यह है कि मैं देशके हितके लिए, अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिए, धर्म-पालनके लिए जेल जाता हूँ। यह तो मेरे सौभाग्यका चिह्न है। इसके सिवा, जेलमें मुझे कोई कष्ट तो है नहीं। बाहर मुझे अनेक लोगोंका हुक्म बजाना पड़ता है; लेकिन जेलमें मुझे किसी बातकी चिन्ता नहीं रहती। वहाँ न मुझे कमानेकी चिन्ता है और न खानेकी। खाना तो नियमपूर्वक दूसरे लोग पकाते हैं। मेरे शरीरकी

हिफाजत सरकार करती है। इस सबके लिए मुझे कुछ देना नहीं पड़ता। और कसरत खूब हो जाये, इतना काम मिलता है। मेरे सारे व्यसन वहाँ अनायास ही छूट जाते हैं। मेरा मन मुक्त रहता है। मुझे ईश्वर-भजन करनेका सहज ही अवसर मिल जाता है। मेरा शरीर दूसरोंके अधीन होता है, लेकिन मेरी आत्मा अधिक मुक्त हो जाती है। मैं नियमके अनुसार उठता और बैठता हूँ। मेरे शरीरकी सार-सँभाल भी वे ही करते हैं, जो उसे नियन्त्रणमें रखते हैं। इस तरह, किसी भी दृष्टिसे देखें, वहाँ मैं मुक्त हूँ। कभी-कभी मेरे ऊपर कष्ट आ पड़ता है, कोई दुष्ट सन्तरी मुझे मारता-पीटता है, लेकिन उससे मैं धीरज रखना सीखता हूँ; और यह समझकर खुश होता हूँ कि यह अनुभव मुझे जेलमें ऐसी घटनाओंको रोकनेका प्रयत्न करनेका अवसर देता है। ऐसा सोचकर जेलको पवित्र और सुखदायक मानना और बनाना हमारे हाथमें है। थोड़ेमें कहें तो सुख और दुःख तो मनकी दो विभिन्न स्थितियाँ-भर हैं।

मैं आशा करता हूँ कि जेल-जीवनका मेरा यह दूसरा अनुभव पढ़कर पाठक इसी निश्चयपर आयेंगे कि देशके लिए अथवा धर्मके लिए जेल जानेमें, जेल-जीवनकी तकलीफ उठानेमें अथवा दूसरी तरहसे मुसीबत झेलनेमें ही हमें सुख मानना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१-१९०९

(समाप्त)

११५. ट्रान्सवालकी लड़ाई

ट्रान्सवालकी लड़ाई अब पूरा जोर पकड़ चुकी है। [ब्रिटिश भारतीय] संघके अध्यक्ष जेल गये। मद्रासियोंके लगभग सारे नेता जेलमें विराजमान हैं। दूसरे व्यापारी भी जेलमें हैं। इस प्रकार थोरोका यह कथन सच्चा सिद्ध होगा कि जो लोग अन्यायी राज्यमें अन्यायके आगे सिर झुकाना नहीं चाहते उनका निवास जेलमें होना चाहिए।

इस बारकी सजा कोई सात दिनकी या हफ्ते-दो-हफ्तेकी नहीं है।[1] हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने खबर दी है कि थोड़े ही दिनोंमें बाकी नेता भी गिरफ्तार कर लिये जायेंगे। हम इस सबको सन्तोषजनक मानते हैं। जैसे-तैसे दुःख भोगनेका ढोंग करके थोड़े ही दिन जेलमें रहनेपर हम जो-कुछ माँगते हैं वह मिल जाता तो हम प्राप्त वस्तुको निभा या पचा न सकते। संसारका ऐसा नियम है कि जो वस्तु जिस उपायसे मिलती है उसको उसी उपायसे रखा जा सकता है। इसका अत्यन्त साधारण उदाहरण यह दिया जाता है कि शक्तिसे प्राप्त राज्य शक्तिसे ही निभाया जा सकता है। इसी नियमके अनुसार कुछ अहंकारी, स्वेच्छाचारी और नासमझ अंग्रेज यह मानते हैं कि तलवारके बलसे लिया हुआ भारत तलवारके बलसे ही रखा जा सकता है। यह मान्यता भूल-भरी है, यह सहज ही दिखाई पड़ जाता है। यहाँ तो हमने ऊपर जो नियम बताया उसको स्पष्ट करनेके लिए ही यह उदाहरण दिया है। इसलिए इस सम्बन्धमें ज्यादा कहनेके बजाय हम इतना ही कहेंगे कि

१. स्वयं गांधीजीको २५ फरवरीको तीन मासकी कैदकी सजा दी गई थी।

भारतको तलवारके बलसे नहीं, बल्कि हमारी आपसी फूटके कारण हमारी ही शक्तिका लाभ उठाकर जीता गया है। इसलिए ऊपरके नियमके अनुसार तो हमारी फूटको कायम रखकर और हमारी ही शक्तिका उपयोग हमारे विरुद्ध करके भारतको कब्जेमें रखा जा सकता है। इस दृष्टिसे आगे सोचनेपर हम यह भी देखते हैं कि यदि हम भारतीय, हिन्दू और मुसलमान, संगठित हो जायें और अपने देशवासियोंको ही कुचलनेसे इनकार कर दें तो भारत परतन्त्र दशामें न रहे। ऐसा होते हुए भी अंग्रेजी झंडा भारतके ऊपर रह सकता है — किन्तु वह दूसरी नीतिसे और लोगोंकी स्वतन्त्र सम्मतिसे। हालमें भी लोगोंकी सम्मति तो है; परन्तु उसके पीछे एक प्रकारकी लाचारी है। हम भारतकी बात यहीं खत्म करते हैं। हम इसमें से केवल ट्रान्सवालकी लड़ाईके लिए सार निकाल लेना चाहते हैं।

तो हमने देखा कि हम जिस उपायसे अपनी माँग सरकारसे मंजूर कराते हैं, उसी उपायसे उस माँगकी मंजूरीका लाभ भी उठा सकते हैं। यह बात ठीक हो तो यह निश्चित हो गया कि सत्याग्रहके उपायका अवलम्बन सचाईसे करना चाहिए। उसके ऊपर कोई लांछन नहीं होना चाहिए। इस विचारके अनुसार यदि हमारा पूरा जोर आजमाया जाता है तो इसमें हमारा लाभ है। आज यदि हम नाटकीय नहीं, सच्चा बल दिखायेंगे तो वह बल भविष्यमें पूरी तरहसे काम आयेगा।

अब लड़ाई दूकानदारोंके ऊपर आ टिकी है। यही ठीक भी है। व्यक्तिगत स्वार्थ तो दूकानदारोंका ही बड़ा है। उनकी इज्जत ज्यादा है। इसलिए कानूनसे होनेवाला अपमान भी उन्हींको ज्यादा अखरता है। अतः, अब दूकानदारोंको बहुत सँभलना है। हमारा संवाददाता खबर देता है कि बहुत-से दूकानदार हिम्मत हार बैठे हैं। उन दूकानदारोंमें जरा भी शर्म हो तो वे [फिर हिम्मत करके] लड़ाईमें भाग ले सकते हैं। वे फेरी लगाकर जेल जा सकते हैं। उनमें खरी ईमानदारी होगी तो सरकार उनको जेलमें भेजे बिना रह ही नहीं सकती। श्री काछलिया और श्री अस्वात तो दुनियामें थोड़े ही होते हैं। दूसरे भारतीय दूकानदार उनके मुकाबले आधा भी जोर लगायें तो लड़ाई चमक सकती है। वे ऐसा करें या न करें, जो जेलमें पहुँच गये हैं और जिनमें अभी जेल-महलमें जानेका उत्साह है उनका कर्तव्य स्पष्ट है। उनको तबतक बार-बार जेल जाना है, जबतक न्याय नहीं मिल जाता। उनका माल जाता है तो भले ही जाये। उनको तो प्राण जाने तक लड़ना है। इसमें सब आ गया। हम कामना करते हैं कि ईश्वर भारतीयोंको सुबुद्धि दे। श्री हॉस्केन आदि गोरोंकी चिट्ठी[1] इंग्लैंड पहुँचनेके बाद भारतीय डरकर बैठ जायें तो यह हमारी कोई कम बदनसीबी नहीं कही जायेगी। यह तो हमारी बदनामीकी हद मानी जायेगी। हमें विश्वास है कि जो भारतीय दो वर्षोंसे लड़ रहे हैं, वे ऐसी बदनामीके पात्र हरगिज नहीं बनेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-२-१९०९

१. यह पत्र जनवरी ६, १९०९ को लन्दन टाइम्सको लिखा गया था। देखिए परिशिष्ट ११।

११६. श्री काछलियाका विशेष आत्मत्याग

हम देख चुके हैं, श्री काछलियाने समाजके लिए मान-भरी गरीबी स्वीकार की है।[1] अब वे जोहानिसबर्ग जेलमें तीन माहका कड़ा कारावास भुगत रहे हैं। उनके साथ व्यापारियोंमें से श्री आमद मूसाजी तथा श्री मैमी भी हैं। श्री काछलियाने जो काम किया है, उसपर सारे भारतीय समाजको, और खासकर मुसलमान भाइयोंको, गर्व होना चाहिए। श्री काछलियाको अब और कुछ खास करनेको नहीं रहा। वे दूसरी बार हँसते-हँसते जेल गये हैं। जिस समाजमें ऐसे लोग मौजूद हैं, वह कभी पीछे नहीं हट सकता। ऐसे लोग दो-चार ही हों तो भी वे सारे समाजका बेड़ा पार लगा सकते हैं।

हमें आशा है कि दूसरे सैकड़ों भारतीय श्री काछलियाके उज्ज्वल उदाहरणका अनुसरण करेंगे। ऐसे भारतीय जैसे-जैसे दुःख उठाते जाते हैं, वैसे-वैसे समाजके कर्तव्यका बोझ बढ़ता जाता है। यह बात हरएक भारतीयको ध्यानमें रखनी है। श्री काछलिया तथा उनके साथी जेलमें रहें, और दूसरे भारतीय पीछे हट जायें तो इससे श्री काछलियाकी निन्दा नहीं होगी, समाजकी मानहानि होगी।

तमिल लोगोंने तो हद ही कर दी है। उनके सारे मुख्य व्यक्ति इस समय जेलमें जा बैठे हैं। इस बारका कारावास सिर्फ सात दिनका नहीं, तीन माहका है; वह सादा नहीं, सख्त है। ऐसे कारावासका भय रखे बिना जो भारतीय जेल गये हैं उनकी बहादुरीका पार नहीं है। जेलकी मियाद पूरी होनेके पहले उन्हें छुड़ा लेना बाहर रहनेवाले भारतीयोंके हाथमें है। यह कैसे किया जा सकता है, सो हम अपनी जोहानिसबर्गकी चिट्ठीमें अच्छी तरह बता चुके हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–२–१९०९

११७. सम्मेलन

सारे दक्षिण आफ्रिकाका एक राज्य बनानेके उद्देश्यसे आयोजित सम्मेलनकी रिपोर्ट प्रकाशित हो गई है। उसमें दस भाग और १५३ धाराएँ हैं। यह रिपोर्ट ३० मार्चको दक्षिण आफ्रिकाकी चारों संसदोंमें पेश की जायेगी। यदि उसे मंजूर कर लिया गया तो सम्मेलन फिर मई महीनेमें ब्लूमफॉन्टीनमें एक और अधिवेशन करेगा और जूनमें अपनी अन्तिम रिपोर्ट पेश कर देगा। उसे दक्षिण आफ्रिकाकी संसदें पास करेंगी। फिर कुछ प्रतिनिधि इस रिपोर्टको लेकर इंग्लैंड जायेंगे और उसके बाद एक वर्षके अन्दर दक्षिण आफ्रिकाकी नई संसदकी बैठक होगी। ये बातें ऐसी हैं, जिनपर गोरे एक हद तक गर्व कर सकते हैं। उन्होंने अपने काममें एकता दिखाई और अपने निजी स्वार्थोंका त्याग किया, इस बातपर हम उन्हें बधाई देते हैं। जो लोग ऐसा कर सकते हैं, उन्हें विजय मिले, इसमें कोई आश्चर्यकी बात

१. देखिए "श्री काछलियाका आत्मत्याग", पृष्ठ १७७।

नहीं है। अलबत्ता, उनके इस कार्यके फलस्वरूप दूसरे लोगोंपर अन्याय तो नहीं होता, यह अलग सवाल है। इस सम्मेलनने तो इतना ही सिद्ध किया है कि लोग यदि बुरे कामके लिए भी इकट्ठे होकर आन्दोलन करें, तो उन्हें कुछ सफलता मिल ही जाती है।

इस सम्मेलनके फलस्वरूप [सम्पूर्ण] दक्षिण आफ्रिकाके लिए एक संसद और एक उच्च न्यायालयकी स्थापना होगी। संसदके मातहत मौजूदा उपनिवेशोंमें से प्रत्येक उपनिवेशके लिए एक परिषद होगी। यह परिषद साधारण कानूनोंकी रचना कर सकेगी। चुंगी और रेलवेका महकमा [सारे देशके लिए] एक ही होगा। प्रिटोरिया इस संघ-राज्यकी राजधानी होगी। लेकिन संसदका अधिवेशन केप टाउनमें होगा। नया उच्च न्यायालय ब्लूफॉन्टीनमें रहेगा। दक्षिण आफ्रिकाका एक गवर्नर जनरल होगा। संसदके दो सदन होंगे; सीनेट और असेम्बली। सीनेटमें ४० सदस्य होंगे। उनमें से आठको सरकार नामजद करेगी। बाकी सदस्य प्रान्तों द्वारा चुने जायेंगे। असेम्बलीमें १२१ सदस्य होंगे; इनमें केपके ५१, नेटालके १७, ट्रान्सवालके ३६ और ऑरेंज फ्री स्टेटके १७ होंगे।

इस संघका परिणाम भारतीयों और दूसरे काले लोगोंके लिए भयंकर होगा। काले लोगोंको कहीं भी मताधिकार नहीं होगा, और इस रिपोर्टमें यह सिफारिश की गई है कि केप प्रान्तमें उन्हें जो भी मताधिकार प्राप्त है वह उनसे छीन लिया जाये। किन्तु मताधिकार तो एक मामूली-सी बात है। जहाँ हमें खड़े होनेकी भी जगह नहीं दी जा रही है, वहाँ मताधिकारका कोई उपयोग हो ही नहीं सकता। जहाँ गुलाम और गुलामोंके मालिक दोनों हों, वहाँ गुलामों और उनके मालिकोंको अपने ऊपरी अधिकारी नियुक्त करनेके लिए समान मताधिकार दिया जाये, तो भी गुलामको मिला हुआ मताधिकार किसी कामका नहीं होगा। वह मताधिकार उसके लिए तभी उपयोगी हो सकता है जब उसे पहले स्वतन्त्रता दी जाये और स्वतन्त्रताकी कीमत समझनेके लिए आवश्यक तालीम दी जाये। अन्यथा उसका मताधिकार मताधिकार ही नहीं है। इस देशमें हमारी स्थिति गुलामीकी है। स्वतन्त्रताका मूल्य समझनेके लिए आवश्यक तालीम भी हमारे पास नहीं है। ये दोनों वस्तुएँ हमें एक साथ मिलनी चाहिए। यह तो हो नहीं सकता कि जो हमारे मालिक कहे जाते हैं वे हमारी बेड़ियाँ खुद तोड़ दें। इसलिए हमें खुद ही अपनेको तालीम देनी होगी और अपने प्रयत्नोंसे ही स्वतन्त्रता प्राप्त करनी होगी। जबतक हमने ऐसा नहीं किया है तबतक मताधिकारका, हमारी रायमें, कोई मूल्य नहीं है। तो अब हम इस सम्मेलनकी दूसरी बेड़ियोंपर विचार करें।

विभिन्न प्रान्तोंमें जो भी कानून आज हैं, वे सब कायम रहेंगे। यानी, ऑरेंज रिवर कालोनी, ट्रान्सवाल आदिमें हमारे खिलाफ जितने भी कानून हैं वे सब ज्यों-के-त्यों रहेंगे। हमें एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें जानेका अधिकार नहीं होगा; इसके सिवा नई संसदको दूसरे कानून बनानेकी सत्ता भी होगी। इसका नतीजा यह होगा कि विभिन्न उपनिवेशों या प्रान्तोंमें आज जो कठोरसे-कठोर कानून हैं दूसरी जगहोंमें भी वैसे ही कानून बनाये जायेंगे।

सम्मेलनकी रिपोर्टसे यह स्पष्ट हो जाता है कि उससे ट्रान्सवालमें भारतीयोंका प्रश्न हल नहीं हुआ है। और यदि भारतीय हाथपर-हाथ धरकर बैठे रहे तो सारे दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंकी हालत खराब हो जायेगी। हरएक भारतीय को, जो दक्षिण आफ्रिकामें गुलामकी तरह नहीं रहना चाहता, यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए; और यदि वह ट्रान्सवालका हो तो उसे अपना सिर हथेलीपर रखकर लड़ाईमें शामिल हो जाना चाहिए।

यदि वह ट्रान्सवालसे बाहरका हो तो उसे ट्रान्सवालके भारतीयोंको ज्यादासे-ज्यादा प्रोत्साहन और सहायता देनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-२-१९०९

११८. हारे हुए लोगोंके लिए

पॉचेफस्ट्रूम और क्लार्क्सडॉर्प हार गये। दूसरे शहरोंमें भी भारतीय हारे हुए जान पड़ते हैं। फिर, पॉचेफस्ट्रूमसे तो अखबारोंमें तार भेजा गया है कि जो पॉचेफस्ट्रूम बहुत मजबूत था, वह झुक गया, इसलिए दूसरे शहर तो झुकेंगे ही, और अब सत्याग्रह नहीं चलेगा।

जो हार गये हैं उनका कुछ कर्तव्य है। हम उनको उसका ध्यान दिलाना चाहते हैं। वे जानते हैं कि लड़ाई तो लड़ने योग्य ही है। उनसे कष्ट सहन नहीं हुए, इसलिए वे झुक गये। इस प्रकार जो गिरे हैं, उनके मनमें दूसरोंको गिरानेका खयाल न आना चाहिए। जो हार गये हैं वे भी सरकारको बता सकते हैं कि "हम जो हारे हैं, उसका कारण हमारी कमजोरी है; किन्तु जो हारे नहीं हैं, हम उनकी जीत चाहते हैं। हम उनको जितना सम्भव होगा, उतना बल देंगे।" वे इतना तो कर ही सकते हैं। ऐसा न करेंगे तो झुक जानेका कारण उनकी निर्बलता माननेके बजाय यह माना जायेगा कि वे जान-बूझकर देशके दुश्मन बन गये हैं। हारे हुए लोग अखबारोंमें लिख सकते हैं कि हम हार गये, मगर यह नहीं चाहते कि दूसरे भी हार जायें।

वे ऐसा न करेंगे तो इससे लड़ाई कुछ बन्द नहीं हो जायेगी। लड़ाई चलेगी। किन्तु वे [हमारा] विरोध करेंगे तो वह लम्बी खिंचेगी। वे अपने हार जानेको कमजोरी मान लेंगे तो अर्थ यह होगा कि उन्होंने उतनी मदद की। उस हद तक लड़ाईकी अवधि भी कम हो जायेगी।

इसके अलावा, यदि उनका जेल जानेका विचार हो तो वे जा सकते हैं। इटलीमें जब देश-प्रेमकी भावना लोगोंकी नस-नसमें दौड़ रही थी, तब जो लड़ाईमें भाग नहीं लेते थे वे भी उसका विरोध नहीं करते थे। वे अपनी दुर्बलता स्वीकार करके उससे अलग रहते थे; किन्तु दूसरी तरहसे बहुत सहायता दिया करते थे। वैसा ही हारे हुए भारतीय भी कर सकते हैं। इन विचारोंपर उन्हें ध्यान देना चाहिए। उनका कर्तव्य तो यह था कि वे श्री दाउद मुहम्मद आदिके नाम स्मरण करके मजबूत बने रहते। वैसा नहीं हुआ है, तो अब हमने इस इरादेसे कि उन्हें और ज्यादा कष्ट न हों, ऊपर जो बातें बताई हैं, उनके अनुसार वे काम कर सकते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-२-१९०९

११९. श्री राँदेरियाकी अपील

हम श्री राँदेरियाकी अपील में हार गये।[1] इसमें कोई आश्चर्यकी वात नहीं। श्री नायडूके मुकदमेमें भी न्यायाधीशोंका जो रुख था उससे जाहिर हो गया था कि हम यह अपील भी हारेंगे। ये दोनों अपीलें सत्याग्रहियोंको संकेत देती हैं कि उन्हें अपील सिर्फ खुदासे करनी है। दुनियवी न्यायालय उनके लिए नहीं हैं। हो भी कैसे सकते हैं? अन्धे राजाके न्यायालय भी अन्धे ही होते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि न्यायालयोंके अधिकारी — न्यायाधीश — अन्धे हैं, वल्कि अर्थ यह है कि अधिकारी यदि अन्यायपूर्ण कानूनपर अमल करते हैं तो उसका दूसरा क्या परिणाम हो सकता है? इसलिए ठीक तो यह है कि सत्याग्रही अपील अपनी शक्तिसे करे; ईश्वरमें उसकी जो आस्था है और खुदाने उसे जो बल दिया है, उससे करे। उसकी यह अपील कभी व्यर्थ न जायेगी।

कुछ भारतीय तो इस अपीलसे हारे हुए-से दिखाई देते हैं। उनके मनको भारी धक्का लगा जान पड़ता है। इन भारतीयोंको डरपोक समझना चाहिए। [वे सोचते हैं:] "हाय, अव तो देशसे निर्वासित होना ही पड़ेगा!" किन्तु "निर्वासन" का अर्थ क्या है? निर्वासित किये जानेपर वापस तो आना ही है। निर्वासित होने या जेल जाने — दोमें से चुनाव करना पड़े तो एक हद तक तो निर्वासित ही होना चाहिए, क्योंकि निर्वासित किया गया व्यक्ति फिर और लड़ सकता है। अपील हारनेसे हक नहीं मारे जाते। मारे तो हम तव जायेंगे जव हक छोड़ देंगे। जो ट्रान्सवालको अपना देश माने बैठे हैं वे सरकारके निकालनेसे थोड़े ही चले जायेंगे। वे तो अपनी मर्जीसे ही जायेंगे। इसलिए हमें कहना चाहिए कि राँदेरियाकी अपीलका खयाल किसीको करना ही नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–२–१९०९

१२०. डंकनके विचार

श्री पैट्रिक डंकन स्वशासन मिलनेसे पहले ट्रान्सवालके उपनिवेश-सचिव थे। उन्होंने अभी हालके सम्मेलनमें खास हिस्सा लिया था। 'स्टेट' दक्षिण आफ्रिकाकी एक महत्त्वपूर्ण मासिक पत्रिका है। उसमें वहुत वड़े लोग ही लिखते हैं। उसके संरक्षक करोड़पति गोरे हैं।

इस मासिक पत्रिकामें श्री डंकनने एशियाई प्रश्नके सम्बन्धमें एक लेख लिखा है। वह वहुत गम्भीर और पढ़ने लायक है। इसके अतिरिक्त, उसका लेखक स्वयं इतना प्रभावशाली व्यक्ति है कि उसमें भारतीयोंकी माँगोंको स्वीकृत करानेकी सामर्थ्य है।

जो लोग अंग्रेजी जानते हैं वे इस लेखको अंग्रेजीमें पढ़ लें। हमारे पत्रमें उसका तर्जुमा छापने लायक जगह नहीं है। उसे छापनेकी जरूरत भी नहीं है। उसका एक वड़ा हिस्सा ऐतिहासिक है, जिसे सव भारतीय जानते हैं।

१. मामलेकी पहली सुनवाईके लिए देखिए "जोहानिसवर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ४।

लेखमें ध्यान देने योग्य बात यह है कि उसमें हमारी माँगको उचित माना गया है। यह भी बताया गया है कि जनरल स्मट्सने कानूनको रद करनेका विचार किया था। सरकारपर सत्याग्रहका दबाव बहुत अधिक पड़ा है, इस बातका भी उल्लेख है। संक्षेपमें, उस लेखसे यह बात निश्चित रूपसे सिद्ध हो जाती है कि सरकारको सत्याग्रहकी शक्तिके सम्मुख झुकना ही पड़ेगा। यह सब महत्त्वपूर्ण है। किन्तु सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात तो यह बताई गई है कि अबतक सरकारके न झुकनेका कारण क्या है। फिर, श्री डंकन साफ-साफ बताते हैं कि शिक्षित भारतीयों [के प्रवेश] का प्रश्न बहुत गम्भीर है। मुख्य प्रश्न यह है कि उनको कानूनमें गोरोंके समान प्रवेशकी छूट दी जाये या नहीं। यह कैसे दी जा सकती है? श्री डंकन कहते हैं कि यदि दक्षिण आफ्रिकामें मुख्यतः गोरोंको ही आबाद करना है तो यह छूट नहीं दी जा सकती। इसके सिवा, श्री डंकन कहते हैं कि यह प्रश्न ट्रान्सवालका ही नहीं, बल्कि पूरे दक्षिण आफ्रिकाका है। यह समझकर ही साम्राज्य-सरकारने प्रवासी कानूनको मंजूर किया है। इसी खयालसे सब गोरे लड़ते हैं और अभीतक लड़ रहे हैं। यदि ट्रान्सवालके भारतीय लड़ाई छोड़ दें तो केप, नेटाल और रोडेशियामें वही कानून बन जायेगा। यदि ट्रान्स-वालके भारतीय लड़ाई चलाते रहेंगे तो पूरे आफ्रिकामें वैसा कानून नहीं बन सकेगा। श्री डंकनने इन विचारोंको बहुत विस्तारसे व्यक्त किया है। इससे यह अनुमान होता है कि सम्मेलनका निर्णय होनेपर ही भारतीय प्रश्नका समाधान होगा।

किन्तु इससे पहले तो यह आवाज सुनाई देती है कि सत्याग्रहका आन्दोलन बिखर गया है। यदि सत्याग्रह ही नहीं चलता तो फिर हमें सम्मेलनसे क्या? सम्मेलन कुछ भी क्यों न करें, किन्तु लड़ाई बन्द न होगी। सब भारतीय दो वर्ष तक लड़े। उन्होंने लड़ाईका स्वाद चखा। उसकी कुछ विशेषता उन्होंने देखी। सम्भव है, अब वे लड़ाईको छोड़ दें, किन्तु बहुत-से भारतीयोंके लड़ाई छोड़ देनेसे भी लड़ाई बन्द नहीं हो सकती। वह तो तबतक चलती रहेगी जबतक एक भी लड़नेवाला होगा। किन्तु जो भारतीय अभीतक झुके नहीं हैं, उनका ध्यान श्री डंकनके इस लेखकी ओर खींचना हमारा कर्तव्य है; और उन्हें श्री डंकनके शब्दोंको ध्यानमें रखते हुए लड़ाई जारी रखनी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–२–१९०९

१२१. श्री दाउद मुहम्मदकी देशसेवा

श्री दाउद मुहम्मद लगभग पकी उम्रमें कौमकी अनोखी सेवा कर रहे हैं। वे जेलके भयको जीत चुके हैं। उन्हें निर्वासित किया जाता है तो उसका भी भय नहीं मानते बहुत-से लोगोंसे उन्होंने हँसते-हँसते यह कहा है: "सरकार मुझे सीमान्तपर जहाँ चाहे वहाँ छोड़े।" दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके लिए अब बार-बार जेल जाना, और पैसे-टकेकी परवाह न करना कोई अनोखी बात नहीं है। श्री सोराबजीकी, जिनसे सत्याग्रहका दूसरा दौर शुरू हुआ, मूल्यवान सेवाओंके सम्बन्धमें हम पहले ही लिख चुके हैं।[1] क्या जेलमें और क्या बाहर, वे चुपचाप अपना काम करते ही जाते हैं। परन्तु इस बार हमें श्री दाउद मुहम्मदकी सेवाओंके सम्बन्धमें विशेष रूपसे लिखना है। मनुष्यके कामका मूल्य दो प्रकारसे आँका जा सकता है। एक तो उस कामके मूल महत्त्वकी दृष्टिसे, और दूसरे उसके परिणामकी दृष्टिसे — अर्थात् दूसरे मनुष्यपर उस कामका क्या असर होगा, उसकी तुलना करके। इस परिणामी मूल्यकी दृष्टिसे श्री दाउद मुहम्मदकी सेवाओंको कोई नहीं पा सकता। बात इतनी ही नहीं है कि श्री दाउद मुहम्मद नेटाल भारतीय कांग्रेसके अध्यक्ष हैं। वे दक्षिण आफ्रिकाके बहुत ही पुराने निवासी भी हैं। उनकी समझदारीका मुकाबला कर सकें, ऐसे बहुत कम भारतीय दक्षिण आफ्रिकामें होंगे। वे ऐसे होशियार हैं कि यदि वे अंग्रेजी पढ़े-लिखे होते तो आज किसी बड़े पदका उपभोग करते होते। उनकी व्यंग्य-शक्ति इतनी अच्छी है कि उससे बहुत-से लोग सहज ही प्रभावित हो जाते हैं। उन्होंने बहुत अनुभव प्राप्त किया है। उन्होंने सैकड़ों रुपये लोगोंमें लगाये हैं। अपनी वाणी अथवा धनसे उन्होंने अनेक लोगोंका उपकार किया है। वे खुद पक्के मुसलमान हैं और सूरती लोगोंमें उनकी प्रतिष्ठा बहुत अधिक है। इन कारणोंसे उनके कामका परिणामी मूल्य बहुत बड़ा हो गया है। हम नहीं मानते कि दक्षिण आफ्रिकाका कोई भी भारतीय श्री दाउद मुहम्मदको जेलमें रहने देकर अपने-आपको सुखी मान सकता है। उनके जेलमें रहनेसे लड़ाईको लगातार जारी रखना भारतीय समाजका कर्तव्य हो गया है। इससे पाठक समझ सकते हैं कि श्री दाउद मुहम्मदका काम बहुत बड़ा है; और हम आशा करते हैं कि प्रत्येक भारतीय ऐसा ही समझकर यथाशक्ति प्रयत्न करेगा और लड़ाईमें मदद देगा। यदि ऐसा किया जाये तो हम समझते हैं कि श्री दाउद मुहम्मद और उनके साथियोंको जेलमें कदाचित छ: मास भी नहीं बिताने पड़ेंगे। और यदि बिताने भी पड़ें और उसके बाद फिरसे जेल जाना पड़े, तो उससे भी क्या होता है? उससे उनकी कीर्ति और अधिक स्थायी होगी; और हम लोगोंकी, जो जेलके बाहर हैं, अपकीर्ति होगी। कौन भारतीय जेलके बाहर रहकर अपकीर्तिका पात्र होना चाहता है?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–२–१९०९

१. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ३७२, ३९३ और ४२१।

१२२. रोडेशियाकी जीत

हम इस अंकमें यह खबर दे रहे हैं कि रोडेशियामें ट्रान्सवालके ढंगका जो कानून बनाया गया था, उसे स्वीकृति नहीं दी गई है। इस कानूनका अस्वीकृत होना कोई छोटी बात नहीं है। हमें पाठकोंको स्मरण करा देना चाहिए कि इस विधेयकके विरुद्ध जो अर्जी दी गई थी उसमें कानून पास कर दिये जानेपर भारतीय उसे स्वीकार न करेंगे, इस आशयका प्रस्ताव था। सभी समझ सकते हैं कि इस कानूनके अस्वीकृत होनेका मुख्य कारण ट्रान्सवालकी लड़ाई है। भारतीयोंकी नई शक्तिसे ब्रिटिश सरकारको बहुत सचेत होकर काम करना पड़ता है। हम आशा करते हैं कि भारतीय इस प्रकार प्राप्त की हुई शक्तिको एकदम खो नहीं देंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–२–१९०९

१२३. ट्रान्सवालसे बाहरके भारतीयोंका कर्तव्य

जान पड़ता है, ट्रान्सवालकी लड़ाई लम्बी चलेगी। उसी प्रकार यह भी लगता है कि अब उस लड़ाईमें भाग लेनेवाले भारतीय बहुत कम रहेंगे। उनकी मदद करना ट्रान्सवालसे बाहरके भारतीयोंका दोहरा कर्तव्य हो गया है। वे सार्वजनिक सभाएँ करके, उनमें प्रस्ताव पासकरके मदद कर सकते हैं। इससे दो उद्देश्य सिद्ध होंगे — एक तो यह कि जो गिरे नहीं हैं उनको प्रोत्साहन मिलेगा और जो गिर गये हैं वे शायद फिर उठेंगे। दूसरे यह कि उनकी सभाओं और उनके प्रस्तावोंसे शासक-वर्ग यह समझेगा कि लड़ाईको चालू रखनेमें सब भारतीयोंकी सहमति है। प्रस्ताव पास करनेके अलावा रुपया इकट्ठा करनेकी जरूरत है। यह नहीं कहा जा सकता कि ट्रान्सवालमें इस रुपयेकी कितनी जरूरत होगी। लेकिन इंग्लैंडमें श्री रिचको पैसा भेजना तो बहुत जरूरी है। समिति भविष्यमें चलानी है या नहीं, इसपर हम यहाँ विचार नहीं करते; लेकिन समितिका काम समेटनेमें कुछ नहीं तो छः महीने लग जायेंगे। तबतक समितिको चलानेके अलावा कोई चारा नहीं है। हालमें ट्रान्सवालकी ओरसे श्री रिचको रुपया जा चुका है, इसलिए [फिलहाल] ट्रान्सवालमें और रुपया बचाना मुश्किल है। अतः यह बोझा अब दूसरे उपनिवेशोंके भारतीयोंको उठाना चाहिए। हमारी दृष्टि मुख्यतः नेटालके ऊपर जाती है। नेटाल अबतक इस समितिको चलानेमें भाग लेता आया है। इसलिए हम आशा करते हैं कि वह इसबार भी अपना कर्तव्य पूरा करेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–२–१९०९

१२४. संघर्ष

इस पत्रके पाठक हमारे इस सप्ताहके स्तम्भोंसे देखेंगे कि सरकारने अब उन सत्याग्रहियोंको एक-एक करके पकड़ना शुरू कर दिया है जो शक्तिशाली, विश्वस्त और सच्चे सिद्ध हो चुके हैं। इस सम्बन्धमें हमारा खयाल है कि सरकार सभी दलोंकी ओरसे बधाईकी पात्र है। जिस गतिसे सरकार बढ़ रही है, उससे हम जल्दी ही, यदि सबको नहीं तो अधिकतर, सत्याग्रहियोंको जेलमें पायेंगे। हम झूठोंसे सच्चोंको अलग कर सकेंगे और सरकार स्वयं देख लेगी और उपनिवेशको भी दिखा देगी कि सच्चे सत्याग्रहियोंका उपनिवेशमें एशियाइयोंकी बाढ़से कोई सम्बन्ध नहीं है। वे धोखाधड़ीको बढ़ावा देनेसे कोई सरोकार नहीं रखते। जिस बातकी वे परवाह करते हैं और जिसके लिए वे लड़ रहे हैं, वह है उस समाजकी नेकनामी, जिसके वे सदस्य हैं, और यदि सरकारको ऐसे लोगोंको उनके जीवन-भर जेलमें रखना अनुकूल पड़ता है तो यह सत्याग्रहियोंको भी बहुत अनुकूल पड़ेगा। जेलोंमें रहनेपर भी उनके हाथोंमें समाजका सम्मान सुरक्षित रहेगा। उनकी पवित्र शपथका पालन हो जायेगा। वे जिस धर्मको मानते हैं उसका पालन कर सकेंगे। इससे अधिककी मनुष्यसे आशा नहीं की जा सकती। फिर, सरकार चाहे तो इस बातके लिए अपने-आपको शाबाशी दे सकती है कि उसने सत्याग्रहियोंको ऐसी स्थितिमें ला रखा है कि वे कोई हानि पहुँचा ही नहीं सकते। लेकिन तब संसार आन्दोलनकी धार्मिकताको देख सकेगा, सो भी उस रूपमें जिस रूपमें अन्यथा नहीं देखा जा सकता।

सत्याग्रहियोंके शब्दकोषमें पराजय-जैसा शब्द है ही नहीं। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि सत्याग्रहमें पाशविक बलकी परीक्षा नहीं होती। पाशविक बलकी परीक्षामें एकको तो अवश्य हार माननी पड़ती है।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २०-२-१९०९

१२५. संविधान

संघ-अधिनियमके मसविदेको[1] हम जितनी अधिक बारीकीसे देखते हैं, वह हमें उतना ही कम जँचता है। वह दस्तावेज प्रजातीय पूर्वग्रह, प्रतिक्रियावाद और कमजोर जोड़-तोड़की गंधसे भरा हुआ मालूम होता है। हम उसे जितना पढ़ते हैं, उतना ही लगता है कि उसमें कोई सिद्धान्त नहीं है। उससे प्रकट होता है कि केपमें रंगदार मतदाताओंके मताधिकार छीननेकी बहुत बड़ी कोशिश की गई थी। और आज संविधानका जो रूप है वास्तवमें उसमें भी उनके मताधिकारसे वंचित किये जानेकी — चाहे थोड़ी ही हो — सम्भावना है। हमें मालूम हुआ है कि साम्राज्य-सरकारने खण्ड ३५ को पहले ही मंजूर कर लिया है। ट्रान्सवालमें हमने जो सबक सीखा है, उसे देखते हुए इसपर हमें कोई अचम्भा नहीं होता। नेटालके भावी रंगदार मतदाताओंका मताधिकार सचमुच छीन लिया गया है। संघ-अधिनियमके मसविदेसे उनके भावी विशेषाधिकार साफ छिन गये हैं और वे बिल्कुल विपत्तिमें पड़ गये हैं। फिर,

१. ड्राफ्ट ऐक्ट ऑफ़ यूनियन।

हालाँकि कुछ समयमें केपका प्रतिनिधित्व बढ़ जायेगा, परन्तु वह केवल यूरोपीय आबादीकी वृद्धिके आधारपर ही बढ़ेगा। रंगदार लोगोंकी उपेक्षा फिर की गई है, और केपके प्रतिनिधियोंकी जो संख्या बढ़ेगी, वह कुछ समय बाद इसी आधारपर वह अन्य उपनिवेशीय सदस्योंकी संख्या बढ़नेसे सन्तुलित हो जायेगी। इस तरह केपका लाभ, लाभ न रह जायेगा। श्री लिटिलटनने संविधानकी टीका करते हुए जब यह आग्रह किया था कि उसपर विचार करते वक्त ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिपर सावधानी और सहानुभूतिसे विचार किया जाये तब वे बहुत अच्छी तरह जानते थे कि उनके आग्रहका मतलब क्या है। लगता है कि उनकी बात सभीपर लागू होती है। स्पष्ट कहें तो अधिक-संगठित-संघकी योजना स्वतः चाहे कितनी ही सराहनीय हो, हम तो यही चाहेंगे कि साम्राज्यको इतना नुकसान पहुँचाकर उसे पूरा करनेके बजाय अनिश्चित वक्त तक टाल दिया जाये। वह बालूकी भीतसे भी ज्यादा कमजोर चीज़ होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०-२-१९०९

१२६. पारसियोंकी बहादुरी

हम तमिल समाजकी बहादुरीके सम्बन्धमें लिख चुके हैं। श्री चेट्टियार जेल पहुँच गये। इस समय बहुत-से तमिल जेलमें हैं, अर्थात् तमिल समाजने अपना तेज अभीतक मन्द नहीं होने दिया है। प्रिटोरिया [समिति] के अध्यक्ष श्री पिल्लेको भी छः महीनेकी सजा मिली है। जैसी बहादुरी तमिल लोगोंने दिखाई है, वैसी ही बहादुरी पारसियोंने भी दिखाई है। यह तो ईश्वरकी अद्भुत महिमा है कि पारसियोंकी आबादी संसार-भरमें एक लाखसे ज्यादा नहीं है, फिर भी यह समाज अपने कुछ उज्ज्वल गुणोंके कारण संसारमें प्रतिष्ठित है। यह कहा जा सकता है कि सच्चे अर्थोंमें भारतमें यही समाज राज्य चलाता है। बम्बई भारतकी वास्तविक राजधानी है और वहाँकी शान-शौकत मुख्यतः पारसियोंकी बदौलत है। उनकी दानशीलता सब जगह जाहिर है। वे राजनीतिक मामलोंमें अगुआ हैं और भारतके राष्ट्रपितामह दादाभाई भी पारसी ही हैं। ऐसे समाजके लोगोंका दक्षिण आफ्रिकामें भिन्न प्रकारसे व्यवहार, करना सम्भव नहीं था। जैसे यह कहा जा सकता है कि समस्त तमिल समाज लड़ रहा है वैसे ही यह भी माना जायेगा कि समस्त पारसी समाज डटा हुआ है। पारसियोंकी संख्या दक्षिण आफ्रिकामें बहुत कम है, लेकिन नजर दौड़ाते हैं तो हमें ट्रान्सवालमें कोई पारसी ऐसा दिखाई नहीं देता जिसने सरकारके इस बेढंगे कानूनको माना हो। नेटालमें बसे पाँच या सात पारसियोंमें से तीन तो ट्रान्सवालकी जेलमें विराजमान हैं। श्री नादिरशाह कामाने अपनी नौकरी छोड़ दी। वे अब गिरफ्तार हो गये हैं और हमें आशा है कि थोड़े ही दिनोंमें जेलमें जा विराजेंगे। उनके भाई श्री अर्देशर कामा भी गिरफ्तार हो गये हैं। दूसरी ओर श्री मुल्ला बापू फीरोज भी पकड़े जा चुके हैं। यह दूसरे सब लिए शिक्षा लेने योग्य भारतीयोंके है। हम पारसी समाजको बधाई देते हैं। उनकी शोभा सारे भारतीयोंकी शोभा है, क्योंकि वे भी भारतीय हैं। तमिल और पारसी लोगोंके सामने दूसरे भारतीयों — मुसलमानों और

गुजराती हिन्दुओं — को अपना सिर झुका लेना चाहिए और शर्मिन्दा होना चाहिए। इन दो समाजोंके उदाहरण जब हमारे घरमें ही मौजूद हैं, तब हम भारतीयोंको दूसरे उदाहरण देकर क्या जोश दिलायें? तमिल और पारसी तो जीत गये और जब लड़ाईका अन्त होगा तब सारा भारतीय समाज उसका लाभ उठायेगा; लेकिन जीतका यश तो उन्हींको देना ठीक होगा। वे ही राजा होंगे और राज्जपद उन्हींको शोभा देगा। हम दूसरे लोग प्रजा माने जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०-२-१९०९

१२७. क्या भारतीय झुक जायेंगे?

हम अखबार उठाते ही देखते हैं कि मैक्सिकोमें नाटक देखने गये हुए ५०० लोग नाट्य-शालामें आग लग जानेसे जल मरे। इंग्लैंडमें डरहमकी खानमें विस्फोट होनेके कारण २०० मजदूर दब मरे। अभी कुछ ही दिन पहले यह भी देखा था कि भारी वर्षाके कारण जोहानिसबर्गके पासकी खानोंमें पानी भर जानेसे बहुत-से लोग मर गये।

ऐसी दैवी चेतावनियाँ हम लोगोंको समय-समयपर मिलती ही रहती हैं, फिर भी हम अपने निश्चित कर्तव्योंको करनेसे पीछे हट जाते हैं। या तो धन जानेके भयसे, या शारीरिक जोखिमसे या ऐसी ही दूसरी बाधाओंके कारण हम अपने द्वारा निश्चित कार्योंको पूरा नहीं करते। जिस शरीरका घड़ी-भरका भी भरोसा नहीं है उसकी सार-सँभालमें हम दिन-रात तल्लीन रहते हैं। ऐसे ही कारणोंसे ट्रान्सवालके भारतीय भी आज, जबकि बहुत-कुछ किनारे लगनेका अवसर आ गया है, पीछे लौटने लगे हैं। यह ऐसी बात है जो भारतीयोंको शोभा नहीं देती, फबती नहीं। हमारे विरुद्ध सबसे बड़ा आरोप यह लगाया जाता है कि हममें पौरुष — दम — नहीं है। हम कुछ दिनों बहुत मेहनत करते हैं और फिर बैठ जाते हैं, अथवा यदि कुछ करते भी हैं तो मनमें चोरी रखकर करते हैं। अब इस आरोपको झूठा कर दिखाना भी ट्रान्सवालकी लड़ाईका एक अंग माना जा सकता है। यह लड़ाई ऐसी है जिसमें भारतीयोंके बहुत-से गुणों या दोषोंकी कसौटी हो जायगी। इसलिए सामान्यतः इसमें बहुत-सी बातें आ जाती हैं।

भारतीयोंको यह समझ लेना है कि इस लड़ाईमें न एक-दूसरेकी ओर देखना है, और न एक-दूसरेकी ओर अँगुली दिखाना है। प्रत्येकको अपनी-अपनी हिम्मतको कसौटीपर कसना है। हमें याद रखना है कि हम जिन लोगोंके विरुद्ध लड़ रहे हैं वे खुद भी कठिन कष्टोंमें से गुजर चुके हैं। अभी सिर्फ ३०० साल पहले इस जातिके वीर पुरुष जल मरते थे, लेकिन अपनी टेक नहीं छोड़ते थे। जॉन बनियन[1] नामके एक धर्मात्मा हो गये हैं। आज उन्हें गोरे पूजते हैं। लेकिन उन्होंने अपने जीवनमें महान दुःख सहकर बारह वर्षका कठिन कारावास भोगा था। उन दिनोंकी जेल बिल्कुल अन्धकूप ही होती थी। जॉन बनियनने जो कष्ट सहन किये, वे केवल अपनी टेक रखनेके लिए ही। उन दिनों लोग किसी खास गिरजेमें नहीं जाते थे तो उनको कैद कर लिया जाता था। जॉन बनियनने कहा कि उन्हें बड़ेसे-बड़े गिरजेमें भी कोई जबरदस्ती नहीं ले जा सकता। इसीसे उन्हें जेलकी सजा भोगनी पड़ी। वे जेलको

१. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ४८९।

महल समझकर रहे। वहाँ उन्होंने जो पुस्तक लिखी आज उसको लाखों गोरे अत्यन्त श्रद्धा-पूर्वक पढ़ते हैं। ऐसा माना जाता है कि वैसी पुस्तकें दूसरी भाषाओंमें बहुत कम हैं। जॉन बनियनने इसकी परवाह नहीं की कि दूसरे लोग क्या करेंगे। उन्हें तो अपनी टेक रखनी थी, सो उन्होंने रखी, और जेलमें रहे। फिर भी, वे जीते। उन्हें जेलमें रखनेवाले लोगोंको आज भी दुनिया धिक्कारती है। इसके अतिरिक्त जॉन बनियन-जैसे मनुष्यके जेल जानेसे अन्य लोगोंको छुटकारा मिला। ऐसे व्यक्तिकी जातिके साथ हमारा पाला पड़ा है। हम तो मानते हैं कि यह हमारे लिए बड़े भाग्यकी बात है। हमें अपनेसे ओछी टेकवाले लोगोंसे टेककी सीख नहीं लेनी है। गीदड़से भाईचारा जोड़कर हम गीदड़ ही रहेंगे; और सिंहकी संगतिमें हमें या तो मर मिटना है या सिंहकी तरह ही गर्जन करना है। हमारा पाला सिंह जैसे गोरोंसे पड़ा है। वे हमपर बहुत जुल्म ढाते हैं! अगर हम सीधा सोचें, और उनसे टक्कर लें तो हमें दासता नहीं भोगनी पड़ेगी और हम ट्रान्सवालमें मुक्त रहकर उनकी बराबरीके बनेंगे। इस लड़ाईमें इतनी वीरताकी गुंजाइश है, जिससे हम उनकी बराबरीके बन सकते हैं। इस साहसकी सफलताके लिए आवश्यकता है सच्चे ज्ञान और सच्ची शिक्षा की। वह ज्ञान अक्षर-ज्ञान नहीं है और न वह शिक्षा बड़ी-बड़ी किताबोंको पढ़नेमें है। वह ज्ञान और शिक्षा इस बातमें है कि हम कौन हैं, यह समझें, यह जानें और इसे समझकर उसके अनुसार बनें और रहें।

हमारी जोहानिसबर्गकी चिट्ठीसे प्रकट होगा कि अब सरकारने जोरोंसे धर-पकड़ शुरू कर दी है। जो भी आदमी दृढ़ माना जाता है, उसे वह पकड़ लेती है। हम गिरफ्तार किये गये लोगोंको बधाई देते हैं। हम ईश्वर, खुदासे प्रार्थना करते हैं कि उनमें अन्त तक लड़नेकी हिम्मत बनी रहे। उनके साहससे ट्रान्सवालके भारतीयोंका, दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंका — सच देखा जाय तो, समस्त भारतके लोगोंका — भविष्य उज्ज्वल होगा। यदि वे थोड़े हैं तो इससे उन्हें डरना नहीं है। फिलहाल यह बात स्पष्ट है कि जो लोग गिरफ्तार नहीं हुए हैं वे हार ही गये हैं। और सामान्यतः यह समझा जा सकता है कि उन्होंने सरकारसे समझौता कर लिया है। यह सच है कि अभीतक कुछ जोरदार भारतीय भी नहीं पकड़े गये हैं। उनको भी धीरे-धीरे पकड़ लिया जायेगा। किन्तु समय ऐसा आ रहा है कि अब प्रायः सभी सच्चे सत्याग्रही जेलमें विराजेंगे। इसलिए हमारी खास सलाह है कि जो पूरा जोर लगाना चाहते हैं वे निर्भय होकर बाहर निकल पड़ें। उनको यह चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है कि उनके पीछे काम करनेवाला कौन रहेगा। आगे-पीछे, अगल-बगल, ऊपर-नीचे सब स्थानोंमें परमेश्वर तो है ही। उसीका भरोसा है। वही व्यवस्था करेगा। फिर मानवीय सार-सँभालकी क्या जरूरत है? हमारी बिसात ही क्या है? बहादुर श्री अस्वात कुछ समयमें जेल पहुँच जायेंगे। और हमें आशा है कि उनके बाद एकके पीछे एक अध्यक्षोंका ताँता बँध जायेगा। हम फिर याद दिलाते हैं कि जो भारतीय गिर गये हैं वे दुबारा गर्जन करके उठ सकते हैं। वे अपने परवाने फाड़ डालें, अपने प्रमाणपत्रोंकी होली जला दें। बस, वे स्वतन्त्र हो जायेंगे।

लड़ाई लड़नेकी जैसी सुविधा ट्रान्सवालमें है वैसी हमने कहीं दूसरी जगह नहीं देखी। भारतीय ऐसे सुन्दर अवसरको क्यों न पहचानें और पहचानकर छोड़ क्यों दें, यह हम समझ ही नहीं सकते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०-२-१९०९

१२८. हवा चली

अखबारोंसे खबर मिली है कि जो काम नेटालके भारतीय कर सकते थे, उसे अब दार-ए-सलामके भारतीय करना चाहते हैं। दार-ए-सलामके भारतीय जर्मन पूर्वी आफ्रिका लाइनके जहाजोंका बहिष्कार करना चाहते हैं,[1] क्योंकि यह कम्पनी पहले दर्जेमें भारतीय यात्रियोंको नहीं लेती और लोगोंका सामान आदि खो जाये तो सुनवाई नहीं करती। रायटरका एक ऐसा तार बर्लिनसे आया है। व्यापारियोंने अपना माल इस कम्पनीके जहाजोंमें न मँगानेका विचार किया है और यहाँतक कहा है कि कम्पनीके कर्मचारी सम्मानपूर्वक बरताव न करेंगे और कायदेसे न चलेंगे तो वे अपने खास जहाज रखकर उनसे काम लेंगे। इस प्रकार हम देखते हैं कि चारों ओर आत्मसम्मानकी — स्वदेशभक्तिकी — हवा बह रही है। सबको ऐसा लग रहा है कि दुनियामें एक देशके लोग दूसरे देशके लोगोंसे स्पर्धा कर रहे हैं। उसमें यदि भारतीय अपना सिर ऊँचा न करेंगे और सावधान न रहेंगे तो पिस्सूकी तरह कुचले जायेंगे और ऐसा हाल हो जायेगा कि उन्हें कोई कौड़ीके मोल भी नहीं पूछेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–२–१९०९

१२९. फोक्सरस्टमें मुकदमा[2]

फोक्सरस्ट

गुरुवार [फरवरी २५, १९०९]

आज सर्वश्री मो० क० गांधी, सोमाभाई पटेल और छः दूसरे लोगोंको पंजीयन प्रमाणपत्र[3] पेश करने और अँगुलियोंकी छाप देने या शिनाख्तके दूसरे साधन प्रस्तुत करनेसे इनकार करनेपर विनियमोंके अनुसार पचास पौंड जुर्मानेकी या तीन महीनेकी कड़ी कैदकी सजा दी गई। सभी जेल चले गये।

श्री गांधीने अदालतमें बयान देते हुए कहा:

यह मेरी बदनसीबी है कि मुझे एक ही आरोपमें दूसरी बार अदालतमें पेश होना पड़ा है।[4] मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि मैंने इरादतन और जान-बूझकर यह अपराध किया है। मैंने ईमानदारीसे चाहा है कि पिछले अनुभवको देखते हुए अपने आचरणको जाँचूँ; और मैं अपने इस नतीजेपर कायम हूँ कि मेरे देशवासी चाहे जो करें या सोचें, मुझे तो राज्यके एक नागरिकके रूपमें और अपनी अन्तरात्माको सबसे ऊपर माननेवाले व्यक्तिके रूपमें तबतक सभी सजाएँ भोगते रहना चाहिए जबतक राज्य अपने नागरिकोंके एक वर्गके साथ, न्यायकी

१. देखिए खण्ड ७, पृष्ठ ३१३ और ४२४-२५।

२. मुकदमेका यह विवरण "हमारे निजी संवाददाता द्वारा प्रेषित" रूपमें छापा गया था। इसका शीर्षक था: "श्री गांधी जेल गये; इज्जत और ईमान छोड़नेसे इनकार करनेपर तीन महीनेकी कड़ी कैद।"

३. रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट।

४. पहले मुकदमेके लिए देखिए पृष्ठ १०५-६।

मेरी अपनी धारणाके अनुसार, न्याय नहीं करता। यदि मेरा यह आचरण निन्दनीय समझा जाये, तो इस एशियाई संघर्षमें मैं अपने-आपको सबसे बड़ा अपराधी मानता हूँ। इसलिए मुझे खेद है कि मुझपर एक ऐसी धाराके अनुसार मुकदमा चलाया जा रहा है जिसमें मैं अपने लिए वही सजा नहीं माँग सकता जो मेरे कुछ साथी आपत्तिकर्ताओंको दी गई है। फिर भी मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे ज्यादासे-ज्यादा सजा दें। अदालत और सरकारी वकीलने मेरी पत्नीकी बीमारीकी वजहसे मुझे इतनी देर करनेकी मंजूरी देकर जो शिष्टता दिखाई है, उसके लिए मैं उनको धन्यवाद देना चाहता हूँ।

मजिस्ट्रेटने सजा देते हुए कहा : मैंने पहले भी कहा है कि यह अपनी-अपनी रायकी बात है। आपकी अपनी राय है। मैं तो कानूनके मुताबिक ही कार्रवाई कर सकता हूँ। चूँकि आप नहीं चाहते कि आपके साथ दूसरी तरहका बरताव किया जाये, इसलिए मैं आपसे वही बरताव करूँगा जो मैंने इस स्थितिमें पड़े दूसरे लोगोंके साथ किया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–२–१९०९

१३०. सन्देश : दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको[1]

[जोहानिसबर्ग
फरवरी २५, १९०९]

मैं फिर जेल जा रहा हूँ, इससे मुझे बड़ी खुशी हुई है। दुःख इतना ही है कि मुझ केवल तीन ही महीनेकी सजा मिली है, जब कि दूसरे सत्याग्रही देशसेवकोंको छः-छः महीनेकी मिली है।

आज जब मैं जेल जा रहा हूँ तब देखता हूँ कि बहुत-से भारतीय पस्त हो गये हैं। अब थोड़े ही भारतीयोंको लेकर लड़ाई चलानी है। इससे मैं निडर हूँ। अब लड़ाई कुछ हद तक ज्यादा जोर पकड़ सकती है।

जो लोग पस्त हो गये हैं वे फिर उठ सकते हैं और जेल जा सकते हैं। वे उठेंगे, ऐसी आशा रखता हूँ।

यदि फिर नहीं उठ सकते तो भी वे पैसेकी मदद दे सकते हैं और अखबारोंमें लिख सकते हैं कि हार जानेपर भी वे लड़ाईमें साथ हैं और उसकी सफलता चाहते हैं।

ट्रान्सवालके बाहरके पढ़े-लिखे लोग यहाँ आकर जेल जा सकते हैं। यदि वे ऐसा न करें तो वे जहाँ हों वहाँ रहकर सभाओंमें स्वयंसेवकोंका काम कर सकते हैं। दक्षिण आफ्रिकाके सब भारतीयोंका कर्तव्य है कि वे सभाएँ करें, तार दें और प्रस्ताव पास करें।

यह लड़ाई दीनकी है, धर्मकी है, अर्थात् जो धर्म सब धर्मोंमें व्याप्त है, यह उस धर्मकी लड़ाई है। यदि मेरी मान्यता ऐसी न होती तो मैं समाजको इस महा दुःखमें पड़नेकी सलाह न देता। मैं मानता हूँ कि इस लड़ाईमें अपने सर्वस्वकी आहुति देना भी कठिन नहीं होना

१. यह २५ फरवरीको, जिस दिन गांधीजी जेल गये थे, लिखा गया मालूम होता है। देखिये अगला शीर्षक भी।

चाहिए। इसमें अपने सगे-सम्बन्धियोंकी, पैसे-टकेकी और अपनी जानकी कुर्बानी करना प्रत्येक भारतीयका कर्तव्य है। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि इस कर्तव्यको सब भारतीय पूरा करें, और भारतीयोंसे भी मैं यही माँगता हूँ।

लड़ाईको जल्दी खत्म करना भी हमारे ही हाथमें है।

समाजका सेवक और सत्याग्रही,
मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, ६–३–१९०९

१३१. संदेश: तमिल भाइयोंको[1]

[फोक्सरस्ट
फरवरी २५, १९०९]

अपने तमिल भाइयोंसे

संघर्षके दौरान तीसरी बार
जेल जानेके पूर्व

मैंने अपने देशभाइयोंको गुजरातीमें एक पत्र[2] लिखा है। किन्तु सुन्दर तमिल भाषाका पर्याप्त ज्ञान न होनेके कारण आपको मैं अंग्रेजीमें लिख रहा हूँ। आशा करता हूँ कि मेरी बात आपमें से कुछ लोगों तक तो पहुँच ही जायेगी। संघर्ष अब अत्यन्त नाजुक स्थितिमें पहुँच गया है। भारतीय समाजके दूसरे वर्गोंके अधिकतर लोग बहुत कमजोर होनेके कारण हार गये हैं, परन्तु तमिल और पारसी समाजोंके अधिकतर लोग मजबूतीसे डटे हुए हैं। इसलिए लड़ाईका मुख्य भार उनके ही कन्धोंपर पड़नेवाला है। मैं प्रभुसे प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको यह भार उठानेका पर्याप्त बल दे। आपने अपना कर्तव्य शानसे निबाहा है। याद रखिए कि हम प्रह्लाद और सुधन्वाकी सन्तानें हैं। वे दोनों ही शुद्धतम ढंगके सत्याग्रही थे। जब उनसे कहा गया कि वे ईश्वरको न मानें, उन्होंने अपने माता-पिताओंकी आज्ञा भी नहीं मानी। उन्होंने अपने उत्पीड़कोंको कष्ट देनेके बजाय स्वयं घोर कष्ट सहे। ट्रान्सवालवासी भारतीयोंसे जहाँतक अपने पुंसत्वका परित्याग करने, अपनी प्रतिज्ञासे पीछे हटने और अपने राष्ट्रका अपमान मंजूर करनेके लिए कहा जाता है, वहाँतक ईश्वरको माननेसे इनकार करनेके लिए ही कहा जा रहा है। क्या हम वर्तमान संकटमें अपने पूर्वजोंसे कम उतरेंगे?

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ६–३–१९०९

१. यह सन्देश ६ मार्च १९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में "मद्रासियोंको सन्देश: श्री गांधीका अन्तिम आग्रह" शीर्षकसे छपा था। **आफ्रिकन क्रॉनिकल**ने इसका तमिल अनुवाद ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघकी मार्फत मुफ्त बँटवानेके लिए परिशिष्टके रूपमें प्रकाशित किया था।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

१३२. पत्र: श्रीमती चंचलबेन गांधीको

फोक्सरस्ट जेल
ट्रान्सवाल
फरवरी २६, १९०९

चि० चंचल,

तुम्हारा पत्र बिल्कुल ही नहीं है, इससे मैं खिन्न हूँ। देखता हूँ, बाकी तबीयत ठीक होती जा रही है। उसको अच्छे-अच्छे लेख और अच्छे-अच्छे काव्य पढ़कर सुनाना। बासे पूछकर मुझे बराबर पत्र लिखा करो। उसमें तुम और मणिलाल सही किया करो। बाके विचार पूछकर वे जो कहें वह भी लिखा करो।

तुम अपनी तबीयतकी खबर देना और अपने दाहिने कान, पैर तथा खाँसीकी हालत बताना।

खानेमें मैंने जो फेरफार किया है, उसे आज्ञारूप समझकर उसका पालन करना। दूध और सागूदानेकी खीर नियमसे लेना। रामीको अभी थोड़े दिन दूध पिलाती रहना। दूध पिलाना बन्द करनेके बाद भी ठीक खुराक लेती रहना। जबतक खुली हवा नहीं मिलेगी तबतक तबीयत बिल्कुल ठीक नहीं होगी। अधिक कुछ लिखनेको नहीं है।

बिलीसे[1] कहना कि उपद्रव बिल्कुल न करे। रामदासका गला खराब हो तो मिट्टीकी पट्टी बाँधना।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्चः]

हरिलाल और मैं दोनों मजेमें हैं। तुमसे हम यहाँ ज्यादा सुखी हैं, ऐसा मानना। यह पत्र बाको पढ़ा देना।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५२५) से।

१. कॉर्डिजका पुत्र।

१३३. एम० ए० की परीक्षा

ट्रान्सवालकी लड़ाईपर बहुत-कुछ निर्भर है, इसलिए उसके सम्बन्धमें हम बहुत और बार-बार लिख रहे हैं। यही ठीक लगता है। हम सब भारतीयोंसे निवेदन करते हैं कि ऐसी लड़ाई भारतीय समाजके हाथ फिर नहीं आयेगी। लड़ाई यहाँतक पहुँची है, यह मामूली बात नहीं है।

लेकिन, कुछ भारतीय सोचते हैं: "सैकड़ों भारतीय हार गये हैं; अब क्या लड़ें?" इसे हम नासमझी मानते हैं। जैसे कुछ भारतीय हारे हैं; वैसे ही दूसरे सैनिक दलोंमें भी कुछ लोग हारते आये हैं। इसमें कोई नई बात नहीं है।

इस बारकी लड़ाई एक तरहसे हमारी परीक्षा है। हम पढ़ रहे हैं। सब पढ़नेके लिए तैयार हुए। पहली पोथी हजारोंने पढ़ी। दूसरी पोथी पढ़ते-पढ़ते कुछ लोग ढीले पड़ गये। वे रह गये। इस तरह करते-करते हम सातवीं पोथी तक पहुँचे। अब तो कठिन समय आ गया। बहुत-से लोगोंने पढ़ाई छोड़ दी। फिर भी खासे लोग मैट्रिक तक पहुँच गये। लेकिन इससे आगे बढ़नेकी हिम्मत कुछ ही लोगोंको हुई। इसके बावजूद अच्छी संख्यामें लोग आगे बढ़े।

अब यह आखिरी सीढ़ी है। इसमें तो एम० ए० की उपाधि लेनी है। यह तो सैकड़ों लोग नहीं लेते। कुछ ही ले सकते हैं। तो क्या दूसरे लोग परीक्षा नहीं देते, इसलिए परीक्षा देनेवाले हारे हुए कहलायेंगे? यह तो कभी नहीं हो सकता। जो एम० ए० हो गये वे तो जीते ही; लेकिन इतना ही नहीं, उनके पीछे जो दूसरे लोग रहे, वे भी दमक कर निकलेंगे।

इस प्रकार हम इस समय बचे सत्याग्रहियोंको एम० ए० के परीक्षार्थियोंका रूप देते हैं। उनको निराश नहीं होना चाहिए; बल्कि अबतक जमे रहनेपर गर्व करना चाहिए। समाजमें बहुत पढ़े-लिखे लोग कम ही होते हैं। लेकिन, कम होनेपर भी उनसे सहायता अधिकसे-अधिक मिलती है। ट्रान्सवालमें ऐसी ही स्थिति है। फिर चाहे जो भारतीय इस समय लड़ रहे हैं वे कम ही रह गये हों, लेकिन उनकी सहायताको बहुत समझना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–२–१९०९

१३४. नेटालसे सहायता

नेटालमें ट्रान्सवालकी लड़ाईको प्रोत्साहन देनेके लिए सभा करनेपर हम [नेटाल भारतीय] कांग्रेसको बधाई देते हैं। हमारे मतसे उस सभामें उपस्थिति कम थी, उत्साह भी कम था और सभा जितनी जल्दी करनी थी उतनी जल्दी नहीं की गई। इसलिए हम यही समझकर सन्तोष मानते हैं कि "मामा न होनेसे काना मामा होना ठीक"। लेकिन नेटालके नेताओंने जितना कम किया उनकी उतनी कमी तो मानी ही जायेगी।

हम ऐसा मानते हैं कि उन्हें सभा करके बैठ नहीं जाना चाहिए। जितने लोगोंको गिरफ्तार करना है उतनोंको गिरफ्तार करके सरकार बैठी-बैठी तमाशा देखेगी। किन्तु ट्रान्सवालसे बाहरके भारतीय बैठे नहीं रह सकते। उन्हें हमेशा भारतको खबरें भेजनी पड़ेंगी, तार देने होंगे, ट्रान्सवालके जो लोग गिर गये हैं उनको उठाना होगा और इस प्रकार लड़ाईको सारी दुनियाके सामने रखना होगा। ऐसा हुआ तो देवता भी देखनेके लिए उतरें, यह ऐसा संग्राम होगा। यदि यह सब नहीं हुआ तो भारतीयोंकी हँसी होगी और थोड़े दिनोंमें उनके पैर दक्षिण आफ्रिकासे उखड़ जायेंगे।

हमने नेटालकी सभाके बारेमें लिखा। ठीक देखें तो सभा केवल डर्बनकी थी। मैरित्सवर्ग कहाँ गया? नेटालके दूसरे शहर कहाँ गये? वे सभाएँ क्यों नहीं करते? मेन लाइनका झगड़ा अभी तय नहीं हुआ। लोग नामके लिए मर रहे हैं और उनके भाई जेलोंमें दिन काट रहे हैं। यह कोई शोभनीय बात नहीं है। मेन लाइनका झगड़ा तय होना जरूरी है। अगर वह तय न हो तो भी नेटालके दूसरे शहरोंमें काम चल सकता है।

जैसा नेटालमें करना उचित है वैसा ही केप और डेलागोआ-बे आदि स्थानोंमें भी किया जाना चाहिए। इन सभी स्थानोंसे इंग्लैंडको तार जाने चाहिए। इस तरह लड़ते वक्त पैसेकी भी जरूरत होगी। उसकी व्यवस्था विधिपूर्वक की जानी चाहिए। प्रत्येक भारतीय अपना कर्तव्य पूरा करे और जैसे अपना काम करता है, वैसे ही समाजका काम करे, तो आश्चर्य न होगा यदि भारतीय राष्ट्रका जन्म दक्षिण आफ्रिकाकी राहसे हो जाये।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–२–१९०९

१३५. पत्र: ए० एच० वेस्टको

प्रिटोरिया जेल
ट्रान्सवाल
मार्च ४, १९०९

प्रिय वेस्ट,

मैं अभीतक बायें हाथसे काम करता हूँ। दायाँ हाथ मुश्किलसे ही काममें ला सकता हूँ।

अधिकारी मुझे श्रीमती गांधीको गुजरातीमें पत्र लिखनेकी अनुमति न देंगे। मुझे उनके लिए और हरिलालकी पत्नीके लिए खेद है। मैं नहीं जानता कि [मेरी] पत्नी मेरा अंग्रेजीमें पत्र लिखना पसन्द करेंगी या नहीं। मैं जानता हूँ कि मैं कोई नई बात नहीं लिख सकता। वे मेरे हाथके लिखेको ही पढ़ना चाहती हैं। मुझे लगता है कि अनिच्छापूर्वक दिये गये अधिकारका लाभ न उठाना अधिक गौरवास्पद है। मुझे आप या मणिलाल अंग्रेजीमें लिख सकते हैं कि उनकी दैनिक प्रगति कैसी है। हरिलालकी पत्नीके सम्बन्धमें भी लिख सकते हैं। यदि अधिकारी चाहेंगे तो मुझे ये पत्र दे देंगे और मुझे रोगीके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें कुछ मालूम हो जायेगा।

कृपया श्रीमती गांधीसे कह दें कि मैं बिल्कुल अच्छा हूँ। वे जानती हैं कि मेरा सुखी होना बाहरी वातावरणकी अपेक्षा मेरी मानसिक स्थितिपर अधिक निर्भर है। वे इस बातका खयाल रखें और मेरे सम्बन्धमें चिन्ता न करें। बच्चोंके हितके लिए वे अपनी तबीयत सुधारनेका प्रयत्न करें। वे पट्टियाँ नियमित रूपसे रखें और आवश्यक हो तो कटि-स्नान भी करें। मैं उन्हें जो खुराक देता था उसपर कायम रहें। उन्हें [घूमना][1] तबतक शुरू न करना चाहिए जबतक बिल्कुल अच्छी न हो जायें।

हरिलालकी पत्नीको सब हिदायतें दे दी हैं। वह उनके मुताबिक चलती है, यह जानकर मुझे खुशी होगी। उसे सुबह सागूदाना और दूध लेना कभी न भूलना चाहिए। वह इनको अवश्य ले, उसका ध्यान मणिलाल रखे। रामीको अभी एक महीने और माँका दूध पीने दें। उसका स्तन-पान धीरे-धीरे ही छुड़ाया जा सकता है।

मुझे बताया गया है कि यदि गुजरातीमें लिखी चिट्ठी मंजूर कर दी जाये तो भी वह मुझे दस दिनसे पहले न दी जा सकेगी।

सबको नमस्कार!

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

१. यहाँ कागज फट गया है।

[पुनश्च :]

कृपया [मेरी] पत्नीके लिए मणिलालसे इसका अनुवाद करा दें।
मुझे भरोसा है, श्रीमती वेस्ट ठीक होंगी।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें पेंसिलसे लिखे मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० ४९७५) से।
सौजन्य : श्रीमती सुशीलाबेन गांधी।

१३६. मसविदा : जेलके गवर्नरको लिखे प्रार्थनापत्रका[1]

[प्रिटोरिया
मार्च ११, १९०९ के बाद]

प्रार्थी एक ब्रिटिश भारतीय है, जो तीन महीनेकी कड़ी कैदकी सजा भोग रहा है।

प्रार्थीको गत सप्ताह व्यालूमें हर रोज भातके साथ एक औंस घी मिलता था। मालूम हुआ है कि यह गलतीसे दिया जाता था। प्रार्थी जेलमें इसी मासकी तीसरी तारीखको लाया गया था।

पिछले रविवारसे व्यालूमें ऊपर लिखे अनुसार जो घी दिया जाता था, वह बन्द कर दिया गया है। प्रार्थीने रविवारको घीके बिना भात खानेका प्रयत्न किया; लेकिन खाना मुश्किल हो गया।

पिछले सोमवारसे प्रार्थीको जो भात मिलता है उसे वह लाचारीसे वापस कर देता है; इसलिए तबसे उसने व्यालू बिल्कुल नहीं किया है।

प्रार्थीने मुख्य वार्डरसे घी न मिलनेकी शिकायत की थी। उसने प्रार्थीको नियम बताये और सुझाव दिया कि प्रार्थी चाहे तो चिकित्सा-अधिकारीसे मिल सकता है।

इसी मासकी ११ तारीखको प्रार्थी चिकित्सा-अधिकारीसे मिला। वह खास रियायतके तौरपर व्यालूमें रोटी देनेका हुक्म जारी करनेको तैयार था।

प्रार्थी इस रियायतकी कद्र करता है। परन्तु वह इसका लाभ नहीं उठा सकता; क्योंकि वह ऐसे भोजनकी कोई सुविधा लेना नहीं चाहता जो उसकी ही स्थितिके अन्य भारतीय साथी-कैदियोंको न मिलता हो।

प्रार्थीको छपी हुई भोजन-तालिका दिखाई गई थी, जिसमें भारतीय कैदियोंके लिए व्यालूके रूपमें भातके साथ एक औंस चर्बी देनेकी व्यवस्था है। नेटालमें भारतीयोंको भोजनमें प्रति सप्ताह दो बार मांस देनेकी भी व्यवस्था है।

प्रार्थीको सूचना दी गई है कि वह तालिका बदल दी गई है और अब भारतीय कैदियोंको व्यालूमें बिना चर्बीके एक [औंस] भात दिया जाता है और [illegible] [illegible] दोपहरके भोजनमें मांसके बजाय एक औंस घीके साथ भात दिया जाता है।

प्रार्थीके लिए, और अधिकतर भारतीयोंके लिए, धार्मिक दृष्टिसे मांस या, [illegible] चर्बी या ऐसी ही अन्य चर्बी खाना वर्जित है। भारतीय मुसलमान बिना हलाल किये हुए

१. यह मसविदा उस समय तैयार किया गया था जब गांधीजी प्रिटोरिया जेलमें थे।

पशुका मांस या उसकी चर्बी नहीं खा सकते। कुछ अपवादोंको छोड़कर भारतीय हिन्दू मांस या चर्बी कतई नहीं खा सकते।

प्रार्थीकी विनीत सम्मतिमें ऊपर वताया गया परिवर्तन और भी बुरा है। कुछ मिलाये विना भात खाना वहुत कठिन है। इसके अतिरिक्त भोजन-तालिका पोषणकी दृष्टिसे अपर्याप्त है, क्योंकि उसमें प्रति सप्ताह केवल दो औंस घी देनेकी तजवीज है।

प्रार्थीने देखा है कि वतनियोंको सप्ताहमें दो वार या कमसे-कम एक वार मांसके अतिरिक्त प्रतिदिन एक औंस चर्बी दी जाती है।

प्रार्थीकी विनीत सम्मतिमें पुरानी तालिका, जिसमें चर्बीकी जगह घी रखा गया है और मांसकी वारीपर मांसके वजाय शाक रखा गया है, फिर लागू करनेसे न्याय हो जाता है।

यदि यह प्रार्थना अनुचित मानी जाये, तो प्रार्थीको भय है, उसके स्वास्थ्यको पर्याप्त पोषणकी कमीसे हानि पहुँचेगी।

प्रार्थी आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर भी आकर्षित करता है कि जिस परिवर्तनकी प्रार्थना की गई है वह जोहानिसवर्ग जेलकी भोजन-तालिकासे मिलता है।

यदि गवर्नरको यह प्रार्थना मंजूर करनेका कानूनन अधिकार (न)[1] हो तो प्रार्थी निवेदन करता है कि यह प्रार्थनापत्र जेल-निदेशकको[2] विचारके लिए भेज दिया जाये।

इसके लिए अनुगृहीत हूँगा।

मो० क० गांधी

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रतिसे।
सौजन्य : एच० एस० एल० पोलक।

१३७. पत्र : मणिलाल गांधीको

कैदीका नाम : मो० क० गांधी
नम्वर (नामके आद्याक्षरोंके साथ) : ७७७

प्रिटोरिया जेल
ट्रान्सवाल
मार्च २५, १९०९

चि० मणिलाल,

मुझे महीनेमें एक पत्र लिखने और एक ही पत्र पानेका अधिकार है। मेरे लिए यह एक समस्या हो गई थी कि किसको लिखूं। मैंने श्री रिचका, श्री पोलकका और तुम्हारा खयाल किया। मैंने तुमको ही चुना, क्योंकि मैं जो-कुछ इन दिनों पढ़ता रहा हूँ, उस सवमें तुम्हारा खयाल सवसे ज्यादा आता रहा है।

अपने सम्वन्धमें मुझे अधिक नहीं कहना चाहिए। कहनेकी मुझे अनुमति नहीं है। मैं विलकुल शान्तचित्त हूँ और किसीको मेरे सम्वन्धमें चिन्तित न होना चाहिए।

१. मालूम होता है कि मूलमें कोष्ठक गलतीसे रह गया है।
२. डायरेक्टर ऑफ प्रिज़न्स।

मुझे आशा है, वा अब बिल्कुल अच्छी होंगी। मैं जानता हूँ कि तुम्हारे कई पत्र आये हैं; लेकिन वे मुझे दिये नहीं गये हैं। फिर भी डिप्टी गवर्नरने यह बतानेकी कृपा की है कि वे [वा] अच्छी हो रही हैं। क्या वे अब आरामसे चलती-फिरती हैं? मैं आशा करता हूँ कि वे और तुम सब सवेरे सागूदाना और दूध लेते रहोगे।

और चंची[1] कैसी है? उससे कहो कि मैं उसे रोज याद करता हूँ। मुझे आशा है कि उसके सब घाव अच्छे हो गये होंगे और वह और रामी बिल्कुल ठीक होंगी। नाथूरामजीने[2] उपनिषदकी जो भूमिका लिखी है उसके एक प्रकरणका मुझपर बहुत प्रभाव पड़ा है। वे कहते हैं कि ब्रह्मचर्य आश्रम, अर्थात् पहला आश्रम अन्तिम, अर्थात् संन्यासाश्रमकी भांति है। यह सत्य है। खेल-कूद केवल भोलेपनकी आयु तक, अर्थात् बारह साल तक रहता है। ज्यों ही किसी लड़केकी समझदारीकी आयु आती है, उसे अपने दायित्वका अनुभव करना सिखाया जाता है। प्रत्येक लड़केको इस आयुके पश्चात् विचार और कर्मसे ब्रह्मचर्यका, उसी प्रकार सत्य और अहिंसाका पालन करना चाहिए। उसके लिए इस ज्ञानको प्राप्त करना, उसपर आचरण करना कष्टप्रद न होना चाहिए, बल्कि बिल्कुल स्वाभाविक होना चाहिए। उसे उसमें सुख अनुभव करना चाहिए। मुझे स्मरण है कि राजकोटमें ऐसे कई लड़के थे। मैं तुम्हें बता दूं कि जब मैं तुमसे छोटा था तब मुझे अपने पिताकी सेवा करनेमें सबसे अधिक प्रसन्नता होती थी।[3] बारह वर्षकी आयुके बाद मेरा खेल-कूद बन्द हो गया था। यदि तुम इन तीन यमो पर[4] आचरण करो और यदि वे तुम्हारे जीवनका अंग बन जायें तो, जहां तक मेरा सम्बन्ध है, तुम्हारी शिक्षा और तुम्हारी दीक्षा पूरी हो जायेगी। मेरी बातपर विश्वास करो, उनसे सज्जित होकर तुम संसारके किसी भी भागमें अपनी आजीविका कमा सकोगे और उससे तुम्हारा आत्मज्ञान — आत्मा और परमात्मा-सम्बन्धी ज्ञान — प्राप्त करनेका मार्ग प्रशस्त हो जायेगा। इसका अर्थ यह नहीं है कि तुम्हें पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त न करना चाहिए। उसे तो तुम्हें प्राप्त करना ही चाहिए, और तुम प्राप्त कर रहे हो। लेकिन यह एक ऐसी बात है जिसके बारेमें तुम्हें परेशान न होना चाहिए। इसके लिए तुम्हारे पास बहुत समय है और आखिर तुम्हें ऐसी शिक्षा मिलनी ही है, ताकि तुम्हारा प्रशिक्षण दूसरोंके लिए उपयोगी हो सके।

याद रखो कि अबसे हमारे भाग्यमें गरीबी बदी है। इसका जितना खयाल करता हूँ उतना ही मैं यह अनुभव करता हूँ कि अमीर होनेसे गरीब होना ज्यादा बड़ी नियामत है। दौलतके फायदोंसे गरीबीके फायदे ज्यादा मीठे होते हैं।

तुमने यज्ञोपवीत ले लिया है। मैं चाहता हूँ कि तुम उसके अनुरूप आचरण करो। ऐसा लगता है कि सूर्योदयसे पूर्व जगना विधिवत् सन्ध्या करनेके लिए लगभग अनिवार्य है। इसलिए नियमित समयपर कार्य करनेका प्रयत्न अवश्य करो। मैंने इस सम्बन्धमें बहुत विचार किया है और कुछ पढ़ा भी है। मैं स्वामीजीके[5] प्रचारसे सम्मानपूर्वक असहमति प्रकट करता हूँ। मेरे

१. चंचलबेन गांधी।

२. सौराष्ट्रके पंडित नाथूराम शर्मा; धार्मिक वृत्तिके एक सज्जन और हिन्दू-तत्त्वज्ञानके अध्येता; इन्होंने गुजरातीमें उपनिषदोंका अनुवाद किया था।

३. देखिए आत्मकथा, भाग १, अध्याय ९।

४. सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य।

५. हिन्दू धर्मके प्रचारक स्वामी शंकरानन्द, जिन्होंने १९०८–९ में दक्षिण आफ्रिकाका दौरा किया था।

खयालसे जिन्होंने युगोंसे यज्ञोपवीत छोड़ दिया है उनका यज्ञोपवीत ग्रहण करना भूल है। इस समय भी शूद्रों और अन्य वर्णोंमें बेहद कृत्रिम भेद हैं। इसलिए यज्ञोपवीत आज सहायक होनेकी अपेक्षा बाधक अधिक है। मैं इस विचारपर अधिक विस्तृत चर्चा करना पसन्द करता; लेकिन इस समय नहीं कर सकता। मैं जानता हूँ कि मैं इन विचारोंको ऐसे व्यक्तिके सामने प्रकट कर रहा हूँ जिसने इस विषयके अध्ययनमें सारा जीवन लगा दिया है। फिर भी मैंने सोचा कि मैं जो-कुछ सोचता रहा हूँ वह स्वामीजी तक पहुँचा दूँ। मैंने गायत्री-मन्त्रका अध्ययन किया है। मैं उसके शब्दोंको पसन्द करता हूँ। मुझे स्वामीजीने जो पुस्तक दी थी, वह भी मैंने पढ़ी है। इसके अध्ययनसे मैंने बहुत लाभ उठाया है। उसने मुझे स्वामी दयानन्दके जीवनके सम्बन्धमें अधिक जिज्ञासु बना दिया है। मैं देखता हूँ कि उनका गायत्री और 'वाजसनेय उपनिषद'के[1] कई मन्त्रोंका अर्थ सनातनधर्मी विद्वानोंके किये हुए अर्थसे बिल्कुल भिन्न है। अब कौन-सा अर्थ सही है? मैं नहीं जानता। मैं स्वामी दयानन्दकी सुझाई भाष्यकी क्रान्तिकारी पद्धतिको तुरन्त स्वीकार करनेमें हिचकिचाता हूँ। मैं स्वामीजीके ही मुँहसे जानना अधिक पसन्द करूँगा। आशा है, मेरे आनेसे पहले वे नहीं जायेंगे; किन्तु यदि वे चले ही जायें तो क्या वे जितना हो सके उतना साहित्य यहाँ छोड़ जाने या भारतसे भेज देनेकी कृपा करेंगे? मैं यह भी जानना चाहूँगा कि सनातनधर्मके विद्वानोंने स्वामी दयानन्दकी शिक्षाके सम्बन्धमें क्या कहा है। स्वामीजीने मुझे जो हाथसे बने मोजे और दस्ताने भेजे हैं, उनके लिए उन्हें धन्यवाद देना और उनका भारतका पता ले लेना। स्वामीजीको यह पत्र पूरा दिखा देना और वे जो-कुछ कहें, मुझे लिखना।

भट्ट केशवरामने मुझे जो उपनिषद् भेंट किये हैं उनके लिए मैंने उन्हें अभी धन्यवाद नहीं दिया है। वह पुस्तक सचमुच अमूल्य सिद्ध हुई है। उससे मुझे बहुत शान्ति मिली है। उन्हें मेरी ओरसे धन्यवादका पत्र लिख देना और मैंने जो-कुछ ऊपर कहा है वह सूचित कर देना।

पाठशालाकी प्रगति कैसी है? कोई दूसरे लड़के आये हैं? इब्राहीम[2] और मणिकम्[3] कैसे हैं? यदि इमारत बन रही हो तो छगनभाई[4] उसके चारों कोनोंपर चार टंकियाँ रखवानेका ध्यान रखें। इस सम्बन्धमें श्री इस्माइल गोरासे मिल लें।

श्री कार्डिज़ कैसे हैं? उनसे कहना कि मेरे फोक्सरस्ट रवाना होनेके दिन श्री कैलेनबैकके घर जो तमाशा हुआ था उसे मैं नहीं भूला हूँ। मुझे अक्सर उसका खयाल आता है; और फिर मैं अपने मनमें सोचता हूँ, "आखिर हम सब कैसे अहंकारी हैं!"

श्रीमती वेस्ट इस समय तक खतरेसे बाहर हो गई होंगी। उनकी, श्रीमती पायवेलकी[5] और देवीबेनकी[6] तबीयत कैसी रहती हैं, मुझे सूचित करना। मेरा विश्वास है कि श्रीमती पायवेल अब भी आश्रममें स्नेहसे सबकी देखभाल कर रही होंगी।

---

१. ईशोपनिषद।

२. इस्माइल गोराके संरक्षणमें रहनेवाला एक छात्र।

३. एक तमिल छात्र।

४. गांधीजीके भतीजे छगनलाल गांधी।

५. ए० एच० वेस्टकी सास।

६. कुमारी वेस्ट, ए० एच० वेस्टकी बहन।

क्या ठाकर[1] आ गया है? यदि आ गया है तो कहाँ रह रहा है? कैसा है? उसकी पत्नी कैसी है?

मुझे आशा है कि काबाभाईका[2] पुत्र बिल्कुल अच्छा होगा, और घोरीभाई[3] तथा नागर[4] अब कामपर लग गये होंगे।

श्री पोलक दफ्तरके आय-व्ययपर निगाह रखें। दादा अब्दुल्ला ऐंड कम्पनीसे बात करनी चाहिए और जो ऋण उसपर है, उसका कुछ हिस्सा चुकानेके लिए कहना चाहिए। आशा है, श्री मैकइनटायर[5] दफ्तरके कामके व्यावसायिक भागको देख रहे होंगे। कुमारी श्लेशिनकी चीजोंके सम्बन्धमें क्या हुआ? मुझे महीनेमें एक मुलाकातीसे मिलनेका अधिकार है। श्री पोलक आ जायें। मैंने जो पुस्तकें मँगाई थीं वे उन्होंने मुझे अबतक नहीं भेजी हैं।

मुझे पुरुषोत्तमदासका[6] पत्र मिला है; किन्तु मैं उसका उत्तर नहीं दे सका हूँ। उन्हें बरामदेमें कठघरा लगवा देना चाहिए। मेरा खयाल है कि फिलहाल दूसरे नये हिस्से बनवानेका काम, अगर वह बिल्कुल ही जरूरी न हो तो रोक रखना चाहिए। उनसे कहना, मुझे आशा है, उनसे मेरी जो बातचीत हुई थी वह उन्होंने अच्छी तरह समझ ली होगी। उन्होंने मेरे मनमें भारी आशाएँ उत्पन्न कर दी हैं; उन्हें इनको पूरा करना है। बेचारी अनी कैसी[7] है? वह तो कामसे लदी होगी।

मुझे लिखना कि साम, बिहारी, मुत्तु, राजकुमार, राम और मैनरिंग[8] कैसे रह रहे हैं? उन्हें मेरी याद दिलाना। मुझे आशा है कि श्री मैनरिंग जंगलके जीवनसे फिर न ऊब गये होंगे।

श्री वेस्टसे मेरा सलाम कहना। उनसे कहना कि फीनिक्ससे रवाना होनेके दिन उनसे मेरी जो भेंट हुई थी उसे याद करें।

अब फिर तुम्हारी बात। बागवानीमें — अपने हाथसे खुदाई और निदाई करने आदिमें काफी मेहनत करना। हमें भविष्यमें इसीसे निर्वाह करना है। और तुम्हें परिवारका होशियार बागवान होना चाहिए। अपने औजारोंको यथास्थान और पूरी तरह साफ रखना। मुझे आशा है, रामदास और देवदास स्वस्थ होंगे, अपने पाठ याद करते होंगे और कोई परेशानी पैदा न कर रहे होंगे। क्या रामदासकी खाँसी ठीक हो गई?

मेरा विश्वास है कि तुम सबने विलीसे, जब वह हमारे यहाँ था, अच्छा व्यवहार किया होगा। श्री कॉर्डिज़की जो खानेकी चीजें बची होंगी, मेरा खयाल है वे तुमने उन्हें लौटा दी होंगी।

और अब तुम्हारे अपने बारेमें। तुम कैसे हो? मेरा खयाल है, मैंने तुम्हारे कंधोंपर जो भार डाला है उस सबको तुम अच्छी तरह उठा सकते हो और वह सब कार्य बिल्कुल प्रसन्नतापूर्वक कर रहे हो। फिर भी मैंने यह प्रायः अनुभव किया है कि मैं तुम्हारा जितना व्यक्तिगत मार्गदर्शन कर सका हूँ, तुम्हें उससे अधिकको आवश्यकता है। मैं यह भी जानता हूँ कि तुमने कभी-कभी अनुभव किया है, तुम्हारी शिक्षाकी उपेक्षा हो रही है। अब मैंने जेलमें बहुत-कुछ पढ़ लिया है। इधर मैं इमर्सन, रस्किन और मैज़िनीकी पुस्तकें पढ़ता रहा

१. फीनिक्सके एक सदस्य श्री हरिलाल वालजी ठक्कर।
२. ३, और ४ फीनिक्स छापेखानेके कम्पोज़िटर।
५. गांधीजीके मुंशी।
६. फीनिक्सकी शालाके प्रबंधक पुरुषोत्तमदास देसाई।
७. पुरुषोत्तमदास देसाईकी पत्नी।
८. छापेखानेके कर्मचारीगण।

हूँ। मैं उपनिषद् भी पढ़ता रहा हूँ। इन सबसे इसी विचारकी पुष्टि होती है कि शिक्षाका अर्थ अक्षर-ज्ञान नहीं है, बल्कि उसका अर्थ चरित्र-निर्माण है। उसका अर्थ कर्तव्यका ज्ञान है। हमारे अपने शब्दका[1] ठीक अर्थ है "तालीम"। यदि यह दृष्टिकोण ठीक हो — और मेरे विचारसे केवल यही दृष्टिकोण ठीक है — तो तुम्हें जितनी सम्भव है उतनी अच्छी शिक्षा — तालीम — मिल रही है। यदि तुम्हें अपनी माँकी शुश्रूषा करने और उसके चिड़चिड़ेपनको प्रसन्नतापूर्वक सहनेका या चंचीकी देखभाल करने और उसकी आवश्यकताओंको जान लेने तथा उससे इस तरहका व्यवहार करनेका, जिससे उसे हरिलालका अभाव न खटके, या फिर रामदास और देवदासके संरक्षक बननेका अवसर मिले तो इससे अच्छा क्या हो सकता है? यदि तुम यह काम अच्छी तरह करनेमें सफल हो जाओ, तो तुम्हें आधीसे ज्यादा शिक्षा मिल गई।

पढ़ाईमें तुमको गणित और संस्कृतकी ओर बहुत ध्यान देना चाहिए। संस्कृत तुम्हारे लिए बिल्कुल जरूरी है। ज्यादा उम्रमें इन दोनों विषयोंका अध्ययन कठिन है। संगीतकी भी उपेक्षा न करना। तुमको अंग्रेजी, गुजराती या हिन्दी, जिसमें भी हो, पुस्तकोंके सब अच्छे स्थलों, मन्त्रों और कविताओंको छाँट लेना चाहिए। और उनको एक कापीमें अच्छेसे-अच्छे अक्षरोंमें लिख लेना चाहिए। यह संग्रह वर्षके अन्तमें अत्यन्त मूल्यवान बन जायेगा। यदि तरीकेसे करोगे तो ये सब काम तुम सुगमतासे कर सकते हो। कभी उद्विग्न होकर यह न सोचना कि तुम्हें बेहद काम करना है; और न फिर इस बातसे परेशान होना कि पहले क्या करूँ। यदि तुम धैर्य रखोगे और अपने थोड़े-थोड़े समयका भी सदुपयोग करोगे तो तुमको व्यवहारमें इसका ज्ञान हो जायेगा। आशा है, तुम घरके लिए खर्च की गई एक-एक पेनीका हिसाब ठीक-ठीक रख रहे होगे। यह अवश्य रखा जाना चाहिए।

आनन्दलालभाईको याद दिला देना कि उसने प्रतिज्ञा की थी, वह इस बार अपनी पढ़ाई बन्द न करेगा। मुझे इस बातकी अधिक चिन्ता है कि वह विजयाको[2] उचित शिक्षण दे। क्या उसने बगीचा ले लिया है?

मगनलालसे कहना कि मैं उसको इमर्सनके निबन्ध पढ़नेकी सलाह देता हूँ। वे डर्बनमें नौ पेंसमें मिल सकते हैं। उनका एक सस्ता संस्करण भी है। ये निबन्ध पठनीय हैं। उसे इनको पढ़ना चाहिए; और इनके महत्त्वपूर्ण स्थलोंको चिह्नित करना चाहिए; अन्तमें उनकी एक नोटबुकमें नकल कर लेनी चाहिए। मेरे विचारसे इन निबन्धोंमें पाश्चात्य जामा पहनाकर भारतीय ज्ञानकी शिक्षा दी गई है। कभी-कभी अपनी चीजको इस प्रकार भिन्न रूपमें देखकर स्फूर्ति मिलती है। उसको टॉल्स्टॉयकी 'किंगडम ऑफ़ गॉड इज़ विदिन यू' (ईश्वरका साम्राज्य तुम्हारे ही भीतर है) पढ़नेका प्रयत्न भी करना चाहिए। यह अत्यन्त तर्क सम्मत-पुस्तक है। अनुवादकी अंग्रेजी भी बहुत सरल है। इसके अलावा, टॉल्स्टॉय जो सिखाते हैं उसपर आचरण भी करते हैं।

मुझे आशा है कि सायंकालीन प्रार्थना अभी चलती होगी और तुम तथा दूसरे सब लोग रविवारकी प्रार्थनामें वेस्टके यहाँ जाते होंगे।

१. गुजराती शब्द "केळवणी", जिसका ठीक अर्थ होता है शिक्षा द्वारा बच्चेके शारीरिक और मानसिक — सब गुणोंका विकास करना।

२. आनन्दलालकी पुत्री।

"मियाँ मदारी! चलते वनो! हम तुमसे, तेरे वन्दरसे और तेरे वाजेसे तंग आ चुके हैं।"

"और हुजूर मुझे क्या देंगे, यदि मैं चलता वनूं?"

"दूंगा! जरूर दूंगा, अगर तुम अव यहाँसे चलते नहीं वने।"

एशियाई साजिंदा

↓ पिछले पृष्ठपर :

पत्र : मणिलाल गांधीको

(35/131—3/08—15,000

Form T.P.D. 31.

Pretoria Prison,

Transvaal, 25 3 1909.

Name of Prisoner M K Gandhi

{ Naam van Bandiet }
{ Igama Lomlanjwa }

Number (with initial letter). 777

{ Nommer met voorletter }
{ Inani lake }

TO WHOM SENT.

Names in full Master Manilal Gandhi

Occupation C/o Indian Opinion

Postal Address Phoenix

Nearest Town Natal

INSTRUCTIONS TO SENDER OF REPLY.

When replying, the address must give full name and number exactly as above.

Letters may be written in English, Dutch, German, French or Kafir. Letters in any other language may be delayed or even returned.

Money must not be enclosed in Prisoners' Letters, but sent to the Governor of the Prison.

Letters to Prisoners must bear ordinary postage. Unpaid letters are liable to be returned.

Het antwoord moet het adres, den vollen naam, en nommer geven, net zoo als boven.

Brieven mogen in Engelsch, Hollandsch, Duitsch, Fransch of Kafir geschreven worden. Brieven in eenige andere taal mogen opgehouden en ook terug gestuurd worden.

Geld moet niet in brieven in gesloten worden, maar moet naar den Gouverneur gezonden worden.

Brieven aan bandieten worden niet ontvangen tenzij gewone postgeld daarop betaald is.

Uma upendula ku lencwadi, loba ngapandhle kwe envelope ibizo lonke, le ribotshwa kanye ne nombe laso nje 'nga pezulu ku leli paga.

Izincwadi zinga lotywa nge Singisi, ngesi Bunu, ngesi Jelemani, ngesi Flentshi, na ngesi Ntu. Izincwadi ezilotywe nge zinye ilwimi zinoku banjezelwa okanye zibe zipindele emva.

Imali mayi ngafakwa encwadini zebotshwa, kodwa itunyelwe ku Mbusi wi Tilongo.

Incwadi zebotshwa mazifakwe istimpu ngapandhle kwe envelope. Masi ngako zinoku pendela emva.

Read and passed by me.

Rank.

Date

My dear Son,

I have a right to write one letter per month and receive also one letter per month. It became a question with me as to whom I should write to. I thought of Mr Ritch, Mr Polak and you. I chose you, as you have been nearest my thoughts in all my reading.

As for myself I must not, I am not allowed to say much. I am quite at peace & none need worry about me.

I hope mother is now quite well. I know several letters from you have been received but they have not been given to me. The Deputy Governor however was good enough to tell me that she was getting on well. Does she now walk about freely? I hope she and all of you would continue to take sago milk in the morning.

And how is Chanchi? Tell her I think of her every day. I hope she has got rid of all the sores she had and that she & Rami are quite well.

तुम्हें इस पत्रकी नकल कर लेनी चाहिए। इसमें दूसरोंकी सहायता भी ले लेना। और इसकी एक नकल पोलकको, एक कैलेनबैकको और एक स्वामीजीको भेज देना। तुम्हें मेरा पत्र ध्यानसे पढ़ लेना चाहिए और मुझे ब्योरेवार उत्तर देना चाहिए। श्री पोलकके उत्तरकी प्रतीक्षा कर लेना, जिससे उन्हें जो-कुछ कहना है वह मुझे लिख सको। जैसे ही तुम मेरा पत्र पढ़कर समझ लो, उत्तर लिखना शुरू कर सकते हो। उत्तर स्याहीसे साफ लिखा हो। तुम उसे जितना चाहो उतना लम्बा हो जाने दो। उसमें हमारी लड़ाईके सम्बन्धमें कोई जानकारी न हो। तब उसे प्राप्त करनेमें मुझे कोई कठिनाई न होगी। उत्तर चाहे जबतक दे सकते हो। शायद यह पत्र तुम्हें मंगलवारको मिल जायेगा। मैं उस दिनसे एक सप्ताह तक प्रतीक्षा करूँगा। यदि चाहो तो इससे भी अधिक समय ले सकते हो। तुम अपना पत्र बन्द करनेसे पहले स्वामीजी और कैलेनबैकके पत्रोंकी भी प्रतीक्षा कर लेना। उन्हें जो कुछ कहना है तुम मुझे लिख भेजना। तुम थोड़ा-थोड़ा हर रोज लिख सकते हो। जिस बातको तुम अंग्रेजीमें व्यक्त न कर सको उसका अनुवाद पुरुषोत्तमदाससे करा लेना। यदि इस पत्रका कोई अंश तुम्हारी समझमें न आये तो तुम्हें उसका अनुवाद करा लेना चाहिए।

मुझे बीजगणितकी एक प्रति भेज देना। कोई भी संस्करण काम देगा।

अब मैं इस पत्रको बन्द करता हूँ। सबको प्यार और रामदास, देवदास तथा रामीको चुम्बन।

बापू

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४६७६) से।

सौजन्य: लुई फिशर

१३८. तार: द० आ० ब्रि० भा० समितिको[1]

जोहानिसबर्ग
अप्रैल ७, १९०९

सेवामें
दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति
५ पम्प कोर्ट, टेम्पल
[लन्दन]

हाइडेलबर्गके कैदियोंका जरूरी पत्र प्राप्त जिसमें कहा गया है: भूखों मरनेकी स्थिति — अनुपयुक्त भोजन, चारों तरफ गन्दगी, सफाईका बिल्कुल प्रबन्ध नहीं, नहाने-धोनेकी कोई सुविधा नहीं, न कपड़े बदलनेकी। भारतीय सत्याग्रहियोंके साथ काफिर कैदियोंसे बदतर बरताव। अस्पतालमें कई — पेचिश, बुखार, मिरगीसे

१. जिस दिन साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटीको यह तार भेजा गया, उस दिन गांधीजी प्रिटोरिया जेलमें थे। सम्भव है, यह उन्हींकी हिदायतोंके मुताबिक जोहानिसबर्गसे भेजा गया हो।

पीड़ित। जेल अधिकारी क्रूर। सरकार उत्पीड़ित करके आन्दोलनको भंग करनेकी कोशिश कर रही है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१४१।

१३९. भारतीय और शराब[1]

[प्रिटोरिया जेल
अप्रैल १०, १९०९ के पूर्व]

महोदय,

मैंने आपका वह पत्र देखा है जो आपने आयोगके सम्मुख गवाही देनेके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीय संघको भेजा है। अपनी गतिविधि अनिश्चित होनेसे मैं अपना वक्तव्य इससे पहले नहीं भेज सका हूँ; और न यही सम्भव हो सका है कि संघकी बैठक बुलाकर इस सम्बन्धमें विचार किया जाय कि किस तरहकी गवाही देनी है। संघके अध्यक्ष[2] और कार्यवाहक अध्यक्ष[3] जेलमें हैं। इसलिए यह वक्तव्य, जिसे मैं पेश करनेवाला हूँ, मेरे निजी विचारोंको ही व्यक्त करता है।

मैं दक्षिण आफ्रिकामें पिछले पन्द्रह वर्षसे रह रहा हूँ। और लगभग इस पूरी अवधिमें पदाधिकारीके रूपमें भारतीय सार्वजनिक संस्थाओंसे सम्बद्ध रहनेके कारण सभी वर्गोंके भारतीयोंके सम्पर्कमें आया हूँ। १९०३ से मैं जोहानिसबर्गमें अटर्नीके तौरपर वकालत कर रहा हूँ; और मैं ब्रिटिश भारतीय संघके अवैतनिक मन्त्री भी रहा हूँ।

ट्रान्सवालमें १३,००० से अधिक वयस्क भारतीय पुरुष नहीं हैं। लड़ाईके दिनोंसे जो भारतीय वस्तुतः उपनिवेशमें रहे हों, उनकी संख्या कदाचित् १०,००० से अधिक कभी नहीं रही है। इस समय, एशियाई आन्दोलनके कारण, उपनिवेशमें शायद ५,००० से अधिक भारतीय नहीं हैं। ये मुख्यतः मुसलमान और हिन्दू हैं। यहाँ जो बात उद्दिष्ट है उसके खयालसे ईसाइयों और पारसियोंका विचार नहीं करता, क्योंकि वे यद्यपि भारतीय समाजके महत्त्वपूर्ण अंग हैं फिर भी संख्यामें कम हैं।

मुसलमान और हिन्दू, दोनोंके लिए उनके धर्मोंमें मद्य-पान करना निषिद्ध है। मुस्लिम वर्ग मद्य-निषेधपर बहुत-कुछ कायम रहा है। मुझे दुःखके साथ कहना पड़ता है कि हिन्दू वर्गमें ऐसे लोगोंकी संख्या खासी है जिन्होंने इस उपनिवेशमें इस धार्मिक निषेधकी अवहेलना की है।

जो भारतीय मद्य-पान करते हैं उन्होंने आम तौरपर कुछ अविचारी गोरोंकी सहायता प्राप्त करनेका तरीका अपनाया है। दूसरे तरीके भी हैं जिनका मैं उल्लेख करना नहीं चाहता।

१. यह वक्तव्य गांधीजीने प्रिटोरिया जोहानिसबर्ग-स्थित ट्रान्सवाल मद्य-आयोग (ट्रान्सवाल लिकर कमिशन) को "लिखित साक्षी" के रूपमें भेजा था। यह "श्री गांधीके विचार" शीर्षकसे "इंडियन ओपिनियनके लिए विशेष" रूपमें प्रकाशित किया गया था।

२. अहमद मुहम्मद काछलिया।

३. ई० आई० अस्वात।

मेरी राय यह है कि कानूनन मद्य-निषेध जारी रहे। किन्तु मेरा खयाल है कि मद्य-निषेधसे उन भारतीयोंको, जो शराब प्राप्त करना चाहते हैं, अड़चन नहीं हुई है। मेरी दृष्टिमें मद्य-निषेध जारी रखनेका एकमात्र लाभ यह है कि मेरे शराब पीनेवाले देशवासी शराब पीनेमें जो शर्म महसूस करते हैं वह कायम रहे। वे जानते हैं कि उनके लिए धर्म और कानून दोनोंकी दृष्टिसे शराब प्राप्त करना और पीना अनुचित है। इससे मद्य-निषेधके प्रचारक उनकी कानून पालन करनेकी भावनाको जागृत कर सकते हैं। कानूनको दोषपूर्ण तरीकेसे भंग करनेमें और अन्तरात्माकी पुकारपर एक अधिक ऊँचे कानूनका पालन करनेकी दृष्टिसे मानव-कृत कानूनको तोड़नेमें मैं एक बुनियादी अन्तर मानता हूँ। सौभाग्यसे जो भारतीय मद्य-सम्बन्धी कानूनको तोड़ते हैं वे जानते हैं कि उनका ऐसा करना गलत है।

मैं जानता हूँ कि मेरे कुछ देशवासियोंको, जो स्वयं मद्य-निषेधके पक्षमें हैं, मद्य-सम्बन्धी कानूनमें रंगके आधारपर लगाई गई एक और निर्योग्यता दिखाई देती है। सामान्यतः उनका कहना ठीक होता। किन्तु मेरा विश्वास है कि इस कानूनका रंगसे कोई सम्बन्ध नहीं है। मेरी रायमें, यह प्रमुख जातिकी ओरसे इस बातकी मान्यता है कि मद्यपानकी लत एक ऐसी बुराई है जिसे वह स्वयं तो छोड़नेमें असमर्थ है, किन्तु यह नहीं चाहती कि उसे दूसरी जातियाँ अपना लें। स्थितिको इस प्रकार देखते हुए, मेरा खयाल है कि एशियाइयों और रंगदार जातियोंके लिए मद्य-निषेध व्यापक मद्य-निषेधकी ओर संकेत करता है।

किन्तु व्यापक मद्य-निषेध हो या न हो, जबतक प्रमुख जाति शराब पीना जारी रखती है, चाहे वह बहुत संयमित ढंगसे ही क्यों न हो, तबतक, आंशिक मद्य-निषेध, वह जिस रूपमें लागू है, उस रूपमें, व्यावहारिक दृष्टिसे अधिक उपयोगी नहीं हो सकता। निवेदन है कि यह यूरोपीय और अन्य जातियोंके सम्पर्कसे उत्पन्न बुरे प्रभावोंका एक बड़ा उदाहरण है। और जबतक शराबसे बचनेका प्रचार करनेवाले लोग स्वयं ही उसपर अमल करनेके लिए तैयार न हों, तबतक सभी मद्य-सम्बन्धी कानून बहुत-कुछ अस्थायी उपाय सिद्ध होंगे। मैं चाहता हूँ, आयोग ट्रान्सवालके मतदाताओंको किसी तरह यह बता दे कि उनके कन्धोंपर कितनी बड़ी जिम्मेदारी है। वे अपने प्रतिनिधियोंके लिए इतना वांछनीय कानून बनाना असम्भव कर देते हैं। उनको ही बहुत-से परिवारोंके छिन्न-भिन्न करनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेनी होगी। मैं अपनी जिम्मेदारी पूरी तरह समझकर लिख रहा हूँ। मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ कि कितने भारतीय नवयुवक, जिन्होंने कभी शराब चखी तक न थी, दक्षिण आफ्रिका या ट्रान्सवालमें आकर उसके शिकार हो गये हैं।

यदि आयोग मुझसे कुछ प्रश्न पूछना चाहे तो मैं प्रसन्नतापूर्वक उत्तर दूंगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–४–१९०९

१४०. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको[1]

प्रिटोरिया [जेल]
अप्रैल २६, १९०९

प्रेषक
श्री गांधी (कैदी संख्या ७७७)

प्रिय हेनरी,

मुझे आर्थिक प्रश्नसे जितनी चिन्ता हुई है उतनी अन्य किसी वातसे नहीं हुई है। मुझे फीनिक्सपर ऋण होनेके विचारसे ही घृणा है; और कार्यालयपर ऋणका अर्थ वही है। ऐसी हालतमें जेवरोंके अलावा कुछ कानूनी किताबोंकी, अर्थात् उन किताबोंकी, जो मैंने इंग्लैंडसे मँगाई थीं, और कानूनी रिपोर्टोंकी, तथा कार्यालयमें रखी वड़ी तिजोरीकी और घूमनेवाली अलमारीमें रखे विश्व-कोष (एनसाइक्लोपीडिया) की भी आहुति दे दी जाये। कानूनी किताबोंको प्लेफर्ड, वेन्सन या यदि उनकी स्थिति अच्छी हो तो, गॉडफ्रेसे लेनेके लिए कहा जा सकता है। यदि इनमें से कोई कुछ भी न ले सके तो आप एक सूची घुमा सकते हैं। वे खरीदके दामोंसे १० प्रतिशत कममें विकनी चाहिए। तिजोरीका कमसे-कम १५ पौंड दाम आना चाहिए। गॉडफ्रेको (कर्टिसके) विश्व-कोषके ३ पौंड देन हैं। आप जानते हैं कि कर्टिसने ३ पौंड मुझसे ले लिये थे। यह रकम वहियोंमें नहीं है, अब वसूल की जा सकती है।

मुझे मणिलालका एक लम्बा पत्र मिला है। यह ठीक ही लिखा गया है। मैं देखता हूँ कि श्रीमती पायवेलको अपनी पौत्रीपर गर्व है। वे उसको सबसे सुन्दर समझती हैं...[2] सावधान रहें। वाल्डो,[3] जो फीनिक्सका सम्भावित अंतेवासी माना जा सकता है, ऐसा नमूना है जिसे गढ़ना है। यह कठिन कार्य है। मैं जानना चाहता हूँ कि कॉर्डिजका भाषण कैसा रहा और वह कहाँ हुआ था। क्या ठाकर वम्बईसे कुछ किताबें और टाइप लाया है? मैं देखता हूँ कि ठाकर-परिवार छगनलालके साथ ठहरा है। मिलीकी[4] तरह छगनलालका स्वभाव भी चुपचाप कष्ट सहनेका है। लेकिन दोनोंपर इसका बुरा असर होता है। इसलिए वे मित्रोंकी स्थिति उलझन-भरी बना देते हैं। इसलिए मैं चाहता हूँ कि छगनलाल अपने सामर्थ्यसे अधिक भार न उठाये। जैसा कि उसकी माँ कहती है, वह ऐसा व्यक्ति है जो . . . *पत्तोंसे लदे पेड़के नीचे भी सूख जा सकता है।* [जबसे] *वह बड़ा हुआ है* तभीसे उसके स्वभावमें मैंने यह विशेपता देखी है। मुझे अपने इस मतमें [परिवर्तनका कोई कारण] नहीं दिखाई दिया है। इसलिए कृपया उसे कहें कि वह अपने ऊपर ज्यादा

१. मूल प्रति फटी-फटी है; इसलिए जहाँ शब्दोंका पता नहीं लग पाया है वहाँ यथासाध्य उन्हें अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें देकर अर्थको पूरा किया गया है।

२. यहाँ मूलमें कुछ शब्द गायब हैं।

३. पोलकका पुत्र।

४. पोलककी पत्नी मिली ग्राहम पोलक।

भार न डाले। मैं नहीं जानता कि श्रीमती गांधीका इरादा क्या है। [ठाकर-परिवारको] उनके साथ ठहरना चाहिए था। अब पुरुषोत्तमदास और कॉडिज़ [दोनोंके पास] एक-एक छात्र है। कॉडिज़ [छात्र रखते] हैं, यह अच्छा है। यह बिल्कुल उनके अनुरूप ही है। परन्तु [पुरुषोत्तमदास] ने किसी छात्रको रखा, यह शायद ठीक नहीं हुआ। उसके पास काफी जगह नहीं है। अनीको चार बच्चोंकी देखभाल करनी होती है। यही उसके लिए बहुत है। [पुरु-षोत्तमदास] चाहता है कि अनीने पहले जो अपना कर्तव्य नहीं निभाया उसकी कमी पूरी करे। इस दिशामें उसने शुरुआत अच्छी नहीं की है। इसलिए मैं यह जाननेको बहुत इच्छुक हूँ कि उसने अपनी गरीब पत्नीका भार हलका करनेके लिए क्या किया है। उसने मुझे बहुत प्रिय सन्देश भेजा है, इससे अधिक मैं इस समय न कहूँगा। मैं चाहता हूँ कि फीनिक्सके सब लोग टॉल्स्टॉयकी जीवनी और 'मेरा पश्चात्ताप' ('माई कन्फ़ेशन्स') पढ़ें। दोनों किताब बहुत प्रेरणाप्रद हैं। वे आसानीसे दो दिनमें पढ़ी जा सकती हैं। गुजरातियोंको कविश्रीकी दोनों पुस्तकें भी, जो मेरे पास हैं, पढ़नी चाहिए। शायद ठाकर वे पुस्तकें ले आया होगा। वे सायंकालकी प्रार्थनाके आध घंटेमें से १० मिनट और रविवारको, गुजराती लोग जो अलग प्रार्थना करते हैं, उसके एक घंटेमें से आधा घंटा इस वाचनमें लगा सकते हैं। मैं कविश्रीके जीवन और उनकी रचनाओंके सम्बन्धमें जितना विचार करता हूँ, उतना ही मुझे लगता है कि वे अपने युगके सर्वश्रेष्ठ भारतीय थे। वस्तुतः मैं उनको धार्मिक बोधकी दृष्टिसे टॉल्स्टॉयसे ऊँचा मानता हूँ। मैंने उनकी ये पुस्तकें पढ़ी हैं। उनसे मुझे बहुत अधिक शान्ति मिली है। इनको बार-बार पढ़ना चाहिए। जहाँतक अंग्रेजीकी पुस्तकोंका सम्बन्ध है, मेरे मतसे टॉल्स्टॉयकी कृतियाँ विचारोंकी शुद्धतामें बेजोड़ हैं। उनकी जीवनके उद्देश्यकी व्याख्या अनुपम और सुबोध है। कवि और टॉल्स्टॉय दोनोंने जिन बातोंका प्रचार किया, उनको जीवनमें उतारा है। कविने अधिक गहरे अनुभवसे लिखा है। आप छगनलालसे रेवाशंकर जगजीवन ऐंड कं० को यह लिखनेके लिए कह दें कि मुझे उनको क्या देना है और वे मेरी बहनको[1] मासिक कितना भेजते हैं, यह मुझे बतायें। मणिलाल अपने अध्ययनसे कुछ असन्तुष्ट है। यह स्वाभाविक ही है। किन्तु यह अनिवार्य है। हम प्रयोगकी अवस्थामें हैं और पहले छात्रोंपर इसका असर पड़ेगा ही। फिर भी उसे जो-कुछ पढ़ाया जाये उसको वह भली भाँति सीखे। मुझे आशा है कि मैं किसी दिन उसकी परीक्षा लूँगा। उसको अपने रेखागणितके पाठोंपर भरोसा था, लेकिन उनमें वह कच्चा निकला। वह नियम-पालन और अध्यवसायकी आदत डाले और अध्ययनमें अपने ऊपर निर्भर रहना सीखे। सम्भव है, किसी दिन मैं स्वयं उसको थोड़ा पढ़ानेकी जिम्मेदारी ले सकूँ। बागवानीके सम्बन्धमें भी उसकी चिन्ता [मैं] समझता हूँ। उसको धैर्य रखना चाहिए। उसे अपनी पूरी शक्ति [लगा देनी चाहिए] और फिर चिन्ता और परेशानी [से मुक्त रहकर] सर्वथा प्रसन्न रहना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि लड़के [मणि-]कमसे तमिलमें बात किया करें। मुझे खुशी है कि किचिन एक दिनके लिए फीनिक्स आये थे। मणिलालने यह नहीं लिखा कि वहाँ ठहरनेसे उनको अच्छा लगा या नहीं। आशा है, वहाँ उनके आरामका पूरा प्रबन्ध किया गया होगा। मगनलालको मेरी सलाह है कि उसने अंग्रेजीके इतने वाक्य तो कंठस्थ कर ही लिये हैं, अब उसे तमिलके भी कुछ वाक्य याद करने चाहिए। चंची प्रसन्न तो है? या हरिलालके वियोगमें चिन्तित रहती है? श्रीमती [गांधी] अब घरके कामकाजमें हाथ

१. गांधीजीकी सबसे बड़ी बहन रलियातबेन।

बँटाती हैं? कृपया डॉ० नानजीको[1] फीनिक्सवासियोंका ध्यान रखनेके लिए धन्यवाद दें। वे मुझपर अपना ऋण सदा बढ़ाते ही रहते हैं। पाठशालाके भवनकी प्रगति कैसी है? मेरा खयाल है कि छगनलाल मेरी ओरसे श्री गोरासे कहे कि वे छात्रोंके बोर्डिंगका खर्च बढ़ाना मंजूर कर लें, जिससे छोटी-मोटी रकमोंके सम्बन्धमें संरक्षक सदाकी चिन्तासे मुक्त हो जायें। मुझे प्रसन्नता है कि स्वामीजी अधिक ठहर रहे हैं। आशा है कि [उनसे] मिलकर यज्ञोपवीतके सम्बन्धमें विशेष जान सकूँगा। मैंने गाड़ीसे पीटरमैरित्सबर्गके पतेपर उन्हें जो पत्र[2] भेजा था वह उनको मिल गया होगा। मेरी यह तीव्र इच्छा है कि वे हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच सद्भाव बढ़ानेके लिए उनसे जो-कुछ हो सके सब करें। मैं आनन्दलालसे यह अपेक्षा करता हूँ कि वह अपना अध्ययन बन्द न करने और बागको हरा-भरा बनानेका वचन पूरा करेगा। कृपया वेस्टसे कहें कि वे रविवासरीय प्रार्थनाको, यदि उसमें कोई कठिनाई हो तो भी, जारी रखें। श्रीमती वेस्टकी बीमारीमें वह कहीं और की जा सकती है, किन्तु जहाँ तक सम्भव हो, बन्द न की जाये। कृपया [इस पत्रके] फीनिक्स-सम्बन्धी भागकी नकल करवाकर वेस्टको भिजवा दें। तब इसे सब पढ़ सकेंगे। और छगनलाल मुझे एक ब्योरेवार उत्तर लिखे जिसमें जो भेजना चाहें, उन सभीके सन्देश हों। मैं ७ मई तक छगनलालका पत्र मिलनेकी आशा करूँगा। इससे उसको काफी वक्त मिल जायेगा।[3]

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९२५) से।

१४१. भाषण: प्रिटोरियाकी सभामें[4]

[प्रिटोरिया
मई २४, १९०९]

लम्बा भाषण देनेके लिए समय नहीं है। मैं नाश्ता करने चला गया था, जिसमें कुछ समय निकल गया। फिर भी दो शब्द कहता हूँ। इनपर आप ध्यान दें। अपने जेलके अनुभवके आधारपर मैं कह सकता हूँ कि जल-जीवनकी हालत जैसी होनी चाहिए वैसी ही है। हम जो माँग रहे हैं वह हमें अवश्य मिलेगा। छूटनेपर मैं देखता हूँ कि जो शूर हैं वे शूर ही रहेंगे। अध्यक्षने कहा है कि आपसी फूटके कारण संघर्ष लम्बा खिंच रहा है, लेकिन मेरी समझसे बात ऐसी नहीं है। हमारे भाई डरते हैं, इसी कारण जेलें भरती नहीं हैं। जो निडर हैं वे जेल जा रहे हैं और जायेंगे। और होना भी यही चाहिए। जान पड़ता है कि जेलमें कुछ कष्ट होनेपर भी छूटनेके बाद वे फिर जेल जानेके लिए तैयार

१. डर्बनके एक चिकित्सक तथा नेटालके भारतीय समाजके नेता; फीनिक्स बस्तीमें बीमार पड़नेवालोंकी चिकित्सा अक्सर ये ही करते थे, और श्रीमती गांधीका इलाज भी इन्होंने ही किया था।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. पत्र अधूरा जान पड़ता है और यह शायद वह अंश है जो वेस्टको भेजा गया था।

४. सजाकी समाप्तिपर २४ मई १९०९ को गांधीजी नियत समयसे डेढ़ घंटे पहले, सुबह साढ़े सात बजे ही छोड़ दिये गये थे, ताकि भारतीय किसी प्रकारका प्रदर्शन न कर सकें। फिर भी कोई सौ भारतीय उनका स्वागत करनेके लिए एकत्र हो गये थे। गांधीजी उनके साथ इस्लामिया मसजिद गये और बादमें उन्होंने वहीं यह भाषण दिया। सभाकी अध्यक्षता वली मुहम्मदने की।

हैं। जो जेलके रसको रस मानकर चखते हैं, वे कदापि पीछे नहीं हटेंगे, बल्कि बार-बार जेल जायेंगे।

मेरे छूटते समय मुख्य वार्डरने मुझसे कहा कि "आपको फिरसे जेल न आनेकी सलाह देना निरर्थक है; क्योंकि आप उसे माननेवाले तो हैं नहीं।" इससे जाहिर होता है कि उसके मनपर सत्याग्रहकी कैसी छाप पड़ी है। मुझे बाहर सुख मिलता नहीं। मैं जेलमें नियमसे ईश्वरकी प्रार्थना कर सकता था। बाहर मुझे उसके लिए समय ही नहीं मिलता। जेलमें कैदी उठकर बिस्तर समेट कर तैयार हो जायें, इसलिए सवेरे साढ़े पाँच बजे बत्ती जला दी जाती थी और फिर आधे घंटे बाद बुझा दी जाती थी। बत्तीके बुझनेपर अँधेरेमें कुछ कैदी एक दूसरेकी बुराई करते। मुझे तो उस समय ईश्वरकी प्रार्थना करनेका अच्छा अवकाश मिलता था। कलसे मुझे ऐसी फुरसत और सुविधा नहीं मिलेगी। आपके खयालसे मुझे सुख होगा। लेकिन, मैं तो मानता ही नहीं कि जेलमें दुःख और बाहर सुख है। जो जेल जानेसे डरते हैं, उन्होंने पंजीयन करा लिया, और करा रहे हैं। फिर भी उनका भी एक कर्तव्य है, जिसे वे पूरा कर सकते हैं। हमारे सच्चे रास्तेसे तो किसीको कोई विरोध नहीं होगा, और यदि हो तो वह भारतीय नहीं कहला सकता, बल्कि भारतकी जड़ खोदनेवाला कहलायेगा। मुझे श्री हाजी कासिमसे बात करनेका समय मिल गया, यह अच्छा हुआ। हमें क्या करना चाहिए, यह आप उनसे पूछेंगे तो वे बतायेंगे। और यदि आप तदनुसार करेंगे तो वह मदद करने जैसा ही होगा। जेलसे छूटनेका मुझे सुख नहीं है, बल्कि दुःख है। आज श्री व्यासके यहाँ नाश्तेमें मुझे शक्करके लड्डू दिये गये। परन्तु वे मुझे जहर-जैसे लगे, क्योंकि श्री दाउद मुहम्मद, श्री रुस्तमजी, श्री जोशी, और दूसरे लोग तथा, स्वार्थी बनकर कहूँ तो, मेरा बड़ा लड़का हरिलाल अभी जेलमें है। उन्हें अभी ढाई महीनेसे ज्यादा वक्त जेलमें काटना है। मुझे अच्छा तो तभी लगेगा, जब मैं फिर जेल जाऊँ और उनके बाद छोड़ा जाऊँ। अभी समझमें नहीं आता कि यह कैसे सम्भव होगा। मेरा तो राग-रंग और सुख — सब-कुछ जेलमें ही है। अपनी प्रतिज्ञाके खयालसे मुझे जेल ही अच्छी लगती है। मैं अपनी शक्ति-भर तो जेल जाने और लोगोंके बाद छूटनेकी ही कोशिश करता हूँ; परन्तु जेलमें रहना सम्भव नहीं हो रहा है। आपसे मुझे यही कहना है अथवा, कहिए, यही विनती करनी है कि साहसी लोगोंका जेल जाना ही उत्तम है। जिनसे ऐसा न हो वे, मैंने श्री हाजी कासिमसे जो कहा है, वह करें। ब्रिटिश भारतीय संघ और लोग भिखारी बन गये हैं। यह मुझे जेलमें श्री पोलकके पत्रसे मालूम हुआ है। तो अब जो व्यापार कर रहे हैं उन्हें अपनी थैलियोंमें हाथ डालना चाहिए। मैंने सुना तो है कि यह शुरू हो गया है; मगर मैं इसे पर्याप्त नहीं मानता। आप अधिक उदारतासे दें। उससे ईश्वर भी प्रसन्न होगा, और आपकी उदारता उचित मानी जायेगी। आप लोग इतनी अच्छी संख्यामें इकट्ठे हुए, इसके लिए आपका आभार मानते हुए मैं फिर अनुरोध करता हूँ कि माँगें पूरी होनेतक आप जेलें भरते रहें, और जब माँगें मंजूर हो जायें तभी शान्त हों। इसके सिवा दूसरी कोई सलाह या राह है भी नहीं। आप भी यह देखते और मानते होंगे।[1]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–५–१९०९

१. इसके बाद गांधीजी तमिल लोगोंके खयालसे अंग्रेजीमें बोले; देखिए अगला शीर्षक।

१४२. भाषण : प्रिटोरियामें[1]

[प्रिटोरिया
मई २४, १९०९]

. . . उन्होंने कहा, मैं जेलसे छूट गया हूँ; किन्तु मुझे इसकी कोई खुशी नहीं है। मेरे अनेक वीर देशभाइयोंको अभी अपनी सजाएँ काटनी हैं, और मेरे बेटेको भी छः महीनेकी सजा भुगतनी है। किन्तु इस सबके बावजूद आन्दोलन तबतक जारी रहेगा जबतक सरकार हमें राहत नहीं दे देती, जिसके हम हकदार हैं। जबतक न्याय नहीं किया जाता तबतक हमें कष्ट सहना ही होगा। जो भारतीय जेलकी तकलीफें नहीं सह सकते वे दूसरी तरह जो भी मदद दे सकते हैं, दें; क्योंकि मैं मानता हूँ कि सरकारके इन कड़े कानूनोंको सम्भवतः एक भी भारतीय पसन्द नहीं करता और न चालू आन्दोलनके साथ वह किसी-न-किसी तरहकी हमदर्दी रखे बिना ही रह सकता है। संघर्षका अन्त एक ही हो सकता है और वह अन्त ब्रिटिश भारतीय समाज द्वारा दिखाई गई शक्तिके अनुसार जल्दी या देरसे आयेगा। हम इस समय उग्रतम लड़ाईके बीचमें हैं, और यह सम्भव है कि हमारे सब देशवासी हमारा साथ न दे सकें। किन्तु इसका अर्थ केवल यही है कि लड़ाईका सबसे ज्यादा बोझ थोड़े-से लोगोंके कन्धोंपर पड़ेगा। अन्तमें श्री गांधीने कहा :

हमारे साथियोंकी संख्या चाहे बड़ी हो या छोटी, मैं सच्चे दिलसे भगवानसे प्रार्थना करता हूँ कि वह हमें इस बोझको तबतक वहन करनेकी शक्ति दे जबतक हम अपना ध्येय प्राप्त नहीं कर लेते।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-५-१९०९

१. इस भाषणका जो विवरण यहाँ दिया गया है वह *प्रिटोरिया न्यूज़*से *इंडियन ओपिनियन*में उद्धृत किया गया था।

१४३. भेंट: 'प्रिटोरिया न्यूज'के प्रतिनिधिको[1]

[प्रिटोरिया
मई २४, १९०९]

. . . श्री गांधीने कहा कि मैं जेलमें अपने साथ किये गये व्यवहारके सम्बन्धमें इस समय कोई वक्तव्य नहीं देना चाहता। मैं अबतक तीन बारमें पांच मास तीन सप्ताहकी जेल काट चुका हूँ।

निर्वासनकी नीतिके सम्बन्धमें श्री गांधीने कहा, मुझे इस मामलेमें सावधानीसे विचार करना होगा। मैं नहीं समझ सकता कि ट्रान्सवालकी सरकार ब्रिटिश भारतीयोंपर अपनी सत्ता इस हद तक कैसे बनाये रख सकती है कि वह उन्हें निर्वासित करके भारत पहुँचा दे। कुछ भी हो, निर्वासनकी नीति बहुत ही मूर्खता-भरी है। वह अनावश्यकरूपसे क्रूरतापूर्ण है, और उसका नतीजा केवल यह होगा कि संघर्ष एक ऐसे देशमें चला जायेगा जहाँ सम्भव है उसका स्वरूप और भी अधिक गम्भीर हो जाये। श्री गांधीने कहा:

मुझे यह सुनकर गहरी ठेस लगती है कि सोलह सालका एक लड़का भारत निर्वासित किया जा रहा है, और उसका बाप फोक्सरस्टकी जेलमें है। यदि सरकारका यह अनुमान हो कि वह ऐसे क्रूरतापूर्ण तरीकोंको काममें लाकर भारतीयोंकी हिम्मत तोड़ सकेगी तो वह बहुत भूल करती है।[2]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-५-१९०९

१. गांधीजीने यह भेंट २४ मईको प्रिटोरियाकी मसजिदमें की गई सभाके अन्तमें दी थी; देखिए पिछला शीर्षक।

२. सभाके अन्तमें गांधीजीको दो-तीन सौ भारतीय मिलकर स्टेशन तक पहुँचाने गये और वे रेलगाड़ीसे जोहानिसबर्गके लिए रवाना हो गये।

१४४. भाषण : जोहानिसबर्गकी सभामें[1]

[जोहानिसबर्ग
मई २४, १९०९]

आज कई महीने बाद आपको देखने और आपसे मिलनेका अवसर आया है। इससे मुझे खुशी होती है। परन्तु जेलसे रिहा होनेमें मैं प्रसन्न नहीं हूँ, क्योंकि हमारे नेता — और वे भी वयोवृद्ध — जेलमें हैं। अभी उन्हें अपनी सजा पूरी करनेमें दो महीनेसे ज्यादा लगेंगे। जैसा आप जानते हैं, इनमें श्री दाउद सेठ, श्री पारसी रुस्तमजी और श्री सोराबजी आदि हैं। और यदि स्वार्थी बनकर कहूँ तो मेरा लड़का हरिलाल भी उनमें है। तब मुझे सुखसे बैठना-खाना कैसे अच्छा लगे? जबतक हमें वह चीज नहीं मिलती, जिसे हम माँगते हैं, तबतक हम प्रसन्न नहीं हो सकते। हम जो-कुछ माँगते हैं, खुदा हमें देगा। लेकिन वह सरकारकी मार्फत मिलेगा। हमें वह क्यों नहीं मिलता, इसका कारण हमें श्री काछलिया बता चुके हैं। कहा जाता है कि जो काम एक हजार लोग कर सकते हैं वह दससे नहीं हो सकता। लड़ाई इसलिए लम्बी खिंच रही है कि उसमें काफी लोग हिस्सा नहीं लेते। हम इस समय खुदाके घरमें हैं, जहाँ हमने शपथ ली थी, हाथ उठाया था और यह ऐलान किया था कि जबतक कानून रद नहीं किया जायेगा और शिक्षितोंका अधिकार न दिया जायेगा तबतक हम लड़ते रहेंगे, और प्रमाणपत्रका[2] [पंजीयन] उपयोग न करेंगे। हमें इस प्रतिज्ञाका पालन करनेके लिए जेलमें जाकर रहना चाहिए। मेरी तो इच्छा है कि जल्दी ही नेटाल जाऊँ और वहाँसे वापस आकर गिरफ्तार होऊँ। ऐसा करूँ तो दाउद सेठ और हरिलाल आदिसे मिल सकता हूँ। मेरा कर्तव्य तो समाजकी और समाजके हितचिन्तकोंकी सेवा करना ही है। मैं दाउद सेठके साथ जेल जाऊँ तो माना जायेगा कि मैं ठीक सेवा करता हूँ। आज यह नारा लगाया गया कि "हिन्दुओं और मुसलमानोंके राजाको सलामी दो।" यह उचित नहीं था। मैं समाजका सेवक हूँ, राजा नहीं हूँ। मैं खुदा यानी ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह मुझे सदा समाजकी सेवा करनेकी शक्ति और बुद्धि दे।[3] मेरी मुराद तभी पूरी होगी जब समाजकी सेवा करते-करते ही मेरी मृत्यु हो। मेरा कर्तव्य यही है। जिसके मनमें भारत और भारतीयोंका खयाल हो उसे समाजका सेवक ही बनना चाहिए। मैं बग्घीके सम्मानके लायक नहीं था, और न हूँ। जितनी सेवा करनी थी उतनी सेवा मुझसे नहीं हो सकी है; क्योंकि दूसरे लोग सेवक बनकर अब भी जेलमें हैं। वे छूट जानेपर भी बार-बार

१. प्रिटोरियासे पार्क स्टेशन पहुँचनेपर गांधीजीका वीरोचित स्वागत किया गया। लगभग एक हजार भारतीय, चीनी और यूरोपीय उनकी और उनके साथियोंकी अगवानी करने स्टेशन आये थे उनमें रेवरेंड जे० जे० डोक भी थे। गांधीजीको मालाएँ पहनाई गईं और गाड़ीमें बैठाकर मसजिदके प्रांगणमें ले जाया गया। वहीं अहमद मुहम्मद काछलियाकी अध्यक्षतामें एक सभा हुई, जिसमें गांधीजी पहले गुजराती और बादमें अंग्रेजीमें बोले। देखिए अगला शीर्षक।

२. रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट।

३. रिपोर्टसे पता चलता है कि यह वाक्य बोलते-बोलते गांधीजी विह्वल हो उठे।

जेल जाते हैं। अध्यक्षने अपना सर्वस्व समर्पित करके सेवा की है और अब भी कर रहे हैं। दूसरोंकी भाँति ही मुझे भी जेल मिले और मैं उनके बाद छूटूँ तभी मेरा मन मानेगा। कल जोहानिसबर्गकी जेलसे हमीदिया अंजुमनके अध्यक्ष श्री उमरजी साले छूटेंगे। डीपक्लूफ जेलसे श्री व्यास तथा श्री डेविड अर्नेस्ट भी रिहा किये जायेंगे। भारतीयोंको उन्हें लेनेके लिए जाना चाहिए। आशा है कि कानमिया लोग इस बार अपना पूरा उत्साह दिखायेंगे और श्री उमरजी सालेकी बग्घी खींचकर लायेंगे। मुझे विश्वास है कि वे वृद्ध महानुभाव अब भी समाजके लिए जेल जाना ही अच्छा समझेंगे। मैं दुआ माँगता हूँ कि खुदा पाक उनकी वृद्ध अवस्था होनेपर भी उन्हें शक्ति दे। दूसरोंका कर्तव्य भी उन्हींका अनुकरण करना है। लोगोंको बग्घी लेकर डीपक्लूफ भी जाना चाहिए, और [श्री व्यास तथा श्री अर्नेस्टको भी] गाड़ीमें ही ले आना चाहिए। इस समय मैं इससे अधिक कहना नहीं चाहता। यदि कोई भारतीय यह कहे कि हम हार गये हैं तो वह स्वयं ही हार गया है। जो जेल जाने-वाला मजबूत है, वह तो जीता हुआ ही है। खूनी कानून कब रद किया जायेगा और शिक्षितोंका हक कब मिलेगा, यह तो खुदाके हाथमें है। फिर भी यह इसपर निर्भर है कि हमारा उसमें विश्वास कितना है और हम किस मार्गको अपनाते हैं। खुदा सच्चेके साथ है। हम सच्चे हैं तो हमें जीत मिलेगी ही। दो महीनेकी जेलकी सजा भोगकर जब मैं फोक्सरस्टसे आया था तब भी इतने ही लोग उपस्थित थे। मैं आपसे पूछना चाहूँगा कि आप यहाँ "जी, हाँ जी हाँ," करने आते हैं या बोझा उठानेमें साथ देना चाहते हैं? आपको समझना चाहिए कि आपका कर्तव्य जेलके कष्ट सहना है। जेलमें और जेलके बाहर एक-सा ही है। फोक्सरस्ट जेलमें मेरे साथ कुछ तमिल भाई थे। श्री नायडू लिखते हैं कि वे अभी तक दृढ़ हैं और जेल जानेके लिए एक पैर उठाये तैयार हैं। हमारे लिए तो अखबार है, इसलिए हम समझ-समझा सकते हैं। तमिलोंकी भाषामें अखबार नहीं है, फिर भी वे कैसी बहादुरी दिखा रहे हैं और किस तरह अपना कर्तव्य पूरा कर रहे हैं! उन्हें खुदापर भरोसा है। उनका उदाहरण लेकर हमें उनके पद-चिह्नोंपर चलना चाहिए। यदि हम ऐसा करें तो जीत हमारे साथमें है और समीप ही है। आप सबने और चीनी लोगोंने आज यहाँ मेरे स्वागतके लिए आनेका कष्ट किया है, मैं इसके लिए आपका आभार मानता हूँ। अभी कौमके रुखको समझे बिना मैं कुछ विशेष नहीं कह सकता हूँ; फिर भी आप जो-कुछ पूछेंगे उसका खुलासा दफ्तरमें करूँगा। शपथ लेना और हाथ उठाना बहुत हो चुका। अब मैं वैसा नहीं चाहता। लेकिन हम यदि जेल जानेके लिए सच्चे दिलसे तैयार हों तो सारे रास्ते खुले हैं। और उसके लिए ही मैं आपको भरसक सलाह दूँगा। यदि आप वैसा करेंगे तो आपकी जय अवश्य होगी। अब भी समय गया नहीं है। आप इतना करें तो काफी होगा।[1]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-५-१९०९

१. इसके बाद गांधीजी अंग्रेजीमें बोले; देखिए अगला शीर्षक।

१४५. भाषण : जोहानिसबर्गकी सभामें

[जोहानिसबर्ग
मई २४, १९०९]

उन्होंने [गांधीजीने] कहा कि मुझे जेलसे बाहर आनेमें जरा भी खुशी नहीं है। इसका कारण स्पष्ट है। भारतीय समाजके कुछ अच्छेसे-अच्छे लोग अब भी ट्रान्सवालकी विभिन्न जेलोंमें हैं। उनमें से कुछ तो वृद्ध हैं। मेरा सबसे बड़ा लड़का भी अभी जेलमें है। कुछ लोगोंको तो अभी दोसे ढाई मास तक की सजा और काटनी है। उनमें से कुछने मेरे साथ मित्रोंके नाते काम किया है और कुछ मेरे प्रति प्रेम और सम्मानका भाव रखनेके कारण ही जेल गये हैं। जबकि इन सभीकी आजादीपर प्रतिबन्ध लगा हुआ है, मनुष्य होते हुए क्या मुझे अपनी रिहाईपर किसी तरहकी प्रसन्नता हो सकती है? इस प्रकारकी परिस्थितियोंमें मैं सुखी नहीं हो सकता। जबतक हमारे प्रति न्याय नहीं किया जाता, जो कि हमारा हक है, तबतक हम न खा सकते हैं और न आराम कर सकते हैं। हमारे प्रति वह न्याय कब होगा, यह भगवान ही जानता है, किन्तु इतना तो हम जानते हैं कि वह होगा अवश्य। पिछले तीन स्मरणीय मासोंमें मैंने स्थितिपर बार-बार विचार किया है और गत ढाई वर्षोंपर नजर दौड़ानेके बाद मैं अब भी कह सकता हूँ कि मैंने अपने देशभाइयोंको जो सलाह दी थी उसमें से मैं कुछ भी वापस नहीं लेता। (हर्ष ध्वनि।) मैंने १९०७ के कानूनकी जो निन्दा की है उसका एक शब्द भी मैं वापस नहीं ले सकता और मैं अब भी अपने इस वक्तव्यपर दृढ़ हूँ कि जनरल स्मट्स उक्त कानूनको रद करनेके लिए वचनबद्ध हैं। हम पूर्ण और शुद्ध न्याय चाहते हैं। सम्पूर्ण भारतीय राष्ट्रका जो अपमान किया गया है, उसके सामने कोई भी भारतीय चुप नहीं बैठ सकता। जबतक वर्तमान स्थिति कायम है तबतक ट्रान्सवालमें सुरक्षित स्थान केवल जेल है। मैं जेलमें अपने साथ किये गये व्यवहार या संघर्षके बारेमें अधिक कुछ नहीं कहना चाहता। संघर्षके बारेमें अधिक कुछ न कहनेका कारण यह है कि हालमें क्या होता रहा है, मैं नहीं जानता। मैं जिन जेल-अधिकारियोंकी सीधी देख-रेखमें था उनके विरुद्ध मुझे कुछ भी नहीं कहना है। मेरे हलकेके सन्तरी मेरे साथ हर तरहसे शिष्टता और सौजन्यका व्यवहार करते थे। यही बात दूसरे अधिकारियोंके बारेमें भी है। मैं शीघ्र ही बहुत-कुछ और लिखूंगा, जो मुझे अपने देशभाइयोंसे कहना है। उन्हें बहुत-सा काम करना है और उन्हें अपने कर्तव्यका बोध होना चाहिए। मैं उन्हें बग्घीमें सड़कोंपर घुमाये जानेकी अपेक्षा अपने लक्ष्यके लिए काम करते देखना अधिक पसन्द करता हूँ। मैंने पिछले तीन महीनोंमें 'बाइबिल'में सन्त डैनियलसे सम्बन्धित अंश पढ़कर बहुत सान्त्वना पाई है। अबतक जितने भी सत्याग्रही हुए हैं, उनमें डैनियल महानतम थे और हमें उनका अनुसरण करना चाहिए। यदि जनरल बोथा और स्मट्सके कानून हमारी अन्तरात्माके विरुद्ध हैं तो वे हमारे लिए नहीं हैं। हमें निःशंक-भावसे रहना चाहिए और

उन सज्जनोंसे कहना चाहिए कि वे जो भी कानून पास करते हैं, यदि वे ईश्वरीय कानून नहीं हैं, तो हमारे लिए नहीं हैं। हम कमर कस लें और काम करें। बातोंमें या अन्यथा अपनी शक्ति नष्ट न करें। मुझे दुःख है कि हममें कुछ लोगोंने कानून स्वीकार करके अपनी गम्भीर प्रतिज्ञा तोड़ दी है। किन्तु हम अब भी अपना कदम वापस लेकर सही काम कर सकते हैं। गांधीजीने आगे कहा कि कल अनेक प्रमुख भारतीय रिहा किये जायेंगे। आप उनका उचित स्वागत करें। उन्होंने लोगोंको सभामें आनेके लिए धन्यवाद दिया और ईश्वरसे प्रार्थना की कि वह उन्हें उनके सामने मौजूद असली कामको करनेकी शक्ति दे।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९–५–१९०९

१४६. पत्र: अखबारोंको[2]

जोहानिसबर्ग
मई २६, १९०९

महोदय,

मेरे पिछले कारावासके दिनोंमें मेरे साथ किये गये व्यवहारके सम्बन्धमें बहुत चर्चा हुई है। इसलिए यदि आप निम्न वक्तव्य प्रकाशित कर दें तो मैं आपका कृतज्ञ होऊँगा। जब मुझे फोक्सरस्टमें तीन महीनेकी कड़ी कैदकी सजा दी गई और मैं वहाँकी जेलमें ले जाया गया, तो मैंने देखा कि वहाँ, मेरे पुत्रको मिलाकर, मेरे पचाससे ज्यादा साथी-कार्यकर्ता मौजूद हैं। यह अपने-आपमें ही मेरे लिए बड़ी सुखद बात थी। जो खाना दिया जाता था, वह अच्छा और साफ होता था। उसमें प्रतिदिन एक औंस घी होता था। खाना भारतीय रसोइये पकाते थे। सब भारतीय कैदी वतनियोंसे बिल्कुल अलग रखे जाते थे और उनके पाखाने और स्नानागार आदि भी अलग होते थे। जो कोठरियोंमें रहते थे, उनके पास मामूली तौरपर जो कम्बल वगैरह दिये जाते हैं उनके अलावा तख्त होते थे और हरएकको एक तकिया दिया जाता था। काम बाहर खुलेमें करना होता था और हममें से तीसके लगभग सड़ककी मरम्मत या स्कूलके मैदानमें घासपातकी सफाई करते थे। जहाँतक मेरा सम्बन्ध था, ये दोनों ही कार्य बहुत अनुकूल और स्वास्थ्यप्रद थे। मुझे गत २५ फरवरीको सजा दी गई थी।

१. सभामें इसके बाद रेवरेंड जे० जे० डोक और तमिल कल्याण सभा (तमिल बेनीफिट सोसायटी)के अध्यक्ष श्री चेट्टियारने भाषण दिया।

२. यह पत्र, जो ट्रान्सवालके सभी अखबारोंके लिए लिखा गया था, **इंडियन ओपिनियन**में "प्रिटोरिया जेलमें श्री गांधीके अनुभव" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

"तनहाई"

मार्च २ को मुझे प्रिटोरिया ले जानेकी आज्ञा दी गई। मुझे तीसरे दर्जेके डिब्बेमें यात्रा करनी पड़ी थी और चूँकि यात्रा अधिकांश रातको की गई, इसलिए स्वभावतः ही सर्दी थी। स्पष्ट ही कैदियोंको [रास्तेके लिए] कम्बल नहीं दिये जाते। इस कारण और भी सर्दी लगी। ३ मार्चको प्रिटोरिया पहुँचनेपर मामूली रस्मी कार्रवाइयाँ पूरी होनेके बाद मुझे एक कोठरीमें बन्द कर दिया गया। मेरा खयाल है, पाँच दिनतक, सिवा उस वक्तके जब मुझे नहाने और ऐसे ही दूसरे कार्योंके लिए बाहर जाने दिया जाता था, मुझे सारा वक्त कोठरीमें या गलियारेमें ही बिताना पड़ा। मेरी कोठरीके किवाड़ोंपर लिखा था "तनहाई" (आइसोलेटेड) और मैंने देखा भी कि मुझे और दूसरे चार कैदियोंको तनहाईमें रखा जाता है। इनमें से एकको हत्याका प्रयत्न करनेपर, दोको अप्राकृतिक व्यभिचार करनेपर और एकको अश्लील व्यवहार करनेपर सजाएँ दी गई थीं। यहाँ कोई तकिया या तख्त नहीं दिया गया और खानेके लिए बुधवार और रविवारको छोड़कर दूसरे दिन घी बिलकुल नहीं दिया जाता था। मुझे अपनी कोठरीके फर्शकी और जिस हिस्सेमें मुझे तथा वतनी कैदियोंको रखा गया था उसके गलियारेमें कोठरियोंके किवाड़ोंकी पालिश करनेका काम दिया गया था। इन्हीं दिनों श्री लिखटैन्स्टाइन[1] मुझसे मिले और मैंने उनसे कहा कि मैं इस व्यवहारको पाशविक मानता हूँ, और स्पष्टतः जनरल स्मट्सका इरादा मुझे झुकानेका है, लेकिन मैं झुकनेवाला नहीं हूँ। बादमें, मुझे दिनमें दो बार आध-आध घंटा व्यायाम कराया जाने लगा और अपने पहले कामोंके बदले कम्बल सीनेका और ऐसा ही दर्जीगीरीका दूसरा काम मिलने लगा।

दिनमें एक बार भोजन

मैं लगभग जलपानके बिना ही रहता था, क्योंकि मकईका दलिया मेरी रुचिके लायक काफी पकाया नहीं जाता था। मैंने इसके सम्बन्धमें कोई शिकायत नहीं की, क्योंकि मैं देखता था कि दूसरे सब कैदी दलिया स्वादसे खाते थे। मैं शामको कुछ नहीं खाता था, क्योंकि जो चावल दिया जाता था उसमें घी नहीं होता था। मैंने घीके अभावकी शिकायत मुख्य वार्डरसे की; किन्तु उसने असमर्थता बताई, क्योंकि नियमोंमें भारतीय कैदियोंको घी देनेकी व्यवस्था नहीं थी। यहाँ मैं इतना कह दूँ कि सब वतनी कैदियोंको प्रतिदिन एक-एक औंस चर्बी दी जाती है। बादमें मैं चिकित्सा-अधिकारीके पास गया और अनुरोध किया कि भारतीयोंकी भोजन-तालिकामें प्रतिदिन एक औंस घी होना चाहिए। वह परिवर्तन करना नहीं चाहता था, किन्तु उसने मेरे लिए खास तौरपर चावलके साथ ८ औंस रोटी देनेकी आज्ञा दे दी। मैंने उससे कहा कि मैं इसके लिए आभारी हूँ, फिर भी मैं इस विशेष अधिकारको तबतक स्वीकार नहीं कर सकता, जबतक सब भारतीय कैदियोंको घी नहीं दिया जाता; क्योंकि मैं इसको उनके स्वास्थ्यके लिए नितान्त आवश्यक समझता हूँ। इसके बाद मैंने यह मामला जेल-निदेशकके[2] सामने पेश किया।[3] पन्द्रह दिन बाद आज्ञा दे दी गई कि मुझे चावलके साथ एक औंस घी दिया जाय। यह खयाल करते हुए कि यह आज्ञा सबके लिए है, मैंने घी एक दिन लिया। किन्तु जब मैंने देखा कि यह तो केवल मेरे लिए रियायत है, तब मैं विवश होकर पहली ही

१. वकील और गांधीजीके सह-व्यवसायी।

२. डायरेक्टर ऑफ प्रिज़न्स।

३. देखिए "मसविदा जेलके गवर्नरको लिखे प्रार्थनापत्रका", पृष्ठ २०३-४।

स्थितिपर वापस आ गया, अर्थात् फिर दिनमें एक बार भोजन करने लगा। मैंने जेल-निदेशकका[1] ध्यान एक बार फिर इस तथ्यकी ओर आकर्षित किया कि मैं अंशतः भूखा रखा जा रहा हूँ, और जब मैं डेढ़ महीनेकी सजा भुगत चुका तब उत्तर मिला कि जबतक भारतीय भोजन-तालिकामें परिवर्तन नहीं होता तबतक जहाँ भी भारतीय कैदियोंका जमाव है, घी दिया जायेगा। मैंने इसके लिए कृतज्ञता अनुभव की और उसके बाद मुझे अपना सायंकालका भोजन करनेमें कोई हिचक नहीं हुई। इसके बाद जलपान न करनेसे मुझे कोई हानि नहीं हुई।

स्वास्थ्यमें बिगाड़

जेल-निदेशक निरीक्षणके लिए आये और उन्होंने मुझसे मेरे सम्बन्धमें सौजन्यपूर्ण पूछ-ताछ की। जब उन्होंने पूछा कि तुम्हें कोई शिकायत तो नहीं है, मैंने उन्हें कुछ बातें बताईं, जिनकी मैं चर्चा कर चुका हूँ। फलतः एक तख्त, नम्देकी पट्टी, रातमें पहननेके लिए कमीज और रूमाल मुझे दे दिये गये; पेंसिल और नोटबुकके उपयोगकी अनुमति भी मिल गई। अभीतक मुझे ये चीजें नहीं दी गई थीं। मैं यहाँ यह भी कृतज्ञतापूर्वक कह दूँ कि मुझे किताबोंका यथेष्ट उपयोग करने दिया गया। उन किताबोंसे मुझे बहुत सान्त्वना मिली। मुझे कोठरीमें दर्जीगीरीका जो काम करना पड़ता था उसमें लगभग ७ घंटे रोज झुके रहनेकी जरूरत होती थी। मेरे स्वास्थ्यपर उसका बुरा असर पड़ने लगा। इसलिए मैंने अनुरोध किया कि मुझे ज्यादा मेहनतका काम दिया जाये या, कमसे-कम, खुलेमें सिलाई करने दी जाये। ये दोनों अनुरोध पहले अस्वीकृत कर दिये गये। मेरा खयाल है कि कोठरीमें बिल्कुल बन्द रहनेसे ही लगभग दस दिनतक मेरे सिरकी नसोंमें जोरोंका दर्द रहा और छातीकी बीमारीके लक्षण भी उत्पन्न हो गये। दुबारा निवेदन करनेपर मुझे खुली हवामें सिलाईका काम करनेकी अनुमति दी गई।

केवल सरकार दोषी

मैंने जनरल स्मट्सके सम्बन्धमें श्री लिखटैन्स्टाइनके सामने जो राय जाहिर की थी वह आगे और देखने-भालनेके बाद बदल गई और मैंने अनुभव किया कि ऊपर बताये गये व्यवहारसे उनका कुछ सीधा सम्बन्ध नहीं था। दरअसल, उन्होंने मेरे पढ़नेके लिए दो अच्छी पुस्तकें भेजी थीं, मैं यहाँ इस बातका कृतज्ञतापूर्वक स्मरण करता हूँ। मैंने उनके इस कामको इस बातका प्रमाण माना है कि उनके मनमें मेरे प्रति कोई व्यक्तिगत दुर्भाव नहीं था और उन्होंने मुझे यह श्रेय दिया कि मैंने जो ठीक समझा है वह किया है। और जो-कुछ मुझे सहना पड़ा, उसके लिए मैं किसी कर्मचारीको भी दोष नहीं देता। वे सब शिष्ट और कृपालु थे। मैं विभागके वार्डरोंको जितना भी, धन्यवाद दूँ कम है। लगता था कि वे मेरी विशिष्ट स्थितिको अनुभव करते हैं और हर तरह मेरा खयाल रखते हैं। फिर भी मुझे अपनी इस रायपर कायम रहना पड़ता है कि व्यवहार स्वतः पाशविक था। मेरी सजा कड़ी कैदकी सजा थी; किन्तु वह अधिकांशतः लगभग तनहाईकी कैद रही। जेल-विभागके अधिकारी अन्यथा नहीं कर सकते थे, क्योंकि भारतीयोंके वतनी कैदियोंके साथ वर्गीकृत होनेसे मैं केवल वतनी कैदियोंके विभागमें ही रखा जा सकता था। किन्तु यही बात सरकारके सम्बन्धमें नहीं कही जा सकती, जिसने इतने भारतीय कैदी होनेपर भी इस मामलेमें कुछ नहीं सोचा। जब मुझे

१. डायरेक्टर ऑफ प्रिज़न्सका।

फोक्सरस्टके साथी-कैदियोंसे निर्दयतापूर्वक अलग किया गया तब सरकारको अवश्य मालूम रहा होगा कि प्रिटोरियामें मुझे ऐसी मुसीबतें सहनी पड़ेंगी, जो मुझको दी गई सजाके अनुसार अभीष्ट नहीं हैं। मैं यह नहीं कहता कि भारतीय कैदी यूरोपीय कैदियोंकी श्रेणीमें रखे जायें। तब उनकी अवस्था कदाचित् अबसे बहुत ज्यादा बुरी होगी। किन्तु मैं यह अवश्य कहता हूँ कि उनको पृथक् श्रेणी और पृथक् स्थानमें रखा जाना चाहिए। मुझसे कहा जा सकता है कि अपनी मर्जीसे कैदमें जानेके बाद मेरे लिए जेल-व्यवस्थाकी शिकायत करना उचित नहीं हो सकता। यह ताना ठीक नहीं है, क्योंकि मेरा निवेदन यह है कि मुझे ऐसे कष्ट दिये गये जिन्हें टाला जा सकता था। और कुछ भी हो, जिन लोगोंके नामपर सरकार शासन करती मानी जाती है, उनके लिए यह जानना अच्छा है कि भारतीय सत्याग्रहियोंके साथ कैसा बरताव किया जा रहा है।

दूसरे कैदी

अपनी रिहाईके बाद मुझे मालूम हुआ कि यदि मुझे कुछ कष्ट उठाना पड़ा, तो अन्य सत्याग्रहियोंमें से ज्यादातरकी अवस्था इससे बुरी नहीं तो अच्छी भी नहीं रही; क्योंकि जोहानिसबर्ग फोर्टमें जो भारतीय सत्याग्रही थे उनमें से ज्यादातर डीपक्लूफकी कैदी बस्तीमें, और फोक्सरस्टमें जो थे उनमें से ज्यादातर हाइडेलबर्ग [की जेल] में भेज दिये गये थे। इन दोनों स्थानोंमें प्रारम्भिक अवस्थाओंमें उनको ऐसे कष्ट सहने पड़े जो बिल्कुल वांछनीय नहीं थे। भारतीय कैदीको जो काम दिया जाता है, सम्भव है वह उसकी शिकायत तबतक न करे जबतक वह उसे सहन कर सके; मगर मेरा खयाल है कि उसे अनुचित, अनुपयुक्त या अपर्याप्त आहारके सम्बन्धमें शिकायत करनेका पूरा अधिकार है। उपनिवेशके एक अत्यन्त वीर और सच्चे भारतीयसे, जो ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यवाहक अध्यक्षके पदपर आसीन रहा है और एक प्रसिद्ध व्यापारी है, मल-मूत्रके डोल उठवाये गये हैं — यह उपनिवेशके लिए कोई गौरवकी बात नहीं है।

जो लोग पिछले कुछ महीनोंमें इन कठिनाइयोंसे गुजर चुके हैं, वे कितने ही परेशान किये जानेपर भी अपने उद्देश्यसे विचलित न होंगे। कुछ लोग फिर जेल गये हैं। उनमें एक उन्नीस सालका युवक पाँचवीं बार गया है। जनताको यह मालूम नहीं है कि वेरीनिगिंगमें श्री अस्वातकी, जो स्वयं डीपक्लूफमें कैद हैं, दूकानकी व्यवस्था करनेकी वजहसे करीब-करीब हर रोज एक आदमी गिरफ्तार होता है और तीन महीनेकी सख्त कैदकी सख्त सजा पाता है। ऐसे आठ भारतीयोंकी बलि दी जा चुकी है और स्वयंसेवक अभीतक इस दूकानका काम सम्भालनेके लिए आ रहे हैं। जब ऐसी हालत है तब सत्याग्रह मरा नहीं है। वह मर नहीं सकता, क्योंकि वह सत्यका प्रतीक है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-६-१९०९

१४७. सत्याग्रही कौन हो सकता है ?

ट्रान्सवालमें सत्याग्रहकी लड़ाई इतनी लम्बी चली है, और ऐसे ढंगसे चली है कि हमें उससे बहुत-कुछ देखने-सीखनेको मिला है। बहुत-से लोगोंने स्वतः अनुभव प्राप्त किया है। और, इतना तो सभी जान गये हैं कि इस लड़ाईमें हारनेकी बात है ही नहीं। अमुक वस्तु न मिले तो हम देख सकते हैं कि उसमें सत्याग्रहीकी कमजोरी है, सत्याग्रहकी कमजोरी नहीं। यह बात बहुत ध्यानपूर्वक समझने योग्य है। शरीर-बलकी लड़ाईमें ऐसा नियम लागू नहीं होता। उसमें दो सेनाएँ लड़ती हैं, तो [किसी पक्षकी] हार केवल सैनिकोंकी कमजोरीसे ही हो जाये, ऐसा नहीं होता। लड़नेवालोंके बहुत बहादुर होनेपर भी दूसरे साधन कच्चे हों तो हार हो जाती है। उदाहरणके लिए, अगर उनके मुकाबले विरोधी पक्षके पास हथियार अच्छे हों, या उसको जगह अच्छी मिली हो, या उसकी युद्ध-कला बढ़ी-चढ़ी हो, तो उनकी हार हो सकती है; और ऐसे ही बहुत-से बाहरी कारणोंसे शरीर-बलकी लड़ाईमें लड़नेवाले सैनिकोंकी हार-जीत होती है। परन्तु सत्याग्रहकी विधिसे लड़नेवालोंको बाहरी कारणोंसे बिल्कुल अड़चन नहीं हो सकती। उनके लिए तो केवल उनकी अपनी कमजोरी ही बाधक होती है। इसके अलावा, साधारण लड़ाईमें जो पक्ष हारता है उसके सभी लोग हारे हुए माने जाते हैं, और वे हारते भी हैं। सत्याग्रहमें एककी जीतसे दूसरे भले ही विजयी समझे जायें, किन्तु सबके हार जानेपर भी जो खुद न हारा हो वह दूसरोंकी हारसे नहीं हारता। उदाहरणके लिए, ट्रान्सवालकी लड़ाईमें बहुत-से भारतीय इस भयंकर कानूनके अधीन हो जायें, फिर भी जो उसके अधीन नहीं होता, वह तो अधीन नहीं ही हुआ और इसलिए विजयी ही हुआ।

तब ऐसी अच्छी — बिना हारकी — एक ही परिणामवाली लड़ाई कौन लड़ सकता है, यह विचार करना जरूरी है। इससे हम ट्रान्सवालकी लड़ाईके कुछ परिणामोंको समझ सकेंगे और यह भी देख पायेंगे कि दूसरे स्थानोंमें तथा दूसरे अवसरोंपर यह लड़ाई कैसे लड़ी जाये और इसमें कौन लड़े।

सत्याग्रहके अर्थपर विचार करते हुए हम देखते हैं कि पहली शर्त यह है कि लड़नेवालेमें सत्यका आग्रह — सत्यका बल — होना चाहिए, अर्थात् उस व्यक्तिको केवल सत्यके ऊपर निर्भर रहना चाहिए। एक पग दहीमें और एक पग दूधमें रखने [अर्थात्, दो नावोंपर पैर रखने]से काम न चलेगा। ऐसा करनेवाला व्यक्ति [शरीर-बल और नैतिक बलके दो पाटलोंके] बीचमें कुचल जायेगा। सत्याग्रह कोई गाजरकी पीपनी नहीं है कि वह बजेगी तो बजायेंगे और नहीं तो खा जायेंगे। ऐसा माननेवाला व्यक्ति भटक-भटककर परेशान ही होता रहेगा। यह बात बिल्कुल बेकार है कि सत्याग्रहकी लड़ाई वही व्यक्ति लड़ता है, जिसमें शरीर-बलकी कमी हो अथवा जो यह मानता हो कि शरीर-बल काम नहीं देता, इसलिए मजबूरन सत्याग्रही बनना पड़ता है। जिनकी ऐसी मान्यता है वे सत्याग्रहकी लड़ाईको नहीं जानते, ऐसा कहा जा सकता है। सत्याग्रह शरीर-बलसे अधिक तेजस्वी है और उसके सामने शरीर-बल तिनकेके समान है। शरीर-बलमें मुख्य बात यह है कि शक्तिशाली पुरुष अपने शरीरकी परवाह न करके संग्राममें जूझता है, अर्थात् वह डरपोक नहीं होता। सत्याग्रही तो अपने शरीरको कुछ भी नहीं गिनता। उसमें डर तो पैठ ही नहीं सकता। इसीलिए वह बाहरी

हथियार नहीं बाँधता और मौतका डर रखे बिना अन्ततक लड़ता है। अतएव सत्याग्रहीमें शरीर-बलपर निर्भर व्यक्तिके मुकाबले हिम्मत ज्यादा होनी चाहिए। इस प्रकार सत्याग्रहीके लिए सबसे पहले सत्यका सेवन करना, सत्यके ऊपर आस्था रखना आवश्यक है।

उसमें पैसेके प्रति अनासक्ति होनी चाहिए। सम्पत्ति और सत्यमें सदा अनबन रही है और अन्ततक रहेगी। जो सम्पत्तिसे चिपकता है वह सत्यकी रक्षा नहीं कर सकता। यह हमने ट्रान्सवालमें बहुत-से भारतीयोंके मामलोंमें देखा है। इसका अर्थ यह नहीं है कि सत्याग्रहीके पास सम्पत्ति हो ही नहीं सकती। हो सकती है; किन्तु पैसा उसका परमेश्वर नहीं बन सकता। सत्यका सेवन करते हुए पैसा रहे तो ठीक है; अन्यथा उसको हाथका मैल समझकर त्यागनेमें एक पलके लिए भी झिझक न हो। जिसने अपना मन ऐसा न बनाया हो उससे सत्याग्रह हो ही नहीं सकता। इसके अतिरिक्त, जिस देशमें राजाके विरुद्ध सत्याग्रह करना पड़ता है उस देशमें सत्याग्रहीके पास सम्पत्ति होना मुश्किल बात है। राजाका बल मनुष्य-पर नहीं, उसकी सम्पत्तिपर अथवा उसके भयपर चलता है। राजा प्रजासे जो-कुछ कराना चाहता है वह उसका खजाना लूटने या उसके शरीरको नुकसान पहुँचानेका डर दिखाकर करता है। इसलिए अत्याचारी राजाके राज्यमें प्रायः अत्याचारमें भाग लेनेवाले लोग ही पैसा रख या जोड़ सकते हैं। सत्याग्रही अत्याचारमें तो भाग ले नहीं सकता, इसलिए गरीबीमें ही अमीरी मान लेना उसके लिए उचित होता है। उसके पास सम्पत्ति हो तो उसे दूसरे देशमें रखना चाहिए।

सत्याग्रहीको कुटुम्बका मोह छोड़ना पड़ता है। यह बहुत मुश्किल बात है। किन्तु सत्याग्रह, जैसा उसका नाम है, तलवारकी धार है। अन्तमें इससे भी कुटुम्बका लाभ होता है, क्योंकि कुटुम्बियोंको भी सत्याग्रहकी लगन लगनेका अवसर आता है और यह लगन जिसको लगती है, उसको फिर दूसरी इच्छा नहीं रहती। कोई खास दुःख सहते हुए — धन गँवाते हुए या जेल जाते हुए — यह शंका या चिन्ता नहीं होनी चाहिए कि कुटुम्बका क्या होगा। जिसने दाँत दिये हैं वह चबेना भी देगा। जो साँप, बिच्छू, बाघ और भेड़िया आदि भयानक जीव-जन्तुओं या प्राणियोंको भोजन दे रहा है वह मानवजातिको भूलनेवाला नहीं है। हम जो इतनी हाय-हाय करते हैं वह सेर-भर बाजरे या मुट्ठी-भर अन्नके लिए नहीं, बल्कि खट्टे-मीठे स्वादके लिए; ठंड दूर करनेके लायक मामूली कपड़ेके लिए नहीं, बल्कि रेशम और कीमखाबके लिए। यदि हम इन लालसाओंको छोड़ दें तो सिर्फ कुटुम्बके भरण-पोषणको लेकर चिन्ता कम ही रह जायेगी।

इस सम्बन्धमें यह विचार करने योग्य है कि शरीर-बल आजमानेमें भी इसमें से बहुत-कुछ छोड़ देना पड़ता है। भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी सहन करनी पड़ती है, कुटुम्बका मोह छोड़ना पड़ता है और पैसेका त्याग करना होता है। बोअरोंने शरीर-बलकी आजमाइश करते हुए यह सब किया। उनके शरीरी आग्रह और अपने सत्याग्रहमें बड़ा अन्तर यह है कि उनकी बाजी जुएकी बाजी थी। इसके अतिरिक्त उनको अपने शरीर-बलका अभिमान हो गया। वे आधा जीतनेपर अपनी पहली दशा भूल गये। वे अत्याचारीके विरुद्ध अत्याचारके हथियारसे लड़े, इसलिए वे अब हमारे ऊपर अत्याचार करने लगे हैं। जब सत्याग्रही लड़कर जीतता है तब उसकी जीतका परिणाम उसके लिए भी और दूसरोंके लिए भी अच्छा ही होता है। सत्याग्रही सत्यपर डटा रहेगा; वह कभी अत्याचारी बन ही नहीं सकता।

इस प्रकार, सत्याग्रही कौन हो सकता है, इसका विचार करते हुए यह परिणाम निकलता है कि जिसकी धर्ममें — दीनमें — सच्ची आस्था है, वही सत्याग्रही हो सकता है; "मुखमें राम, बगलमें छुरी"[1]-जैसी आस्थावाला नहीं। दीनका नाम लेकर दीनके खिलाफ काम करना दीन नहीं है। जो धर्म, दीन और ईमानकी रक्षा उचित प्रकारसे करता है वही सत्याग्रही हो सकता है। इसका अर्थ यह है कि जो मनुष्य सब-कुछ खुदा या ईश्वरपर ही छोड़ देता है, उसको संसारमें कभी हारना ही नहीं पड़ता। लोग हारा हुआ कहें, उससे वह हारा हुआ नहीं माना जायेगा। लोग उसे जीता हुआ मानें, तो उसमें उसकी जीत भी नहीं है। इसको जो जानता है, वही जानता है।

यह सत्याग्रहका सच्चा रूप है। इसको एक हद तक ट्रान्सवालके भारतीयोंने जाना है। उन्होंने इसको जानकर इसका कुछ पालन भी किया है। इतनेसे ही हम इसके अमूल्य रसका आस्वादन कर सके हैं। जिसने सत्याग्रहकी खातिर अपने सर्वस्वका त्याग किया है, उसने सब-कुछ पा लिया है, क्योंकि वह सन्तोष मानता है, और सन्तोष सुख है। इसके सिवा दूसरा सुख किसने जाना है? दूसरा सुख तो मृगजलके समान है। ज्यों-ज्यों हम उसकी ओर बढ़ते हैं त्यों-त्यों वह दूर होता जाता है।

हम चाहते हैं कि ऐसा सोचकर हरएक भारतीय सत्याग्रही बने। यह हथियार हाथ लग जायेगा तो अन्याय-जनित सभी दुःखोंको दूर करनेमें काम आयेगा। यह यहाँ ही नहीं, बल्कि अपने देशमें भी बहुत उपयोगी है। केवल इसका ठीक स्वरूप समझ लेना चाहिए। उसको समझना जैसा सहज है, वैसा ही कठिन भी है। शरीरके बली भी थोड़े होते हैं; फिर सत्यके बली तो उनसे भी कम होते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-५-१९०९

१४८. मेरा जेलका तीसरा अनुभव [१]

फोक्सरस्ट

जब २५ फरवरीको मुझे तीन माहकी सख्त कैदकी सजा हुई और मैं फोक्सरस्टकी जेलमें अपने कैदी भाइयों और लड़केसे मिला, तब मैंने यह नहीं सोचा था कि इस तीसरी जेलयात्राके विषयमें मेरे पास कुछ अधिक कहने या लिखने-जैसा होगा। लेकिन मेरी यह धारणा मनुष्यकी अनेक अन्य धारणाओंकी तरह ही झूठी सिद्ध हुई है। इस बार मुझे जो अनुभव मिला है, वह कुछ दूसरे ही प्रकारका है। उससे मैंने जितना सीखा है, उतना वर्षोंके अभ्याससे भी नहीं सीख सकता था। इन तीन महीनोंको मैं अमूल्य गिनता हूँ। इस स्वल्प अवधिमें सत्याग्रहके अनेक जीवन्त उदाहरण मेरे सामने आये, और मैं मानता हूँ, तीन

१. गांधीजीने मूल गुजराती लेखमें इस हिन्दी कहावतका ही उपयोग किया है।

माह पहले मैं जितना बलवान सत्याग्रही था उसकी अपेक्षा आज अधिक बलवान हो गया हूँ। इस सारे लाभके लिए मुझे यहाँकी (ट्रान्सवालकी) सरकारका उपकार मानना चाहिए।

कुछ अधिकारियोंने यह ठान ली थी कि इस बार मुझे छः माससे कमकी सजा न मिले। मेरे साथी — जिनमें अनेक बुजुर्ग और प्रसिद्ध भारतीय हैं — और मेरा लड़का, ये सब छः-छः माहकी सजा भोग रहे थे। इसलिए मैं यह चाहता था कि अधिकारियोंकी यह आशा पूरी हो तो अच्छा। लेकिन मेरे ऊपर जो आरोप लगाया गया था, वह कानूनकी धारा-विशेषके[1] अनुसार लगाया गया था; इसलिए मुझे डर था कि ज्यादासे-ज्यादा मुझे तीन माहकी ही सजा होगी। और हुआ भी ऐसा ही।

जेल पहुँचकर श्री दाउद मुहम्मद, श्री रुस्तमजी, श्री सोराबजी, श्री पिल्ले, श्री हजूरासिंह, श्री लालबहादुर सिंह, आदि सत्याग्रही योद्धाओंसे मैं अत्यन्त हर्षपूर्वक मिला। दस-एक लोगोंको छोड़कर बाकी सबके सोनेकी व्यवस्था जेलके मैदानमें खड़े किये गये तम्बुओंमें की गई थी। इसलिए सारा दृश्य जेलके बजाय लड़ाईकी छावनी-जैसा लगता था। तम्बूमें सोना सबको पसन्द था। खाने-पीनेका सुख था। रसोई पहलेकी तरह हमारे ही हाथमें थी। उसमें मनचाहे ढंगसे खाना बनता था। सब मिलकर ७७ (सत्याग्रही) कैदी थे।

जिन कैदियोंको काम करनेके लिए बाहर ले जाते थे, उनका काम थोड़ा कठिन था। उन्हें मजिस्ट्रेटकी कचहरीके सामनेकी सड़क तैयार करनी थी। उसके लिए पत्थर खोदने पड़ते थे, उनके छोटे-छोटे टुकड़े करने पड़ते थे और बादमें उन्हें जहाँ सड़क बन रही थी वहाँ तक ले जाना पड़ता था। यह काम खत्म होनेके बाद स्कूलके मैदानमें घास खोदनी पड़ती थी। लेकिन अधिकांशतः यह काम सब लोग मजेसे करते थे।

इस तरह तीन-एक दिन मैं भी इन टुकड़ियोंके साथ गया। इस बीच (सरकारका) तार आया कि मुझे काम करनेके लिए बाहर न भेजा जाये। मैं निराश हुआ, क्योंकि मुझे बाहर जाना पसन्द था। उसमें मेरी तबीयत सुधरती थी और शरीर कसता था। साधारणतः मैं हमेशा दिनमें दो बार ही खाता हूँ। फोक्सरस्ट जेलमें इस कसरतके कारण शरीर दोकी जगह तीन बार खाना माँगता था। अब मुझे झाड़ू लगानेका काम मिला। ऐसा मालूम पड़ा कि इसमें दिन कटेगा नहीं। और इतने में ही यह काम भी हाथसे चले जानेका प्रसंग आ गया।

मुझे फोक्सरस्टसे अलग क्यों किया गया?

मार्चकी दूसरी तारीखको खबर मिली कि मुझे प्रिटोरिया भेज देनेका हुक्म हुआ है। उसी दिन मुझे तैयार किया गया। वर्षा हो रही थी, रास्ता खराब था; ऐसे समय अपना गट्ठर उठाकर मुझे और मेरे सन्तरीको जाना पड़ा। शामकी ही गाड़ीमें तीसरे दर्जेके डिब्बेमें मुझे ले जाया गया।

इसपर कुछ लोगोंने अनुमान लगाया कि शायद सरकारके साथ समझौता होनेवाला है। कुछने ऐसा सोचा कि मुझे दूसरे जेलवासियोंसे अलग करके ज्यादा तकलीफ देनेका इरादा होगा। और कुछको ऐसा लगा कि ब्रिटेनकी लोकसभामें चर्चा न हो, इसलिए सरकार मुझे प्रिटोरियामें रखकर शायद ज्यादा आजादी और ज्यादा सुविधाएँ देना चाहती है।

१. गांधीजीपर भी यह आरोप लगाया गया था कि उन्होंने पंजीयन-प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) दिखानेसे इनकार किया और अँगुलियोंके निशान या शिनाख्तके अन्य प्रमाण नहीं दिये। देखिए पृष्ठ १९६-९७.

फोक्सरस्ट छोड़ना मुझे अच्छा नहीं लगा। वहाँ जिस तरह हम अपना दिन आनन्दमें विताते थे, उसी तरह रातमें भी अच्छी वातें करके खुश हुआ करते थे। श्री हजूरासिंह तथा श्री जोशी, ये दो खासकर वहुत सवाल-जवाव करते थे; और उनके प्रश्न निरर्थक नहीं होते थे, वल्कि ज्ञानवार्ताकी कोटिके होते थे। जहाँ ऐसी स्थिति थी और जहाँ भारतीय कैदी वहुत वड़ी संख्यामें रह रहे थे, वहाँसे जाना किस सत्याग्रहीको अच्छा लगता।

लेकिन मनुष्य जो सोचे वही हो जाये, तो वह मनुष्य न रहे। इसलिए मुझे वहाँसे जाना ही पड़ा। रास्तेमें श्री काजीसे सलाम-वन्दगी हुई। एक डिव्वेमें सन्तरी और मैं दोनों वैठे। ठंड पड़ रही थी। वर्षा रात-भर होती रही। मेरा झाझ[1] मेरे साथ था; सन्तरीने उसे पहननेकी अनुमति दे दी। उससे कुछ ठीक हुआ। मेरे खानेके लिए साथमें डवलरोटी तथा पनीर वाँध दिया गया था। लेकिन मैं तो खाकर निकला था, इसलिए मैंने उसे नहीं छुआ। उसका उपयोग सन्तरीने किया।

प्रिटोरिया जेलमें

तीसरी तारीखको मैं प्रिटोरिया पहुँचा। सव-कुछ नया मालूम हुआ। यह जेल भी नई वनाई गई है। आदमी सव नये थे। मुझे खानेके लिए कहा गया, पर खानेकी इच्छा नहीं थी। मुझे मकईकी लपसी (मीलीमील पॉरिज) दी गई। उसका एक चम्मच चखकर मैंने छोड़ दिया। सन्तरीको आश्चर्य हुआ। मैंने कहा, मुझे भूख नहीं है। वह हँसा। फिर मैं एक दूसरे सन्तरीके हाथमें गया। वह वोला, "गांधी, टोपी उतारो।" मैंने टोपी उतारी। वादमें उसने मुझसे कहा, "क्या तुम गांधीके लड़के हो?" मैंने कहा, "नहीं, मेरा लड़का तो फोक्सरस्टमें छः माहकी कैदकी सजा भोग रहा है।" वादमें मुझे एक कोठरीमें वन्द कर दिया गया। मैंने उसमें घूमना शुरू किया। कुछ ही देरमें कैदियोंको देखनेके लिए दरवाजेमें जो सूराख होता है, उसमें से सन्तरीने मुझे चलते देखा और वह वोल उठा, "गांधी, घूमना वन्द करो; उससे मेरा फर्श खराव होता है।" मैंने घूमना वन्द कर दिया और एक कोनेमें खड़ा हो गया। मेरे पास पढ़नेके लिए भी कुछ नहीं था। अभी मेरी पुस्तकें मुझे मिली नहीं थीं। मुझे आठ वजे वन्द किया गया होगा। दस वजे डॉक्टरके पास ले जाया गया। डॉक्टरने मुझसे पूछा कि तुम्हें कोई छूतका रोग तो नहीं है; और छुट्टी दे दी। वादमें मैं फिर वन्द कर दिया गया। ग्यारह वजे मुझे एक दूसरी छोटी कोठरीमें ले जाया गया। उसीमें मैंने अपना सारा समय विताया। ऐसी कोठरियाँ एक-एक कैदीको रखनेके लिए वनाई गई हैं। मेरा खयाल है कि उसकी लम्वाई-चौड़ाई १०×७ फुट रही होगी। फर्श काले डामरका है। सन्तरी लोग उसे दमकता हुआ रखनेकी कोशिशमें लगे रहते हैं। उसमें हवा और उजालेके लिए काँच और लोहेकी छड़ोंकी एक वहुत ही मोटी खिड़की होती है। कैदियोंको रातके समय देखनेके लिए विजलीकी वत्ती होती है। वह वत्ती कैदियोंकी सुविधाके लिए नहीं होती, क्योंकि उसका उजाला इतना नहीं होता कि उसमें पढ़ा जा सके। वत्तीके पास जाकर खड़े होनेपर भी मैं मोटे अक्षरोंवाली किताव ही पढ़ सकता था। वत्ती वरावर आठ वजे वुझा दी जाती है। लेकिन रातके समय पाँच या छः वार फिर जलाकर सन्तरी कैदियोंको उस सूराखसे देख जाते हैं।

१. ओवरकोट।

ग्यारह बजेके बाद डिपुटी गवर्नर आया। उसके सामने मैंने तीन माँगें रखीं—किताबोंकी, अपनी स्त्रीकी बीमारीके कारण उसके पास पत्र लिखनेकी अनुमति देनेकी और बैठनेके लिए एक बेंचकी। पहली माँगके बारेमें जवाब मिला, "विचार करेंगे", दूसरीके बारेमें कहा "पत्र लिख सकते हो", और तीसरीका उत्तर "नहीं" में मिला। लेकिन जब मैंने गुजरातीमें पत्र लिखकर दिया, तो उसपर यह टिप्पणी लिखी गई कि मुझे पत्र अंग्रेजीमें लिखना चाहिए। मैंने कहा कि मेरी स्त्री अंग्रेजी नहीं जानती है; मेरे पत्र उसके लिए दवा-जैसे सिद्ध होंगे; उनमें कुछ नया या विशेष नहीं लिखा जाता। फिर भी मुझे अनुमति नहीं मिली। अंग्रेजीमें लिखनेकी अनुमतिका लाभ उठानेसे मैंने इनकार कर दिया। मेरी किताबें मुझे उसी दिन शामको दे दी गईं।

दोपहरका खाना आया, वह भी बन्द दरवाजेवाली उसी कोठरीमें खड़े-खड़े खाना पड़ा। तीन बजेके करीब मैंने नहानेकी अनुमति माँगी। नहानेकी जगह मेरी कोठरीसे सवा सौ फुट दूर रही होगी। सन्तरी बोला, "ठीक है, तो कपड़े उतारकर (नंगे होकर) जाओ।" मैंने कहा, "ऐसा करना जरूरी है क्या? मैं अपने कपड़े पर्देपर टाँग दूंगा।" उसने वैसा करनेकी इजाजत दे दी। पर साथ ही यह भी कहा कि ज्यादा समय मत लगाना। अभी मेरा शरीर पोंछना बाकी ही था कि भाई साहब चिल्ला पड़े, "गांधी, तैयार हो गये या नहीं?" मैंने कहा, "अभी तैयार होता हूँ।" किसी भारतीयका मुँह भी मुश्किलसे देखनेको मिलता था। शाम हुई तो कम्बल और नारियलके रेशोंसे बनी हुई चटाई सोनेके लिए मिली। सिरहाने रखनेको तकिया या पटिया नहीं था। पाखाने जाता तब भी एक सन्तरी पहरा देता हुआ खड़ा रहता था। और यदि वह मुझे जानता न होता तो चिल्लाता "साम[1], अब निकलो।" यहाँ "साम" को तो पाखानेमें पूरा समय लेनेकी बुरी आदत थी, इसलिए "साम" पुकारते ही कैसे उठ सकता था? और उठ जाता तो उसकी हाजत कैसे पूरी होती? इसी तरह कभी सन्तरी और कभी काफिर कैदी या तो उझक-उझककर पाखानेके भीतर झाँकते या "उठ", "उठ" की रट लगा देते थे।

मुझे काम दूसरे दिन मिला। वह फर्श और दरवाजे साफ करनेका था। साफ करनेका मतलब था, उन्हें अच्छी तरह चमकाना। दरवाजे लोहेके थे, जिनपर रोगन लगा हुआ था। उन्हें हमेशा पालिश करनेसे उनपर क्या असर पड़ता? मैंने एक-एक दरवाजा घिसनेमें तीन-तीन घंटे लगाये। लेकिन उनमें कोई फर्क मैंने तो नहीं देखा। फर्शमें जरूर कुछ फर्क पड़ता था। मेरे साथ दूसरे कुछ काफिर कैदी काम करते थे। वे अपनी सजाकी कहानी टूटी-फूटी अंग्रेजीमें सुनाते थे और मेरी सजाके बारेमें पूछते थे। कोई पूछता कि क्या तुमने चोरी की है; तो कोई पूछता, क्या तुम शराब बेचते पकड़े गये। जब मैंने थोड़े समझदार काफिरको अपनी बात समझाई, तो वह बोला, "क्वाइट राइट" ("ठीक किया"); "अमलुंगु बैड" ("गोरे खराब हैं"); "डोन्ट पे फाइन" ("जुर्माना मत देना")। मेरी कोठरीपर लिखा था "आइसोलेटेड" ("तनहाई")। मेरी कोठरीके पास दूसरी पाँच कोठरियाँ भी वैसी ही थीं। मेरा पड़ोसी एक काफिर था, जो खूनका प्रयत्न करनेके अपराधमें सजा भोग रहा था। इसके बाद जो तीन कैदी थे, उनपर समाजके व्यवहारके विरुद्ध व्यभिचारका अभियोग था। ऐसे लोगोंकी संगतिमें और ऐसी स्थितिमें मैंने प्रिटोरियाकी जेलका अनुभव शुरू किया।

[1] साम—सामी। दक्षिण आफ्रिकामें गोरे लोग हिन्दुस्तानियोंको तिरस्कारसे "सामी" कहते थे।

खुराक

खुराकका भी यही हाल था। सवेरे पूपू [मकईका दलिया] दिया जाता था; दोपहरको तीन दिन पूपू और आलू अथवा गाजर, तीन दिन सेमकी दाल; और शामको चावल, जिसमें घी नहीं दिया जाता था; बुधवारको दोपहरमें सेम तथा चावल और घी; और रविवारको पूपूके साथ चावल तथा घी मिलता था। घीके बिना चावल खानेमें कठिनाई होती थी। जबतक घी न मिले तबतक चावल न खानेका मैंने निश्चय किया। सवेरेका और उसी तरह दोपहरका पूपू कभी कच्चा तो कभी लपटा-जैसा होता था। सेमकी दाल कभी-कभी कच्ची होती थी। साधारणतः सेम ठीक पकाई जाती थी। जिस दिन शाक मिलता उस दिन छोटे-छोटे चार आलू दिये जाते थे; उनका वजन आठ औंस माना जाता था। और जिस दिन गाजर देना होता, उस दिन गिनी-गिनाई तीन गाजरें मिलतीं; वे भी छोटी होती थीं। किसी-किसी दिन सुबह चार-पांच चम्मच पूपू मैं ले लेता था। लेकिन सामान्यतः मैंने डेढ़ माह सिर्फ दोपहरकी सेमपर काटा। इसमें फोक्सरस्टके हमारे जेलवासी भाइयोंके जानने योग्य एक बात यह है कि हम अपने रसोइयोंपर कुछ कच्चा या कम रह जानेपर जो नाराज होते थे वह ठीक नहीं था। हमारे ही कोई भाई रसोई करते हों, उस समय तो हमारी नाराजी काम दे सकती थी। लेकिन उपर्युक्त स्थितिमें क्या हो सकता था? बेशक, यहाँ भी नाराजी प्रकट की जा सकती है, लेकिन इस सम्बन्धमें शिकायतें करना हमें शोभा नहीं देता। जहां सैकड़ों कैदी सन्तोष मानकर बैठे हों वहाँ शिकायत कैसी? शिकायतका हेतु एक ही होना चाहिए: उससे दूसरे कैदियोंको भी राहत मिलनी चाहिए। मैं कभी-कभी सन्तरीसे कहता कि आलू थोड़े हैं, तब वह मेरे लिए और ला देता था। लेकिन इससे क्या फायदा होनेवाला था? एक बार मैंने देखा कि वह तो मुझे दूसरेके कटोरेमें से आलू लाकर देता है। इसलिए मैंने यह बात कहना ही छोड़ दिया।

शामको चावलमें घी नहीं मिलता, यह बात मुझे पहलेसे ही मालूम थी और मैंने इसका इलाज करनेका भी निश्चय कर लिया था। यह बात मैंने बड़े दारोगासे कही। उसने कहा कि घी तो सिर्फ बुधवार तथा रविवारको गोश्तके बदलेमें मिलेगा। यदि मैं ज्यादा बार घी लेना चाहूँ तो डॉक्टरसे मिलूँ। दूसरे दिन मैंने डॉक्टरसे मिलनेकी प्रार्थना की। मुझे उसके पास ले जाया गया।

डॉक्टरके सामने मैंने सब भारतीय कैदियोंके लिए चरबीकी जगह घी देनेकी माँग की। बड़ा दारोगा वहाँ हाजिर था। उसने कहा, "गांधीकी माँग उचित नहीं है। आजतक लगभग सब भारतीय कैदियोंने चरबी खाई है और गोश्त भी खाया है। जो लोग चरबी नहीं लेते उन्हें अब सूखा चावल मिलता है और वे सब खुशीसे खाते हैं। जब यहाँ सत्याग्रही कैदी थे तब वे भी खाते थे। जेलमें वे दाखिल हुए, उस समय उनका वजन लिया गया था और जब उन्हें छोड़ा गया तब भी लिया गया था। उन सबका वजन उस समय बढ़ा हुआ पाया गया था।" डॉक्टरने पूछा, "बोलो, अब तुम्हें क्या कहना है?" मैंने कहा, यह बात मेरे गले नहीं उतरती। अपने विषयमें तो मैं कह सकता हूँ कि यदि मुझे बिल्कुल घीके बिना रहना पड़ा तो मेरी तबीयत जरूर बिगड़ेगी। डॉक्टर बोला, "तो तुम्हारे लिए मैं रोटीका हुक्म करता हूँ।" मैंने कहा, "मैं आपका उपकार मानता हूँ। लेकिन यह प्रार्थना मैंने खास अपने लिए नहीं की है। जबतक सब लोगोंके लिए घीका हुक्म नहीं मिलता, तबतक मैं रोटी नहीं ले सकता। इसपर डॉक्टरने कहा, "अब तुम मुझे दोष न देना।"

अब क्या किया जाये? बड़ा दारोगा आड़े न आता तो घीका हुक्म हो जाता। उसी दिन मेरे सामने रोटी और चावल रखा गया। मैं भूखा था। लेकिन सत्याग्रही इस तरह रोटी कैसे खा सकता था? इसलिए मैंने ये दोनों ही वस्तुएँ नहीं खाईं। दूसरे दिन जेल निदेशक (डायरेक्टर) को[1] अर्जी देनेका हुक्म माँगा और वह मिल भी गया। अर्जीमें मैंने जोहानिसवर्ग और फोक्सरस्टके उदाहरण देकर सब कैदियोंके लिए घीकी माँग की। इस अर्जीका जवाब पन्द्रह दिनमें मिला। जवाब यह था कि जबतक भारतीय कैदियोंके लिए दूसरे प्रकारकी खुराकका निर्णय न हो जाये, तबतक मुझे हर रोज चावलके साथ घी दिया जाये। मुझे इसका पता नहीं था कि यह हुक्म सिर्फ मेरे ही लिए हुआ है, इसलिए पहले दिन मैंने चावल, घी तथा रोटी खुश होकर खाई। परन्तु मैंने कहा कि मुझे रोटीकी जरूरत नहीं है। लेकिन मुझे जवाब दिया गया कि डॉक्टरका हुक्म है, इसलिए वह तो मिलेगी ही। इसलिए रोटी भी मैंने पन्द्रह दिन तक खाई।[2] लेकिन मेरी खुशी एक ही दिन टिकी। दूसरे दिन मुझे मालूम हुआ कि हुक्म तो ऊपर लिखे अनुसार है, इसलिए मैंने फिर चावल, घी और रोटी लेनेसे इनकार कर दिया। बड़े दारोगासे मैंने कहा कि जबतक सब भारतीयोंको मेरी तरह घी नहीं मिलता तबतक मैं घी नहीं ले सकता। डिपुटी गवर्नरने, जो साथमें ही था, कहा, "यह तो तुम्हारी मर्जीपर निर्भर है।"

मैंने निदेशकको फिर लिखा। मुझे बताया गया था कि खुराक अन्तमें नेटालकी जेलों-जैसी कर दी जायेगी। मैंने इस बातकी आलोचना की और स्वयं घी न लेनेके कारण बताये। अन्तमें सब मिलाकर डेढ़ माहसे ज्यादा समय बीतनेपर मुझे सूचित किया गया कि जहाँ-जहाँ भारतीय कैदी अधिक संख्यामें होंगे वहाँ-वहाँ उन्हें घी दिया जायेगा। इस तरह यह लड़ाई शुरू करनेके डेढ़ माह बाद मेरा उपवास (रोजा) टूटा, ऐसा कहूँ तो गलत नहीं होगा। मैंने लगभग अन्तिम एक मास चावल, घी और रोटीवाली खुराक ली, लेकिन सुबहका खाना बन्द कर दिया। इसी तरह चावल और रोटी लेना शुरू करनेके बाद दोपहरको जब पूपू आता तब वह भी मैं मुश्किलसे दस चम्मच लेता था, क्योंकि वह हमेशा अलग-अलग ढंगसे पकाया हुआ होता था। फिर भी, रोटी और घीका सहारा पर्याप्त था, इसलिए मेरी तबीयत सुधर गई।

मैंने ऊपर कहा है कि मेरी तबीयत सुधर गई। बात यह हुई कि जब मैंने एक ही जून खाना शुरू किया था तब मेरी तबीयत काफी बिगड़ गई थी। मेरी शक्ति चली गई थी और कोई दस दिनों तक मुझे सख्त अबकपारी रही। मेरी छातीमें भी गड़बड़ी होनेके चिह्न मालूम होने लगे थे।

काममें परिवर्तन

छातीमें तकलीफ होनेका कारण दूसरा था। मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि मुझे फर्श और दरवाजे साफ करनेका काम सौंपा गया था। यह काम करीब दस दिन करानेके बाद दो-दो फटे हुए कम्बलोंको सीकर जोड़नेका काम मुझे दिया गया। यह काम बारीकी और सावधानीसे करना पड़ता था। सारे दिन पीठ झुकाकर फर्शपर बैठे-बैठे सीना पड़ता था; सो भी कोठरीमें

१. देखिए "गवर्नर-जनरलके नाम लिखे प्रार्थनापत्रका मसविदा", पृष्ठ २०३-४।

२. इस वाक्यका तथ्य अगले वाक्यमें कही गई बातसे मेल नहीं खाता; देखिए "पत्र अखबारोंको", पृष्ठ २२२-२३ भी।

बैठकर। इससे शाम होते-होते मेरी कमर दुखने लगती थी और मेरी आँखोंको भी कुछ नुकसान पहुँचा। कोठरीकी हवा खराब होती है, ऐसा तो मैंने हमेशा माना है। बड़े दारोगासे मैंने एक-दो बार कहा कि मुझे बाहर खोदने आदिका काम दिया जाये, और वैसा न हो सके तो मुझे कम्बल सीनेका काम खुली हवामें बैठकर करने दिया जाये। पर उसने दोनों बातें अस्वीकार कर दीं। मैंने इसकी जानकारी भी निदेशकको दी। अन्तमें डॉक्टरका हुक्म हुआ और मुझे कम्बल सीनेका काम खुली हवामें बैठकर करनेकी इजाजत मिल गई। यदि खुली हवामें काम करनेकी इजाजत न मिलती, तो मेरा खयाल है कि मेरी तबीयत ज्यादा बिगड़ती। यह हुक्म मिलनेमें कुछ अड़चनें भी आईं, किन्तु उनका उल्लेख करनेकी जरूरत नहीं है। तो, हुआ यह कि मेरी खुराक बदलनेके साथ ही मुझे खुली हवामें काम करनेका मौका भी मिल गया। इससे दुहरा लाभ हुआ। जिस समय कम्बल सीनेका काम मुझे दिया गया था, उस समय मेरा ऐसा खयाल था कि एकको सीनेमें एक हफ्ता चला जायेगा और उसीमें मेरी जेलकी अवधि पूरी हो जायेगी। लेकिन वैसा नहीं हुआ और मैं पहला कम्बल सीनेके बाद एक जोड़ी कम्बल दो ही दिनमें सीने लगा। इसलिए उन लोगोंने मेरे लिए दूसरा काम ढूँढ़ा —जैसे, बनियाइनोंमें ऊन भरनेका, टिकट रखनेकी थैलियाँ सीनेका, आदि।

मैंने अनेक सत्याग्रहियोंसे कहा था कि यदि वे तबीयत बिगाड़कर जेलसे निकलते हैं, तो उनके सत्याग्रहमें कमी मानी जानी चाहिए; क्योंकि हम पर्याप्त धीरज रखें तो [जेलकी सारी मुसीबतोंका] इलाज कर सकते हैं। इसके सिवा, चिन्ता करनेसे भी तबीयत बिगड़ती है। सत्याग्रही तो जेलको महल मानेगा। मुझे इस विचारसे दुःख होता था कि कहीं मुझे खुद ही बिगड़ी तबीयत लेकर बाहर न निकलना पड़े। पाठकोंको याद रखना चाहिए कि मेरे लिए घीका जो हुक्म हुआ था उसे मैं स्वीकार नहीं कर सकता था, इसीलिए मेरी तबीयत सत्याग्रहमें बिगड़ी। किन्तु दूसरोंपर वह नियम लागू नहीं था। हरएक कैदी, जब वह जेलमें अकेला हो अपनी असुविधाएँ दूर करानेकी माँग कर सकता है। प्रिटोरियामें वैसा न करनेके लिए मेरे पास खास कारण था, इसीलिए केवल अपने लिए घीका हुक्म मैं स्वीकार नहीं कर सकता था।

(क्रमशः)

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-५-१९०९

१४९. भाषण: अस्वात और क्विनकी स्वागत-सभामें[1]

जोहानिसबर्ग
जून २, १९०९

आज भारतीयों और चीनियोंकी इस सम्मिलित सभासे मेरे आनन्दका पार नहीं है, और मैं उसका वर्णन भी नहीं कर सकता। मैंने कल ही ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षसे बात करके तय किया था कि श्री अस्वातको लेकर यहाँ आयें और यहाँसे श्री काछलियाके घर नाश्ते और चाय-पानीके लिए चलें। मैंने यह सोचा भी नहीं था कि मेरे भारतीय भाई और चीनी लोग इतनी बड़ी संख्यामें इकट्ठे हो जायेंगे। संघर्षमें भाग लेनेवाले दो दल — चीनी और भारतीय — इस तरह इकट्ठे हुए, इसमें मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई है। श्री क्विन और अस्वात सरीखे हीरोंका ऐसा स्वागत किया जाना कम सराहनीय नहीं है। ये दोनों हीरे अपने-अपने समाजके सच्चे शुभचिन्तक और नेता हैं। मैं जैसे-जैसे संघर्षके सम्बन्धमें विचार करता हूँ, वैसे-वैसे यह विश्वास होता जाता है कि सदाचार और सद्‌गुणसे संघर्ष करनेमें अन्ततः जीत ही होगी। लड़नेवालोंकी संख्या चाहे जितनी हो या रहे, किन्तु हमने जो दो माँगें की हैं, वे तो मानी ही जायेंगी। इस लम्बी लड़ाईमें हमें जो दूसरी चीजें मिली हैं, यदि हम उनपर विचार करें तो हम देखेंगे कि हम आत्मत्याग और पारस्परिक सहयोगसे एक-दूसरेके ज्यादा पास आ गये हैं और ऐसा सहयोग बढ़ानेके लिए उत्सुक हैं। हमने अब अपने सम्मानकी रक्षा करना तथा दूसरोंको सम्मान देना सीख लिया है। मुझे तो लगता है कि यदि अब अन्य कुछ न मिले, तो भी निराश होनेकी कोई बात नहीं है; क्योंकि जो मिला है, वह कम नहीं है और अभी बहुत-कुछ मिलेगा। सत्याग्रहियोंकी सेना छोटी है, किन्तु इसकी कोई चिन्ता नहीं। आप इतिहासमें देखेंगे कि सच्चे लड़नेवाले हमेशा कम ही होते हैं। इंग्लैंड और रूसकी लड़ाईमें "लाइट ब्रिगेड" में थोड़े ही लोग थे, फिर भी उनका नाम आजतक अमर है। इसी प्रकार यदि सब जगह नहीं तो कमसे-कम दक्षिण आफ्रिकामें तो सत्याग्रहियोंका नाम अमर ही रहेगा। मैं नम्रतापूर्वक सलाह देता हूँ कि आप लोग श्री क्विन और अस्वातका अनुसरण करें और अन्ततक वैसा करते हुए सुखकी प्राप्ति करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-६-१९०९

१. भारतीयों और चीनियोंकी यह सभा वेस्ट एंड हॉलमें श्री अस्वात और श्री क्विनके रिहा होनेपर उनके स्वागतार्थ की गई थी। इसमें गांधीजीने भाषण दिया था।

१५०. भाषण: चाय-पार्टीमें[1]

[जोहानिसवर्ग
जून २, १९०९]

श्री अस्वात और श्री क्विनके जेलसे छूटकर आनेके इस अवसरपर यदि मैं गुजरातीमें न बोलूं, तो ठीक न होगा। श्री अस्वातके छूटनेपर हम लोग इतना ही करें, यह बहुत कम है। यह बात मैं श्री उमरजी सालेके छूटनेपर कह चुका हूँ, अब दुबारा अधिक नहीं कहूँगा। थोड़े लोग भी जो संकल्प कर लें, उसे पूरा कर सकते हैं। हजारों लोग तालियाँ बजाते और जेल जानेकी बात कहते थे, लेकिन अब बहुत कम हैं। मुझे इससे असन्तोष नहीं है। आज श्री अस्वातकी तबीयतका हाल पूछते हैं तो वे अच्छा बताते हैं। लेकिन श्री व्यासके कहनेके मुताबिक ऐसा नहीं है। वे बहादुर [जेलमें] दूसरे लोगोंकी तरह व्यक्तिगत मेहरबानीका लाभ उठाकर तम्बाकू आदि नहीं लेते थे। इसपर मुझे अभिमान होता है। वे जो कहते थे सो उन्होंने करके भी दिखाया और उसी प्रकार अन्ततक करेंगे। यशकी इच्छा रखे बिना ऐसा करनेवाले लोग कम ही हैं। दूसरोंको मान देना अपनेको मान देनेके समान है, क्योंकि उससे अपनी सज्जनता प्रकट होती है। कल सर्वश्री मनजी, फकीर शाह और कुछ दूसरे लोग भी, जिनके नाम मुझे याद नहीं आते, [छूट कर] आये। हम लोग उन्हें लेनेके लिए नहीं जा सके। वे भी मानके भूखे नहीं थे और न हैं। किन्तु हमने जिन्हें बड़ा माना है, उन्हें मान देना तो हमारा कर्तव्य है। श्री क्विन भी हमारे दोनों नेताओंके समान ही हैं और उनकी स्थिति भी उन्हींकी-जैसी हो गई है। जेलमें उन्हें पूपू और मक्की मिलती थी। जब गवर्नरने उन्हें चावल देनेको कहा, तब उन्होंने सूचित किया कि "सब चीनियोंको मिले, तभी मैं लूंगा।" सरकारने ऐसा नहीं किया तो उन्होंने चावल नहीं लिया। उनका यह काम छोटा न था। सचमुच श्री क्विन सत्याग्रहके स्तम्भ हैं। अब उनके संघके कार्यकारी अध्यक्ष जेल जानेके लिए अधीर हो रहे हैं। इन सबके साथ भगवान न्याय तो करेंगे ही। हमारे संघर्षका अनुभव लेनेवाले ऐसे लोगोंके कारण मुझे अभिमान होता है। जो हार गये हैं, उनसे मैं निराश नहीं होता। यह निश्चित समझ लें कि जीत हमारी ही होगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-६-१९०९

१. स्वागतके बाद (देखिए पिछला शीर्षक) सर्वश्री अस्वात और क्विनको श्री काछलियाके घरपर चाय-पार्टी दी गई थी।

१५१. जेल कौन जा सकता है?

सत्याग्रही कौन हो सकता है, इसपर हम पिछले हफ्ते संक्षेपमें विचार कर चुके हैं।[1] ट्रान्सवालके आन्दोलनमें सत्याग्रह बहुत-कुछ जेल जानेमें ही निहित रहा है। किन्तु सत्याग्रह कोई जेल जाकर समाप्त नहीं हो जाता। सत्याग्रहियोंको तो सूलीपर चढ़ना पड़ा है,[2] तप्त लौह-स्तम्भका आलिंगन करना पड़ा है, पर्वतपर से लुढ़कना पड़ा है, खौलते तेलके कड़ाहमें तैरना पड़ा है,[3] जलते जंगलमें चलना पड़ा है,[4] राज-पाट छोड़ कर नीचके घर बिकना पड़ा है[5] और सिंहकी[6] गुफामें रहना पड़ा है। इस प्रकार सत्याग्रहीकी परीक्षा संसारके भिन्न-भिन्न भागोंमें भिन्न-भिन्न ढंगोंसे हुई है।

ट्रान्सवालमें सत्याग्रहियोंकी कसौटी केवल जेल जानेमें ही रही है। इसलिए जेल कौन जा सकता है, यह प्रश्न बहुत उपयोगी है। कुछ भारतीय जेल जानेके लिए तैयार होनेपर भी कुछ कारणोंसे नहीं गये, या नहीं जा सके। ऐसे क्या कारण होंगे? इस प्रश्नका उत्तर यह सवाल पूछने और उसका जवाब जान लेनेसे मिल जाता है कि जेल कौन जा सकता है।

सत्याग्रहीमें जो गुण होने चाहिए और जिनपर हम विचार कर चुके हैं, वे सब थोड़ी-बहुत मात्रामें जेल जानेवाले लोगोंमें होने चाहिए। किन्तु उनके अतिरिक्त उनमें नीचे लिखी शक्तियोंकी आवश्यकता है:

(१) व्यसनोंसे दूर रहना।
(२) शरीर कसा हुआ रखना।
(३) सोने और बैठनेमें आरामतलब न होना।
(४) खानेमें अत्यन्त सादगी।
(५) झूठी प्रतिष्ठाका त्याग।
(६) धीरज।

ये छः गुण (जिन्हें हम जेलकी षड्-सम्पत्ति कहेंगे) खास तौरसे जेल जानेवाले भाइयोंके लिए आवश्यक हैं। अब हम इनकी जाँच कर लें। अनुभव यह हुआ है कि बीड़ी, शराब, सुपारी या चाय-पानके व्यसनोंके कारण जेल जानेवाले लोग ऊब गये हैं। ऐसा होनेके कारण या तो उन्होंने खुद जेलमें चोरी की है, अर्थात् सत्यका त्याग किया है, या वे दूसरी बार जेल जानेका नाम लेना तक भूल गये हैं। इसलिए व्यसन-मात्रसे दूर रहना आवश्यक है। एक ही व्यसनकी छूट होनी चाहिए और वह है प्रभुके नामकी रट।

नामर्द व्यक्ति सत्याग्रही नहीं बन सकता। वैसे ही दुर्बल शरीरवाला मनुष्य बहुत हद तक जेलके कष्ट बर्दाश्त नहीं कर सकता। शरीरकी शक्ति न होनेपर भी मनोबलसे बहुतसे वीरोंने कष्ट सहन किया है। ये उदाहरण असाधारण हैं। साधारण नियम तो यह है कि

१. देखिए "सत्याग्रही कौन हो सकता है?" पृष्ठ २२५-२७।

२, ३, ४, ५ और ६. क्रमशः ईसा, प्रह्लाद, सुधन्वा, नल-दमयन्ती और हरिश्चन्द्रकी गाथाओंका हवाला दिया गया है।

शरीर नीरोग और ठीक होना चाहिए। ऐसा न होनेसे कुछ लोग घबरा गये हैं। सत्याग्रही समझता है कि उसको अपना शरीर किरायेपर मिला है। उसको चाहिए कि वह उसे अच्छी तरह साफ-सुथरा और सशक्त रखकर अपनेको अच्छा किरायेदार साबित करे।

यह बात कोई भी समझ सकता है कि जिसको सोनेके लिए स्प्रिंगदार पलंग और नर्म गद्दा चाहिए वह एकाएक जमीनपर नहीं सो सकता। ऐसी स्थितिमें इस प्रकारकी आराम-तलबी भी छोड़ देनी चाहिए।

यह देखा गया है कि जेलमें खानेका सवाल सबसे बड़ा सवाल बन गया है। यह भी कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। जिसने अपनी जीभको भाषण और स्वादके सम्बन्धमें जीत लिया, उसने बहुत-कुछ जीत लिया। ऐसे लोग बहुत कम देखनेमें आते हैं जिनको स्वादिष्ट भोजन नहीं चाहिए। गरीब काफिर भी खानेके लिए मरते हैं। यह कोई छोटा-मोटा सवाल नहीं है। फिर भी जो परमार्थकी दृष्टिसे जेल जाना चाहता है, उसका छुटकारा तो स्वादेन्द्रियको जीतनेमें ही है। ठीक यह है कि जो-कुछ भी मिला है उसके लिए ईश्वरका धन्यवाद किया जाये। प्रत्येक भारतीयको विचार करना है कि भारतमें तीस करोड़ लोगोंमें तीन करोड़को दिनमें एक ही बार खाना मिलता है और वह भी एक टुकड़ा रोटी और नमकके सिवा और कुछ नहीं। तब जेलमें तीन-तीन बार अदलता-बदलता खाना मिले, उससे गुजारा कर लेना कोई बड़ी बात नहीं। भूखमें सब अच्छा लगता है। हो सकता है, कुछ दिन जेलका खाना अच्छा न लगे; लेकिन पीछे वह रुच जाता है। जो भारतीय सत्याग्रही जेल जाना चाहता है उसको सादा खानेकी आदत जल्दी डाल लेनी चाहिए।

झूठी प्रतिष्ठा रखनेवाला जेल नहीं जा सकता। वहाँ जेलके सन्तरियोंकी ताबेदारी करनी होती है और ऐसा काम करना पड़ता है जो नीचा माना जाता है। उसको करनेसे इज्जत जाती है, ऐसा तो किसी दिन किया नहीं—यह समझकर जेलमें उस कामको न किया जाये तो परिणाम बुरा होता है। यह ताबेदारी है, यह खयाल मनके कारण है। जिसका मन स्वतन्त्र है वह [मैलेकी] बाल्टी उठानेपर भी राजाकी भाँति स्वतन्त्र है। वह उस जगह बाल्टी उठानेमें ताबेदारीके बजाय अपनी इज्जत समझता है।

अन्तमें रहे धीरज महाराज। सब लोग जेल जाते ही दिन गिनने लग जाते हैं। इससे दिन लम्बे लगने लगते हैं। बाहर बरस बीत गये और वे हमने गँवा दिये; फिर भी वे हमें भारी नहीं मालूम पड़े। जेलके तीन दिन तीन बरस-जैसे लगे। इसका कारण क्या है? इसका जवाब यह है कि जेल जाना मनको अच्छा नहीं लगा। सचाई यह है कि जेल जानेमें सुख मानना है। माँ जैसे बच्चेके लिए दुःख सहकर सुख मानती है, वैसे ही हमें देशके लिए — सत्यके लिए — दुःख सहते हुए सुख मानना है। दिन जैसे जेलमें बीतेंगे वैसे बाहर नहीं बीतते, हमेशा यह मानकर और धीरज रखकर जितनी जेल मिली हो उतनी भोग लेनी चाहिए और वहाँ समयका सदुपयोग करना चाहिए, अर्थात् प्रभु-भजनमें, अच्छे विचारोंमें और अपने दोष खोजनेमें दिन गुजारने चाहिए। यह एक पंथ दो काजके समान होगा।

इस प्रकार छः गुण तो जेलयात्रीमें अवश्य होने चाहिए। दूसरे गुण अपने आप सूझ जायेंगे। किन्तु, प्रत्येक पाठकको हमारी सलाह है कि वह हमारे इन विचारोंपर मनन करे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-६-१९०९

१५२. मेरा जेलका तीसरा अनुभव [२]

दूसरे परिवर्तन

मैं ऊपर बता चुका हूँ कि मेरे मुख्य वार्डरका व्यवहार कुछ सख्त था। लेकिन यह स्थिति ज्यादा दिन नहीं रही। जब उसने देखा कि मैं खुराक आदिके बारेमें सरकारसे तो लड़ता हूँ, लेकिन उसके सारे हुक्म बराबर मानता हूँ, तब उसने अपना व्यवहार बदल दिया और मुझे जैसा अनुकूल हो वैसा करनेकी छूट दे दी। यानी पाखाना जाने, नहाने आदिकी मेरी अड़चनें दूर हो गईं। इसके सिवा, अब वह मुझे शायद ही ऐसा एहसास होने देता था कि उसका हुक्म मेरे ऊपर चल सकता है। उस वार्डरकी बदलीके बाद जो नया वार्डर आया, वह तो बादशाह था। वह मुझे सब योग्य सुविधाएँ देनेका ध्यान रखता था। वह कहता था कि "जो मनुष्य अपनी कौमके हितके लिए लड़ता है उसे मैं चाहता हूँ। मैं खुद लड़नेवाला हूँ। मैं तुम्हें कैदी नहीं मानता।" इस तरह वह सान्त्वना और हमदर्दीकी अनेक बातें करता था।

फिर, थोड़े दिन बाद मुझे आधा घंटा सुबह और उतने ही समयके लिए शामको जेलके मैदानमें घूमनेके लिए बाहर निकाला जाता था। मेरा यह व्यायाम जब बाहर बैठकर काम करनेकी व्यवस्था शुरू हुई तब भी जारी था। यह नियम उन सब कैदियोंपर लागू होता है, जो अपना काम बैठकर करते हैं।

इसके सिवा, जिस बेंचके बारेमें पहले मुझे नाहीं कर दी गई थी, वह बेंच भी थोड़े दिन बाद चीफ वार्डरने मुझे अपनी ही ओरसे भिजवा दी। बीचमें जनरल स्मट्सकी तरफसे मुझे दो धार्मिक पुस्तकें पढ़नेके लिए मिली थीं। इससे मैंने अनुमान लगाया कि मुझे जो कष्ट सहना पड़ा वह उनकी आज्ञासे नहीं, बल्कि उनकी और दूसरोंकी लापरवाहीके कारण तथा भारतीयोंको काफिरोंके साथ गिननेकी वजहसे। इतना तो साफ समझमें आ गया कि मुझे यहाँ अकेला रखनेमें हेतु यह था कि किसीके साथ मेरी बातचीत न हो सके। माँग करने और उसके लिए कुछ प्रयत्न करनेके बाद मुझे पेंसिल और नोटबुक रखनेकी इजाजत भी मिल गई।

निदेशकसे मुलाकात

मेरे प्रिटोरिया पहुँचनेके कुछ दिन बाद खास इजाजत लेकर श्री लिखटैन्स्टाइन मुझसे मिलने आये। वे आये तो थे सिर्फ ऑफिसके कामके लिए, लेकिन उन्होंने मुझसे "कैसे हो" आदि सवाल भी किये। इन सवालोंका जवाब देनेकी मेरी इच्छा नहीं थी, लेकिन उन्होंने आग्रहसे पूछा, इसलिए मैंने कहा, "मैं सब बातें तो नहीं कहता, लेकिन इतना कहता हूँ कि मेरे साथ क्रूरताका व्यवहार किया जा रहा है। ऐसा करके जनरल स्मट्स मुझे पीछे हटाना चाहते हैं, लेकिन यह तो कभी हो ही नहीं सकता। मुझे जो तकलीफ दी जायेगी, उसे सहनेके लिए मैं तैयार हूँ। मेरा मन शान्त है। इस बातको आप प्रकाशित न कीजिए। बाहर निकलनेके बाद मैं खुद सारी चीज दुनियाके आगे रखूँगा।" श्री लिखटैन्स्टाइनने यह बात

श्री पोलकको बताई। श्री पोलक उसे पचा नहीं सके और उन्होंने दूसरोंसे कही। परिणाम यह आया कि डेविड पोलकने लॉर्ड सेल्बोर्नको लिखा और जांच शुरू हुई। निदेशक (डायरेक्टर) मुझसे मिलने आया; उससे भी मैंने ऊपरके ही शब्द कहे। और इस सिलसिलेमें मैंने आरम्भमें जिन त्रुटियोंका उल्लेख किया है वे त्रुटियाँ भी बताई। फलतः कोई दस दिन बाद मुझे सोनेके लिए तख्त, तकिया, रातके समय पहननेकी कमीज तथा नाक पोंछनेका रूमाल भेज दिये गये, जो मैंने ले लिये। इस सम्बन्धमें मैंने जो वक्तव्य[1] लिख भेजा है, उसमें बताया है कि इन वस्तुओंकी आवश्यकता हरएक भारतीय कैदीको होती है। सच पूछिए तो सोने-बैठने आदिमें गोरोंकी अपेक्षा भारतीय अधिक कोमल होते हैं। उनके लिए तकियेके बिना सोना मुश्किल होता है।

इस तरह खाने और खुली हवामें काम करनेकी सुविधाके साथ ही, जैसा मैंने ऊपर कहा है, सोनेकी सुविधाएँ भी मुझे मिल गई। लेकिन दुर्भाग्यने मेरा पीछा नहीं छोड़ा। तख्त खटमलोंसे भरा हुआ था। इसलिए उसका करीब दस दिन तक तो मैंने उपयोग ही नहीं किया। बादमें जब मुख्य वार्डरने उसे दुरुस्त कराया तब उसे मैंने काममें लाना शुरू किया। इस बीच मुझे तो जमीनपर कम्बल बिछाकर सोनेकी आदत पड़ गई थी। इसलिए तख्तसे कुछ फर्क पड़ा, ऐसा मालूम नहीं हुआ। तकियेके अभावमें मैं तकियेका काम अपनी पुस्तकोंसे लेने लगा था, इसलिए तकिया मिलनेसे भी कुछ फर्क नहीं पड़ा।

हथकड़ियाँ लगाई गई

जेल-अधिकारियोंके शुरूके व्यवहारके बारेमें मैंने जो राय बनाई, वह नीचे दी जानेवाली घटनासे पुष्ट हो गई। चार-एक दिन बाद मुझे श्रीमती पिल्लेके मामलेमें गवाही देनेका सम्मन्स मिला। इसलिए मुझे अदालतमें ले जाया गया। उस समय मेरे हाथोंमें हथकड़ियाँ पहनाई गई।[2] और वार्डरने उन्हें बहुत कड़ा कस दिया। मैं मानता हूँ कि यह उसने अनजाने ही किया होगा। चीफ वार्डरने यह देख लिया। उससे मैंने पढ़नेके लिए एक पुस्तक साथमें ले जानेकी इजाजत ले ली थी। उसने सोचा होगा कि हाथोंमें हथकड़ियाँ होनेसे मुझे शरम आयेगी, इसलिए उसने मुझसे यह पुस्तक दोनों हाथोंमें पकड़नेके लिए कहा, ताकि हथकड़ियाँ किसीको दिखाई न दें। इससे मुझे तो हँसी ही आई। हथकड़ियाँ पहननेमें मैंने तो अपना सम्मान ही समझा। मैंने अपने साथ जो पुस्तक ली थी वह संयोगवश 'ईश्वरका राज्य तेरे अन्तरमें है'[3] थी। मैंने मनमें सोचा कि यह भी अच्छा संयोग बना है। बाहरसे मैं किसी भी विपत्तिमें क्यों न पड़ जाऊँ, लेकिन यदि मैं ऐसा रहूँ कि ईश्वर मेरे अन्तरमें निवास करे, तो फिर मुझे दूसरी किसी बातकी परवाह करनेकी जरूरत नहीं है। अदालततक मुझे पैदल ले जाया गया। वापसीमें जेलकी मोटरलारी आई। मैं अदालत जानेवाला हूँ, यह खबर भारतीयोंको लग गई होगी; इसीलिए कुछ भारतीय भाई कचहरीके सामने खड़े थे। उनमें से श्री त्र्यम्बकलाल व्यासने श्रीमती पिल्लेके वकीलकी मार्फत मुझसे मिलनेकी व्यवस्था कर ली।

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. इस विषयपर दफ्तरी पत्र-व्यवहार और अन्य सामग्रीके लिए देखिए परिशिष्ट ८।
३. टॉल्स्टॉयकृत दि किंगडम ऑफ़ गॉड इज़ विदिन यू नामक पुस्तक।

एक बार और मुझे अदालतमें ले जाया गया था। हथकड़ी उस बार भी पहनाई ग थी। आते-जाते दोनों बार खटारे [गाड़ी] का इन्तजाम था।

सत्याग्रहकी बलिहारी

ऊपर मैंने जिन बातोंकी चर्चा की है, उनमें से कुछ नगण्य कही जा सकती हैं। किन्तु उन सबको विस्तारसे देनेका हेतु यह है कि छोटी-बड़ी सब बातोंमें सत्याग्रहका उपयोग हो सकता है। छोटे वार्डरने मुझे जो भी शारीरिक तकलीफ दी, मैंने स्वीकार की। उसका परिणाम यह हुआ कि मेरा मन शान्त रहा। इतना ही नहीं, उन तकलीफोंको फिर उन्हीं लोगोंने दूर भी किया। यदि मैंने विरोध किया होता तो मेरा मनोबल बेकार खर्च हो जाता और मुझे जो बड़े काम करने थे वे न हो सकते तथा वार्डर मेरे शत्रु बन जाते।

खुराकके बारेमें अपनी टेकपर कायम रहनेसे और प्रारम्भमें दुःख सहनेसे वह असुविधा भी दूर हो गई। ऐसा ही दूसरी छोटी-छोटी बातोंमें समझा जा सकता है।

सबसे बड़ा लाभ तो यह हुआ कि शरीरका दुःख सहन करनेसे मैं यह साफ देख सकता हूँ कि मेरा मनोबल बहुत बढ़ा है। मैं मानता हूँ कि गत तीन महीनोंके अनुभवोंसे मुझे बहुत लाभ हुआ है और आज मैं ज्यादा कष्ट आसानीसे उठानेके लिए तैयार हूँ। मुझे ऐसा दिखता है कि सत्याग्रहको हमेशा ईश्वरकी सहायता प्राप्त होती है और सत्याग्रहीकी कसौटी करते हुए भी जगतका स्वामी उसपर उतना ही बोझा डालता है, जितना वह आसानीसे उठा सकता है।

मैंने क्या पढ़ा?

मेरे दुःखकी अथवा सुखकी या सुख और दुःख दोनोंकी कहानी अब पूरी हो गई कही जा सकती है। किन्तु इन तीन महीनोंमें मुझे अनेक लाभ हुए। उनमें से एक यह भी है कि इस अवधिमें मुझे पुस्तकें पढ़नेका अवसर मिला। मुझे स्वीकार करना चाहिए कि शुरूके दिनोंमें मैं कुछ चिन्तामें पड़ जाता था; दुःखसे ऊब उठता था। बार-बार मैं अपने अंकुश लगाता था और वह बार-बार बन्दरकी तरह चंचल हो जाता था। ऐसी आदमी अक्सर पागल-जैसे हो जाते हैं। मेरी पुस्तकोंने मेरी बड़ी रक्षा की। भारतीय भाइयोंके समागमकी कमी बहुत अंशमें पुस्तकोंने पूरी की। मुझे पढ़नेके लिए प्रतिदिन लगभग तीन घंटे मिल जाते थे। एक घंटा सुबह मिलता था। मैं उस समय खाता नहीं था, इसलिए वह बच जाता था। शामको भी ऐसा ही होता था। दोपहरको खाते समय मैं पढ़नेका काम भी करता था। शामको मैं थका न होता, तो बत्ती जलनेके बाद भी पढ़ता था। शनिवार और रविवारको तो बहुत समय मिलता था। इस कालमें मैंने लगभग तीससे ज्यादा पुस्तकें पढ़ीं और उनमें से कुछपर विचार भी किया। ये पुस्तकें अंग्रेजी, हिन्दी, गुजराती, संस्कृत और तमिल भाषाओंकी थीं। अंग्रेजी पुस्तकोंमें उल्लेखनीय टॉल्स्टॉय, इमर्सन और कार्लाइलकी थीं। पहली दो धर्म-सम्बन्धी थीं। इनके साथ मैंने 'बाइबिल' भी पढ़ी; वह जेलसे ही ली थी। टॉल्स्टॉयकी रचनाएँ बहुत सरल और सरस हैं और किसी भी धर्मको माननेवाला उन्हें पढ़कर उनसे लाभ उठा सकता है। इसके सिवा, वे उन व्यक्तियोंमें से हैं, जो जैसा कहते हैं, वैसा ही करते भी हैं; इसलिए वे जो-कुछ लिखते या कहते हैं, उसपर हम साधारणतः ज्यादा भरोसा कर सकते हैं।

फ्रांसीसी क्रान्तिपर लिखी हुई कार्लाइलकी रचना बहुत प्रभावोत्पादक है। उसे पढ़कर मुझे विश्वास हो गया कि हिन्दुस्तानकी दुरवस्था दूर करनेका उपाय हमें गोरी जातियोंसे नहीं मिलेगा। मेरी मान्यता है कि फ्रांसीसी जनताको क्रान्तिसे खास लाभ नहीं हुआ। मैज़िनीका भी यही ख़याल था। इस बारेमें बहुत मतभेद है। लेकिन उसपर यहाँ विचार करना उपयुक्त नहीं होगा। उस क्रान्तिके इतिहासमें भी कुछ सत्याग्रहियोंके उदाहरण देखनेमें आते हैं।

गुजराती, हिन्दी और संस्कृत पुस्तकोंमें मैंने स्वामीजीकी ओरसे भेजी गई पुस्तक 'वेद-शब्द-संज्ञा', केशवराम भट्टके भेजे हुए उपनिषद्, श्री मोतीलाल दीवानकी भेजी हुई 'मनुस्मृति', फीनिक्समें छपी हुई 'रामायण', 'पातंजल योगदर्शन', नथूरामजीकी लिखी हुई 'आह्निक प्रकाश' प्रोफेसर परमानन्दकी दी हुई 'संध्यानी गुटिका,'[1] और 'गीता' तथा स्वर्गीय कविश्री रायचन्दकी रचनाएँ पढ़ीं। इन पुस्तकोंको पढ़नेसे मुझे विचार करनेके लिए बहुत-कुछ मिला। उपनिषदोंके वाचनसे मुझे बहुत शान्ति मिली। एक वाक्य तो मेरे मनपर अंकित हो गया है। उसका सार यह है कि तू जो भी कर, वह आत्माके कल्याणके लिए ही कर। यह बात जिन शब्दोंमें[2] कही गई है वे बहुत ही सुन्दर हैं। उनमें और भी बहुत-सी बातें विचारणीय हैं।

परन्तु सबसे ज्यादा सन्तोष मुझे कविश्री रायचन्दकी रचनाओंसे मिला। उनकी रचनाएँ मेरी रायमें तो ऐसी हैं, जो सबको मान्य हो सकती हैं। उनकी जीवन-चर्या टॉल्स्टॉयकी ही तरह उच्च कोटिकी थी। उनकी रचनाओंमें से और संध्याकी पुस्तकमें से कुछ हिस्सा मैंने कंठस्थ कर लिया था। रातको मैं जब भी जगता, उसे दोहराता था और सुबहका आधा घंटा हमेशा उन्हीं विचारोंके मननमें बिताता था। जो हिस्सा याद था, उसमेंसे अधिकांश मैं मुँहसे बोल जाता और इससे मन रातदिन आनन्दमग्न रहता था। किसी समय निराशा आ घेरती, तो अपनी पढ़ी हुई बातोंका विचार करते ही मन तुरन्त प्रसन्न हो जाता और मैं ईश्वरका उपकार मानता। इस सम्बन्धमें भी अनेक विचार पाठकोंके आगे रखने लायक हैं। लेकिन यहाँ उसका प्रसंग नहीं है। सिर्फ इतना ही कहूँगा कि इस युगमें अच्छी पुस्तकें कुछ हद तक सत्संगकी कमी पूरी करती हैं। इसलिए जो भारतीय जेलमें सुख भोगनेकी इच्छा रखते हों, उन्हें अच्छी पुस्तकें पढ़नेकी आदत डालनी चाहिए।

तमिलका अभ्यास

इस लड़ाईमें तमिल भाइयोंने जितना किया, उतना दूसरे भारतीयोंने नहीं किया। इसलिए विचार आया कि किसी और कारणसे नहीं तो अपने मनमें उनका आभार माननेके लिए ही मुझे तमिल भाषा ध्यानसे पढ़नी चाहिए। अतः, बादका एक महीना मैंने तमिलका अभ्यास करनेमें ही बिताया। मैं ज्यों-ज्यों तमिल पढ़ता जाता हूँ, त्यों-त्यों उस भाषाकी ज्यादा खूबियाँ देखाई देती हैं। वह बहुत सुन्दर और मधुर भाषा है और उसकी रचनासे तथा जो-कुछ मैंने पढ़ा उससे ऐसा मालूम होता है कि तमिल लोगोंमें अनेक होशियार, विचारवान और सयाने पुरुष हो गये हैं और हो रहे हैं। इसके सिवा, यदि भारतको एक होना है, तो मद्रास प्रान्तके बाहरके कुछ भारतीयोंको भी तमिल भाषा जाननी चाहिए।

१. संध्याकी गुटिका।

२. गांधीजीका संकेत सम्भवतः याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी सम्वादमें आत्मा-सम्बन्धी पंक्तियोंकी ओर है: आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः. . .' । देखिए बृहदारण्यकोपनिषद्, ब्राह्मण ५।

उपसंहार

मैं चाहता हूँ, जो पाठक यह नहीं जानते कि देश-प्रेम क्या है वे इस अनुभवको पढ़कर उसकी जानकारी प्राप्त करें और सत्याग्रही बनें; और जो देशप्रेमको जानते हैं, वे उसमें दृढ़ बनें। मेरा यह विश्वास अधिकाधिक बढ़ता जाता है कि जिसने अपने धर्मको नहीं जाना है, वह सच्ची देशभक्तिको भी नहीं जान सकता।

वैसे तो —

अलख नाम धुनि लगी गगनमें,
मगन भया मन मेरा जी;[1]
आसन मार सुरत दृढ़ धारी,
दिया अगम घर डेरा जी।

और —

करना फकीरी क्या दिलगीरी,[2]
सदा मगन मन रहेना[3] जी।

दुनियामें रहते हुए भी फकीरका जीवन विताया जा सकता है। अन्तमें, खुदाको — ईश्वरको कैसे जाना जाये, इस प्रश्नके उत्तरमें भक्त कवि कहते हैं —

हसतां-रमतां[4] प्रगट करी देखुं रे
मारुं[5] जीव्युं[6] सफल तव लेखुं रे;
एनुं[7] स्वप्ने जे दर्शन पामे[8] रे
तेनुं[9] मन न चडे बीजे भामे[10] रे।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, ५–६–१९०९

१५३. भाषण : जर्मिस्टनमें[11]

[जर्मिस्टन
जून ७, १९०९]

जब श्री गांधी बोलनेको खड़े हुए तो श्रोताओंने उनका उत्साहपूर्ण स्वागत किया। उन्होंने कहा : यद्यपि मैंने आज अनाक्रामक प्रतिरोध (पैसिव रेजिस्टेन्स) को अपना विषय चुना है, फिर भी मैं नहीं चाहता कि मैं भारतीय प्रश्नपर कुछ कहूँ। मैं उसकी केवल वहीं तक चर्चा करूँगा जहाँतक वह मेरे कथनपर प्रकाश डालनेके लिए आवश्यक होगा।

१. मूलमें गांधीजीने 'मन मेराजी' के स्थानपर 'मन्दिरमें राजी' पाठ दिया है।

२. दुःख। ३. रहना। ४. हँसते-खेलते। ५. मेरा। ६. जीवन। ७. उसका। ८. पाये। ९. उसका १०. जगह, ठौर।

११. जर्मिस्टन साहित्यिक और वाद-विवाद समिति (जर्मिस्टन लिटरेरी एंड डिबेटिंग सोसाइटी) के आमन्त्रणपर गांधीजीने कौंसिल चेम्बरमें "अनाक्रामक प्रतिरोधकी नैतिकता" पर भाषण दिया था। उक्त समितिके अध्यक्ष श्री लिंटन जोन्सने सभापतिका आसन ग्रहण किया था। श्रोताओंमें जर्मिस्टनके चुने हुए प्रमुख नागरिक थे। "हमारे संवाददाता द्वारा प्रेषित" रूपमें यह रिपोर्ट **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित हुई थी।

अनाक्रामक प्रतिरोध गलत नामकरण है। किन्तु इस नामको इसलिए स्वीकार कर लिया गया है कि यह काफी लोक-प्रिय है, और जिन लोगोंने इस शब्द-समुच्चय द्वारा व्यक्त विचारको कार्यरूप दिया है वे बहुत समयसे इसका प्रयोग करते आये हैं। किन्तु उक्त विचार "आत्मबल" शब्द द्वारा अधिक पूर्णतासे और अधिक अच्छी तरह व्यक्त होता है। इस प्रकार यह उतना ही पुराना है जितना पुराना इन्सान। आक्रामक प्रतिरोध "शरीर-बल" शब्दसे अधिक अच्छी तरह व्यक्त होता है। ईसा मसीह, डैनियल और सुकरातने अनाक्रामक प्रतिरोध या आत्मबलको शुद्धतम रूपमें प्रदर्शित किया था। ये सभी गुरु अपनी आत्माकी तुलनामें अपने शरीरको तुच्छ समझते थे। टॉल्स्टॉय इस सिद्धान्तके सबसे श्रेष्ठ और प्रसिद्ध व्याख्याकार थे। उन्होंने न केवल इसकी व्याख्या की, बल्कि तदनुसार अपना जीवन भी ढाला था। यह सिद्धान्त यूरोपमें प्रचलित होनेसे कहीं पहले भारतमें जान लिया गया था और अकसर व्यवहारमें लाया जाता था। यह आसानीसे समझा जा सकता है कि आत्मबल शरीरबलसे बहुत ही ऊँचा है। यदि लोग अन्यायके प्रतिकारके लिए आत्मबलका सहारा लें तो वर्तमान कष्टोंसे एक बड़ी हद तक बचा जा सकता है। कुछ भी हो, इसके प्रयोगसे दूसरोंको कभी कष्ट नहीं पहुँचता। इसलिए जब-कभी इसका गलत उपयोग किया जाता है, तब इससे उपयोग करने वालेको ही कष्ट होता है, न कि उन लोगोंको जिनके विरुद्ध इसका उपयोग किया जाता है। सद्‌गुणके समान यह अपना पुरस्कार आप ही है। इस प्रकारके बलके उपयोगमें असफलता-जैसी कोई वस्तु होती ही नहीं। "बुराईका प्रतिरोध न करो" का अर्थ है, बुराईको बुराईसे नहीं, बल्कि भलाईसे दूर करो। दूसरे शब्दोंमें, शरीरबलका शरीरबलसे नहीं, बल्कि आत्मबलसे प्रतिरोध करो। इसी विचारको भारतीय दर्शनमें 'अहिंसा' शब्दसे व्यक्त किया गया है। इस सिद्धान्तको कार्यरूप देनेका अर्थ है उन लोगों द्वारा शारीरिक कष्ट उठाना जो इसका अनुसरण करते हैं। किन्तु यह बात सब जानते हैं कि संसारमें इस प्रकारका कष्ट कुल मिलाकर कम नहीं, बहुत ज्यादा है। ऐसा होनेपर उन लोगोंके लिए, जो आत्मबलकी अतुल शक्तिको पहचानते हैं, इतना ही आवश्यक है कि वे सजग होकर और समझ-बूझकर शारीरिक कष्टको अपना प्रारब्ध समझें। जब कष्ट उठानेवाले ऐसा समझ लेते हैं तब उनके लिए यही कष्ट आनन्दका स्रोत बन जाता है। यह बिलकुल साफ है कि अनाक्रामक प्रतिरोधको इस प्रकार समझ लें तो वह शरीरबलसे बेहद ऊँचा हो जाता है; और इसमें शरीरबलसे अधिक साहसकी भी जरूरत होती है। इस कारण अनाक्रामक प्रतिरोधसे आक्रामक प्रतिरोध अथवा शारीरिक प्रतिरोधपर जाना सम्भव नहीं है। इसलिए उपनिवेशीय देखेंगे कि भारतीयों द्वारा अपनी शिकायतोंको दूर करानेके लिए इस शक्तिका उपयोग किया जानेपर आपत्ति नहीं की जा सकती। यदि वतनी भी इस हथियारका उपयोग करें तो इससे जरा भी हानि नहीं हो सकती। उलटे, यदि वतनी इतने ऊँचे उठ सकें कि वे इस शक्तिको समझें और इसका उपयोग करें तो सम्भवतः कोई भी वतनी-प्रश्न हल हुए बिना नहीं रहेगा। इस शक्तिके सफल प्रयोगके लिए एक शर्त है, शरीरसे भिन्न आत्माकी सत्ता और उसकी नित्यता स्वीकार करना, तथा श्रेष्ठताको मानना। यह स्वीकृति जीवन्त विश्वासके रूपमें होनी चाहिए, न कि केवल

बुद्धिसे समझ लेनेके रूपमें। वक्ताने अपने भाषणको अनेक आधुनिक उदाहरणोंसे स्पष्ट किया।[1]

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, १२-६-१९०९

१५४. पत्र : 'ट्रान्सवाल लीडर' को[2]

[जोहानिसबर्ग
जून ८, १९०९ के बाद]

[सम्पादक
'ट्रान्सवाल लीडर'
जोहानिसबर्ग]
महोदय,

उपनिवेश-सचिवने ब्रिटिश भारतीय समाजपर श्री मनिकके आरोपोंका तुरन्त और निर्णयात्मक उत्तर देकर भारतीय समाजको अनुगृहीत किया है। माननीय श्री मनिक कहते हैं कि लगभग १२ सालकी आयुके एशियाई बालक, जिनके माता-पिता कभी इस देशमें नहीं रहे, यहाँ आ रहे हैं और कानूनकी अवहेलना कर रहे हैं। यदि छः मासमें केवल ५९ एशियाई ही यहाँ आये हैं और ये स्पष्टतः अधिकृत प्रवेशकर्ता हैं, तो यह साफ है कि श्री मनिकका समस्त समाजपर दोषारोपण निराधार है; और जबतक माननीय महानुभावके पास आरोपके समर्थनमें कोई दूसरी बात न हो और जबतक वह जनताके सम्मुख नहीं रख ही जाती, तबतक मेरी सम्मतिमें, समाजके प्रति माननीय महानुभावका कर्तव्य है कि उन्होंने जो आरोप लगाया है उसे वे वापस ले लें।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
ट्रान्सवाल लीडर, १२-६-१९०९

१. अपना भाषण समाप्त करनेपर गांधीजीने बहुत-से प्रश्नोंका उत्तर दिया। बादको टाउन क्लार्क श्री मैके द्वारा पेश किया गया धन्यवादका प्रस्ताव हर्षध्वनिके साथ पास किया गया।

२. गांधीजीने यह जी० जी० मनिक द्वारा ट्रान्सवाल-संसदमें ८ जूनको लगाये गये इस आरोपको लक्ष्य करके लिखा था कि "पिछले मासमें किसी अन्य मासकी अपेक्षा दुगुने भारतीय [उपनिवेशमें] आये हैं. . . उनकी 'चाल' इस देशमें ऐसे बच्चोंको लानेकी है जिनके माता-पिता इस उपनिवेशमें कभी नहीं रहे।" उपनिवेश-सचिवने उत्तर दिया ". . . इस वर्ष देशमें कुल ५९ एशियाई आये हैं, नौ नेटालके रास्ते और पचास मोजाम्बिकके रास्ते।" पत्र इंडियन ओपिनियनमें १२-६-१९०९ को "वापस लो!" शीर्षकसे छपा था।

१५५. कुछ विचार

सत्याग्रहका अन्त जब होना होगा, तब होगा। लेकिन इस बीच भारतीय समाजको जो लाभ हुए हैं और उसने जो रस चखा है, उसके उदाहरण हम यहाँ बिना किसी दलीलके दे रहे हैं। इनपर हर भारतीयको मनन करना चाहिए।

(१) रोडेशियाका कानून खत्म हो गया।

(२) लॉर्ड क्रू उस कानूनको रद करनेका स्पष्ट कारण ट्रान्सवालमें जारी सत्याग्रह-संघर्षको बताते हैं।

(३) उसी लेखमें लॉर्ड क्रू यह भी कहते हैं कि साम्राज्य-सरकारको ट्रान्सवाल विधेयक-पर मंजूरी देते हुए खुशी नहीं हुई।

(४) हालमें प्रकाशित नीली किताब (ब्ल्यू-बुक) में लॉर्ड क्रू ने भारतीयोंकी दोनों माँगें स्वीकार करनेकी सिफारिश की है।

(५) उत्तरमें ट्रान्सवाल सरकारने यह नहीं कहा कि माँगें स्वीकार नहीं की जायेंगी; लेकिन यह जरूर कहा है कि सत्याग्रह बहुत-कुछ खत्म हो गया है तथा यदि लॉर्ड क्रू थोड़ा और रुकें तो शेष भारतीय भी घुटने टेक देंगे। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि यदि ज्यादा भारतीयोंने सत्याग्रह जारी रखा होता तो हमारी माँगें कब-की स्वीकृत हो गई होतीं।

(६) ऐसे अनेक गोरे, जो भारतीयोंको नहीं जानते थे, आज उन्हें जानने लगे हैं; इतना ही नहीं, वे हमारे हितमें काम भी करने लगे हैं।

इनमें से प्रत्येक उदाहरण से अनेक विचार उत्पन्न हो सकते हैं। हम आगे कभी अपने पाठकोंके सामने इनपर विशेष विचार प्रस्तुत करेंगे। किन्तु हम आशा करते हैं कि इस बीच बहुत-से भारतीय इनपर विचार करेंगे और इनसे नई शक्ति प्राप्त करेंगे। यह तो साफ जान पड़ता है कि जीत हमारे हाथमें है। फिर समझमें नहीं आता कि बहुत-से भारतीय क्यों कायर बन गये।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-६-१९०९

१५६. केपके भारतीय

केपके भारतीय सो रहे हैं। प्रवासी अधिकारी जाग रहा है। केपका प्रवासियोंसे सम्बन्धित विवरण प्रत्येक भारतीयके पढ़ने और विचार करने योग्य है। हम यहाँ उसमें से केवल दो बातोंपर जोर देना चाहते हैं। श्री कज़िन्स (प्रधान प्रवासी-अधिकारी) का कहना है कि अनेक भारतीय दूसरोंके बच्चोंको अपने कहकर ले आते हैं और उनकी झूठी उम्र बताते हैं। इस कारण श्री कज़िन्सका सुझाव है कि कानूनमें ऐसा संशोधन कर देना चाहिए जिससे प्रत्येक भारतीय भारतसे ही बच्चेकी उम्रका और इस आशयका (सरकारी) प्रमाणपत्र लाये कि वह बच्चा उसीका है। इन दोनों बातोंमें परस्पर कार्य-कारण सम्बन्ध है। कुछ भारतीय उक्त ढंगकी धोखाधड़ी करते हैं, इसीलिए श्री कज़िन्सने यह नया सुझाव दिया है। जबतक हम मिथ्या आचरण करते हैं तबतक हमें परेशानियाँ उठानी ही पड़ेंगी। चोरी-छिपे कानून तोड़ना सदा हानिकारक होता है। यदि हममें हिम्मत हो तो कोई कानून पसन्द न आनेपर उसे खुल्लमखुल्ला तोड़ना चाहिए; यह लाभदायक है। ऐसा खुला कानून-भंग कब किया जाये, हमें इसका [भी] खयाल रखना चाहिए। केपके भारतीयोंको बहुत सावधानी रखनी है। एक तो यह कि यदि हममें बेईमानी है तो उसे दूर करें; और दूसरे, तत्काल सरकारको लिखें कि श्री कज़िन्सका सुझाव अनुचित है। हम इस विवरणकी दूसरी बातें अन्यत्र देंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–६–१९०९

१५७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

हाउटपुर्टके कैदियोंसे मुलाकात

हाइडेलबर्गके पास हाउटपुर्टकी जेलमें भारतीय कैदियोंसे मुलाकात करनेके लिए श्री गांधी, श्री व्यास, श्रीमती व्यास और श्री शेलत गये थे। सभी कैदियोंकी तबीयत बहुत अच्छी जान पड़ी। अब कुछ समयसे वहाँके अधिकारियोंका बरताव अच्छा दिखाई देता है।

श्री नानालाल शाह इसी जेलमें हैं। उन्होंने अपने पंजीयन प्रमाणपत्रका[1] उपयोग नहीं किया, इसलिए उनको छः महीनेकी कैदकी सजा दी गई है। इससे उनकी हिम्मत प्रकट होती है। जेलमें भी उनका काम अच्छा है। वे हरएकके प्यारे बन गये हैं। उनको खानेकी जो चीजें मिलती हैं उनमें से वे सभीको हिस्सा देते हैं। यह जेलसे छूटे हुए लोगोंने बताया है। अभी हालमें ही छूटे हुए श्री मनजी नत्थूभाई, श्री खीमचन्द शाह और श्री प्रभु कुबेर एक स्वरसे श्री नानालाल शाहकी प्रशंसा करते हैं।

श्री भायातके जेलमें होनेपर भी उनकी दूकानसे कैदियोंको मदद मिलती रहती है। जो कैदी छूटते हैं उनको लेनेके लिए प्रायः गाड़ी जाती है। मैं "प्रायः" शब्दका प्रयोग इसलिए

१. रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट।

करता हूँ कि जब श्री मनजी, श्री खीमचन्द और श्री प्रभु छूटे तब उनको लेनेके लिए गाड़ी नहीं गई। श्री मनजीका व्रत था और श्री खीमचन्दकी तबीयत खराब थी। इससे उनको तकलीफ हुई। इसके अतिरिक्त उनको जोहानिसबर्ग आनेका तार समयपर न मिलनेसे कोई उनको स्टेशनपर लेनेके लिए भी नहीं जा सका। ऐसी तकलीफोंसे किसी सत्याग्रहीको घबरानेकी जरूरत नहीं है। इन्हें भी सहन कर लेना चाहिए। भूलचूक तो होती ही रहती है।

अस्वातकी खूबी

श्री अस्वातने डीपक्लूफ जेलमें बहुत तकलीफ उठाई है। उनका वजन लगभग ३० पौंड घट गया है। मालूम होता है, उन्होंने सत्याग्रहका पूरा पालन किया है। वे जेलके खानेके सिवा दूसरा खाना छूते भी नहीं हैं। उनको बीड़ी पीनेका व्यसन बहुत था; किन्तु उन्होंने तीन महीनेमें एक दिन भी बीड़ी नहीं पी। वे अपनी दूकानकी परवाह न करके फिर जेल जानेके लिए तैयार हो रहे हैं। श्री अस्वातके सम्बन्धमें यह लिखते हुए मुझे ध्यान आता है कि श्री थम्बी नायडूने बीड़ी, चाय और कॉफी हमेशाके लिए छोड़ दी है; यद्यपि जेल जानेसे पहले वे इन तीनों चीजोंके बिना एक घड़ी भी नहीं रह सकते थे। इसके अलावा उन्होंने जबतक लड़ाई खत्म नहीं हो जाती तबतक मूँछें न रखनेका प्रण किया है। ऐसे वीर जबतक भारतीय समाजमें हैं तबतक यह लड़ाई चलती ही रहेगी और अन्तमें जीत हमारी होगी।

इससे शिक्षा

मुझे मालूम हुआ है कि कुछ सत्याग्रही कैदी जेलमें जाकर चोरी करना सीख गये हैं। पहले वे जो चीज खुले तौरपर न मिलती हो अथवा दूसरे लोगोंको नहीं दी जाती हो। अब खाने लगे हैं। जिनको कभी तम्बाकू खाने या पीनेका व्यसन न था वे अब तम्बाकू खाना और पीना सीख गये हैं। ऐसे कैदियोंको शर्मिन्दा होना चाहिए और श्री अस्वात तथा श्री नायडूसे सीख लेनी चाहिए। यह सीधा हिसाब है कि समाजका सत्याग्रह जितना बढ़ेगा अन्त उतनी ही जल्दी होगा और जितना घटेगा अन्त उतनी ही देरसे होगा।

हद्द-पार

जिन भारतीयोंको निर्वासित करके भारत भेजा जाता है उनके सम्बन्धमें उचित उपाय तुरन्त आरम्भ कर दिये गये हैं। इस सम्बन्धमें श्री आइज़क डेलागोआ-बे भेजे गये हैं। मुझे आशा है कि डेलागोआ-बेके भारतीय उनकी सहायता करेंगे। दूसरी ओर सरकारके साथ लिखा-पढ़ी जारी है। श्री नरोत्तम कालीदास, जिनको देश-निकालेका हुक्म दिया गया था, छोड़ दिये गये हैं और वे जोहानिसबर्गमें आनन्द कर रहे हैं। फिर भी अगर वे देशसे निकाल दिया जाये तो उसमें भी डरनेका कोई कारण नहीं है। अपने देशमें भेजे जायें तो हिम्मतवर लोग वहाँ भी आन्दोलन कर सकते हैं। सत्याग्रही होनेपर भी जिनको देश-निकाला हुआ है या होगा, उनकी सार-सँभालके सम्बन्धमें देशको तार दे दिया गया है। इसके अलावा श्री सोमाभाई पटेलने, जो हालमें ही जेलसे निकले हैं और अब कार्यवश देश गये हैं, इस सम्बन्धमें बम्बईमें पूरा प्रयत्न करनेका निश्चय किया है।

प्रिटोरियाके भारतीय धोबी

प्रिटोरिया नगर-परिषदकी स्वास्थ्य-समितिकी सलाहसे नगरपालिकाने नीचेके प्रस्ताव पास किये हैं:

(१) सन् १९०७ के अगस्तमें जो यह निश्चय किया गया था कि भारतीय धोबियोंको नगरपालिकाके धोबी घाटोंका उपयोग नहीं करने दिया जायेगा। और उन्हें अपने धोबीघाटोंमें पानीकी निजी व्यवस्था करनी चाहिए, उसको रद कर दिया जाये।

(२) १९०८ के मई मासमें निश्चय किया गया था कि सब धोबियोंको नगरपालिकाके धोबीघाटोंमें कपड़े धोनेसे रोका जाये। वह रद किया जाये।

(३) अबसे सब रंगदार लोगोंको जातिभेदके बिना नगरपालिकाके धोबीघाटोंका उपयोग करने दिया जाये।

(४) धोबीघाटोंकी देख-रेख करनेवालोंको ताकीद की जाये कि वे निरर्थक पानी न बहने देनेका कड़ाईसे ध्यान रखें।

बीमारीके कारण मुक्ति

खबर मिली है कि श्री भायातकी दूकानके कर्मचारी श्री मुहम्मद ममुजी पटेलको, जो फोक्सरस्टकी जेलमें थे, सरकारने बीमारीके कारण जेलसे छोड़ दिया है।

मुहम्मद अहमद भाभा

स्टैंडर्टनवासी श्री मुहम्मद अहमद भाभा, जो हाउटपूर्टकी जेलमें थे, गत शनिवारको रिहा कर दिये गये। उनको लेनेके लिए श्री भायातकी गाड़ी गई थी, और श्री भायातके मकानपर उनकी आवभगत की गई। मैं आशा करता हूँ कि श्री भाभा फिर जेल जानेके लिए तैयार रहेंगे।

भायात

श्री भायात खुद यह अंक प्रकाशित होनेके दिन—१२ तारीखको रिहा किये जायेंगे। ऐसा अनुमान किया जाता है कि श्री भायातकी रिहाईके बाद हाइडेलबर्गके अन्य कई भारतीय जेल जानेको तैयार हो जायेंगे।

दर्जी, कुनबी आदि

कुछ दर्जी, कुनबी[1] आदि गिरफ्तार किये गये हैं। वे सब सत्याग्रही नहीं दिखाई देते। कुछने नये कानूनके मुताबिक [पंजीयनके लिये] अर्जी दी है। जान पड़ता है कि इनमें से बहुत-से तो देश-निकालेके लायक हैं। यदि ऐसे भारतीय सत्याग्रहका अवलम्बन करें तो उनको भी और कौमको भी लाभ पहुँच सकता है। ऐसा करनेसे उनके देशसे निकाले जानेका अवसर भी नहीं आयेगा। जेल जाना चाहें तो बहुत-से भारतीय जा सकते हैं। श्री अस्वातकी दूकानसे तो रोज ही एक भारतीय अपना बलिदान देता है। इसलिए उस गद्दीको सम्भालकर बहुत-से भारतीय जेल जा सकते हैं। आजतक प्रायः तमिल वीर ही जेल गये हैं। दूसरे भारतीयोंके लिए यह शर्मकी बात है। इसलिए यदि दर्जी, कुनबी आदि जिन भारतीयोंपर

१. गुजरातमें जातिविशेष जिसमें ज्यादातर काश्तकार होते हैं।

संकट है, वे जेल चले जायें तो उनके एक पन्थ दो काज सिद्ध होते हैं। इसमें भी एक बात याद रखनी ही चाहिए कि वे भारतीय ऐसे होने चाहिए जिन्हें ट्रान्सवालमें रहनेका हक हो। मुझे आशा है कि पाठक इन विचारोंपर ध्यान देंगे।

इमाम साहब

इमाम अब्दुल कादिर बावजीर, जो तीसरी बार जेल काट रहे हैं, १५ तारीखको रिहा होंगे। मुझे आशा है कि उनके पदका, उनकी इमामतका और उनकी सेवाओंका विचार करनेवाले सभी भारतीय उनको सम्मान देनेके लिए उस दिन जेलके दरवाजेपर पहुँचेंगे।

गुरुवारको रिहा होंगे

सर्वश्री ई० एस० कुवाड़िया, एम० पी० फैन्सी, अहमद हलीम, रजाक नूरभाई, सुलेमान कासमत, वल्लभराम छानाभाई, नारायणसामी नायडू और नायना फ्रांसिस आगामी गुरुवारको रिहा होंगे। उनका उचित स्वागत करनेकी व्यवस्था की जा रही है। मुझे आशा है कि उनको लेनेके लिए सब भाई गुरुवारको सुबह जेलके द्वारपर उपस्थित होंगे।

ब्रिटिश भारतीय समझौता-समिति[1]

ब्रिटिश भारतीय समझौता समितिकी बैठक हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके भवनमें गत रविवारको हुई थी। बहुत-से भारतीय उपस्थित थे। स्टैंडर्टनसे श्री हाजी इस्माइल आमद, प्रिटोरियासे श्री खमीसा, जीरस्टसे श्री हाजी कासिम और क्रूगर्सडॉर्पसे श्री मुहम्मद काजी आये थे। जोहानिसबर्गके सज्जनोंमें श्री अब्दुल गनी, श्री माल[2], श्री जॉर्ज गॉडफ्रे, श्री दादाभाई और श्री शहाबुद्दीन आदि थे। यह समिति सत्याग्रहियोंकी सहायताके लिए बनाई गई है। इसमें वे लोग शामिल हो सकते हैं जो जेल जाने आदिमें भाग नहीं ले सके हैं। श्री हाजी हबीब अध्यक्ष हैं और श्री जॉर्ज गॉडफ्रे अवैतनिक मन्त्री। श्री गांधी बैठकमें विशेष आमन्त्रणसे उपस्थित थे। श्री हाजी हबीबने बैठकका कार्य शुरू करते हुए बहुत विवेचन किया। उन्होंने कहा कि श्री गांधीने लड़ाईके सम्बन्धमें समझौता करते समय बहुत उतावली की।[3] यदि वे ऐसा न करते और जनरल स्मट्ससे सब बातें लिखवा लेते तो भारतीय समाजको इतने कष्ट सहन न करने पड़ते। ऐसा होनेपर भी अब तो हमें लड़ाई खत्म करनेकी ही फिक्र करनी है। जो भारतीय भाई जेल जाते हैं उनके छुटकारेमें मदद देना सब भारतीयोंका कर्तव्य है। जो जेल नहीं जाते उनको गद्दार कहना ठीक नहीं है। हमें मिलजुलकर चलना है। यह समिति जनरल स्मट्सको अर्जी देगी। अधिनियम ३६ में बहुत-सी बातें रह गई हैं। उससे बहुत-से लोगोंके अधिकार मारे जाते हैं। बच्चोंको परेशानी होती है। ट्रान्सवालमें जाकर अर्जी नहीं दी जा सकती।[4] सभीसे अँगूठा-निशानी माँगी जाती है। इन सब बातोंके सम्बन्धमें

१. ब्रिटिश इंडियन कन्सिलिएशन कमिटी।

२. छपाईकी भूल जान पड़ती है। हलीम मुहम्मद होना चाहिए।

३. तात्पर्य जनवरी, १९०८ में ट्रान्सवाल सरकार और एशियाई समुदायोंके बीच हुए समझौतेसे है; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४३-४४।

४. १९०८ के एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन अमेंडमेंट ऐक्ट) के अनुसार जो भारतीय इस कानूनके लागू होनेके समय ट्रान्सवालसे बाहर थे, लेकिन जिन्हें प्रवेशका अधिकार था, वे २१ सितम्बर, १९०८ से पहले दक्षिण आफ्रिकाके जिस भागमें भी रहे हों, वहींसे प्रार्थनापत्र दे सकते थे।

न्यायकी माँग करनी है। सच्चा सत्याग्रह तो मीर आलमका ही माना जायेगा। उन्होंने अपना अनुमतिपत्र दिखानेसे इनकार किया और आज वे निर्वासित हो चुके हैं। 'इंडियन ओपिनियन' में बहुत बार लेख और समाचार इकतरफा आते हैं, यह ठीक नहीं कहा जा सकता। श्री खंडेरिया-जैसे लोग दूसरोंको हिम्मत बँधाकर खुद जेल जानेसे डरकर जुर्माना दे आये। फिर भी 'इंडियन ओपिनियन' में उनकी कोई आलोचना नहीं आई, यह स्पष्टतः अनुचित है। मैं यह भी मानता हूँ कि यूरोपको शिष्टमण्डल भेजनेकी जरूरत है।

समिति बनानेके सम्बन्धमें प्रस्ताव श्री हाजी वजीर अलीने पेश किया। उन्होंने उसे पेश करते हुए कहा कि जो लोग जेल नहीं गये अथवा जाना नहीं चाहते, वे भी जातिकी सहायता कर सकते हैं। श्री गांधीने ऐसी सलाह दी, इसीसे यह सभा बुलाई गई है। श्री हलीम मुहम्मदने प्रस्तावका समर्थन किया और वह सर्वसम्मतिसे स्वीकृत हो गया। उपनिवेश-सचिवको सत्याग्रहियोंकी माँगें मंजूर करनेके सम्बन्धमें अर्जी देनेका दूसरा प्रस्ताव श्री ईसप काछलियाने पेश किया। पेश करते हुए उन्होंने कहा, मैंने अपना पंजीयन प्रमाणपत्र[1] जलाया है और फिर उसकी नकल नहीं ली है, इसलिए मैं ऐसा मानता हूँ कि मैं तो पूरा सत्याग्रही माना जाऊँगा। फिर भी यह प्रस्ताव अध्यक्षकी स्वीकृतिसे पेश करता हूँ। यदि यह माँग मंजूर न की जाये तो सब भारतीय फिरसे जेल जानेके लिए तैयार हो जायेंगे।

इस प्रस्तावका समर्थन श्री अब्दुल गनीने किया। श्री हाजी वजीर अली और श्री अब्दुल गनीने कहा कि यदि सरकार माँग मंजूर न करेगी तो लोगोंके जेल नहीं जानेका सवाल ही नहीं उठता। हमारा काम तो जेल जानेवाले लोगोंकी यथासम्भव सहायता करना है। इसके बाद श्री हबीब मोटनने लम्बा भाषण दिया। उन्होंने श्री गांधीकी कई भूलें बताईं और कुछ सवाल पूछे। श्री काछलियाके मकानपर श्री उमरजी सालेको जो चाय पार्टी दी गई थी उसमें हिन्दू और मुसलमान साथ-साथ बैठे थे। श्री मोटनने उसके बारेमें अपनी खुशी जाहिर की और यह कामना की कि भारतमें भी ऐसा ही हो। फिर स्टैंडर्टनके श्री इस्माइल आमदने छोटा-सा भाषण दिया, और उसके बाद श्री खमीसा और श्री इस्माइल पटेल भी बोले।

श्री जॉर्ज गॉडफ्रेने अंग्रेजीमें भाषण दिया। श्री गांधीने संक्षेपमें उत्तर दिया और कहा कि यदि यह समिति सच्चे दिलसे, तेजीसे और उत्साहसे काम करेगी उससे तो निःसन्देह सत्याग्रहमें मदद मिलेगी होगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–६–१९०९

१. रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट।

१५८. नायडू और अन्य लोगोंका मुकदमा[1]

[जोहानिसबर्ग
जून १६, १९०९]

इसके बाद,[2] खुली अदालतमें श्री थम्बी नायडूपर विनियमोंके खण्ड ९ के अन्तर्गत मुकदमा चलाया गया। उनकी ओरसे श्री गांधीने पैरवी की। श्री नायडूने अपना अपराध स्वीकार किया और जैसा कि आम तौरपर होता था, उन्हें ५० पौंड जुर्मानेकी या उसके बदले तीन मासके सपरिश्रम कारावासकी सजा दी गई। तदुपरान्त सर्वश्री एन० ए० कामा और सी० पी० व्यास अदालतमें लाये गये और उनपर भी वैसा ही आरोप लगाया गया। उनकी ओरसे श्री गांधीने कहा कि उनके मुवक्किल अपना अपराध स्वीकार करना चाहते हैं; किन्तु वे १४ दिनकी मोहलतकी प्रार्थना करते हैं, क्योंकि दोनोंपर अपने एक-एक निकट सम्बन्धीकी, जो खतरनाक बीमारीकी हालतमें हैं, सुख-सुविधाकी जिम्मेदारी हैं। इस्तगासेकी ओरसे कोई आपत्ति नहीं की गई और उनको मोहलत दे दी गई।

इस बीच अदालतके बाहर ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष अ० मु० काछलिया और तमिल कल्याण सभा (तमिल बेनिफिट सोसाइटी)के अध्यक्ष श्री वी० ए० चेट्टियार इसी आरोपमें गिरफ्तार कर लिये गये थे। श्री काछलियाने शिकायत की कि गिरफ्तारीके बाद पुलिसने और अदालतके अहातेमें उनको हिरासतमें लेनेवाले अधिकारीने उनसे कठोरताका बरताव किया।

श्री गांधीने इस बरतावका जोरदार विरोध किया और कहा कि ऐसा बरताव सत्याग्रहियोंको दी जानेवाली सजाका कोई हिस्सा नहीं हो सकता।

न्यायाधीश श्री शूरमैनने कहा कि यह बात वास्तवमें पुलिस कमिश्नरसे सरोकार रखती है, मुझसे नहीं; क्योंकि मैं तो अपने सामने प्रस्तुत विशिष्ट आरोपपर ही विचार कर सकता हूँ।

श्री डब्ल्यू० जे० मैकइनटायरने अदालतकी अनुमति लेकर कहा कि मुझे लगता है, यहाँ जो बयान दिया गया है अदालतके एक अधिकारीके रूपमें उसकी पुष्टि करना मेरा कर्त्तव्य है; क्योंकि मैंने इन बातोंको अपनी आँखोंसे देखा है। उन्होंने कहा कि

१. थम्बी नायडू, सी० पी० व्यास, एन० ए० कामा और यू० एम० शेलत १५ जून, १९०९ को गिरफ्तार किये गये थे। इनमें से पहले तीनपर अपने पंजीयन प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) दिखाने और अपने हस्ताक्षर तथा अँगूठा-निशानी देनेसे इनकार करनेका आरोप था। शेलतपर १९०८के अधिनियम ३६के खण्ड ७के अन्तर्गत उपनिवेशमें पंजीयन प्रमाणपत्रके बिना रहनेका आरोप लगाया गया था। यह विवरण, "इंडियन ओपिनियनके लिए विशेष रूपमें" इस शीर्षकसे छपा था: "धोखा, प्रतिनिधि गिरफ्तार और दण्डित।"

२. उसी दिन इससे पहले मजिस्ट्रेटके निजी कार्यालयमें श्री शेलतको अपना अपराध स्वीकार करने और कानूनको माननेसे इनकार करनेपर उपनिवेशसे चले जानेकी आज्ञा दी गई।

ऐसे निरीह लोगोंके प्रति इस तरहका व्यवहार करना बड़ी लज्जाजनक बात है। मैंने स्वयं अनेक बार, न्यायाधीशकी मौजूदगीमें भी, भारतीय सत्याग्रहियोंके साथ ऐसा व्यवहार होते देखा है और इसके विरुद्धकी विनयपूर्वक शिकायत है।

न्यायाधीशने कहा कि मैंने ऐसा व्यवहार कभी नहीं देखा। यदि देखा होता तो मैं कभी ऐसा होने नहीं देता। किन्तु मेरा खयाल है कि यह मामला मेरे तय करनेका नहीं है।

अपराधियोंको अपना-अपना अपराध स्वीकार करनेपर तीन-तीन मासकी सख्त कैदकी सजा दे दी गई।

श्री गांधीने श्री चेट्टियारकी ओरसे बताया कि उनका मुवक्किल लगभग ५० वर्षकी आयुका है और मधुमेहसे पीड़ित है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–६–१९०९

१५९. भाषण: सार्वजनिक सभामें[1]

[जोहानिसबर्ग
जून १६, १९०९]

सभापतिजी, महिलाओ, सज्जनो और मित्रो,

इस दोपहरको हम यहाँ कुछ असाधारण स्थितियोंमें एकत्र हुए हैं; परन्तु मैं यह नहीं कह सकता कि इन स्थितियोंकी आशंका न थी। आप जानते हैं कि जनरल बोथा और जनरल स्मट्स उपनिवेशोंका एक संघराज्य[2] बनानेके सिलसिलेमें शीघ्र ही इंग्लैंड जा रहे हैं। इसलिए कुछ हफ्तोंसे भारतीय समाजके खास-खास लोग इस विषयपर आपसमें विचार-विमर्श कर रहे हैं कि हमें अपना शिष्टमण्डल वहाँ भेजना चाहिए। ट्रान्सवालमें हमारे प्रति सहानुभूति प्रकट करने और रूपमें उचित हर तरह हमारी सहायता करनेके लिए यूरोपीयोंकी जो एक समिति बनी हुई है, उसने भी सलाह दी है कि एक ऐसा शिष्टमण्डल इंग्लैंड जाना चाहिए। आपको पता है कि गत रविवारको समितिकी एक बहुत बड़ी बैठक[3] हुई थी और उसमें बहुत लम्बी चर्चाके बाद भारी बहुमतसे यह प्रस्ताव मंजूर किया गया था कि अगले सोमवारको सत्याग्रहियोंका एक शिष्टमण्डल इंग्लैंड भेजा जाये। समितिने ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष श्री काछलियाको, तमिल समाजके प्रतिनिधि और तमिल कल्याण सभा (तमिल बेनिफिट सोसाइटी)के अध्यक्ष श्री चेट्टियारको, श्री हाजी हबीबको, जो

१. फोर्ड्सबर्गके हमीदिया मसजिदके मैदानमें १६ जूनको कोई डेढ़-दो हजार भारतीयोंकी एक विशेष सार्वजनिक सभा हुई थी। यह सभा ट्रान्सवालकी स्थिति बतानेके लिए इंग्लैंड और भारतको भेजे जानेवाले शिष्टमण्डलोंके प्रतिनिधि चुननेके उद्देश्यसे की गई थी। इसमें ट्रान्सवाल-भरके प्रतिनिधि उपस्थित थे। ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यवाहक अध्यक्ष श्री ई० एस० कुवाड़ियाने सभापतित्व किया था। वे आरम्भमें कुछ देर गुजरातीमें बोले। उनके बाद गांधीजीने भाषण दिया।

२. तात्पर्य दक्षिण आफ्रिकाके चार उपनिवेशोंके प्रस्तावित यूनियनसे है।

३. बैठककी कार्रवाईकी रिपोर्टके लिए देखिए परिशिष्ट १३।

अबतक हमसे पूरी तरह सहमत नहीं थे, किन्तु जिन्होंने अब अपने-आपको सत्याग्रही घोषित कर दिया है, और मुझे शिष्टमण्डलके लिए मनोनीत किया है। समितिमें एक सुझाव यह भी दिया गया कि इंग्लैंड तो एक शिष्टमण्डल जाये ही, परन्तु भारतकी जनताको यहांकी स्थितिकी सही-सही जानकारी देनेके लिए एक शिष्टमण्डल भारत भी भेजा जाये। इसके लिए ये नाम सुझाये गये — ब्रिटिश भारतीय संघके सहायक अवैतनिक मन्त्री श्री पोलक, श्री एन० गोपाल नायडू, श्री एन० ए० कामा और एक चौथा नाम, जो उस वक्त तो नहीं दिया गया था लेकिन उसे अब हम सभामें रखते हैं। यह नाम है श्री कुवाड़ियाका। आज हम देखते हैं कि सरकारने श्री काछलियापर अपना हाथ डाल दिया है और वे जोहानिसबर्गकी जेलमें पड़े हैं। उन्हें पचास पौंड जुर्मानेकी सजा हुई है और अगर वे इसे न देंगे तो तीन महीनेका कठोर कारावास भोगेंगे। इस लड़ाईमें वे चौथी बार जेल गये हैं। श्री चेट्टियार भी गिरफ्तार हो गये हैं और वे भी तीन महीनेकी सजा काट रहे हैं। वीर थम्बी नायडू भी जेलमें ही हैं। श्री व्यास कल ही गिरफ्तार हुए हैं। उन्हें अपने भाईसे — जो बहुत बीमार हैं और शायद मरणासन्न हैं — मिलनेके लिए जमानतपर छोड़ दिया गया है। उनका मामला पन्द्रह दिनके लिए स्थगित कर दिया गया है। श्री नादेशीर कामा, अगर इस सभामें उचित रूपसे चुन लिये जाते तो, भारत रवाना हो जानेवाले थे। परन्तु वे भी गिरफ्तार हो गये हैं और उनके मामलेकी सुनवाईकी तारीख ऐसे ही कारणोंसे आगे बढ़ा दी गई है। भारत जानेवाले शिष्टमण्डलमें हमारे सुयोग्य सभापतिका भी नाम है। उन्हें भी दो बजे गिरफ्तार कर लिया गया था, लेकिन अपने कारोबारको समेटनेके लिए उन्हें कुछ मोहलत दे दी गई है। निश्चय ही उन्हें भी तीन महीनेसे कमकी सजा नहीं होगी। इसी प्रकार ब्रिटिश भारतीय संघके उपाध्यक्ष श्री उमरजी सालेको और श्री दिलदार खाँको भी गिरफ्तार कर लिया गया है। उन्हें जमानतपर अभी छोड़ दिया गया है, परन्तु उन्हें भी वही सजा दी जायेगी। ऐसी स्थितियाँ हैं, जिनमें आज हम यहाँ एकत्र हुए हैं। मैं नहीं जानता कि सरकार मुझसे क्यों नाराज है जो उसने मुझे अभीतक गिरफ्तार नहीं किया। परन्तु मैं इस सभामें घोषणा करता हूँ कि अगर सभामें इंग्लैंडको शिष्टमण्डल भेजनेका प्रस्ताव मंजूर हो जायेगा तो मैं निश्चित रूपसे अगले सोमवारको इंग्लैंडके लिए रवाना हो जाऊँगा। हाँ, उससे पूर्व अगर पहलेकी भाँति ट्रान्सवालकी सरकार मुझे फिर अपना मेहमान बना ले तो बात दूसरी है। मित्रो, जो भाई जेल गये हैं, वे अपने स्त्री-बच्चोंको पीछे छोड़ गये हैं। दुर्भाग्यवश, मैंने कल शामको एक दुःखी स्त्रीको रोते हुए देखा। परन्तु उसके आखिरी शब्द ये थे — "मैं चाहे रोऊँ या कुछ भी करूँ, पर आप देखेंगे कि मेरे पति बहादुरीके साथ अपने कर्तव्यका पालन करेंगे और पाँचवीं बार जेल जायेंगे।" अब यह दिखाना इस सभाका काम है कि शेष भारतीय, जो बाहर रह गये हैं, क्या कर सकते हैं। मैं खूब जानता हूँ कि हमारे समाजके सब आदमी समान कष्ट नहीं उठा सकते। परन्तु अगर आप जेल नहीं जा सकते तो जो लोग जेल गये हैं उनकी मदद तो अवश्य ही कर सकते हैं। इसी तरह अन्य अनेक प्रकारसे अपनी सहानुभूति दिखाकर आप इस उद्देश्यमें सहायता कर सकते हैं। मुझे आशा है कि यह सभा अपने इस कर्तव्यका पालन करेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-६-१९०९

१६०. प्रस्ताव : सार्वजनिक सभामें[1]

[जोहानिसबर्ग
जून १६, १९०९]

[प्रस्ताव १ :] इस प्रस्तावके द्वारा ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सभा ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघकी समिति द्वारा की गई सर्वश्री अ० मु० काछलिया, हाजी हबीब, वी० ए० चेट्टियार और मो० क० गांधीकी उस शिष्टमण्डल [के सदस्यों] के रूपमें नियुक्तिको पुष्ट करती है, जो इंग्लैंड जायेगा और अधिकारियों और ब्रिटिश जनताके सम्मुख एशियाइयोंके वर्तमान संघर्षके सम्बन्धमें सच्ची स्थिति तथा दक्षिण आफ्रिकाके भावी संघके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीयोंका दृष्टिकोण पेश करेगा।

[प्रस्ताव २ :] ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सभा इस प्रस्तावके द्वारा सर्वश्री एन० ए० कामा, एन० गोपाल नायडू, ई० एस० कुवाड़िया और एच० एस० एल० पोलकको भारत जाने और अधिकारियों तथा भारतीय जनताके सम्मुख ट्रान्सवालके वर्तमान एशियाई संघर्षके सम्बन्धमें सच्ची स्थिति प्रस्तुत करनेके लिए शिष्टमण्डलका सदस्य निर्वाचित करती है।

[प्रस्ताव ३ :] सरकार अच्छी तरह जानती थी कि सर्वश्री काछलिया, कुवाड़िया, कामा और चेट्टियार पूर्व प्रस्तावोंमें बताये गये शिष्टमण्डलके प्रतिनिधि चुने गये हैं या चुने जानेवाले हैं। यह सभा उनकी आकस्मिक और अवांछनीय गिरफ्तारीका सादर विरोध करती है और सरकारसे अनुरोध करती है लौट आनेपर वह उनको अदालत द्वारा दी गई सजाको भुगतनेकी शर्तपर उचित जमानत लेकर छोड़ दे, जिससे वे अपना काम पूरा कर आयें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-६-१९०९

१. ये प्रस्ताव हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके अध्यक्ष इमाम अब्दुल कादिर बावजीरने पेश किये और श्री दिलदार खाँने इनका समर्थन किया। अनुमान है, प्रस्तावोंका मसविदा गांधीजीने तैयार किया। इनपर मत लिये गये और ये स्वीकृत हो गये। उनका विरोध छः व्यक्तियोंने किया। उनकी मुख्य आपत्ति यह थी कि शिष्टमण्डल समाजके उस बड़े भागका प्रतिनिधित्व नहीं करता जो सत्याग्रही नहीं है; और इसमें पोलकको, जो यूरोपीय हैं, शामिल नहीं किया जाना चाहिए।

१६१. पत्र: 'स्टार' को[1]

जोहानिसबर्ग
जून १८, १९०९

सेवामें
सम्पादक
'स्टार'
जोहानिसबर्ग
महोदय,

भले ही आपके विचार पत्रलेखकोंके विचारोंसे न मिलते हों, आपने हमेशा ही अपने समाचारपत्रके स्तम्भोंमें सार्वजनिक प्रश्नोंकी चर्चाके लिए स्थान देनेकी उदारता दिखाई है। मैं जानता हूँ कि ऐसी ही उदारता आप एशियाई संघर्षमें लगे हुए व्यक्तियोंके प्रति तबतक दिखाते रहेंगे, जबतक, समय आनेपर, संघर्ष खतम न हो जाये। परन्तु मुझे भरोसा है कि आप इस संघर्षके नये दौरपर अपनी राय देनेकी कृपा करेंगे।

गत बुधवारको ब्रिटिश भारतीयोंकी आम सभाके[2] सभापतिने माननीय उपनिवेश-सचिवको उस सभामें पास किये गये प्रस्तावोंका सार तार द्वारा भेजा और उनसे प्रार्थना की कि जो लोग इंग्लैंड और भारत जानेवाले शिष्टमण्डलोंके प्रतिनिधि चुने जा चुके हैं, उनको दी गई सजाएँ और उनके मुलतवी मुकदमे रोक दिये जायें। उपनिवेश-सचिवने यह उत्तर दिया है:

> आपके आज सुबहके तारके सम्बन्धमें उपनिवेश-सचिवने मुझे आपको यह सूचित करनेके लिए कहा है कि जब उन लोगोंको, जिनके नामोंका आपके तारमें जिक्र है, कानूनकी पंजीयन-सम्बन्धी धाराओंकी अवज्ञाके कारण, गिरफ्तार करनेका निर्देश दिया गया तब यह मालूम ही न था कि उनके शिष्टमण्डलके सदस्य चुने जानेकी सम्भावना है। हालांकि उपनिवेश-सचिवकी बहुत इच्छा है कि शिष्टमण्डलके सदस्योंकी आजादीमें किसी प्रकारका दखल न दिया जाये, फिर भी उन्हें खेद है कि वे आपकी प्रार्थनाको मानने और कानूनी कार्रवाईमें दखल देनेमें असमर्थ हैं।

जनताको इस बातका पता नहीं है कि सरकारने उपनिवेशमें जासूस फैला रखे हैं, जो इस संघर्षमें सक्रिय भाग लेनेवाले व्यक्तियोंकी गतिविधियोंपर निगाह रखते हैं। उन्होंने सरकारके पास ब्रिटिश भारतीयोंकी हरएक सभाका, चाहे वह सार्वजनिक हो या असार्वजनिक, विवरण भेजा है। जिन सदस्योंका चुनाव गत बुधवारको किया गया था उनके नाम सरकारके पास कुछ अर्सेसे मौजूद हैं। शिष्टमण्डलके सदस्योंके नाम समितिकी एक बैठकमें गत रविवारको अन्तिम रूपसे तय किये गये थे। इस बैठकमें लगभग तीन सौ भारतीय आये थे। अखबारोंको नाम तय किये जानेका पता चल गया था और सोमवारको संघके

१. यह २६-६-१९०९ के इंडियन ओपिनियनमें "प्रतिनिधियोंकी कैद, सरकारका उनकी रिहाईसे इनकार" शीर्षकसे प्रकाशित किया गया था।

२. देखिए "भाषण: सार्वजनिक सभामें", २५२-५४ और पिछला शीर्षक भी।

(एसोसिएशनके) दफ्तरमें पूछताछ की गई थी। ये नाम मंगलवारको स्थानीय अखबारोंमें प्रकाशित किये गये। चार प्रतिनिधि सर्वश्री काछलिया, कुवाड़िया, कामा और चेट्टियार बुधको गिरफ्तार करलिये गये। इसलिए यह विश्वास करना असम्भव है कि सरकारको इनके चुने जानेका पता नहीं था। उपनिवेश-सचिवके तारका पाठ इन दिये हुए तथ्योंके प्रकाशमें बिल्कुल स्पष्ट है। जब वे यह कहते हैं कि "यह बिल्कुल मालूम न था कि उनके शिष्टमण्डलके सदस्य चुने जानेकी सम्भावना है", तब उनका आशय केवल यही है कि उनको सार्वजनिक सभामें मंजूर नहीं किया गया था और वे नहीं जानते थे कि सभा ऊपर बताई गई समितिकी नामजदगियोंको मंजूर करेगी या नहीं। किसीका यह मानना ठीक ही होगा कि यह बात सरकार नहीं जानती थी कि ये नाम सार्वजनिक सभामें पेश किये जायेंगे। यह खयाल करना भी ठीक ही होगा कि तीन सौ भारतीयों द्वारा की गई नामजदगी सार्वजनिक सभामें नामंजूर कर दी जानेकी सम्भावना नहीं थी। सरकारने सार्वजनिक सभाका निर्णय होनेतक कार्रवाई क्यों नहीं रोकी या प्रतीक्षा क्यों नहीं की? हर भारतीयका विश्वास है कि लन्दनमें दक्षिण आफ्रिकी अधिनियमके मसविदेपर विचारके समय कोई भारतीय शिष्टमण्डल न होना चाहिए, यह सरकारका इरादा था; वह ब्रिटिश भारतीयोंमें आतंक पैदा करके सार्वजनिक सभाको बिल्कुल असफल करना चाहती थी। उसने शिष्टमण्डलके शेष सदस्योंको केवल इसलिए स्वतन्त्र छोड़ दिया था कि वह खुद अपनी कार्रवाईसे डर गई थी। उसने सातमें से चार भारतीय प्रतिनिधियोंको ही गिरफ्तार नहीं किया है, बल्कि कुछ अच्छे कार्यकर्ताओं और भारतीय समाजके दृढ़निश्चयी लोगोंको भी गिरफ्तार कर लिया है। ये कुल मिलाकर सत्रह होते हैं। इनमें से कुछ उपनिवेशकी जेलोंमें चारसे ज्यादा बार जा चुके हैं। ये लोग विवाहित हैं और अपने पीछे रोते हुए स्त्री-बच्चे छोड़ गये हैं। प्रतिनिधियोंकी सजाओंको या मुकदमोंको मुल्तवी करनेसे इनकार करना उतना ही हृदयहीन कार्य है जितनी ये कार्रवाइयाँ, जो बिल्कुल आकस्मिक हैं और न्याय और शिष्टताके सामान्य नियम भंग करके की गई हैं।

मेरे देशवासियोंका खयाल है कि सर जॉर्ज फेरार, सर पर्सी फिट्ज़पैट्रिक और प्रगतिवादी दलके अन्य सदस्य इस बर्बरतापूर्ण कार्रवाईके लिए उतने ही उत्तरदायी हैं जितने जनरल बोथा और जनरल स्मट्स। किन्तु वे निर्वाचकोंके नामपर कार्य करते हैं। मैं उनसे और पत्र-प्रतिनिधि एवं निर्वाचकके रूपमें आपसे भी पूछता हूँ। आपको एक व्यापक अधिकारयुक्त संविधान प्राप्त होनेवाला है। क्या आप जल्दी ही मिलनेवाली सत्ताका उपयोग अपने सहप्रजाजनोंपर, जिनकी चमड़ी संयोगसे गेहुँआ है, अत्याचार करनेमें करेंगे? इस मामलेकी अच्छाई-बुराईके सवालको छोड़िए किन्तु क्या जनताका सरकारसे, उचित जमानत लेकर भारतीय लोगोंके निर्वाचित नेताओंकी रिहाईकी माँग करना बेजा है?

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

स्टार, १९-६-१९०९

१६२. शिष्टमण्डल

ट्रान्सवालके भारतीयों द्वारा शिष्टमण्डल भेजनेका निर्णय एक वहुत महत्त्वपूर्ण कदम है। इसकी विशेषता यह है कि उक्त शिष्टमण्डल सत्याग्रहियोंका होगा। यह बात मामूली तौरपर कुछ अजीव-सी लगती है कि कानून तोड़नेवाले लोग न्याय पानेके लिए विलायत जायें। इसलिए इसको लेकर मतभेद हो तो बात समझमें आ सकती है।

इस शिष्टमण्डलका समर्थन सत्याग्रहके सिद्धान्तके अनुसार नहीं किया जा सकता। सत्याग्रहीको तो केवल कष्ट-सहन करना है। उसका अवलम्ब केवल खुदा है। उसकी विजय तो सत्याग्रहमें ही निहित है। किन्तु सभी सत्याग्रही एक-से उत्साहवाले अथवा समान विश्वासवाले नहीं हैं। फिर अनेक भारतीय सत्याग्रह नहीं कर सके; तथापि वे सत्याग्रहियोंके साथ हैं। उनकी इच्छा है कि संघर्ष शीघ्र ही समाप्त हो जाये। जबतक श्री दाउद मुहम्मद, श्री रुस्तमजी आदि जेलमें पड़े हैं तबतक उन्हें चैन नहीं मिल सकता। जो सत्याग्रही जेलसे छूटकर आ गये हैं उनको भी कुछ करना जरूरी है। सरकार उन्हें फिर तुरन्त ही तो गिरफ्तार नहीं करती। इसलिए वे क्या करें? इन सब बातोंको देखते हुए शिष्टमण्डल भेजनेका इरादा ठीक जान पड़ता है।

दोनों[1] देशोंमें शिष्टमण्डल भेजनेसे लाभकी ही सम्भावना है। इंग्लैंड और भारत दोनों ही देशोंमें लोग हमारे संघर्षको पूरी तरह नहीं समझते। इसलिए यदि दोनों देशोंके सामने संघर्षका वास्तविक स्वरूप रखा जा सके तो इसमें सन्देह नहीं कि वह भी बहुत है। इससे दोनों जगहोंसे अधिक सहायता मिलेगी और उस हद तक संघर्षका जल्दी समाप्त हो जाना सम्भव होगा।

इसके सिवा, यह संघर्ष एक आदर्शके रूपमें पेश किया जाता है; इसलिए भारतके लोगोंको इसकी पूरी जानकारी देना हमारा कर्तव्य है। इस दृष्टिसे भी शिष्टमण्डल भेजनेका विचार ठीक माना जायेगा।

भारत जानेवाला शिष्टमण्डल विलायत जानेवाले शिष्टमण्डलके लिए बहुत सहायक होगा। उसके कारण लॉर्ड क्रू को भी सोचना पड़ेगा, और लॉर्ड मॉर्लेको अपने कर्तव्यका ध्यान आयेगा।

हमारा खयाल है, शिष्टमण्डलमें प्रतिनिधियोंका चुनाव बहुत ठीक हुआ है। श्री हाजी हबीबने सत्याग्रह करनेका वचन दिया, यह बड़ी बात है। उनके पीछे हटनेसे कुछ भारतीय ढीले पड़ गये थे। उन्होंने फिर जोर लगानेका निश्चय किया है; इससे अन्य भारतीयोंमें भी शक्ति आनेकी सम्भावना है। ऐसा हो अथवा न हो, लेकिन श्री हाजी हबीबने अनेक वर्षों तक समाजकी सेवा की है, इसलिए उनके पीछे हटनेका बहुत-से भारतीयोंको बड़ा दुःख था। अब श्री हाजी हबीब फिर पूरे जोरमें आ गये हैं, इससे कौमको सन्तोष हुआ है। हम ईश्वरसे प्रार्थना करते हैं कि श्री हाजी हबीबमें अन्ततक निभा ले जानेकी शक्ति आये, और यदि जेल जानेका मौका आये तो वे उमंगके साथ जेल जायें। श्री काछलिया शिष्टमण्डलमें हैं, इस

१. इंग्लैंड और भारत।

विषयमें तो कुछ कहना ही नहीं है। यह समाजके लिए गौरवकी बात है कि दोनों शिष्ट-मण्डलोंमें तमिल सदस्य हैं। तमिल भाइयोंने इतना अच्छा काम किया है कि उनके बिना शिष्टमण्डल जा ही नहीं सकता।

श्री कामाकी कीमती सेवाओंसे समाज अनजान नहीं है। भारतमें उन्हें बहुत काम करना है। इसमें सन्देह नहीं कि वे बहुत अच्छा काम कर सकेंगे। समाजने श्री पोलकको भारत भेजनेका विचार किया, यह उसके लिए गौरवकी बात है। अभीतक समाज श्री पोलककी सेवाओंको काफी समझ नहीं सका। वे समय आनेपर समझमें आयेंगी। श्री पोलकको भारत भेजनेसे वहाँके लोगोंकी आँखें कुछ हद तक खुलेंगी। फिर उन्हें भेजकर हम स्पष्ट रूपसे यह सिद्ध कर देते हैं कि गोरे और काले मिलकर काम कर सकते हैं; और भारत फिलहाल गोरोंकी सहायता प्राप्त करके काफी आगे बढ़ सकता है। उस सहायताका लाभ किस तरह उठायें, यह जानना जरूरी है।

इस प्रकार शिष्टमण्डलके विषयमें विवेचन करनेके बाद समाजको यह बताना भी हमारा फर्ज है कि वह शिष्टमण्डलपर बहुत अधिक निर्भर न करे। सच्ची आशा तो निर्मल सत्याग्रहमें ही रखनी है। शिष्टमण्डल जानेसे सत्याग्रह बन्द नहीं होता। उसे तो जारी ही रखना चाहिए। हम आशा करते हैं कि शिष्टमण्डलके वहाँ पहुँचनेतक बहुत-से भारतीय कैदखानेमें जा पहुँचेंगे। शिष्टमण्डलका काम कठिन है। वह खाली हाथ लौटे तो हमें यही मानकर सन्तोष करना पड़ेगा कि इतना प्रयत्न करना उचित था, इसलिए हमने वह कर लिया।

शिष्टमण्डलके वहाँ रहते समाज़ अपना कर्तव्य निभायेगा, तभी शिष्टमण्डलको पर्याप्त बल मिल सकेगा। दक्षिण आफ्रिकाके हर स्थानपर उसके समर्थनमें सभाएँ होनी चाहिए। उनमें पास किये गये प्रस्ताव बालाबाला लॉर्ड क्रूको भेजने चाहिए।

इस लेखके लिखे जा चुकनेके बाद सरकारने कुछ प्रमुख भारतीय नेताओंको गिरफ्तार कर लिया है। उनमें शिष्टमण्डलके सदस्य भी हैं। अतएव, सम्भावना यह है कि संघर्षको फिर यहीं पूरे उत्साहसे चलाना होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–६–१९०९

१६३. पत्र : ट्रान्सवालके भारतीयोंको

[जोहानिसबर्ग
जून २१, १९०९ के पूर्व][1]

ट्रान्सवालके समस्त भारतीयोंकी सेवामें,

जो शिष्टमण्डल इंग्लैंड जा रहा है, उसमें मैं भी जा रहा हूँ। चारमें से दो प्रतिनिधि तो गिरफ्तार हो गये हैं और जेलमें जा बैठे हैं। दूसरे भारतीय भी, जो बहुत बार चोट खा चुके हैं, फिर पकड़ लिये गये हैं। ऐसे समयमें मुझे इंग्लैंड जाना तनिक भी अच्छा नहीं लगता। फिर भी, हमारे सभी यूरोपीय मित्रोंकी राय है कि मुझे इंग्लैंड जाना चाहिए; भारतीय समाज यही चाहता है और हमारी इंग्लैंडकी समितिकी राय भी ऐसी ही है। इसलिए मैं श्री हाजी हबीबके साथ जा रहा हूँ। किन्तु हमने जो माँगें की हैं और जिनके मंजूर न होनेसे सैकड़ों भारतीय जेल जा चुके हैं, वे इंग्लैंड जानेसे पूरी होंगी, यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता। यह भी सम्भव है कि लॉर्ड क्रू शिष्टमण्डलसे मिलनेसे इनकार कर दें और कहें कि जो लोग कानूनके विरुद्ध हैं, उनसे वे नहीं मिल सकते। शिष्टमण्डल भेजनेवाले लोगोंको यह समझ लेना चाहिए कि दक्षिण आफ्रिकाके सब अधिकारी इंग्लैंडमें इकट्ठे होंगे। ऐसे समयमें शिष्टमण्डल भेजकर हम केवल आजमाइश कर रहे हैं, ताकि पीछे पछतावा न रहे। शिष्टमण्डलके ऊपर निर्भर रहना व्यर्थ है।

अक्सीर दवा तो केवल जेल जाना ही है। थोड़े-से भारतीय भी समय-समयपर जेल जाते रहेंगे तो अन्तमें हम जो माँग रहे हैं, वह अवश्य मिलेगा। ऐसा एक भारतीय भी यदि अन्ततक लड़ता रहा तो भी मिलेगा।

यह लड़ाई सच और झूठकी है। सच भारतीय समाजके पक्षमें है, इसलिए उसकी जय[2] होनी ही चाहिए। शिष्टमण्डलको मदद देना प्रत्येक भारतीयका कर्तव्य है। भारतीय समाजमें फूट डालनेवाले लोग मौजूद हैं। सरकारके पास भारतीय गुप्तचर हैं। उनके जरिये भारतीय समाजको गलत रास्तेपर ले जानेके उपाय किये ही जाते रहते हैं। शिष्टमण्डल इंग्लैंडमें होगा तब और भी प्रयत्न किये जायेंगे। इन सबका मुकाबला करना प्रत्येक भारतीयका कर्तव्य है। जो जेलके कष्ट सहन नहीं कर सकते उनको चुपचाप घर बैठना चाहिए। कोई व्यक्ति किसी भी कागजपर दस्तखत करानेके लिए आये तो यह जरूरी है कि अच्छी तरह पूछताछ किये बिना दस्तखत कतई न किये जायें।

शिष्टमण्डलकी मदद करनेके लिए स्थान-स्थानपर सभाएँ करना जरूरी है। ये सभाएँ केवल ट्रान्सवालमें ही नहीं, बल्कि पूरे दक्षिण आफ्रिकामें की जानी चाहिए। यह भी याद रखना चाहिए कि यह शिष्टमण्डल सत्याग्रहियोंकी खातिर नहीं जा रहा है। सत्याग्रहियोंका विश्वास तो केवल सत्यपर है। वे सत्यका आचरण करें, यही उनकी जीत है। किन्तु जो

१. स्पष्ट है, यह और इससे अगलेके तीन शीर्षक २१ जूनसे पूर्व लिखे गये थे, क्योंकि गांधीजी इस तारीखको हाजी हबीबके साथ केपके रास्ते इंग्लैंडको रवाना हो गये थे।

२. मूलमें 'जय'के स्थानपर 'जन्म' छप गया है।

इसपर अन्ततक नहीं टिक सके हैं उनकी भावनाका खयाल करके और, हो सके तो, सत्याग्रहियोंके ऊपर पड़ा हुआ बोझ हलका करनेके लिए यह शिष्टमण्डल जा रहा है। इसलिए सत्याग्रहियोंको तो शिष्टमण्डलकी ओर तनिक भी नजर नहीं रखनी है। जब उनके सत्यका जोर ट्रान्सवालकी सरकारके असत्यके मुकाबले ज्यादा हो जायेगा तब सत्याग्रहियोंकी तकलीफें अपने-आप दूर हो जायेंगी। इस बातको ध्यानमें रखकर सत्याग्रहियोंको जेल जानेके मौकेकी ताकमें रहना चाहिए।

मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, २६–६–१९०९

१६४. स्वर्गीय श्रीमती गुलबाई

[जून २१, १९०९ के पूर्व]

भारतसे आई ताजी डाकसे यह दुःखद समाचार मिला है कि भारतके वयोवृद्ध दादाभाई नौरोजीकी धर्मपत्नी श्रीमती गुलबाईका अस्सी वर्षकी अवस्थामें वरसोवामें देहावसान हो गया। माननीय दादाभाईने अपने सारे जीवनकी सहयोगिनी और सखीको खो दिया है; इसपर संसारके प्रत्येक भागमें बसे भारतीयोंको उनसे सहानुभूति हुए बगैर न रहेगी। हम स्वर्गीय आत्माकी शान्तिकी कामना करते हैं, और ईश्वरसे प्रार्थना करते हैं कि वह करोड़ों भारतीयोंके सच्चे दादा माने जानेवाले दादाभाईको वृद्धावस्थामें यह नया दुःख सहनेकी शक्ति और धैर्य दे।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, २६–६–१९०९

१६५. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

[जून २१, १९०९ के पूर्व]

ब्रिटिश भारतीय समझौता-समिति[1]

इस समितिका शिष्टमण्डल जनरल स्मट्ससे शनिवारको दोपहरके बारह बजे मिला। उसमें श्री अब्दुल गनी, श्री हाजी वजीर अली, श्री हबीब मोटन, श्री एस० बी० टॉमस, श्री अली खमीसा, श्री जूसब इब्राहीम गार्दी और श्री जॉर्ज गॉडफ्रे थे। जनरल स्मट्सने समितिको लगभग आधा घंटा दिया। समितिने जो माँगें कीं उनमें से कुछ नीचे लिखे अनुसार थीं :

काला कानून रद किया जाये, शिक्षित [भारतीयों] को उपनिवेशमें प्रवेशका अधिकार गोरोंके बराबर ही दिया जाये, [पेढ़ीमें] कई साझेदार हों तो परवाना (लाइसेंस)

१. ब्रिटिश इंडियन कन्सिलियेशन कमिटी।

करा सकते थे। दूसरे लोगोंका पंजीयन करना या न करना तो केवल पंजीयकके अख्तियारकी बात थी। नये कानूनके अनुसार तीन वरसके निवासियोंका अधिकार बढ़ा है। यह अलग सवाल है कि तीनके बजाय दो वरसकी अवधि क्यों न रखी गई अथवा अवधि रखी ही क्यों गई। यह सवाल संघकी अर्जीमें उठाया गया था।[1] लेकिन याद रखनेकी बात यह है कि काले कानूनसे लड़ाईसे पहले ट्रान्सवालमें रहनेवाले भारतीयोंके अधिकार बिल्कुल मारे जाते थे। उसके बजाय नये कानूनमें तीन सालके निवासियोंको अधिकार प्राप्त हुए हैं। फिर भी जितने अधिकार मिलें उतने माँगना हमारा कर्तव्य है। किन्तु ये अधिकार तबतक नहीं मिलेंगे जबतक मूल माँग पूरी नहीं की जाती। दो माँगें मंजूर कर ली जायें तो बाकीको मंजूर कराना आसान बात है। इसके अतिरिक्त यह याद रखना चाहिए कि यदि काले कानूनके अन्तर्गत लड़ाईसे पहले रहनेवाले भारतीयोंको अधिकार प्राप्त थे तो वह कानून मौजूद है। उसकी रूसे ऐसे भारतीय क्यों नहीं आ सकते? वह कानून जबतक लागू है तबतक वैसा अधिकार, यदि उसमें हो तो, लड़कर भी लिया जा सकता है। किन्तु उस कानूनको पढ़नेवाला कोई भी आदमी देख सकता है कि वह अधिकार उसमें दिया ही नहीं गया है।

फुटकर अधिकार माँगनेवालोंको तो मेरी खास सलाह यह है कि तना कटेगा तो डालियाँ अपने-आप मुरझा जायेंगी, यह सोचकर वे तनेको काटनेका उद्योग करें।

धर-पकड़

मैं देखता हूँ कि भारतीय समाजका भाग्य उदित हो रहा है। शिष्टमण्डलके जानेके समय जेलें भर रही हैं, यह खुशीकी बात है। गुरुवार, ता० १७ को निम्नलिखित तमिल और गिरफ्तार किये गये हैं:

श्री एन० के० पीटर, रोम जॉन, मोजेज़ एन्थनी, डेविड एन्थनी, गैब्रिएल एन्थनी, पीटर एन्थनी, हैरी तमब्रम, एडवर्ड वरमले, एस० चेट्टी, छना, भीखा कसन, वीरड्डु, जे० एम० एस० कुक, राजा फ्रांसिस, के० सुबिया नायडू, पना पडियाची, पेरूमल नायडू, वी० कृष्णसामी नायडू, वी० मथुरासामी पडियाची, वी० एन० पीटर, सामीनाथन, सहाला पडियाची, वी० नायडू, पी० चेटी, एम० पी० पडियाची, वी० मुटिया नायडू, एन० गोपाल, आर० के० पडियाची, एन० चेट्टी एस० चेट्टी, जी० पडियाची, एस० पी० नायडू और अपु चेट्टी।

इनमें श्री गोपाल भी आ जाते हैं। शुक्रवारको दूसरे इकतालीस लोग पकड़े गये; वे भी तमिल ही हैं। जब इक्कीस लोग गिरफ्तार किये गये तब बाकी तमिलोंने पुलिसको खबर दी कि वे भी तैयार हैं। अब प्रिटोरियाकी बस्तीमें शायद ही कोई तमिल रहा हो। इन सबके मुकदमे पेश होनेवाले थे, तभी उनको मुल्तवी करनेकी बात चलाई गई। उनको मुल्तवी करते हुए जब सरकारी वकीलने जमानत तय करनेकी माँग की तो न्यायाधीश मेजर डिक्सनने कहा कि सत्याग्रहियोंकी जमानत नहीं होती; क्योंकि सरकार तो चाहती ही है कि ये लोग भाग जायें। इससे प्रकट होता है कि जहाँ बहुत भारतीय गिरफ्तार होते हैं वहाँ सरकार खुद पस्तहिम्मत हो जाती है।

१. देखिए "प्रार्थनापत्र: उपनिवेश-मन्त्रीको", १७-१८।

सरकारका झूठ

बुधवारकी सार्वजनिक सभाके प्रस्तावके अनुसार अध्यक्षके नामसे सरकारको तार दिया गया[1] कि शिष्टमण्डलके गिरफ्तार किये गये सदस्योंको शिष्टमण्डलमें जाने देनेके उद्देश्यसे छोड़ देना चाहिए और भारतीय समाज यह जमानत देनेके लिए तैयार है कि वे वापस आ जायेंगे। जनरल स्मट्सने तुरन्त इस तारका जवाब भेजा कि जब इनकी गिरफ्तारीकी आज्ञा दी गई तब सरकारको यह मालूम नहीं था कि वे प्रतिनिधि चुने जायेंगे। यह बात बिलकुल झूठी है। सरकारको सत्याग्रहियोंकी हलचलों और भारतीयोंकी सभाओंकी पूरी जानकारी रहती है। सरकारका हेतु स्पष्ट ही यह है कि किसी तरह शिष्टमण्डलके सदस्य न जायें। श्री गांधीको गिरफ्तार नहीं किया, सो केवल भयके कारण; और श्री हाजी हबीबको नया सत्याग्रही समझकर गिरफ्तार नहीं किया।

किन्तु जब झूठा सच्चेको दुःख देने लगता है तब उसके हाथोंसे सच्चेका हित ही होता है। सभी कहते हैं कि शिष्टमण्डलके सदस्योंको गिरफ्तार करना जनरल स्मट्सकी बड़ी भूल है। भारतीय समाजने दूसरे सदस्य चुननेसे इनकार कर दिया है। इसलिए हमारी दृष्टिसे तो जिन लोगोंका चुनाव हुआ है, उनका जेल जाना शिष्टमण्डलमें जानेके बराबर ही है। [शिष्टमण्डलके सदस्योंके रूपमें] उनका स्थान खाली रहेगा; लेकिन उसकी पूर्ति किसी दूसरे भारतीयसे नहीं की जायेगी। मैं तो चाहता हूँ कि सरकार श्री गांधीको पकड़े तो बहुत अच्छा हो; उससे तुरन्त ही सरकारकी पोल खुल जायेगी।

जेल जानेवालोंकी मदद

जो तमिल पकड़े गये हैं उनमें से कितने ही लोगोंके बाल-बच्चोंके पास खानेको भी नहीं रहा। ऐसे लोगोंके लिए बन्दोबस्त किया गया है। इनका बोझा उठाना प्रिटोरियाके सेठोंका कर्तव्य है और मुझे आशा है कि उनका बोझा संघके ऊपर नहीं पड़ेगा। पिछली बार जेल गये हुए तमिलोंके बाल-बच्चोंका भरण-पोषण करनेमें बारह पौंडसे ज्यादा खर्च हुआ है। वह संघको देना पड़ा है। ऐसा खर्च होता ही रहता है। इसलिए यह जरूरी है कि जिनसे बन पड़े वे पैसेकी मदद जरूर दें।

इस सम्बन्धमें लिखते हुए मुझे याद आता है कि गरीब होते हुए भी रेवरेंड श्री हॉवर्डने संघको एक पौंड दिया है। पिछले सप्ताह एक भारतीय युवक संघके कार्यालयमें आकर तीन पौंड दे गया। उससे नाम पूछा गया तो उसने बहुत मुश्किलसे बताया, और सो भी इस शर्तपर कि उसका नाम जाहिर न किया जाये। इसलिए उस युवकका नाम नहीं दे रहा हूँ। यह उदाहरण अनुकरणीय है।

1. यह उपलब्ध नहीं है; किन्तु २५ जून १९०९ के इंडियाके अनुसार १६ जूनको जोहानिसबर्गसे रायटरके भेजे एक तारमें कहा गया था कि "श्री गांधीने स्मट्ससे भारत और इंग्लैंड जानेवाले शिष्टमण्डलोंके तीन सदस्योंको . . . वापस आनेपर अपनी सजा भुगतनेकी शर्तपर . . . रिहा करने की अपीलकी है। उपनिवेश-सचिवने उत्तर दिया है कि उनकी गिरफ्तारीके वक्त उन्हें उनके शिष्टमण्डलोंके सदस्य होनेकी जानकारी न थी, किन्तु वे कानूनमें हस्तक्षेप नहीं कर सकते और फलतः उन्होंने प्रार्थनापत्रको अस्वीकृत कर दिया।" देखिए "पत्र: 'स्टार' को", पृष्ठ २५५-५६ भी।

शेलतका मुकदमा

श्री शेलत गिरफ्तार हो गये, यह लिखा जा चुका है।[1] उनका मुकदमा मजिस्ट्रेटके निजी दफ्तरमें पेश किया गया था। पहले मजिस्ट्रेटने उनके वारंटमें कोरे पन्नेपर हस्ताक्षर किये; अर्थात् किस मार्गसे निर्वासित किया जाये, यह उसमें नहीं था। पीछे श्री गांधी न्यायाधीशके पास गये और उनको सूचित किया कि उन्हें वारंटमें कोरे पन्नेपर दस्तखत करनेका हक नहीं है। इसके बाद श्री शेलतको नेटालकी सीमापर छोड़नेकी आज्ञा दी गई। फिर उनको प्रिटोरिया ले जाया गया। वहाँ उनको श्री चैमनेने समझाया कि उन्हें पंजीयन प्रमाणपत्रकी (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेटकी) अर्जी देनी चाहिए। श्री शेलतने इससे साफ इनकार कर दिया और खूब हिम्मत दिखाई।

जेम्स गॉडफ्रे

मैं श्री जेम्स गॉडफ्रेको अनुमतिपत्र भेजा जानेकी बात ऊपर लिख चुका हूँ। मुझे दुःख है कि उन्होंने ऐसी जमी लड़ाईमें अर्जी देकर अनुमतिपत्र मँगाया और कानूनके अधीन होनेका इरादा किया। मैं आशा करता हूँ कि वे कानूनके अधीन नहीं होंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-६-१९०९

१६६. पत्र: हबीब मोटनको

[जोहानिसबर्ग
जून २१, १९०९ से पूर्व]

सेठश्री हबीब मोटन,

आपके १७ जूनके पत्रका[2] मेरा उत्तर निम्न प्रकार है:

मुस्लिम लीगकी माँग क्या थी, यह मुझे ठीक पता नहीं है, क्योंकि मैं तब जेलमें था और इस बीचकी घटनाओंपर मैंने अभी नजर नहीं डाली है। मैं वाइसरायकी परिषदमें किसी *मुसलमानको सम्मिलित करना उचित मानता हूँ। उस परिषदमें मुसलमान सदस्यकी नियुक्तिकी* आज्ञा लॉर्ड मॉर्लेने दी है तो मैं उसको वाजिब समझता हूँ। मैं हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच फर्क नहीं मानता। मेरी दृष्टिमें दोनों एक भारतमाताकी सन्तानें हैं। मेरा अपना विचार तो यह है कि हिन्दुओंका संख्या-बल अपेक्षाकृत बहुत ज्यादा है। हिन्दू खुद मानते हैं कि उनमें विद्या-बल भी ज्यादा है। इस दृष्टिसे हिन्दुओंको अपने मुसलमान भाइयोंको जैसे भी हो वैसे ज्यादा देकर प्रसन्न होना चाहिए। सत्याग्रहीके रूपमें मैं तो खास तौरसे मानता हूँ कि जो

१. देखिए "नायडू और अन्य लोगोंका मुकदमा", पृष्ठ २५१।

२. हबीब मोटनने अपने पत्रमें गांधीजीसे मोटे तौरपर ये सवाल पूछे थे: मुस्लिम लीगके शिष्टमण्डलने लन्दनमें लॉर्ड मॉर्लेसे मिलकर हकोंकी जो माँग की है, वह वाजिब है या नहीं; वायसरायकी कौंसिलमें एक मुसलमान सदस्य लिये जानेका अनुरोध उचित है या नहीं; लॉर्ड मॉर्ले द्वारा उस अनुरोधकी स्वीकृतिके बारेमें उनका (गांधीजीका) क्या खयाल है; और हिन्दू-मुस्लिम एकता कैसे स्थापित हो सकती है।

चीज मुसलमान माँगें, हिन्दुओंको चाहिए कि वे उन्हें ले लेने दें और खुद जो त्याग करना पड़े, उससे सन्तुष्ट रहें। आपसमें ऐसी उदारता दिखाई जाये, तभी एकता होगी। जो सिद्धान्त दो सगे भाइयोंके बीच लागू होता है, उसी सिद्धान्तके अनुसार हिन्दू और मुसलमान व्यवहार करें तो दोनोंमें हमेशा एकता रहेगी और तभी भारतकी उन्नति होगी।

मोहनदास करमचन्द गांधी

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-६-१९०९

१६७. पत्र : मणिलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
जून २१, १९०९

चि० मणिलाल,

आज मुझे तुमको गुजरातीमें पत्र लिखनेकी फुर्सत नहीं है। मैं दादा उस्मानका हिसाब भेज रहा हूँ। तुम इसे पढ़ना और अपना उत्तर भेज देना। इसे वा को भी दिखा देना। यह याद रखना कि ईस्ट इंडिया ट्रेडिंग कम्पनीसे जो भी चीजें लेते हो उससे कर्ज बढ़ता है। तुम अपना जवाब सीधे मेरे पतेपर इंग्लैंड न भेजना, बल्कि कुमारी श्लेसिनको[1] भेजना। अगर मैं आज रवाना हो गया तो वे मेरे पास भेज देंगी। पुरुषोत्तमदासके सम्बन्धमें — मुझे आशा है, तुम उनकी आज्ञा चुपचाप मानोगे, और अपने दिमागसे यह खयाल निकाल दोगे कि तुम वहाँ नहीं पढ़ सकते। तुम्हें शक्ति-भर प्रयत्न करना चाहिए।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ८३) से।
सौजन्य : सुशीलाबेन गांधी।

१. सोंजा श्लेसिन प्रारम्भमें गांधीजीकी स्टेनो-टाइपिस्ट थीं, लेकिन आगे चलकर उन्होंने सत्याग्रह-संघर्षमें बड़ा महत्त्वपूर्ण भाग लिया; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ २४-२५।

१६८. पत्र: डी० ई० वाछाको[1]

जून २३, १९०९

प्रिय श्री वाछा,[2]

पत्रवाहक श्री छ० खु० गांधी मेरे भतीजे हैं। इन्होंने अपनेको सार्वजनिक कार्योंमें अर्पित कर दिया है। आपसे अनुरोध है कि इनकी सहायता करें और इन्हें फीरोजशाह[3] तथा अन्य नेताओंसे मिला दें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ४९५०) से।
सौजन्य : छगनलाल गांधी

१६९. भेंट: 'केप टाइम्स' को[4]

[केप टाउन
जून २३, १९०९]

[गांधीजी :] हम इंग्लैंड खास तौरसे ट्रान्सवालमें चल रहे एशियाई संघर्षके सम्बन्धमें जा रहे हैं। हम इसे साम्राज्य-सरकार और ब्रिटिश जनताके सम्मुख सारी स्थिति रखनेका अत्यन्त उपयुक्त अवसर मानते हैं। हम यह भी अनुभव करते हैं कि यह मामला वास्तवमें ऐसा है, जिसमें आपसी व्यक्तिगत बातचीतसे बहुत-कुछ हो सकता है।

१. श्री छगनलाल गांधीने इस परिचय-पत्रका उपयोग नहीं किया।

२. दिनशा एदुलजी वाछा; १९०१ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष; देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४२१।

३. सर फीरोजशाह मेहता; भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके संस्थापकोंमेंसे एक; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९५।

४. केप टाउनके भारतीयोंने गांधीजी और हाजी हबीबके शिष्टमण्डलके रूपमें इंग्लैंडको प्रस्थान करनेसे पूर्व केनिलवर्थ कैसिल जहाजमें उनका स्वागत किया गया था। गांधीजीसे केप टाइम्स और केप आर्गसके प्रतिनिधियोंने भेंट की थी। ये भेंटें जो बादमें ३-७-१९०९ के इंडियन ओपिनियनमें छापी गईं तत्त्वतः एक-सी थीं। किन्तु केप आर्गसमें छपे विवरणके शुरूमें यह अनुच्छेद था: "रवानगीसे ठीक पहले आर्गसके प्रतिनिधिके भेंट करनेपर श्री गांधीने संकेत दिया कि उन्हें ट्रान्सवाल-अधिकारियों द्वारा गिरफ्तार किये जानेकी बहुत-कुछ आशंका थी; किन्तु उनके मार्गमें कोई रुकावट नहीं डाली गई। उन्होंने यह भी कहा कि मैं और मेरे साथी प्रतिनिधि श्री हाजी हबीब लन्दनमें दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिकी सलाहसे काम करेंगे। हम इतना ही चाहते हैं कि हमें हमारे अधिकारोंकी सुरक्षाका आश्वासन दे दिया जाये। मुझे अपने कार्यमें सफलता मिलनेकी पूरी आशा है।"

[संवाददाता :] वतनी और रंगदार शिष्टमण्डल भी इंग्लैंड जा रहे हैं; क्या आप किसी रूपमें उनके साथ मिल-जुलकर भी काम करेंगे?

[गांधीजी :] यह सब अवसरपर निर्भर है और इस सम्बन्धमें लन्दनमें हम स्वभावतः बहुत हद तक लॉर्ड एम्टहिलकी[1] समितिसे सलाह लेंगे।

'संघ अधिनियम (यूनियन ऐक्ट) के विरुद्ध आपकी मुख्य आपत्ति क्या है?

अगर दक्षिण आफ्रिकाके अधिवासी ब्रिटिश भारतीय प्रजाजनोंको पूर्ण स्वतन्त्रता सुनिश्चित कर दी जाती है तो व्यक्तिशः मुझे संविधानमें कोई दोष दिखाई नहीं देता। मेरी राय यह है कि संघको केवल गोरे ब्रिटिश प्रजाजनोंका संघ नहीं होना चाहिए, बल्कि यहाँके सभी अधिवासी ब्रिटिश प्रजाजनोंका संघ होना चाहिए। ब्रिटिश भारतीयोंको बहुत भय है कि संविधानके अन्तर्गत यह संघ ब्रिटिश भारतीयों और रंगदार प्रजातियोंके विरुद्ध गोरी प्रजातियोंका संघ होगा[2] और यदि ऐसा हुआ तो मेरा खयाल है कि यह हर तरहसे बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण बात होगी। ऐसे किसी साम्राज्यीय संकटके विरुद्ध रक्षाका उपाय करनेमें कोई कसर न रखना ब्रिटिश भारतीय शिष्टमण्डलका कर्तव्य होगा।

ट्रान्सवालके मताधिकार प्रतिबन्धके सम्बन्धमें आपके क्या विचार हैं?

मैं तो मताधिकारके मामलेपर ज्यादा जोर नहीं देता। बात यह है कि आज ऐसी स्थिति उत्पन्न हो रही है जो निःसन्देह आफ्रिकाकी रंगदार प्रजातियोंके विरुद्ध है; मैं उसीके बारेमें सोच रहा हूँ। इस सम्बन्धमें जो-कुछ कहा- गया है, मैंने उस सबका अध्ययन किया है; मैंने संसदीय वाद-विवादोंपर भी विचार किया है। इन सबसे निःसन्देह यह प्रकट होता है कि अगर साम्राज्य सरकारने इन मामलोंके सम्बन्धमें सब तरहसे आश्वासन प्राप्त न किया तो शायद संघकी रंगदार जातियाँ, मुख्यतः एशियाई जातियाँ, बर्बाद हो जायेंगी।

संघके अन्तर्गत उनकी अवस्था किस तरह खराब होगी?

यह बात बिलकुल साफ है कि संघ-संसदकी आवाज समस्त दक्षिण आफ्रिकाकी आवाज होगी और साम्राज्य-सरकार संघ-संसद द्वारा स्वीकृत किसी भी कानूनपर आपत्ति करनेमें

१. आर्थर ऑलिवर विलियर्स रसेल, एम्टहिलके सेकेंड बैरन (१८६९-१९३६); मद्रासके गवर्नर, १८९९-१९०६; सन् १९०४ में भारतके कार्यवाहक वाइसराय और गवर्नर जनरल; दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय संघर्षमें सक्रिय रूपसे भाग लेते थे और दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके अध्यक्ष भी थे। उन्होंने डोक-कृत गांधीजीकी जीवनी की प्रस्तावना लिखी थी।

२. भेंटके इस मुद्देका उल्लेख करते हुए ३-७-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**की एक सम्पादकीय टिप्पणीमें कहा गया था: "संघ संविधानके मसविदेमें जातीय प्रतिबन्ध मौजूद है। भारतीयोंके आवागमनसे सम्बन्धित वर्तमान कानून ज्योंका-त्यों कायम रखा गया है और वह उसी रूपमें तबतक रहेगा जबतक संघ-संसद उसमें दखल देकर कोई परिवर्तन — चाहे वह अच्छेके लिए हो या बुरेके लिए — करना नहीं चाहे। रुझान किस ओर होगा, इस सम्बन्धमें हमें कोई सन्देह नहीं है। दक्षिण आफ्रिकामें पिछले दस वर्षोंकी चेतावनी व्यर्थ नहीं गई है। संघमें केपके अपेक्षाकृत उदारमना सदस्य ट्रान्सवाल, ऑरेंजिया और नेटालके भारतीय-विरोधी सदस्योंके बड़े दलसे दब जायेंगे। निःसन्देह अस्वाभाविक जातीय पृथक्करणकी भावना वातावरणमें मौजूद है और भारतीयों द्वारा ज्यादातर दक्षिण आफ्रिकी सरकारोंके विरोधकी जड़में यह पक्का विश्वास है कि देर-सबेर अन्य एशियाइयोंके साथ-साथ ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध भी उस नीतिको अमलमें लाया जायेगा, जिसके अनुसार कुछ जातिके लोगोंका आवास पृथक बस्तियों या बाजारोंमें सीमित कर दिया जाता था।"

बहुत झिझकेगी। इस समय भी प्रत्येक उपनिवेश ब्रिटिश सरकारपर इतना अधिक दबाव डालता है कि ब्रिटिश सरकार रंगदार जातियोंको प्रभावित करनेवाले कानूनोंके सम्बन्धमें अपने निषेधाधिकारका प्रयोग बहुत कम करती है और जब वे कानून दक्षिण आफ्रिकाकी संघ-संसद द्वारा मंजूर होकर आयेंगे तब तो वह ऐसा करनेकी और भी कम इच्छा करेगी।

श्री गांधीने, जो लगभग तीन मास तक बाहर रहनेकी आशा करते हैं, ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी गिरफ्तारियोंका भी उल्लेख किया और कहा, यह आशा नहीं थी कि मुझे गिरफ्तार न करके सीमा पार करने दिया जायेगा; किन्तु मेरे रास्तेमें कोई रुकावट नहीं डाली गई। वे यहाँ जहाज छूटनेसे लगभग दो घंटे पहले डाकगाड़ीसे आये थे।

[अंग्रेजीसे]

केप टाइम्स, २४–६–१९०९

१७०. शिष्टमण्डलकी यात्रा — १

[जून २३, १९०९ के बाद]

तुलना

जब सन् १९०६ के अक्तूबरमें भारतीय समाजने इंग्लैंडको शिष्टमण्डल भेजा था, वह समय दूसरा था, इस शिष्टमण्डलकी यात्राका समय उससे भिन्न है।

१९०६ में भारतीय समाज जेल जानेके लिए प्रतिज्ञा-बद्ध था। किन्तु कोई निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता था कि यदि सरकारने सुनवाई नहीं की तो कौन जेल जायेगा। इस बार हम जेल जानेवाले सत्याग्रहियोंको जानते हैं। १९०६ में भारतीय समाज खुद नहीं जानता था कि उसमें कितनी ताकत है। अब तो उसकी इस ताकतको सारी दुनिया जान गई है।

फिर भी तुलनामें १९०६ के शिष्टमण्डलका काम आसान था। इस बार वह मुश्किल है। हमें मंजूर किये हुए कानूनको रद कराना है। १९०६ में ब्रिटिश सरकारका मत क्या है, यह हम नहीं जानते थे। इस बार सरकारने अपना मत बता दिया है। फिर भी शिष्टमण्डल निर्भय होकर जाता है, क्योंकि हमें अब इस बारेमें बहुत-कुछ बेफिक्री है कि इंग्लैंडमें क्या होगा। हमें अपनी लड़ाई सत्याग्रहकी परखी हुई तलवारसे लड़नी है।

तैयारी

शिष्टमण्डलकी तैयारी कुछ दिन पहलेसे जारी थी। मगर भारतीय समाज ऐसे मामलोंमें उलझा है कि शिष्टमण्डलके रवाना होनेके दिन तक यह निश्चित नहीं था कि शिष्टमण्डल जायेगा या नहीं। रुपया भी पूरा इकट्ठा नहीं हुआ था। जहाजके टिकट भी रवाना होनेके दिन (सोमवार २१ जूनको) प्रात: ग्यारह बजे खरीदे गये। फिर भी यह नहीं कहा जा सकता था कि शिष्टमण्डल निश्चित रूपसे जायेगा। शेष सदस्योंको गिरफ्तार करना सरकारके हाथकी बात

थी। और कुछ लोगोंका खयाल था कि गाड़ीमें सवार होते वक्त भी पकड़ा-पकड़ी होगी। फिर भी शिष्टमण्डल चल पड़ा। किन्तु वह लंगड़ा-लूला है। उसका एक पैर टूट गया है। श्री काछलिया और श्री चेट्टियार जो शिष्टमण्डलके दाहिने पैरके समान हैं, वे दोनों ही जेलमें हैं; हाजी हबीब तथा मैं यात्रामें हैं। यह हममें से किसीको भी अच्छा नहीं लगता। परन्तु मेरा खयाल है कि श्री काछलिया और श्री चेट्टियार जेलमें से जैसी पुकार करेंगे वैसी इंग्लैंडमें जाकर नहीं कर सकते थे। वे जेलमें जो सुख भोगेंगे वह हमको पहले दर्जेमें जहाजकी यात्रा करते हुए नहीं मिलना है। सत्याग्रहीको दूसरा खयाल भी नहीं आता। मेरे अनुभवसे तो यही सिद्ध होता है। किन्तु यह मैं विस्तारसे भविष्यमें बताऊँगा।

स्टेशनपर

पार्क स्टेशन भारतीयोंसे खचाखच भरा था। करीब पाँच सौ भारतीय रहे होंगे। श्री अस्वात और श्री नगदी भी, जो रुपया इकट्ठा करनेके लिए क्रूगर्सडॉर्प गये थे, स्टेशन आ गये थे। पुलिसने खास इन्तजाम किया था। कोई धक्का-मुक्की करते दिखाई नहीं दिया। बहुत-से भारतीय पीछेकी ओर खड़े कर दिये गये थे। अनेक लोग गजरे आदि लाये थे। यह तो दिखाई देता था कि सभीके चेहरोंपर शिष्टमण्डलकी यात्रा सफल होनेकी आशा झलकती थी। श्री कैलेनबैक, उनके साथी श्री केनेडी, श्री मैक्इनटायर, कुमारी ऑलिव डोक, कुमारी श्लेसिन और श्री पोलक भी स्टेशनपर मौजूद थे। वहाँसे ठीक ६–१५ पर गाड़ी रवाना हुई।

मार्गमें

जब हम वेरीनिगिंगमें पहुँचे तब, वहाँके सारेके-सारे भारतीय स्टेशनपर आये थे। कह सकते हैं, उन्होंने शिष्टमण्डलका स्वागत किया। वे टोकरी भरकर फल लाये थे, जो अबतक चल रहे हैं। हाफेजी देशी इत्रकी शीशी लाये थे।

वॉर्स्टर स्टेशनपर रॉबर्ट्सनसे बहुत-से भारतीय आये थे। वे भी फूल और फल लाये थे। रॉबर्ट्सनमें मुख्यतः तमिल लोगोंकी बस्ती है, इसलिए वॉर्स्टरमें अधिकांशतः तमिल भाई ही थे।

मार्गमें श्री हाजी हबीबकी दायीं आँखमें दर्द था। यह जोहानिसबर्गसे ही हो रहा था। आँख सुर्ख थी और उससे पानी बहुत बहता था। उसको गर्म पानीमें थोड़ा नमक डालकर धोया। उससे कुछ आराम रहा, किन्तु नहीं के बराबर। जहाजमें डॉक्टरको आँख दिखानी पड़ी है। यह विवरण लिखते समय भी दर्द बिल्कुल नहीं गया है, फिर भी आराम हो रहा है। हर रोज आँखमें दो-तीन बार दवाकी बूँदें डालता हूँ। इसके अतिरिक्त बर्फके पानीकी पट्टी भी रखी जाती है। डॉक्टर भी अच्छी देखभाल करता है।

केप टाउनमें

गाड़ी केप टाउनमें आधा घंटा देरसे पहुँची। स्टेशनपर कुछ भारतीय आये थे; बाकी सब जहाजपर मिले। श्री आंगलिया उसी दिन डर्बन जानेवाले थे, इसलिए उनकी दावत थी। उसमें बहुत-से भारतीय रुक गये थे। यहाँ भी भारतीयोंने हमें फूल-फल आदि देकर विदा किया।

दक्षिण आफ्रिकाकी प्रख्यात महिला श्रीमती ऑलिव श्राइनर और श्रीमती लुई जहाजमें हमसे हाथ मिलानेके लिए खास तौरसे आई थीं। हमारे प्रति उन दोनों महिलाओंका बहुत सद्भाव दिखाई देता था। मैंने देखा कि उनको सत्याग्रहकी लड़ाई बहुत पसन्द है।

जहाजपर प्राप्त तार

श्री काछलियाका तार शिष्टमण्डलको चेतावनी तथा स्फूर्ति देनेवाला है और उसमें हमारा कर्तव्य बताया गया है। वह इस प्रकार है:

> आप दोनों व्यक्ति जा रहे हैं, इससे मुझे खुशी हुई है। आपके साथ जाने के बजाय मैं जेलमें रहकर अपने देशकी खातिर दुःख भोगना पसन्द करता हूँ। आपकी सफलता चाहता हूँ।

श्री इब्राहीम कुवाड़ियाका जेल जाते वक्त दिया गया तार नीचे लिखे अनुसार है:

> जेल जाते हुए मैं शिष्टमण्डलकी सफलता चाहता हूँ। दूसरी जगहकी अपेक्षा मैं जेलमें जातिकी सेवा ज्यादा अच्छी कर सकता हूँ।

इन दोनों तारोंका तर्जुमा करते हुए हृदय फटता है। हम जहाँ जा रहे हैं वहाँ तो सिर्फ पानीके बुलबुले ही होंगे। किन्तु जो जेलमें जाकर बैठे हैं वे तो भारतीय समाजकी सेवा कर ही रहे हैं। मेरा निश्चित मत है कि यह शिष्टमण्डल चाहे जो कर आये, किन्तु उनकी सेवाके मूल्यकी तुलनामें वह कुछ नहीं होगा। श्री काछलिया और श्री कुवाड़िया आदि जेल-यात्री भारतीय समाजके नये उत्साहके बोधक हैं। शिष्टमण्डल उसकी दुर्बलता बताता है। जेल-यात्री संसारके सामने सिद्ध करते हैं कि भारतीय लोगोंमें मर्दानगी आई है। शिष्टमण्डल सिद्ध करता है कि अभी उनमें पूरी मर्दानगी नहीं है। अभी वे बालक हैं और इसलिए उन्हें शिष्टमण्डल रूपी चलन-गाड़ीके सहारेकी जरूरत होती है। सत्याग्रही भारतीय समाजके बलशाली अंग हैं। जेल जानेवालोंके लिए निराश होनेकी कोई बात नहीं है। शिष्टमण्डल इंग्लैंडसे खाली हाथ लौटेगा तो जो लोग उसके ऊपर नजर लगाये बैठे होंगे वे ही निराश होंगे। इसलिए मेरी सलाह है कि कोई शिष्टमण्डलपर आशा न लगाये। आप शिष्टमण्डलकी सहायता करें — जेल जाकर, एक रहकर, तार भेजकर और वहाँ अपनी ताकत बताकर। आप शिष्टमण्डलको भापका इंजन समझें। किन्तु भाप पैदा करनेवाला कोयला तो यहाँसे जायेगा, तभी भाप पैदा होगी और इंजन चलेगा। ताकत तो यहाँ है। यन्त्र चलता है, यह [शक्तिका] केवल दिखावा है। यह बात भूलनेकी नहीं है। इस प्रकार, दूसरे तार भी, जो हमें मिले हैं, उत्साहवर्धक बन गये हैं।

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनका तार निम्नलिखित है:

> दीनदारोंकी शुभकामनाएँ आपके साथ हैं। हमें भरोसा है कि आप दीन, मान और मर्दानगीकी रक्षा करेंगे। हम यथाशक्ति प्रयत्न करेंगे कि आपको यहाँसे और भारतसे ताकत मिले।

इमाम साहबने अपना तार इस तरह अलग भेजा है:

> हम सत्याग्रहका झंडा फहराता हुआ रखेंगे। सफलताकी कामना करता हूँ।

पॉचेफस्ट्रूमकी समितिकी ओरसे निम्न तार मिला है:

> आपके कार्यका समर्थन करते हैं। आपकी सफलताकी कामना करते हैं।

रॉबर्ट्सनके भारतीयोंका तार निम्न प्रकार है:

कामना है आपकी यात्रा सुखमय हो। ईश्वर आपको आपके कार्यमें सफलता दे, ऐसी उससे प्रार्थना करते हैं।

इन शुभकामनाओंको साथ लेकर हम केप टाउनसे विदा हुए।

"संघके सम्बन्धमें कुछ कीजिएगा"

बहुत-से भारतीय भाइयोंने शिष्टमण्डलको सलाह दी है कि वह संघ (यूनियन) के प्रश्नको भुला न दे। मुझे कहना चाहिए कि यह सलाह संघका सार समझे बिना दी गई है, इसलिए इस सम्बन्धमें दो शब्द कहता हूँ। जहाजमें इस प्रश्नपर मैं अधिक विचार और बात कर सका हूँ। संघके विधेयक (बिल)में हमारे सम्बन्धमें कुछ भी बात नहीं है। उसके अन्तर्गत सब उपनिवेश इकट्ठे हो जायेंगे। इसके बावजूद सम्बन्धित उपनिवेशोंके कानून कायम रहते हैं। इसके विरोधमें क्या कहा जा सकता है? उपनिवेश संघबद्ध हों, इसके विरोधमें हम कुछ कह या कर नहीं सकते। संघ बननेके बाद यदि कोई कानून बनानेका प्रयत्न किया जाये तो उसके बारेमें हम लड़ सकते हैं। संघ बनने-मात्रसे कोई हमारा हक नहीं मारा जाता। संघीकरणका असर ऐसा होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं। किन्तु हम संघका विरोध यह कहकर तो नहीं कर सकते कि संघ हमारा मूलोच्छेद कर देगा। मूल बात यह है कि उपनिवेशके गोरे लोग भी शत्रुताका बरताव करते हैं। ये शत्रु एकत्र हो जायेंगे, इसलिए ज्यादा दबाव डालेंगे ही। इसका उपाय क्या है? हम उनको एक होनेसे तो नहीं रोक सकते।

कोई यह नहीं कहता कि शत्रु संगठित होते हैं तो हम सब भारतीय संगठित हों। यह वास्तविक उपाय है। भारतीय यह न कहकर कहते हैं कि इंग्लैंडसे कुछ लाना। इससे हमारी लाचारी जाहिर होती है। उपनिवेशी यूरोपीय बलवान हैं और साम्राज्यके लाड़ले बच्चे हैं। हम दुर्बल और उपेक्षित बेटे हैं। लाड़ले बच्चोंके मुकाबले माँसे उपेक्षित बेटोंको न्याय कैसे मिले? अर्जी देकर? यह तो कभी सम्भव नहीं। अर्जीमें जब आज्ञाकी शक्ति होती है तभी वह काम देती है। जब हम जोर लगा सकते हैं तब अर्जी आज्ञा-रूपी मानी जाती है। यह समझना चाहिए कि अर्जी सविनय आज्ञा है। बल दो प्रकारका होता है—एक शरीरबल और दूसरा आत्मबल या सत्याग्रह। शरीरबल सत्यबलके सम्मुख कुछ भी नहीं है। इसलिए हम सत्यबल सीखें तो "संघके सम्बन्धमें कुछ कीजिएगा", ऐसी बात कहना भूल जायें।

यह ठीक है कि डॉक्टर अब्दुल रहमान[1] संघ (यूनियन) के सम्बन्धमें ही [इंग्लैंड] जा रहे हैं, क्योंकि संघ-कानूनमें काले लोगोंके कुछ हक अभीसे ही रद हो जाते हैं। बात ऐसी हो, तो कोशिश करनी चाहिए। ऐसा हमारे मामलेमें नहीं है। फिर भी किसीको यह न मानना चाहिए कि शिष्टमण्डल संघके प्रश्नको उठायेगा ही नहीं। उसको उठाये बिना गुजारा नहीं। संघकी बात उठ रही है, तभी तो यह शिष्टमण्डल जा रहा है। इसके अलावा वह अच्छी तरहसे कहेगा कि ट्रान्सवालके कष्ट कायम रहें, तो संघ नहीं बनाया जाना चाहिए। इसके आगे मैं यह कहता हूँ कि यदि भारतीय पूरा बल लगायें तो शिष्टमण्डलकी बात मंजूर हुए बिना कदापि न रहेगी। इसके अतिरिक्त शिष्टमण्डल समस्त दक्षिण आफ्रिकाके लिए बने हुए कानूनोंकी

१. आफ्रिकी राजनैतिक संगठन (आफ्रिकन पॉलिटिकल ऑर्गेनाइज़ेशन) के अध्यक्ष और केप टाउन नगर-पालिका (म्युनिसीपैलिटी) के सदस्य; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ २४९ और २५३।

बात भी उठायेगा। इसका अर्थ यह नहीं है कि ये कानून रद हो जायेंगे। इनको रद करानेके लिए तो सत्याग्रह ही करना होगा। किन्तु हम यह मानते हैं कि बातचीत करनेसे ब्रिटिश सरकार उपनिवेशोंके साथ कोई समझौता कर सकती है। मुझे आशा है कि इस स्पष्टीकरणको भारतीय समझ सकेंगे। इस प्रश्नपर सब लोग ज्यों-ज्यों सोचेंगे त्यों-त्यों स्पष्ट होता जायेगा कि संघके सम्बन्धमें जितना जोर लगाया जा सकता है उतना तो शिष्टमण्डलने लगाया ही है। यह कानूनकी बारीकीकी बात है। यह कानूनकी जानकारीके बिना पूरी तरह कैसे समझमें आये?

हमारे साथी यात्री

हमारे साथ केपके प्रधानमंत्री श्री मेरीमैन[1] और उनके साथ श्री सॉवर[2] हैं। नेटालके श्री स्माइल और श्री ग्रीन हैं। ऑरेंज रिवर कालोनीके श्री बोथा हैं। इनके सिवा दूसरे अंग्रेज मुसाफिरोंके नाम देनेकी जरूरत नहीं है।

"रंगदार लोगों" (कलर्ड पीपुल) का शिष्टमण्डल भी इसी जहाजमें है। इसमें डॉ० अब्दुल रहमान, श्री फ्रेड्रिक, श्री लॉंडर्स और श्री मैवेला हैं। मुझे दुःख है कि डॉक्टर अब्दुल रहमान और उनके दो अन्य साथी दूसरे दर्जेमें हैं और श्री मैवेला तीसरे दर्जेमें। इससे उस शिष्टमण्डलकी इज्जतमें बट्टा लगता है। ये काले लोगोंके प्रतिनिधियोंकी हैसियतसे इस स्थितिमें जा रहे हैं, यह ठीक नहीं जान पड़ा। मैं देखता हूँ कि जब बहुत हीन स्थितिके कुछ यूरोपीय पहले दर्जेमें हैं, तब उक्त रंगदार प्रतिनिधि दूसरे और तीसरे दर्जेमें हैं। पूछताछ करनेसे मालूम पड़ा है कि इस शिष्टमण्डलको रुपयेकी बड़ी दिक्कत हुई; इस कारण इसके सदस्य इस तरह यात्रा कर रहे हैं। इस शिष्टमण्डलके दो अन्य सदस्य अभी पिछले जहाजमें आनेवाले हैं। डॉ० अब्दुल रहमानने श्री श्राइनरके सम्बन्धमें, जो उन लोगोंकी ओरसे पहले ही चले गये हैं, मुझे कुछ बहुत ही जानने योग्य बातें बताई हैं। इतना ही नहीं कि उन्होंने स्थानीय संसदमें काले लोगोंका मामला बहुत जोरदार ढंगसे पेश किया है, बल्कि अब उनकी हिमायत करनेके इरादेसे ही खुद इंग्लैंड गये हैं। उनको कोई दूसरा काम नहीं था, फिर भी वे वहाँ अपने खर्चेसे गये हैं। उन्होंने काले लोगोंसे अपने खर्चेके लिए फूटी कौड़ी भी नहीं ली है। उनका वकालतका धन्धा बहुत अच्छा चलता है। फिर भी वे मालदार नहीं हैं, क्योंकि वे अपने विशाल कुटुम्बपर, और परोपकारके कामोंमें, बहुत धन खर्च करते हैं। वे डीनीजूलूके मुकदमेमें लगभग दो महीने तक व्यस्त रहे; फिर भी उनकी फीस अभीतक नहीं मिली है और वे खुद इस सम्बन्धमें उदासीन हैं। इसका नाम है वकील। [पहले] सच्चे वकीलोंका ऐसा ही जीवन होता था। वे वकालत परोपकारके लिए करते थे, पैसा कमानेके लिए नहीं। परोपकार करते हुए जो पैसा मिलता, उसको वे लेते थे और उसे नजराना या खुशीसे दी गई फीस कहा जाता था। उस नजरानेका दावा नहीं हो सकता था। इसके अलावा श्री श्राइनर पचास काली चमड़ीवाले लोगोंके लिए ऐसा करते हैं। इससे हमें समझना चाहिए कि यूरोपीयोंमें भी ऐसे महान परोपकारी लोग मौजूद हैं जो अपने परोपकारके दायरेमें

१. जॉन जेवियर मेरीमैन (१८४१-१९२६); केप कालोनीके *प्रधान-मन्त्री,* १९०८-१० ।

२. जे० डब्ल्यू० सॉवर, विधान-सभाके सदस्य; एक "लोकोपकारी स्वतंत्र विचारक", जिन्होंने नाइटहुडका सम्मान लेना अस्वीकार कर दिया ।

दूसरी जातियोंके लोगोंको भी शामिल रखते हैं। मुझे तो लगता है कि हमें किसी भी जातिका मूल्यांकन करते समय उसके अच्छे लोगोंके उदाहरणोंको लेना चाहिए। ऐसा करनेसे ही पृथक्-पृथक् जातियाँ साथ-साथ रह सकती हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-७-१९०९

१७१. श्री पोलक और उनका कार्य

भारतमें जनमत तैयार करने और भारतको अपने कर्तव्यके प्रति जगानेके उद्देश्यसे, ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीयोंके प्रतिनिधिकी हैसियतसे, श्री एच० एस० एल० पोलक द्वारा भारतके लिए प्रस्थान करनेके अवसरपर हमारे पाठकोंको श्री पोलककी संक्षिप्त जीवनी पढ़कर खुशी होगी। श्री हेनरी सॉलोमन लिअन पोलकका जन्म आजसे ठीक २७ वर्ष पूर्व डोवर, इंग्लैंडमें हुआ था। वे श्री जे० एच० पोलक, जे० पी० के पुत्र हैं। श्री जे० एच० पोलक लन्दनकी दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके सदस्य हैं। श्री पोलक लन्दन विश्वविद्यालयके अन्डर-ग्रेजुएट हैं, और उनके पास लन्दन चैम्बर ऑफ़ कॉमर्स (व्यापार संघ) तथा अन्य शिक्षा-संस्थाओंके साहित्यिक तथा आर्थिक विषयोंके अनेक प्रमाणपत्र हैं। उन्होंने अपनी शिक्षा इकोल द कॉमर्स, न्यूचैटेल, स्विट्जरलैंडमें पूरी की। इसके बाद वे लन्दनकी सोसाइटी ऑफ़ केमिकल इंडस्ट्री (रसायन उद्योग समिति) के सहायक सचिव नियुक्त हुए। स्वास्थ्य-सम्बन्धी कारणोंसे श्री पोलक सन् १९०३ के आरम्भमें दक्षिण आफ्रिका आये। भारतीयोंका पक्ष अपनाने, और इस पत्रिकाका सम्पादक-पद, जो परमार्थका कार्य था और अब भी है, स्वीकार करनेसे पहले वे पत्रकारिता कर रहे थे। अपने कुछ आदर्शोंको व्यावहारिक रूप देनेकी इच्छासे उन्होंने एक ऐसा पद छोड़ दिया जिसे पैसेके लिहाजसे बहुत अच्छा कहा जा सकता था, तथा जिसमें और भी आर्थिक तरक्कीकी उम्मीद थी; और सन् १९०४ में फीनिक्स योजनामें शामिल हो गये। इसमें उसके सदस्योंको केवल इतना ही पैसा मिलता है, जितना सादेसे-सादे ढंगसे रहनेके लिए पर्याप्त हो। जैसा कि इस पत्रके पाठकोंको ज्ञात है, इस योजनाका ध्येय टॉल्स्टॉय और रस्किनकी मूलभूत शिक्षाको कार्यान्वित करना और अपनी बाह्य गतिविधियों द्वारा दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतें दूर करानेमें सहायता देना है। भारतीयोंके सार्वजनिक कार्योंकी आवश्यकताओंको ध्यानमें रखते हुए और इस पत्रसे सम्बन्धित अपने कर्तव्योंका अधिक सुचारु रूपसे निर्वाह करनेकी दृष्टिसे श्री पोलकने सन् १९०६ में श्री गांधीके अधीन वकालतका प्रशिक्षण लेना प्रारम्भ किया और सन् १९०८ में उन्हें ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयसे अटर्नीकी सनद मिल गई।

सन् १९०६ से श्री पोलक ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघके अवैतनिक सहायक मन्त्रीके रूपमें काम कर रहे हैं। यह काल दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंके इतिहासका सबसे संकटका समय रहा है। इसमें सत्याग्रह आन्दोलनसे घनिष्ठ रूपसे सम्बन्धित श्री पोलक सरीखे लोगोंके अथक उत्साह और निष्ठाकी परीक्षा हुई है। पिछले तीन वर्षोंसे श्री पोलकने आराम नहीं जाना है। उन्होंने अपनी योग्य लेखनीका निरन्तर उपयोग करनेके अलावा दक्षिण आफ्रिका-भरमें भ्रमण भी किया है। ये यात्राएँ उन्होंने सत्याग्रह संघर्षके लिए चन्दा जमा

करनेके लिए, अथवा सार्वजनिक सभाओंमें भाषणों द्वारा उप-महाद्वीपके विभिन्न भागोंमें रहनेवाले भारतीयोंको संघर्षके स्वरूपसे परिचित करानेके लिए कीं। दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीय प्रवासियों और एशियाई कानूनोंसे सम्बन्धित विभिन्न प्रश्नोंके विषयमें श्री पोलककी जानकारी करीब-करीब बेजोड़ है। बिल्कुल सही जानकारी रखनेकी अपनी उत्कंठामें उन्होंने मामूलीसे-मामूली चीजका अध्ययन किया है, और पूरी स्थितिका सही स्वरूप समझनेकी गरजसे जो-कुछ अवकाश मिल सका, उसमें उन्होंने आधुनिक भारतीय इतिहासका अध्ययन भी किया है। भारतके अनेक प्रमुख समाचारपत्रों और पत्रिकाओंमें लेख आदि लिखते रहकर श्री पोलकने सामयिक भारतीय विचारधारासे सदा सम्पर्क रखा है। इसलिए वे भारतीय जनताके लिए कोई अपरिचित व्यक्ति नहीं हैं। भारतके लोगोंको यह जानकर निःसन्देह खुशी होगी कि भारतीय जीवन और चरित्रके अन्तरंग पहलूसे परिचित होनेके लिए श्री पोलक दक्षिण आफ्रिकामें अपनी यात्राओंके दौरान सदा भारतीय घरोंमें भारतीयोंकी भाँति ही रहे हैं। भारतीयोंके मनपर उनका इतना अधिकार हो गया है कि जब भारतीय नेता जेलोंमें थे, उस समय वे श्री पोलककी सलाह लेनेको उत्सुक रहते थे, और उन सलाहोंका लगनसे पालन करते थे।

श्री पोलकका विवाह सन् १९०५ में हुआ था। अपने पतिके समान ही आत्म-त्याग तथा सेवा-भावना रखनेवाली श्रीमती पोलकके प्रति दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजका ऋण कुछ कम नहीं है। पिछले कुछ समयसे उन्होंने भारतीय महिलाओंकी सभाएँ आयोजित करनेका काम स्वयं उठा लिया है और तन-मनसे अपने काममें लग गई हैं। दक्षिण आफ्रिकामें उनके दो सन्तानें हुई हैं। श्री पोलक एक प्राचीन यहूदी घरानेके हैं, और एक ऐसी जातिके सदस्य होनेके नाते, जिसे बहुत अत्याचारोंसे गुजरना पड़ा है, वे दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंके कष्टोंको कम करनेमें सहायक होना अपना सौभाग्य मानते हैं। युवावस्थासे ही नीतिशास्त्रके प्रति उनकी गहरा रुझान था। श्री पोलकके लिए धर्म और नीतिशास्त्र एक दूसरेके पर्याय हैं। अतः उन्होंने स्वाभाविक रूपसे लन्दनकी साउथ प्लेस एथिकल सोसाइटी [नैतिकता समिति] से सम्बन्ध स्थापित कर लिया था, और आज भी वे उसके सदस्य हैं। यह उनका नैतिक दृष्टिकोण ही था कि उन्होंने भारतीयोंका काम हाथमें लेनेकी आवश्यकता अनुभव की।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–७–१९०९

१७२. पत्र: रामदास गांधीको

[आर० एम० एस० 'केनिलवर्थ कैसिल']
जुलाई ७, १९०९

चि० रामदास

मैं इस समय जहाजमें हूँ]।

बापूके आशीर्वाद

रामदास गांधी
'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स, नेटाल

जहाजकी तस्वीरवाले पोस्टकार्डपर गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू०८४) से।
सौजन्य: सुशीलाबेन गांधी

१७३. शिष्टमण्डलकी यात्रा [–२]

[जुलाई ९, १९०९ के पूर्व]

जहाज और जेलका मुकाबला

मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि पहले दर्जेकी जहाजकी यात्राकी अपेक्षा कैद बहुत अच्छी है। श्री भीखूभाई दयालजी मलिया तीसरे दर्जेमें हैं। उनसे मिलनेके लिए हम दोनों भाई हर रोज जाते हैं। इससे हमें तीसरे दर्जेका अनुभव मिला है। मेरी मान्यता ऐसी है कि तीसरे दर्जेमें जो सुख है — स्वतन्त्रता है — वह पहले दर्जेमें नहीं है। और जेलमें जो सुख और स्वतन्त्रता है वह तीसरे दर्जेमें [भी] नहीं है। जहाजमें जो सुख — यदि मानें तो — नौकरोंको है वह यात्रियोंको नहीं है। नौकर बालकोंकी तरह पहले दर्जेके यात्रियोंको बहलाते-फुसलाते रहते हैं। हर दो घंटे बाद कुछ-न-कुछ खाना-पीना होता रहता है। एक गिलास पानी भी अपने हाथसे नहीं लिया जा सकता। खानेकी मेजपर बैठे हों, तो कुछ दूर पड़ा चम्मच उठाना बड़प्पनमें बाधक माना जाता है। साफ रखनेके लिए हाथ तमाम दिन धोने पड़ते हैं। हाथोंके लिए कुछ काम तो रहा नहीं, इसलिए वे बिल्कुल नाजुक और कमजोर हो जाते हैं। मैं जब अपने मौजूदा हाथोंका मुकाबला अपने जेलके हाथोंसे करने लगता हूँ तो मेरे मनमें चिढ़ पैदा होती है। नौकरोंको काम करते देखता हूँ तो मुझे उनसे ईर्ष्या होती है। मैं जिस शान्तिका उपभोग जेलमें करता था वह यहाँ नहीं है। जो स्वतन्त्रता जेलमें थी, वह भी नहीं है। यहाँ तो हर तरह संकोचमें रहना पड़ता है। मैं जेलमें जितनी गम्भीरता, धीरता और एकाग्रतासे ईश्वर-भजन करता था, उतनी गम्भीरता, धीरता और एकाग्रता यहाँ ईश्वर-भजनमें नहीं रहती।

यह सब मैं यों ही नहीं लिखता; वरन् विचारपूर्वक लिख रहा हूँ। ऐसे विचार हर रोज आते रहते हैं। मैंने जितना पढ़ा है, या मैं जितना पढ़ता हूँ, उसका अनुभव भी करता हूँ। मैंने यह सीखा है कि जो ईश्वर-भजन करना चाहता है, उसको मिथ्याचार या राग-रंग अनुकूल नहीं पड़ता। जहाँ भोग-विलास है वहाँ खुदाका नाम ठीक तरहसे नहीं लिया जा सकता। यदि हम ऐसे भोग-विलासमें भाग न लें, तो भी उसका स्वाभाविक प्रभाव होता ही है। उसके निवारणमें जितनी शक्ति लगानी पड़ती है उतनी ही ईश्वर-भजनमें कमी रह जाती है। मैं यह प्रत्यक्ष अनुभव करता हूँ। यह लिखनेसे मेरा अभिप्राय यह बताना नहीं है कि मैं अपने लिए या किसी दूसरेके लिए सदा कारावासकी ही इच्छा करता हूँ या पहले दर्जेकी यात्रा सदा तथा सब परिस्थितियोंमें गलत है और जेलका सादापन और एकान्त हम सभीके लिए जरूरी है। किन्हीं खास सुविधाओंके लिए अथवा ऐसे ही अन्य कारणोंसे पहले दर्जेकी जरूरत हो तो उस परिस्थितिको छोड़कर, तीसरे दर्जेकी यात्राको मैं पसन्द करने लायक समझता हूँ। किन्तु मैं दक्षिण आफ्रिकामें बहुत-से कारणोंसे भारतीय लोगोंके लिए पहले और दूसरे दर्जेमें यात्रा करना आवश्यक मानता हूँ। हमारे ऊपर कंजूसीका जो आरोप है वह हटना चाहिए। इसके अतिरिक्त हमारी तबीयत ऐसी बातोंमें बहुत सादगी-पसन्द है। इसलिए पहले और दूसरे दर्जेकी यात्रा ऐसी नहीं है कि हम उससे बहक जायें। जिन्होंने धन इकट्ठा किया है उनके लिए तो अपनी प्रतिष्ठाके कारण भी ऊँचे दर्जेमें यात्रा करना आवश्यक लगता है। अपनी महान लड़ाईकी इस घड़ीमें तो मैं बेधड़क होकर लिख सकता हूँ कि पहले दर्जेसे भी बड़े दर्जेकी यात्राके मुकाबले जेल-यात्रा हर भारतीयके लिए अच्छी है, ऐसा प्रत्येक भारतीयको मानना चाहिए।

हम कैसे रहते हैं

श्री हाजी हबीबका अनुभव मुझे आज पन्द्रह बरससे है। फिर भी उनके साथ रहनेका जैसा अवसर अब मिला है वैसा तो कभी मिला ही नहीं था। हाजी साहब धर्मनिष्ठ व्यक्ति हैं। वे अपनी सभी नमाजें नियमपूर्वक पढ़ते हैं। वे खाने-पीनेके धार्मिक नियमोंका पालन ठीक तरहसे करते हैं। उन्होंने मुझसे बहुत बार कहा है कि इस यात्रामें उनको धार्मिक नियमोंके पालनमें तनिक-भी अड़चन मालूम नहीं हुई है। वे अपना भोजन सदा मुझे पसन्द करने देते हैं। उन्हें क्या दरकार है, यह मैं जानता हूँ। वे सुबह दलिया, अंडे और चाय; दोपहरको उबाले हुए आलू, कभी-कभी मछली, सलाद, लेटिस नामका मूली-जैसा शाक, कुछ पुडिंग, मेवे और काफी; और रातको कुछ शाक-सब्जी, पुडिंग, मेवे और काफी लेते हैं। वे बराबर यह सोचते रहते हैं कि शिष्टमण्डल सफल कैसे होगा और इस सम्बन्धमें हम बहुत बार सलाह-मशविरा किया करते हैं। उनके साथ जो घी और अचार-मुरब्बा बाँध दिया गया था, वह उन्होंने श्री भीखूभाईको दे दिया है। मैं जहाजके यात्रियोंपर यह छाप पड़ी देखता हूँ कि हम दोनों भाई-भाई हैं।

मैं अपने नियमके अनुसार दो समय भोजन करता हूँ। मैं पुडिंग छोड़ देता हूँ, क्योंकि उसमें अंडा होता है। मैं चाय और काफीको भी गुलामीके श्रमसे पैदा होनेके कारण यथा-सम्भव नहीं लेता। मेरा शेष भोजन, मछलीके सिवा, लगभग ऊपरके मुताबिक है। ज्यों-ज्यों शरीर कसता जाता है, त्यों-त्यों मैं देखता हूँ कि अधिक सादे भोजनसे काम चलाया जा सकता है। पिछली यात्रामें शरीर जो स्वादिष्ट भोजन माँगता था, सो इस यात्रामें नहीं माँगता।

दिन प्रायः पढ़नेमें जाता है। इंग्लैंडमें जो विवरण[1] पेश करना है, वह लिखा जा चुका है। उसको श्री हाजी हबीबने पसन्द किया है। उन्होंने कुछ सुझाव दिये हैं; वे मैंने उसमें शामिल कर लिये हैं।

श्री मेरीमैनसे भेंट

जहाजमें कुछ प्रमुख यूरोपीय लोग हैं। उनमें कईसे भेंट हो चुकी है। ऐसे लोगोंमें श्री मेरीमैन आ जाते हैं। उनके साथ बहुत बातचीत हुई। उनके विचारोंसे मुझे लगता है कि संघके सम्बन्धमें जो-कुछ जोर लगाया जायेगा वह निष्फल जायेगा। जब मैंने उनको यह बताया कि ट्रान्सवालके सवालका संघसे बहुत सम्बन्ध नहीं है तो श्री मेरीमैन और भी गहराईमें उतरे और उन्होंने इस प्रश्नके सम्बन्धमें पूरी सहायता देनेका वचन दिया। सत्याग्रही कैदियोंके प्रति उनके मनमें मैंने बहुत सहानुभूति देखी। श्री जैगरसे भी भेंट हुई। उनका विचार भी श्री मेरीमैनसे मिलता-जुलता दिखाई दिया। संघ तो बनना ही है, किन्तु यदि उसमें रुकावट डाले बिना ट्रान्सवालका प्रश्न हल हो सके तो ये महानुभाव भी सहायता देनेके लिए तैयार हैं। जब मैंने उनसे श्री काछलिया और श्री अस्वातके त्यागकी चर्चा की तो वे बड़े उत्साहित हुए और उन्होंने जो-कुछ कहा उसका भावार्थ यह था कि यदि दूसरे भारतीय व्यापारियोंने ऐसा ही किया होता तो आज झगड़ा तय हो गया होता। मैंने जब उनको यह बताया कि उनकी ही पेढ़ीने श्री काछलियाका विरोध किया था तब उन्होंने इसपर दुःख और आश्चर्य प्रकट किया।

मैंने श्री दाउद मुहम्मद और श्री पारसी रुस्तमजीकी बात उक्त दोनों सज्जनोंको बताई तो वे बहुत प्रभावित हुए जान पड़े। उनको दुःख हुआ और उन्होंने यह आशा प्रकट की कि जैसे भी हो, समझौता हो जायेगा। हमने उनको अपनी माँगें बताईं तो उन्होंने मंजूर किया कि वे बहुत वाजिब हैं।

मैंने श्री जैगरसे केपके प्रवासी-अधिनियम (इमिग्रेशन ऐक्ट) के सम्बन्धमें बातचीत की। उनको यह जानकर आश्चर्य हुआ कि केपके भारतीयोंको केपसे बाहर जानेके लिए मीयादी अनुमतिपत्र (परमिट) लेने पड़ते हैं। यदि केपके भारतीयोंने पूरा प्रयत्न किया होता तो ऐसी धारा कानूनमें कभी न रही होती। किन्तु अब भी उनका कर्तव्य है कि वे इस सम्बन्धमें कोई उपाय करें। मुझे विश्वास है कि केपके बहुत-से सदस्योंको इस बेढंगी धाराकी कोई जानकारी नहीं है।

श्री सॉवरसे भी, जो केपके मन्त्रिमण्डलके एक सदस्य हैं, भेंट हुई है। उन्होंने बहुत सहानुभूति प्रकट की है और यथासम्भव सहायता देनेका वचन दिया है। श्री सॉवरने स्वीकार किया कि जो जाति हमारी तरह दुःख उठाती है उसकी माँगोंका अनुचित होना सम्भव नहीं है। उस जातिकी सहायता करना उदार मनके प्रत्येक व्यक्तिका कर्तव्य है। मैं इसको भी सत्याग्रहका ही एक प्रभाव मानता हूँ। हम जेल न गये होते तो ऐसे लोग कुछ सुनते भी नहीं। इसके अतिरिक्त एक अन्य यूरोपीय हैं, जिनके साथ बहुत बार बातचीत हुई है। वे खुद अनाक्रामक प्रतिरोधी (पैसिव रेजिस्टर) हैं। वे एक संस्थाके मन्त्री हैं। उनका कहना है कि अंग्रेज अनाक्रामक प्रतिरोधियोंकी अपेक्षा हम कष्ट सहनेमें बहुत आगे बढ़ गये हैं। उन्होंने एक सिफारिशी चिट्ठी देने और दूसरे प्रकारसे भी सहायता करनेका वचन दिया है।

१. देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २८७-३००।

ये सब घटनाएँ सत्याग्रहकी जीत बताती हैं। सत्याग्रहके कष्टोंकी कहानी सभीमें सहानुभूति पैदा करती है। इसको सुनकर सब दाँतों तले अँगुली दबाकर रह जाते हैं और ताज्जुब करते हैं कि हमारे साथ अभीतक न्याय क्यों नहीं किया गया है।

इन लोगोंकी इस सहानुभूतिका आधार इनकी यह जानकारी है कि हम लोग सच्चे हैं और दिखावा नहीं करते। मैं श्री हाजी हबीबकी सहायतासे 'कसस्सुल अम्बिया'[1] नामकी पुस्तक पढ़ रहा हूँ। मैंने उसमें आजाजीलके सम्बन्धमें यह फरमान देखा कि अगर वह छः लाख बरस तक खालिककी इबादत करे, किन्तु एक बार सिजदा करनेसे इनकार कर दे, तो उसकी छः लाख सालकी इबादतपर पानी फिर जायगा। इसका एक मतलब यह है कि हमारे सच और झूठकी कसौटी हम अखीर वक्तमें जो-कुछ करेंगे उससे होगी। दूसरा मतलब यह है कि हम ईश्वरसे कोई शर्त नहीं कर सकते। वह जैसे रखे, वैसे रहें। दस बार जेल जायें और ग्यारहवीं बार जेल न जायें तो दस बारका जेल जाना बेकार हो जायेगा और हमारी हँसी होगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–८–१९०९

१७४. पत्र: मगनलाल गांधीको

यूनियन कैसिल लाइन
आर० एम० एस० 'केनिलवर्थ कैसिल'
जुलाई ९, १९०९

चि० मगनलाल,

मदीरासे पत्र[2] लिखा है। यह पत्र आज रातको डाकमें डाला जायेगा। कल लन्दन पहुँचेंगे, इसलिए वहाँका हाल जाने बिना यह लिख रहा हूँ।

वहाँ वयस्कोंके लिए संस्कृत-वर्ग आरम्भ किया जाये तो अच्छा हो। मैं ज्यों-ज्यों पढ़ता हूँ त्यों-त्यों मुझे लगता है कि इस भाषाके ज्ञानकी प्रत्येक हिन्दूको आवश्यकता है। मेरी हिदायतें एकके-बाद एक बोझ बढ़ानेवाली हैं, यह खयाल बना रहता है; लेकिन मैं मजबूर हूँ। हमने अतीतमें इतना खोया है कि उसे फिर पानेमें और नियमित करनेमें कष्ट होगा और समय भी लगेगा पर जब हो सके तब इसे किये ही छुटकारा है — इस जन्ममें नहीं तो दूसरेमें सही। जबतक कामनाएँ रहती हैं, तबतक केवल परमार्थकी कामनाएँ रखें तो ठीक है। इन हिदायतोंमें से जिनपर अमल हो सके उनपर अमल करना और बाकीको याद रखना।

१. एक उर्दू पुस्तक, जिसमें इस्लामके नबियों और फकीरोंके जीवन-चरित्र हैं। देखिए "पत्र हाजी मुहम्मद हाजी दादाको", खण्ड ४, पृष्ठ ४७३।

२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

"यात्राके विवरण" में यह जोड़ लेना[1]:

श्री सॉवरसे भी, जो केपके मन्त्रिमण्डलके एक सदस्य हैं, भेंट हुई है। उन्होंने बहुत सहानुभूति प्रकट की है और यथा सम्भव सहायता देनेका वचन दिया है। श्री सॉवरने स्वीकार किया कि जो जाति हमारी तरह दुःख उठाती है उसकी माँगोंका अनुचित होना सम्भव नहीं है। उस जातिकी सहायता करना प्रत्येक उदार व्यक्तिका कर्तव्य है। मैं इसको भी सत्याग्रहका ही प्रभाव मानता हूँ। हम जेल न गये होते तो, ऐसे लोग, कुछ सुनते भी नहीं।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

संस्कृतके वर्गकी बात सबसे करना।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९४०) से।

१७५. भेंट : रायटरके प्रतिनिधिको[2]

[साउदैम्प्टन
जुलाई १०, १९०९]

हमारे शिष्टमण्डलमें चार आदमी शामिल होनेवाले थे; लेकिन अब दो जेलमें हैं। हमारी गतिविधि बहुत हद तक लॉर्ड ऍम्टहिल और उनकी समितिकी सलाहपर निर्भर करती है। हम महसूस करते हैं कि हमें इस अवसरका, जब दक्षिण आफ्रिकाके इतने राजनयिक इस देशमें हैं, लाभ उठाना चाहिए और देखना चाहिए कि ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीय पिछले ढाई बरससे जो बहुत बड़ी तकलीफें उठा रहे हैं क्या उन्हें दूर करनेके लिए कुछ नहीं किया जा सकता। संघ बनानेके सवालसे हमारे कामका कोई गहरा सम्बन्ध नहीं है। हाँ, इतना कि हर भारतीय महसूस करता है कि ब्रिटिश सरकारको संघके अन्तर्गत दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंके उचित दर्जेके सम्बन्धमें पूरा आश्वासन ले लेना चाहिए। हमें विशेष चिन्ता यह है कि ट्रान्सवाल सरकार और भारतीय समाजके बीच जो खास सवाल हैं वे तय हो जायें। इन सवालोंका निचोड़ निकालें तो असलमें एक ही सवाल यह बन जाता है कि ट्रान्सवालमें सुसंस्कृत भारतीयोंका दर्जा क्या हो और प्रवासियोंके सम्बन्धमें जो सामान्य कानून प्रचलित हो उसके अन्तर्गत उन्हें ट्रान्सवालमें आनेका हक हो या न हो। हमारा कहना यह है कि मौजूदा कानून पूरे भारतके लिए अपमानजनक है, क्योंकि उससे उपनिवेशीय कानून-निर्माणके इतिहासमें पहली बार प्रजातीय (रेशियल) प्रतिबन्ध लगता है और इस प्रतिबन्धको हटानेके लिए सैकड़ों ब्रिटिश भारतीयोंने जेल भोगी है। आज भी ट्रान्सवालके कुछ श्रेष्ठ भारतीय अन्तःकरणकी पुकारपर आपत्ति करनेवालोंके रूपमें जेलोंमें हैं।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ७-८-१९०९

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. गांधीजी १० जुलाईको हाजी हबीबके साथ जब इंग्लैंड पहुँचे तब उनसे रायटरके प्रतिनिधिने भेंट की थी।

१७६. भेंट : प्रेस एजेंसीके प्रतिनिधिको[1]

[लन्दन
जुलाई १०, १९०९]

श्री गांधीने आज इंग्लैंड पहुँचनेपर एक भेंटमें कहा कि मेरे यहाँ आनेका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि संघ बननेपर ट्रान्सवालमें एशियाइयोंकी शिकायतें दूर कर दी जायेंगी और दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाले सम्राट्के भारतीय प्रजाजनोंके दर्जेकी व्याख्या कर दी जायेगी, और वह संघीय संविधानमें शामिल कर ली जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, १७-७-१९०९

१७७. शिष्टमण्डलकी यात्रा [-३][2]

[जुलाई १०, १९०९ के बाद]

इंग्लैंड पहुँचे

मैं अपनी मदीरा तक की यात्राका विवरण बता चुका हूँ। हम दस [जुलाई] को साउदैम्प्टन पहुँच गये। वहाँ हमें रायटरका संवाददाता मिला।[3] उसको हमने संक्षेपमें स्थिति बताई और वह बहुत-से अखबारोंमें छप गई है। हम लन्दन लगभग प्रातः १०-३० बजे पहुँचे। किन्तु स्टेशनपर कोई नहीं था। इससे बड़ा अचम्भा हुआ। हम होटल सेसिलमें सामान रखकर श्री रिचसे मिलने गये। उनके पास श्री अब्दुल कादिर[4] बैठे थे। उन दोनोंको बड़ा आश्चर्य हुआ। श्री रिचने कोई तार न मिलनेसे शिष्टमण्डलके रवाना होनेकी आशा छोड़ दी थी। बात यह हुई कि जोहानिसबर्गसे रायटरने [शिष्टमण्डलके बारेमें] तार भेजा था। वह अखबारोंमें छप ही जायेगा, यह खयाल करके श्री रिचको खास तार नहीं भेजा गया था। यहाँके अखबारोंमें रायटरके ट्रान्सवाल-सम्बन्धी समाचार इन दिनों बहुत कम छपते हैं। हमारी रवानगीका तार नहीं छपा। प्रतिनिधियोंकी गिरफ्तारीका तार छपा था। इससे श्री रिचने अनुमान किया कि शिष्टमण्डल भेजनेका विचार मुल्तवी कर दिया गया होगा। इसलिए किसीको हमारे आनेकी खबर नहीं थी।

१. यह भेंट साउथ आफ्रिका असोसिएटेड प्रेस एजेंसीको दी गई थी। इसका संक्षिप्त विवरण **इंडियन ओपिनियनके** गुजराती विभागमें भी प्रकाशित किया गया था।

२. गांधीजी १० जुलाई १९०९ को लन्दन पहुँच गये थे, और ये खरीते उन्होंने वहींसे लिखे। **इंडियन ओपिनियनमें** मूल शीर्षक "शिष्टमण्डलकी यात्रा" से ही छपते रहे।

३. देखिए "भेंट: रायटरके प्रतिनिधिको", पृष्ठ २७९।

४. नेटाल भारतीयोंके शिष्टमण्डलके सदस्य। यह शिष्टमण्डल भी इन्हीं दिनों संघ विधेयकके अन्तर्गत नेटाल भारतीयोंके हितोंकी वकालत करने इंग्लैंड गया था।

कार्य आरम्भ

किन्तु श्री रिचसे मिलनेके बाद खाना खाकर हमने तुरन्त कार्य आरम्भ कर दिया। हम दोनों भाई, श्री अब्दुल कादिर, श्री रिच और श्री हुसेन दाउद, जो श्री रिचके दफ्तर आ गये थे, सर मंचरजी भावनगरीके पास गये। वहाँ सलाह-मशविरा करनके बाद श्री रिचने लॉर्ड ऍम्टहिलको पत्र लिखा। मुलाकातें शुरू हुईं। सारा दिन मिलने-जुलने और चिट्ठियाँ लिखनेमें जाता है, और रातको भी काम करना पड़ता है। कुमारी पोलक[1] खाली थीं, इसलिए उनको टाइप करनेका काम दिया है। वे खूब मेहनत करती हैं। रात या दिनका विचार नहीं करतीं। उनका स्वभाव भी अच्छा दिखाई देता है।

हम लॉर्ड ऍम्टहिल, सर रिचर्ड सॉलोमन[2], कुमारी विंटरबॉटम[3], श्री सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, श्री कॉटन[4], न्यायमूर्ति श्री अमीर अली[5], डॉक्टर अब्दुल मजीद और श्री आजाद आदिसे मिले हैं। हमारी मुलाकात भारत कार्यालय (इंडिया ऑफिस) के सदस्य सर विलियम ली-वार्नर[6] और श्री मॉरिसनसे[7] भी हुई है। मैं अभी ज्यादा खबर नहीं दे सकता। परामर्श खानगी तौरसे होता है। उससे थोड़ी-बहुत आशा बँधती है। यदि इसमें सफल न हुए तो किसी दूसरी तरहसे काम बननेकी सम्भावना कम ही है। लॉर्ड ऍम्टहिल सोच रहे हैं कि शिष्टमण्डल ले जायें या नहीं और लेजानेसे क्या फायदा होगा।

मैं इतना तो देख सका हूँ कि जेल जानेकी बातको सब महत्त्व देते हैं; और यदि कुछ वजन पड़ता है तो इसी बातका कि बहुत-से भारतीय जेल जा चुके हैं और अब भी जा रहे हैं।

हम सोच-समझकर तुरन्त कोई समाचार अखबारोंमें नहीं दे रहे हैं। लॉर्ड ऍम्टहिलकी सलाह है कि न दिया जाये।

लोक-नेताओंसे मिलनेके लिए यहाँ यह समय अनुकूल नहीं है। सभी लोग इस समय सैर-सपाटेके लिए शहरसे बाहर चले जाते हैं, इसलिए ज्यादा लोगोंकी सहायता मिलनी मुश्किल है। फिर, अंग्रेज लोग अपने ही मामलोंमें बहुत ज्यादा उलझे हुए हैं। संसदमें नये बजटपर बहस हो रही है। इसके अलावा दक्षिण आफ्रिकाके जो अधिकारी आये हुए हैं, वे भी [लोगोंका] वक्त ले लेते हैं। इन सब बातोंपर विचार करते हुए और चारों ओर देखते हुए मुझे लगता है कि खानगी तौरपर जो कार्रवाइयाँ हो रही हैं, वे असफल हो गईं तो कुछ होना सम्भव नहीं है।

१. एच० एस० एल० पोलककी बहन, कुमारी मॉड पोलक।

२. ट्रान्सवालके लेफ्टिनेंट गवर्नर।

३. फ्लॉरेंस विंटरबॉटम, लन्दनके नैतिकता समिति-संघ (यूनियन ऑफ ऐथिकल सोसाइटीज़) की पत्र-व्यवहार सचिव।

४. एच० ई० ए० कॉटन, इंडियाके सम्पादक।

५. (१८४९-१९२८); प्रसिद्ध न्यायाधीश, बादमें प्रिवी कौंसिलके सदस्य, इस्लाम और इस्लामी कानूनपर कई पुस्तकोंके लेखक; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ १२।

६. (१८४६-१९१४); एक आंग्ल-भारतीय प्रशासक, वाइसरायकी परिषदके अतिरिक्त सदस्य, भारतपर कई पुस्तकोंके रचयिता।

७. थियोडोर मॉरिसन; किसी समय अलीगढ़ मुहम्मडन कालेजके प्रिंसिपल; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ १६५।

पहली आहुति

दक्षिण आफ्रिकामें हुई सभाओंकी बहुत-सी खबरें यहाँ आई हैं। वे सन्तोषजनक हैं। नेटालसे एक भी खबर नहीं है। श्री नागप्पनके[1] बलिदानसे श्री हाजी हबीबको और मुझे बहुत शोक हुआ है। यह समय हमारे लिए शोकका तो था ही; उस शोकमें वृद्धि हुई है। फिर भी समाजके दृष्टिकोणसे विचार करें तो दुःखी होनेका कोई कारण नहीं है। यह ज्ञान हमें सदा रहा है कि इस लड़ाईमें हमें प्राणों तक की आहुति देनी पड़ सकती है और यदि ऐसा हो तो हमें वह आहुति खुशी-खुशी देनी है। हमें इस लड़ाईमें यही सीखना है कि समाजके हितके लिए हमें सभी तरहके दुःख उठाने हैं और ऐसा करना ही हमारे दुःखोंका इलाज है। मुझे यहाँ धीरे-धीरे, अनुभवके साथ यह समझमें आता जा रहा है कि हमने जो शिष्टमण्डल भेजा है वह हमारी कमजोरी है। जितनी मेहनत लोगोंसे मिलने तथा उन्हें मनानेमें लगती है और उसमें जो वक्त जाता है, यदि केवल स्वयं कष्ट उठानेमें उतनी मेहनत की जाये और उतना वक्त लगाया जाये तो यह संघर्ष तुरन्त समाप्त हो जाये। मैं परिणाम नहीं जानता। किन्तु इस लड़ाईसे हम ऊपर कहे अनुसार सीख लें तो काफी है।

खबर मिली है कि श्री दाउद मुहम्मद बीमारीके कारण जेलसे छोड़ दिये गये हैं। उनके लिए मुझे दुःख होता है। लेकिन कौमकी खातिर मैं श्री दाउद मुहम्मदको बधाई देता हूँ। हम अति-भोजन, विषय-भोग और स्वार्थ-श्रमके कारण बहुत बार बीमार हो जाते हैं। इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है। फिर उस बीमारीके लिए दोषी भी हम खुद ही होते हैं। तब समाजके काममें कोई बीमार हो तो उसको तो निःसन्देह बधाई देना उचित है। ऐसा हमेशा होता आया है और होता रहेगा। जैसा श्री दाउद मुहम्मद कर रहे हैं वैसा ही उनके बेटे श्री हुसेन मियाँ यहाँ कर रहे हैं। उनका स्वभाव देखकर सन्तोष होता है। समाजके प्रति उनकी सहानुभूति बहुत अच्छी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–८–१९०९

१७८. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

वेस्टमिन्स्टर पैलेस होटल
४, विक्टोरिया स्ट्रीट
लन्दन, एस० डब्ल्यू०
जुलाई १४, १९०९

प्रिय हेनरी,

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा और अच्छा लगेगा कि मॉड मेरी सहायता कर रही है और यह पत्र उसीसे लिखाया जा रहा है। वह इधर पिछले कुछ दिनोंसे बेकार है; और आप आसानीसे सोच सकते हैं कि जब पिताजीने[2] मुझसे कहा कि मैं उससे सहायता ले

१. तात्पर्य एक युवक सत्याग्रहीसे है, जिसकी जेल शिविरमें अधिकारियोंके दुर्व्यवहार और शीतके कारण मृत्यु हो गई थी; देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २९८।

२. श्री पोलकके पिता।

सकता हूँ तब मुझे कितना आश्चर्य हुआ होगा। बेशक, मैं उसकी सहायता प्राप्त करके स्वभावत: ही बहुत प्रसन्न हुआ। साथ ही मुझे यह दु:ख भी हुआ कि वह बेकार है। उसका खयाल है, और मैं सहमत हूँ, कि इस लाचारीके आरामसे शायद उसको कुछ लाभ हुआ है। उसे जो समय मिला उसका उचित उपयोग करनेकी क्षमता उसमें होती तो उसको अधिक लाभ हो सकता था। किन्तु जैसा उसने मुझे बताया, वह एकान्त पसन्द नहीं करती, और इससे बड़ा अन्तर पड़ जाता है। माताजी[1] और सैली[2] बेल्जियममें हैं। मालूम हुआ है कि वे अगले रविवारको लौटेंगी। मिली[3] २४ तारीखको आ जायेगी। उनकी रवानगीकी खबर तारसे मिली है। मैंने श्री रिचके नाम भेजा आपका तार देखा है; किन्तु जिसका मैं जिक्र कर रहा हूँ वह कैलेनबैकका है, और कल मिला था। इसमें भी आपकी भारत रवानगीकी सूचना दी गई है।[4]

कदाचित् यह आपके कामका पहलेसे अन्दाजा बाँधना होगा; लेकिन मैं जितना अधिक सोचता हूँ उतना ही अनुभव करता और देखता हूँ कि वहाँ [भारत] आपका काम हमारे यहाँके कामसे बहुत अधिक कठिन है। यहाँ भी सर कर्ज़न वाइली और डॉ० लालकाकासे[5] सम्बन्धित भयंकर और दु:खद घटनासे स्थिति जटिल हो गई है; किन्तु वहाँ जो उलझनें उत्पन्न होंगी उनकी तुलनामें यह जटिलता कुछ भी नहीं है। तो भी अगर आपको अपना हाथमें लिया हुआ कार्य सफल होता दिखाई न दे तो कृपया चिन्ता न कीजिए। सम्भव है, आप कोई सभाएँ न कर सकें, और वहाँके प्रभावशाली पत्र आपका बहिष्कार भी करें। मैं अभीसे यह नहीं सोचता कि इतना भयंकर परिणाम होगा ही; परन्तु मैं उसके लिए बिल्कुल तैयार हूँ और समयपर उसे सहन कर लूँगा। मुझे चिन्ता सिर्फ इस बातकी है कि आप लगभग सभी प्रमुख आंग्ल-भारतीयों और भारतीयोंसे मिल लें। यह आप कर सकेंगे, मैं जानता हूँ; किन्तु नेताओंसे एकान्त-वार्ता करनेमें भी आपको जो कठिनाइयाँ झेलनी हैं, उनसे मैं पूर्णत: परिचित हूँ। आपको अपने सारे धैर्य और व्यवहार-कुशलताकी आवश्यकता होगी। फिर भी मुझे चिन्ता तनिक भी नहीं है। मैं यह पत्र जो इस तर्जमें लिख रहा हूँ, उसका उद्देश्य आपको सिर्फ यह बताना है कि मैं आपकी कठिनाइयोंको समझता हूँ, और इसलिए, यदि भारतीय शिष्टमण्डल अधिक फलप्रद नहीं होगा तो भी मैं किसी तरह निराश बिल्कुल न होऊँगा। आप अपना ध्यान फिलहाल उन लोगोंतक ही सीमित रखें जिनके नाम मैंने आपको खास तौरसे दिये हैं—अर्थात् 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया' के सम्पादक, प्रोफेसर गोखले और श्री मलबारी[6]।

१. पोलककी माँ।
२. पोलककी दूसरी बहन।
३. पोलककी पत्नी।
४. पोलक ७ जुलाईको दक्षिण आफ्रिकी भारतीय समाजके प्रतिनिधिकी हैसियतसे जहाजसे भारतको रवाना हुए थे।
५. सर विलियम कर्ज़न वाइली भारत-मन्त्रीके राजनीतिक सहायक थे। इन्हें दक्षिण केन्सिंगटनकी इम्पीरियल इन्स्टिट्यूटमें राष्ट्रीय भारतीय संघ (नेशनल इंडियन एसोसिएशन) द्वारा आयोजित एक स्वागत-समारोहमें मदनलाल धींगरा नामक एक भारतीय छात्रने गोलीसे मार दिया था। इनकी रक्षाका प्रयत्न करते हुए शंघाईके एक पारसी डॉक्टर कावसजी लालकाका घायल हो गये थे, बादमें उनकी भी मृत्यु हो गई।
६. बहरामजी मेरवानजी मलबारी (१८५४–१९१२); कवि, पत्रकार और समाज-सुधारक।

आगाखाँ लन्दनमें हैं। मैंने मिलनेका समय माँगा है। हम न्यायमूर्ति अमीर अलीसे मिल हैं। हमारा काम जहाजमें ही शुरू हो गया था। मैंने श्री मेरीमैन और श्री सावरसे भी बातचीत की थी। दोनोंने बहुत सहानुभूति दिखाई; उनमें से कोई भी स्थितिको ठीक- नहीं जानता था। दोनोंने आश्चर्य प्रकट किया कि हमारी माँगें, जिन्हें वे बहुत उचित झते थे, मंजूर नहीं की गईं। इसलिए हम दक्षिण आफ्रिकी राजनयिकोंको इकट्ठा करने र यह देखनेकी दृष्टिसे दौड़-धूप कर रहे हैं कि वे जनरल स्मट्सको उचित दिशामें प्रभावित सकते हैं या नहीं। मेरे ऊपर फिलहाल कामका दुहरा दबाव है। आजतक रातके एक से पहले सो नहीं सका हूँ और आप जानते हैं कि मेरे लिए इसके क्या मानी हैं। टाँग नेकी विरासत, जो मुझे प्रिटोरिया जेलसे मिली थी, अभीतक मेरे पास है, किन्तु यह तो ही कह दिया।

हम सर रिचर्ड सॉलोमनसे मिलनेवाले हैं। उन्होंने हमारे पत्रके जवाबमें आज मिलनेका य दिया है। लॉर्ड ऍम्टहिलसे भी आज भेंट कर रहे हैं। आपको विस्तृत जानकारी देनेके श्यसे मैं यह पत्र पहलेसे ही लिखा रहा हूँ; किन्तु इसमें कल (गुरुवारको) शाम तक पूरा वरण दे सकूँगा, ऐसी आशा है। न्यायमूर्ति अमीर अलीका सर रिचर्डसे व्यक्तिगत परिचय और उन्होंने भी उनसे मिलने और इस मामलेपर बातचीत करनेका वचन दिया है। होंने एक विवरण[1] माँगा था। मैंने भेज दिया है। उसकी एक नकल आपको जो कागज जायेंगे उनमें रख दूँगा।

कुमारी विंटरबॉटमके मनमें भारतीय प्रश्न भरा हुआ है। उन्होंने उसका बहुत सही रूपमें ययन किया है। वे अब भी 'इंडियन ओपिनियन' को बहुत नियमपूर्वक पढ़ती हैं और के सम्बन्धमें उनका खयाल पहलेकी तरह ही ऊँचा है। उन्होंने हमको फिर कभी नहीं खा।[2] मेरे खयालसे इसका कारण यह था कि ट्रान्सवालकी स्थितिसे वे बहुत रुष्ट हो गई और उनको खुदपर भरोसा नहीं रहा था कि वे शान्त चित्तसे लिख सकेंगी। हाजी हबीब र मैं दोनों उनके साथ एक घंटा रहे। उनको अपने संघके कुछ अन्य सदस्योंको हमसे लाना था। उनमें एक महिला पत्रकार थी, जो बहुत प्रतिभाशाली दिखाई पड़ी। उसने डचसे विवाह किया है, जो खुद भी पत्रकार है। उसने मुझसे कहा, मैं जनरल बोथासे त बार मिली हूँ और इस बार उनसे भारतीय प्रश्नपर चर्चा करनेका खास ध्यान रखूँगी। ारी विंटरबॉटमने जलवायु बदलनेके लिए कॉर्नवाल जानेका कार्यक्रम बनाया था। उन्हें की बहुत आवश्यकता है। किन्तु फिलहाल उनकी इच्छा अपनी इस यात्राको करीब-करीब ड़ देनेकी ही हो गई है। मैंने उनसे अनुरोध किया है कि अपने कार्यक्रमको रद न करें, और न दिया है कि यदि मैं लन्दनमें उनकी उपस्थिति आवश्यक समझूँगा तो मैं उनको बुला ा। परन्तु वे बहुत ही उच्च विचारोंकी महिला हैं और मैंने कल देखा कि वे कॉर्नवाल यें या न जायें, पर इसको वे धार्मिक बुद्धिसे विचार करनेकी बात मानती हैं। आज के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण विचार यह है कि वे इस संघर्षमें सहायता कैसे दे सकती हैं। मैंने उनको बेचारे नागप्पनकी मृत्युकी खबर दी तो वे क्रोधसे लाल हो गईं। जबसे तार ला है तबसे नागप्पनका चित्र सदा मेरी आँखोंके सामने रहता है और तबसे मेरा काम भी

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. उन्होंने १९०७ में गांधीजीको पत्र लिखा था; देखिए खण्ड ७, पृष्ठ २४९।

करीब-करीब यंत्रवत् हो गया है। उस घटनाका मुझपर इतना अधिक प्रभाव पड़ा है कि मैं उसे भुला नहीं पाता। फिर भी हमारे रुखमें परिवर्तन न होना चाहिए और हमें लोगोंको यही सलाह फिर देनी चाहिए कि वे मृत्युका और यदि उससे भी भयंकर कुछ हो तो, उसका भी सामना करें। मैं आपको उस तारकी एक नकल भेज रहा हूँ, ताकि यदि आपको उसमें दी गई खबर न मिली हो तो इससे मिल जाये।

पारसी रुस्तमजी अभी जेलमें ही हैं, इसलिए बेचारे दाउद मुहम्मदको अपनी रिहाई बहुत अखरी होगी। फिर भी वे जोहानिसबर्ग लौट गये हैं और इस प्रकार घमासान युद्धके बीचमें हैं।

श्री अब्दुल कादिर यहाँ हैं। वे प्रायः होटल आते हैं; किन्तु हमारे साथ रहते नहीं हैं। जब शिष्टमण्डलके बाकी सदस्य डर्बनसे आ जायेंगे तब, मेरा खयाल है, सब इस होटलमें ही ठहरेंगे।

श्री हाजी हबीब बहुत अच्छा काम कर रहे हैं। वे सदा मुझे तत्पर बनाये रखते हैं और किसी बातको बिल्कुल भूलने नहीं देते। हममें पूरी सहमति है। मैंने आपको उनकी आँखके सम्बन्धमें लिखा था।[1] उससे उन्हें सारी यात्रामें कष्ट रहा; किन्तु अब पहलेसे बहुत आराम है, यद्यपि अब भी कुछ सूजन बाकी है।

श्रीमती रिचका तीसरा ऑपरेशन हुआ है और वह इस बार एक बहुत बड़े विशेषज्ञ सर हेनरी मॉरिसने किया है। सर हेनरीने बहुत ही सज्जनताका परिचय दिया। मैं श्रीमती रिचसे रविवारको मिला था और सारे आसार ऐसे हैं कि वे कुछ दिनोंमें पूरी तरह अच्छी हो जायेंगी। डॉ० ओल्डफील्ड[2] [मेरी निगाहसे] बिल्कुल गिर गये हैं। शल्य-चिकित्सामें वे कुशल माने जाते थे; किन्तु अब वह मान्यता भी खत्म होगई। रिचका खयाल है कि उन्होंने सब मामला बिगाड़ दिया और इसे स्वीकार करने तककी हिम्मत नहीं दिखाई। मैं जिस व्यक्तिको इतना ऊँचा मानता था उसके सम्बन्धमें यह लिखते हुए मेरा दिल दुखता है; लेकिन हमें अनेक बार अपनी धारणाएँ बदलनी पड़ती हैं। मैं केवल रिचकी अनुमतिकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ, जिससे मैं उनको सीधा लिख सकूँ या उनसे बात कर सकूँ। किन्तु श्रीमती रिच पूर्ण स्वस्थ हो जाने तक कोई कदम उठानेके विरुद्ध हैं।

डॉ० अब्दुर्रहमान पूरी शक्तिसे काम कर रहे हैं। श्री श्राइनर विलक्षण पुरुष हैं। वे डॉक्टरको बहुत बड़ी सहायता दे रहे हैं और उन्होंने आशा बिल्कुल नहीं छोड़ी है। ऑलिव श्राइनर और उनकी बहन श्रीमती लेविस दोनों केप टाउनसे मेरे रवाना होते वक्त मुझसे मिलने आये थे। डॉ० अब्दुर्रहमानने मुझे बताया है कि श्री सॉवरने उन्हें रोका था, किन्तु उन्होंने अपने सुन्दर और संस्कारी ढंगसे श्री सावरसे कह दिया कि वे मुझसे केवल हाथ मिलाना चाहती हैं। उन्होंने यह विधि एक विशाल समुदायके सम्मुख अत्यन्त सद्भावसे सम्पन्न की और दोनों बहनें कई मिनट हमारे पास रहीं। जरा कल्पना कीजिए 'ड्रीम्स' पुस्तककी लेखिकाका सत्याग्रहकी सराहना करना! मगर डॉ० अब्दुर्रहमानसे मुझे जो-कुछ मालूम हुआ है उसके अनुसार पूरा श्राइनर-परिवार ही बिल्कुल असाधारण दीखता है।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. गांधीजीके एक पुराने मित्र और शाकाहारी संघके सदस्य डॉ० जोशिया ओल्डफील्ड; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ २५।

शिष्टमण्डलके समर्थनके तार[1] इन स्थानोंसे मिले हैं:

केप टाउन	जर्मिस्टन	ग्रैहम्सटाउन
किम्बर्ले	लोरेन्सो मार्क्विस	लिखतनबर्ग
पीटर्सबर्ग	पोर्ट एलिजाबेथ	पॉचेफ्स्ट्रूम
रस्टेनबर्ग	स्टैंडर्टन	

गुरुवार

सर रिचर्ड सॉलोमनसे श्री हाजी हबीबकी और मेरी बहुत लम्बी और सन्तोषजनक मुलाकात हुई। उन्होंने सारे कानूनी पहलूको समझा और लगता था, उनकी सहानुभूति बहुत है। वे बँधना नहीं चाहते थे; किन्तु उन्होंने वचन दिया है कि वे श्री स्मट्ससे मिलेंगे और जो-कुछ कर सकते हैं वह करेंगे। फिर लॉर्ड ऍम्टहिलसे लम्बी मुलाकात हुई। उनकी मुखाकृति-पर खरी ईमानदारी, शिष्टता और सच्ची नम्रता अंकित थी। वे भूतपूर्व वाइसराय हैं। उनका विचार ऐसा एक भी कदम उठानेका नहीं है जिससे हम सहमत न हों। उनका उद्देश्य समितिसे अपने सम्बन्धके द्वारा किसी भी तरह अपना विज्ञापन करना नहीं, वरन् जिस कार्यका समर्थन कर रहे हैं उसमें उपयोगी होना है। वे यह नहीं समझ पाये कि किस अधिकारसे श्री मेरीमैन और श्री सॉवरको मिलनेके लिए बुलाया जा सकता हैं। वे भारतमें उच्चतम पदोंपर रहे हैं, और यहाँ भी सार्वजनिक कार्योंमें उनकी खासी अच्छी स्थिति है, यह सब उनको बिलकुल महत्त्वपूर्ण नहीं लगा। इस कार्यमें सहायता मिले, इसलिए वे लॉर्ड कर्ज़नसे मिलेंगे और उन्होंने मामलेको दक्षिण आफ्रिकामें जहाँ छोड़ा था वहाँसे आगे बढ़वायेंगे।[2] इस प्रकार आप देखेंगे कि हमारा काम फिलहाल परदेके पीछे ही होगा।

सर विलियम ली-वार्नर हमसे मिलनेके लिए कल होटल आ रहे हैं। श्री अमीर अलीने सर रिचर्ड सॉलोमनसे मिलनेका जिम्मा लिया है। मैंने कल 'इंडिया' के श्री कॉटनसे लम्बी बातचीत की और उन्होंने आगामी अंकमें, भारतमें आप जो करनेवाले हैं, उसकी चर्चा करनेका निश्चित वचन दिया है। मैंने सोचा कि ऐसा करना जरूरी है, ताकि 'इंडिया' के पाठक स्थितिको समझ सकें।[3]

मेरा खयाल है कि आपने डॉ० मेहताका[4] पत्र देखा था, जिसमें उन्होंने निकट भविष्यमें यूरोपको रवाना होने और अपने पुत्रको शिक्षाके लिए ले जानेका उल्लेख किया था। वे अब यहाँ आ गये हैं और इसी होटलमें ठहरे हुए हैं।

मैं आपको श्री वाडियाके नाम पत्र देना शायद भूल गया। आपको याद होगा कि वे इस प्रश्नके सम्बन्धमें बम्बईमें एक समिति बनानेवाले थे। उनसे अवसर मिलते ही जल्दीसे-जल्दी मिलना न भूलिए।

१. ये दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिके नाम थे, जिसके द्वारा इनकी नकलें १६ जुलाईको उपनिवेश-मन्त्रीको भेजी गई थीं।

२. देखिए "पत्र: लॉर्ड कर्ज़नको", पृष्ठ १७१–७४।

३. दोनों शिष्टमण्डलोंके सम्बन्धमें इंडियाके १६–७–१९०९ के अंकमें टिप्पणियाँ प्रकाशित हुई थीं।

४. गांधीजीके लन्दनके विद्यार्थी-जीवनके मित्र, डॉ० प्राणजीवन मेहता।

यदि छगनलाल वहाँ हो तो कृपया उसको पत्र दिखा दें, क्योंकि मुझे उसको विस्तृत पत्र लिखनेका अवकाश नहीं है।

मैंने कई गुजरातियोंको पत्र लिखे हैं, जिनमें श्री उमर हाजी आमद, श्री ईसा हाजी सुमार, श्री पीरन मुहम्मद और श्री एम० एस० कुवाड़िया भी हैं।[1]

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९४२) से।

१७९. ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण[2]

भारतीय शिष्टमण्डल द्वारा पेश (जुलाई, १९०९)

लन्दन
जुलाई १६, १९०९

प्रतिनिधियोंकी नियुक्ति

१. ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी एक सभा[3] पिछली १६ जूनको जोहानिसबर्गमें हमीदिया मसजिदके अहातेमें हुई थी। सभा ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा बुलाई गई थी और उसमें लगभग १,५०० भारतीय आये थे। पादरी कैनन बेरी, पादरी पेरी, श्री कैलेनबैक, डॉगल-दम्पति, श्री डैलो और अन्य यूरोपीय मित्र उपस्थित थे। वे विशेष निमंत्रणसे आये थे। ट्रान्सवालके अधिकांश भागोंसे भारतीय समितियोंने सभामें पेश किये जानेवाले प्रस्तावोंके समर्थनमें तार भेजे थे।

२. इस सार्वजनिक सभासे[4] दो दिन पहले ३०० से ज्यादा ब्रिटिश भारतीयोंकी एक सभा संघके अध्यक्षके मकानपर हुई थी। उसमें [इंग्लैंड जानेवाले] भारतीय शिष्टमण्डलके लिए प्रतिनिधियोंकी अन्तिम नामजदगी की गई। उसी समय भारत जानेवाले दूसरे शिष्ट-मण्डलके प्रतिनिधियोंके नामोंपर सभामें चर्चा हुई।[5]

१. ये पत्र उपलब्ध नहीं हैं।

२. यद्यपि इस विवरणका मूल मसविदा, जिसकी एक अप्रामाणिक प्रतिके कुछ अंश मात्र उपलब्ध हैं, जहाज-पर ही तैयार कर लिया गया था (देखिए शिष्टमण्डलकी यात्रा [–२]. . .); किन्तु गांधीजीने लन्दन पहुँचने पर इसे प्रकाशनार्थ नहीं दिया, क्योंकि वे इसे तबतक प्रकाशित करवाना नहीं चाहते थे, जबतक यह न मालूम हो जाये कि बातचीत असफल हो गई है। मसविदेमें मुख्यतः लॉर्ड ऍम्टहिलके कहनेपर कई संशोधन और परिवर्तन किए गए थे। उन्होंने लॉर्ड ऍम्टहिलके ३ अगस्तके पत्रमें दिये गये सुझावोंको ध्यानमें रखकर उसमें फेरफार किये, और उसको बढ़ाया; देखिए परिशिष्ट १४। बादमें उन्होंने इस विवरणका एक संक्षिप्त रूप भी तैयार किया था। विवरणका एक पहलेका अपूर्ण मसविदा भी उपलब्ध है। दोनों विवरण और संक्षिप्त रूप पीछे एक पुस्तिकाकी शक्लमें छापे गये थे, जिसका नाम था: **ट्रान्सवालवासी ब्रिटिश भारतीयोंके मामलेका एक संक्षिप्त विवरण (ए कन्साइज़ स्टेटमेन्ट ऑफ द ब्रिटिश इंडियन केस इन द ट्रान्सवाल)**, और शिष्टमण्डलकी दक्षिण आफ्रिकाको रवानगीसे करीब एक सप्ताह ५ नवम्बरको इससे अखबारोंके नाम लिखे पत्रके साथ प्रकाशनार्थ दिया गया था।

३. देखिए "भाषण: सार्वजनिक सभामें", पृष्ठ २५२-५३।

४. यह सभा सार्वजनिक सभासे तीन दिन पूर्व १३ तारीखको हुई थी।

५. देखिए परिशिष्ट १३।

३. हालमें हुई भारतीयोंकी ज्यादातर सभाओंमें सरकारी गुप्तचर मौजूद रहे हैं।

४. सार्वजनिक सभामें प्रतिनिधियोंके जो नाम पेश किये जानेवाले थे, वे १५ जूनके 'ट्रान्सवाल लीडर' में प्रकाशित किये गये थे।

५. इनमेंसे संघके अध्यक्ष श्री अहमद मुहम्मद काछलिया, संघके कार्यवाहक अध्यक्ष श्री इब्राहीम सालेजी कुवाड़िया, तमिल बेनिफिट सोसाइटीके अध्यक्ष श्री एस० एस० चेट्टियार और श्री नादिरशा कामा, अन्य प्रमुख भारतीयोंके सहित, एशियाई पंजीयन अधिनियम (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) का पालन न करनेपर १५ और १६ जूनको गिरफ्तार कर लिये गये।

६. सर्वश्री काछलिया और चेट्टियारको सभा होनेके दिन और सभाके घोषित समयसे पहले ही, ५० पौंड जुर्माना न देनेपर तीन मासका सपरिश्रम कारावास दे दिया गया।

७. सार्वजनिक सभा फिर भी हुई। उसमें तीन प्रस्ताव पेश किये गये, जो स्वीकार हो गये। सभामें उपस्थित १,५०० लोगोंमें से ६ ने मतभेद प्रकट किया। प्रस्ताव ये हैं:[1]

> [एक] ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिने श्री अ० मु० काछलिया, श्री हाजी हबीब, श्री वी० ए० चेट्टियार तथा श्री मो० क० गांधीको इंग्लैंड जाकर अधिकारियों तथा ब्रिटिश जनताके सामने वर्तमान एशियाई संघर्ष-सम्बन्धी सच्ची स्थितिको रखने और भावी दक्षिण आफ्रिका संघके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीयोंका दृष्टिकोण पेश करनेके लिए शिष्टमण्डलके रूपमें नियुक्त किया है। ट्रान्सवालवासी ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सभा इस प्रस्ताव द्वारा इन नियुक्तियोंकी पुष्टि करती है।
>
> [दो] ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सार्वजनिक सभा इस प्रस्ताव द्वारा सर्वश्री ए० कामा, एन० गोपाल नायडू, ई० एम० कुवाड़िया और एच० एस० एल० पोलकको भारत जाने और भारतीय अधिकारियों तथा जनताके सामने ट्रान्सवालके वर्तमान एशियाई संघर्षकी सच्ची स्थिति पेश करनेके लिए एक शिष्टमण्डलके रूपमें चुनती है।
>
> [तीन] यह सभा सर्वश्री काछलिया, कुवाड़िया, कामा और चेट्टियारकी आकस्मिक और अवांछनीय गिरफ्तारीपर सम्मानपूर्वक विरोध प्रकट करती है। सरकार अच्छी तरह जानती थी कि इससे पहलेके प्रस्तावोंमें उल्लिखित शिष्टमण्डलोंके सदस्य नियुक्त किये गये थे, या किये जानेवाले थे। यह सभा सरकारसे अनुरोध करती है कि वह उनको, वापसीकी ऐसी जमानत लेकर जो उसे मंजूर हो, इस शर्तपर रिहा कर दे कि वे अपना काम पूरा करनेपर अदालत द्वारा दी गई सजा भोग लेंगे।

८. प्रस्तावोंका सारांश तारसे सरकारको भेज दिया गया था। उत्तरमें सरकारने कहा, उसने जब ऊपर बताई गई गिरफ्तारियोंकी हिदायतें जारी कीं तब उसे यह जानकारी न थी कि गिरफ्तार किये जानेवाले भारतीयोंकी सूचीमें शामिल प्रतिनिधि आम सभा द्वारा चुन लिये जायेंगे।

९. किन्तु, सार्वजनिक सभा द्वारा रस्मी चुनावके बाद भी, और पिछले १७ जूनको, भारत जानेवाले एक प्रतिनिधि श्री गोपाल नायडू कई अन्य तमिल भारतीयोंके साथ गिरफ्तार कर लिये गये। इस प्रकार सात भारतीय प्रतिनिधियोंमें से (आठवें श्री पोलक तो अंग्रेज हैं)

१. देखिए "प्रस्ताव: सार्वजनिक सभामें", पृष्ठ २५४।

317

A CONCISE STATEMENT

OF THE

BRITISH INDIAN CASE IN THE TRANSVAAL.

Presented by

THE INDIAN DEPUTATION,

JULY, 1909.

"संक्षिप्त विवरण . . ." का मुखपृष्ठ (देखिए पृष्ठ २८७)

पाँच अधिकारियों द्वारा गिरफ्तार कर लिये गये और नीचे हस्ताक्षर करनेवाले केवल दो अपने कामपर जानेके लिए स्वतन्त्र छोड़े गये।

प्रतिनिधि कौन हैं?

१०. श्री अहमद मुहम्मद काछलिया एक ब्रिटिश भारतीय व्यापारी हैं, जो ट्रान्सवालमें १८ वर्षसे हैं। वे विवाहित हैं और अपनी पत्नी और बच्चोंके साथ जोहानिसबर्गमें रहते हैं। वे प्रिटोरियाकी मसजिदके एक न्यासी (ट्रस्टी) हैं। वे जोहानिसबर्गकी हमीदिया मसजिदके और दभेल मदरसा न्यासके भी न्यासी हैं। पिछले नौ माससे वे ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष हैं और अपने अन्तःकरणके आदेशपर तीसरी बार जेलकी सजा भुगत रहे हैं। उन्होंने जब यह देखा कि सरकार एशियाई पंजीयन अधिनियमके[1] अन्तर्गत किये गये जुर्माने वसूल करनेके लिए भारतीय व्यापारियोंका माल बेच रही है तब उन्होंने अपना माल जिन व्यापारियोंसे उधार लिया था, उन्हींको सौंप देनेकी जरूरत महसूस की। किन्तु उनके लेनदारोंने उनकी इस कार्रवाईको राजनीति [चाल] समझा और यद्यपि उनके मालसे पूरी रकमकी वसूली हो सकती थी, फिर भी उसे जब्त करवा दिया। श्री काछलियाने इस कार्रवाईका कोई विरोध नहीं किया, और उनकी जायदादसे उनके लेनदारोंका पूरा भुगतान हो चुका है, हालाँकि जबरदस्ती वसूली होनेके कारण वे लगभग कंगाल हो गये हैं।

११. श्री चेट्टियार पचास सालसे ज्यादा उम्रके एक बूढ़े आदमी हैं और अपने परिवारके साथ दस वर्षसे जोहानिसबर्गमें बसे हुए हैं। वे तमिलोंके नेता हैं और भारतीय संघर्षके सिलसिलेमें अब दूसरी बार जेल गये हैं। उनका उन्नीस वर्षीय पुत्र भी ट्रान्सवालकी एक जेलमें इसी उद्देश्यके लिए पाँचवीं बार कैद भुगत रहा है।

१२. श्री हाजी हबीब उनतीस वर्ष पहले दक्षिण आफ्रिका आये थे और तबसे कतिपय महत्त्वपूर्ण भारतीय व्यवसायोंसे उनका सम्बन्ध रहा है। उनका विवाह ट्रान्सवालमें हुआ था और वे अपने बच्चोंके साथ जोहानिसबर्गमें रहते हैं। वे प्रिटोरियाकी स्थानीय भारतीय समितिके अवैतनिक मन्त्रीका पद पिछले पन्द्रह सालसे सँभाल रहे हैं और इस सारे समयमें ट्रान्सवालके भारतीय जन-आन्दोलनोंसे उनका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। वे प्रिटोरियाकी मसजिदके स्थायी अवैतनिक मन्त्री और प्रिटोरिया अंजुमन इस्लामके अध्यक्ष हैं। वे भारतीय समाजके उस भागके सदस्य हैं जिसने सरकारसे राहत पानेकी व्यर्थ कोशिशें करनेके बाद शुरूसे ही एशियाई पंजीयन अधिनियम (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) को माना है। लेकिन इसको माननेका कारण बहुत-कुछ यह था कि समाज इसे न माननेसे होनेवाली भारी आर्थिक हानि सहनेमें असमर्थ था या सहना नहीं चाहता था। फिर भी अन्य भारतीयोंके समान उनके समाजने राहत पानेके प्रयत्न कभी शिथिल नहीं किये हैं। किन्तु श्री हाजी हबीब अब, जब कि उनके सैकड़ों देशवासी सामूहिक हितके लिए अकथनीय कष्ट भोग रहे हैं, अपनी जान और मालकी सुरक्षाका उपभोग करनेमें असमर्थ हैं। इसलिए उन्होंने प्रण कर लिया है कि यदि शिष्टमण्डलके राहत पानेके प्रयत्न असफल हुए तो वे कष्ट भोगनेवाले अन्य लोगोंके साथ मिल जायेंगे और अपने पंजीयन प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) का उपयोग न करेंगे। वे उस ब्रिटिश भारतीय समझौता समितिके[2] संस्थापक और अध्यक्ष हैं जो जून मासमें सरकार तथा अन्यायका विरोध

१. एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट।

२. ब्रिटिश इंडियन कंसिलिएशन कमिटी।

करके कष्ट भोगनवाले लोगोंमें वीच-वचाव करनेके लिए वनाई गई थी। समितिका उद्देश्य सरकारको भारतीय समाजकी वहुत ही उचित माँगें शोभनीय रूपसे स्वीकार करनेका अवसर देना और इस तरह समझौता कराना था। सरकारको एक प्रार्थनापत्र दिया गया था और पिछले १९ जूनको जनरल स्मट्ससे एक शिष्टमण्डल मिला था; किन्तु जनरल स्मट्सने कहा कि वे उन दो मुख्य मुद्दोंके सम्बन्धमें, जिनका उल्लेख आगे किया गया है, भारतीयोंकी प्रार्थना स्वीकार नहीं कर सकते।

१३. चौथे प्रतिनिधि श्री गांधी पिछले सोलह सालसे दक्षिण आफ्रिकामें वसे हुए हैं। वे इनर टेम्पलके वैरिस्टर, नेटाल सर्वोच्च न्यायालयके वकील और ट्रान्सवाल सर्वोच्च न्यायालयके अटर्नी हैं। वे ट्रान्सवालमें १९०३ से रहते और वकालत करते आ रहे हैं। वे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघके अवैतनिक मन्त्री हैं और सन् १८९३ से दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके सार्वजनिक कार्यसे उनका घनिष्ठ सम्वन्व रहा है। उन्होंने पिछली लड़ाईमें भारतीय स्वयंसेवक आहत-सहायक दल (इंडियन वॉलंटियर एम्वुलेंस कोर) के सहायक अधीक्षक (सुपरिन्टेन्डेन्ट) के रूपमें सेवा की थी[1] और जनरल वटलरके खरीतोंमें उनका उल्लेख किया गया था। पिछले जूलू विद्रोहके दिनोंमें भारतीय समाजने जो डोली-वाहक दल[2] (स्ट्रेचर वियरर कोर) संगठित किया था, उसमें भी उन्होंने काम किया था और उनको सार्जेन्ट-मेजरका पद दिया गया था। वे सन् १९०६ में ट्रान्सवालके भारतीयोंके संघर्षके सम्वन्धमें लन्दन भेजे गये शिष्टमण्डलमें श्री हाजी वजीर अलीके सह-प्रतिनिधि थे। वे इस मामलेमें तीन वार जेल भोग चुके हैं। उनका पुत्र छः महीनेकी कैदकी सजा भुगत रहा है, यद्यपि उसके पास लॉर्ड मिलनर द्वारा जारी किया गया प्रमाणपत्र है और वह ट्रान्सवालका अधिवासी है। छोटे गांधीकी यह तीसरी जेल-यात्रा है। जनवरी १९०८ के समझौतेके वाद, जिसका उल्लेख इस वक्तव्यमें आगे किया गया है, जब श्री गांधी सरकार और भारतीय समाजके वीच हुए समझौतेके सम्बन्धमें अपना कर्तव्य पूरा करनेके लिए पंजीयन कार्यालय (रजिस्ट्रेशन ऑफिस) जा रहे थे, उन-पर उनके कुछ देशभाइयोंने वुरी तरह हमला किया, क्योंकि उन्हें समझौतेपर भरोसा नहीं था और वे श्री गांधीके कार्यसे नाराज थे।

१४. यह ध्यान देने योग्य वात है कि शिष्टमण्डल भेजनेका आग्रह ज्यादातर उन्हीं ब्रिटिश भारतीयोंने किया है जो अवतक इतने कमजोर रहे हैं कि आर्थिक हानि और कारा-वासका खतरा नहीं उठा सके और इसीलिए एशियाई कानूनको माननेके लिए मजवूर हो गये हैं। किन्तु, उन्होंने प्रतिनिधियोंका पूरा खर्च अपनी इच्छासे देना स्वीकार किया है। इससे प्रकट होता है कि उनकी राहत पानेकी इच्छा कितनी तीव्र है।

संघर्षका संक्षिप्त इतिहास

१५. यह आम तौरपर मंजूर किया जाता है कि लड़ाईसे पहले ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति जितनी अच्छी थी, उसके वाद उतनी अच्छी कभी नहीं रही। टिप्पणी 'क'[3] से यह ज्यादा अच्छी तरह प्रकट हो जायेगा। ट्रान्सवालमें ब्रिटिश झंडा फहरानेके वाद उस स्थितिमें लगातार विगाड़ होता रहा है। १८८५ का कानून ३ (जिसके अन्तर्गत ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेवाले

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १५७-६० ।
२. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ३७८-८३ ।
३. देखिए पृष्ठ २९८-९९; यह लॉर्ड एम्टहिल्के सुझावके अनुसार जोड़ा गया था; देखिए परिशिष्ट १४ ।

प्रत्येक एशियाईको ३ पौंड कर देना और उसकी रसीद लेना आवश्यक होता है, एशियाई लोग वस्तियोंके सिवा सर्वत्र भू-स्वामित्वके अधिकारसे वंचित हो जाते हैं, उनका निवास ऐसी वस्तियोंमें सीमित हो जाता है, और वे नागरिक वननेके अधिकारी नहीं रहते), जिसे साम्राज्य-सरकारने गलतफहमीके कारण और उस वक्त, मंजूर कर लिया था जव वहाँ केवल तीसके लगभग भारतीय निवासी थे, विगत वोअर सरकार द्वारा कभी पूरी तरह लागू नहीं किया गया था। भारतीय व्यापारियोंके व्यापारमें कभी हस्तक्षेप नहीं किया गया था और वस्ती-सम्वन्वी नियम कभी अमलमें नहीं लाये गये थे। वस्तियोंमें जानेके लिए निकाली गई सूचनाओंकी ब्रिटिश प्रतिनिधिकी सलाहसे उपेक्षा या अवज्ञा की जाती थी और उसीकी सलाहसे भारतीय व्यापारी परवानों (लाइसेन्सों) के विना व्यापार करते थे। ऐसा करनेपर वे गिरफ्तार भी किये जाते थे, किन्तु ब्रिटिश प्रतिनिधिके हस्तक्षेप करनेपर वरी कर दिये जाते थे। भारतीयोंका प्रवेश वेरोक-टोक होता था। हाँ, उन भारतीयोंको, जो व्यापारके लिए राज्यमें वस गये थे, एक वार ३ पौंड कर देना पड़ता था, और इस प्रकार अपने नाम दर्ज कराने पड़ते थे। इसका मंशा शिनाख्ती कार्रवाई करना हर्गिज नहीं था।

१६. ब्रिटिश कब्जा होनेके वाद यह सव वदल दिया गया। १९०२ में शान्ति-रक्षा अध्यादेश (पीस प्रिज़र्वेशन ऑर्डिनेन्स) नामका एक कानून उपनिवेशकी शान्ति और सुव्यवस्थाके लिए खतरनाक लोगोंका प्रवेश रोकनेके उद्देश्यसे पास किया गया। इस अध्यादेशमें यूरोपीय और एशियाईका कोई भेद न था। यह सभीपर लागू था। किन्तु व्यवहारमें यह भारतीय प्रवासी-प्रतिवन्धक कानून (इमिग्रेशन रिस्ट्रिक्शन ऐक्ट) के रूपमें काममें लाया जाता था। एक वार १८८५ के कानून ३ को कठोरतासे लागू करनेका प्रयत्न किया गया। जव लॉर्ड रॉवर्ट्ससे राहत देनेकी प्रार्थना की गई, तो उन्होंने कहा कि पूरी तरह असैनिक शासन स्थापित होनेके वाद भारतीयोंकी स्थिति सुधर जायेगी।[1] जव असैनिक शासन शुरू हुआ तव लॉर्ड मिलनरसे निवेदन किया गया।[2] स्थानीय सरकारने कई वार स्थितिमें सुधार करनेके प्रयत्न किये; किन्तु उन्हें सफल वनानेके लिए पर्याप्त दृढ़ताका अभाव था। उपनिवेशपर नये ब्रिटिश कब्जेसे कितने ही अब्रिटिश कानूनोंको — जिनमें उतने ही अब्रिटिश एशियाई-विरोधी कानून भी हैं — खत्म करनेका सुनहरा मौका मिला था, लेकिन उसकी उपेक्षा कर दी गई, या उसे निकल जाने दिया गया। उसके वाद सुधारके जो भी प्रयत्न किये गये, सव असफल होते गये और परिणामतः ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति अधिकाधिक विगड़ती चली गई।

१७. लॉर्ड मिलनरने (१९०४ में) १८८५ के कानून ३ की एक धाराका उपयोग ("ब्रिटिश भारतीयोंकी सलाहसे") उपनिवेशके प्रत्येक एशियाईकी शिनाख्तके लिए किया और इस तरह कानूनके क्षेत्र और उद्देश्यमें परिवर्तन कर दिया। इस व्यवस्थाके अन्तर्गत और इस लिखित वादेके अनुसार कि यह शिनाख्त आखिरी होगी, उपनिवेशमें रहनेवाले लगभग प्रत्येक ब्रिटिश भारतीयने प्रमाणपत्र ले लिया, जिसमें उसका पूरा हुलिया और अँगूठेका निशान था। फिर भी उत्तरदायी शासन मिलनेसे ठीक पहले तत्कालीन उपनिवेश-सचिव श्री डंकनने (१९०६ में) एक विधेयक (विल)[3] पेश किया, जिसमें लॉर्ड मिलनरके वादेकी उपेक्षा की

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३२६।
२. वही, पृष्ठ ३२४-३१।
३. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ३९२-९३।

गई थी। उससे उक्त प्रमाणपत्र रद हो गये और प्रत्येक भारतीय और एशियाईको एक दूसरा शिनाख्ती टिकट लेना अनिवार्य हो गया। उस कानूनमें दूसरी भी कई अत्यन्त आपत्तिजनक धाराएँ थीं, जिनको यहाँ बतानेकी जरूरत नहीं है। भारतीय बहुत क्षुब्ध हुए। उन्होंने निश्चय किया कि यदि यह कानून मंजूर किया गया तो वे इसका पालन नहीं करेंगे।

१८. (१९०६ के उत्तरार्धमें) एक शिष्टमण्डल इंग्लैंड आया, लॉर्ड एलगिनसे मिला और विधेयक (बिल) नामंजूर कर दिया गया।

१९. इसके बाद (१९०७ के शुरूमें) उत्तरदायी सरकार बनी। नई संसदका करीब-करीब सबसे पहला काम उक्त कानूनको केवल एक निरर्थक शाब्दिक परिवर्तनके साथ बहाल करना था। इस परिवर्तनसे कानूनकी आपत्तिजनक धाराएँ किसी भी तरह प्रभावित नहीं होती थीं। भारतीयोंकी आपत्तियोंके बावजूद यह जल्दीसे संसदमें पास कर दिया गया और इसपर २ मार्च १९०७ को सम्राट्की स्वीकृति मिल गई। जब यह कानून श्री डंकन द्वारा पेश किया गया था, तब यह कहा गया था कि यह अस्थायी होगा और इसकी जगह एक प्रवासी कानून बनाया जायेगा।

२०. किन्तु जब एक प्रवासी विधेयक (इमिग्रेशन बिल) भी पास कर दिया गया, और उसी अधिवेशनमें पास कर दिया गया, तब यह पता चला कि उससे एशियाई-विधेयक (अब कानून) रद नहीं होता, बल्कि उसे इस विधेयकसे जोड़कर देखनेपर नतीजा यह निकलता है कि घुमा-फिराकर भारतीयोंके प्रवासका पूरा निषेध हो गया है। इसलिए इन दोनों कानूनोंके मिलनेसे औपनिवेशिक कानूनके इतिहासमें पहली बार प्रवासके सम्बन्धमें रंग या जातिके आधारपर प्रतिबन्ध लगता है। (दोनों कानूनोंको जोड़कर पढ़नेसे भारतीय प्रवासका पूरा निषेध कैसे होता है, इसके लिए देखिए टिप्पणी 'ख'।)[1]

२१. जनवरी १९०८ में एशियाई कानून (१९०७ के कानून २) की धाराओंको लागू करनेके लिए सक्रिय कदम उठाये गये। भारतीयोंने अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार उसको माननेसे इनकार कर दिया और उनके नेताओंपर मुकदमे चलाये गये तथा उनको कैदकी सजाएँ दी गईं।

२२. 'ट्रान्सवाल लीडर' के सम्पादक श्री अल्बर्ट कार्टराइटके हस्तक्षेपसे एक समझौता हुआ। यह अंशतः लिखित और अंशतः मौखिक था। भारतीयोंका कहना है कि जनरल स्मट्सने, अपनी मर्जीसे शिनाख्त करा लेनेपर, एशियाई कानून वापस ले लेने और उनकी स्वेच्छया कराई गई शिनाख्तको एक दूसरे कानूनसे कानूनी रूप दे देनेका वचन दिया था। उनके विचारसे अच्छा यह होगा कि इसके लिए प्रवासी विधेयकमें, जो अब कानून बन गया है, संशोधन कर दिया जाये। (समझौतेके विस्तृत ब्योरेके लिए टिप्पणी 'ग' देखें।)[2] भारतीयोंने अवश्य ही समझौतेका अपना दायित्व पूरा कर दिया है, और तब अधिनियमको रद करनेकी माँग की है।

२३. सरकारकी ओरसे जनरल स्मट्सका कहना है कि उन्होंने कानूनको रद करनेका कोई वचन नहीं दिया था; हालाँकि वे यह मंजूर करते हैं कि उनके और श्री गांधीके बीच उसको रद करनेके सवालपर बातचीत हुई थी। उनका कहना है कि शायद श्री गांधीको गलतफहमी हो गई है।

१ और २. देखिए पृष्ठ २९९-३००। इन्हें लॉर्ड ऍम्टहिलके सुझावोंके अनुसार जोड़ा गया था; देखिए परिशिष्ट १४।

२४. जो तथ्य सिद्ध हो चुके हैं और मान लिये गये हैं, वे ये हैं:

(क) श्री गांधीने श्री स्मट्सको उनकी अनुमतिसे (२२ फरवरी, १९०८ को) एक विधेयकका मसविदा[१] भेजा था, जिसकी एक धारासे कानून रद होता था। इसकी प्राप्ति स्वीकार की गई थी और रद करनेके प्रस्तावका कभी खण्डन नहीं किया गया।

(ख) समझौता होनेके दो दिन बाद जनरल स्मट्सने एक सार्वजनिक सभामें (६ फरवरी १९०८ को) कहा था कि "मैंने उनसे कह दिया है कि जबतक देशमें एक भी एशियाई ऐसा है जिसका पंजीयन न हुआ हो, तबतक कानून वापस नहीं लिया जायेगा" और यह भी कि "जबतक देशका प्रत्येक भारतीय पंजीयन नहीं करा लेता तबतक कानून वापस नहीं लिया जायेगा"।

(ग) असलमें जनरल स्मट्सने (१३ जून, १९०८ को) प्रवासी कानूनमें संशोधनका एक मसविदा तैयार और प्रचारित भी किया था। उससे एशियाई-कानून रद तो होता था परन्तु उसमें उन्होंने नई शर्तें रख दी थीं। उनमें से एक यह थी कि ब्रिटिश भारतीय, चाहे उनका दर्जा कुछ भी हो, निषिद्ध प्रवासी समझे जायें। उन्होंने यह शर्त लगा दी कि इन नई धाराओंको भारतीय मंजूर कर लें, तभी एशियाई कानूनको रद करनेका संशोधन पास किया जायेगा। भारतीय नई शर्तोंको मंजूर नहीं करना चाहते।

२५. संक्षेपमें, भारतीयोंने नई शर्तें नहीं मानीं, इसलिए कानून रद नहीं किया गया। ये नई शर्तें उनको मान्य नहीं थीं, क्योंकि पहली तीन शर्तोंसे उन भारतीयोंका, जो इस समय ट्रान्सवालके अधिवासी हैं, उपनिवेशमें रहनेका अधिकार छिनता था; और चौथी शर्तसे, जैसा ऊपर कहा गया है, राष्ट्रीय अपमान होता था, क्योंकि उससे ब्रिटिश भारतीयोंका, चाहे वे कितने ही सुसंस्कृत क्यों न हों, प्रवेश प्रजातीय आधारपर निषिद्ध हो जाता था। इस प्रकार यह साफ है कि कानून रद नहीं किया गया, और इसमें भारतीयोंका कोई कसूर नहीं था। जनरल स्मट्सने समझौतेकी लिखित और स्पष्ट शर्तें भी तोड़ दीं, क्योंकि यद्यपि लिखित समझौतेके अनुसार (देखिए टिप्पणी 'ग') १९०७ का कानून २ स्पष्टतः उन लोगोंपर लागू नहीं किया जाना था, जिन्होंने स्वेच्छया अपनी शिनाख्त करा ली थी; और यद्यपि उनकी शिनाख्तको एक अलग अधिनियम द्वारा कानूनी रूप दे दिया जाना था, फिर भी ऐसे भारतीयोंको १९०७ के कानून २ के अन्तर्गत लानेके उद्देश्यसे (११ अगस्त, १९०८ को[२]) एक विधेयक प्रकाशित किया गया।[३]

२६. जनरल स्मट्स द्वारा समझौतेके इस दुहरे भंगके परिणामस्वरूप भारतीयोंने (१६ अगस्त, १९०८ को) एक सार्वजनिक सभा बुलाई। उसमें उन्होंने स्वेच्छया लिये गये २,५०० प्रमाणपत्र जलाये और इस प्रकार ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि उनपर मुकदमे चलाये जा सकें। इसके फलस्वरूप शासक-वर्ग, प्रगतिवादी नेताओं और श्री गांधी तथा श्री क्विन (चीनी नेता) का एक सम्मेलन (१८ अगस्त, १९०८ को[४]) हुआ। बहुत थोड़े समयकी सूचनाके कारण संघके अध्यक्ष श्री ईसप मियाँ इसमें शामिल नहीं हो सके।

१. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ १००-०१।

२. मूलमें "७ अगस्त, १९०९" है।

३. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४४३-४५ और ४४८-४९। यह अनुच्छेद लॉर्ड ऍम्टहिलके सुझावके अनुसार फिर लिखा गया था; देखिए परिशिष्ट १४।

४. मूलमें "१९०९" दिया गया है, जो छपाईकी भूल है। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४५५।

२७. इस सम्मेलनके फलस्वरूप एक नया विधेयक पेश किया गया जिसमें स्वेच्छया पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) करानेवाले लोग एक अलग कानूनके अन्तर्गत रखे गये। कानूनको रद करनेके प्रश्नपर भी विचार किया गया; किन्तु सरकार इस प्रस्तावको सुननेके लिए तैयार नहीं थी; वह कहती थी कि कानून अमलसे बाहर समझा जायेगा। ऊँची शिक्षा पाये हुए भारतीयोंके प्रवेशके प्रश्नपर भी विचार किया गया; किन्तु प्रवासी कानूनके अन्तर्गत किसी तरहकी राहत देनेका वचन नहीं दिया गया। जनरल स्मट्सने बस इतना कहनेकी उदारता दिखाई कि ऐसे लोगोंको अस्थायी अनुमतिपत्र (परमिट) दे दिये जायेंगे।

२८. इसलिए इस सम्मेलनके परिणामपर विचार करनेके लिए (२० अगस्त, १९०८ को) एक दूसरी सार्वजनिक सभा बुलाई गई, और उसमें यह तय किया गया कि नये विधेयक (बिल) को तबतक स्वीकार न किया जाये, जबतक १९०७ का कानून २ रद नहीं किया जाता और उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंको शिक्षा-सम्बन्धी और अन्य परीक्षाएँ — चाहे वे कितनी ही कड़ी क्यों न हों — पास करनेके बाद सामान्य प्रवासी कानूनके अन्तर्गत अधिकृत तौरपर प्रवेश करनेका हक नहीं दिया जाता।[1]

२९. किन्तु सरकारने भारतीयोंकी आपत्तिके बावजूद नये विधेयकको पास कर दिया। नये विधेयकमें कुछ दोष हैं, जिनको यहाँ बतानेकी जरूरत नहीं है। वे साम्राज्य-सरकारको दिये गये एक अन्य प्रार्थनापत्रमें[2] गिनाये गये थे। उनके अलावा यह विधेयक सामान्यतः स्वीकार्य है।

प्रमुख प्रश्न

३०. नये विधेयक (बिल) से उत्पन्न कुछ छोटे-मोटे मुद्दोंके अलावा, ट्रान्सवाल सरकार और ब्रिटिश भारतीयोंके बीच प्रमुख प्रश्न ये हैं:

(१) सन् १९०७ के कानून २ को रद करना; और

(२) उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंका दर्जा।

३१. ट्रान्सवाल सरकारका कहना है कि ये दो मुद्दे स्वीकृत-जैसे ही हैं, क्योंकि —

(१) सन् १९०७ का कानून २ अमलके बाहर समझा जायेगा, और

(२) उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीय नये एशियाई विधेयककी एक धाराके अन्तर्गत अस्थायी अनुमतिपत्र (परमिट) प्राप्त कर सकते हैं, और इन अनुमतिपत्रोंको अनिश्चित समयतक बहाल रखा जा सकेगा।

३२. भारतीयोंका कहना है कि:

(१) यदि १९०७ का कानून २ अमलके बाहर समझा जायेगा तो उसको उपनिवेशकी विधान-संहिता (स्टैच्यूट बुक) में बनाये रखनेसे कोई उपयोगी उद्देश्य सिद्ध नहीं हो सकता। भारतीय (वादा-खिलाफियोंके कारण) शंकालु हो गये हैं और एक कानूनके अमल-बाहर होने और फिर भी देशके कानूनोंका भाग बने रहनेका मतलब उनकी समझमें नहीं आता। यदि कानून केवल मतदाताओंको सन्तुष्ट रखनेके लिए कायम रखा जा रहा है, तो वे चूँकि ज्यादा अक्लमन्द हैं, इसलिए उन्हें यह समझ

१. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४५६-५९।

२. देखिए "प्रार्थनापत्र: उपनिवेश-मन्त्रीको", पृष्ठ १७-२८।

सकना चाहिए कि एक कानूनको अमल-बाहर उपनिवेशकी विधान-संहितामें जगह घेरनेकी कोई जरूरत नहीं है। और अन्तिम बात यह है कि सरकारने कानूनको अमल-बाहर घोषित तो कर दिया है, *फिर भी जब-कभी सरकारको अनुकूल पड़ा है तब वह भारतीयोंके विरुद्ध अमलमें लाया जाता रहा है, और भविष्यमें भी कभी उसके अमलमें लाये जानेमें कोई रुकावट नहीं है।*

(२) यदि ट्रान्सवाल सरकार उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंको आने देनेके लिए रजामन्द है, तो वह उनको प्रवासी कानूनके अन्तर्गत भी आने दे सकती है। यदि सरकारका मंशा सब भारतीयोंको अपमानित करनेका नहीं है, तो सरकारके लिए इसका कोई महत्त्व नहीं है कि शिक्षित भारतीय एशियाई-कानूनके अन्तर्गत आते हैं या प्रवासी-कानूनके अन्तर्गत। भारतीयोंके लिए यह एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है। प्रवेशका तरीका ही उनके लिए सब-कुछ है। बीस या बीससे ज्यादा भारतीय ट्रान्सवालमें रियायतके चोर दरवाजेसे आयें और शर्तपर रिहा कैदीकी तरह सरकार जबतक चाहे तबतक उपनिवेशमें रहनेके अधिकारी हों, इसकी अपेक्षा उनको ज्यादा चिन्ता यह है कि एक ही शिक्षित भारतीय, जो उपनिवेशमें प्रवेश करे, सामान्य-प्रवासी कानूनके अन्तर्गत और अधिकारके सिंहद्वारसे प्रवेश करे।

३३. शिक्षित भारतीयोंका यह प्रश्न सबसे पेचीदा है। ब्रिटिश भारतीयोंको ट्रान्सवालमें भर देनेकी कोई इच्छा है ही नहीं। भारतीय मानते हैं कि दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश और बोअर आबादीकी प्रधानता रहनी चाहिए। किन्तु उनका कहना यह है कि उस नीतिपर अमल करके ट्रान्सवाल उपनिवेशको हमारा राष्ट्रीय अपमान न करने दिया जाये।

३४. इसके अलावा, जो भारतीय ट्रान्सवालके अधिवासी हैं, उन्हें यदि अपना सामाजिक और नैतिक स्तर ऊँचा करना है, तो अपने उच्च शिक्षा-प्राप्त भाइयोंकी सहायताकी जरूरत उन्हें पड़ेगी ही। अपनी नेकनीयती साबित करनेके लिए वे घोषित करते हैं कि यदि प्रवासी-कानूनपर ऐसा अमल भी किया जाये कि किसी वर्ष-विशेषमें कमसे-कम (जैसे छः) भारतीय आ पायें तो भी उनको आपत्ति न होगी। जहाँ वे कानूनी असमानता और कानूनी भेदभाव-पर आपत्ति करते हैं, वहाँ वे प्रशासनिक भेदभावको सहन करनेके लिए तैयार हैं। यही बात आज आस्ट्रेलियामें की जा रही है। ट्रान्सवालमें यह उपर्युक्त शान्ति-रक्षा अध्यादेश (पीस प्रिज़र्वेशन ऑर्डिनेन्स) के अन्तर्गत किया गया था। उनका यह भी निवेदन है कि यदि वर्तमान कानूनसे पर्याप्त प्रशासनिक अधिकार नहीं मिलता है तो कानूनमें अभीष्ट दिशामें संशोधन किया जा सकता है, किन्तु इस तरह नहीं कि जिससे *प्रजातीय* भेदभाव स्थायी बन जाये।

नये संविधानमें

३५. यदि ब्रिटिश भारतीयोंको अन्ततः दक्षिण आफ्रिकासे निकाल बाहर नहीं करना है या वहाँसे उनका अस्तित्व मिटा नहीं देना है तो नये संविधानके अन्तर्गत उनकी स्थिति सावधानीसे सुरक्षित करनेकी जरूरत है। उनका लगभग कोई प्रतिनिधित्व नहीं है। केप और नेटालमें उन्हें जो थोड़ा-बहुत प्रतिनिधित्व प्राप्त रहा है, उसका नये संविधानके अन्तर्गत कोई प्रभाव नहीं रहेगा। यदि साम्राज्यीय सत्ता समुचित रूपसे कायम न रखी गई तो दक्षिण आफ्रिकाका यूरोपीय संघ भारतीयोंके निहित हितोंको नष्ट कर देगा। ऑरेंज रिवर कालोनीमें भारतीयोंको

नौकर-चाकरोंके अलावा किसी अन्य रूपमें प्रविष्ट नहीं होने दिया जाता। ट्रान्सवालमें उपर्युक्त कानून तो लागू है ही, उनका अपने लिए विशेष-रूपसे निर्धारित बस्तियोंके अलावा कहीं दूसरी जगह जमीन खरीदनेका अधिकार भी छीन लिया गया है; और बस्तियोंमें जमीन खरीदनेके इस अधिकारपर भी रोक लगा दी गई है। नेटालमें उपनिवेशके परवाना कानूनके एकांगी और अत्याचारपूर्ण प्रशासनके द्वारा भारतीय व्यापारियोंको भूखों मारा जा रहा है। छोटी-मोटी शिकायतें तो दक्षिण आफ्रिका-भरमें इतनी ज्यादा हैं कि उन्हें विस्तारसे दिया नहीं जा सकता। वे भारतीयोंके दैनिक जीवनको प्रभावित करती हैं; और उन्हें लगातार यह याद दिलाकर, कि इस उपमहाद्वीपमें चमड़ेका रंग भूरा होना गुनाह है, उनका जीना प्रायः दूभर कर देती हैं। दक्षिण आफ्रिकामें कानून बनानेके पीछे साफ-साफ यह मंशा होता है कि जिस अनुपातमें यूरोपीय जातियोंकी स्वतन्त्रतामें वृद्धि की जाये, उसी अनुपातमें भारतीयोंकी स्वतन्त्रतापर प्रतिबन्ध लगाये जायें।

३६. इसलिए, साम्राज्यके खयालसे भी और भारतीय दृष्टिकोणसे भी यह बात सर्वोपरि महत्त्वकी है कि ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके प्रश्नको सन्तोषजनक रूपसे हल किया जाये। इस बातमें कोई शक नहीं कि ट्रान्सवाल दक्षिण आफ्रिकाका प्रमुख राज्य है। वह नेतृत्व करता है; अन्य राज्य उसका अनुसरण करते हैं। इसलिए यदि ट्रान्सवालके भारतीयोंसे सम्बन्ध रखनेवाले कानूनोंको दृढ़ और न्यायपूर्ण आधारपर पहले ही स्थित नहीं किया जाता, तो संघके अन्तर्गत निश्चय ही ट्रान्सवालके कानूनोंका अनुसरण किया जायेगा, और तब साम्राज्य-सरकार राहत देनेमें असमर्थ होगी।

भारतीयोंकी प्रतिज्ञा

३७. इसके अतिरिक्त, भारतीय उपर्युक्त राहत प्राप्त करनेके लिए एक गम्भीर प्रतिज्ञासे बँधे हुए हैं — भले ही इसके लिए उन्हें अनिश्चित काल तक जेल भोगनी पड़े या और भी ज्यादा कष्ट उठाना पड़े। इसके फलस्वरूप पिछले ढाई वर्षके संघर्षमें २,५०० से अधिक लोगोंको कारावास मिला और उनमें से अधिकांशका कारावास सपरिश्रम था। जेलका जीवन सर्वथा असह्य रहा है। भारतीय कैदियोंको और दक्षिण आफ्रिकी वतनियोंको एक वर्गमें और एक साथ रखा जाता है। भारतीयोंका दो तिहाई भोजन भी वही होता है जो वतनियोंका है। ट्रान्सवालमें राजनीतिक अपराध-जैसी कोई चीज ही नहीं है। भारतीय कैदियोंको, जिन्हें स्वयं जनरल स्मट्सने अन्तरात्माकी आवाजके आधारपर आपत्ति करनेवाले बताया है, बुरेसे-बुरे अपराधियोंके साथ जेलमें रखा जाता है। उनसे जैसे श्रमकी अपेक्षा की जाती है वह सामान्यतः कठोर प्रकारका होता है। जिन भारतीयोंने कभी भारी बोझा नहीं उठाया या कठोर परिश्रम नहीं किया, उनसे बुरेसे-बुरे काफिर कैदियोंके साथ-साथ भारी सामानसे लदे ठेले खींचने, गड्ढे खोदने और सड़कोंकी मरम्मत करने-जैसे काम लिये जाते हैं।

३८. अनेक भारतीय परिवार कंगाल बना दिये गये हैं। कई परिवार छिन्न-भिन्न हो गये हैं। और बहुत-से परिवार, जिनके कमाऊ सदस्य ट्रान्सवालकी जेलोंमें पड़े हैं, अब अपने दैनिक निर्वाहके लिए सार्वजनिक दानपर निर्भर हैं।

३९. कुछ समयसे सरकारने पुर्तगाली अधिकारियोंके साथ एक गुप्त समझौता करके उन लोगोंको, जो एशियाई कानूनकी धाराओंका पालन नहीं करते और जिनके विरुद्ध कानूनकी निर्वासन-सम्बन्धी धाराओंके अन्तर्गत कार्रवाई की जा सकती है, भारतको निर्वासित करना आरम्भ

कर दिया है। इस कार्रवाईसे बालक अपने माता-पिताओंसे अलग कर दिये गये हैं; और दक्षिण आफ्रिकामें उत्पन्न लड़कोंको, जिनके लिए भारत विदेश है, बिना एक पाईके भारत भेज दिया गया है। और, यद्यपि लॉर्ड क्रू ने इस बातका खण्डन किया है कि ट्रान्सवालके अलावा अन्य दक्षिण आफ्रिकी उपनिवेशोंके अधिवासी भी निर्वासित किये जाते हैं, फिर भी ऐसी घटना कमसे-कम एक तो हुई ही है। उक्त मामलेमें एक भारतीयको निर्वासित करके भारत भेज दिया गया है, यद्यपि उसमें शैक्षणिक योग्यता थी तथा वह इस कारण नेटाल या केपमें रह सकता था और उसको डेलागोआ-बेका अधिवास भी प्राप्त था।

४०. ये हैं वे साधन जिनका प्रयोग सरकार प्रतिज्ञावद्ध भारतीयोंको अपनी इच्छाके अनुकूल झुकानेके लिए कर रही है। यद्यपि इन प्रयत्नोंमें वह अंशतः सफल हो गई है, लेकिन अभी ऐसे लोगोंकी खासी बड़ी संख्या शेष है जिनमें कमजोरीके कोई लक्षण नहीं दिखाई देते। उनमें एक तो श्री दाउद मुहम्मद हैं, जो मुसलमानोंमें सबसे ज्यादा प्रभावशाली हैं, और दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके निर्विवाद नेता हैं। उनकी उम्र पचास सालसे अधिक है, और वे वर्षोंसे ट्रान्सवालके निवासी हैं। दूसरे मान्य नेता हैं श्री पारसी रुस्तमजी। वे एक अत्यन्त प्रमुख पारसी हैं। उन्होंने (दूसरे धर्मोंके बच्चों तक की) शिक्षाके लिए सैकड़ों पौंड खर्च किये हैं। ये दोनों सज्जन छः मासका सपरिश्रम कारावास भोग रहे हैं। दो भूतपूर्व सार्जेंट भी, जिन्होंने गत जूलू-विद्रोहमें काम किया था और जिन्हें तत्सम्बन्धी पदक प्राप्त हुए हैं, उतने ही दिनोंकी कैद भुगत रहे हैं। इस समय अन्तरात्माकी पुकारपर आपत्ति करनेवाले लगभग एक सौ व्यक्ति जेल काट रहे हैं, और इनमें से अधिकतर इस संघर्षमें एकाधिक बार जेल जा चुके हैं।

यूरोपीय कमेटी

४१. भारतीयोंके कष्टोंमें उनके प्रति सहानुभूतिसे प्रेरित होकर और उनके उद्देश्यके औचित्यमें विश्वास करते हुए जोहानिसबर्गके कतिपय प्रमुख यूरोपीयोंने उन्हें राहत दिलानेके लिए अपनी एक समिति बनाई है। इस समितिके अग्रणी हैं विधानसभाके सदस्य श्री विलियम हॉस्केन। समिति इस मामलेमें सरगर्मीसे काम कर रही है।

उपसंहार

४२. अब निवेदन यह है कि जनरल स्मट्स द्वारा किये गये वादेके अलावा, दोनों भारतीय माँगें तत्वतः न्यायसंगत हैं; उनको स्वीकार करना सरकारके लिए कठिन नहीं है; और उनको स्वीकार करानेके लिए ट्रान्सवालके भारतीयोंने एक लम्बे अर्सेतक निरन्तर दुःख झेला है। इन स्थितियोंमें वे अनुभव करते हैं कि उनकी प्रतिज्ञाकी रक्षा की जानी चाहिए और अगर साम्राज्य-सरकार विदेशोंमें ब्रिटिश प्रजाजनोंकी रक्षा करना चाहे तो स्वशासित उपनिवेशोंकी इच्छाओंका खयाल रखनेकी बात उसमें आड़े नहीं आनी चाहिए — विशेषतः तब, जबकि इन प्रजाजनोंको प्रतिनिधित्व न प्राप्त हो, जैसा कि इस मामलेमें है।[1]

१. अपने मूल रूपमें यह अनुच्छेद ऐसा नहीं था। उसमें लॉर्ड ऍम्टहिलके सुझावपर, जो उन्होंने अपने ४ अगस्तके पत्रमें दिया था, संशोधन कर दिया गया था। पत्रमें उन्होंने सलाह दी थी कि "यह कहनेसे हमें साम्राज्य-सरकारका सद्भाव प्राप्त नहीं होगा कि वह 'अपने कर्तव्यसे भागती रही' है, चाहे इस बातमें कितनी भी सचाई क्यों न हो। और अब स्थिति ऐसी आ गई है कि हमें उसका सद्भाव प्राप्त करना ही है। यह कहें तो कैसा रहे कि अगर साम्राज्य-सरकार उपनिवेशोंमें ब्रिटिश प्रजाजनोंकी रक्षा उसी तरह करना चाहे जिस तरह वह विदेशोंमें करती है तो औपनिवेशिक स्वशासनके प्रति आदर-भाव उसमें आड़े नहीं आता?"

वक्तव्यकी पाद-टिप्पणी

उपर्युक्त विवरण तैयार करनेके बाद प्रतिनिधियोंको एक तार मिला है, जिससे ज्ञात होता है कि नागप्पन नामक एक भारतीय युवक, जिसे गत २१ जूनको संघर्षके सिलसिलेमें दस दिनका सपरिश्रम कारावास दिया गया था, ३० जूनको मरणासन्न अवस्थामें जेलसे रिहा किया गया और वह ६ जुलाईको चल बसा। तारके अनुसार आरोप ये हैं कि कड़ाकेकी सर्दी पड़ रही थी; जो कम्बल दिये गये थे वे अपर्याप्त थे, वतनी वार्डरोंने पाशविक व्यवहार किया; और चिकित्सा-सम्बन्धी सुविधा उपलब्ध नहीं हुई। उसी तारमें आगे कहा गया है कि दक्षिण आफ्रिकाके एक प्रमुख भारतीय — श्री दाउद मुहम्मदको, जिनकी उम्र पचास वर्षसे अधिक है और जो छः मासका कारावास भोग रहे थे, बीमारीके कारण छोड़ दिया गया। तारकी तारीख १२ जुलाई है, और अगर उन्हें नागप्पनकी मृत्युके बाद छोड़ा गया हो तो वे पाँच महीनेकी सजा पूरी कर चुके थे।

टिप्पणी 'क'

बोअर शासनके अधीन	ब्रिटिश साम्राज्यमें मिलाये जानेके बाद
एशियाई स्वतन्त्रतापूर्वक गणराज्यमें प्रवेश कर सकते थे, और १८८५ के बाद ३ पौंड देकर वहाँ निवास और व्यापार कर सकते थे।	केवल उन्हीं एशियाइयोंको फिर प्रवेश करने दिया गया है जो यह सिद्ध कर सके हैं कि वे युद्धसे पहले यहाँ रहते थे।
(१८८६में संशोधित) १८८५ के कानून ३ द्वारा अपेक्षित "पंजीयन" (रजिस्ट्रेशन) में हुलिया देना शामिल नहीं था। उसमें ३ पौंडी शुल्कका भुगतान करने और भुगतानकी रसीद रखनेकी ही बात थी।	लॉर्ड मिलनरकी सलाहके अनुसार एशियाइयोंने १९०३में जो "पंजीयन" स्वेच्छासे स्वीकार किया था उसमें पूरा हुलिया देना शामिल था।
	१९०७ के कानूनके अन्तर्गत पुनः — पंजीयन कराना अनिवार्य और तफसीलके लिहाजसे ज्यादा अपमानजनक है। यह आठ बरस और इससे अधिक आयुके सब बच्चोंपर लागू होता है। पुनः-पंजीयन न करानेपर जुर्माना, कैद और देश-निकाला हो सकता है। (१९०८ के कानून ३६ के जरिये अब इसमें परिवर्तन किया जा चुका है।)
एशियाइयोंको नागरिक (बर्गर) के अधिकार नहीं दिये गये थे।	एशियाइयोंको, जिनमें ब्रिटिश भारतीय भी शामिल हैं, नगरपालिकाके अधिकारों और राजनीतिक अधिकारों, दोनोंसे वंचित रखा गया है।
एशियाई बस्तियोंको छोड़कर अन्यत्र एशियाई अचल सम्पत्ति नहीं रख सकते थे।	यह स्थिति आज भी कायम है।

एशियाइयोंको उनके लिए विशेष रूपसे नियत गलियों, मुहल्लों और बस्तियोंमें हटाया जा सकता था।

एशियाई, जिनमें ब्रिटिश भारतीय भी शामिल हैं, आज भी ऐसे प्रतिबन्धके भागी हैं, और उनके अलग किये जानेका खतरा मौजूद भी है।

उपर्युक्त निर्योग्यताएँ थोपनेवाला कानून ३ यद्यपि लगभग अनिवार्य था, फिर भी ब्रिटिश भारतीयोंको महामहिम सम्राट्की सरकारका संरक्षण प्राप्त था।

उपनिवेशको साम्राज्यमें मिलानेके बाद, और विशेषतः उत्तरदायी शासन देनेके बाद, ब्रिटिश भारतीय साम्राज्य-सरकारका संरक्षण प्राप्त करनेमें असमर्थ रहे हैं।

ब्रिटेनके जिम्मेदार मन्त्री ब्रिटिश भारतीयोंके लिए साम्राज्यकी सभ्य प्रजाकी बराबरीके अधिकार दिये जानेकी माँग करते थे। ब्रिटेनकी सरकारने ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको उनके उचित अधिकार वापस दिलानेका वचन दिया था।

ब्रिटिश सरकारने इस उपनिवेशके साम्राज्य-में मिलाये जानेसे पहले यहाँ रहनेवाले उन्हीं भारतीयोंको अब प्रत्यक्षतः व्यापारी प्रतिस्पर्धियोंके और उस सरकारके अत्याचारोंके लिए छोड़ दिया है जिसके अधिकांश विधायक वे लोग हैं जो १८८५ के कानून ३ की रचनाके लिए जिम्मेदार थे।

बोअर कानूनके विरुद्ध भारतीयोंकी आपत्तियोंका साम्राज्य-सरकारने समर्थन किया था, और बोअर गणतन्त्रका यह आग्रह कि उसे अपने राज्यकी सीमाओंमें रहनेवाले एशियाइयोंके विरुद्ध मनमाने ढंगसे कानून बनानेका अधिकार है, युद्धका मुख्य एक कारण था।

अब साम्राज्य-सरकारके कारगर संरक्षणके अभावमें ब्रिटिश भारतीय सत्याग्रहका सहारा लेनेको विवश हो गये हैं, जिसके फलस्वरूप उनमेंसे २,५०० लोगोंको कैदकी सजा हुई है और अन्य कष्ट उठाने पड़े हैं।

आम तौरपर, यद्यपि सिद्धान्तरूपमें ब्रिटिश भारतीयोंपर उपर्युक्त निर्योग्यताएँ लागू थीं, फिर भी अमलमें कानूनको सख्तीसे लागू नहीं किया जाता था।

ब्रिटिश भारतीयोंकी स्वतन्त्रतापर बहुत कड़ाईसे प्रतिबन्ध लागू किये गये हैं, और १८८५ के कानून ३ में दण्ड-सम्बन्धी धाराकी अनुपस्थितिसे ही उस कानूनके अत्यन्त बुरे परिणामोंसे भारतीयोंकी रक्षा हुई है।

टिप्पणी "ख"

एशियाई विधेयक (एशियाटिक बिल) के अनुसार उपनिवेशके हर एशियाईको शिनाख्ती टिकट लेना चाहिए, और इसमें ऐसे एशियाईकी परिभाषा भी दी गई है, जिसे यह टिकट प्राप्त हो सकता है। परिभाषामें कहा गया है कि वही एशियाई इसका पात्र है जो इस कानूनके पास होनेसे पहलेसे ट्रान्सवालका अधिवासी हो। विधेयकमें आगे विधान किया गया है कि ऐसे हर एशियाईपर, जो इसके अयोग्य माना जाये, निष्कासनकी आज्ञा लागू होती है।

प्रवासी विधेयकसे, अन्य बातोंके साथ, ऐसा कोई भी व्यक्ति, जिसपर निष्कासनकी आज्ञा लागू होती है, निषिद्ध प्रवासी हो जाता है। तब, एक शिक्षित भारतीय भी, जो एशियाई विधेयकके पास होनेसे पहले उपनिवेशका अधिवासी नहीं रहा, शिनाख्ती टिकट प्राप्त करनेका अधिकारी नहीं है, और इसलिए उसपर निष्कासनकी आज्ञा लागू होती है और इस प्रकार वह प्रवासी विधेयकके अन्तर्गत निषिद्ध प्रवासी है।

टिप्पणी "ग"

लिखित समझौता इस प्रकार था:

१. ब्रिटिश भारतीयोंको स्वेच्छासे अपनी शिनाख्त करवा लेनी चाहिए।

२. १९०७ का कानून २ ऐसे ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू नहीं होना चाहिए, और स्वेच्छासे कराई गई शिनाख्तको एक अलग कानून द्वारा वैध रूप दे देना चाहिए।

शर्तें २८ जनवरी १९०८[1] को ट्रान्सवाल उपनिवेश-सचिवके नाम लिखे गये सर्वश्री गांधी, क्विन तथा नायडूके पत्रमें दी गई हैं। पत्रकी प्राप्तिके दो दिन बाद श्री गांधीको, जो तब एक कैदी थे, समझौतेपर उपनिवेश-सचिव (श्री स्मट्स) के साथ बातचीत करनेके लिए प्रिटोरिया ले जाया गया, और उसके बाद आगे और विचार किया गया। श्री गांधीके वक्तव्यके अनुसार इन मुलाकातोंमें श्री स्मट्सने वादा किया कि जब एशियाई समझौतेके सम्बन्धमें अपना दायित्व पूरा कर देंगे, अर्थात्, स्वेच्छासे अपनी शिनाख्त करवा लेंगे, तब (१९०७ का दूसरा) एशियाई कानून रद कर दिया जायेगा।[2]

छपी हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१८०) से।

१८०. लन्दन

[जुलाई १६, १९०९ के बाद]

सर कर्ज़न वाइलीकी हत्या

"शिष्टमण्डलकी यात्रा" शीर्षकके अन्तर्गत शिष्टमण्डलके कार्यके सम्बन्धमें जितने समाचार दिये जा सकते थे, उतने दिये जा चुके हैं। इस शीर्षकके अन्तर्गत अब दूसरी जानने लायक खबरें दे रहा हूँ।

सर कर्जन वाइली और डॉक्टर लालकाकाकी हत्या हुई, यह एक भयंकर काम हुआ है। सर कर्ज़न वाइली भारतके विभिन्न स्थानोंमें अधिकारी रहे थे। यहाँ वे लॉर्ड मॉर्लेके अंगरक्षक थे। डॉक्टर लालकाका एक पारसी डॉक्टर थे और चीनके शंघाई नगरमें अपना धन्धा करते थे। वे यहाँ कुछ दिनोंके लिए ही आये थे।

१. मूलमें "२६ जनवरी १९०८" है जो छपाईकी भूल है; देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ३९-४१।

२. एक टिप्पणी 'घ' और थी; किन्तु वह छापी नहीं गई थी; देखिए "पत्र: लॉर्ड एॅम्टहिलको", पृष्ठ ३३४।

जुलाई २ को इम्पीरियल इन्स्टिटयूटके जहाँगीर भवनमें राष्ट्रीय भारतीय संघ (नेशनल इंडियन एसोसिएशन) की ओरसे नाश्ता-पानीका आयोजन किया गया था। यह समारोह ब्रिटेनमें पढ़नेवाले भारतीय छात्रोंका अंग्रेजोंसे सम्पर्क करानेके उद्देश्यसे किया जाता है, इसलिए इसमें जो भी अंग्रेज आते हैं वे भारतीयोंके मेहमान ही कहे जायेंगे। इस दृष्टिसे श्री कर्ज़न वाइली हत्यारेके मेहमान थे। इस प्रकार श्री मदनलाल धींगराने अपने ही घरमें अपने मेहमानकी हत्या की; और बीचमें आनेवाले डॉक्टर लालकाका का भी खून किया।

सर कर्ज़न वाइलीकी हत्याके समर्थनमें यह तर्क दिया जाता है कि अंग्रेजोंके कारण ही भारत बर्बाद हुआ है। यदि जर्मनी इंग्लैंडपर चढ़ाई करे तो जैसे अंग्रेज जर्मनोंको मार डालेंगे वैसे ही प्रत्येक भारतीयको अंग्रेजोंको मारनेका अधिकार है।

इस हत्याके सम्बन्धमें प्रत्येक भारतीयको ठंडे दिलसे विचार करना है। इससे भारतकी बहुत हानि हुई है। शिष्टमण्डलके कामको भी बहुत-कुछ धक्का पहुँचा है। किन्तु इस दृष्टिसे विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है। विचार अन्तिम स्थितिपर करना है। श्री धींगराकी सफाई निकम्मी है। यह काम हमारे विचारसे कायरताका है। फिर भी उनके ऊपर तो दया ही आती है। उन्होंने निकम्मा साहित्य ऊपर-ऊपर पढ़कर यह काम किया है। उन्होंने अपने बचावका बयान भी रट रखा था, ऐसा जान पड़ता है। दण्ड तो उनको सिखानेवालेको देना चाहिए। मैं उनको निर्दोष मानता हूँ। हत्या नशेमें किया गया कार्य है। नशा केवल शराब या भाँगका ही नहीं होता, किसी पागलपन-भरे विचारका भी हो सकता है। श्री धींगराका नशा ऐसा ही था। जर्मनों और अंग्रेजोंका उदाहरण गलत है। जर्मन चढ़ाई करें तो अंग्रेज चढ़ाई करनेवालोंको ही मारेंगे। वे ऐसा तो नहीं करेंगे कि किसी भी जर्मनको जहाँ देखें वहाँ मार डालें। इसके अलावा वे जर्मनोंको छुपकर नहीं मारेंगे। यदि जर्मन किसीका मेहमान होगा तो उसको नहीं मारेंगे। यदि मैं बिना चेतावनी दिये अपने ही घरमें उस व्यक्तिको मार डालूँ, जिसने मेरा कोई अपराध नहीं किया है, तो मैं कायर ही माना जाऊँगा। अरब लोगोंमें यह एक अच्छी प्रथा है कि वे अपने घरमें दुश्मन भी हो तो उसको नहीं मारते। वे अपने शत्रुको तभी मारेंगे जब वह उनके घरसे बाहर निकल जाये और वे उसको हथियार उठानेकी चेतावनी दे दें। जो लोग यह मानते हैं कि मार-काटसे भलाई होती है, वे उस नियमकी रक्षा करके मार-काट करेंगे तो वीर माने जायेंगे। बाकी तो डरपोक ही माने जायेंगे। कुछ लोग कहेंगे कि श्री धींगराने जो यह काम किया वह खुल्लमखुल्ला और यह समझ कर किया है कि उनको तो जान देनी ही पड़ेगी, इसलिए यह कोई मामूली बहादुरी नहीं मानी जा सकती। किन्तु मैं पहले बता चुका हूँ कि नशेमें मनुष्य ऐसा काम कर सकता है और मृत्युका भय भी छोड़ सकता है। इसमें बहादुरी तो नशेकी हुई, मनुष्यकी नहीं। मनुष्यकी बहादुरी तो दीर्घ काल तक बहुत दुःख सहन करनेमें है। जो कार्य विवेकपूर्वक किया जाता है वही बहादुरीका काम माना जाता है।

मुझे कहना चाहिए कि जो लोग ऐसी हत्याओंको भारतके लिए लाभप्रद मानते हैं वे नासमझ हैं। धोखाधड़ीके कामोंसे लोगोंको लाभ नहीं होता। ऐसी हत्याओंसे, कदाचित्, अंग्रेज भारतसे चले जायेंगे। लेकिन इसके बाद राज्य कौन करेगा? इसका उत्तर यही होता है कि हत्यारे ही राज्य करेंगे। तब सुख कौन भोगेंगे? क्या अंग्रेज केवल इसीलिए बुरे हैं कि वे अंग्रेज हैं? क्या जिनकी चमड़ी भारतीयोंकी-जैसी है, वे सब अच्छे ही हैं? बात ऐसी हो, तो

470

दक्षिण आफ्रिकामें हमारा कोई अधिकार ही नहीं है। ऐसा हो तो देशी राजाओंके अत्याचारोंके विरुद्ध इतना शोर होना ही नहीं चाहिए। हत्यारे — चाहे वे काले हों या गोरे — भारतमें राज्य करेंगे तो उससे कोई लाभ नहीं होगा। ऐसे राज्यमें भारत वीरान और नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा। इससे बहुत-से विचार उत्पन्न होते हैं। किन्तु मुझे उनको यहाँ लिखनेका समय नहीं है। मुझे डर है कि कुछ भारतीय इन हत्याओंकी सराहना करेंगे। मेरे विचारसे वे महापाप करेंगे। ऐसी समझ छोड़ देनी चाहिए। विशेष बादमें।

"सफ्रेजिस्ट"[1]

इंग्लैंडकी महिलाओंके मताधिकारके लिए लड़नेवाली स्त्रियाँ गजब कर रही हैं। वे किसी तरहके दुःखसे नहीं डरती हैं। उनमें से कितनी ही स्त्रियाँ बीमार पड़ गई हैं, फिर भी लड़ना नहीं छोड़तीं। कितनी ही स्त्रियाँ श्री एस्क्विथको अपना आवेदनपत्र देनेके विचारसे रोज रात-रात-भर संसद-भवनके द्वारपर खड़ी रहती हैं। यह कुछ कम वीरता नहीं है। कितना प्रबल होगा उनका विश्वास? बहुत-सी स्त्रियाँ इस आन्दोलनमें बर्बाद हो गई हैं और होती जा रही हैं। किन्तु वे अपनी लड़ाई बन्द नहीं करतीं। यह लड़ाई हमारी लड़ाईसे पुरानी है। हम इससे बहुत-कुछ नसीहत और हिम्मत ले सकते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–८–१९०९

१८१. पत्र : लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

लन्दन, एस० डब्ल्यू०
जुलाई २०, १९०९

निजी सचिव
उपनिवेश-मन्त्री

महोदय,

दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति (साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी) के मन्त्री श्री रिच परम माननीय उपनिवेश-मन्त्रीको ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे एक शिष्टमण्डलके आनेकी सूचना दे चुके हैं।

इसमें प्रिटोरियाके व्यापारी और वहाँकी अंजुमन इस्लामियाके अध्यक्ष श्री हाजी हबीब और मैं — दो प्रतिनिधि हैं। अन्य प्रतिनिधि[2] रवाना होनेसे पहले एशियाई पंजीयन अधिनियम (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिये गये थे और अब जेलमें हैं।

मेरे साथीने और मैंने जानबूझ कर लॉर्ड महोदयसे मुलाकात नहीं माँगी है, क्योंकि हम इस वक्त साम्राज्य-सरकारको कष्ट दिये बगैर उस कठिन समस्याका समाधान प्राप्त करनेका प्रयत्न कर रहे हैं, जिसको लेकर हम यहाँ आये हैं। लेकिन चूँकि दक्षिण आफ्रिकी अधिनियमके

१. इंग्लैंडमें स्त्रियोंके संसदीय मताधिकारके लिए लड़नेवाली स्त्रियाँ।
२. अ० मु० काछलिया और वी० ए० चेट्टियार; देखिए पृष्ठ २८९।

मसविदे (साउथ आफ्रिकन ड्राफ्ट ऐक्ट) के सम्बन्धमें बुलाया गया सम्मेलन आज शुरू हो रहा है, इसलिए हम लॉर्ड महोदयका ध्यान इस तथ्यकी ओर खींचना वांछनीय समझते हैं कि ट्रान्सवालके भारतीयोंके प्रश्नसे उस उपनिवेशमें बसे ब्रिटिश भारतीयोंको अकथनीय कष्ट हुआ है और ब्रिटिश भारतीय नेताओंको उसके कारण अब भी गहरी चिन्ता है।

फिलहाल हम इस प्रश्नपर सार्वजनिक विवादसे बचना चाहते हैं, ताकि गैर-सरकारी रूपसे समझौता करनेमें आसानी हो। इसलिए यदि लॉर्ड महोदय हम लोगोंको इस गरजसे कि हम उनके सामने अबतककी पूरी स्थिति रख सकें, व्यक्तिगत मुलाकातके लिए समय देनेका अनुग्रह करेंगे, तो हम अत्यन्त आभारी होंगे।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स : २९१/१४२; तथा टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९५१) से।

१८२. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
जुलाई २१, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं आपके इसी २० तारीखके पत्रके लिए आपका बहुत ही आभारी हूँ। मुझे बहुत दुःख है कि मेरे पत्रपर[1] ठीक पता न था। बात यह है कि मेरे पास पतोंकी एक विशेष सूची है, जो शिष्टमण्डलके पिछली बार यहाँ आनेके समय तैयार की गई थी। कुमारी पोलकने, जिनके लिए यह काम अभीतक नया है, सूची-पुस्तिकाको देखा और आपके नामके सामने जो तीन पते दिये थे, उनमें से पहला पता लिख लिया। वह एक निर्देशिकामें से लिया गया था। बेडफोर्डका पता सूचीमें तीसरे स्थानपर था; मगर चूँकि काम कुछ व्यस्तताकी अवस्थामें किया गया है, इसलिए उन्होंने जल्दबाजीमें पहला पता दे दिया और इसी वजहसे यह गलती हो गई।

मैं आपसे सहमत हूँ कि श्री मेरीमैनका पत्र[2] उत्साह भंग करनेवाला है। साथ ही, मैं समझता हूँ कि यदि आप किसी प्रकार दक्षिण आफ्रिकी राजनीतिज्ञोंके व्यक्तिगत सम्पर्कमें आ सकें तो यह बात दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति (साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी) के अध्यक्षके रूपमें आप साम्राज्यके हितका जो कार्य कर रहे हैं उसके सम्बन्धमें आगे कार्रवाई करनेकी दृष्टिसे लाभप्रद होगी।

१. गांधीजीने १४ जुलाईको लॉर्ड ऍम्टहिलसे भेंट की थी। जान पड़ता है, यह पत्र उसके बाद लिखा गया था, जो उपलब्ध नहीं है।

२. देखिए "पत्र : एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३०५-०६।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि संघके अधीन ब्रिटिश भारतीयोंको समस्त दक्षिण आफ्रिकामें भारी संकटका सामना करना पड़ेगा।

मैंने माननीय सॉवरको भी पत्र लिखा था[1]; उन्होंने उसका कोई उत्तर नहीं दिया है। इससे मैं खयाल करता हूँ कि उनका रुख अब भी वही है जो जहाजमें था।

आपने सर डब्ल्यू० ली-वार्नरसे मिलना स्वीकार किया है, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। आपके मूल्यवान समयपर कितना भार है, इसको मैं भली भाँति समझ सकता हूँ। इसलिए जो लोग आपको जानते हैं कि उन सबके लिए और मेरे साथी तथा मेरे लिए यह कृतज्ञतामय सन्तोषकी बात है कि आप अपने अनेक कर्तव्योंका पालन करते हुए भी ट्रान्सवाल और दक्षिण आफ्रिकाके अन्य भागोंके ब्रिटिश भारतीयोंके प्रश्नपर इतना ध्यान देनेका समय निकाल लेते हैं।

मैंने अर्ल ऑफ क्रू के निजी सचिवको एक पत्र[2] लिख दिया है, जिसमें उनसे व्यक्तिगत भेंटके लिए समय माँगा है। ऐसा ही एक निवेदनपत्र लॉर्ड मॉर्लेके निजी सचिवको भी भेजा है।[3]

लॉर्ड महोदयका आज्ञाकारी सेवक,

लॉर्ड ऐम्टहिल, जी०सी०एस०आई०, जी०सी०आई०ई०
कर्ज़न होटल
कर्ज़न स्ट्रीट, डब्ल्यू०

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९५३) से।

१८३. पत्र: 'साउथ आफ्रिका' को

[लन्दन]
जुलाई २२, १९०९

महोदय,

ताजे अंकके अपने सम्पादकीयमें आप कहते हैं:

श्री गांधी, जिनकी शोहरत पूरे नेटाल और ट्रान्सवालमें है, स्वीकार करते हैं कि उनका और उनके साथियोंका आन्दोलन इंग्लैंडमें [उसके प्रति] सहानुभूति रखनेवालोंकी मर्जीसे चलाया जायेगा। प्रसंगवश कहना पड़ता है कि इन सहानुभूति रखनेवालोंके नाम दुर्भाग्यसे भारतके उस भयंकर आन्दोलनसे सम्बद्ध हैं जो पिछले कुछ दिनोंमें भयावह रूपसे सामने आया है।

मैं उत्तरमें निवेदन करना चाहता हूँ कि मैंने रायटरके प्रतिनिधिसे जो कहा था[4] सो तो यह है कि हमारा आन्दोलन लॉर्ड ऐम्टहिल और उनकी समितिकी सलाहके अनुसार चलेगा।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
२. देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ३०२-०३।
३. यह उपलब्ध नहीं है।
४. देखिए "भेंट: रायटरके प्रतिनिधिको", पृष्ठ २७९।

लॉर्ड ऍम्टहिल और उनके सहयोगियोंके उस आन्दोलनसे सम्बद्ध होनेकी खबर मुझे नहीं है, जिसे आप "भारतका भयंकर आन्दोलन"[1] कहते हैं। इसके सिवा, अनाक्रामक प्रतिरोधियों-पर अपने अन्तःकरणके अतिरिक्त किसी औरकी मर्जी नहीं चलती। वे न्यायतः जिस बातके अधिकारी हैं, उसे हस्तगत करनेके लिए शपथ-बद्ध हैं, और उसे पानेके लिए व्यक्तिगत कष्टोंको किसी भी सीमा तक सहन करनेके लिए तैयार हैं — मृत्यु भी इस सीमाके बाहर नहीं है। सच्चे सत्याग्रहकी कसौटी अपना बलिदान है, दूसरोंका नहीं।

[आपका, आदि,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २१-८-१९०९

१८४. पत्र: एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
जुलाई २२, १९०९

प्रिय हेनरी,

मुझे कोई बहुत अचरजका समाचार नहीं देना है। श्री अमीरअली, जो सर रिचर्डसे मिले थे, कल होटल आये थे और कुछ आशान्वित दिखाई देते थे। सर विलियम ली-वार्नर और श्री मॉरिसन[2] भी होटल आये थे; परन्तु वे केवल सच्ची स्थिति समझना चाहते थे।

मैं इसके साथ लॉर्ड ऍम्टहिलके एक पत्रकी नकल भेज रहा हूँ। पत्र काफी स्पष्ट है। मैंने उपनिवेश-मन्त्रीसे और भारत-मन्त्रीसे भी व्यक्तिगत भेंटकी प्रार्थना की है। आजके 'मॉर्निंग पोस्ट' में इस आशयका एक वक्तव्य प्रकाशित हुआ है कि भेदभावपूर्ण एशियाई कानूनका नियन्त्रण गवर्नर जनरल और परिषदके हाथोंमें होगा, प्रान्तीय परिषदोंके हाथोंमें नहीं। मैं नहीं जानता कि इसका अर्थ क्या है; इसका अर्थ बहुत-कुछ भी हो सकता है और कुछ भी नहीं हो सकता।

श्री मेरीमैन, जिनके पत्रका उल्लेख लॉर्ड ऍम्टहिलने किया है, कहते हैं कि वे इस इच्छाको प्रकट कर देनेके अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकेंगे कि दक्षिण आफ्रिकी राजनयिक जिन उदार सिद्धान्तोंको माननेका दावा करते हैं उनके विपरीत कोई कानून न बनाया जाना चाहिए। हम स्टेडसे[3] मिल चुके हैं। उन्होंने भी जनरल स्मट्ससे मिलनेका वादा किया है। हम दूसरे जिन लोगोंसे मिले हैं उनके नाम देकर आपको परेशान करनेकी जरूरत नहीं है। जब यह पत्र आपके पास पहुँचेगा, तबतक व्यक्तिगत बातचीतका परिणाम प्रकट हो चुकेगा। इसलिए मैं उसका पूर्वाभास देना नहीं चाहता।

१. स्पष्ट ही अभिप्राय भारतमें आतंकवादी कार्रवाइयोंसे है।
२. थियोडोर मॉरिसन, जो कभी अलीगढ़के मुस्लिम कॉलेजके प्रिंसिपल थे; देखिए खण्ड ६, पृष्ठ १६५।
३. डब्ल्यू० टी० स्टेड (१८४९-१९१२); प्रसिद्ध पत्रकार और रिव्यू ऑफ रिव्यूज़के सम्पादक।

मुझे भरोसा है कि आप अपने भारत पहुँचनेका तार दे देंगे। खेद है कि आप जिस जहाजसे भारत जानेवाले हैं उसका नाम मुझे मालूम नहीं है। किन्तु मैं दफ़्तरीको एक तार[1] भेज रहा हूँ, ताकि वह पहलेसे कुछ इन्तजाम कर रखे।

मिली यहाँ परसों आ जायेगी। माताजीने तो मकान भी किरायेपर ले लिया है। उसमें दो सोनेके कमरे और एक बैठक है। किराया एक पौंड प्रति सप्ताह है। उनको वहीं ठहराया जायेगा; लेकिन वे लोग खाना माताजीके साथ खायेंगे। यह व्यवस्था मुझे बहुत उपयोगी मालूम होती है। इससे मिलीको पूरा आराम मिल जायेगा। अभी मौसम बहुत अच्छा है और बच्चोंके लिए बहुत ही अनुकूल सिद्ध होना चाहिये।

मेरा खयाल है कि मैं आपको प्रो० भाण्डारकरका[2] नाम बताना भूल गया। आप जानते ही हैं, वे आजके एक सबसे बड़े संस्कृत-पण्डित हैं। मुझे विश्वास है कि आप पूना जायेंगे, तब आपको उनसे अवश्य मिलना चाहिए। आप उनको इस प्रश्नपर उनके एकान्त-वाससे विरत भी कर सकते हैं। कुछ भी हो, आपका उनसे सम्पर्क स्थापित करना अच्छा ही होगा। आप श्री नाजरके[3] लड़केसे भी मिलें। उसका ठिकाना गिरगाँव है।

मैं आपको उन लोगोंके नामोंकी सूची भेज रहा हूँ जो ऑटोमन संसदीय शिष्टमण्डलकी दावतमें शामिल हुए थे। समारोह शानदार था; लेकिन मैं उससे बहुत दुःखी होकर चला आया। दावतके कमरेमें बहुत भीड़ थी। दावतमें तीन घंटे लगे। शराबके गिलासोंमें से उठनेवाली भाप और लगभग ३०० अतिथियोंके सिगारों या सिगरेटोंके धुएँका मनपर बहुत बुरा असर पड़ा। मेरे मुँहसे आप ही आप निकल पड़ा — "सभ्य बर्बरता"। और उससे मेरे सामने कवियों द्वारा वर्णित राक्षसी-भोजोंका दृश्य उपस्थित हो गया।

गत सप्ताह मामलेका जो विवरण[4] आपको भेजा गया था, वह अभी प्रकाशित नहीं हुआ है। संक्षिप्त विवरणका[5] संशोधन कर दिया गया है। मैं इसके साथ उसकी एक नकल भेजता हूँ, और प्रो० गोखलेको लिखे अपने पत्रकी[6] नकल भी।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९५६)से।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. डॉ० रामकृष्ण गोपाल भाण्डारकर (१८३७–१९२५); महान प्राच्य विद्याशास्त्री, संस्कृतके विद्वान्, समाज और धर्मके सुधारक, धार्मिक और ऐतिहासिक विषयोंपर अनेक पुस्तकोंके लेखक।

३. मनसुखलाल हीरालाल नाजर; इंडियन ओपिनियनके प्रथम सम्पादक और गांधीजीके सहयोगी; उनकी मृत्यु १९०६ में हुई; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ १८७-९०।

४. देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २८७-३००।

५. देखिए "पत्र : अखबारोंको", पृष्ठ ५२३-२४।

६. ऐसा मालूम होता है कि यह अगले दिन भेजा गया था और उसपर तारीख भी उसी दिनकी दी गई थी। देखिए अगला शीर्षक।

१८५. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

लन्दन, एस० डब्ल्यू०
जुलाई २३, १९०९

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

जबतक यह पत्र आपके पास पहुँचेगा, श्री पोलक भारतमें होंगे। यहाँ हमारा कार्य बहुत कठिन है; किन्तु यह आपके लिए कोई नई खबर न होगी। मैं इसका उल्लेख केवल भूमिकाके रूपमें करता हूँ, ताकि मैं आपसे इस ओर विशेष ध्यान देनेका समय निकालनेकी प्रार्थना कर सकूँ।

मुझे इसकी बहुत चिन्ता है कि हमारे नेता इस संघर्षके राष्ट्रीय महत्त्वको समझें। श्री पोलक यह कार्य करनेके लिए एक मिशनरी कार्यकर्त्ताके रूपमें भेजे गये हैं। हम ट्रान्सवालमें तबतक कष्ट भोगते रहेंगे, जबतक न्याय नहीं मिलता; किन्तु हम मातृभूमिसे अबतक जितना प्राप्त कर चुके हैं उसकी अपेक्षा बहुत अधिककी उम्मीद करनेके हकदार हैं।

श्री पोलकका काम बहुत कठिन है। मैंने उनसे कहा है कि वे पूर्णतः आपके निर्देशानुसार चलें; और मैं जानता हूँ कि आप उनके कार्यको यथाशक्ति हलका करनेमें कोई कोर-कसर न रखेंगे। हम व्यक्तिगत बातचीतके द्वारा समझौता करनेका प्रयत्न कर रहे हैं; किन्तु मैं श्री स्मट्सको इतनी अच्छी तरह जानता हूँ कि मुझे इस बातचीतमें अधिक विश्वास नहीं है। हम शायद एक सप्ताहमें खुली कार्रवाई करनेके लिए बाध्य हो जायेंगे और यदि हमें कोई काम करना हो तो उस अवस्थामें यह बिलकुल जरूरी हो जायेगा कि भारत हमारी प्रार्थनाका समर्थन करे। क्या मैं आपसे आशा कर सकता हूँ कि आप जो-कुछ आवश्यक समझेंगे वह करेंगे?[1]

मैं इसके साथ एक अधिक लम्बे विवरणका संक्षेप, जो हमने तैयार किया है, भेज रहा हूँ। यदि बातचीत असफल होती है तो उसका परिणाम प्रकट होते ही यह संक्षिप्त विवरण प्रकाशित कर दिया जायेगा।

हृदयसे आपका
मो० क० गांधी

माननीय प्रोफेसर गोखले, एम० एल० सी०
पूना

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० ४११०) से।

१. श्री पोलकने प्रोफेसर गोखलेसे लम्बी चर्चा की थी और अपने १४ अगस्तके पत्रमें गांधीजीको लिखा था — "वे (प्रोफेसर गोखले) कोई बड़ी उम्मीद नहीं रखते लेकिन उन्होंने अपनी सारी शक्ति और संस्था उनके सहयोगमें दे दी है। सभाकी आवश्यकता वे स्वीकार करते हैं। उन्होंने सर फीरोजशाह मेहतापर भी जोर डालनेका वादा किया है, जो जरा रुकावट डाल रहे हैं। उन्होंने मेरी यात्राका मार्ग भी आंका है — बम्बई, पूना, सूरत, बड़ौदा, अहमदाबाद, मद्रास, कलकत्ता, यू० पी० आदि। वे भविष्यमें सारी व्यवस्था करेंगे। बहुत अद्भुत व्यक्ति हैं। उन्हें तथ्यों और मूल सूत्रोंका बड़ा सही ज्ञान है। आपके बड़े प्रशंसक हैं। अत्यधिक कार्य, चिन्ता और मलेरियासे वे बहुत क्षीण हो गये हैं।"

१८६. पत्र : श्रीमती वॉगलको

लन्दन, एस० डब्ल्यू०
जुलाई २३, १९०९

प्रिय श्रीमती वॉगल[1],

कुमारी श्लेसिनने[1] मुझे बताया कि आप भारतीय महिलाओंकी एक सभामें शामिल हुई थीं। इस समाचारसे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मैं जानता हूँ कि आप अपने उत्साहसे उन्हें प्रेरित कर सकती हैं, और मैं यह भी जानता हूँ कि वे अपनी यूरोपीय बहनोंकी सहानुभूतिकी कितनी कद्र करती हैं।

कुमारी श्लेसिन आपको यहाँके कामके बारेमें सारी जानकारी दे देंगी। इसलिए मैं आपके कामके लिए आपको धन्यवाद देकर और आप तथा श्री वॉगल, दोनोंके प्रति अपना सम्मान प्रकट करके ही यह पत्र समाप्त करता हूँ।

जब कभी आपको 'इंडियन ओपिनियन' की और अधिक प्रतियोंकी जरूरत हो, आप कार्यालयमें जाकर माँग लें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च :]

श्रीमती पोलक आज आ रही हैं।

गांधीजीके हस्ताक्षरसे युक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ४४०८)से।
सौजन्य : अरुण गांधी।

१८७. लन्दन

[जुलाई २३, १९०९]

डॉ० अब्दुल मजीद

कानूनके डॉक्टर[2] सैयद अब्दुल मजीद जल्दी ही भारतको रवाना हो रहे हैं। उनके सम्मानमें एक जलसा किया गया था। उसमें श्री हाजी हबीब और मैं निमन्त्रण पाकर गये थे। वहाँ प्रसंगवश ट्रान्सवालके भारतीयोंके सवालपर बातचीत चली थी। डॉ० सैयद अब्दुल मजीदने वादा किया कि वे भारतमें इस सम्बन्धमें प्रयत्न करेंगे। जलसेमें कुछ यूरोपीय भी थे। श्री रिच भी मौजूद थे।

१. श्रीमती वॉगल जोहानिसबर्गमें भारतीय महिलाओंकी कक्षाएँ चलातीं और "भारतीय बाजार" आयोजित करती थीं। वे और उनके पति, जो बजाजीका काम करते थे, भारतीयोंके मामलेमें गहरी दिलचस्पी लेते थे।
२. एलएल० डी०।

ऑटोमनका[1] समारोह

तुर्कीकी संसदके कुछ सदस्य अंग्रेजोंके बड़े नेताओंसे भेंट करनेके लिए यहाँ आये हैं। उनके सम्मानमें होटल सेसिलमें एक भोज दिया गया था। सदस्योंमें माननीय तल्लात वे प्रमुख थे। दूसरे सदस्य थे — मुस्तफा अरीफ बे, जेवाद बे, डॉ० रिजा तौफीक बे, मेहमेन अली बे, जुबेरजादे, अहमद पाशा, मीघात बे, सुलेमान खुसतानी, नसीम मजलियाँ अफेंदी, सानून अफेंदी और फजल अरीफ अफेंदी आदि।

इस समारोहमें लगभग तीन सौ लोग होंगे। इसकी अध्यक्षता अर्ल ऑफ ऑस्लोने की। इसमें लॉर्ड कर्जन भी मौजूद थे। कोई पचास भारतीय होंगे। इनमें न्यायमूर्ति श्री अमीर-अली, नवाव इम्दुल मुल्क सैयद हुसैन वेलग्रामी, मेजर सैयद हुसेन, सर मंचरजी भावनगरी आदि थे।

मुख्य भाषण लॉर्ड कर्जनका था। तुर्क सदस्योंकी ओरसे उत्तर देनेवाले श्री सुलेमान खुसतानी ईसाई थे। उन्होंने कहा कि तुर्कीके राज्यमें सभीको एक बरावर हक हासिल है।

धींगराका मुकदमा

श्री मदनलाल धींगराका मुकदमा आज (२३ तारीखको) पेश हुआ। अदालतमें हमें जानेकी मनाही थी। श्री धींगराने अपना बचाव नहीं किया; इसलिए मुकदमा बहुत थोड़ी देर चला। उन्होंने यही जवाव दिया था कि मैंने देशकी भलाईके लिए हत्या की है और उसमें मैं कोई अपराध नहीं समझता। बड़े जजने उनको फाँसीकी सजा दी है। इस हत्याके सम्बन्धमें मैं अपना विचार बता चुका हूँ।[2] श्री धींगराका जवाव तो मैं सिर्फ बचपन-भरा या पागलोंका-सा समझता हूँ। जिन लोगोंने उनको यह अपराध करनेके लिए सिखाया होगा वे ईश्वरके सम्मुख उत्तरदायी हैं और इस दुनियामें भी गुनहगार हैं।

धींगराके मुकदमेकी प्रतिक्रिया

श्री धींगराके मुकदमेसे सरकारकी निगाह 'इंडियन सोशियोलॉजिस्ट' की ओर गई है। उस अखबारमें साफ लिखा गया था कि देशहितके लिए हत्या करना हत्या नहीं है। ऐसे कड़े लेखको छापनेपर बेचारे मुद्रकको चार महीनेकी कैदकी सजा दी गई है। जिसको सजा दी गई है वह निर्दोष और गरीब अंग्रेज है। उसको कुछ ज्ञान नहीं था। छपानेवाले पेरिसमें बैठे हैं, इसलिए उनको सरकार गिरफ्तार नहीं कर सकती। ऐसा करनेसे कुछ देशका उद्धार होनेवाला नहीं है। जबतक लोगोंमें खुद भारी कष्ट-सहन करनेवाले पैदा नहीं होंगे तबतक भारतका उद्धार कदापि नहीं होना है।

नेटालका शिष्टमण्डल

नेटालका शिष्टमण्डल अगले हफ्ते पहुँचनेवाला है। तबतक संघ अधिनियम (यूनियन ऐक्ट) लगभग स्वीकृत हो चुका होगा। संघ अधिनियम सम्बन्धी बातचीत अभी चल रही

१. यह शब्द तुर्की साम्राज्यके संस्थापक "उस्मान" प्रथमके नामसे व्युत्पन्न हुआ है। "उस्मान" को अंग्रेजीमें "ओसमान" लिखा जाता है और इसीसे ऑटोमन शब्द निकला और उसके द्वारा स्थापित साम्राज्य ऑटोमन साम्राज्यके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

२. देखिए "लन्दन", पृष्ठ ३००-०२।

है। उसमें कोई बड़ा फेरफार होनेवाला नहीं है। ऐसा जान पड़ता है कि काले लोगोंसे सम्बन्धित कानूनोंमें फेरफार करना संघ-संसदके हाथोंमें रहेगा। इसमें कोई सार नहीं है। यही कहा जायेगा कि मरा नहीं, गुजर गया, नाग-नाथ नहीं तो साँप-नाथ सही। मुझे भय है कि नेटालका शिष्टमण्डल बहुत विलम्बसे आया माना जायेगा। मैं यह नहीं मानता कि ऐसा न होता तो भी कोई लाभ हो सकता था।

डॉक्टर अब्दुर्रहमान

डॉक्टर अब्दुर्रहमान बहुत उद्योग कर रहे हैं। उन्होंने लॉर्ड क्रू से भी भेंट की है। किन्तु उससे कोई लाभ होगा, ऐसा सम्भव नहीं जान पड़ता। श्री श्राइनर बहुत प्रयास कर रहे हैं। उनके सम्मानमें एक समारोह २७ तारीखको इसी होटलमें किया जाना है, जिसमें बैठकर मैं यह पत्र लिख रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-८-१९०९

१८८. पत्र : उप-उपनिवेश-मन्त्रीको

लन्दन, एस० डब्ल्यू०
जुलाई २४, १९०९

सेवामें,
उप-उपनिवेश-मन्त्री[1]
उपनिवेश कार्यालय
व्हाइट हॉल, एस० डब्ल्यू०

महोदय,

आपके इसी महीनेकी २३वीं तारीखके पत्र सं० २४३१६/१९०९ के सम्बन्धमें निवेदन है कि यदि लॉर्ड महोदयने मुलाकात दी तो मेरे साथी और मैं दक्षिण आफ्रिकाके संघीकरणको, जो जल्दी ही हो रहा है, ध्यानमें रखते हुए, उनके सामने ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंने स्वेच्छया जो कष्ट-सहन किया है और अब भी कर रहे हैं उससे उत्पन्न और प्रभावित स्थिति पेश करेंगे। जिन ब्रिटिश भारतीयोंने शारीरिक कष्ट या आर्थिक हानि सहनेमें असमर्थ होनेके कारण एशियाई पंजीयन अधिनियम (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) को, पसन्द न करनेपर भी, मान लिया है, उनमें से ज्यादातरकी यह इच्छा थी कि हम लोग लन्दन जायें और वहाँ ट्रान्सवाल सरकारके मुख्य अधिकारियोंकी उपस्थितिसे लाभ उठाकर लॉर्ड महोदयके सामने भारतीयोंकी स्थिति इस आशासे पेश करें कि वे इस मामलेमें मैत्रीपूर्ण हस्तक्षेप करेंगे और इस तरह, यदि सम्भव हो तो, उस स्थितिका अन्त कर देंगे जिससे सैकड़ों निर्दोष ब्रिटिश भारतीयोंको अकथनीय कष्ट पहुँचा है।

१. अंडर सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर कॉलोनीज़।

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय ढाई वर्षोंसे ट्रान्सवाल सरकारसे प्रार्थना कर रहे हैं कि वह १९०७ के एशियाई पंजीयन अधिनियम (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) को रद कर दे और इस प्रकार उससे उनका जो अपमान होता है उसको समाप्त कर दे, तथा उन उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंके दर्जेका खयाल रखे जो ब्रिटिश परम्पराके अनुसार और केप ऑफ गुड होप तथा अन्य ब्रिटिश उपनिवेशोंमें चालू तरीकेसे ट्रान्सवालमें प्रवेश पानेके इच्छुक हैं।

मैं नम्रतापूर्वक आशा करता हूँ कि लॉर्ड महोदय हमें ऐसा मौका देनेकी कृपा करेंगे जिससे हम स्वयं उनके सामने मामलेको रख सकें और इस प्रकार उस उद्देश्यको पूरा कर सकें जिसके लिए ट्रान्सवालके भारतीय समाजने हमें यहाँ विशेष रूपसे भेजा है।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल; कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: सी० डी० ५३६३ और दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ४९५८) से।

१८९. शिष्टमण्डलकी यात्रा[1] [-४]

[जुलाई २४, १९०९]

मेरा खयाल है कि मैं गत सप्ताह सर विलियम ली-वार्नर और श्री मॉरिसनसे, जिस होटलमें हम ठहरे हैं उसमें, अपनी भेंटकी बात लिख चुका हूँ। उन्होंने सहानुभूति प्रकट की। उसके बाद हम मेजर सैयद हुसेन बेलग्रामीसे मिले। उन्होंने मंजूर किया है कि जितना उनसे हो सकेगा उतना प्रयत्न करेंगे। कुमारी विंटरबॉटमकी मार्फत श्रीमती टीडमैन नामक एक महिलासे भी मिले। इस महिलाने एक डचसे ब्याह किया है। श्री टीडमैन वहाँके एक डच अखबारमें काम करते हैं और जनरल बोथा आदिको जानते हैं। उन्होंने बताया है कि वे जनरल बोथासे मिलेंगे। हम एक पत्रकार श्री ब्राउनसे भी मिले। इन्होंने पिछली बार (१९०६में) हमारी सहायता की थी।

श्री भेदवार नामके एक पारसी हैं। उनके सम्मानमें पारसी अंजुमनने एक भोज दिया था, उसके अध्यक्ष सर मंचरजी थे। उस समारोहमें हम भी निमन्त्रित थे। उसमें भारतीयोंने हमें सहायता देनेके सम्बन्धमें भाषण दिया। हम दोनोंको और श्री रिचको इस विषयमें दो शब्द कहनेका समय दिया गया था।

हमने 'रिव्यू ऑफ रिव्यूज़' के सम्पादक श्री स्टेडसे भेंट की। उनका श्री स्मट्ससे अच्छा सम्पर्क है। उन्होंने कहा है कि वे श्री स्मट्ससे मिलेंगे।

हम भारत-कार्यालय (इंडिया ऑफिस) के सदस्य श्री गुप्तसे और नवाब इमदुल मुल्क सैयद हुसेन बेलग्रामीसे मिले। हमने उनको सारी स्थिति समझाई है।

१. **इंडियन ओपिनियन**में इसका और आगेके खरीतोंका शीर्षक बदल कर "इंग्लैंड जानेवाले शिष्टमण्डलकी यात्रा" कर दिया गया था, क्योंकि उन्हीं दिनों "भारत जानेवाले शिष्टमण्डलकी यात्रा" शीर्षकसे एक दूसरी विवरण-माला भी प्रकाशित होने लगी थी। लेकिन, वह माला हम दे रहे हैं, इसलिए यहाँ गांधीजी द्वारा दिया गया खरीतेका मूल शीर्षक ही रखा गया है।

इनके अतिरिक्त दूसरे लोगोंसे भी मुलाकात हुई है; किन्तु वह महत्त्वहीन है, इसीलिए उसका हाल नहीं दे रहा हूँ।

हमने लॉर्ड ऍम्टहिलकी सलाहसे लॉर्ड क्रू और लॉर्ड मॉर्लेसे भेंटका समय माँगा है। लॉर्ड क्रू ने जवाब दिया है उसमें भेंटका कारण पूछा गया है। हमने उसका जवाब भेज दिया है।[1] वे मिलेंगे या नहीं, यह खबर अगले हफ्ते मालूम होगी।

मैं ज्यों-ज्यों अनुभव प्राप्त करता जाता हूँ त्यों-त्यों तथाकथित बड़े लोगोंसे और जो सचमुच बड़े हैं उनसे मिलकर ऊबता जाता हूँ। ऐसा लगता है कि इतनी मेहनत फिजूल की। सभी अपने-अपने विचारोंमें व्यस्त दिखाई देते हैं। सत्ताधारियोंके मनमें सच्चा न्याय करनेका विचार कम ही दिखाई देता है। उनको अपने पदको कायम रखनेकी चिन्ता लगी है। एक या दो लोगोंसे भेंट करनेके प्रयत्नमें तमाम दिन चला जाता है। उन्हें पत्र लिखना होता है, उसका जवाब लेना होता है, उसकी पहुँच देनी होती है और तब उनके घर जाना होता है। एक उत्तरमें है तो दूसरा दक्षिण में। यह सब करनेके बाद भी कुछ मिलनेकी आशा कम होती है। न्यायकी दृष्टिसे मिलना होता तो कबका मिल जाता। बात केवल भयसे देनेकी रही है। ऐसी स्थितिमें काम करना सत्याग्रहीको अच्छा नहीं लगता।

इतनी मेहनत करने और इसमें बहुत-सा रुपया नष्ट करनेकी अपेक्षा ज्यादा कष्ट भोगना मैं बहुत हद तक अच्छा मानता हूँ। अड़चनें होनेपर भी माँग मंजूर हो जाये तो मैं समझूंगा कि हमने राहत पानेके लिए जितना कष्ट सहन किया उसीसे यह मिला है। यदि हमारी माँग मंजूर न होती तो मैं समझूंगा कि अभी अधिक कष्ट सहन करनेकी जरूरत है। कष्ट-सहन जैसा रसायन मुझे दूसरा दिखाई नहीं देता। किसी जबर्दस्त वक्ताकी आवाज भी कष्ट-सहनकी पुकारकी बराबरी नहीं कर सकती। कष्ट-सहनकी पुकारकी सुनवाई हुए बिना न रहेगी। जिन्हें कष्ट भोगना है उन्हें वह कहकर बतानेकी जरूरत नहीं है। मैं मानता हूँ कि दुःख तो अपने-आप बोलता है। और मैं प्रत्येक भारतीयको सलाह देता हूँ कि उसको दुःखसे नाता जोड़ना है। बाकी तो पानीका बुलबुला है। शिष्टमण्डलपर आशा कम लगानी चाहिए। यह बात याद कर लेनी चाहिए कि अपने बलके समान दूसरा कोई बल नहीं है; और जेल जानेको तैयार रहना चाहिए। जीत बस इसीमें मिलेगी।

दूसरे शहरोंसे जो तार मिले हैं वे उपनिवेश-कार्यालय और भारत-कार्यालयको भेज दिये गये हैं।

कुसमय

सभी ऐसा मानते हैं कि शिष्टमण्डल कुसमयमें आया है। कुछ दिनोंमें लन्दनसे सब बड़े-बड़े लोग चले जायेंगे। वे अगस्त महीनेमें सैरके लिए निकल जाते हैं। इसलिए कोई सार्वजनिक काम करना हो तो उसको करना मुश्किल है। ऐसी विषम स्थिति होनेपर भी शिष्टमण्डल किसी दूसरे समयमें नहीं आ सकता था। जब दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे लोग आये थे तभी हमारे आनेकी जरूरत थी। इसलिए नतीजा यह निकला कि यदि खानगी हलचलसे कुछ न बन पड़ा तो खुली हलचलका नतीजा बहुत ही कम निकलनेकी सम्भावना है।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, २१–८–१९०९

१. देखिए पिछला शीर्षक।

१९०. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
जुलाई २६, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं आपके इसी २४ तारीखके पत्रके लिए आभारी हूँ।

मैं श्री सावरसे उत्तर न मिलनेका यह अर्थ नहीं लगाता जो आपने लगाया है,[1] क्योंकि मैंने उनको यह सूचना-मात्र दी थी कि आप उनको सम्भवतः पत्र लिखेंगे। इसलिए मुझे लगता है कि वे अब भी सुनने-समझनेको वैसे ही तैयार हैं, जैसा कि मैंने उन्हें जहाजमें पाया था। मैंने आपको बताया था कि श्री सावर श्री मेरीमैनसे अधिक उत्साहमें हैं।

श्री हाजी हबीब और मैं लॉर्ड मॉर्लेसे खानगी भेंट करके अभी-अभी लौटे हैं। लॉर्ड महोदयने हमारी बातपर सहानुभूतिसे विचार किया और कहा कि वे लॉर्ड क्रू को लिखेंगे; और मेरे कहनेपर उन्होंने श्री स्मट्ससे इस प्रश्नपर बातचीत करना स्वीकार कर लिया। लॉर्ड क्रू ने अभी भेंटका समय नहीं दिया है; किन्तु उन्होंने हमसे कहा है कि भेंटमें हमें जिन मुद्दोंपर चर्चा करनी है उनको हम लिखकर भेज दें। जिस पत्रमें ये बातें दी गई थीं वह शनिवारको चला गया।[2]

सर रिचर्ड सॉलोमनने एक गोपनीय पत्र भेजा है। इसमें उन्होंने कहा है कि वे सारे प्रश्नपर श्री स्मट्ससे बातचीत कर चुके हैं, किन्तु श्री स्मट्स सम्मेलनके कार्यमें बहुत व्यस्त रहेंगे इसलिए उनको निर्णय करनेमें कुछ समय लग सकता है। मैं श्री स्मट्सको बहुत अच्छी तरह जानता हूँ; इसलिए यह विलम्ब कुछ अशुभ है, क्योंकि जिन मित्रोंने दिक्कत-तलब मामलोंमें उनसे प्रार्थना की है उनको उन्होंने अनेक बार टाला है। लॉर्ड मॉर्ले और, अगर लॉर्ड क्रू ने मंजूर कर लिया तो, उनसे भी भेंटके अलावा हम कोई लिखित विवरण पेश करना ठीक समझें तो एक छोटा विवरण बिलकुल तैयार है।[3] मैंने उसे प्रचारित करनेके लिए छपाया नहीं है; क्योंकि बातचीत चल रही है। किन्तु बातचीत चलनेसे हमारे ऊपर

१. लॉर्ड ऍम्टहिलने सोचा था कि उस दिशामें काम करनेसे उन्हें लाभ नहीं हो सकता।

२. देखिए "पत्र: उप-उपनिवेश-मन्त्रीको", पृष्ठ ३१०-११।

३. गांधीजीने मामलेका एक विवरण तैयार कर भी लिया है, यह बात शायद लॉर्ड ऍम्टहिलको मालूम न थी; इसीलिए उन्होंने अपने २४ जुलाईके पत्रमें यह सुझाव दिया था कि गांधीजी "साम्राज्य-सरकार और उपनिवेशी सरकारोंके अधिकारियोंको देनेके लिए तथा सामान्य जनताकी जानकारीके लिए अपने मामलेका एक बहुत संक्षिप्त और स्पष्ट विवरण तैयार कर लें। यह दस्तावेज अवश्य ही बहुत संक्षिप्त हो और यदि मैं सलाह दूँ तो मैं कहूँगा कि आप अपनी माँगके समर्थनमें जो कारण दें उनमें अधिक जोर इस बातपर हो कि इस झगड़ेके लिए सबको खेद है और इसलिए इसका अन्त करना जरूरी है तथा यह भी वांछनीय है कि ट्रान्सवालके भारतीय दक्षिण आफ्रिकाके संघीकरणकी आम खुशीमें हिस्सा ले सकें। फिर आप इस वक्तव्यको महामहिम सम्राटकी सरकारके मंत्रियोंको, इस देशमें आये हुए उपनिवेशी प्रतिनिधियोंको और अखबारोंको भेज सकते हैं।" देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ ३८७-३००।

जबानबन्दी भले ही लागू होती हो, इस कार्यमें जो हमारे मित्र हैं उनपर तो वह लागू नहीं हो सकती। यदि आप या अनेक लोक-नेता मिलकर लॉर्ड क्रू को लिखें और उनसे ट्रान्सवालके मन्त्रियोंपर अपना सत्प्रभाव डालनेका अनुरोध करें तो क्या हमारा उद्देश्य सिद्ध न हो जायेगा? लॉर्ड क्रू ट्रान्सवालके मन्त्रियोंसे कहें कि जिन ब्रिटिश भारतीयोंने आपके देशके लिए इतने भारी और इतने भीषण कष्ट सहे हैं उन्हें छोटी-मोटी रियायतें देकर अपने संघ-निर्माणको गौरव प्रदान कीजिए।[1]

श्रीमानने शायद ध्यान दिया होगा कि मूल निवासी-संरक्षण संघ [ऐबॉरिजिन्ज़ प्रोटेक्शन सोसाइटी] की ओरसे एक शिष्टमण्डल दक्षिण आफ्रिकी प्रधानमंत्री और अन्य लोक-नेताओंसे मिलनेवाला था और वह केवल इसलिए नहीं मिला कि सर चार्ल्स डिल्क[2], जो शिष्टमण्डलका नेतृत्व करनेवाले थे, उन लोगों द्वारा नियत समयको स्वीकार नहीं कर सके।

मुझे निश्चित लगता है कि यदि आप अब भी श्री मेरीमैन और श्री सावरसे, या उनसे न हो सके तो, श्री बोथा और स्मट्ससे बातचीत करनेका प्रयत्न करें, तो इससे हित ही हो सकता है। मैं यह भी कह दूँ कि समझौता करना बहुत-कुछ सर जॉर्ज फेरार[3] और सर पर्सी फिट्ज़ पैट्रिकके[4] हाथमें है और यदि आप उनसे मिल भी सकें तो मुझे विश्वास है कि समस्याके सन्तोषजनक हलका कोई मार्ग निकल आयेगा।

मैं 'इंडियन ओपिनियन' के नये अंककी ओर आपका ध्यान विशेष रूपसे आकर्षित करता हूँ। उसमें तीन उल्लेखनीय प्रार्थनापत्र[5] और भारतीय शिष्टमण्डल-सम्बन्धी तथ्य दिये गये हैं।

आशा है, श्रीमान अपना इतना समय लेनेके लिए मुझे क्षमा करेंगे।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९६०) से।

१. ता. २८ जुलाईके पत्रमें इसका उत्तर देते हुए लॉर्ड ऍम्टहिल्ने लिखा था: "मेरे खयालमें मेरा यह कहना ठीक है कि दक्षिण आफ्रिका-विधेयक (बिल) को बदलनेका कोई सवाल नहीं है। इस समस्यापर बिल्कुल प्रभाव नहीं पड़ता। जरूरत इतनी ही है कि ट्रान्सवाल-सरकार दयाके विशिष्ट कार्यके रूपमें इस कठिनाईका अन्त करने और भारतीयोंकी शिकायत दूर करनेका इरादा घोषित करके संसदमें विधेयककी स्वीकृतिको गौरवान्वित करे।"

२. सर चार्ल्स वेंटवर्थ डिल्क (१८४३–१९११); राजनीतिज्ञ, लेखक, संसद-सदस्य और उप-विदेश-मन्त्री, १८८०-८२।

३. (१८५९–१९१५); खान-मालिक और ट्रान्सवालके विधायक; दक्षिण आफ्रिकी युद्ध (१८९९–१९००) में सेवा की।

४. (१८६२–१९३१); एक खान-व्यवसायी और दक्षिण आफ्रिका-सम्बन्धी कई पुस्तकोंके लेखक; सर जॉर्ज फेरार और वे ट्रान्सवालके प्रगतिवादी दलके प्रमुख सदस्य थे।

५. ये ट्रान्सवालवासी भारतीयों द्वारा सम्राज्ञी, दादाभाई नौरोजी तथा बंगाल चैम्बर ऑफ कॉमर्सके अध्यक्षको भेजे गये थे। देखिए परिशिष्ट १५।

१९१. पत्र : लॉर्ड मॉर्लेके निजी सचिवको

लन्दन, एस० डब्ल्यू०
जुलाई २६, १९०९

निजी सचिव
परममाननीय भारत-मन्त्री
व्हाइट हॉल, एस० डब्ल्यू०

महोदय,

यदि आप नीचेका [पत्रांश] लॉर्ड मॉर्लेकी सेवामें पेश कर दें तो मैं आभारी होऊँगा :

लॉर्ड महोदयने श्री हाजी हबीबको और मुझे जो खानगी मुलाकात[1] देनेकी कृपा की थी उसमें, समयाभावके कारण, मैं जो कहना चाहता था वह सब नहीं कह सका। इसलिए मैं अपने साथीकी तथा अपनी ओरसे कहना चाहता हूँ कि भारतीय समाज और ट्रान्सवाल सरकारके बीच जो दो प्रश्न — अर्थात्, एशियाई कानूनका रद किया जाना और शिक्षित ब्रिटिश भारतीयोंके दर्जेका जो आधार अन्य उपनिवेशोंमें है उसी आधारपर उसे कायम रखना — अभीतक अनिर्णीत हैं, वे भारतीय समाजकी पवित्र प्रतिज्ञाके कारण सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि ब्रिटिश भारतीय ट्रान्सवालमें अन्य निर्योग्यताओं — जैसे, जमीनकी मिल्कियत रखने और ट्रामोंमें सवार होनेपर लगी रोक आदि — के बारेमें अपने आपको पीड़ित अनुभव नहीं करते।

फिर भी हमारा खयाल है कि भारतीय समाजने जेलखानोंमें जो सज़ा काटी या अन्य व्यक्तिगत कठिनाइयाँ सही हैं, सो इन सवालोंको तय करानेके लिए उतनी नहीं जितनी कि उपर्युक्त दोनों शिकायतोंको दूर करानेके लिए। लेकिन ब्रिटिश भारतीय अन्य निर्योग्यताओंको दूर करानेके लिए उन्हीं साधनोंको काममें लाते रहेंगे जिन्हें उन्होंने अबतक अपनाया है। परन्तु उपर्युक्त दोनों शिकायतें अन्य शिकायतोंसे अलग कर दी गई हैं, क्योंकि इनसे उन्हें भयंकर कष्ट हुआ है और जबतक कोई ठीक समझौता नहीं हो जाता तबतक यह कष्ट होता रहेगा।

मुझे और मेरे साथीको भरोसा है कि लॉर्ड मॉर्ले इस मामलेकी ओर विशेष ध्यान देनेका समय निकाल सकेंगे और जिन लोगोंके हित उनके सुपुर्द हैं, उनकी ओरसे अपना मैत्रीपूर्ण प्रभाव काममें लाकर सम्माननीय समझौता करा सकेंगे।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल : कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स (सी० डी० ५३६३)से; टाइपकी हुई दफ्तरी प्रति (एस० एन० ४९६१)से भी।

१. यह उसी दिन इससे पहले हो चुकी थी, देखिए पिछला शीर्षक।

१९२. शिष्टमण्डलकी यात्रा [–५]

[जुलाई २६, १९०९ के बाद]

इस हफ्तेमें मुलाकातें बहुत कम हुई हैं। ज्यादातर समय चिट्ठियाँ लिखनेमें और फुटकर लोगोंसे मिलनेमें गया है।

मुख्य मुलाकात

मुख्य मुलाकात[1] लॉर्ड मॉर्लेसे हुई। हम दोनोंको उन्होंने निजी रूपमें मुलाकात दी। यह कहना मुश्किल है कि उनका उत्तर सन्तोषजनक मानना चाहिए या नहीं। मैं तो इतना ही लिख सकता हूँ कि उन्होंने सहायता करनेका वचन दिया है।

लॉर्ड ऍम्टहिल सख्त मेहनत कर रहे हैं। उनका कार्य खानगी है, इसलिए मैं कुछ बताता नहीं। उनको पूरी आशा है कि समझौता होगा। उनके साथ हमेशा पत्र-व्यवहार चलता रहता है। अब क्या होता है, यह देखना रहा है। उनके पत्रको पढ़नेसे मालूम होता है कि अगले हफ्ते कुछ खबर मिल जायेगी। यदि ऐसा हुआ तो तारसे खबर जायेगी, इसलिए इस लेखके छपनेसे पहले परिणाम शायद मालूम हो जायेगा।

यदि परिणाम अच्छा निकले तो किसीको यह न समझना चाहिए कि यह इंग्लैंडमें जोर लगानेका ही परिणाम है। इसका कारण तो केवल जेल जाना ही समझना चाहिए। जो लोग यहाँ रहते हैं, वे यह बात सहज ही देख सकते हैं। जेलकी बात सुननेवाला प्रत्येक गोरा ताज्जुब करता है। सहन किये हुए कष्टोंका गम्भीरतम प्रभाव हुए बिना रह ही नहीं सकता। मुझे तो बार-बार यह अनुभव होता रहता है।

श्री हाजी हबीब, श्री अब्दुल कादिर और मैं निमन्त्रण पाकर कुमारी स्मिथके पास गये थे। वहाँ सभी एक ही बात कर रहे थे, अर्थात् जेल जानेकी। और जेल जानेकी बात सुननेका ही असर होता था। मैं दिन-प्रतिदिन ऐसा वक्त आता देखता हूँ, जब मनुष्यको, फिर वह चाहे काला हो या गोरा, अर्जियोंसे न्याय नहीं मिल सकेगा। यदि यह बात ठीक हो तो आत्मबल अर्थात् सत्याग्रहके बलको पहुँचनेवाला दूसरा बल संसारमें है ही नहीं। इसलिए मेरी इच्छा है कि यदि यह पत्र छपने तक फैसला न हुआ तो भारतीय जेलोंको भर दें।

नौ अगस्तको बहुत-से भारतीय भाई छूटे होंगे। उन सबसे मेरी प्रार्थना है कि वे निर्भय होकर फिर जेल जायें। उन्होंने जो प्रण किया है, उसे न छोड़ें। संसारमें आज ऐसी ही हवा चल रही है। छोटे और बड़े सबमें देशभक्तिकी भावना प्रबल हो रही है। इस भावनाके कारण बहुत-से बुरे काम किये जाते हैं। जो सत्याग्रहका आश्रय लेंगे वे ही सच्ची देशभक्ति दिखा सकेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-८-१९०९

१. यह २६ जुलाईको हुई थी। देखिए "पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको", पृष्ठ ३१३-१४।

१९३. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
जुलाई २८, १९०९

लॉर्ड महोदय,

सर मंचरजीने जनरल स्मट्सको व्यक्तिगत पत्र लिखकर उनसे भेंटकी प्रार्थना की थी। जनरल स्मट्सने व्यस्तता कम होनेपर उनको समय देनेकी रजामन्दी दिखाई है। इसका अर्थ बहुत-कुछ हो सकता है, या कुछ भी नहीं हो सकता; किन्तु चूँकि उसका अर्थ यह भी हो सकता है कि जनरल स्मट्स मामलेमें विलम्ब करके हमारे कार्यकी सार्वजनिक चर्चाको रोकना चाहते हैं, इसलिए मुझे लगता है कि समय आ गया है जब हमें अपने विवरणको प्रचारित करना चाहिए और अधिकारियों एवं ब्रिटिश जनताको भी अपने कार्यसे अवगत कराना चाहिए। सर मंचरजी इससे सहमत ही नहीं हैं, बल्कि इसका आग्रह करते हैं। किन्तु जैसा मैंने अपने २६ तारीखके पत्रमें लिखा है, मैंने इसके विरुद्ध मत प्रकट किया है। मैं आपके सम्मुख नई स्थितिको रखना और विवरणको प्रकाशित करनेकी वांछनीयताके सम्बन्धमें आपकी सलाह माँगना अपना कर्तव्य समझता हूँ। क्या मैं आपको यह कष्ट दे सकता हूँ कि आप मुझे तारसे उत्तर दें।[1]

मैंने समितिकी बैठक बुलानेके सम्बन्धमें श्री रिचका पत्र देखा है। मेरा खयाल है कि समितिकी बैठक अब आवश्यक है।[2]

आपका, आदि,
[मो० क० गांधी]

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९६६) से।

१. लॉर्ड ऍम्टहिलने दूसरे दिन गांधीजीको तार दिया, जिसमें कहा था: "आपके कलके पत्रके उत्तरमें विस्तृत पत्र लिखा है।" अपने पत्रमें उन्होंने वक्तव्यके प्रकाशनके प्रति अनिच्छा प्रकट की थी। देखिए परिशिष्ट १७।

२. लॉर्ड ऍम्टहिलका खयाल था कि इस समय समितिकी बैठकसे कोई उपयोगी कार्य सिद्ध न होगा। अपने २८ जुलाईके एल० डब्ल्यू० रिचको लिखे पत्रके उत्तरमें लॉर्ड ऍम्टहिलने लिखा था: "मैं इस काममें हर रोज घंटों वक्त दे रहा हूँ; अगर बैठककी जरूरत होगी तो मैं आपको तुरन्त बता दूँगा। श्री गांधीकी इस देशमें मौजूदगी और लॉर्ड मार्ले और लॉर्ड क्रू से मुलाकात माँगने मात्रसे उत्तरदायी अधिकारी यह महसूस करने लगे हैं कि इस सवालपर विचार किया ही जाना चाहिए। उन्होंने इसपर विचार करनेके लिए कहा है और वे इसपर विचार कर रहे हैं, इसलिए इस वक्त कोई भी सार्वजनिक दबाव डालना सामयिक या बुद्धिमत्तापूर्ण न होगा। मैं जनरल स्मट्ससे अगले हफ्ते मिलनेवाला हूँ और उन्हींके ऊपर सब-कुछ निर्भर है। अच्छा हो, आप समिति और संसद-सदस्योंको सिर्फ थोड़े समयके लिए चुप ही रखें।" उन्होंने यह भी कहा था: "मैंने श्री गांधीको जो पत्र अभी-अभी लिखा है और जिसे मैंने आपको दिखा देनेके लिए कहा है, उससे यह बात साफ हो जायेगी कि समितिको क्यों अभी कुछ नहीं करना है।"

१९४. पत्र : लॉर्ड ऐम्टहिलको

लन्दन,
जुलाई २९, १९०९

लॉर्ड महोदय,

ट्रान्सवालके भारतीयोंके मामलेमें, जिसे आपने अपना ही मामला बना लिया है, आप बहुत कष्ट उठा रहे हैं। इसके लिए मैं आपका बहुत आभारी हूँ। मैंने आपका पत्र[1] पढ़ते ही यह तार[2] दे दिया था कि आपसे सलाह किये बिना कुछ न किया जायेगा। मैंने उसमें यह भी कह दिया था कि मैं यह पत्र लिख रहा हूँ और विवरण भेज रहा हूँ।[3]

शायद मुझे यह बात साफ कर देनी चाहिए कि मैं ज्यादातर पत्र, जिन्हें अन्यथा मैं अपने हाथसे लिखना पसन्द करता, बोलकर लिखाता हूँ। इसका कारण यह है कि मेरी लिखावट बहुत खराब है और पढ़नेमें नहीं आती। मैं यह बात खेदके साथ स्वीकार करता हूँ।

मेरे साथीको और मुझे यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई है कि जिन विशिष्ट व्यक्तियोंका उल्लेख आपने अपने पत्रमें किया है, उनसे आप मिल लिये हैं।

मैं इसके साथ प्रूफ-रूपमें "विवरण" भेज रहा हूँ, क्योंकि वह कल यह समझकर मुद्रकको भेज दिया गया था कि आप उसे मंजूर तो कर ही लेंगे। लेकिन वह आपकी सलाह लिए बिना न तो छापा जायेगा और न किसीको भेजा जायेगा।

अगर १९०७ का कानून रद कर दिया जाये और मेरे सुझाये गये तरीकेसे ट्रान्सवालमें हर साल छः भारतीयोंको आने देनेका वादा कर दिया जाये तो मुझे निश्चय ही सन्तोष हो जायेगा. . .[4]। मुझसे ऐसा ही प्रश्न लॉर्ड मॉर्लेने भी किया था। क्या मैं [आशा करूँ कि] ट्रान्सवालकी संसदमें या प्रान्तीय कौंसिलमें, जहाँ भी हो, [इस मामलेपर फिर विचार किया जायेगा][5] और प्रवासी कानूनमें ऐसा सुधार कर दिया जायेगा जिससे सामान्य शिक्षा-परीक्षाके अनुसार ऊँची शिक्षा पाये हुए भारतीय ट्रान्सवालमें आ सकें? ऐसे लोग ज्यादासे-ज्यादा छः आ सकेंगे; लेकिन उनकी संख्या कानूनसे सीमित या नियन्त्रित न की जायेगी, बल्कि प्रशासनिक कार्रवाईसे की जायेगी। इसका अर्थ यह है कि प्रवासी-अधिकारी परीक्षा कड़ी लेकर सालमें केवल छः ही भारतीयोंको पास करेगा। जहाँतक प्रवासका सम्बन्ध है, इस तरह आये हुए भारतीय प्रवासी रजिस्ट्रेशन (पंजीयन) या शिनाख्तकी सभी कार्रवाइयोंसे बरी होंगे। उनका रजिस्ट्रेशन उस परीक्षासे ही हो जायेगा जो सीमापर ली जायेगी और

१. लॉर्ड ऐम्टहिलके २८ जुलाईके उस पत्रके लिए, जिसमें गांधीजीकी बातोंका सिलसिला और लॉर्ड ऐम्टहिलने अपने पत्रमें जो मुद्दे उठाये हैं उनका उत्तर मिलता है, देखिए परिशिष्ट १७।

२. यह तार उपलब्ध नहीं है।

३. देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २८७-३००।

४, ५. यहाँ मूलमें कुछ शब्द फट गये हैं, इसलिए उनकी पूर्ति यहाँ प्रकरणके अनुसार अनुमानसे की गई है।

जिसे उन्हें पास करना होगा। मेरा ख़याल है कि मैंने यह सारी स्थिति सर रिचर्ड सॉलोमनको साफ-साफ समझा दी है और यह भी सोचता हूँ कि वे इसे समझ गये हैं।

इसमें शक नहीं कि ट्रान्सवालमें दूसरी शिकायतें भी हैं; मिसालके तौरपर जमीन-जायदाद रखनेपर रोकके बारेमें, ट्रामोंमें बैठनेके बारेमें आदि। इस सम्बन्धमें हमें स्थानीय अधिकारियोंको और आपको भी सहायताके लिए कष्ट देना होगा। लेकिन जिन दो शिकायतों-को लेकर शिष्टमण्डल लन्दन आया है उनमें और दूसरी शिकायतोंमें यह फर्क है कि इन दो शिकायतोंको लेकर अनाक्रामक प्रतिरोध किया गया है, जिसमें हमें अवर्णनीय कष्ट हुए हैं और जबतक ये शिकायतें दूर नहीं कर दी जातीं या उन्हें दूर करानेके प्रयत्नमें एक-एक भारतीय मर नहीं जाता, तबतक, जहाँतक मेरे वशकी बात है, वह जारी रहेगा और हम कष्ट सहते रहेंगे। दूसरी शिकायतें बहुत पुरानी हैं, उन्हें दूर करानेके लिए हमने कष्ट सहनेकी कोई गम्भीर प्रतिज्ञा भी नहीं की है; इसलिए हम उसके लिए तबतक रुक सकते हैं जबतक इस मामलेमें लोकमत तैयार नहीं हो जाता और लोगोंमें जो विद्वेष है वह मिट नहीं जाता। इसके लिए न हम कंगाल बनेंगे और न ट्रान्सवालकी जेलोंको भरेंगे।

मेरे लिए तो यह अनाक्रामक प्रतिरोधमें आपकी बहुत बड़ी दिलचस्पीकी...[1] और—मैं कहनेकी इजाजत चाहता हूँ—आपके उदात्त विचारों...[2] की भी कसौटी है। आप मुझे यह कहनेके लिए क्षमा करेंगे कि मैं यहाँ, दक्षिण आफ्रिकामें, या भारतमें ऐसे एक भी भारतीयको नहीं जानता जिसने राजद्रोहका—उसको मैं जिस रूपमें समझता हूँ—मेरी-जैसी दृढ़ता, बल्कि ललकारके साथ, विरोध किया हो। राजद्रोहसे दूर रहना मेरे धर्मका अंग है। मेरी जान चली जाये तो भी मेरा इससे कोई सम्बन्ध न होगा। बहुत-से लोग, अर्थात् बहुत-से भारतीय और आंग्ल-भारतीय, बमबाजी और हिंसाके विरुद्ध अपनी तीव्र घृणा शब्द-रूपमें या किसी बेजा कार्रवाईके रूपमें प्रकट करते हैं। लेकिन ट्रान्सवालमें जिस आन्दोलनसे मेरा तादात्म्य है वह आन्दोलन तो स्वतः ऐसे तरीकोंके खिलाफ सबसे जोरदार और स्थायी आपत्ति है। अनाक्रामक प्रतिरोधकी कसौटी स्वयं कष्ट सहना है, दूसरोंको कष्ट देना नहीं। इसीलिए हमने भारतके, या किसी दूसरी जगहके किसी भी "राजद्रोही दल" से एक पैसा भी नहीं लिया है और अगर हम अपने सिद्धान्तोंके प्रति सच्चे हैं तो हमें ऐसी सहायता मिलती तो भी हम उसे स्वीकार करनेसे इनकार कर देते। हमने अबतक भारतीय जनतासे रुपये-पैसेकी सहायता न माँगनेका खास खयाल रखा है। ब्रिटिश भारतीय संघका हिसाब सभी देख सकते हैं। उसका आय और व्ययका विवरण समय-समयपर प्रकाशित और 'इंडियन ओपिनियन'में विज्ञापित किया जाता है।[3] श्री डोक, श्री फिलिप्स[4] और ट्रान्सवालमें हमारे साथ काम करनेवाले दूसरे प्रमुख व्यक्ति इस बातको बहुत अच्छी तरह जानते हैं। मैं यह कहनेकी अनुमति चाहता हूँ कि अनाक्रामक प्रतिरोधकी कल्पनाका जन्म दक्षिण आफ्रिकामें हुआ है और उसका भारतके किसी आन्दोलनसे कोई

१. यहाँ कुछ शब्द मिट गये हैं।
२. यहाँ एक पंक्ति मिट गयी है।
३. देखिए खण्ड ७, परिशिष्ट ७।
४. चार्ल्स फिलिप्स, ट्रान्सवालके चर्चके पादरी।

सम्बन्ध नहीं है। इनके अलावा हमपर, कभी-कभी विशुद्ध अनाक्रामक प्रतिरोधमें विश्वास रखनेके कारण, हमारे कुछ भारतीय मित्रोंने तीव्र आक्षेप भी किये हैं।

आशा है, आप मुझे इतनी निजी बातें कहने और इस पत्रका कलेवर बढ़ानेके लिए क्षमा करेंगे, क्योंकि यह अनिवार्य था।

अगर इससे ज्यादा खुलासेकी या जानकारीकी जरूरत हो तो आप मुझे उसके लिए आदेश दें। मैं [वह देकर][1] आपके प्रति और भी ज्यादा आभारी हूँगा।

श्री रिच बताते हैं कि इस स्पष्टीकरणसे आपकी समझमें सब बातें साफ-साफ न आयेंगी। वे इतना और जोड़नेका सुझाव देते हैं।

प्रवासी कानूनमें काले या गोरे सभी प्रवेश करनेवाले लोगोंके लिए शिक्षा-परीक्षा रखी गई है। परीक्षा कितनी कड़ी हो, यह बात प्रवासी-अधिकारीकी मर्जीपर छोड़ दी गई है। सबके लिए एक परीक्षा न कभी रही है और न अब ही है। इसलिए प्रवासी-अधिकारी यूरोपीयोंके लिए एक परीक्षा रखता है और भारतीयोंके लिए दूसरी। वह शायद कभी-कभी यूरोपीयोंकी कोई परीक्षा ही नहीं लेता जैसा कि नेटालमें प्रायः होता है। इस तरह अपने विवेकाधिकारसे काम लेनेमें अदालतें कोई दस्तन्दाजी नहीं करतीं। जनरल स्मट्सने कहा है कि मौजूदा प्रवासी-कानूनमें प्रवासी-अधिकारीकी मर्जीपर इतनी ज्यादा बातें नहीं छोड़ी गई हैं। अगर नहीं छोड़ी गई हों तो कानून आसानीसे बदला जा सकता है और उसके विवेकपर जितनी बातें छोड़ना आवश्यक हो, छोड़ी जा सकती हैं। मैंने श्री डैलोकी[2] मार्फत ऐसा एक सुधार दे भी दिया है। मेरी रायमें उससे यह उद्देश्य सन्तोष-जनक रूपसे पूरा हो जायेगा। श्री स्मट्सने मेरा सुधार नामंजूर नहीं किया; लेकिन उन्होंने कहा था कि वे उस अधिवेशनमें (पिछले जूनके अधिवेशनमें) कानूनमें फेरफार करना वाञ्छनीय नहीं समझते। प्रवासी अधिकारीको आवश्यक अधिकार मिलनेपर शिक्षा-परीक्षाके अनुसार केवल छः भारतीयोंको ही देशमें आने देना है। अगर सातवाँ भारतीय अर्जी दे तो वह उसे उसकी ऐसी शिक्षा-परीक्षा लेकर रद कर सकता है, जिसमें परीक्षार्थी पास ही न हो सके। आस्ट्रेलियामें ऐसा ही किया जाता है।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९६८) से।

१. यहाँ भी मूलमें कागज कट-फट गया है।
२. एडवर्ड डैलो, भारतीयोंके मामलेमें सहानुभूति रखनेवाले एक प्रमुख यूरोपीय।

१९५. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
जुलाई ३०, १९०९

प्रिय हेनरी,

पिछले हफ्ते ज्यादा लोगोंसे नहीं मिल पाया, फिर भी काम बहुत हो गया है। लॉर्ड ऍम्टहिल बहुत अच्छा काम कर रहे हैं; उनका सम्पर्क एक ओर सर जॉर्ज फेरार, जनरल स्मट्स और लॉर्ड सेल्बोर्नसे रहा और दूसरी ओर लॉर्ड क्रू, लॉर्ड मॉर्ले, लॉर्ड लैन्सडाउन और लॉर्ड कर्जनसे। ये स्वयं बहुत आशावान मालूम होते हैं। मैं आपको उनके नाम प्रेषित अपने लम्बे पत्रकी[1] नकल भेजता हूँ।

सर मंचरजीने भी स्मट्सको भेंटके लिए पत्र लिखा था और स्मट्सने वचन दिया है कि वे अपने ऊपर कामका बोझ कम होते ही उनको भेंटका समय देंगे। यह भेंट तब माँगी गई थी जब यह मालूम नहीं था कि लॉर्ड ऍम्टहिल क्या निश्चित कार्रवाई कर रहे हैं। बड़े पैमानेपर सार्वजनिक आन्दोलन आरम्भ करनेकी व्यवस्था भी की गई थी। मैंने उसकी रूपरेखा अपने मस्तिष्कमें बना ली है; किन्तु लॉर्ड ऍम्टहिलके कामको देखते हुए सब बातें रुकी हुई हैं।[2]

हमने लॉर्ड मॉर्लेसे सोमवारको भेंट की थी। उन्होंने हमें लगभग आधे घंटेका समय दिया। सर चार्ल्स लायल[3] भेंटके समय मौजूद थे। यह भेंट व्यक्तिगत और अनौपचारिक थी। वे यह जानना चाहते थे कि क्या इस मामलेमें भारतमें बहुत आवेश है। मैंने जवाब दिया कि बहुत है। मैंने यह भी कहा कि बम्बईमें सभा नहीं हुई, इसका कारण यह है कि सर फीरोजशाहको हिंसात्मक कार्रवाईका भय था। किसीको भी सभामें आने और कड़े भाषण देनेसे रोका नहीं जा सकता था। मेरी रायमें इस प्रश्नसे प्रकट होता है कि भारतमें बहुत आवेश है; इसके बारेमें वे असन्तुष्ट हैं या वे चाहते हैं कि समस्त भारतमें लोकमतकी जोरदार अभिव्यक्ति हो। फिर भी उन्होंने वचन दिया है कि वे इस भेंटका सार लॉर्ड क्रू को बता देंगे और स्मट्ससे भी मिलेंगे। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि लन्दनमें जनरल स्मट्सकी उपस्थितिकी भी जानकारी उनको न थी और वे एशियाई अधिनियमपर की गई आपत्तियोंके बारेमें सब-कुछ भूल गये थे।

उधर, यदि लोग सभाएँ बुलाएँ तो आप सभाएँ करें; यदि ऐसा न हो तो विभिन्न संस्थाओंकी ओरसे प्रार्थनापत्र भिजवायें और यदि आपको पर्याप्त स्वयंसेवक मिल सकें तो आप एक संक्षिप्त प्रार्थनापत्रपर हजारों लोगोंके हस्ताक्षर करायें। आशा है, आपने दादाभाई

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए परिशिष्ट १६।
३. (१८४५–१९२०); आंग्ल-भारतीय प्रशासक।

नौरोजी और बंगाल व्यापार-संघ (बेंगाल चेम्बर ऑफ कॉमर्स) के अध्यक्षको लिखे गये प्रार्थना-पत्रोंका[1] अनुवाद मुख्य-मुख्य भाषाओंमें करा लिया होगा और उसको दूर-दूर तक बँटवा दिया होगा। यदि आपको उचित समर्थन प्राप्त हो तो हर जगह स्वयंसेवक आपको मिलने चाहिए। वे इन प्रतियोंको ले जायें और बाँट दें। उनको मस्जिदों, मन्दिरों, नाटकघरों और ऐसे ही अन्य स्थानोंके पास तैनात किया जा सकता है।

मुझे आज आपके तारकी प्रतीक्षा है। उसके बाद, आशा है, मैं आपको एक संक्षिप्त तार दूँगा। किन्तु यदि मुझे आज आपका तार न मिला तो मैं कल या सोमवारको स्वतन्त्र रूपसे तार दे सकता हूँ। श्री आंगलिया और अन्य दो व्यक्ति कल आ रहे हैं। श्री अब्दुल कादिर अब भी हमारे साथ इसी होटलमें ठहरे हुए हैं। मैं आशा करता हूँ कि आप भारतीय निर्देशिकाएँ (डायरेक्टरीज), एक उपयुक्त अंग्रेजी-गुजराती और गुजराती-अंग्रेजी कोष और सन्दर्भकी या पढ़नेकी दूसरी पुस्तकें, जो दक्षिण आफ्रिकामें नहीं मिलतीं, ले लेंगे। प्रो० गोखलेसे हमारी शिक्षा-योजनाके सम्बन्धमें भी बातचीत करें। वे बहुत बड़े शिक्षाशास्त्री हैं, इसलिए उपयोगी सुझाव दे सकते हैं। मेरा खयाल है, आप छगनलालके[2] सहयोगसे बम्बईमें एक एजेंसी खुलवा सकते हैं, और चाहे तो आप नटेसनसे[3] कोई निश्चित करार भी कर सकते हैं। इससे हमारे विचारों और मतोंके प्रचारमें भी सहायता मिलेगी।

मिली शनिवारको आ गई। पिताजी साउदैम्प्टन गये थे; किन्तु वे मिली आदिके साथ नहीं लौटे। उनको माताजी, मॉड, हाजी हबीब, हुसेन और मैं जाकर ले आये। सैली नहीं आ सकीं, क्योंकि उनको अपना काम देखना था। मिली और सिलिया दोनों, तथा वाल्डो और बेबी भी, बहुत अच्छे दिखाई दे रहे थे। मेरा खयाल है, वे यात्राके कारण और भी अच्छे लगते हैं। वे जहाजमें मजेमें रहे हैं। सिलिया ऐमीको ढूँढ़ने गई और फिर सीधे कमरोंमें चली गई; मिली बेबीके साथ होटलमें आ गई। व्यवस्था तो यह थी कि सिलिया ऐमीके साथ होटलमें आये, किन्तु उसने अपनी आतुरतामें उस होटलका नाम नहीं पूछा था जिसमें मैं ठहरा हुआ हूँ और होटल सेसिलमें चली गई, और पीछे सीधे कमरोंमें पहुँच गई। वाल्डोको कुछ जुकाम हो गया है; किन्तु ज्यादा नहीं है।

कुमारी स्मिथके यहाँ दावत थी। मिली और मॉड वहाँ गई थीं। मेरा खयाल है, वहाँ दोनोंको अच्छा लगा। दावत अच्छी ही थी, और मण्डली भी अच्छी थी। उसमें कुछ भारतीय महिलाएँ भी थीं। मिली उनमें से एक, श्रीमती दुबेकी सहेली बन गई हैं। वे उत्तर भारतीय हैं, यद्यपि उनका कुछ पालन-पोषण बम्बईमें भी हुआ है। वे अंग्रेजी बहुत अच्छी बोलती हैं। मिलीकी उनके साथ और घनिष्ठता हो जायेगी।

वह जिन कमरोंमें है उनको पसन्द नहीं करती और शायद क्रिकलवुड या क्यूमें एक ऐसा छोटा घर ले लेगी, जिसमें थोड़ी साज-सज्जा हो। मैंने उसको सुझाव दिया है कि वह अपने साथ हुसेनको रखे। यह दोनोंके लिए सन्तोषजनक होगा। हुसेन बहुत अच्छा चल रहा है।

१. देखिए परिशिष्ट १५।

२. छगनलाल गांधी इस समय भारतको रवाना हो गये थे, जहाँसे वे बैरिस्टर बननेके लिए इंग्लैंड जानेवाले थे, किन्तु श्री ए० एच० वेस्टकी बीमारीके कारण कुछ माह रुक गये थे।

३. जी० ए० नटेसन (१८७३-१९४९); राजनीतिक और प्रकाशक तथा **इंडियन रिव्यू**के संस्थापक और सम्पादक।

उससे अच्छा युवक मिलना मुश्किल होगा। किन्तु वह कुछ खोया-खोया-सा है। उसमें वह उमंग नहीं है जिसकी उस आयुके युवकसे मुझे आशा करनी चाहिए और वह पर्याप्त परिश्रम नहीं करता। चूँकि वह जिद्दी नहीं है, इसलिए मिलीका सौम्य मार्गदर्शन आसानीसे ग्रहण कर सकता है। मैंने मिलीसे बात कर ली है कि उसके लिए क्या किया जाना चाहिए। ऐमी भी मिलीके साथ रह रही है। मुझे मालूम हुआ है कि ऐमी बहुत बड़ी हो गई है। किन्तु वह स्थिर स्वभावकी लड़की नहीं है और मिलीको उसके कारण कुछ चिन्ता हो जाती है। मैंने सोमवारको दफ्तरी, मॉरेलिटी[1] और प्रेसीडेंसी एसोसिएशनको[2] आपके सम्बन्धमें तार[3] दिये थे। मैं यह जाननेको उत्सुक हूँ कि उनपर कुछ अमल हुआ या नहीं।

मैं गत रातको स्त्रियोंके मताधिकारके सम्बन्धमें आन्दोलन करनेवाली महिलाओं (सफ्रेजेट)की एक विराट सभामें गया था। श्रीमती पैंकहर्स्टसे[4] भी मिला था। मैं आपको उनका साप्ताहिक पत्र 'वोट्स फॉर वीमन' भेज रहा हूँ। हमें इन महिलाओंसे और इनके आन्दोलनसे बहुत-कुछ सीखना है। मेरे पास दूसरी पुस्तिकाएँ भी हैं, जिन्हें मैंने आपको भेजनेका विचार किया था; किन्तु पीछे सोच-विचार कर तय किया कि उनको जोहानिसबर्ग या फीनिक्स भेज दूँ। मैं आपके लिए दूसरा सैट लाऊँगा और वह आपको अगले सप्ताह मिलेगा।

श्रीमती रिचका स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा है। मेरा खयाल है, इस बार वे फिर बीमार नहीं होंगी।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९७०) से।

१९६. लन्दन

शुक्रवार, जुलाई ३०, १९०९

नेटालके प्रतिनिधि

नेटालके प्रतिनिधि यहाँ कल पहुँचेंगे। हममें से कुछने उनको लेने जानेकी तैयारी कर ली है।

सफ्रेजेट्स

श्री अब्दुल कादिर, श्री हाजी हबीब और मैं मताधिकार प्राप्त करनेके लिए लड़नेवाली स्त्रियोंकी सभामें गये थे। सेन्ट जेम्स भवन इन स्त्रियोंसे ठसाठस भरा था। श्री हाजी हबीबकी गिनतीके अनुसार स्त्रियाँ और पुरुष मिलकर १,५०० होने चाहिए।

ऐसी सभा लगभग हर हफ्ते होती है। इस सभामें हर बार धन-संग्रह किया जाता है और कमसे-कम ५० पौंड आते हैं। कलकी सभामें १०० पौंड इकट्ठे हुए थे। यह सभा जेलसे रिहा की गई स्त्रियोंके सम्मानके लिए बुलाई गई थी। ऐसी स्त्रियाँ १४ थीं, उनको

१. रेवाशंकर झवेरी ऐंड कं० बम्बईका तारका पता।
२. बम्बईका।
३. यह उपलब्ध नहीं है।
४. श्रीमती एमलिन पैंकहर्स्ट (१८५८–१९२८), देखिए खण्ड ७, पृष्ठ ६५।

चाँदीके तमगे दिये गये। इन स्त्रियोंके लिए एक भोजकी व्यवस्था की गई है, जिसमें एक-एक शिलिंगके टिकट जारी किये गये हैं।

इस सभाकी अध्यक्षता श्रीमती लॉरेंस नामकी महिलाने की थी। भाषण सब स्त्रियोंने ही दिये। सारी व्यवस्था भी वे ही करती हैं।

जेल जानेवाली स्त्रियोंमें दो-चार तो बीस-बाईस बरसकी लड़कियाँ थीं। ये सभी मताधिकारकी लड़ाईमें गिरफ्तार की गई थीं। यहाँकी प्रथाके अनुसार कैदियोंके कई वर्ग हैं। इन स्त्रियोंको दूसरा वर्ग दिया गया था। ये कहती हैं कि हमें पहले वर्गका कैदी माना जाना चाहिए। ऐसा सरकारने नहीं किया, इसलिए उन्होंने संगठित होकर जेलके नियमोंको भंग करनेका निर्णय किया। उन्होंने जेलकी कोठरियोंकी खिड़कियाँ तोड़ीं और दूसरे नियमोंको माननेसे भी इनकार कर दिया। इससे उनको काल-कोठरियोंमें बन्द कर दिया गया। वहाँ भी उन्होंने जेलरोंकी आज्ञाओंका अनादर किया। अन्तमें सभी स्त्रियोंने खाना बन्द कर दिया। एक स्त्रीने छः दिन तक बिलकुल भोजन नहीं किया और कुछ दूसरी स्त्रियोंने पाँच दिन तक। इस प्रकार सबने खाना छोड़ दिया। इससे अन्तमें सरकारने हार मानकर उनको रिहा कर दिया। स्त्रियाँ इससे निराश हुई हैं और कहती हैं कि जबतक ऐसी स्त्रियोंको पहला वर्ग नहीं दिया जायेगा तबतक वे जेल जाती रहेंगी। जेलसे रिहा स्त्रियोंमें से दोपर जेलमें मारपीट करनेके जुर्ममें पुलिसने सभामें समन्स तामील किये। जब उनको समन्स दिये गये तब सारा सभाभवन तालियों और हर्ष-ध्वनिसे गूँज उठा। उन स्त्रियोंके ऐसे कष्ट-सहन और उनकी ऐसी हिम्मतके आगे भारतीय सत्याग्रही किस गिनतीमें हैं?

यह संघ अपना अखबार प्रति सप्ताह प्रकाशित करता है और उसकी ५०,००० प्रतियाँ छपती हैं। उसका मूल्य एक पेनी है। उसमें कार्यकर्त्री मुख्यतः स्त्रियाँ हैं। बेचनेके लिए स्वयंसेविकाएँ हर हफ्ते निकलती हैं। इनको कोई मजदूरी नहीं मिलती। ये सभी स्त्रियाँ बड़े-बड़े घरानोंकी हैं; फिर भी इस काममें शरमानेके बजाय गर्व मानती हैं। ये सभी अपनी बाँहोंपर "स्त्रियोंके लिए मताधिकार" (वोट फॉर वीमन) के छपे बिल्ले लगाकर निकल पड़ती हैं।

इसके अलावा उन्होंने बहुत-सी चौपतियाँ आदि छापी हैं। कितनी ही स्त्रियाँ इस काममें अपना सर्वस्व देकर खुद भी काम करने लग गई हैं। इनमें से कुछ बहुत पढ़ी-लिखी हैं। ये एक सालमें चन्देसे ३,००० पौंड इकट्ठा कर लेती हैं। उन्होंने २०,००० पौंड इकट्ठा करनेका निश्चय किया है।

उनकी लड़ाईको पाँच बरस होने आये। लड़ाईकी नींव तो बहुत बरस पहले पड़ चुकी थी। किन्तु जेल जाकर पूरा जोर पाँच सालसे लगाया जा रहा है। इस अर्सेमें लगभग ५०० स्त्रियाँ जेल हो आई हैं। इनमें से कितनी ही एकसे ज्यादा बार जेल जा चुकी हैं। [इस मण्डलकी] सभी पदाधिकारी कैद भुगत आई हैं। वे प्रयत्नपूर्वक जेल जाती हैं।

इतने बरस हो गये पर वे हार नहीं मानतीं। दिनों-दिन उनका जोर बढ़ता ही जाता है। वे सरकारको हैरान करनेकी नई-नई युक्तियाँ खोज लेती हैं और बहुत-सी स्त्रियोंने इस कामके लिए अपने-आपको पूरी तरह समर्पित कर दिया है। कितनी तो जानतक देनेके लिए तैयार हो गई हैं। "जीतना ही है", यह उनका प्रण है। वे ऐसी दृढ़ता बता रही हैं मानो यह प्रण उनकी मृत्युके साथ ही जायेगा।

उनकी काम करनेकी व्यवस्था और चतुराई अत्यन्त सराहनीय है। उनमें उत्साह खूब है। इस सबको देखकर बहुत-से पुरुष चकित रह गये हैं।

भारतीयोंके लिए विचारणीय है कि जब इंग्लैंडकी अवलाओंको न्याय प्राप्त करनेमें इतनी देर होती है और ऐसा कष्ट सहना पड़ता है, तब हमको ट्रान्सवालमें समय लगे, कष्ट भोगना पड़े, प्राण तक देने पड़ें, जेलमें बीमारी झेलनी पड़े और भूखा रहना पड़े तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? श्रीमती लॉरेंस, जिन्होंने इस लड़ाईमें बहुत धन दिया है और जो जेल हो आई हैं, कहती हैं कि "जबतक कुछ लोग सुधार करने या मानव-जातिकी भलाई करनेके लिए अपने लोहूमें सने मसालेसे चुनाई न करें तबतक सुधारोंके भवनका निर्माण होना सम्भव नहीं है।"

इन शब्दोंपर प्रत्येक भारत-हितैषीको विचार करना चाहिए। हम स्वतन्त्रता प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें दूसरोंको मारकर या दुःख देकर (अर्थात् शरीर-बलसे) नहीं, बल्कि स्वयं मरकर या दुःख सहकर (अर्थात् आत्मबलसे) स्वतन्त्रता प्राप्त करनी चाहिए। ट्रान्सवालकी लड़ाई आत्म-सम्मानकी रक्षाकी अर्थात् स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी लड़ाई है। उस स्वतन्त्रताको प्राप्त करनेमें मृत्यु आ जाये तो वह जीवित रहनेके बराबर है। उसको न प्राप्त करके हम जीवित रहें तो वह मरणके समान है। महिला-मताधिकारके लिए लड़नेवाली इन स्त्रियोंसे हमें बहुत-कुछ सीखना है। उनमें कुछ कमियां भी दिखाई देती हैं, जिनके सम्बन्धमें अभी यहाँ विचार करना आवश्यक नहीं है।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, २८-८-१९०९

१९७. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त ३, १९०९

लॉर्ड महोदय,

आपके २९ तारीखके पत्रके उत्तरमें मैंने एक तार[1] भेजा था। आशा है, वह आपको समयपर मिल गया होगा।

मैं यह पत्र इस सप्ताहके 'इंडियन ओपिनियन'[2] की ओर आपका ध्यान आकर्षित करनेके लिए लिख रहा हूँ। उसमें साम्राज्य-संसद के नाम नागप्पनकी मृत्युके सम्बन्धमें मद्रास अहातेसे आये हुए भारतीयोंका प्रार्थनापत्र और हलफनामे[3] प्रकाशित हुए हैं। आपको याद होगा, कुछ समय पूर्व इसी नागप्पनके बारेमें एक तार आया था।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९७४) से।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. जुलाई १०, १९०९ के अंकमें।

३. इसमें वीरा मुथु और ए० ए० मूडलेने उन हालतोंका और जेलके बेरहमी-भरे बरतावका उल्लेख किया है जिनके कारण सत्याग्रही सामी नागप्पनकी मृत्यु हो गई। देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २९८।

१९८. पत्र : 'इंग्लिशमैन' को

लन्दन,
अगस्त ३, १९०९

सम्पादक
'इंग्लिशमैन'
[कलकत्ता]

आपके पत्र-लेखक 'साउथ आफ्रिकन' ने आपके गत २१ तारीखके अंकमें प्रकाशित अपने पत्रमें इतनी ग़लत बातें लिखीं हैं कि उसको अपना नाम भी छिपाना पड़ा। क्या मैं उसकी कुछ गलतबयानियाँ दुरुस्त कर सकता हूँ?

श्री एल० डब्ल्यू० रिच, यद्यपि वे मुझे अपना मित्र और साथी कहते हैं, भारतीय नहीं हैं, जैसा आपके पत्र-लेखकने मान लिया है। वे इंग्लैंडके यहूदी हैं और इस समय बैरिस्टरी कर रहे हैं।

भारतीयोंका पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) एक शिनाख्ती कार्रवाई है और वह वर्गगत रूपमें भारतीयोंकी ईमानदारीपर सन्देहका सूचक है। काफिरोंके सम्बन्धमें पासकी प्रथा कुछ हद तक कर लगानेकी कार्रवाई है और किसी भी प्रकार उस अर्थमें, जिसमें १९०७ का एशियाई पंजीयन कानून है, अपमानजनक नहीं है। एशियाई पंजीयन कानून (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) और महाद्वीपकी पारपत्र (पासपोर्ट) प्रणालीमें उतना ही अन्तर है जितना खड़िया और पनीरमें होता है। महाद्वीपी पारपत्र (कॉन्टिनेन्टल पासपोर्ट) जिसके पास होता है उसकी रक्षा करता है, और यदि पासमें पारपत्र न हो तो इससे वह अपराधी नहीं माना जाता और उसे छः मास तककी कड़ी कैद नहीं दी जा सकती, जबकि एशियाई कानूनके अन्तर्गत पंजीयनका प्रमाणपत्र न होनेपर अबतक ट्रान्सवालमें २,५०० ब्रिटिश भारतीय जेल भजे जा चुके हैं। ट्रान्सवालमें भारतीय कुली नहीं हैं।

आपके पत्र-लेखकके विरोधी कथनके बावजूद नेटाल उपनिवेशमें गिरमिटिया भारतीय मजदूरोंके प्रवेश-सम्बन्धी कानून बनानेमें वहांके भारतीय व्यापारी-समाजका कोई हाथ नहीं था।

आपके पत्र-लेखकने यह मनगढ़न्त बात कही है कि नेटालमें प्रत्येक भारतीय १० शिलिंग माहवार खर्चपर निर्वाह करता है और सन्दूकोंके अस्तरकी पुरानी टीनके झोपड़े बनाकर रहता है। इसके विपरीत, डर्बन नगरपालिकाके मूल्यांकनके अनुसार सचाई यह है कि वहाँ भारतीयोंके पक्के मकान करीब-करीब दस लाख पौंडके हैं और इस तथ्यका उनके यूरोपीय व्यापारी प्रतिस्पर्धियोंने उनके विरुद्ध उपयोग किया है।

लेकिन भारतीय एक बातमें आपके पत्र-लेखकसे सहमत हो सकते हैं, और वह है नेटालमें या दक्षिण आफ्रिकाके किसी भी भागमें गिरमिटिया मजदूरोंके अस्तित्वकी निन्दा। ब्रिटिश भारतीय पिछले पन्द्रह सालसे इस प्रकारकी मजदूरीकी प्रथाको बन्द करानेके लिए आन्दोलन

कर रहे हैं। स्वर्गीय सर विलियम विल्सन हंटरने[1] इस प्रथाको खतरनाक रूपमें गुलामीसे मिलता-जुलता बताया था।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ४-९-१९०९

१९९. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त ४, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं आपको इसी ३ तारीखके पत्रके लिए और उन कीमती सुझावोंके लिए धन्यवाद देता हूँ जो आपने विवरण (स्टेटमेंट)[2] के सम्बन्धमें दिये हैं।

मैं जानता हूँ कि अधिकारियोंपर कामका कितना भार है; और यह जानते हुए कि आप उनको यह प्रश्न समझानेका कोई अवसर हाथसे नहीं जाने देते, श्री हाजी हबीब और मैं, दोनों सन्तोषपूर्वक प्रतीक्षा कर रहे हैं।

आपका प्रश्न यह था कि क्या अनाक्रामक प्रतिरोध (पैसिव रेज़िस्टेन्स) के लिए भारतसे धन या उत्तेजन मिलता है। "उत्तेजन मिलने" के सम्बन्धमें, मैंने विस्तारसे कुछ नहीं कहा था। पत्र लम्बा और उबानेवाला हो जानेके भयसे मैं लिखता-लिखता रुक गया था। परन्तु, अब चूंकि आपने कृपा करके मुझे अपने विचार अधिक विस्तारसे प्रकट करनेके लिए कहा है, इसलिए मैं प्रसन्नतापूर्वक इस अवसरका लाभ उठाता हूँ। मैं भली भाँति जानता हूँ कि हमपर यह आरोप लगाया जा रहा है कि हम भारतके गरमदलसे मिलकर काम कर रहे हैं।[3] लेकिन मैं आपको पूरा-पूरा विश्वास दिलाता हूँ कि यह आरोप बिलकुल निराधार है। ट्रान्सवालमें भारतीयोंका अनाक्रामक प्रतिरोध उस उपनिवेशमें ही पैदा हुआ है और भारतमें जो-कुछ कहा या किया जा रहा है उस सबसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। कभी-कभी सच बात तो यह रही है कि भारतमें या अन्यत्र जो विरोधी बातें कही या लिखी गई, उनके बावजूद हमने अपना आन्दोलन जारी रखा है। हमारे आन्दोलनका भारतके किसी भी उग्रदलसे बिलकुल वास्ता नहीं है। मैं खुद उग्रदलियोंको नहीं जानता। . . .[4] मुस्लिम लीगके . . .[5] हैं और किसी समय अखिल इस्लामी संघ (पैन इस्लामिक सोसाइटी) के लन्दन-स्थित मन्त्री रहे हैं, और यह पत्र-व्यवहार

१. (१८४०-१९००) भारतीय प्रशासक और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ब्रिटिश कमेटीके सदस्य; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९६ और खण्ड ६, पृष्ठ २६० ।

२. देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २८७-३००; तथा लॉर्ड ऍम्टहिलके सुझावोंके लिए परिशिष्ट १४ भी ।

३. देखिए परिशिष्ट १४ ।

४. बिन्दुओंके स्थानपर मूलमें कुछ शब्द गायब हैं ।

५. यहाँ मूल पत्रमें एक पंक्ति कट गई है ।

इस दृष्टिसे किया गया है कि हमारे मामलेमें भारतीय लोकमतकी दिलचस्पी बढ़े और जनतामें सहानुभूति उत्पन्न हो। हमारा 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के सम्पादकसे निकट-सम्पर्क है और 'इंग्लिशमैन' के सम्पादक स्वर्गीय श्री सांडर्ससे[1] भी मेरा व्यक्तिगत सम्बन्ध था। मैं यह कह दूँ कि जब मैंने पहले-पहल दक्षिण आफ्रिकामें सार्वजनिक कार्य हाथमें लिया तब उन्होंने [श्री सांडर्सने] मुझे बहुत उपयोगी सहायता और सलाह दी थी। हमारी शिकायत सदा यह रही है कि भारतमें हमारे देशवासियोंने, जैसा शायद अभी कुछ पहले तक लगता था, इस प्रश्नके साम्राज्यीय महत्त्वकी करीब-करीब जान-बूझकर उपेक्षा की है। फिर जनरल स्मट्सने निर्दोष भारतीयोंको, जिनमें से अधिकतरके पास एक पैसा भी न था, पुर्तगाली प्रदेशके रास्ते ट्रान्सवालसे भारतको निर्वासित कर दिया। उनके इस आत्मघातकारी कार्यने इस सवालको सबसे ज्यादा प्रकाशमें ला दिया है। इससे इस प्रश्नका विज्ञापन इतना हो गया जितना शायद दूसरी किसी बातसे न हुआ होता। अब श्री हेनरी एस० एल० पोलक भारतीय जनताके सम्मुख इस स्थितिको रखनेके लिए ट्रान्सवालसे भारत गये हैं। वे वहाँसे यह निश्चित निर्देश लेकर गये हैं कि वे उग्रदलसे सम्पर्क न करें और ज्यादातर 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के सम्पादक, प्रोफेसर गोखले तथा आगाखाँकी सलाहसे चलें।

अनाक्रामक प्रतिरोधसे मेरा मतलब क्या है, यह साथकी कतरनसे[2] कुछ ज्यादा स्पष्ट रूपमें प्रकट हो जायेगा। इसमें जर्मिस्टनके साहित्य व वाद-विवाद संघ (जर्मिस्टन लिटरेरी ऐंड डिबेटिंग सोसायटी) में दिये मेरे भाषणका सार दिया गया है।[3] मैं कह दूँ कि जर्मिस्टन भारतीय विरोधी भावनासे ओतप्रोत है। फिर भी संघके सदस्योंने, जिनमें जर्मिस्टनके मेयर भी हैं, कृपा करके यह स्वीकार किया कि हम जो लड़ाई चला रहे हैं वह पूर्णतः निर्दोष है।

यदि मैं यह न कहूँ कि भारतमें जो-कुछ हो रहा है उसको मैं अत्यन्त गहरी दिलचस्पीसे और राष्ट्रीय आन्दोलनके कुछ पहलुओंको गम्भीरतम चिन्तासे देखता हूँ तो यह अनुचित होगा। ...[4] सहानुभूति और ...[5] उसमें लोगों और मेरे देशवासियों — दोनोंका और संसारका भी लाभ है। मेरा यह भी विश्वास है कि राष्ट्रीय भावनाके पूर्णतम विकासमें और भारतमें ब्रिटिश राज्यकी स्थिरतामें बिलकुल विरोध नहीं है। इसके अलावा मैं यह भी सोचता हूँ कि भारतमें हमें जो कष्ट हैं उनका इलाज भीतरी प्रयत्नोंसे सम्भव है। मैं यह जानता हूँ कि ब्रिटिश संविधानके अन्तर्गत ब्रिटिश प्रजाजनोंको, चाहे वे किसी जातिके हों, तबतक अपने अधिकार कभी नहीं मिले हैं और न कभी मिल सकते हैं जबतक वे उनसे सम्बन्धित अपने कर्तव्य पूरे न करें और जबतक वे उनके निमित्त लड़नेके लिए तैयार न हों। यह लड़ाई या तो शारीरिक हिंसाका रूप ले लेती है, जैसा भारतके उग्रदली लोगोंके मामलेमें है, या लड़नेवाले लोगोंके व्यक्तिगत कष्ट-सहनका रूप ले लेती है, जैसा ट्रान्सवालमें हमारे अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके मामलेमें है। मेरी सम्मतिमें शिकायतें दूर करानेका पहला तरीका बहुत-कुछ बर्बरतापूर्ण है और भारतीयोंके स्वभावके विरुद्ध है — सो इसलिए नहीं कि वे शारीरिक दृष्टिसे इतने दुर्बल हैं कि इस

१. देखिए खण्ड ६, पृष्ठ २४७-४८।
२. यह उपलब्ध नहीं है।
३. देखिए "भाषण : जर्मिस्टनमें", पृष्ठ २४२-४४।
४. यहाँ कुछ शब्द कट गये हैं।
५. यहाँ एक पूरी पंक्ति गायब है।

मार्गको नहीं अपना सकते, बल्कि इसलिए कि वे अपने शिक्षणके कारण इस दूसरे तरीकेके अभ्यस्त हो गये हैं; और मुझे यह स्वीकार करनेमें कोई बाधा नहीं है कि ट्रान्सवालका अनाक्रामक प्रतिरोध भारतके हिंसाकारी दलको व्यावहारिक रूपसे यह दिखाता है कि वह बिलकुल गलत रास्तेपर है और जबतक उसका विश्वास किसी भी प्रकारकी राहत पानेके लिए हिंसामें रहेगा, तबतक उसके प्रयत्न बेकार रहेंगे।

मुझे अच्छी तरह मालूम है कि मेरे अपने विचारोंका यह स्पष्टीकरण शायद आपके किसी उपयोगका न हो और सम्भवतः यह हर तरहकी दिलचस्पीसे खाली भी हो। मैंने यह सब केवल इसलिए लिखा है कि मेरे बारेमें कोई गलतफहमी न हो।[1] मुझे इस बातका बहुत खयाल है कि मैं आपसे कोई बात न छुपाऊँ। मैं इस बातके लिए भी बहुत उत्सुक हूँ कि जो कोई काम हाथमें लूँ उसमें आप-जैसे महानुभावका, जिन्हें साम्राज्यसे और मेरी मातृभूमिसे इतना अधिक प्रेम है, बल मुझे प्राप्त रहे।

हमारी मुसीबतोंमें आप जो गहरी दिलचस्पी ले रहे हैं उसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद और इस पत्रके अनिवार्य विस्तारके लिए क्षमायाचनाके साथ —

आपका, आदि,
[मो० क० गांधी]

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९७६) से।

२००. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त, ५, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं आपके कलकी तारीखके दो पत्रोंकी प्राप्ति-सूचना निवेदित करता हूँ। आशा है आपके पत्रोंकी नकलें जल्दीसे-जल्दी आपको भेज दूँगा।[2] आपके इसी ३ तारीखके पत्रका उत्तर[3] मैं भेज चुका हूँ।

शिक्षित भारतीयोंका प्रश्न नया होनेके आरोपके सम्बन्धमें मैं एक अलग कागजपर[4] लिख रहा हूँ, ताकि आप उसका उपयोग इस पत्रका हवाला दिये बिना कर सकें। जिस संशोधनको

१. अगस्त ७ को पत्रकी प्राप्ति-सूचना देते हुए लॉर्ड ऍम्टहिलने ट्रान्सवालके अनाक्रामक प्रतिरोध और भारतके आतंकवादी आन्दोलनके बीच सम्बन्ध होनेकी बातपर गांधीजीकी इस स्पष्ट उक्तिके बारेमें लिखा था: "आपने ठीक वही जवाब दिया है जिसकी मुझे आशा थी। मैं यों भी अपने आन्तरिक विश्वासके आधारपर इस आरोपको पूरी बेमुरौवतीके साथ अस्वीकार करनेमें कभी बाज नहीं आया हूँ; अब तो इसमें मुझे आपके निष्पक्ष और सांगोपांग स्पष्टीकरणकी निश्चितताका बल भी प्राप्त है। मुझे अपनेतईं कभी क्षण-भरको इस बातमें सन्देह नहीं रहा कि भारतके षड्यन्त्रकारियोंसे आपका कोई सम्बन्ध नहीं है; लेकिन जब ऊँचे तबकेके जिम्मेदार लोगोंने ऐसी सलाह दी तो मुझे स्पष्टीकरण करना पड़ा है।"

२. लॉर्ड ऍम्टहिलने उन पत्रोंकी प्रतियाँ माँगी थी जो उन्होंने गांधीजीको लिखे थे।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

४. देखिए सहपत्र १।

पेश करनेका विचार है उसका मजमून भी इसके साथ है।[1] मैं यह अच्छी तरह महसूस करता हूँ कि कठिनाई अधिकारके प्रश्नपर होगी। "अधिकार" पर जोर दिये बिना इसका कोई हल निकालनेके प्रयत्नमें मेरी कई रातें चिन्तामें निकली हैं; लेकिन मुझे सफलता नहीं मिली है, क्योंकि इससे कम किसी भी बातका अर्थ, मेरी विनीत सम्मतिमें, उपनिवेशकी कानूनकी किताबमें हमारी प्रजातीय हीनताको अंकित करना होगा। आपके प्रश्नका यह उत्तर आपके इस सुझावका भी उत्तर है कि माँगोंकी गिनतीमें शिक्षित भारतीयोंके दर्जेके बजाय "कभी-कभी कुछ ऊँची शिक्षा पाये हुए भारतीयोंका प्रवेश", आदि कर दिया जाये। ऐसा कोई उलट-फेर सम्भव नहीं है, क्योंकि लड़ाई थोड़े-से शिक्षित भारतीयोंको प्रविष्ट करानेके लिए नहीं है, बल्कि सहज-स्वाभाविक या सैद्धान्तिक अधिकारको मान्य करानेके लिए है। यह "अधिकार" न देनेके जो निश्चित परिणाम होते हैं उनपर जोर देनेके उद्देश्यसे इस प्रश्नके सम्बन्धमें चिकित्सक, वकील आदिका उल्लेख किया गया है, और यह श्री कार्टराइटके मित्रोंको सन्तुष्ट करनेके उद्देश्यसे आवश्यक हो गया था . . .[2] स्पष्ट रूपमें यह समझनेके लिए कि हमारी माँगका अभिप्राय उपनिवेशमें ऐसे छः से अधिक भारतीयोंका प्रवेश नहीं है उन्हें साम्राज्यीय दृष्टिकोण अपनानेकी जरूरत है। सच तो यह है कि ऐसे प्रवेशके लिए प्रतिवर्ष शायद दो व्यक्ति भी आवेदनपत्र न दें, और मैं अपनेतई तो स्थानीय सरकारसे यह आश्वासन भी नहीं माँगूँगा कि वह छः या छः से कम भारतीयोंको प्रवेश दे ही। सिद्धान्त मान लेनेपर, केवल प्रवेश एक छोटी बात है और मैं साफ-साफ स्वीकार करता हूँ कि यदि यह सिर्फ थोड़े-से भारतीयोंके प्रवेशका ही प्रश्न होता, तो मैंने अपने ट्रान्सवालवासी भाइयोंको भयंकर कष्ट उठानेकी सलाह कभी न दी होती।

आपने विवरणमें[3] सुधारके सम्बन्धमें जो नये और मूल्यवान सुझाव दिये हैं उनके लिए मैं आपका बहुत कृतज्ञ हूँ। श्री रिचके साथ मिलकर मैं उसपर तुरन्त काम शुरू कर रहा हूँ। इन सुझावोंको शामिल करनेके बाद मैं कुछ प्रतियाँ छपवा लूँगा और आपको भेज दूँगा; लेकिन उनके छापनेका अन्तिम निर्देश तबतक न दूँगा जबतक आपकी मंजूरी और प्रचारकी अनुमति न मिल जाये।

आपका आज्ञाकारी सेवक,

[सहपत्र]

इस आरोपके सम्बन्धमें कि शिक्षित भारतीयोंका प्रश्न एक नया प्रश्न है

यह स्मरण रखना आवश्यक है कि दो सम्मेलन हुए थे, एक जनवरी १९०८ में हुआ था, जब श्री गांधी जेलमें ही थे।[4] उस समय शिक्षित भारतीयोंके प्रश्नकी चर्चा नहीं की गई

१. यह सहपत्र उपलब्ध नहीं है; लेकिन गांधीजीने संशोधनका जो मसविदा बनाया था उसे लॉर्ड ऍम्टहिलने उनसे लेकर १० अगस्तको जनरल स्मट्सको भेज दिया था। यह सहपत्र २ में दिया हुआ है। लॉर्ड ऍम्टहिलने गांधीजी द्वारा उनके ९ अगस्तके पत्रमें सुझाई गई धाराको शामिल कर लिया था; लेकिन यह नहीं बताया था कि यह गांधीजीकी सुझाई हुई है। देखिये "पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिल्को", पृष्ठ ३४१-४२।

२. मूल प्रतिमें यहाँ कुछ शब्द गायब हैं।

३. देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २८७-३००।

४. गांधीजीको १० जनवरी, १९०८ को दो महीनेकी सजा दी गई थी, परन्तु उन्हें ३० जनवरीको रिहा कर दिया गया था। देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ३६-३७ और पृष्ठ ४३-४४।

थी, क्योंकि ऐसी चर्चाकी आवश्यकता नहीं थी। यह इसलिए कि स्वेच्छया पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) करानेकी शर्तें पूरी होनेपर १९०७ के कानून २ के रद हो जानेसे शिक्षाकी योग्यता-प्राप्त ब्रिटिश भारतीयोंका अधिकार अपने-आप फिर स्थापित हो जाता।

दूसरा सम्मेलन २० अगस्तको हुआ। उसमें कार्यकारिणी परिषद [के सदस्य], प्रगतिवादी दलके नेता, श्री कार्टराइट, श्री गांधी और श्री क्विन सम्मिलित थे। यही वह सम्मेलन था जिसके सम्बन्धमें कहा गया है कि उसमें जिन मुद्दोंपर बातचीत हुई उनमें शिक्षित भारतीयोंका प्रश्न नहीं था। जनरल बोथाने अपने ५ सितम्बर १९०८ के खरीते ५२८, पृष्ठ ४३, सी० डी० ४३२७ में इस आरोपका स्पष्ट खण्डन किया है। उसमें जनरल बोथा कहते हैं: "बहसका नया विषय उन एशियाइयोंको देशमें आने देनेकी नई मांगका था, जो पहलेसे ट्रान्सवालके अधिवासी (डोमिसाइल) होनेका दावा नहीं करते, परन्तु जो शिक्षा-सम्बन्धी कसौटीमें उत्तीर्ण हो सकते हैं।" यह इस बातको स्वीकार करना है कि इस विषयपर सम्मेलनमें विचार हुआ था। परन्तु जनरल बोथाका कहना है कि वहाँ जो यह मांग उठाई गई सो नई बात थी। लेकिन, जैसा कि स्मट्स और श्री गांधीके बीच २२ फरवरी १९०८ को शुरू होनेवाले पत्र-व्यवहारसे स्पष्ट है यह भी गलत है।[1] दरअसल तथ्य यह है कि सम्मेलनका आयोजन ही इसलिए किया गया था कि जनरल स्मट्सके साथ उक्त कानूनको रद करनेके बारेमें जो बातचीत चल रही थी, वह विफल हो गई थी, क्योंकि जनरल स्मट्सने एक नई शर्त लगाई थी कि शिक्षित ब्रिटिश भारतीयोंपर प्रतिबन्ध रहनेपर ही वे कानूनको रद करेंगे। इसके अतिरिक्त, [उक्त उद्धरणमें][2] ऐसी मांग थी जिसे मन्त्रिगण पहले ही न मानने योग्य ठहरा चुके थे। परन्तु यदि ऐसा न होता तो भी यह जानना कठिन है कि किस उपायसे एशियाइयोंके प्रवासका विधान करनेवाला विधेयक और सम्बद्ध धारा, इस विषयपर श्वेत उपनिवेशियोंकी लगभग सर्वत्र व्याप्त भावनाको ध्यानमें रखते हुए, ट्रान्सवाल-संसदके किसी भी सदन द्वारा पास किये जा सकते हैं।" यह भी कह दिया जाये कि इस सम्मेलनमें कोई समझौता नहीं हुआ था। एशियाई नेता कार्यकारिणी परिषदके सदस्यों और प्रगतिशील नेताओंसे यह स्पष्ट निर्देश पाकर चले आये थे कि वे अपनी-अपनी समितियोंके सम्मुख वे मुद्दे रखें, जिनपर सम्मेलनमें विचार किया गया है और जनरल स्मट्सको समितियोंका फैसला बता दें। तदनुसार तुरन्त ही एशियाई समितियोंकी बैठकें हुई और श्री गांधी तथा श्री क्विन दोनोंने जनरल स्मट्सको सारी कार्रवाईसे अवगत करा दिया। जिस सरकारी रिपोर्ट (ब्लू बुक) का ऊपर जिक्र है, उसमें वह पत्र पूरा नहीं दिया गया है जो जनरल स्मट्सके निजी सचिवके विशेष अनुरोध करनेपर लिखा गया था। श्री लेन (स्मट्सके निजी सचिव) को तारीख २० अगस्तको लिखे गये पत्रकी प्रारम्भिक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:[3]

श्री कार्टराइटने मुझसे कहा है कि मैंने आजकी सभाके निर्णयके बारेमें उन्हें जो-कुछ बताया है, सो मैं आपको लिख दूँ और साथ ही तत्सम्बन्धी अपने विचार भी व्यक्त कर दूँ।

१. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ९८-१०१।
२. मूल प्रतिमें यहाँ कुछ शब्द गायब हैं।
३. देखिए खण्ड ८, पृष्ठ ४५६-५९।

मैंने आज तीसरी बार सभाके सामने वे शर्तें रखीं जिनके बारेमें मैंने उन्हें बताया कि सरकार उन्हें देनेपर तैयार है। मैंने उन्हें यह भी बताया कि यदि उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयों तथा सोरावजीकी बहालीके लिए कोई व्यवस्था इनमें कर दी जाये तो ये ही शर्तें स्वीकार्य समझौतेका रूप ले लेंगी। किन्तु सभा एशियाई अधिनियमको रद करने तथा प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमकी सामान्य धाराके अन्तर्गत उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंको मान्यता देनेसे कम किसी भी बातको सुननेके लिए तैयार नहीं थी। मैं लोगोंको अधिकसे-अधिक केवल इसीपर राजी कर सका कि वैधानिक अधिकार मंजूर कर लिया जाये तो शिक्षित भारतीयोंके खिलाफ बरते जानेवाले ऐसे प्रशासनिक भेदभावपर कोई आपत्ति नहीं होगी, जिसके कारण केवल अत्यन्त उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीय ही प्रवेश पा सकें।[1]

[सहपत्र २]

संशोधन

१९०७ के प्रवासी-प्रतिबन्धक कानून (इमिग्रेशन रिस्ट्रिक्शन ऐक्ट) १५ के खण्ड २ के उपखण्ड १ का एक हिस्सा इस तरह है:

"कोई भी व्यक्ति, जो उपनिवेशमें या उपनिवेशके बाहर, बाकायदा अधिकार-प्राप्त अफसरके कहनेपर अपर्याप्त शिक्षाके कारण इस उपनिवेशमें प्रवेशकी अनुमतिके आवेदनपत्र या ऐसे कागजात, जो वह अफसर माँगे, किसी यूरोपीय भाषाके अक्षरोंमें (बोलकर लिखानेपर या अपने-आप) न लिख सके या उनपर उक्त अक्षरोंमें हस्ताक्षर न कर सके, व्यवस्थाकी जाती है कि इस उपखण्डके प्रयोजनोंके लिए यीडिश यूरोपीय भाषा मानी जायेगी; यह भी व्यवस्था की जाती है कि" (इसके बाद जो-कुछ दिया गया है, वह महत्त्वपूर्ण नहीं है।)

उपखण्ड १ का प्रस्तावित संशोधन यह था:

"कोई व्यक्ति जो, उपनिवेशमें या उपनिवेशके बाहर, किसी बाकायदा अधिकार-प्राप्त अफसरके कहनेपर अपर्याप्त शिक्षाके कारण यूरोपीय भाषामें नियत की गई परीक्षा पास न कर सकेगा; व्यवस्था की जाती है कि इस खण्डके प्रयोजनोंके लिए यीडिश यूरोपीय भाषा मानी जायेगी; यह भी व्यवस्थाकी जाती है कि यह परीक्षा कैसी हो, यह प्रवासी-अधिकारी पूरी तरह अपनी मर्जीसे तय कर सकेगा। यह परीक्षा व्यक्तियों या वर्गोंके लिए अलग-अलग हो सकती है। उसके सम्बन्धमें सर्वोच्च न्यायालयमें या उपनिवेशकी किसी अदालतमें अपील न की जा सकेगी। यह भी व्यवस्थाकी जाती है कि किसी ऐसे एशियाईपर, जो प्रवासी अधिकारी द्वारा ली गई इस परीक्षामें पास हो जायेगा और दूसरी तरहसे इस कानूनके अन्तर्गत निषिद्ध प्रवासी न होगा, १९०८ के कानून ३६ की धाराएं लागू न होंगी; यह भी व्यवस्था की जाती है।"

१. लॉर्ड ऐम्टहिलने इस ७ अगस्तको इस पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करते हुए लिखा था कि यह प्रलेख उन्हें ठीक जान पड़ा है और वे उसको तत्काल ही काममें ला सकेंगे।

इसपर टिप्पणियाँ

१. अगर १९०७ का कानून रद कर दिया गया और अगर १९०८ का कानून ३६ न रहा तो प्रस्तावित संशोधनमें कानून ३६ के उल्लेखकी बात ही न रहेगी। लेकिन इसका उल्लेख इसलिए आवश्यक हो गया है कि कानून ३६ में देश-निकालेकी एक धारा है; और कानून १५ के खण्ड २ के उपखण्ड ४ में यह व्यवस्था है कि जिस व्यक्तिपर देश-निकालेकी आज्ञा लागू हो सकती है वह व्यक्ति शिक्षा-परीक्षा[1] पास कर लेनेपर भी निषिद्ध प्रवासी हो जाता है। उक्त उपखण्ड ४ इस तरह है:

> **कोई भी व्यक्ति, जो इस उपनिवेशमें प्रवेशकी या प्रवेश करनेके प्रयत्नकी तारीखको, किसी ऐसे कानूनकी धाराओंके प्रभाव-क्षेत्रमें आता हो या प्रवेश करनेपर आ जाये, जो उस तारीखको लागू हो और जिसके अन्तर्गत उसे, यदि वह इस उपनिवेशमें मिले तो, उसी तारीखको या उसके बाद इस उपनिवेशसे निकाला जा सके, या निकल जानेकी आज्ञा दी जा सके; चाहे यह निष्कासन या आज्ञा ऐसे किसी कानूनको तोड़नेके अपराधमें प्राप्त सजाके कारण दी गई हो, चाहे उसकी किसी धाराका पालन न करनेके कारण, या उस कानूनकी धाराओंके अनुसार अन्य किसी कारणसे। शर्त यह है कि उस व्यक्तिको किसी ऐसे जुर्मके लिए सजा न दी गई हो जो उसने उपनिवेशसे बाहर किसी अन्य स्थानपर किया हो और जिसके लिए वह माफी पा चुका हो।**

२. परीक्षाके सम्बन्धमें प्रस्तावित संशोधन जनरल स्मट्स द्वारा उठाई गई इस आपत्तिको दूर करनेके लिए दिया गया है कि मौजूदा कानूनमें शायद प्रवासी अधिकारीको विवेकके प्रयोगका काफी अधिकार नहीं है, जिससे वह एक प्रवासीके लिए एक तरहकी परीक्षाकी व्यवस्था कर सके और दूसरेके लिए दूसरी तरहकी।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९८०); और कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स २९१/१४२ से।

२०१. पत्र : उपनिवेश-उपमन्त्रीको

[लन्दन]
अगस्त ६, १९०९

महोदय,

मैं नम्रतापूर्वक आपके इसी चार तारीखके पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करता हूँ, जिसमें आपने कहा है कि लॉर्ड क्रू ने मेरे साथीसे और मुझसे मंगलवार १० तारीखको ३–३० बजे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके सम्बन्धमें मिलना मंजूर किया है। मेरे साथी और मैं उक्त समयपर लॉर्ड महोदयकी सेवामें उपस्थित होंगे।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ४९८४) से।

१. मूलमें यहाँ "एक्जामिनेशन टेस्ट" है।

२०२. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त ६, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं अभी विवरणकी[1] बीस प्रतियाँ भेज रहा हूँ। आपके दिये गये अधिकतर सुझाव इसमें आ गये हैं और मुझे आशा है कि वे जिस ढंगसे लिये गये हैं वह आपको पसन्द आयेगा। विवरण दुरूह (टेकनिकल) न हो जाये, इस खयालसे आपके आवश्यक समझे हुए कुछ स्पष्टीकरण अन्तमें टिप्पणियोंके रूपमें दे दिये गये हैं। जैसा कि एक पहले पत्रमें कहा जा चुका है, विवरण अब भी प्रूफके रूपमें है। इसलिए यदि और भी कोई संशोधन आवश्यक हो तो वह किया जा सकता है।

टिप्पणी 'घ' वह प्रार्थनापत्र[2] है जिसका उल्लेख अनुच्छेद २९ में किया गया है। यह अभी छापी नहीं गई है। किन्तु आपके अवलोकनके लिए मैं इस पत्रके साथ उसकी नकल भेजता हूँ।

आपके पत्रोंकी नकल की जा रही है।

मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि यदि माँगोंपर सर जॉर्ज फेरारकी सहमति प्राप्त की जा सके तो श्री स्मट्सके कोई आपत्ति करनेकी सम्भावना नहीं रहेगी।

सम्भव है, श्री स्मट्स कह दें कि संघ-निर्माणके कारण शायद अब ट्रान्सवाल संसदका कोई अधिवेशन न होगा, इसलिए मैं कुछ नहीं कर सकता। यदि वे यह रुख ग्रहण करें तो भी यह वचन दे सकते हैं कि वे संघके अन्तर्गत बनाई जानेवाली प्रान्तीय परिषदके पहले अधिवेशनमें किसी भी प्रकार दोनों माँगोंको मंजूर करा देंगे और तबतक प्रवासी कानूनपर इस प्रकार अमल किया जायेगा मानो एशियाई कानून है ही नहीं . . .[3] तब अनाक्रामक . . .[4] प्रयत्न सफल होनेपर, मैं यह मान लेता हूँ कि इस समय ट्रान्सवालकी जेलोंमें जो अनाक्रामक प्रतिरोधी हैं वे बिना शर्त रिहा कर दिये जायेंगे और जो निर्वासित कर दिये गये हैं उनको पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) के लिए अर्जी देनेका अवसर दिया जायेगा।

यदि श्रीमान हमारा आपसमें परामर्श करना आवश्यक मानते हों तो मैं सेवामें हाजिर हूँ।

लॉर्ड क्रू ने अब मेरे साथीसे और मुझसे भेंटके लिए अगले मंगलका दिन नियत कर दिया है।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९८२) से।

१. देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २८७-३००।
२. देखिए "प्रार्थनापत्र: उपनिवेश मंत्रीको", पृष्ठ १७-२८। इसे विवरणमें शामिल नहीं किया गया था।
३ और ४. बिन्दुओंके स्थानपर दफ्तरी प्रति फट गई है।

२०३. पत्र: एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
अगस्त ६, १९०९

प्रिय हेनरी,

मैं आज आपको एक तार[1] भेज रहा हूँ। अबतक इसलिए नहीं भेजा गया कि मैं एक-दो शब्दोंको सांकेतिक बनाकर कुछ शिलिंग बचा लेना चाहता हूँ। यद्यपि मिलीने मुझे बताया कि वे आपको एक तार भेजनेका वादा कर चुकी थीं, मैंने विवेकका उपयोग करके सीधे तार नहीं भेजा और यह आप पर छोड़ दिया कि आप दफ्तरीको भेजे गये तारसे[2] उनके आनेका अनुमान लगा लें। मिली अपने विषयमें विस्तारसे आपको लिखेंगी ही, इसलिए मैं इस पत्रमें अधिक नहीं लिख रहा हूँ। मैं इसके साथ विवरण (स्टेटमेंट) भेज रहा हूँ। इसमें कई परिवर्तन और संशोधन हुए हैं। इसे अब भी अन्तिम रूप नहीं मिला है और न यह बाँटनेके लिए ही है। लॉर्ड ऍम्टहिल इन चीजोंके बारेमें बहुत ही सतर्क हैं। जबतक बातचीत चल रही है, वे नहीं चाहते कि इस तरफ किसी प्रकारकी सार्वजनिक कार्रवाई की जाये। वे अगले सोमवारको जनरल स्मट्ससे मिलेंगे। हमें लॉर्ड क्रू से अगले मंगलको मिलना है। इसलिए अगले हफ्तेमें अवश्य यह तय हो जायेगा कि हमें आगे यहाँ किस तरह काम करना है। जो भी हो, जबतक निश्चित समझौता न हो जाये, आपके कामपर यहाँकी कार्रवाईका असर नहीं पड़ना चाहिए और यदि समझौता हो जाये तब भी, मेरा खयाल है, आपको वहाँकी यात्राका पूरा लाभ उठाना चाहिए। सारे भारतमें घूमकर सभी नेताओंसे मिलना चाहिए और उन्हें वस्तुस्थिति बतानी चाहिए। समझौता हो जानेपर यदि आप एक पुस्तिका[3] प्रकाशित करायें जिसमें समस्त दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके कष्टोंका इतिहास हो तो बुरा न होगा। यह पुस्तिका मेरी 'हरी पुस्तिका' (ग्रीन पेम्फलेट[4])की तरहकी हो सकती है। मेरा खयाल है, वह आपके पास है ही। मिलीसे मुझे मालूम हुआ है कि वे हर हालतमें करीब एक साल तक लन्दनमें रहेंगी ही। मैं खुद भी समझता हूँ कि उन्हें ऐसा ही करना चाहिए। मेरा खयाल है, कि आप कमसे-कम ३ महीने भारतमें रहेंगे। यदि आवश्यक हो तो कांग्रेस अधिवेशनके लिए भी रुक जाइए। फिर भी, सम्भव है कि यहाँके कामकी प्रगतिके अनुसार

१ और २. ये उपलब्ध नहीं हैं।

३. पोलकने अपने २१ अगस्तके पत्रमें लिखा था: "मैंने दक्षिण आफ्रिकाके कष्टोंके बारेमें पुस्तिका तैयार कर ली है। इसे मैंने पहले ही जहाजपर लिख लिया था। जबतक समझौता न हो जाये मैं उसमें ट्रान्सवालकी समस्याके सिवा और कुछ नहीं लिख रहा हूँ।" यह पुस्तिका अक्तूबर १९०९ में जी० ए० नटेसन, मद्रास द्वारा इस शीर्षकसे प्रकाशित की गई थी: **दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय: साम्राज्यमें गुलामोंकी स्थिति और उनके साथ व्यवहार**। पोलकने ट्रान्सवालकी समस्यापर एक और पुस्तिका भी लिखी जिसका शीर्षक था: **ट्रेजेडी ऑफ एम्पायर: ट्रीटमेन्ट ऑफ ब्रिटिश इंडियन्स इन ट्रान्सवाल**।

४. इसका शीर्षक था, **दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतें: भारतीय जनतासे अपील**। देखिए खण्ड २, पृष्ठ १-५९।

इसमें रद्दोवदल करना पड़ेगा। यदि कोई समझौता न हो तो आप अपनी शक्ति केवल ट्रान्सवालके प्रश्नपर ही केन्द्रित कीजिए। दूसरे विषय छेड़कर जनताका ध्यान न बँटाइए। मैंने आपको लॉर्ड ऍम्टहिलके पत्रोंकी नकलें जान-बूझकर नहीं भेजीं। फिर भी जो पत्र मैंने उन्हें लिखे हैं उनकी नकलें भेज रहा हूँ। इनसे आपको मालूम होगा कि यहाँ क्या हो रहा है और हमपर क्या आरोप लगाये जा रहे हैं।

आपका तार समयपर मिल गया था। आशा है आप जिन लोगोंसे मिलते हैं वे आपके साथ अच्छा वर्ताव करते होंगे, और उन्होंने आपके निवासके लिए उपयुक्त स्थान खोज दिया होगा।

आप 'वम्वई गज़ट'के कार्यालयमें किसी पुस्तकालयमें १३ जुलाईका 'गज़ट' देख लीजिए। उसमें हमारे संघर्ष पर एक लम्वा सम्पादकीय प्रकाशित हुआ है। जान पड़ता है कि वह लेख किसीके कहनेसे लिखा गया है और उसमें खुद मुझसे अनुरोध किया गया है कि मैं अपनी कार्रवाई भी कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित रखूँ।[1] वह लेख बहुत सहानुभूतिपूर्ण है। आपको उसे पढ़नेकी कोशिश करनी चाहिए। मुझे वह कुमारी स्मिथने दिखाया था। उसकी कतरन मैं जोहानिसवर्ग भेज रहा हूँ। हाँ, जव भी समय मिले, आप वहाँके सार्वजनिक पुस्तकालयोंमें जानेकी कोशिश कीजिए और श्री वेलिनकरसे[2] परिचय कर लीजिए। वे एक वड़े शिक्षा-शास्त्री हैं। मेरा खयाल है, मैंने आपसे उनके वारेमें वात की थी। मैं उनके नाम परिचयकी कोई चिट्ठी आपको नहीं भेज रहा हूँ, क्योंकि मेरा खयाल है, अव आपको उसकी जरूरत नहीं होगी।

श्री डैलोने 'यार्कशायर डेली ऑब्ज़र्वर'को लिखे अपने पत्रमें आपका उल्लेख इस प्रकार किया है: "यह देखकर कि न्यायके आधारपर साम्राज्य-सरकारको प्रेरित करके भारतीयोंके दुःख दूर करानेके हमारे सारे प्रयत्न विफल हो गये हैं, भारतीय नेताओंने अपने एक गोरे हमदर्दको इस आशासे भारत भेजा है कि इससे भारतीयोंका ध्यान उनके कष्टोंके प्रति जागृत होगा। ये सज्जन एक अंग्रेज यहूदी हैं, पेशेसे अटर्नी और आचार-विचारसे हिन्दू हैं। भारतीय शिष्टमण्डलमें नियुक्त किये जानेवाले ये ही एक व्यक्ति हैं जिन्हें ट्रान्सवाल सरकार गिरफ्तार नहीं कर सकी।" एक दृष्टिसे यह कैसी मानहानि है कि आपको आचार-विचारसे हिन्दू समझा जाये। कैलेनवैक इसपर क्या कहेंगे? फिर भी, दूसरी दृष्टिसे, यह निःसन्देह प्रशंसा है। आप इसे दोनोंमें से कुछ भी न मानें। मुझे मालूम है कि श्री डैलो इसी लहजेमें लोकसभाके एक सदस्यको लिखते रहते हैं। यह पत्र लिखाते-लिखाते मैं अपना विचार वदल रहा हूँ और अव यह लेख कैलेनवैकको भेजनेके वजाय आपको भेजूँगा। आप इसे सारा ही पढ़ना चाहेंगे, और जोहानिसवर्गमें तो यह किसी काममें न आयेगा।

१. ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके मामलेपर टिप्पणी करते हुए पत्रने गांधीजीकी चर्चा की थी और लिखा था कि 'अगर वे गैर-जिम्मेदार गिरे हुए लोगों'-के हाथोंमें पड़ जाते हैं, तो इससे यही अच्छा होता कि वे दक्षिण आफ्रिकामें ही रहते. . .एक खास वर्गके आन्दोलनकारी इस वक्त ब्रिटेनमें घूमते हैं और जो नहीं जानते कि वे विना समझे-बूझे क्या-क्या प्रचार करते हैं। हम विश्वास करते हैं कि श्री गांधी उनके मार्गपर न जायेंगे और ज्यादा समझदारी दिखायेंगे।"

२. वे वम्बईके विल्सन कॉलेजमें भी प्रोफेसर रहे। वे गोखलेके मित्र थे।

नेटाल शिष्टमण्डल यानी सर्वश्री अब्दुल कादिर, आंगलिया, भायात और वदात यहाँ आ गये हैं। नेटालके प्रतिनिधियोंके लिए तैयार किये गये विवरणका मसविदा[1] मैं इसके साथ भेज रहा हूँ। जिस क्रमसे शिकायतें प्रस्तुत होनी चाहिए थीं, उसमें हेरफेर मैंने नहीं किया है।

जंजीबारसे ट्रान्सवालके संघर्षका समर्थन करनेवाला एक बढ़िया तार सर मंचरजीको मिला है।[2] सर मंचरजीने उसकी नकलें उपनिवेश कार्यालय तथा इंडिया ऑफिस दोनोंको भेजी हैं।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९८१) से।

२०४. लन्दन

शुक्रवार, अगस्त ६, १९०९

नेटालका शिष्टमण्डल

श्री आमद भायात, श्री एच० एम० वदात और श्री आंगलिया पिछले शनिवारको सकुशल यहाँ आ गये हैं। उनका स्वागत करनेके लिए श्री रिच, श्री हाजी हबीब, कुमारी पोलक, श्री आजम हाफेजी, श्री हुसेन दाउद, श्री अब्दुल कादिर और श्री गांधी गये थे। उनके ठहरनेकी व्यवस्था उसी होटलमें की गई है जिसमें ट्रान्सवालके शिष्टमण्डलकी। नेटालके सदस्योंने सर मंचरजी, नवाब मेजर सैयद हुसेन बेलग्रामी, सैयद हुसेन और श्री गुप्तके साथ मुलाकात की है। उन्होंने लॉर्ड क्रू और लॉर्ड मॉर्लेसे मिलनेकी प्रार्थना की है। इनमें से लॉर्ड क्रू का उत्तर मिला है कि वे गुरुवार, १२ अगस्तको मिलेंगे। इन लोगोंने एक विवरण तैयार किया है।[3] मुझे लगता है कि शिष्टमण्डलकी कोई सुनवाई नहीं होगी। एक तो वक्त निकल चुका है और दूसरे वह पुराने मामलेको ले कर आया है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि वह यहाँसे जो अनुभव ले जायेगा वह भारतीय समाजके लिए लाभप्रद होगा। शिष्टमण्डल अन्य प्रमुख लोगोंसे मिलनेकी कोशिश कर रहा है। यह समय ऐसा है जब इंग्लैंडके बहुत-से प्रमुख लोग सैर करने चले जाते हैं और सितम्बर तक वापस नहीं आते। न्यायमूर्ति अमीर अली भी फिलहाल यहाँ नहीं हैं। वे दूर गये हुए हैं।

श्रीमती रिच

श्रीमती रिचने बहुत सख्त बीमारी झेली है। ये भली महिला पिछले दो सालसे पीड़ित हैं। उनके घावकी चार बार चीरफाड़ की गई है। वे खाटसे लग गई हैं। श्री रिच उनकी

१. मूल मसविदा उपलब्ध नहीं है; लेकिन संशोधित मसविदेके लिए, जिसपर शिष्टमण्डलके सदस्योंके दस्तखत हैं, देखिए "नेटालवासी भारतीयोंके कष्टोंका विवरण", पृष्ठ ३४३-४९।

२. यह श्री पोलककी जंजीबार यात्राके सम्बन्धमें था। इसका उल्लेख उन्होंने अपने २१ अगस्तके पत्रमें किया है।

३. इसका मसविदा स्वयं गांधीजीने तैयार किया था। देखिए पिछला शीर्षक।

बीमारीके खर्चसे दब गये हैं। कहा नहीं जा सकता कि वे इस बोझसे कैसे उबरेंगे। उन्होंने बैरिस्टरी शुरू की है। उसमें उन्होंने कुछ नाम भी कमाया है और कुछ महत्त्वपूर्ण मुकदमे जीते हैं। लेकिन यहाँ नये बैरिस्टरकी कमाई ज्यादा नहीं होती। मेरी सलाह है कि भारतीय उनको सहानुभूतिके पत्र लिखें। उनका पता यह है: श्री एल० डब्ल्यू० रिच, ५, पम्प कोर्ट, टेम्पल, ई० सी० लन्दन। मुझे आशा है कि श्रीमती रिच आखिर खाटसे उठ खड़ी होंगी।

स्त्रियोंके मताधिकारके लिए आन्दोलन करनेवाली महिलाएँ

मताधिकारके लिए आन्दोलन करनेवाली स्त्रियाँ बहुत परिश्रम कर रही हैं। मैं उनकी परिश्रमशीलता, संगठन-पटुता और कष्ट-सहिष्णुता ज्यों-ज्यों देखता जाता हूँ त्यों-त्यों मुझे लगता है कि उनके कामके मुकाबले हमारा काम कुछ भी नहीं है। उनके पास स्वयंसेवक बहुत हैं। वे यहाँ मन्त्रियोंकी सभाओंमें जबरदस्ती घुसकर गिरफ्तार हो जाती हैं और जेल जाती हैं। जेलमें जाकर खाना बिल्कुल नहीं खातीं। इससे अधिकारी उनको रिहा कर देते हैं। वे अधिकारियोंको तरह-तरहसे परेशान करती हैं और यह प्रतिज्ञा कर चुकी हैं कि उनको जबतक मताधिकार नहीं दिया जाता तबतक वे चैनसे बिलकुल नहीं बैठेंगी।

दक्षिण आफ्रिकी संघ

दक्षिण आफ्रिकी संघ विधेयक (यूनियन बिल) ब्रिटेनकी लॉर्ड सभामें स्वीकृत हो चुका है। अब वह कुछ दिनोंमें लोकसभामें आ जायेगा। श्री श्राइनर अभीतक प्रयत्न कर रहे हैं; लेकिन मुझे दिखाई नहीं देता कि कुछ लाभ होगा। चर्चा खूब हुई है। लाभ हो या न हो, किन्तु श्री श्राइनरकी सावधानी, परिश्रमशीलता और परोपकार-भावना सब बहुत प्रशंसनीय हैं।

श्री धींगरा

श्री धींगराको फाँसीकी सजा हुई है। उन्हें १० तारीखको फाँसी दी जानेवाली है। कुछ अंग्रेज ऐसा प्रयत्न कर रहे हैं कि उनको फाँसी न हो। उनका तर्क यह है कि श्री धींगराने यह कार्य अज्ञानवश किया है। इसके अलावा, वे यह भी कहते हैं कि वह कार्य करनेमें उनका कोई व्यक्तिगत लाभ नहीं था; इसलिए उस हत्याको सामान्य प्रकारकी हत्या न मानना चाहिए। 'इंडियन सोशियॉलॉजिस्ट' पत्रके अंग्रेज मुद्रकको तत्सम्बन्धी अंक छापनेपर चार मासकी कैदकी सजा मिली है। यह अंग्रेज बहुत गरीब आदमी है; और बहुत नुकसानमें पड़ गया है। उसको तो अपने पत्रमें प्रकाशित लेखोंका कुछ ज्ञान ही नहीं था। लेकिन कानूनमें बचावके लिए अज्ञानकी दलील स्वीकार नहीं की जाती।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-९-१९०९

२०५. शिष्टमण्डलकी यात्रा [–६]

[अगस्त ७, १९०९ के पूर्व]

पिछले हफ्तेकी तरह इस हफ्ते भी मैं आपको कोई खास खबर नहीं दे सकता, क्योंकि सारी बातें गोपनीय हैं। लॉर्ड ऍम्टहिल खुद कोशिश कर रहे हैं। सुलह होनेकी कुछ आशा की जा सकती है। अगर सुलह हो गई तो भी कानूनको रद करने और शिक्षित भारतीयोंके अधिकारकी रक्षाके सिवा किसी अन्य बातका होना सम्भव नहीं दीखता। शिक्षित भारतीयोंके अधिकारका अर्थ वही समझना चाहिए, जो बहुत बार 'इंडियन ओपिनियन' में बताया जा चुका है; अर्थात् जो बहुत पढ़े-लिखे होंगे वे ही आ सकेंगे, और उनमें से भी केवल छः। यह बात ठीक है कि कानूनमें छः का जिक्र नहीं होगा और उसी तरह उसमें गोरे और कालेका भी भेद नहीं होगा। कानून एक होगा [लेकिन भारतीयोंके मामलेमें] अमल जुदा होगा। कानून एक होगा तो अपमान नहीं होगा। कानूनमें भेद रहेगा तो अपमान होगा। इसके अलावा दूसरी फुटकर बातें समझौतेमें नहीं आ सकेंगी, यह सब भारतीयोंको याद रखना है। मुझे आशा है कि अगले हफ्ते कुछ ज्यादा समाचार दे सकूँगा।

इस विषयमें सर मंचरजी भी बहुत प्रयत्न कर रहे हैं। उन्होंने जनरल स्मट्सको मुलाकातके लिए चिट्ठी लिखी थी। उस चिट्ठीका जवाब यह आया है कि संघ (यूनियन) से सम्बन्धित कार्योंसे छुटकारा मिलनेके बाद मुलाकातका वक्त तय करेंगे।

शिष्टमण्डल लॉर्ड क्रूसे मंगलवार ९[1] तारीखको भेंट करेगा। उसी दिन बहुत-से भारतीय जेलसे छूटनेवाले हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-९-१९०९

२०६. पत्र: अमीर अलीको

[लन्दन]
अगस्त ७, १९०९

प्रिय श्री अमीर अली,

श्री अब्दुल कादिरने मुझे आपका इसी दूसरी तारीखका पत्र दिखाया है। जहाँतक ट्रान्सवालके प्रश्नका सम्बन्ध है, बातचीत अभी प्रगति कर रही है। हम निजी तौरपर लॉर्ड मॉर्लेसे मिल चुके हैं और मंगलको निजी तौरपर ही लॉर्ड क्रूसे भी मिल रहे हैं। अभी यह कहना सम्भव नहीं है कि परिणाम क्या होगा। हमने एक विवरण प्रकाशित करने,

१. मूलमें "९ तारीख" है। भेंट तारीख १० मंगलवारको तय हुई थी; देखिए "पत्र: उपनिवेश-उपमंत्रीको", पृष्ठ ३३३।

और आवश्यक हो तो वितरित करनेके लिए, तैयार कर लिया है। बातचीतके कारण कोई सार्वजनिक कार्रवाई आरम्भ नहीं की गई है। मेरा खयाल है कि यदि आप इस प्रश्नके सम्बन्धमें सर चार्ल्स रिचर्डको एक व्यक्तिगत पत्र भेज देंगे तो उनके मनमें इस मामलेकी याद ताजी हो जायेगी, और उन्हें इस बातका भी एहसास हो जायेगा कि आप इस प्रश्नको अपनी छुट्टियोंमें भी नहीं भूलते। इससे इस विश्वासको भी — जो जड़ पकड़ रहा है — बल मिलेगा कि भारत इस प्रश्नके सम्बन्धमें चुप बैठा न रहेगा।

आशा है, इस परिवर्तनसे और स्विट्ज़रलैंडकी स्वास्थ्यप्रद पहाड़ी जलवायुसे आपको और आपकी पत्नीको बहुत लाभ हो रहा होगा।

श्री अब्दुल कादिर कहते हैं कि आपके पत्रके लिए मैं आपको धन्यवाद दे दूँ और यह लिख दूँ कि उन्होंने और श्री हाजी हबीबने दोनों संस्थाओंके[1] लिए जो-कुछ दिया है, वह कर्तव्यके रूपमें दिया है। मैं आपके इस कथनसे सहमत हूँ कि दोनों संस्थाओंकी कार्रवाइयोंमें सब भारतीयोंको योग देना चाहिए।

आपको यह बात याद होगी कि श्री अब्दुल कादिर नेटालके प्रतिनिधि हैं। नेटाल शिष्टमण्डलके सदस्योंकी संख्या अब पूरी हो गई है, क्योंकि दूसरे तीन सदस्य गत शनिवारको आ गये हैं। उनको आपसे मिलने, आपकी सलाह लेने और उसके अनुसार चलनेका विशेष आदेश दिया गया है। उन्होंने आपके पतेके लिए तार भी दिया था और वह उनको श्री अहमदसे मिल गया। तब वे टॉमस कुक ऐंड संसके पास यह पता लगानेके लिए गये कि वे आपके पास कैसे पहुँच सकते हैं; किन्तु, यह जानकर कि यह करीब-करीब तीन दिनका सफर है, उन्हें वहाँ आपसे भेंट करनेका विचार अनिच्छापूर्वक त्याग देना पड़ा। अब नेटालके प्रतिनिधियोंकी ओरसे एक विवरण तैयार किया गया है, जिसे मैं इसके साथ नत्थी करता हूँ। यदि आपको कोई सुझाव देने हों तो क्या आप कृपा करके तारसे भेज देंगे? नेटाली प्रतिनिधियोंने लॉर्ड क्रू और लॉर्ड मॉर्लेसे मुलाकात माँगी है। लॉर्ड क्रूने शिष्टमण्डलसे मिलनेके लिए आगामी बृहस्पतिका दिन नियत किया है। वे अत्यन्त निराश हैं कि उनको उस समय आपकी मौजूदगी और सलाहका लाभ न मिलेगा। फिर भी यदि आप लॉर्ड क्रूके सम्मुख पढ़नेके लिए एक पत्र लिख सकें तो वह बहुत कीमती होगा। उन्होंने सर चार्ल्स ब्रूससे पूछा था कि क्या वे उनके शिष्टमण्डलका नेतृत्व कर देंगे। सर चार्ल्स ब्रूसने तारसे सूचित किया है कि वे ऐसा करनेमें असमर्थ हैं। शायद अब सर मंचरजी उसका नेतृत्व करेंगे।

आपका, आदि,

जस्टिस अमीर अली
इंगाडिन
स्विट्ज़रलैंड

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९८७) से।

१. नेटाल भारतीय कांग्रेस और ट्रान्सवाल ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन।

२०७. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त ९, १९०९

लॉर्ड महोदय,

श्रीमानने हमारे संघर्षमें भारी दिलचस्पी ली है; अतः जो विषय मेरे साथी और मेरे लिए सबसे अधिक महत्त्वका है उसपर लिखनेसे पहले क्या मैं श्रीमानको उसके लिए एक बार फिर धन्यवाद दे सकता हूँ? आखिरी नतीजा कुछ भी हो, आपने हमारे लिए जो-कुछ किया है उसके लिए मेरे देशवासी और मैं आपके प्रति जितनी कृतज्ञता प्रकट करें, कम होगी।

अगर मैंने आपकी बात ठीक समझी है तो आपकी राय यह है कि यदि कानूनमें ही संख्या सीमित कर दी जाये तो अधिकारके रूपमें प्रवेशकी बात मंजूर हो जायेगी। अगर ऐसा है तो मुझे लगता है कि इस रियायतके साथ ही कानून भी रद किया जाना चाहिए। इसके लिए अनाक्रामक प्रतिरोधियोंसे कोई सौदेबाजी न की जाये; बल्कि अगर जनरल स्मट्स सचमुच हमसे समझौता करना चाहते हैं तो उन्हें इस मामलेमें विचार करनेपर मेरे पेश किये संशोधनको[1] और नीचे दी गई धाराको मंजूर करनेमें कोई एतराज न होना चाहिए। इसे "१९०८" के बाद और "यह व्यवस्था भी की जाती है कि" से पहले रखा जाना चाहिए:

> व्यवस्था की जाती है कि उपनिवेशमें विभिन्न जातियोंके जिन लोगोंको प्रवासियोंके रूपमें आनेकी अनुमति दी जाये, उनकी संख्या गवर्नरकी परिषदके लिए विनियम (रेगुलेशन) से तय करना जायज़ होगा (भले ही ऐसे लोग ऐसी [योग्यताकी] परीक्षा पास कर चुके हों)।

इस संशोधनसे भारतीयोंकी प्रतिज्ञा-मात्र पूरी होती है। फिर भी इससे ब्रिटिश भारतीय होनेके नाते ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध विधान-संहितामें कोई अयोग्यता उत्पन्न नहीं होती। मेरी सम्मतिमें इससे जनरल स्मट्स द्वारा या उनकी ओरसे उठाई गई आपत्तियाँ पूरी तरह दूर हो जाती हैं।

मैं मानता हूँ कि यह संशोधन पेश करते हुए मैं उपनिवेशके कानून-निर्माणके इतिहासमें एक ख़तरनाक मिसाल कायम करनेमें सहयोग दे रहा हूँ। लेकिन जो अन्य प्रतिष्ठित सज्जन महानुभावके और हमारे उद्देश्यमें सहायक हैं उनके विचारोंका खयाल करके, मैं अपने देशवासियोंको इस अतिरिक्त धाराको माननेकी सलाह देनेके लिए तैयार हूँ। अब अगर यह [सरकार द्वारा] स्वीकार नहीं किया जाता तो, मुझे विश्वास है, आपको यह साफ मालूम हो जायेगा कि ट्रान्सवाल सरकार सम्मानपूर्ण समझौता करना नहीं चाहती। जनरल स्मट्सके तरीकोंकी — सही या गलत — मुझे कुछ जानकारी है। उस जानकारीके

१. देखिए लॉर्ड ऍम्टहिलको लिखे पत्रके साथ दिया गया सहपत्र २, पृष्ठ ३३२; तथा पृष्ठ ३३० पर पा० टि० १ भी।

आधारपर मैं यह सुझाव देनेकी धृष्टता करता हूँ कि अगर आपने उनसे वातचीत विलकुल खत्म न कर दी हो तो जनरल स्मट्सके सामने इस संशोधनको मेरे पाससे आया हुआ वताकर न पेश करें, वल्कि उनसे स्वतन्त्र रूपसे पूछें कि क्या वे प्रवासी कानूनमें ऊपर वताया गया संशोधन करनेके लिए तैयार हैं। मैं इस धाराको पेश कर रहा हूँ, इसका कारण यही है कि मैं तत्काल समझौता करने और आपके लम्वे तथा कठिन श्रमको व्यर्थ होनेसे वचानेका सच्चे दिलसे इच्छुक हूँ। लेकिन अगर इसका नतीजा कुछ भी न निकले तो मैं चाहता हूँ, आप मान लें कि यह कभी सुझाया ही नहीं गया था। जहाँतक मेरा सम्वन्ध है, मेरा पेश किया हुआ पहला संशोधन ऐसा है जिसे मैं अपने लोगोंको आन्दोलनके वीच किसी भी वक्त स्वीकार करनेकी सलाह दे सकता हूँ, लेकिन जिस धाराको मैं अव पेश कर रहा हूँ वह उस श्रेणीमें नहीं आती।

कृपया सूचित करें कि मैंने आपको जिस विवरणकी वीस प्रतियाँ भेजी थीं उसके सम्वन्धमें क्या आपको कोई और सुझाव देना है, और क्या अव वह प्रकाशित और वितरित किया जा सकता है?

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९९०) से।

२०८. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त ९, १९०९

प्रिय लॉर्ड ऍम्टहिल,

मुझे अव रेवरेंड श्री डोककी कितावका[1] प्रूफ मिल गया है, हालांकि इसमें कुछ देर हुई है। मैं वहुत उत्सुक हूँ कि यह किताव जितनी जल्दी सम्भव हो, छप जाये। मैं यहां यह भी जिक्र कर दूँ कि मेरे पास अनेक खरीदारोंके पेशगी पैसे भी आ गये हैं।

मैं जानता हूँ कि आप वहुत व्यस्त हैं, इसलिए आपपर यह अतिरिक्त भार डालनेमें संकोच हो रहा है। किन्तु आपने यह वादा करनेकी कृपा की थी कि आप प्रूफ पढ़ेंगे और अगर किताव पसन्द आयी तो उसकी भूमिका लिख देंगे। फिर भी आशा करता हूँ कि आप इस ओर ध्यान देनेका समय निकालनेकी कृपा करेंगे; क्योंकि मुझे विश्वास है आप यह काम करना चाहते हैं।[2]

मैं अलग लिफाफेमें प्रूफ भेज रहा हूँ।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९८९) से।

१. एम० के० गांधी: ऐन इंडियन पैट्रियट इन साउथ आफ्रिका।
२. लॉर्ड ऍम्टहिल द्वारा पुस्तककी भूमिकाके लिए देखिए परिशिष्ट १८

२०९. नेटालवासी भारतीयोंके कष्टोंका विवरण[1]

[लन्दन]
अगस्त १०, १९०९

नेटालवासी ब्रिटिश भारतीयोंके कष्टोंका संक्षिप्त विवरण
नेटालवासी भारतीयोंके शिष्टमण्डल द्वारा प्रस्तुत

इस शिष्टमण्डलमें ये लोग शामिल हैं: अब्दुल कादिर, नेटाल भारतीय कांग्रेसके कार्यवाहक अध्यक्ष; पीटरमैरित्सबर्गके आमोद भायात, जो पिछले २५ सालसे व्यापार करते आ रहे हैं; हुसेन मुहम्मद वदात, पीटरमैरित्सबर्ग और रिचमंडके व्यापारी, जो पिछले २२ सालसे व्यापार करते आ रहे हैं; और डर्बनके मुहम्मद कासिम आंगलिया, व्यापारी और नेटाल भारतीय कांग्रेसके संयुक्त अवैतनिक मन्त्री।

ये प्रतिनिधि पिछली ७ जुलाईको डर्बनमें आयोजित एक सभा में चुने गये थे। सभाकी अध्यक्षता नेटाल भारतीय कांग्रेसके कार्यवाहक अध्यक्ष श्री अब्दुल्ला हाजी आदमने की, और चुनाव सर्व सम्मतिसे हुआ। प्रतिनिधियोंको अपने उद्दिष्ट कार्यके समर्थनमें अनेक तार प्राप्त हुए हैं।

उपनिवेश-कार्यालयको एक प्रार्थनापत्र[2] भेजा गया है जिसकी एक नकल अब प्रतिनिधियोंको भी मिल गई है।

नेटालके ब्रिटिश भारतीय लम्बे अरसेसे अनेक गम्भीर निर्योग्यताओंसे पीड़ित हैं। ये निर्योग्यताएँ कुछ तो उन उपनिवेशके विधान-मण्डल द्वारा बनाये गये क़ानूनोंके और कुछ नगरपालिकाओं द्वारा निर्मित नियमोंके परिणाम हैं।

सम्राट्की सरकारने १९०६ के नगरपालिका कानून (म्युनिसिपल कॉरपोरेशन्स ऐक्ट) और १९०८ के नेटाल परवाना कानूनों (नेटाल लाइसेंसिंग ऐक्ट्स) को शाही-मंजूरी नहीं दी, इसलिए शिष्टमण्डल उसके प्रति आदरपूर्वक आभार प्रकट करता है। कारण, इन सब कानूनोंसे भारतीय समाजपर और ज्यादा निर्योग्यताएँ लदनेवाली थीं।

नेटालके ब्रिटिश भारतीयोंको नेटालकी संसदमें व्यवहारतः कोई प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है, इसलिए शाही सरकारका ही संरक्षण उनका लगभग एकमात्र आश्रय है। उनके लिए स्वशासन (सेल्फ-गवर्नमेंट) कोई विशेष या लाभप्रद अर्थ नहीं रखता।

१. यह विवरण गांधीजीने ६ अगस्तको ही तैयार कर लिया था। देखिए "पत्र: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३३७। श्री आंगलियाने इसे ११ अगस्तको उपनिवेश कार्यालय भेज दिया था। उन्होंने लॉर्ड क्रू के साथ हुई १२ अगस्तकी भेंटके अवसरपर इस सम्बन्धमें एक अतिरिक्त वक्तव्य भी दिया था; देखिए परिशिष्ट १९।

२. १० जुलाई १९०९ को यह प्रार्थनापत्र नेटाल भारतीय कांग्रेस तथा नेटालके विभिन्न भारतीय संघों द्वारा दिया गया था, जिसमें गिरमिटके करार, मताधिकार तथा व्यापार आदि विभिन्न प्रश्नों सम्बन्धी कष्टोंका विवरण था। देखिए "लन्दन", पृष्ठ ३५४।

लेकिन शिष्टमण्डल अपना आवेदन निम्नलिखित तीन कष्टों तक ही सीमित रखना चाहता है। ये तीनों कष्ट अत्यन्त गम्भीर और स्पष्ट हैं।

सन् १८९७ का विक्रेता परवाना कानून १८ (डीलर्स लाइसेन्सेज़ ऐक्ट १८);
सन् १८९५ का गिरमिटिया प्रवासी कानून (इन्डेन्चर्ड इमिग्रेशन लॉ); और
भारतीय बालकोंकी शिक्षाके बारेमें सरकारकी नीति।

सन् १८९७ का डीलर्स लाइसेन्सेज़ ऐक्ट

सारा भारतीय समाज महसूस करता है कि यह कानून अत्यन्त अन्यायपूर्ण और क्रूर है। इससे सारे भारतीय व्यापारी समाजको कष्ट है। इसकी शब्द-रचना तो ऐसी है कि वह सामान्य प्रयोगके लिए बनाया गया जान पड़ता है, लेकिन व्यवहारमें उसका प्रयोग उत्तरोत्तर भारतीय व्यापारियोंसे उनके परवाने छीननेके लिए ही किया गया है। ऐसा दिखाई देता है कि १८९७ के विक्रेता परवाना कानून द्वारा दी गई सत्ताका शुरूसे दुरूपयोग होता रहा है। श्री चेम्बरलेनने तो यहाँतक कहा था कि यदि भारतीय व्यापारियोंके खिलाफ किया जानेवाला उसका इकतरफा प्रयोग बन्द नहीं हुआ तो उन्हें सख्त कार्रवाई करनी पड़ेगी। जान पड़ता है, इसका तात्कालिक परिणाम यह हुआ कि नेटालकी सरकारने (श्री चेम्बरलेनके सुझावपर) नगरपालिकाओंको इस आशयके परिपत्र भेजे कि यद्यपि उन्हें अनियन्त्रित अधिकार दिया गया है किन्तु उनसे आशा यह की जाती है कि वे उसका प्रयोग न्यायपूर्वक और निष्पक्ष रीतिसे करें अन्यथा उनसे यह अधिकार छीन लिया जायेगा। और यदि वे इस अधिकारको कायम रखना चाहते हों, तो उन्हें निहित स्वार्थोको कदापि हाथ नहीं लगाना चाहिए।

उदाहरणके लिए अभी हालमें ही घटित दो मामले उद्धृत किये जा सकते हैं। श्री एम० ए० गोगा लेडीस्मिथके एक ब्रिटिश भारतीय व्यापारी हैं। वे अपना धन्धा बहुत समयसे करते आ रहे हैं; और उन्हें यूरोपीय विक्रेताओं और ग्राहकोंका व्यापक समर्थन प्राप्त है। पिछले जूनमें वे लेडीस्मिथके एक दूसरे भारतीय व्यापारीका परवाना अपने नाम बदलवाना चाहते थे। उक्त व्यापारीकी स्थिति भी उनकी जैसी ही थी किन्तु परवाना-अधिकारीने, जिसे इस विषयमें निरंकुश सत्ता प्राप्त है, उन्हें ऐसा करनेकी आज्ञा देनेसे इनकार कर दिया। धन्धेकी जगहपर श्री गोगाकी माँकी मालिकी है। श्री गोगाने लाइसेंसिंग बोर्ड [परवाना-निकाय] में अपील की, लेकिन बोर्डने परवाना-अधिकारीका निर्णय उलटनेसे इनकार कर दिया।

पिछले साल इसी प्रार्थीके एक दूसरे परवानेको नया करनेसे इनकार कर दिया गया था; उस समय इस निर्णयके खिलाफ लाइसेंसिंग बोर्डके सम्मुख की गई अपीलकी सुनवाईके समय श्री वाइली, के० सी०, एम० एल० ए० ने कहा था:

> "आप न्याय-समितिकी हैसियतसे किसी भारतीयके साथ भी अन्याय होते नहीं देख सकते। आप परवाना छीन लें तो व्यापार खतम हो गया समझिए। आपने और लेडी-स्मिथके नागरिकोंने उसे अपना धन्धा जमाने दिया है तो अब, मेरा निवेदन है कि, आप उससे उसका परवाना वापिस नहीं ले सकते। यदि वह आज आकर आपसे नया परवाना मांगे तो आप इनकार कर सकते हैं। उसने आपको बताया है कि उसका ९५ प्रतिशत व्यापार यूरोपीयोंके साथ है; जाहिर है कि उसके व्यापारसे शहरके लोगोंको सुविधा

ही है। आपके सामने इससे ज्यादा मजबूत मामला लेकर आना एकदम असम्भव है। मेरा अनुरोध है कि आप इस कमरेमें आनेसे पहले जो-कुछ भी हुआ हो उससे प्रभावित हुए बिना, इस मामलेपर विचार करें और प्रार्थीके साथ न्याय करें।"

क्लिप रिवरके लाइसेंसिंग बोर्ड [परवाना निकाय] के हालके निर्णयोंपर टिप्पणी करते हुए 'टाइम्स ऑफ नेटाल' पत्रने लिखा था :

शर्मनाक अन्याय

"इससे ज्यादा अन्यायपूर्ण और मनमानी कार्रवाईकी कल्पना नहीं की जा सकती है। और हम निःसंकोच कह सकते हैं कि यदि बोअर पदाधिकारियोंने दक्षिण आफ्रिकी गणराज्यके दिनोंमें ऐसा गलत काम किया होता तो शाही सरकारने उन्हें तुरन्त ही अपना हाथ रोकनेपर बाध्य किया होता। हुआ यह है कि अनेक प्रतिष्ठित भारतीय दुकानदारोंको, जिन्होंने अपना धन्धा काफी जमा लिया है और उसमें भारी पूंजी लगा रखी है, अचानक और मनमाने तौरपर कानूनका पालन न करनेका आरोप लगाकर व्यापारिक परवानोंसे वंचित कर दिया गया है। उन्होंने तो कानूनका अपनी शक्तिके अनुसार पूरा पालन किया था और जो लोग अंग्रेजीमें नहीं लिख सकते थे, वे हर हफ्तेके अन्तमें अपनी बहियां किसी योग्य मुनीमसे [अंग्रेजीमें] लिखवा लेते थे। वे ऐसा बरसोंसे करते आ रहे हैं और अभीतक इस कामके खिलाफ एक शब्द भी नहीं कहा गया। लेडीस्मिथके परवाना बोर्डके निर्णयको हम शर्मनाक अन्याय और गैर कानूनी भी कहेंगे; और यदि प्रार्थियोंको अपीलका अधिकार होता —— जो कि मौजूदा कानूनके मातहत उन्हें नहीं है —— तो बोर्डका यह निर्णय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तुरन्त ही खारिज कर दिया जाता। इस विषयमें हम अपनी स्थिति बिलकुल स्पष्ट कर देना चाहते हैं। हमें भारतीय व्यापारियोंसे कोई सहानुभूति नहीं है और भारतीय व्यापार समाप्त हो जाये इसमें हमें खुशी ही होगी। हम प्रवेशके बन्दरगाहपर कड़ेसे-कड़े प्रतिबन्ध लगाये जानेका समर्थन करेंगे; और इतना ही नहीं, भारतीय व्यापारियोंको नये परवाने न देने तककी हिमायत करेंगे। लेकिन जिन भारतीयोंको इस देशमें बस जाने दिया गया है, जो बरसोंसे पूर्णतया कानूनी ढंगसे अपना कारोबार चलाते आ रहे हैं और जिन्होंने अपने व्यापारिक परवानोंके बलपर व्यापारिक धन्धोंमें अपनी पूंजी लगा रखी है, उन भारतीयोंके परवाने नये करनेसे इनकार करना ऐसा कार्य है जो सब सभ्य राष्ट्रोंके कानूनोंके और न्यायकी बिलकुल प्राथमिक कल्पनाके भी खिलाफ है। हमें आशा है कि इस सम्बन्धमें परवाना-अधिकारियोंको सख्त हिदायतें दी जायेंगी, ताकि लेडीस्मिथकी इस अशोभन घटनाकी पुनरावृत्ति न हो। यदि ऐसा न किया गया तो जहाँतक भारतके लोगोंके साथ साम्राज्यीय सरकारके सम्बन्धका सवाल है, नेटाल उसे बड़ी परेशानीमें डाल देगा।

सन् १९०८ में, एस्टकोर्टके अनेक भारतीय व्यापारियोंकी परवानोंसे सम्बन्धित अपीलोंकी पैरवी करते हुए विधान-सभाके सदस्य कर्नल ग्रीनने कहा था :

अपने संसदीय कार्यकालमें मैंने हमेशा यह कहा है कि भारतीय व्यापारियोंकी संख्या बढ़ने देना वांछनीय नहीं है। और जब लोग मेरे पास यह अनुरोध लेकर आये

कि इन अपीलोंकी पैरवी मैं करूँ, तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ; लेकिन मुझे बताया गया कि सदनमें मैंने यह कहा है कि एक समाजके नाते हमें परिस्थितिका मुकाबला मर्दोंकी तरह करना चाहिए, किसी तरहका अन्याय नहीं करना चाहिए। हमें ऐसे कदम उठाने चाहिए, जिनसे उन लोगोंके साथ पूरा न्याय हो जिन्हें हमने इस देशमें आनेके लिए प्रोत्साहन दिया है और यहाँ आकर जायदाद प्राप्त करने और निहित स्वार्थ स्थापित करने दिया है। एक उच्चतर जातिके नाते हमें इस समाजके प्रति अपने कर्तव्यका पालन करना है और यदि कोई बुरा काम करना आवश्यक हो तो वह संसदको सँभालना चाहिए और उसे ही सही कदम उठाना चाहिए। कानूनका वह मंशा कदापि नहीं था कि इस तरहका बुरा काम ऐसे स्थानीय बोर्ड करें और . . . मैं शपथपूर्वक कह सकता हूँ कि यदि आप यह प्रार्थनापत्र नामंजूर करेंगे तो हमें लगेगा कि हम बहुत दीन-हीन हैं।

दूसरा मामला इस शिष्टमण्डलके ही एक सदस्य, पीटरमैरित्सबर्ग और रिचमण्डके श्री एच० एम० बदातका है। पिछले साल रिचमंडमें उनके मकानोंके लिए परवाना-अधिकारीका दिया हुआ परवाना कुछ यूरोपीय प्रतिस्पर्धियोंके उकसानेपर, परवाना-बोर्ड द्वारा छीन लिया गया था। परवाना-अधिकारीने उसे परवाना पुनः दे दिया, किन्तु बोर्डने उसका निर्णय फिर मंसूख कर दिया।

सन् १९०७ में, क्लिप रिवरके इलाकेमें, ११ परवानोंको नया करनेसे इनकार कर दिया गया था:

इनांडामें दस परवानोंको नया करनेसे इनकार कर दिया गया,
अलेक्जैंड्रियामें दो, ,, ,,
विक्टोरियामें पाँच, ,, ,,
वीनेनमें तीन, ,, ,,

पिछले साल इनकारीके ऐसे किस्सोंमें और इजाफा हुआ।

इस शिष्टमण्डलके सदस्य यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि भारतीय व्यापारियोंके प्रति यह कड़ा और मनमाना रवैया सामान्य यूरोपीय जनताके कहनेसे नहीं, बल्कि यूरोपीय व्यापारिक प्रतिद्वन्द्वियोंके दबावके कारण अपनाया जाता है। परवाना निकाय (लाइसेंसिंग बोर्ड), जो इस विषयमें अपीलकी अन्तिम अदालतें हैं, ज्यादातर यूरोपीय दुकानदारोंसे भरे हुए हैं। सर्वोच्च न्यायालयने निकायोंको दी गई निरंकुश सत्ताकी टीका कई बार की है और उनके निर्णयोंमें हस्तक्षेप करनेकी अपनी असमर्थतापर खेद प्रकट किया है। भारतीय व्यापारियोंके परवाना-सम्बन्धी मामलोंका निर्णय सबसे पहले परवाना अधिकारी करते हैं, और उनमें से ज्यादातर या तो परवाना निकायों द्वारा नियुक्त किये लोग हैं या उनके नौकर हैं। परवाना देना, उसे नया करना या किसीके नाम बदलना — इन बातोंका निर्णय ये अधिकारी ही करते हैं। परवाना-निकाय उनके इन निर्णयोंका अनुमोदन न करे, ऐसा शायद ही कभी होता है। भारतीय व्यापारियोंके कारोबारको कम करना उनकी घोषित नीति है और इस नीतिका परिणाम यह हुआ है कि भारतीय व्यापारियोंको नये परवाने प्राप्त करने, पुरानोंको नया कराने या दूसरोंके नामपर बदलवानेके मामलोंमें साधारण न्याय भी नहीं मिल सकता। पिछले बारह वर्षमें, जबसे यह कानून अमलमें है, ऐसी अनेक घटनाएँ हुई हैं जिनका उदाहरण देकर ऊपर कही हुई

बात सिद्ध की जा सकती है। अगर प्रार्थी भारतीय हों तो उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा, उनका दायित्वभाव या उनके निहित स्वार्थोंका कोई खयाल नहीं किया गया है। उदाहरणके लिए:

सन् १९०७ में इस दस्तावेजके दूसरे हस्ताक्षरकर्ताने वीनेनमें एक (न्यासी) ट्रस्टीसे एक कारोबार खरीदा था। परवाना-अधिकारीने इस कारोबारको उनके नाम बदलने और परवाना देनेसे इनकार कर दिया। परवाना-निकायमें अपील की गई तो उसने अधिकारीका निर्णय बहाल रखा। जब सर्वोच्च न्यायालयमें अपील की गई, उसने राहत देनेमें अपनी असमर्थता प्रकट की। सन् १९०६ में, इस दस्तावेजके चौथे हस्ताक्षरकर्ताके पास पोर्ट शेपस्टोनमें चलनेवाले एक कारोबारका परवाना था जो उसके नामपर बदल दिया गया था। परवानेको बदलनेकी बाकायदा इजाजत दी गई थी और एक बार उसे नया भी कर दिया गया था। लेकिन जब नया करनेके लिए दूसरी बार अर्जी दी गई तो व्यापारिक प्रतिस्पर्धियोंके उकसानेपर उसे नामंजूर कर दिया गया।

जाहिर है कि यदि व्यापारिक परवाना कानूनमें ऐसा संशोधन नहीं किया जाता जिससे पीड़ित पक्षको सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार मिल जाये, तो किसी भी दिन नेटालके भारतीय व्यापारी बिलकुल मिट जायेंगे; और वह दिन बहुत दूर भी नहीं है।

गिरमिटिया प्रवासी कानून संशोधन अधिनियम, १८९५:

पिछले पचास वर्षोंमें नेटाल मजदूरोंके लिए और अपनी समृद्धिके लिए गिरमिटिया भारतीय प्रवासियोंपर निर्भर रहा है। इस बातको पहलेके भी और आजके भी प्रायः प्रत्येक नेटाली राजनयिकने स्वीकार किया है। नेटालके मुख्य उद्योगोंका अस्तित्व लगभग पूरी तरहसे इन्हीं मजदूरोंपर निर्भर रहा है, लेकिन अपने जीवनके उत्तम वर्षोंकी उत्तम शक्ति उपनिवेशमें लगा देनेके बाद इन्हीं मजदूरोंको उपनिवेशमें प्रतिष्ठित स्वतन्त्र नागरिककी तरह बसने और अपना शेष जीवन बितानेका मौका नहीं दिया जाता। उन्हें दुबारा गिरमिट स्वीकार करने या उपनिवेशसे चले जानेके लिए लाचार किया जाता है और इसके लिए हर तरहकी कोशिश की जाती है। उसपर, उसकी पत्नीपर और उसके बच्चोंपर तीन पौंडका एक असह्य व्यक्ति-कर थोपा गया है। यह कर वार्षिक है और इसका बोझ इतना ज्यादा है कि उसके कारण कितने ही गिरमिट-मुक्त भारतीय बरबाद हो गये हैं; उससे भी ज्यादा भारतीयोंको आपत्तिजनक कार्य करनेके लिए बाध्य होना पड़ा तथा अनेक भारतीयोंका नैतिक पतन हुआ है। इस करके पक्षमें सिर्फ यही एक बात कही गई है कि उससे राजनीतिक मतलब सधता है। सम्राट्की सरकारके दृढ़ रवैयेके कारण उपनिवेशकी सरकार भारतीय गिरमिटिया मजदूरोंको गिरमिटकी अवधिके समाप्त होनेपर भारत वापस भेजनेकी अपनी प्रिय और चिराकांक्षित योजनाको अभीतक कार्यान्वित नहीं कर पाई है। लेकिन शिष्टमण्डलके सदस्य आदरपूर्वक निवेदन करते हैं कि उसी प्रकार न्याय और औचित्यके साथ सम्राट्की सरकारको यह अन्यायपूर्ण विशेष वार्षिक-कर भी नामंजूर कर देना चाहिए था क्योंकि इसका भी वही परिणाम होता है।

शिष्टमण्डलके सदस्योंको लगता है कि उपनिवेशके, स्वतन्त्र भारतीयोंके और गिरमिटिया मजदूरोंके हितमें भी गिरमिटकी सारी पद्धति ही खत्म कर दी जानी चाहिए। उनका खयाल है कि ये अभागे लोग गिरमिटकी अवधिमें नेटालमें भारतकी अपेक्षा कुछ ज्यादा कमा लेते हैं, यह बात बहुत महत्त्वकी नहीं है। इससे उन्हें जो भौतिक लाभ होता है वह उनके

मनुष्यत्वकी हानिकी और तमाम उपनिवेशपर इस प्रथासे उत्पन्न कुपरिणामोंकी तुलनामें कुछ भी नहीं है।

लेकिन, यदि नेटालके मुख्य उद्योगोंको संकटमें डाले बिना गिरमिटिया मजदूरोंका भेजा जाना एकाएक बन्द न किया जा सकता हो तो प्रतिनिधियोंकी नम्र रायमें पूर्वोक्त विशेष कर तो अवश्य ही उठा लिया जाना चाहिए।

भारतीय विद्यार्थियोंका शिक्षण

प्रतिनिधि इस बातको बड़ी गम्भीरतासे महसूस करते हैं कि नेटालके ब्रिटिश भारतीयोंको अपने बच्चोंकी शिक्षाके उन परिमित साधनोंसे भी वंचित करके, जो उन्हें आजतक मिलते रहे हैं, जानबूझकर उनके समाजके बौद्धिक विकासको रोकनेका प्रयत्न किया जा रहा है। सरकारसे सहायता-प्राप्त भारतीय स्कूल ब्रिटिश भारतीय बालकोंको सिर्फ प्राथमिक श्रेणीकी शिक्षा देते रहे हैं; उपनिवेशके आम स्कूल तो भारतीय बच्चोंके लिए बिलकुल बन्द ही हैं। ऊँची श्रेणीके सरकारी स्कूलोंने भारतीय बालकोंको तेरह वर्षकी उम्रके बाद अपने यहाँ विद्यार्थीके रूपमें रखना बन्द कर दिया है। फल यह हुआ है कि यदि इन बालकोंको ऊपरकी कक्षाओं तक पहुँचनेका अवसर दिया जाये तो उन्हें वहाँ जो शिक्षा मिल सकती है, वह अब उनके लिए अप्राप्य हो गई है। इस नीतिके परिणामस्वरूप बहुतेरे भारतीय बालकोंको, जिनकी शिक्षा शुरू ही हुई थी, भारतीय स्कूल छोड़ देने पड़े हैं। शिक्षा प्राप्त करनेके साधनोंके इस अभावसे भारतीय समाजके विचारशील सदस्योंको बड़ी कठिनाई होती है और वे बहुत चिन्ता करते हैं। वे अपने बच्चोंके भविष्यके बारेमें बहुत चिन्तित हैं।

प्रतिनिधि सविनय निवेदन करते हैं कि इस महत्त्वपूर्ण बातपर यूरोपीय उपनिवेशियोंको भी उतनी ही चिन्ता होनी चाहिए; क्योंकि, उपनिवेशकी आबादीके एक हिस्सेको यदि निर-क्षरतामें पड़े रहनेका दण्ड दे दिया जाये तो इसका राज्यके बौद्धिक और नैतिक जीवनपर जरूर बुरा प्रभाव पड़ेगा।

पूर्वोक्त तथ्योंका खयाल करते हुए नेटालके ब्रिटिश भारतीय स्वभावतः दक्षिण आफ्रिकी उपनिवेशोंके प्रस्तावित संघको भयातुर दृष्टिसे देखते हैं। यह बात आम तौरपर स्वीकार की जाती है कि दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय-विरोधी लहर उठ रही है। प्रस्तावित संघके चार सदस्य-राज्योंमें से तीन तो ब्रिटिश भारतीयोंके माने हुए विरोधी हैं। ऐसा लग रहा है कि केप भी इस विरोधी आन्दोलनमें शामिल होनेवाला है। फल यह होगा कि संघ उन सारी विरोधी शक्तियोंके योगका प्रतिनिधित्व करेगा जो अभीतक एक-दूसरेसे अलग रहकर काम कर रही थीं। इसलिए ब्रिटिश भारतीयोंको लगता है कि दक्षिण आफ्रिकाके इस प्रस्तावित संघके बन जानेसे वहाँ रहनेवाली सम्राट्की वफादार प्रजाके इस वर्गकी दशा और भी खराब हो जायगी। दो निर्योग्यताएँ तो, उनपर पहलेसे ही लदी हैं; एक तो ब्रिटिश भारतीय होनेकी और दूसरी तथाकथित 'रंगदार जातियों' में गिने जानेकी।

निवेदन है कि दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे उपनिवेशोंके बारेमें चाहे जो कहा जाये, निःसन्देह शाही सरकारको तो नेटालके ब्रिटिश भारतीयोंको न्याय दिलानेकी सुविधा है ही। ऐसा नहीं हो सकता कि उपनिवेश सब कुछ लेता ही रहे और दे कुछ नहीं। वह स्वयं भी स्वीकार करता है कि अपने उद्योगोंको कायम रखने और उनका विकास करनेके लिए वह शाही सरकारकी सद्भावनापर निर्भर है। नेटालको जो बराबर गिरमिटिया मजदूर भेजकर उसकी

तत्सम्बन्धी आवश्यकता पूरी की जाती रहती है उसके एवजमें उससे कमसे-कम इतना करनेके लिए अवश्य कहा जा सकता है कि जो ब्रिटिश भारतीय वहां बस गये हैं और इस प्रकार जिन्होंने वहां निहित स्वार्थ स्थापित कर लिये हैं, उनके साथ सामान्य न्याय और निष्पक्ष व्यवहार किया जाये।

अब्दुल कादिर
अमोद भायात
एच० एम० बदात
एम० सी० आंगलिया

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: १७९/२५५

२१०. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त, १०, १९०९

लॉर्ड महोदय,

श्री हाजी हबीब और मैं लॉर्ड क्रू से मिलकर अभी लौटे हैं। उनका रुख बहुत सहानुभूतिपूर्ण था; उन्होंने हमारी बात धैर्यसे सुनी। मैंने उनके सामने उस संशोधनकी एक हल्की-सी रूपरेखा रखी जो मैंने कल सायं आपको भेजा था, क्योंकि मैंने देखा कि अवसर इतना अच्छा है कि उससे चूकना न चाहिए। मैंने उनसे निवेदन कर दिया कि हम इस प्रश्नपर आपके साथ पूरी तरह विचार-विमर्श कर चुके हैं। लॉर्ड क्रू ने सिर हिलाकर अपना प्रशंसा-भाव व्यक्त किया और कहा कि आपने [लॉर्ड ऍम्टहिलने] इस प्रश्नके सम्बन्धमें बहुत परिश्रम किया है। लॉर्ड क्रू ने जो-कुछ कहा, उससे मुझे लगता है कि बातचीत अभी जारी है। मेरा खयाल है, वे स्वीकार करते हैं कि मैंने जो संशोधन सुझाया है वह बहुत उचित है और वे जनरल स्मट्सपर उसे माननेके लिए जोर डालेंगे। इन स्थितियोंमें अब क्या किया जाये, मेरी समझमें नहीं आ रहा है। मैं आपकी सलाहकी प्रतीक्षामें हूँ।[1]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९९६) से।

१. इस विषयपर लॉर्ड ऍम्टहिल, जनरल स्मट्स और लॉर्ड क्रू के बीच जो बातचीत हुई और पत्र-व्यवहार चला उससे गांधीजी और स्मटसके बीच एक "सैद्धान्तिक मतभेद" प्रकट होता है। देखिए परिशिष्ट २०।

२११. तार: एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन
अगस्त १०, १९०९]

पोलक
रायटर
बंबई

सरकार रद करनेको राजी। कानूनमें सीमा दाखिल करना चाहती है। हमने संशोधन सुझाया [जिससे] गवर्नरको किसी भी देशके प्रवासियोंकी संख्याकी सीमा निर्धारित करनेके विनियमोंकी रचनाका अधिकार मिले। इससे हमारी टेक रह जाती है। (अच्छा होता, आप सभाकी[1] तारीखका ऐलान कर देते)।[2]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९९९/२) से।

२१२. तार: ब्रिटिश भारतीय संघको

[लन्दन
अगस्त १०, १९०९ के बाद][3]

ब्रि० भा० सं०
जोहानिसबर्ग

समझौतेकी बातचीत जारी। सरकार रद करनेको राजी। कानूनमें सीमा दाखिल करना चाहती है। हमने आम सामान्य संशोधन सुझाया गवर्नरको किसी भी देशके प्रवासियोंकी सीमा निर्धारित करनेके विनियमोंकी रचनाका अधिकार मिले। इससे कानून सबके लिए समान रूपसे लागू होनेवाला बनेगा। इससे हमारी टेक रह जाती है। आशा है, रुस्तमजी हरिलाल [और] दूसरे ट्रान्सवालमें रहेंगे।[4] दाउद लौट जायें।[5]

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९९८) से।

१. अभिप्राय बम्बईके शेरिफ द्वारा बुलाई गई सभासे है। सभाकी तारीख ३१ अगस्त घोषित हुई थी। देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ३६५।

२. अगस्त १२, १९०९ के टाइम्स ऑफ इंडिया और १९–८–१९०९ के हिन्दूमें इस तारका निम्न परिवर्धित पाठ और बम्बईके एक साप्ताहिक गुजरातीके १५–८–१९०९ के अंकमें उसका गुजराती रूपान्तर प्रकाशित हुआ था: "ट्रान्सवालकी सरकार १९०७ के एशियाई कानूनको रद करनेके लिए राजी है, किन्तु वह प्रवासी कानूनमें प्रत्येक वर्ष उपनिवेशमें आनेवाले नये एशियाई प्रवासियोंकी संख्याकी सीमा निर्धारण करनेवाली एक धारा दाखिल करना चाहती है। भारतीय शिष्टमण्डलने प्रजातीय आधारपर कानूनी भेदभाव स्वीकार करनेसे इनकार कर दिया है, और यह सुझाया है कि प्रवासी कानूनमें एक ऐसी धारा दाखिल की जाये जिससे ट्रान्सवालकी सरकारको किसी भी देशके प्रवासियोंकी संख्याकी सीमा निर्धारित करनेके विनियमोंकी रचनाका अधिकार मिले। इस तरह कानूनी समानताका सिद्धान्त कायम रहेगा और प्रशासनिक भेदभाव करनेके मौजूदा अधिकारोंमें भी कोई रुकावट नहीं आयेगी।"

३. जान पड़ता है, जिस तारीखको पिछला तार भेजा गया था उसी तारीखको यह भी भेजा गया था।

४. हरिलाल गांधी और पारसी रुस्तमजी क्रमशः ९ और १० अगस्तको रिहा हुए थे। रुस्तमजीको उसी दिन फिर गिरफ्तार करके ११ अगस्तको सजा दे दी गई थी।

५. देखिए "पत्र: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३५५।

२१३. पत्र : मणिलाल गांधीको

[लन्दन]
अगस्त १०, १९०९

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। समझौता होनेकी अब कम ही आशा है, इससे यह पत्र मंगलवारको लिखे लेता हूँ; क्योंकि अबतक जितना काम था, उससे ज्यादा रहनेकी सम्भावना है।

तुम्हारे पत्रोंमें शब्द कभी-कभी अधूरे होते हैं। इसलिए यदि तुम हमेशा पत्रको दुबारा पढ़ लेनेकी आदत बना लो तो ठीक लिखोगे।

मेरी सलाह है कि फिलहाल तो दूसरी टंकी लिये बिना ही काम चला लेना चाहिए। अब बरसातका मौसम आयेगा, इसलिए एक टंकीसे ही काम चल जायेगा। आशा है, इस बीच मैं वहाँ आ जाऊँगा। उस वक्त हम देख लेंगे।

तुमने [अपनी पढ़ाईकी] चिन्ता छोड़ दी, यह पढ़कर मुझे प्रसन्नता हुई। मैं जैसे-जैसे यहाँकी वस्तुस्थिति देखता जाता हूँ वैसे-वैसे मुझे लगता है कि यहाँ कोई खास शिक्षा ज्यादा अच्छी तरह प्राप्त की जा सकती है, यह माननेका कोई कारण नहीं है। मैं तो यह भी देखता हूँ कि यहाँ कुछ शिक्षा सदोष है। फिर भी मनमें होता है कि तुम सब यहाँ आकर कुछ दिन रहो। हम अपना कर्तव्य अच्छी तरह निभाते रहें, फिर जो होना है वह होगा। तुम वहाँ मन लगाकर पढ़ो, यह यहाँ आनेकी तैयारी करनेके समान है। श्री वेस्टकी माँ लन्दनसे १५० मील दूर ही हैं, फिर भी कभी लन्दन नहीं आई। लन्दनसे लाउथकी यात्रा साढ़े तीन घंटेकी है।

जमीनमें हम जितने फलके पेड़ोंकी देखभाल कर सकते हैं उससे अधिक पेड़ हैं। इससे हमारी कुशलताकी कमी प्रकट होती है। जितनी देखभाल खुद तुमसे हो सके उतनी करना।

अनीबहनकी तबीयत कैसे खराब हुई, क्या हुआ और वह कितने दिनके लिए टोंगाट गई हैं, आदि समाचार मुझे देना।

काबाभाईके घर पुत्र-प्राप्ति हुई, यह तो खुश होने लायक बात है। फिर भी मेरे विचार तुम जानते हो। उनके अनुसार मुझे दुःख भी होता है। मैं देश और कालका विचार करते हुए यह मानता हूँ कि इस समय तो बहुत ही कम भारतीयोंको विवाह करना चाहिए। विवाहका अर्थ भी बहुत गहन है। विषय-सेवनके लिए जो व्यक्ति विवाह करता है वह पशुसे भी हीन है। विवाहितोंका केवल सन्तानोत्पत्तिके लिए मैथुन करना उचित माना जाता है। ऐसा धर्म-शास्त्र भी कहते हैं। इस दृष्टिसे जो सन्तान इस समय उत्पन्न होती है वह विषय-वृत्तिकी उत्पत्ति है। इसीसे ये सन्तानें हीन और नास्तिक हो जाती हैं, और बनी रहती हैं। इस समय मैं तुम्हारे साथ इससे अधिक चर्चा नहीं करता, क्योंकि उसके लिए अधिक गहराईमें उतरना पड़ेगा। किन्तु ऊपर जो लिखा है उसका आशय तुम समझो, यह मेरी इच्छा है। समझकर इन्द्रियोंपर विजय पाओ। मेरे ऐसा लिखनेसे तुम यह भय तनिक भी न करना कि बापू २५ वर्षके आगे भी विवाह न करनेके लिए बाँधना चाहते हैं। मैं तुम्हारे ऊपर या

किसीके भी ऊपर अनुचित दवाव डालना नहीं चाहता। केवल सलाह देना चाहता हूँ। पच्चीस वर्ष तक भी तुम विवाहका विचार न करो तो मुझे तुम्हारा विशेष कल्याण दिखाई देता है। लेकिन उस समय विवाह करनेका विचार हो तो भी विवाहका अर्थ क्या है, यह तुमको कावाभाईके आदर्शसे समझाता हूँ। तुम बालक हो, फिर भी तुमको ऐसे ज्ञानपूर्ण विषयमें लिखता हूँ। इसका कारण यही है कि तुम्हारे चरित्रके सम्बन्धमें मैं बहुत ऊँचे विचार रखता हूँ। तुम्हारी आयुके दूसरे वालकको मैं ऐसे विचार नहीं लिखूँगा, क्योंकि वह समझ नहीं सकेगा।

वाके और दूसरे पत्रोंमें अधिक देखोगे। ये पत्र अव फिर लिखूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८५) से।
सौजन्य : श्रीमती सुशीलाबेन गांधी।

२१४. पत्र : लॉर्ड क्रूके निजी सचिवको

[लन्दन]
अगस्त ११, १९०९

महोदय,

लॉर्ड क्रूने श्री हाजी हवीवको और मुझे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके संघर्षके सम्बन्धमें कल जो मुलाकात दी थी, उसके वारेमें मैं यह जिक्र करना चाहता हूँ कि दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति (साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी) को लोरेंसो मार्क्विससे एक तार[1] मिला है। उससे मालूम हुआ है कि शायद सौ ब्रिटिश भारतीयोंके — सम्भवतः अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके — उस बन्दरगाहके रास्ते भारतको निर्वासित किये जानेकी सम्भावना है। लॉर्ड महोदयको निःसन्देह ज्ञात है कि निर्वासनके इस तरीकेसे बहुत कष्ट हुआ है और इसके सम्बन्धमें उपनिवेश कार्यालयसे बार-बार पत्र-व्यवहार किया गया है।

फिर भी इस प्रश्नके निर्णयके सम्बन्धमें जो बातचीत चल रही है उसको ध्यानमें रखते हुए, क्या मैं लॉर्ड क्रू महोदयसे प्रार्थना कर सकता हूँ कि वे कमसे कम बातचीतके दरमियान ऐसे निर्वासनोंको स्थगित करवानेकी दृष्टिसे, हस्तक्षेप करें।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स २९१/१४२ तथा टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५००२) से।

१. द० आ० ब्रि० भा० समिति के मन्त्रीने उसी दिन विदेश कार्यालयको तारका हवाला देते हुए पत्र लिखा था। तार यह था: "यहाँसे शायद सौ लोगोंका किसी भी दिन निर्वासन। हस्तक्षेपके सम्बन्धमें कोई उत्तर नहीं। कौंसलने साम्राज्य-सरकारको १६ जुलाईको लिखा।" इस मामलेकी ओर लोरेंसो मार्क्विस स्थित ब्रिटिश कौंसलका ध्यान दिलाया गया था; लेकिन उत्तर नहीं मिल रहा था।

२१५. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त ११, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं आपके १० तारीखके पत्रके लिए आपको नम्रतापूर्वक धन्यवाद देता हूँ।

मुझे प्रसन्नता है कि आपको मेरी सुझाई धारासे सन्तोष हुआ है।[1] मैं कहना चाहूँगा कि इस धारासे मेरी रायमें किसी मूलभूत सिद्धान्तका त्याग नहीं करना पड़ता।[2]

चूँकि बातचीत अभी जारी रहनी है, इसलिए विवरणको समाचारपत्रके सम्पादकों या हमदर्दोंको न भेजना शायद अच्छा होगा। समाचारपत्रोंके सम्पादकोंको, सम्पादकोंकी हैसियतसे, ऐसी किसी चीजमें शायद ही दिलचस्पी होती है, जो उनको प्रकाशनार्थ भेजी नहीं जाती; और हमदर्दोंको भेजनेमें, जबतक उनको यह न बता दिया जाये कि हो क्या रहा है, मुझे संकोच होता है। इसलिए यदि आप मंजूर करें तो जबतक बातचीत चलती है तबतक इस विवरणको वितरित नहीं करूँ।[3]

यद्यपि मैं जानता हूँ कि आपका समय ले रहा हूँ, फिर भी चूँकि मैं जो-कुछ भी हो रहा है, उस सबसे आपको अवगत रखनेके लिए चिन्तित हूँ, इसलिए इसके साथ उस पत्रकी[4] नकल भेजता हूँ, जो मैंने लॉर्ड क्रूको लिखा है। आशा है आप इससे सहमत होंगे।[5]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०००) से।

१. देखिए "पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको", पृष्ठ ३४१-४२। लॉर्ड, ऍम्टहिलने इसपर टिप्पणी करते हुए कहा था: "जहाँतक मैं समझता हूँ, अगर कानूनमें ही यह दे दिया जाये कि हर साल छः भारतीय स्थायी निवासियोंके रूपमें दाखिल किये जा सकेंगे तो दरअसल आपका यह हक मंजूर हो जायेगा, यद्यपि सचमुच यह बहुत सीमित होगा। आप जिस सैद्धान्तिक और अप्राप्य हकके लिए लड़ रहे हैं उसके मुकाबलेमें ऐसे अधिकारकी प्राप्ति एक व्यावहारिक और निश्चित लाभ होगा, चाहे यह अधिकार सीमित ही होगा। आप जो 'धारा' सुझा रहे हैं वह मुझे कठिनाईका एक चतुराई-भरा हल दिखलाई पड़ता है। उसका जो-कुछ भी उपयोग किया जा सकता है, उसे करनेका मैं तुरन्त प्रयत्न करूँगा; और यह प्रकट न करूँगा कि वह सुझाव आपने भेजा है।"

२. यह वाक्य लॉर्ड ऍम्टहिलके इस कथनसे सम्बन्ध रखता है: "यह जानकर मुझे बेहद खुशी हुई है कि आप इस हद तक बलिदान करनेके लिए तैयार हैं, क्योंकि हमारी कल जो बातचीत हुई उसके बाद मुझे समझौतेकी आशा नहीं रही थी।"

३. लॉर्ड ऍम्टहिलका खयाल था कि समाचारपत्र-सम्पादकोंको केवल जानकारीके लिए और हमदर्दोंको निजी तौरसे उपयोग करनेके लिए "विवरण" की प्रतियाँ भेज देनेसे काममें शायद कुछ मदद मिलेगी।

४. देखिए पिछला शीर्षक। लॉर्ड ऍम्टहिलने अपने १२ अगस्तके उत्तरमें इस विषयपर विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि गांधीजीका पत्र विवेकपूर्ण और संयत है, निर्वासनकी घटना उनके कार्यके पक्षमें जायेगी और मैं इसे बातचीतमें सहायता करनेवाला एक प्रबल साधन मानता हूँ।

५. लॉर्ड ऍम्टहिलने १२ अगस्तको इस पत्रकी प्राप्ति-सूचना देते हुए गांधीजीको सूचित किया था कि जैसे ही उन्हें गांधीजीका वह पत्र मिला जिसमें 'धारा' का सुझाव था, वैसे ही उन्होंने जनरल स्मट्सको और लॉर्ड क्रूको लिखा और इन सुझावोंको अपने सुझावोंके रूपमें पेश किया और उनकी मंजूरीके लिए अपने दृष्टिकोणसे भी जोर दिया है। इस पत्र-व्यवहारके लिए देखिए परिशिष्ट २०।

२१६. लन्दन

[अगस्त १२, १९०९ के बाद]

नेटालका शिष्टमण्डल

नेटालका शिष्टमण्डल गुरुवारको[1] लॉर्ड क्रूसे मिला। उन्होंने सारी हकीकत सुनी। श्री आंगलियाने अपनी बात कही और बादमें श्री अब्दुल कादिर बोले। लॉर्ड क्रू ने सहानुभूति प्रकट की; लेकिन उन्होंने बताया कि जो कानून बन चुके हैं, वे रद नहीं होंगे। संघ बननेके बाद संघ-संसदके अधीन स्थितिमें सुधार होनेकी सम्भावना है। शिष्टमण्डलके आवेदनपत्रमें परवानों, गिरमिटिया कानून और शिक्षाकी बात आई है। अब आवेदनपत्रकी नकलें सब संसद सदस्योंमें बँटवानेकी तैयारी हो रही है। डर्बनसे भेजी गई अर्जी यहाँके दो अखबारोंमें संक्षेपमें प्रकाशित हुई है। उसकी नकल श्री रिच दूसरे स्थानोंमें भेजनेवाले हैं।

स्त्रियोंके मताधिकारके लिए आन्दोलन करनेवाली महिलाएँ

स्त्रियोंके मताधिकारके लिए आन्दोलन करनेवाली महिलाएँ (सफ्रेजेट्स) अब भी बहुत प्रयास कर रही हैं। वे स्थान-स्थानपर सभाएँ कर रही हैं। संसदके द्वारके आगे नियुक्त प्रत्येक स्त्री अब भी सारी रात खड़ी रहती है। वे जो कष्ट सहन करती हैं उनमें से कुछ, नि:सन्देह, बहुत सराहनीय हैं।

धींगरा

श्री धींगराको सत्रह तारीखको फाँसी देनेकी बात चल रही है। लेकिन यह भी सम्भव है कि फाँसीकी सजा माफ हो जाये।

ब्रिटिश लोकसभा

लोकसभामें अभी हालमें बजट-सम्बन्धी विधेयक (बिल) पेश हुआ है। उसकी सरगरमी चल रही है। सदस्य रात-रात-भर बैठे रहते हैं। फलस्वरूप लगभग आधे सदस्य भरी सभामें लम्बे पड़कर सो जाते हैं और जब मत देनेका समय आता है तब जागते हैं और मत देकर फिर सो जाते हैं। यह हाल दुनियाकी सबसे महान संसदका है। इन परिस्थितियोंमें राष्ट्रका काम कैसे होता होगा, इसका विचार पाठक ही कर लें। अधिकतर लोग स्वार्थी दिखाई देते हैं। यदि यह कहें तो अनुचित न होगा कि सच्चे न्यायका सूर्य अस्त हो गया है। किन्तु अन्य लोगोंकी तुलनामें अंग्रेज लोग कुछ ठीक आचरण करते हैं; इसीलिए वे दूसरे राष्ट्रोंके मुकाबले ज्यादा गौरवशाली हैं। लेकिन ऐसा नहीं जान पड़ता कि अब पाश्चात्य संस्कृति दीर्घकालतक टिक सकेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११–९–१९०९

१. अगस्त १२, १९०९। श्री आंगलियाके वक्तव्यके लिए देखिए परिशिष्ट १९।

२१७. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
अगस्त १३, १९०९

प्रिय हेनरी,

आशा है कि आपको बातचीत और नये संशोधनके[1] सम्बन्धमें मेरा तार मिल गया होगा। संलग्न प्रतिसे[2] आपको सप्ताहकी घटनाओंकी पूरी जानकारी मिल जायेगी।

अब मुझे आपके उस तारके सम्बन्धमें कुछ कहना है जिसमें आपने सुझाव दिया है कि श्री दाउद मुहम्मदको भारत आना चाहिए। मुझे विश्वास है कि यह आपकी अपनी राय नहीं है, बल्कि आपने सूरतके मित्रोंकी सम्मति-मात्र तारसे भेज दी है। आपको याद होगा, श्री दाउद मुहम्मदने सार्वजनिक घोषणा की थी कि जबतक यह प्रश्न समाप्त नहीं होता तबतक वे, जानकी जोखिम होनेपर भी, ट्रान्सवाल न छोड़ेंगे। इसलिए उनके लिए यह परम आवश्यक है कि, अन्य कारणसे न सही तो अपनी प्रतिष्ठाके खयालसे ही सही, वे ट्रान्सवाल लौटें और फिर अपनी गिरफ्तारीके लिए सरकारको चुनौती दें। लेकिन अन्य दृष्टियोंसे भी यह प्रकट होता है कि उनकी उपस्थिति भारतकी अपेक्षा ट्रान्सवालमें अधिक वांछनीय है। हम वहाँ जितनी हो सकें उतनी सभाएँ करना चाहते हैं। इन सब सभाओंका लाभ केवल तभी है जब अनाक्रामक प्रतिरोधकी आग प्रज्वलित रखी जाये। मैं और आप जानते हैं कि श्री दाउद मुहम्मद इस काममें कितना कारगर योगदान कर सकते हैं। फिर, हम सभाएँ करनेके लिए बम्बईमें उनके पहुँचने तक नहीं रुक सकते। ये सभाएँ अभी, शिष्टमण्डलके लन्दनमें रहते हुए, की जानी चाहिए। वे शिष्टमण्डलके खाली हाथ दक्षिण आफ्रिका वापस आ जानेपर भी हो सकती हैं। लेकिन इतने लम्बे संघर्षका अनुमान करके हमें श्री दाउद मुहम्मदको भारत भेजनेकी उतावली नहीं करनी चाहिए। और अन्तमें, बातचीत हर क्षण प्रगति कर रही है, और वह सफल होगी, ऐसी आशा करनेके सब कारण मौजूद हैं। यदि ऐसी बात है, तो ट्रान्सवालके सम्बन्धमें सभाएँ करनेके लिए श्री दाउद मुहम्मदकी भारतमें जरूरत नहीं है। यदि आम शिकायतोंके सम्बन्धमें उनकी आवश्यकता हो तो उन्हें ट्रान्सवालका मामला समाप्त होनेपर भेजा जा सकता है। उसके लिए बहुत समय है। इसलिए मैं कल[3] तार दूँगा कि फिलहाल दाउद मुहम्मदको ट्रान्सवालमें ही रहना चाहिए।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५००७) से।

१. देखिए "तार: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३५० ।

२. यह उपलब्ध नहीं है ।

३. ऐसा लगता है कि यह तार दरअसल १६ अगस्तको भेजा गया था; देखिए "तार: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३५७ ।

२१८. शिष्टमण्डलकी यात्रा [-७]

[अगस्त १३, १९०९]

जब समझौतेकी बातचीत चलती है तब सार्वजनिक रूपसे देने लायक खबरें सदा कम होती हैं। पिछले हफ्ते मेरा खयाल था कि इस हफ्ते निश्चित खबर दे सकूँगा। किन्तु अब देखता हूँ कि यह हफ्ता भी निश्चित खबरके बिना बीत गया है। फिर भी बातचीत प्रगति करती जा रही है। लॉर्ड ऍम्टहिलसे सोमवारको मुलाकात हुई। उनके साथ श्री हाजी हबीब, श्री रिच और मैं लगभग डेढ़ घंटेतक बैठे और बहुत बातें हुईं। मंगलवारको लॉर्ड क्रू से भेंट हुई। मैं ऐसा मानता हूँ कि उन्होंने बहुत अच्छा जवाब दिया है। उन्होंने जनरल स्मट्सके साथ बातचीत करना स्वीकार कर लिया है।

अभी, बातचीत चल रही है जबकि डेलागोआ-बेसे तार मिला है कि लगभग सौ भारतीयोंके सीमा पार किये जानेकी सम्भावना है। इस तारकी खबर लॉर्ड क्रू को भेज दी है।[1] इस सम्बन्धमें यथासम्भव तजवीज की जा रही है।

यह पत्र लिखते समय जोहानिसबर्गसे तार[2] मिला है। उससे सत्याग्रहियोंकी रिहाई और रुस्तमजीके तुरन्त फिरसे प्रवेश करनेकी खबर प्राप्त हुई है। यह तार भी पढ़ा कि उनको छः महीनेकी सख्त कैदकी सजा दे दी गई है। इसको पढ़कर मुझे प्रसन्नता भी हुई और मैं रोया भी। मुझे श्री रुस्तमजीसे यही आशा थी। उन्होंने हद कर दी है। मुझे प्रसन्नता इससे हुई कि ऐसे भारतीय हममें मौजूद हैं। मैं रोया इसलिए कि उनको ऐसे दुःख भोगने पड़े हैं। ऐसे उदाहरण जब अगुआ भारतीय प्रस्तुत करेंगे तभी जनता साँचेमें ढलेगी। इस उदाहरणका अनुकरण सब लोग करें तो भारतीयोंको कोई दुःख भोगना ही न पड़े। मैं ज्यों-ज्यों अनुभव करता जाता हूँ त्यों-त्यों देखता जाता हूँ कि अभी तो ऐसे बहुत-से भारतीय सपूत मौजूद हैं जो देशकी खातिर घोर कष्ट सहन करनेके लिए तैयार हैं। समझौता हो तब तो ठीक ही है। किन्तु यदि न हो तो मेरी प्रत्येक भारतीयसे यही प्रार्थना है कि "किये हुए प्रणको कभी न छोड़ें। अनुचित सुखके मुकाबले उचित दुःख बहुत सुखदायक है। हमारी गई-गुजरी हालतमें तो मौज-शौकका हमें कोई हक ही नहीं है। थोड़े दिन सहन करनेके बाद हम इस दुःखके आदी हो जायेंगे। इसलिए आप दुःख सहन करनेकी आदत डालें।" इसके सिवा दूसरा इलाज मैं तो जानता नहीं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-९-१९०९

१. देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ३५२।

२. इस तारपर १२ अगस्तकी तारीख है और यह १३ अगस्तको लन्दन पहुँचा।

२१९. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त १४, १९०९

लॉर्ड महोदय,

आपके १२ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद। इससे मुझे प्रोत्साहन मिला है कि श्री रिचने लॉर्ड क्रूको जो पत्र[1] लिखा था और जो तार[2] उसमें संलग्न था उनकी नकलें आपको भेज दूं। मुझे निश्चय है कि इस तारको पढ़कर महानुभावको भी वैसा ही दुःख होगा जैसा कि मुझे हुआ है।[3]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५०१०) से।

२२०. तार : एच० एस० एल० पोलकको[4]

[लन्दन]
अगस्त १६, १९०९

दाउदका स्थान ट्रान्सवालमें। संशोधनमें सामान्य शिक्षा-परीक्षा और गवर्नरको यह अधिकार देना शामिल कि परीक्षा पास करनेवाले लोगोंकी संख्या राष्ट्रीयताके आधारपर नियन्त्रित करनेके नियम बना दें।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०१८) से।

१. इसमें कैदियोंको दिये जानेवाले भोजन-सम्बन्धी आरोपोंकी जाँच करानेकी प्रार्थना की गई थी और नागप्पनकी मृत्युके सम्बन्धमें की गई कार्रवाईकी ओर विशेष ध्यान खींचा गया था।

२. ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघ (ट्रान्सवाल ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन) से मिले इस तारमें कहा गया था: "कैदी भारी कष्ट पा रहे हैं, अपर्याप्त पोषणहीन भोजन। रुस्तमजीके सिवा जोहानिसवर्गके सब कैदियोंको, जो एकदम निर्वासित कर दिये गये थे और लौट आये, छः-छः महीनेकी कड़ी कैद। कल खासी अच्छी सार्वजनिक सभा हुई। प्रस्ताव, भूतपूर्व कैदियोंको बधाई; नागप्पनके मामलेकी रिपोर्टसे जनतामें नाराजी; प्रकाशित प्रमाणोंसे भारतीय आरोपोंकी पूरी पुष्टि, शिष्टमण्डलोंका समर्थन। साम्राज्य-सरकारसे इस मौकेपर दखल देनेकी सादर आग्रहपूर्ण अपील। गिरफ्तारियाँ, देश-निकाला जारी।"

३. लॉर्ड ऍम्टहिलने १६ अगस्तको लिखे पत्रमें इस विषयमें अपने विचार व्यक्त किये थे: "यद्यपि अत्याचारोंका जारी रहना और इस वक्त बढ़ जाना दुःखद और खीज पैदा करनेवाला है, पर मुझे लगता है कि इस स्थितिसे हमारे काममें सहायता ही मिलेगी।"

४. मसविदेपर पानेवालेका नाम नहीं दिया गया है। लेकिन मसविदेके विषय और पोलकके नाम गांधीजीके १३ और २० अगस्तके पत्रोंके उल्लेखसे यह साफ है कि पत्र उन्हींको लिखा गया था; देखिए पृष्ठ ३५५ और ३६२।

२२१. पत्र : लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन]
अगस्त १६, १९०९

महोदय,

मैं लॉर्ड क्रू का ध्यान श्री मुहम्मद खाँ नामके एक व्यक्तिसे प्राप्त पत्रके आंशिक अनुवादकी ओर आकर्षित करता हूँ, जो इसके साथ संलग्न है। यह व्यक्ति कुछ समयतक जोहानिसबर्गमें मेरा मुहर्रिर रहा था। मैंने पत्रके सम्बन्धित भागका स्वतन्त्र अनुवाद किया है। यह पत्र उन अनेक पत्रों जैसा है जो मुझे जोहानिसबर्गमें रहते हुए मिले थे।

यह सम्भव है कि पत्रके कुछ हिस्सोंमें अनजाने अत्युक्ति हो गई हो; उदाहरणके लिए चुराये हुए भोजनकी ठीक मात्रा या स्नानके स्थानके पूर्ण अभावके सम्बन्धमें। लेकिन मोटे तौरपर वक्तव्य मुझे सही जान पड़ता है।

मैं इस अनुवादको यह दिखानेके लिए भेज रहा हूँ कि ट्रान्सवालकी जेलोंमें ज्यादातर ब्रिटिश भारतीय राजनीतिक कैदियोंको ऐसे कौन-से कष्ट भोगने पड़ रहे हैं, जिन्हें टाला जा सकता है। मैं "राजनीतिक" विशेषणका प्रयोग सोच-समझ कर करता हूँ। मैं यह बात भली भाँति जानता हूँ कि ट्रान्सवालमें कैदियोंका कोई कानूनी वर्गीकरण नहीं है। साथ ही, निःसन्देह, सरकार यह तथ्य स्वीकार करती है कि कुछ कैदी ऐसे हैं जो पक्के अपराधी हैं; और कुछ ऐसे हैं जिन्होंने उपनिवेशके कानूनोंका केवल पारिभाषिक रूपमें उल्लंघन किया है। दुर्भाग्यसे यह स्वाभाविक वर्गीकरण भारतीय अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके पक्षमें नहीं माना जाता। इतना ही नहीं, बल्कि उनके साथ इसलिए कुछ ज्यादा कठोर व्यवहार करनेकी इच्छा मालूम होती है कि वे अनाक्रामक प्रतिरोधी हैं। भोजन अपर्याप्त और अनुपयुक्त होता है और भारतीय कैदी वतनी कैदियोंकी श्रेणीमें रखे जाते हैं। ये दोनों बहुत गम्भीर कठिनाइयाँ हैं, जिनसे बहुत ज्यादा तकलीफ हो रही है।

मेरे साथीको और मुझे विश्वास है कि लॉर्ड महोदय कृपा करके इस सम्बन्धमें जाँच करेंगे और ट्रान्सवालके कुछ मन्त्रियोंके राजधानीमें रहते हुए, सम्भव हो तो, कुछ राहत दिला देंगे।[1]

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[सहपत्र]

१९ जुलाई १९०९ को श्री मुहम्मदखाँ, जोहानिसबर्ग द्वारा गांधीजीको भेजे गये पत्रका आंशिक अनुवाद

मैं पिछली १२ जुलाईको रिहा किया गया था। मुझे सिर्फ इस बातका अफसोस रहा कि मैं जेलमें आपसे मिल नहीं सका। जिस दिन मैं दाखिल किया गया था उसी दिन मैंने

१. उपनिवेश कार्यालयने ३ सितम्बर को इस पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करते हुए गांधीजीको सूचित किया था कि उक्त कागजातोंकी एक प्रतिलिपि ट्रान्सवाल गवर्नरके पास वस्तुस्थितिकी जाँचके लिए भेजी गई है।

चीफ वार्डरसे निवेदन किया था कि मुझे आपसे मिलने दिया जाये, लेकिन उसने अनुमति नहीं दी।

मैं "आरक्षित शिविर" (रिजर्व कैम्प) में रखा गया था, जो अभी हालमें ही खोला गया है। वहाँ बहुत तकलीफ थी। पानी काफी नहीं मिलता था। नहानेकी कोई सुविधा नहीं थी। मैं दो महीने जेलमें रहा; इन दिनों मैं शायद ही कभी नहा पाया। मैंने अधिकारीसे शिकायत की। उसने कहा: "क्या तुम अन्धे हो? तुम देखते नहीं कि यहाँ गुसलखाना नहीं है?" तब मैंने कहा: "अगर यहाँ एक सालतक गुसलखाना न बने तो कैदी क्या करेंगे?" इसपर उसने जवाब दिया: "उनको उसके बिना ही काम चलाना होगा।"

खाना भी काफी नहीं मिलता था। इसके अलावा, शनिवारके दिन जब कैदियोंको अपने तौलिये, मोजे आदि धोने होते थे, २०० लोगोंके लिए केवल एक टंकी होती थी। मुझको घी बिल्कुल नहीं मिलता था। जेलवाले भातमें चर्बी मिला देते थे, जो मैं नहीं खाता था। मैंने इस बारेमें शिकायत की, लेकिन मेरी शिकायतपर कोई ध्यान नहीं दिया गया। मैंने चीफ वार्डरका ध्यान इस बातकी ओर आकर्षित किया कि आपने घी न दिया जानेकी शिकायत की थी। चीफ वार्डरने बताया कि चूंकि आप घीके बिना काफी खाना नहीं खा पाते थे, इसलिए आपसे यह कह दिया गया था कि दूसरे भारतीय कैदियोंको भी घी दिया जायेगा, ताकि आप खाना खानेके लिए रजामन्द हो जायें। आप जेलके गवर्नर और चीफ वार्डरका स्वभाव जानते हैं। हमें जब शिकायत करनी हो, वे इतनी देर भी नहीं ठहरते कि उसको सुन तो लें। बादमें मुझे नई भोजन-तालिकाके अनुसार खाना मिलने लगा। यह खाना भी काफी नहीं है। चार औंस रोटीकी मंजूरी थी; लेकिन मुझे कभी ऐसा नहीं लगा कि मुझे दो औंससे ज्यादा रोटी मिलती है। दलिया केवल नामका दलिया है, क्योंकि वह तो निरा पानी होता है और होता भी बहुत कम है। जो रोटी, भात, शाक वगैरह दिया जाता है, उसमें से बहुत-कुछ अहातेमें काम करनेवाले वतनी कैदी चुरा लेते हैं। ६ औंस चावल देनेकी आज्ञा थी; लेकिन मुझे मुश्किलसे तीन औंस मिलता था। मेरा विश्वास है कि काफिर लगभग पन्द्रह रकाबी खाना चुरा लेते हैं और वार्डर कुछ नहीं कहते। इसके अलावा, वार्डर गालियाँ देते हैं। मैंने यह सब चुपचाप बर्दाश्त किया।

काम कुछ ज्यादा न था। मैं ३२ लोगोंकी एक टुकड़ीके साथ लॉर्ड सेल्बोर्नकी कोठीपर ले जाया जाता था। वहाँ हमें घास काटने, बेलन चलाने, खोदने, पत्थर तोड़ने, पेड़ काटने, जमीन साफ करने और पेड़ोंमें पानी देनेका भी काम करना पड़ता था। इन कामोंमें से सिर्फ खुदाईका काम कुछ कठिन होता था, क्योंकि वहाँ सारी जगह पथरीली थी, और पत्थर बहुत कड़ा भी था। बाग एक टेकरीपर था। हमें काफिरोंके साथ बन्द किया जाता था। एक भी यूरोपीय अधिकारी ऐसा न था जो हमको भारतीय कहता हो। हमें "सामी" या "कुली" कहकर पुकारा जाता था। ज्यादातर वार्डर डच थे; उनमें से कुछ छोकरे ही थे, जिन्हें कामकी कोई जानकारी न थी।

आखिर ७४ मद्रासी भारतीय आये। वे बहुत बड़ी मुसीबतमें हैं। वे बड़ी तकलीफ पा रहे हैं। उनमें से पाँच बहुत ही बूढ़े, शायद साठ सालसे ऊपरके हैं। वे अच्छी तरह चल नहीं सकते हैं। इनको भी सुबह बहुत तड़के थर-थर काँपते हुए काम करनेके लिए बाहर भेज दिया जाता है। और चूंकि उनको बहुत दूर पैदल घिसटना पड़ता है, वे बेचारे

थक जाते हैं, और फिर भी वे मुँहसे शिकायतका एक लफ्ज़तक नहीं निकालते। इसीमें उनकी बहादुरी है।

प्रिटोरियाकी सारी बस्ती खाली है।[1]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१४२; और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजो प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९४९ और ५०१५) से भी।

२२२. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त १६, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं आपके देखनेके लिए उस पत्रकी[2] एक प्रतिलिपि इसके साथ भेज रहा हूँ, जो मैंने उपनिवेश-मन्त्रीके निजी सचिवके नाम लिखा है। मुझे आशा है कि पत्र आपको ठीक लगेगा।

मैं आपका ध्यान इस सप्ताहके 'इंडियन ओपिनियन'[3] की ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ। नागप्पन नामक भारतीयकी मृत्युके बारेमें की गई जाँचसे प्रकट होता है कि दुर्व्यवहारके सम्बन्धमें जो आरोप लगाये गये थे वे यथेष्ट रूपसे सिद्ध हो गये हैं। 'ट्रान्सवाल लीडर' ने जेल-अधिकारियोंके व्यवहारकी बड़ी कड़ी निन्दा की है। श्री रिचने इस कार्रवाईकी ओर लॉर्ड क्रू का ध्यान आकर्षित किया है।[4]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५०१६) से।

१. ट्रान्सवालके मन्त्रियोंने ३० सितम्बरको इसका जवाब देते हुए गवर्नरको बताया कि "प्रिटोरिया कैदियोंके रिज़र्व कैम्पमें पानीकी कमीका आरोप बिलकुल मिथ्या है", कैदियोंको स्नानादिकी भरपूर सुविधाएँ हैं और खाँने अपने वक्तव्यमें जो अन्य दोषारोपण किये हैं वे निराधार हैं। उन्हें उनकी इच्छानुसार ही गुनहखानोंमें रखा गया है पर उनके साथ मनुष्योचित बरताव किया जाता है। जेलके अधिकारियोंकी उनके साथ कठोर बरताव करनेकी कोई इच्छा नहीं है क्योंकि वे अनाक्रामक प्रतिरोधी हैं।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. यह **इंडियन ओपिनियन**का १७-७-१९०९ का अंक था। इसमें ८-७-१९०९ के **ट्रान्सवाल लीडर**से वह रिपोर्ट उद्धृत की गई थी जो उसके प्रिटोरिया-स्थित संवाददाताने भेजी थी और जो सामी नागप्पनकी मृत्युकी सरकारी जाँचके सम्बन्धमें थी। जाँच जोहानिसबर्गके गवर्नर श्री बेटमैन द्वारा की गई थी। **इंडियन ओपिनियन**में १० जुलाईके **लीडर**का वह आलोचनात्मक सम्पादकीय भी प्रकाशित हुआ था जिसमें जेलकी प्रचलित व्यवस्था और जाँचके तरीकेकी टीका भी थी, और नागप्पनके मामलेकी निष्पक्ष जाँचकी माँग की गई थी। इस अंकमें **प्रिटोरिया न्यूज़** और **ज्यूइश क्रॉनिकल** द्वारा की गई तत्सम्बन्धी टीकाएँ भी उद्धृत की गई थीं और अनेक यूरोपीय पादरियों द्वारा ट्रान्सवालके अखबारोंको भेजे गये पत्र भी प्रकाशित किये गये थे। आखिर सरकारको जनमतके सामने झुकना पड़ा था और प्रिटोरियाके असिस्टेंट रेजिडेंट मजिस्ट्रेट मेजर एफ० जे० निक्सन खुली जाँचके लिए नियुक्त किये गये थे। देखिए "पत्र: साउथ आफ्रिकाको", पृष्ठ ४८३-८४।

४. श्री रिचने सरकारी जाँचकी रिपोर्टकी एक प्रति उपनिवेश-कार्यालयको १६ अगस्तको भेज दी थी।

२२३. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
अगस्त, २०, १९०९

प्रिय हेनरी,

जहाजसे उतरनेसे कुछ पहलेका लिखा हुआ आपका पत्र पाकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। मुझे पूरी आशा थी कि आप जहाजपर सब काम कर डालेंगे और उन दोनों वक्तव्योंको तैयार कर लेंगे। परन्तु मैंने यह भी आशा की थी कि आप यथेष्ट विश्राम करेंगे और आवश्यकतासे अधिक श्रम न करेंगे। मैं उन दोनों पुस्तिकाओंकी[1] राह देख रहा हूँ जिन्हें रिचने 'पुस्तक' का नया नाम दिया है।

मुझे आशा है कि मेरे पिछले समुद्री तारके बाद आपको नये संशोधनकी विषयवस्तु समझनेमें कठिनाई न रही होगी। खैर, मेरे पत्र, जिनमें पहला और दूसरा संशोधन दिये गये हैं, शीघ्र ही आपको मिलेंगे और उनसे आपको यहाँकी वास्तविक स्थितिका पता चल जायेगा। मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि यह पत्र लिखते समय तक हमारी स्थिति वही है जो गत सप्ताह थी। मैंने सोचा था कि इस सप्ताहके प्रारम्भमें हमें निश्चय ही परिणामका पता लग जायेगा। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। लेकिन लॉर्ड ऍम्टहिलने अपने पिछले पत्रमें[2] लिखा है कि उन्हें लॉर्ड क्रू या जनरल स्मट्ससे किसी भी घड़ी उत्तर पानेकी आशा है। हम श्री श्राइनरसे कल भेंट करेंगे। इस भेंटमें हम उस विषयपर आगे चर्चा करेंगे जिसका उल्लेख आपको इस पत्रके साथ रखी गई नकलमें[3] मिलेगा।

नेटालके मित्रोंने[4] आफ्रिकी बैंकिंग कॉर्पोरेशनके कार्यवाहक मैनेजरकी मार्फत श्री वॉटमलीसे भेंट की है। श्री वॉटमली निश्चय ही बहुत अच्छा काम कर रहे हैं। उनकी मार्फत वे कल कर्नल सीलीसे भी मिले और सम्भवतः उनसे फिर भेंट करेंगे। इस मामलेकी चर्चा वे 'जॉन बुल'में भी करेंगे। इस प्रकार कुछ हंगामा तो मच जायेगा, परन्तु

१. ये पुस्तिकाएँ ट्रान्सवालकी समस्याओं और दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके सर्वसाधारण कष्टोंके सम्बन्धमें लिखी गई थीं। श्री पोलकने इस सम्बन्धमें गांधीजीको २१ अगस्तके अपने पत्रमें लिखा था: "मैंने ट्रान्सवालके कष्टोंपर एक पुस्तिका तैयार की है और उसकी कुछ प्रतियाँ आपको आजकी डाक से भेजनेकी सोची थी पर वह नहीं बन पड़ा। श्री गोखलेने इसे पढ़ा है। उनके खयाल से, कहीं-कहीं अत्यधिक उग्र होते हुए भी (अतः मैंने इसे कुछ-कुछ नरम कर दिया है) यह ठीक है और उन्होंने अपनी स्वीकृति दे दी है। इसकी २० हजार प्रतियाँ छपवाकर प्रकाशित करनेके खर्चका जिम्मा व्यक्तिगत रूपसे श्री जहाँगीर पेटिटने ले लिया है। पुस्तिका सचित्र है। तस्वीरें मेरे पास थीं। इनमें एक चित्र प्रिटोरिया जेलका और दूसरा फोक्सरस्ट जेलका होगा . . ।" पुस्तकका नाम ए ट्रेजेडी ऑफ एम्पायर: द ट्रीटमेन्ट ऑफ ब्रिटिश इंडियन इन द ट्रान्सवाल था। दूसरी पुस्तिकाके लिए देखिए "पत्र: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३३६।

२. यह पत्र १६ अगस्तको लिखा गया था।

३. यह उपलब्ध नहीं है।

४. नेटाल शिष्टमण्डलके सदस्य।

मुझे इसमें बड़ा सन्देह है कि इन भेंटोंका कोई फायदा होगा। परन्तु यदि हमारे मित्र यह विश्वास लेकर लौटते हैं कि वे हाथ जोड़नेसे नहीं बल्कि सत्याग्रहकी संगीनकी नोकपर न्याय पा सकते हैं तो उनकी यात्रा कुछ सार्थक होगी।

मैं जब यह पत्र लिखवा रहा था, मिली और वाल्डो आ गये और लिखाना रुक गया। वे दोनों स्वस्थ हैं। मिली अपने नये और अस्थायी घरमें काफी प्रसन्न जान पड़ती हैं।

डॉक्टर मेहता होटलमें ठहरे हुए हैं। वे और मैं दोनों गत इतवारको उनके पुत्रको श्री वॉरलके ग्रामर स्कूलमें दाखिल कराने लाउथ गये थे। वे संघर्षको बहुत अच्छी तरह समझते हैं और मुझे लगता है कि वे अब यह देखने लगे हैं कि सत्याग्रह जीवनकी बहुत-सी बुराइयोंकी अचूक दवा है। उन्होंने कल आपके और मिलीके लिए उमर खैय्यामकी पुस्तकका एक भव्य संस्करण खरीदा। यह पुस्तक क्या है, अल्बम है। पूरी-की-पूरी लिथोपर छपी है। चित्र भव्य हैं और वैसे ही रंग भी हैं। आप जानते हैं कि अरबीके अक्षरोंसे कैसी अच्छी सजावट होती है। पुस्तकमें अरबी या फारसी लिखावट बहुत है। मैंने ऐसी चीज पहले कभी नहीं देखी। यह पुस्तक और दूसरी पुस्तकें अभी-अभी पहुँची हैं और मिली इसे देख चुकी हैं। मॉडको वह इतनी पसन्द आ गई है कि वह अपने लिए एक प्रति खरीदनेके खयालसे पाई-पाई जोड़नेवाली है। डॉक्टर मेहताने हमारे स्तम्भोंमें खोले गये गरीब सत्याग्रही कोषमें १० पौंड दिये हैं। वे २५ पौंड दे रहे थे। मैंने उन्हें सलाह दी कि १० पौंड इसमें दें और बाकी रकम फीनिक्स स्कूलको दे दें। कॉर्डिज़ने कुछ पुस्तकों और दूसरी चीजोंके लिए लिखा था। उसका परिणाम यह हुआ कि डॉक्टर मेहता और मैं कल एक पुस्तक-विक्रेताके यहाँ गये थे और साथकी सूचीके[1] अनुसार पुस्तकें खरीद भी लाये हैं। ये फीनिक्स पुस्तकालयमें रहेंगी और साथ ही स्कूलमें भी काम आयेंगी।

आप जानते हैं कि मैंने लगभग ६६० पौंडकी जीवन-बीमा पालिसी ले रखी है। यह पालिसी श्री रेवाशंकर मेहताके[2] पास है। मैं चाहता हूँ कि आप उस पालिसीको लेकर कम्पनीके एजेंटसे मिल लें। इस बातसे मैं बहुत दिनोंसे परेशान हूँ। मुझे लगता है कि अब मेरे लिए इसका कोई उपयोग नहीं रहा है। अगर कम्पनी जो रकम काटना चाहे वह काटकर जमा किये हुए बाकी प्रीमियम लौटा दे और काटी हुई रकम बेजा न हो तो मैं चाहता हूँ कि पालिसीको छोड़ दूँ और जमा किये हुए प्रीमियमोंका बड़ा हिस्सा वापस ले लूँ।[3]

कल्याणदासके[4] बारेमें आप सारी बातें लिख भेजेंगे, मैं उसकी राह देख रहा हूँ।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०१९) से।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. डाक्टर प्राणजीवन मेहताके भाई रेवाशंकर जे० झवेरी।

३. गांधीजीके बीमा-सम्बन्धी विचारोंके लिए देखिए खण्ड ६, पृष्ठ ४४५।

४. कल्याणदास जगमोहनदास मेहता; देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४७५। ४ सितम्बरके अपने पत्रमें श्री पोलकने उसका उल्लेख करते हुए लिखा है: "कल्याणदासका कार्य सबसे श्रेष्ठ है। . . . उसका काम ठीक है; यद्यपि वह पहलेसे थोड़ा गंभीर हो गया है किन्तु फिर भी वह अभी तक वैसा ही सहृदय और समझदार बना हुआ है। मुझे वह प्यारा लगता है . . . ।"

२२४. लन्दन

[अगस्त २०, १९०९ के आसपास]

संघ-विधेयक

संघ-विधेयक (यूनियन बिल) पास हो गया। श्री श्राइनर और डॉक्टर अब्दुर्रहमान आदिने [उसे रुकवानेका] बहुत प्रयत्न किया, लेकिन कुछ बना नहीं। शायद उनके प्रयत्नोंका असर अच्छा हुआ होगा। कई सदस्योंने लम्बे-लम्बे भाषण दिये। कानूनमें काला [जातीय भेदभावका] धब्बा उनको अच्छा नहीं लगा। उन्होंने इसपर खेद प्रकट किया। किन्तु इससे क्या लाभ? वे अपने पद क्यों नहीं छोड़ देते? खेद प्रकट करनेके बाद भी वे काम तो वही करते हैं। अब काले लोग क्या करें? यह प्रश्न तो उठता ही नहीं। यदि उनमें शक्ति है तो वे रामका नाम लेकर सत्याग्रहका डंका बजायें; अन्यथा वे मुर्दोंकी भाँति ही हैं। वे यहाँ आकर बड़े-बड़े भाषण दे गये, इससे कोई लाभ होनेवाला नहीं है। भाषणोंसे ही कुछ प्राप्त कर लेनेके दिन चले गये जान पड़ते हैं।

नेटालका शिष्टमण्डल

नेटालके प्रतिनिधि नेटालकी दशाका विवरण[1] समस्त संसारमें भेजनेके काममें जुटे हुए हैं। उन्होंने यह विवरण बहुत-से स्थानोंमें भेजा है। इसके अलावा वे संसदके सदस्य श्री बॉटमलीसे भी मिले हैं। श्री बॉटमली उनकी उचित खातिर कर रहे हैं। उन्होंने उनको चायकी दावत दी थी और दूसरे निमन्त्रण भी दिये हैं। उनकी मार्फत ही उनकी लॉर्ड क्रूसे भेंट हुई है। अब दूसरी बार भेंट करेंगे। श्री बॉटमली उनकी अच्छी सहायता कर रहे हैं। लेकिन नेटालवासी भारतीयोंकी मुक्ति तो सत्याग्रहकी राहसे ही सम्भव है, यह बात सभीको समझ लेनी चाहिए। जीते रहे तो देखेंगे भी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८-९-१९०९

२२५. शिष्टमण्डलकी यात्रा [–८]

[अगस्त २१, १९०९ के बाद]

इस हफ्ते मेरे पास देने योग्य खबर बहुत ही कम है। समझौतेकी बातचीत जारी है। लेकिन परिणाम अभीतक नहीं निकला है। 'टाइम्स' में एक लेख है। उससे प्रतीत होता है कि शायद परिणाम अच्छा निकलेगा। उसका यह लेख किसी जानकारका लिखा दिखाई देता है। वह लिखता है कि आशा है, श्री स्मट्स ऐसा स्पष्टीकरण कर देंगे, जिससे भारतीयों-की भावनाओंको ठेस न पहुँचे।

१. देखिए "नेटालवासी भारतीयोंके कष्टोंका विवरण", पृष्ठ ३४३-४९।

हम श्री श्राइनरसे मिले।[1] बहुत लम्बी बातचीत हुई। उन महानुभावको भी ऐसा लगता है कि रियायतके तौरपर छः व्यक्ति प्रवेश करें तो इसमें कहने योग्य कोई बात नहीं होगी; लेकिन वे अधिकारके रूपमें प्रवेश नहीं कर सकते। वे स्वयं जो विचार मनमें बाँधते हैं, सचाईके साथ बाँधते हैं। लेकिन वे बहुत समयसे यह खयाल बनाये बैठे हैं कि हम भारतीय हीन लोग है; इसलिए वे यह नहीं समझ पाते कि भारतीयोंके लिए रियायतके तौरपर प्रवेश करना अपमानजनक बात है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८-९-१९०९

२२६. पत्र : डॉ० अब्दुर्रहमानको

[लन्दन]
अगस्त २३, १९०९

प्रिय डॉ० अब्दुर्रहमान,

अपने कार्यके सम्बन्धमें कृपया मेरी सहानुभूति और बधाई स्वीकार करें। मेरी सहानुभूति इसलिए है कि आपको कोई ठोस चीज नहीं मिली है; और बधाई इसलिए कि अपने उद्देश्यकी सहज न्याय्यताके कारण और वैसे ही आपके किये हुए ठोस कार्यके कारण आपका शिष्टमण्डल जितना सफलताका पात्र है उतना और कोई शिष्टमण्डल नहीं है। श्री श्राइनरने निःसन्देह, सच्चे दिलसे और अति-मानवकी तरह काम किया है।

यह तो मानी हुई बात थी कि विधेयकके मसविदे (ड्राफ्ट बिल)में कोई संशोधन न किया जायेगा। साम्राज्यकी एक कानूनकी किताबमें प्रजातीय (रेशियल) प्रतिबन्ध दाखिल करनेपर लगभग हरएक सदस्यने खेद प्रकट किया है, इस बातसे कोई चाहे तो जितना-कुछ सन्तोष प्राप्त हो सकता है, उतना प्राप्त कर ले; परन्तु मैं या आप तो खेद-प्रकाशको लेकर जी नहीं सकते। आप व्यस्त हैं, मैं भी व्यस्त हूँ। अगर मैं व्यस्त न होता तो मैं जो सान्त्वना दे सकता हूँ उसे देने आपके पास निश्चय ही आता। फिर भी मैं जानता हूँ कि सच्ची सान्त्वना तो अपने भीतरसे ही आती है। जहाजमें हमारी जो बात हुई थी, मैं आपको सिर्फ उसकी याद दिला सकता हूँ। आपको निराशा हुई है (यदि हुई है तो)। आप संसदसे या ब्रिटिश जनतासे कुछ आशा करते थे। लेकिन आप अगर अपने आपसे कोई आशा नहीं करते तो आपको उनसे आशा क्यों करनी चाहिए?

मैंने आपको थोरोकी 'सविनय अवज्ञाका कर्तव्य' ('ड्यूटी ऑफ़ सिविल डिसओबिडिएन्स') पुस्तक भेजनेका वादा किया था। मुझे वह पुस्तक मिली नहीं। मैं उसके लिए आज पत्र लिख रहा हूँ। आशा है, आपके जानेसे पहले भेज दूँगा।

इसके अतिरिक्तमैं तो यही प्रार्थना कर सकता हूँ कि ईश्वर आपको दक्षिण आफ्रिकामें आन्तरिक सुधारके साथ-साथ इस कामको, और इसलिए अनाक्रामक प्रतिरोधको, जारी रखनेकी शक्ति और सामर्थ्य दे, भले ही आरम्भमें आप सिर्फ मुट्ठीभर ही हों।

१. यह भेंट २१ अगस्तको होनेवाली थी; देखिए "पत्र: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३६१।

अगर आप आ सकें तो कृपया अवश्य आयें। अगर आपको फुरसत हो तो कल आइए। हम साथ-साथ शाकाहारी भोजनालय (वेजिटेरियन रेस्तराँ) में चलेंगे और बातचीत करेंगे। आपका परिचय रंगूनके डॉ० मेहतासे भी कराऊँगा। वे इसी होटलमें ठहरे हुए हैं। हम होटलमें आपकी राह १ बजनेमें ५ मिनट तक देखेंगे।

हृदयसे आपका,

डॉ० अब्दुर्रहमान
३८, लांगरिज़ रोड
अर्ल्स कोर्ट, एस० डब्ल्यू०

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति की फोटो-नकल (एस० एन० ५०२४) से।

२२७. पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन]
अगस्त २४, १९०९

महोदय,

मैं विनयपूर्वक लॉर्ड क्रू का ध्यान इस बातकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि अभी श्री पोलकका, जो फिलहाल भारतमें ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, एक तार मिला है। उसमें कहा गया है कि इसी मासकी ३१ तारीखको भारतीय संघर्षके सम्बन्धमें बम्बईमें एक सार्वजनिक सभा की जायेगी। तारमें यह भी कहा गया है कि दो भारतीय ट्रान्सवाल सरकार द्वारा निर्वासित किये जानेपर बम्बई पहुँचे हैं। उनमें से एक युद्धके पहलेसे वहाँका निवासी है और उसने पिछली लड़ाईमें सैनिक अधिकारियोंकी सेवा की थी। दूसरा नेटालमें पैदा हुआ था और बादमें ऑरेंज रिवर कालोनीमें बस गया था। इस दूसरे भारतीयके मामलेसे स्पष्ट है कि जो भारतीय दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे भागोंके निवासी हैं, वे भी, लॉर्ड महोदयके लार्ड सभामें दिये गये आश्वासनके विरुद्ध, भारतको निर्वासित किये जा रहे हैं।[1]

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स २९१/१४२

१. इस पत्रकी पहुँच देते हुए २ सितम्बरको उपनिवेश कार्यालयने गांधीजीको सूचित किया था कि इसकी एक प्रति, मन्त्रियोंका ध्यान आकर्षित करनेके लिए, ट्रान्सवाल गवर्नरके पास भेज दी गई है। श्री स्मट्सने २९ सितम्बरके पत्रमें इसका जवाब देते हुए देशनिकाला देकर भारत भेजनेकी बातका खण्डन किया और लिखा कि "श्री गांधीने यह उल्लेख नहीं किया है कि यह व्यक्ति (१) ११ अक्तूबर, १८९९ से पूर्व तीन वर्षतक यहाँ रह चुकनेका दावा करता है, या (२) उसके पास उपनिवेशमें प्रवेश करनेका अधिकृत अनुमतिपत्र है अथवा (३) वह ३१ मई, १९०९ को ट्रान्सवालका निवासी था और ठीक उस दिन वहाँ मौजूद था।" उन्होंने यह भी लिखा था कि यदि गांधीजी जिनके सम्बन्धमें शिकायत कर रहे हैं, उनके नाम भी दे दें तो उनके देशनिकालेके मामलेकी सम्पूर्ण जानकारी दी जा सकेगी।

२२८. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त २४, १९०९

लॉर्ड महोदय,

बम्बईसे अभी प्राप्त एक तारके सम्बन्धमें मैंने लॉर्ड क्रू को पत्र[1] भेजा है। उसकी एक नकल नम्रतापूर्वक इसके साथ नत्थी कर रहा हूँ।

पत्रसे सब बात विदित हो जायेगी, किन्तु मैं इतना और कहना चाहता हूँ कि ये निर्वासन अधिकाधिक गम्भीर और अनुचित होते जा रहे हैं। श्री पोलकने, जो तारके प्रेषक हैं, आज प्राप्त हुए पत्रमें खबर दी है कि वे 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया' के स्थानापन्न सम्पादक, सर फीरोजशाह मेहता और अन्य प्रमुख व्यक्तियोंकी सलाहसे कार्य कर रहे हैं।[2]

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०२६) से।

२२९. तार : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
अगस्त २५, १९०९

प्रगति जारी, लेकिन अब भी बहुत अनिश्चित। निर्वासितोंकी सभामें हाजिर करें। भारतकी सहानुभूतिकी ठोस अभिव्यक्तिके रूपमें संघर्षमें सहायतार्थ पैसा-चन्दाके प्रस्तावका सुझाव। बोमनजी जानते हैं।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०२९) से।

१. देखिये पिछला शीर्षक।

२. लॉर्ड ऍम्टहिल्ने इस पत्रकी पहुँच २५ अगस्तको दी थी। उन्होंने लिखा था कि मैंने लॉर्ड क्रू को पत्र लिखा है। ज्यों ही मुझे उनका उत्तर मिलेगा त्यों ही मैं "यह ज्यादा अच्छी तरह कह सकूँगा कि हमारे मौन और प्रतीक्षाके वर्तमान रुखको छोड़नेका वक्त आया है या नहीं।"

२३०. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
अगस्त २६, १९०९

प्रिय हेनरी,

मुझे आपका लम्बा और मनोरंजक पत्र मिला, और कतरनें भी। मुझे हर्ष है कि आपका जो स्वागत हो रहा है उससे आप प्रसन्न हैं। आप जब वहाँ उतरे तब क्या कोई आपको लेनेके लिए आया था?

क्या आप डॉ० मेहताके भाईसे मिले हैं? आशा है, आप किसी भी कारण इसमें चूक न करेंगे। वे बहुत ही संकोची स्वभावके व्यक्ति हैं और सम्भव है, उन्हें आपको बम्बईके सब बड़े-बड़े धनी-मानी लोगोंसे घिरा हुआ देखकर आपसे मिलने आनेमें संकोच हुआ हो।

आपने जो कतरनें भेजी हैं वे पढ़नेमें मनोरंजक हैं और उनसे यह सम्भावना प्रकट होती है कि आप बहुत अच्छा और ठोस काम कर सकेंगे। मुझे आपका तार मिल गया है। मैंने उसका यह उत्तर दिया है :[1]

चन्देकी बातमें सर मंचरजीको बहुत दिलचस्पी है। मालूम होता है कि उनके कहनेसे श्री रिचने यह सुझाव पहले दिया था। सर मंचरजीका विचार है कि यह बात जन-भावनाकी ठोस अभिव्यक्ति होगी, इसलिए इसका प्रभाव बहुत ज्यादा होगा। मंशा यह नहीं है कि हमें आर्थिक सहायता मिले। दरअसल, हमें यह कह सकने योग्य होना चाहिए कि हमारा काम इसके बिना भी चल सकता है; लेकिन इसके पीछे विचार यह है कि हजारों लोग जब चन्दा इकट्ठा करके संघर्षमें भाग लेनेकी इच्छा व्यक्त करेंगे, तो उसमें महत्त्वकी बात यह होगी कि इतने लोगोंने अपना-अपना अंशदान किया। मैं इस सम्बन्धमें अधिक न लिखूंगा, क्योंकि यह पत्र पढ़नेतक आप इस सुझावपर या तो अमल शुरू कर चुके होंगे या इसको रद कर चुके होंगे।[2]

स्मट्स इस सप्ताह दक्षिण आफ्रिकाको रवाना हो रहे हैं, और अभी तक कोई समझौता नहीं हुआ है और न उपनिवेश कार्यालयसे कोई उत्तर ही आया है। इसलिए किसी भी दिन प्रतिकूल उत्तर पानेके लिए तैयार हूँ। लॉर्ड ऍम्टहिलने लॉर्ड क्रू को पत्र लिखा है।

डॉ० मेहतासे मेरी और महत्त्वपूर्ण बातचीत हुई है। मेरा खयाल है, अब उनको विश्वास हो गया है कि हमारी योजना ठीक है।

मैं यह मान लेता हूँ कि आप भारतके अन्य भागोंके भी प्रमुख व्यक्तियोंसे पत्र-व्यवहार कर रहे हैं। श्री हाजी हबीब बहुत उत्सुक हैं कि आप उनके भाई श्री हाजी मुहम्मदको

१. श्री पोलकने ४ सितम्बरके पत्रमें गांधीजीको सूचित किया था कि १४ सितम्बरको सर फीरोजशाह मेहताकी अध्यक्षतामें एक सार्वजनिक सभा होनेवाली है। इस सभामें निर्वासितोंके लिए चन्दा करनेके सम्बन्धमें एक प्रस्ताव पेश किया जायेगा। उन्होंने १० सितम्बरके अपने पत्रमें पुनः लिखा था कि श्री गोखलेकी रायमें यह सुझाव कार्यगर नहीं है, यद्यपि एक प्रस्ताव भले ही पास कर लिया जाये।

२. यह यहाँ नहीं दिया गया है; पाठके लिए देखिए पिछला शीर्षक।

आन्दोलनमें भाग लेने और अपनी सहायता करनेके लिए बुलायें। वे पोरबन्दरमें हैं। उनका पूरा नाम हाजी मुहम्मद हाजी दादा है।

नेटालके मित्रोंने अपना वक्तव्य यहाँके सभी संसद-सदस्यों तथा अखबारोंको और भारतीय अखबारों एवं लोक-नेताओंको भी भेज दिया है। आप नेटालके प्रश्नके सम्बन्धमें जो-कुछ आवश्यक समझें वह कर सकते हैं।

श्री जमशेदजीने[1] पुस्तिकाकी २०,००० प्रतियाँ छपानेका वचन देकर बहुत कृपा की है। यह शानदार काम होगा।

मॉड, डॉ० मेहता, हाजी हबीब और मैं रविवारको व्हाइटवे गये थे। हम रातको एक बजेकी गाड़ीसे रवाना हुए और स्ट्राउडमें ३-४० पर पहुँचे। जॉर्ज एलेन स्टेशनपर हमें लेनेके लिए आये थे और हम व्हाइटवे तक पैदल गये। पैदल चलना बड़ा आनन्दमय रहा। आपको भी उसमें रस आया होता। प्रदेश बहुत सुन्दर था। जॉर्ज एलेन तो मानो स्फूर्तिकी मूर्ति हैं। वे बहुत-अच्छे व्यक्ति हैं। मेरा खयाल है कि सामान्यतः वे असंस्कृत समझे जायेंगे। वे जो भी काम करते हैं, बिल्कुल स्वाभाविक ढंगसे करते हैं, और बहुत मुँह-फट हैं। उनकी पत्नीके विचार उनसे नहीं मिलते, फिर भी उनके प्रति उनका अनुराग बहुत गहरा है और यह मुझे उनके स्वभावकी सबसे बड़ी अच्छाई जान पड़ी। उनकी पत्नी स्तनके केन्सरसे पीड़ित हैं और केवल दिन गिन रहीं हैं। उनका चेहरा बड़ा ही मोहक और सरल है। उनके साथ मेरी खासी लम्बी बातचीत हुई। एलेनके चार बच्चे हैं। सबसे बड़ी पुत्री है। वह बहुत हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ लड़की है और उत्तम गृह-व्यवस्थापिका है। वही अपने छोटे भाइयोंकी और प्रायः सारे घरकी देखभाल करती है। एलेन अपने बच्चोंपर कोई नियन्त्रण रखनेमें विश्वास नहीं करते। मुझे लगता है कि वे इस सम्बन्धमें अति कर जाते हैं। बच्चे चाहे जैसे फर्शपर बैठ जाते थे और चाहे जैसे खाते-पीते थे। किन्तु यह तो तफसीलकी बात है। उनके सब बच्चे पूर्ण स्वस्थ थे। व्हाइटवे किसी समय टॉल्स्टॉयवादियोंकी बस्ती थी। उसके निवासी उस आदर्शके अनुरूप नहीं रह सके हैं। कुछ चले गये हैं, कुछ वहीं रह रहे हैं, किन्तु उस आदर्शपर नहीं चल रहे हैं। एलेन ही उस आदर्शके सबसे निकट प्रतीत होते हैं। उनकी जमीनकी हालत बहुत अच्छी है और उसको इस मौजूदा हालतमें वे अकेले और मशीनोंकी मददके बिना लाये हैं। वे केवल सीधे-सादे औजार काममें लाते हैं। उनका धन्धा जूते बनानेका था। डॉ० मेहताने इस यात्रामें बहुत रस लिया। वे अत्यन्त अनिच्छापूर्वक आये थे, क्योंकि वे कोई अनावश्यक कष्ट उठानेमें विश्वास नहीं करते। मॉडको भी यहाँ आना बहुत अच्छा लगा। मैंने सोचा था कि वह पैदल लौट सकती है। यह मेरी कठोरता थी। किन्तु श्री हाजी हबीबने इस स्थितिसे मुझे बचा लिया।

डॉ० मेहताकी दी हुई १५ पौंडकी रकममें से छात्र-जीवन पुस्तकमाला (स्कूल लाइफ सीरीज़) की टॉल्स्टॉय और अन्य लेखकोंकी लिखी कुछ और किताबें फीनिक्सके लिए खरीद ली गई हैं।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०३१) से।

१. स्पष्ट ही जहाँगीर बोमनजी पेटिटके बदले यह नाम भूलसे दिया गया है; देखिए पा० टि० १, पृष्ठ ३६१।

२३१. शिष्टमण्डलकी यात्रा [–९]

[अगस्त २७, १९०९]

यह हफ्ता भी पिछले हफ्तेकी तरह ही बीता है। अभीतक समझौतेका कुछ पता नहीं है। इसके अतिरिक्त यह खबर भी है कि जनरल स्मट्स इस हफ्ते ट्रान्सवालको रवाना हो जायेंगे। इसलिए क्या कहा जाये, यह नहीं सूझता। धोखा होगा, ऐसा तो नहीं दीखता। सर मंचरजीने मुलाकातके लिए जनरल स्मट्सको चिट्ठी लिखी थी। उसका जवाब जनरल स्मट्सने आज २७ अगस्तको दिया है।

जनरल स्मट्सने जवाबमें कहा है कि समझौतेकी बातचीत खानगी तौरपर चल रही है, इसलिए फिलहाल मुलाकात मुल्तवी कर दी है। इसका यह अर्थ माना जाता है कि शायद समझौता हो जायेगा। फिर दूसरी तरफसे यह भी माना जाता है कि इतनी ढील हुई, इससे मालूम होता है कि हमारी मांगोंके स्वीकृत होनेमें कुछ अड़चन भी आई है। इनमें से क्या ठीक है, यह जान नहीं पड़ता। मैं तो यही कह सकता हूँ कि समझौतेकी बातका परिणाम कुछ भी हो, उससे हमारा सम्बन्ध कम है। जो दुःख सहन करनेके लिए तैयार है उसको क्या भय या चिन्ता? मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि एक-न-एक दिन हमारी मांग मंजूर हुए बिना रह नहीं सकती। इसमें किसी भी सत्याग्रहीको सन्देह होना ही नहीं चाहिए। लॉर्ड ऍम्टहिलको भी ऐसी ही खबर मिली है कि समझौतेकी बातचीत अभी चल ही रही है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५–९–१९०९

२३२. लन्दन

[अगस्त २७, १९०९ के बाद]

नेटालका शिष्टमण्डल

सदस्य शिष्टमण्डलके विवरणको अभीतक जगह-जगह भेज रहे हैं और लोकसेवकोंसे मिल रहे हैं। भारतको बहुत-सी प्रतियाँ भेजी हैं। उनके साथ एक पत्र भी लिखा है। पत्रका[1] सार इस प्रकार है:

भारतसे प्रार्थना

नेटालके भारतीयोंकी स्थितिके सम्बन्धमें हमने उपनिवेश मन्त्रीके सामने जो विवरण पेश किया है, उसकी नकल हम आपको भेजते हैं।

१. इसपर २७ अगस्तकी तारीख पड़ी है।

लन्दनमें हम बड़े-बड़े अधिकारियोंसे मिलने और लोकमतको जागृत करनेके लिए आये हैं। हम उपनिवेश मन्त्री और अन्य सज्जनोंसे मिले हैं और हमने उनके सामने पेश किये विवरणको चारों ओर भली भाँति प्रचारित किया है। जबतक भारतके भारतीय हृदयसे हमारी सहायता न करेंगे तबतक यहाँ लॉर्ड क्रू या लॉर्ड मॉर्ले कुछ ज्यादा कर सकें, यह सम्भव नहीं है।

नेटालमें भारतीयोंकी आबादी बहुत है और वहाँ उनकी बड़ी मिल्कियत है। वे भारतके सभी भागोंसे आये हुए हैं। उनकी संख्या एक लाख है। इनमें से लगभग दस हजार लोग व्यापारमें लगे हैं और बाकी गिरमिटिया मजदूर हैं या वे लोग हैं जो गिरमिटसे मुक्त हो चुके हैं। नेटालकी समृद्धि भारतीय मजदूरोंके श्रमपर ही निर्भर है, इस बातको सभी मंजूर करते हैं। हम भारतकी सहायता करनेमें भी पीछे नहीं हटे हैं। पिछले दो अकालोंमें गरीब और अमीर सभीने अपने-अपने सामर्थ्यके अनुसार चन्दा देकर अकाल-सहायता कोषमें धन भेजा है। हमें धनकी सहायता नहीं चाहिए; किन्तु भारत [दूसरी तरहसे] हमारी सहायता करके हमारे दुःख कम कर सकता है, यह तो हमारा निश्चित मत है।

विवरणसे आप देख सकेंगे कि नेटालमें तीन तरीकोंसे हमें बर्बाद करनेका रास्ता अख्तियार किया गया है। एक तो व्यापारिक लाइसेंसों द्वारा अन्याय किया जाता है। लाइसेंस देनेवाला अधिकारी और लाइसेंस बोर्ड [के सदस्य] जो हमारे प्रतिस्पर्धी हैं, मनमाने तौरपर हमारे परवाने रोक लेते हैं और उनके सम्बन्धमें कानूनी अदालतोंमें अपील नहीं की जा सकती। दूसरे, नेटालको समृद्ध बनानेके लिए भारतीय गिरमिटियोंको गुलामोंकी तरह मजदूरी करनी पड़ती है। फिर भी, गन्नेके खेतों और चायके बागोंमें या खानोंमें कड़ा काम करके अपनी अवधि पूरी करनेके बाद उनको और उनके स्त्री-बच्चोंको भारी कर देना पड़ता है। इससे स्वतन्त्रतापूर्वक इस उपनिवेशमें रहकर वे अपना गुजारा करनेमें असमर्थ रहते हैं। और, तीसरे, हमारे बालकोंको शिक्षा देनेके जो साधारण साधन प्राप्त थे वे भी बन्द कर दिये गये हैं और इस प्रकार हमारी भावी उन्नतिका द्वार बन्द कर दिया गया है।

अब यदि भारतमें सभाओं और प्रार्थनापत्रों आदिसे हमारे कष्टोंके सम्बन्धमें पुकार नहीं की जायेगी तो हमें भूखों मरकर इस उपनिवेशसे भागना पड़ेगा; और इसमें बहुत समय भी नहीं लगेगा। भारत सरकारके हाथमें इसका एक कारगर उपाय है। वह यह है कि जबतक नेटाल सरकार हमारे अधिकार स्वीकार न करे तबतक भारत नेटालको मजदूर भेजना बन्द रखे। लॉर्ड कर्जनने ऐसा रास्ता अपनाया था। उन्होंने [नेटाल सरकारको] यह पत्र भी लिखा था कि यदि भारतीय व्यापारियोंकी स्वतन्त्रताकी रक्षा करनेका आश्वासन न दिया जायेगा तो मजदूर रोक दिये जायेंगे। इन बातोंका कोई और परिणाम तो ज्ञात नहीं हुआ; भारतीयोंकी स्वतन्त्रताकी रक्षाके बजाय ऊपर लिखे अनुसार कड़े कानून जरूर बना दिये गये हैं और उनपर क्रूरताके साथ अमल किया जाता है। हमारे गुजर-बसरके साधनोंमें दिन-प्रतिदिन कमी होती जाती है और ब्रिटिश प्रजाके रूपमें सामान्य अधिकारोंके साथ इस उपनिवेशमें रहना भी खतरेमें पड़ गया है।

टाइम्समें लेख

टाइम्समें यह लेख निकला था कि शिष्टमण्डलने अपनी मताधिकारकी माँग छोड़ दी है। उसके अलावा दूसरी भी गलत बातें थीं। इसलिए श्री आंगलियाके हस्ताक्षरोंसे एक पत्र[1] भेजा गया था। उसका सार नीचे देता हूँ :

> आपने अपने कलके अखबारमें लिखा है कि "संसदीय मताधिकारके सम्बन्धमें नेटालके भारतीयोंका कोई झगड़ा नहीं है।" हमारी हालकी लड़ाई राजनीतिक मताधिकारके सम्बन्धमें नहीं हैं। फिर भी यह बात तो सही है कि हमारी माँगोंमें से एक माँग उसके सम्बन्धमें है। हमारी मांगें तो बहुत हैं। लेकिन फिलहाल जो बहुत ही जरूरी हैं वे ही लॉर्ड क्रू के सामने पेश की गई हैं, ताकि हम उनका ध्यान पूरे मनोयोगसे उनकी ओर ही आकर्षित कर सकें। अगर परवाना-अधिकारी (लाइसेन्सिंग ऑफिसर) की कलमकी एक हरकतसे हमारी गुजर-बसरके साधन छिन जाते हैं, हमारे अधिकार चाहे जितने पुराने हों तो भी उस अधिकारीके फैसलेके विरुद्ध अपीलका अधिकार नहीं मिलता, हमारे बालकोंकी शिक्षाका द्वार बन्द करके उनकी मानसिक शक्तिका विकास रोक दिया जाता है और सर्वनाशी भारी कर लगाकर समर्थ भारतीय मजदूरोंको गुलाम रखा जाता है तो कोरे राजनीतिक अधिकारसे हमको क्या लाभ पहुँच सकता है?
>
> हमने अंग्रेज प्रजाके सामने जो तीन माँगें रखी हैं, उनको सभी लोगोंने उचित माना है। ये हमारी शारीरिक और मानसिक उन्नतिसे सम्बन्धित हैं। नेटाल जैसे जनतन्त्री राज्यमें भारतीयोंको मताधिकार नहीं है, यह कोई छोटी शिकायत नहीं है। किन्तु मौजूदा हालतको ध्यानमें रखते हुए हम अभी इस सम्बन्धमें जोर नहीं दे रहे हैं। हम अपनी स्वाभाविक मर्यादामें रहते हैं, इसीसे हमारी राजनीतिक अधिकार प्राप्त करनेकी योग्यता सिद्ध हो जाती है।
>
> इसके अलावा आप लिखते हैं कि "सभ्यता और शिक्षामें भारतीय दक्षिण आफ्रिकाके वतनियोंसे बढ़े-चढ़े हैं, इस दृष्टिसे वे अपने लिए सब अधिकार माँगते हैं।" इसके उत्तरमें हम आदरपूर्वक यह बताना चाहते हैं कि हम इस प्रकारके अधिकार माँगनेसे खुश नहीं हैं। और मेरी रायमें जहांतक सभ्य देशोंमें बुद्धिमान लोगों द्वारा अपने अधिकारोंका उपभोग करनेकी बात है, उनके मार्गमें सूक्ष्म भेदोंसे बाधा नहीं पड़नी चाहिए।

वाइसरॉयको चिट्ठी[2]

इसके अलावा वाइसरॉयको एक विशेष पत्र लिखा गया है। उसमें माँग की गई है कि यदि हमारे व्यापारिक अधिकारकी रक्षा नहीं की जानी है तो गिरमिटके अधीन जानेवाले मजदूरोंको रोक दिया जाये।

मुलाकातें

ये लोग सर फ्रेड्रिक लेलीसे[3] भी मिले जो पहले सूरतकी तरफ रहे हैं, लेली साहबने सारी बातें सुनीं। श्री वॉटमलीसे और कारपोरेशन बैंकके श्री क्लार्कसे भी मिलते रहते हैं।

1. यह २७-८-१९०९ के टाइम्समें प्रकाशित हुआ था।
2. देखिए परिशिष्ट २१।
3. भूतपूर्व ब्रिटिश एजेंट, जो पोरबन्दर राज्यकी व्यवस्था करते थे; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ७ और २१-२२।

वे कर्नल सीलीसे एक वार मिल चुके हैं। अव फिर मिलनेवाले हैं। लॉर्ड मॉर्लेने पहली सितम्बरको मिलना तय किया है। श्री गुप्त और नवाव साहव वेलग्रामी आदिसे मुलाकात फिर हुई है। इसके अलावा आगाखाँसे उनका पत्र-व्यवहार चल रहा है। सर मंचरजीसे समय-समयपर भेंट होती रहती है। उनकी मददका पार नहीं है।

पोलकका काम

श्री पोलकका काम भारतमें जोरसे चलता दिखाई देता है। उनके पाससे अखवारोंकी कतरनें आई हैं, जिनसे प्रकट होता है कि उन्होंने एक ही सप्ताहमें वहुत वड़ा काम किया है। गुजराती और अंग्रेजीके सभी अखवारोंमें खवरें दिखाई देती हैं। वे वम्वईमें वहुत-से लोगोंको पत्र लिख चुके हैं। ३१ तारीखको हुई सार्वजनिक सभाका भी तार आया है। अव क्या होता है, यह देखना है। उनके पाससे यहाँ निजी तार आते रहते हैं। इसलिए पूरी जानकारी रहती है।

सर मंचरजीकी मान्यता है कि भारतमें चन्दा करके ट्रान्सवालको पैसेकी सहायता दी जानी चाहिए। इस सम्वन्धमें श्री पोलकको तार[२] दिया गया है। अव सभामें जो कुछ हो जाये सो ठीक है। चन्देकी इस हलचलका लोगोंपर अच्छा असर पड़ेगा और इससे भारतकी सच्ची सहानुभूति प्रकट होगी।

"इंडियन सोशियॉलॉजिस्ट"

इस अखवारका मूल मुद्रक जेलमें चला गया है। फिर भी यह अखवार छप रहा है। नया मुद्रक भी गिरफ्तार कर लिया गया है। नये मुद्रकने पत्र-सम्वन्धी स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिए ही निर्भय होकर यह जोखिम अपने ऊपर ली है। वह कहता है कि उसके और श्री श्यामजीके मतमें विलकुल समानता नहीं है। उसने तो केवल पत्र-सम्बन्धी स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिए यह कार्य अपने हाथमें लिया है। हम इससे इतनी सीख तो ले ही सकते हैं कि जिस व्यक्तिने इस तरह जिम्मेदारी उठाई है वह गोरा है। जव उसने खुद आगे वढ़कर यह जोखिम मोल ली है तव यदि ट्रान्सवालके भारतीय अपने देशकी इज्जतकी खातिर लड़ाई चलायें तो कोई आश्चर्यकी वात नहीं मानी जायेगी।

जोज़ेफ रायप्पन

श्री जोजेफ रायप्पन, जो वहुत दिन पहले वैरिस्टर हो चुके हैं, रुपयेकी तंगीसे वापस नहीं लौट पा रहे थे। उनके लिए ट्रान्सवालमें चन्दा भी जमा किया गया था। अव वे "टींटे-जन कैसिल" जहाजसे रवाना हो रहे हैं। उनका विचार देशसेवाके लिए गरीवीका जीवन वितानेका है। मेरी कामना है कि उनका यह निश्चय पक्का वना रहे। मुझसे उन्होंने साफ-साफ कहा है कि आवश्यकता जान पड़ेगी तो वे ट्रान्सवालमें जेल भी जायेंगे।

वहादुर औरतें

लन्दनकी भाँति लिवरपूलमें भी सात स्त्रियाँ मताधिकारके सम्बन्धमें गिरफ्तार हुईं, और वहाँ उन्होंने अनशन किया। उन्होंने छः दिन तक कुछ भी नहीं खाया। इसलिए उनको कैदकी सजा पूरी होनेसे पहले छोड़ दिया गया है। मैं यह वतानेके लिए यह नहीं लिख रहा

२. देखिए "तार: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३६६।

हैं, और हमें ऐसा समझना भी नहीं चाहिए, कि जो स्त्रियाँ ऐसा करती हैं उनका हमें हर मामलेमें अनुकरण करना चाहिए। उद्देश्य केवल यह समझाना है कि वे कष्ट-सहनमें कोई कमी नहीं रखतीं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-९-१९०९

२३३. पत्र : श्रीमती काशी गांधीको

लन्दन,
अगस्त २८, १९०९
एक बजे रात

चि० काशी,[1]

देर इतनी हो गई है, फिर भी आज लिखे बिना काम नहीं चलेगा। हर हफ्ते तुम्हारी और सन्तोककी[2] याद कर लेता हूँ और पत्र नहीं लिखता। काम बहुत नहीं है फिर भी किसी-न-किसी काममें उलझा ही रहता हूँ।

तुम्हारी गोदमें बेटी आई है, इसके बारेमें मैं क्या लिखूं? अगर कहूँ, अच्छा हुआ कि आई, तो यह झूठ कहलायेगा। अगर दिलगीरी बताऊँ तो यह हिंसा होगी। अपने आजके विचारोंके अनुसार मुझे तटस्थ रहना चाहिए। इसके लिए गीताजीमें जिसे समचित्तावस्था कहा है, उसकी जरूरत है। वह तो अत्यन्त दुर्लभ है। फिर भी प्रयास मेरा उसी दिशामें है। इस बीचमें इतना ही कहता हूँ और यही चाहता हूँ कि तुम सच्चे रूपमें इन्द्रियोंका दमन करना सीखो। मुझे बहुत अनुभव हो रहा है। जितना अधिक देखता हूँ, मेरे विचार उतने अधिक दृढ़ होते जाते हैं। उन्हें बदलनेका कारण दिखाई नहीं देता। संतोकको अलगसे चिट्ठी नहीं लिखूंगा। यह तुम दोनोंके लिए है।

मैंने तो तुम्हें पत्र नहीं लिखा, किन्तु तुमने क्यों नहीं लिखा? यदि मनमें यह सवाल करनेपर कोई कारण न मिले तो पश्चात्ताप करना, क्योंकि मैं तुम सबके पत्रोंका भूखा हूँ।

मोहनदासके आशीर्वाद

प्रभुदास गांधीकी पुस्तक 'जीवननुं परोढ' में प्रकाशित, गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखित मूल गुजराती पत्रकी फोटो-नकलसे।

१. छगनलाल गांधीकी पत्नी।
२. मगनलाल गांधीकी पत्नी।

२३४. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अगस्त ३०, १९०९

लॉर्ड महोदय,

आपको अनावश्यक परेशानीमें न डालनेके उद्देश्यसे मैंने आपके पिछले दो पत्रोंकी प्राप्ति स्वीकार नहीं की है।[1]

क्या मैं आपसे जनरल स्मट्सके उस वक्तव्यपर[2] ध्यान देनेका निवेदन कर सकता हूँ जो उन्होंने भारतीयोंके प्रश्नके सम्बन्धमें कल रायटरके प्रतिनिधिको दिया है? उस वक्तव्यका अर्थ क्या हो सकता है? क्या उसका अर्थ यह है कि जनरल महोदय प्रिटोरिया पहुँचनेके बाद निर्णय करेंगे, और यदि ऐसी बात हो तो हमारा कर्तव्य क्या है?

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०३४) से।

२३५. पत्र : अमीर अलीको

[लन्दन]
अगस्त ३०, १९०९

प्रिय श्री अमीर अली,

मुझे आपका पोस्टकार्ड मिला। मैंने आपके आरामके खयालसे जानबूझ कर आपको पत्र नहीं लिखा। यदि कोई महत्त्वकी बात होती तो मैं निश्चय ही पत्र लिखता। इसके अतिरिक्त आपने अपने पोस्टकार्डमें पत्र लिखनेका वादा किया था, उसकी भी मैं प्रतीक्षा कर रहा था। आपका पत्र न मिलनेसे मैंने यह निष्कर्ष निकाला कि आप ज्यादा व्यस्त हैं; इसीलिए पत्र लिख नहीं पाये।

१. लॉर्ड ऍम्टहिलने अपने २४ अगस्तके पत्रमें कहा था कि उनके सुझावोंका जवाब दिये बिना जनरल स्मट्सके अचानक दक्षिण आफ्रिका रवाना हो जानेसे वे स्तम्भित रह गये हैं। उन्होंने टाइम्सके उस अग्रलेखका भी जिक्र किया जिसमें यह "साफ संकेत किया गया था कि ब्रिटिश भारतीयोंके सवालपर कोई समझौता हो जायेगा।" वे लॉर्ड क्रूको फिर पत्र लिखना चाहते थे। यह पत्र उन्होंने लिखा भी था। अपने २६ अगस्तके पत्रमें उन्होंने लॉर्ड क्रूके इस उत्तरका उल्लेख किया था कि "बातचीत अभी चल ही रही है, इसलिए अब भी कोई फैसला होनेकी आशा है।" लॉर्ड ऍम्टहिलने पहले यह सवाल लॉर्ड सभामें उठानेका इरादा किया था, किन्तु उपर्युक्त कारणसे उठाया नहीं। उन्होंने आगे लिखा था: ऐसी कोई बात हमने उठा नहीं रखी जिसे करना लाभदायक हो। अभी हमें धीरजके साथ प्रतीक्षा ही करनी होगी।"

२. देखिए अगला शीर्षक।

ट्रान्सवालके मामलेपर अब भी बातचीत चल ही रही है। जनरल स्मट्स शनिवारको चले गये। उन्होंने रायटरको यह सन्देश दिया:

> मैं आशा करता हूँ, यह[1] प्रश्न ट्रान्सवालके राजनीतिक क्षितिजसे लुप्त होनेपर आ गया है। ट्रान्सवालमें भारतीयोंके कुछ उग्र प्रतिनिधि जिस आन्दोलनको चला रहे हैं, उससे भारतीयोंका भारी बहुमत बेहद ऊब गया है और कानूनके आगे चुपचाप घुटने टेक चुका है। मैंने लॉर्ड क्रू से और इस मामलेमें दिलचस्पी रखनेवाले दूसरे विशिष्ट नेताओंसे बार-बार बातचीत की है और मेरा खयाल है कि अब इस टेढ़ी समस्याका ऐसा समाधान निकल सकेगा जिसे सब समझदार लोग ठीक और उचित मानेंगे।

और इस समय मामला यहींपर है। इसीलिए समझौतेकी आशा करनेका कुछ कारण है। लॉर्ड ऍम्टहिलने इस मामलेमें बहुत ही अच्छा काम किया है; किन्तु यदि बातचीत लम्बी होती है तो जनरल स्मट्सकी दक्षिण आफ्रिकाकी वापसीको देखते हुए इस समय प्रश्न यह उठता है कि श्री हाजी हबीब और मैं यहाँ ठहरें या अब हमारे लिए उपयुक्त स्थान दक्षिण आफ्रिका है और आवश्यकता हो तो ट्रान्सवालकी जेल।

जहाँतक नेटालके शिष्टमण्डलका सम्बन्ध है, श्री अब्दुल कादिर और उनके मित्र लोग आकाश-पाताल एक कर रहे हैं। वे विवरणको सब जगह भेज रहे हैं। वे लॉर्ड क्रू से मिल चुके हैं और इस सप्ताह लॉर्ड मॉर्ले और कर्नल सीलीसे मिल रहे हैं। आगाखाँसे भी, जो पेरिसमें अपना इलाज करा रहे हैं, उनका पत्र-व्यवहार चल रहा है। वे सर मंचरजीसे भी लगातार सम्पर्क बनाये हुए हैं। उन्होंने भारतीय जनताके नाम जो पत्र लिखा है उसकी नकलसे प्रकट होता है कि वे अपनी शक्ति अब किस उपायपर केन्द्रित कर रहे हैं। उन्होंने आपको विवरण भेजा है। औपचारिक रूपसे वाइसरॉयको भी एक पत्र भेजा गया है, जिसमें उनसे अनुरोध किया गया है कि यदि राहत न मिले तो वे नेटालमें भारतीयोंका प्रवास स्थगित करनेका उपाय अपनायें। वे खुद उपस्थित होकर आपके प्रति अपना आदरभाव प्रकट करनेके लिए अत्यन्त उत्सुक हैं, विशेषत: इसलिए कि उनको आपसे मिलने और आपकी सलाहपर चलनेकी खास हिदायत दी गई है। इसलिए यदि मुझे यह अन्दाज दे दें कि आप कबतक लौटनेवाले हैं तो मैं आपका कृतज्ञ हूँगा।

आशा करता हूँ कि आपका जो इलाज चल रहा है, उसमें कोई और रुकावट न आई होगी और आप पूरी तरह तन्दुरुस्त होकर लौटेंगे। मैं यह जिक्र भी कर दूँ कि कल बम्बईमें ट्रान्सवालके कानूनके विरुद्ध आपत्ति प्रकट करनेके लिए एक सार्वजनिक सभा की जायेगी।

हृदयसे आपका,

न्यायमूर्ति अमीर अली, सी० आई० ई०
होटल श्वेजरहॉफ,
बलपेरा टॅरास्प,
[स्विट्ज़रलैंड]

टाइप की हुई अंग्रेजी दफ्तरी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०३५) से।

१. भारतीयोंका प्रश्न।

२३६. पत्र : स्वामी शंकरानन्दको

[लन्दन]
अगस्त ३०, १९०९

प्रिय स्वामीजी,

आपका पत्र मिला। पहले आपका डिपो रोडमें दिया गया "कर्ज़न वाइली"—सम्बन्धी भाषण पढ़ा था। शिक्षा-सम्बन्धी पत्र भी देखा। उक्त तीनों लेखोंको पढ़कर मुझे दुःख हुआ है। आपने मुझे जो पत्र लिखा है उससे आपके इस्लाम-सम्बन्धी विचार प्रकट होते हैं। दूसरे दोनों लेखोंसे इस्लाम धर्मके अनुयायियोंके प्रति आपका व्यवहार प्रकट होता है। आपके इस्लाम धर्म सम्बन्धी विचारोंके विषयमें मैं कुछ नहीं कहता। लेकिन यह मैं जानता हूँ कि इस्लाम धर्मपर आपका आक्षेप हिन्दू धर्मके रहस्यके विरुद्ध है। फिर, आक्षेप किया तो किया, मगर उसे करते हुए आपने नीतिके विरुद्ध अपनी सुविधाके विचारसे ऐसा व्यवहार किया; उससे और भी दुःख होता है। आपने हिन्दू धर्मका रक्षक अंग्रेजोंको माना है; यह तो आपने अपनी अति दीनता प्रकट की है। यदि मैं स्वयं अपने धर्मकी रक्षाके योग्य न होऊँ तो दूसरे धर्मका अनुयायी उसकी रक्षा कैसे करेगा? आपके शिक्षा-सम्बन्धी विचारोंको मैं हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच सिर्फ विरोध पैदा करनेवाला मानता हूँ। अगर हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच इतना अन्तर रखनेकी आवश्यकता हो तब तो भारत पराधीन रहनेका ही पात्र है। इसमें विदेशियोंको दोषी भी कैसे बताया जा सकता है? ऐसा अन्तर रखनेसे तो हिन्दू धर्मका लोप ही हो जायेगा। सौभाग्यसे हिन्दू धर्मकी स्थिति अचल है। मेरी अविचल श्रद्धा है कि जिस धर्मकी रक्षा हजारों वर्षसे होती आ रही है उसका लोप हमारे धर्मगुरुओंके हाथों भी नहीं होगा। आपको क्या लिखूँ? आपके ज्ञानके प्रति मेरा आदरभाव है; लेकिन आपके व्यवहारसे मुझे दुःख हुआ है।

[गुजरातीसे]

'गांधीजीना पत्रो', संख्या १४; सम्पादक डाह्याभाई पटेल, प्रकाशक : सेवक कार्यालय, अहमदाबाद और 'गांधीजीनी साधना', लेखक : रावजीभाई पटेल, पृष्ठ १७६–७७।

२३७. पत्र : मणिलाल गांधीको

[लन्दन
अगस्तका अन्त] १९०९

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

तुम्हारा मन बिलकुल शान्त हो गया हो, तुम अपने काममें बिलकुल लग गये हो, और विद्याभ्यास निश्चिन्त होकर करते हो तो मैं अपने-आपको भाग्यशाली मानूंगा। तुम इस देशमें आनेकी उतावली करो, इसकी जरूरत नहीं जान पड़ती। यहांके लोग बहुत चपल दिखाई देते हैं। मिलेंगे तब ज्यादा बातें होंगी।

तुम बालकोंको पढ़ानेका काम करते हो, यह सराहनीय है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ८६) से।
सौजन्य : सुशीलाबेन गांधी।

२३८. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
सितम्बर १, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं आपके गत मासकी ३१ तारीखके पत्रके[1] लिए आपका अत्यन्त आभारी हूँ।

यदि जनरल स्मट्सका निर्णय[2] अन्तिम हो तो यह दुर्भाग्यपूर्ण है। लेकिन मुझे भय है कि "अधिकार"के प्रश्नके सम्बन्धमें मैंने जो रुख ग्रहण किया है उससे पीछे हटना मेरे लिए सम्भव न होगा। मेरी सम्मतिमें, यदि यह "अधिकार" स्वीकार नहीं किया जाता तो एक सीमित संख्यामें शिक्षित भारतीय प्रवासियोंका निवास स्थायी बना देनेसे कोई लाभ न होगा। यदि केवल सैद्धान्तिक "अधिकार" भी अक्षुण्ण रहे तो किसी भारतीयको ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेकी आवश्यकता नहीं है। और छः की संख्याके निर्धारणका कारण भी श्री कार्टराइटकी यह चिन्ता थी कि मैं भारतीय समाजकी इस घोषणाका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण दूं, कि शिक्षित भारतीयोंके दर्जेके प्रश्नके पीछे ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंको भर देनेका कोई इरादा नहीं है। इसलिए आप देखेंगे कि जनरल स्मट्सके प्रस्तावसे भारतीयोंकी आवश्यकता तनिक भी पूरी नहीं होती। इसके विपरीत उससे भारतीयोंका और भी गम्भीर

१ और २. देखिए परिशिष्ट २२।

जातीय अपमान होता है। यदि हम उसे स्वीकार कर लेंगे तो उसका अर्थ केवल इतना ही होगा कि आखिर हम सिद्धान्तके लिए उतना नहीं लड़ रहे थे, जितना अपने निजी स्वार्थके लिए कुछ शिक्षित भारतीयोंको ट्रान्सवालमें लानेकी माँगकी पूर्तिके लिए।

आपने आजकी तारीखके 'टाइम्स' में बम्बईकी सार्वजनिक सभाको रद करनेके सम्बन्धमें[1] तार पढ़ा होगा। यह सभा कुछ प्रभावशाली क्षेत्रोंकी माँगपर शेरिफने बुलाई थी। मुझे बहुत अधिक भय है कि सरकारकी कार्रवाई. . .[2] ट्रान्सवालमें जो स्थिति ग्रहण की है उसके समर्थनमें. . .[3]।

आपका, आदि,

[पुनश्च :]

श्री हाजी हबीब और मैं गम्भीरतासे विचार कर रहे हैं कि क्या हमारे लिए यह ठीक न होगा कि हम यहाँ काम खत्म करनेके बाद भारत जायें और वहाँ जनताको और भी अधिक सहानुभूति प्रकट करनेके लिए प्रेरित करें। किन्तु, लॉर्ड क्रू से जिस भेंटकी आशा है उसके हो जानेके बाद हम इस सम्बन्धमें आपसे सलाह करेंगे।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०३७) से।

२३९. पत्र : मणिलाल गांधीको

लन्दन,
सितम्बर १, १९०९

चि० मणिलाल,

तुम्हारे पत्र नियमित रूपसे मिलते हैं। श्रीमती फ्रीथने[4] मुझे इस सप्ताह फिर अपने घर खानेके लिए बुलाया था। वहाँ उन्होंने तुम सबके बारेमें पूछा। उन्होंने तुम सबका और फीनिक्सके घरों आदिका चित्र भी माँगा है। इनमें से जो चित्र हों, उन्हें भेज देना। मैंने बा को भी पत्र[5] लिखा है। श्रीमती फ्रीथ बड़ी भली महिला हैं। मुझपर बहुत ममता रखती हैं।

समझौतेकी अब कम सम्भावना है। ऐसा होगा तो मेरे लड़े बिना काम नहीं चलेगा। तुम सबकी सहायता मुझे चाहिए। और वह सहायता यह है कि तुम सब हिम्मत रखकर जो फर्ज अदा करना है उसे करते जाओ।

१. बम्बई सरकारके विचारमें साउथ आफ्रिका यूनियन बिल पास होनेके बाद शेरिफके लिए शेरिफकी हैसियतसे इस सभाको बुलाना अवांछनीय था।

२. यहाँ मूल कट-फट गया है और कुछ शब्द नहीं हैं।

३. यहाँ एक पूरी पंक्ति कटी है।

४. *गांधीजीका इनसे परिचय शायद तभीसे था जब वे इंग्लैंडमें पढ़ते थे। देखिए खण्ड ६, पृष्ठ १७०।*

५. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

तुम अपने औजार साफ रखते होगे। पाखानेमें हमेशा खूब मिट्टी डाली जाती होगी। आस-पासकी सब जगह साफ-सुथरी रखनेकी आदत डालना जरूरी है। श्री कैलेनबैकने लिखा है कि वे इस बार हमारे यहाँ रहे थे। उनकी खूब सेवा की गई होगी। उनके लिए नहाने और पाखानेकी क्या व्यवस्था की थी, लिखना। यह तो तुम भी महसूस करते होगे कि श्री किचिनके पाखानेको हमेशा तैयार रखना चाहिए। तुम घरकी सफाईके निरीक्षक (सेनिटरी इन्स्पेक्टर) हो, इसलिए यह सब तुमको लिख रहा हूँ।

तुम क्या-क्या पढ़ चुके हो, यह तुमने मुझे नहीं लिखा है।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

यह पत्र बा को पढ़ाना।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें लिखित मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ८७) से।
सौजन्य: सुशीलाबेन गांधी।

२४०. तार: एच० एस० एल० पोलकको[1]

लन्दन,
सितम्बर २, १९०९

ऐसा लगता है, स्मट्स सीमित संख्यामें स्थायी अनुमतिपत्र दे देंगे, किन्तु अधिकार-रूपमें नहीं। बातचीत जारी। सार्वजनिक सभा शेरिफको उसमें घसीटे बिना की जानी चाहिए। मेरे तार प्रकाशनार्थ नहीं।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०३९) से।

१. मसविदेपर पोलकका नाम नहीं दिया गया है, लेकिन तारकी बातोंसे साफ है कि यह उनको भेजा गया था।

२४१. पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन],
सितम्बर २, १९०९

महोदय,

मैं अर्ल ऑफ क्रूका ध्यान चीनी संघ (चाइनीज असोसिएशन) से प्राप्त निम्न तारकी ओर आकर्षित करता हूँ:

रायटरकी स्मट्ससे भेंटकी रिपोर्टमें एशियाई प्रश्नके तय होनेका संकेत। ऐसा है तो चीनियोंकी गिरफ्तारियाँ क्यों जारी? सप्ताहमें सत्ताईस।

ऊपरके तारमें बताई हुई रायटरकी खबरकी नकल मुझे नहीं मिली है और मैं नहीं जानता कि ट्रान्सवालके कठिन एशियाई प्रश्नपर समझौता होनेका जो संकेत दिया गया है उसमें सचाई क्या है। श्री हाजी हबीब और मैं इस मामलेमें लॉर्ड महोदयके पत्रकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

मैं यह भी कह दूं कि भारतीयोंकी भी गिरफ्तारियाँ जारी हैं।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१४२ से; टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०४१) से भी।

२४२. पत्र: लॉर्ड ऐम्टहिलको

[लन्दन]
सितम्बर २, १९०९

लॉर्ड महोदय,

चीनी संघसे नीचे दिया गया तार प्राप्त हुआ है:

रायटरकी स्मट्ससे भेंटकी रिपोर्टमें एशियाई प्रश्नके तय होनेका संकेत। ऐसा है तो चीनियोंकी गिरफ्तारियाँ क्यों जारी? सप्ताहमें सत्ताईस।

मैं इतना और कहना चाहता हूँ कि इसी तरह बहुत-से भारतीय भी गिरफ्तार किये गये हैं। ट्रान्सवालमें भारतीयों और चीनियोंके विरुद्ध किये गये इस जिहादका व्यक्तिगत रूपसे मैं स्वागत करता हूँ। इससे उनके साहसकी कसौटी होती है, और सरकार तथा अनाक्रामक प्रतिरोधी दोनोंको अनाक्रामक प्रतिरोधकी शक्तिको मापनेका अवसर मिलता है। मैंने जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीय संघको अभीतक यह खबर नहीं दी है कि रायटरका विवरण भ्रामक हो सकता है, और सम्भव है, अन्तमें कोई समझौता ही न हो।

श्रीमान्‌का खयाल था कि शायद लॉर्ड क्रू कुछ लिखेंगे; परन्तु उन्होंने अभीतक कुछ नहीं लिखा। मैं उनका ध्यान चीनियोंके तारकी ओर आकृष्ट कर रहा हूँ।[1]

शायद मुझे इस बातका भी उल्लेख कर देना चाहिए कि मैंने कल आपको बम्बई सरकारकी जिस कार्रवाईके बारेमें लिखा था[2] उसपर संसद-सदस्योंको कुछ प्रश्न पूछनेका सुझाव दिया गया है। आशा है, आपको भी यह बात पसन्द आयेगी।[3]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०४४) से।

२४३. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
सितम्बर २, १९०९

प्रिय हेनरी,

मैं आपको इस सप्ताह सम्भवतः दो पत्र लिखूंगा। ये पत्र फीनिक्सके सम्बन्धमें हैं।

आपको पहले ही बता चुका हूँ कि डॉक्टर मेहतासे मेरी काफी बातें हुई थीं और उन्होंने स्कूलके लिए १५ पौंड दिये हैं। मैंने इन १५ पौंडमें से पुस्तकालयके लिए कुछ पुस्तकें खरीदी हैं; सूची आपके पास है ही। कुछ अन्य पुस्तकें भी खरीदी गई हैं। लगभग १२ पौंड फिर भी बचे हैं। कुछ कामकी किताबें वहाँ भी हो सकती हैं, जो बाकी रुपयेसे खरीदी जा सकती हैं। आप छगनलाल और दूसरोंसे सलाह कर सकते हैं।

परन्तु डॉक्टर मेहताने और भी अधिक देनेका वचन दिया है। उनका विचार एक छात्रवृत्ति देनेका है जिससे एक भारतीय लड़केका फीनिक्समें शिक्षा और भोजनका व्यय पूरा हो जाये। मैंने उनको बता दिया है कि व्यय प्रतिमास २० शिलिंग और २५ शिलिंगके बीच कुछ भी हो सकता है। उन्होंने एक फीनिक्सवासीको इंग्लैंडमें पढ़नेका व्यय भी मुझे दिया है। यह बात उनके मनमें उनकी इस इच्छासे पैदा हुई है कि वे मेरे एक पुत्रकी पढ़ाईका जिम्मा ले लें। मैंने उनको बताया कि मैं ऐसी कोई बात स्वीकार नहीं कर सकता

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. इस सम्बन्धमें एक प्रश्न जेम्स ओ'ग्रैडीने ७ सितम्बरको लोकसभामें पूछा था। सर हेनरीने इसी विषयमें ९ सितम्बरको लोकसभामें दूसरा प्रश्न पूछा। दोनों अवसरोंपर विदेश-उपमन्त्रीने उत्तर दिया कि साम्राज्य-सरकारको इस मामलेमें कोई अधिकृत सूचना नहीं मिली है।

३. दूसरे दिन इस पत्रकी पहुँच देते हुए लॉर्ड ऐम्टहिल्ने लिखा था: "आपके इंग्लैंड आनेपर मैंने जो विचार व्यक्त किया था, आपका विचार उससे मेल खाता हुआ है। मैंने कहा था कि ट्रान्सवालमें प्रतिरोध और दमनके जारी रहनेसे हमारी बातचीतमें मदद मिलती है। मेरा खयाल है कि यदि ब्रिटिश भारतीय संघको यह सूचित कर दें तो अच्छा ही कि अभी आपको किसी तरहके समझौतेके बारेमें कुछ नहीं मालूम और आप लॉर्ड क्रू से एक दूसरी भेंट देनेका आग्रह कर रहे हैं। मैंने कल रात आपको एक पत्रमें लिखा है कि अगर अबतक आपको लॉर्ड क्रू से उत्तर नहीं मिला हो तो आप ऐसा ही करें। कृपया मुझे बतायें कि लोकसभामें इस विषय-पर पूछे गये प्रश्नोंके क्या उत्तर दिये गये हैं। आप जानते ही हैं कि अखबार इन्हें नहीं छापते।"

किन्तु मुझे इस रुपयेको फीनिक्सके सर्वोत्तम व्यक्तिके लिए काममें लानेके उद्देश्यसे स्वीकार करनेमें प्रसन्नता होगी, और यदि मैंने समझा कि मणिलाल इसके लिए सबसे अधिक उपयुक्त है तो मैं उसको भी भेजनेमें हिचकिचाऊँगा नहीं। अब इस सबसे मैं यह सोचता हूँ कि आप भी वहाँ कोई ऐसा काम कर सकते हैं। श्री पेटिट पैसेवाले आदमी हैं। यदि आप यह विश्वास दिला सकें कि हमारा उद्देश्य फीनिक्सको एक ऐसी जगह बना देना है जिसमें ठीक किस्मके आदमी और ठीक किस्मके भारतीय तैयार किये जा सकें तो दूसरे लोग भी मिल जायेंगे। इनमें से कुछ लोगोंको आप ऐसी छात्रवृत्तियाँ देनेके लिए राजी कर सकते हैं, जो या तो सामान्यतः उपयोगमें लाई जायें या केवल भारतीयोंके लिए सीमित कर दी जायें। हमें उनको दोनोंमें से किसी भी रूपमें स्वीकार कर लेना चाहिए। वे हमें इस निर्देशके साथ कि अमुक रकम पुस्तकें और शिक्षा-सम्बन्धी अन्य सामान खरीदनेके लिए है, दान भी दे सकते हैं। आपको मुख्यतः उन्हें यह विश्वास दिलाना है कि फीनिक्समें जो भी शक्ति लगाई जाती है उसका अर्थ भारतसे उतना ले लेना नहीं, बल्कि भारतको उतना देना होता है। और, कुछ बातोंमें फीनिक्स प्रयोग करने और समुचित प्रशिक्षण प्राप्त करनेके लिए अधिक उपयुक्त स्थान है। भारतमें अवांछनीय प्रतिबन्ध हो सकते हैं, परन्तु फीनिक्समें ऐसे कोई अवांछनीय प्रतिबन्ध नहीं हैं। उदाहरणके लिए, भारतीय महिलाएँ इतने साहसके साथ कदापि बाहर नहीं आ सकती थीं, जितने साहससे वे फीनिक्समें बाहर आ रही हैं। अन्य सामाजिक प्रथाएँ उन्हें सिर ही न उठाने देतीं।

मैंने आपको इतनी पर्याप्त सामग्री दे दी है कि आप इस विचारके आधारपर आगे सोच सकते हैं और जो आवश्यक समझें वह कर सकते हैं। आप आदमजी पीरभाई या उनके पुत्रसे सामान्य भारतीय लड़कोंके या मुसलमान लड़कोंके प्रशिक्षणके लिए छात्रवृत्ति प्राप्त कर सकते हैं। आप उनसे पुरस्कार भी दिला सकते हैं। भारतकी विभिन्न शिक्षण-संस्थाओंके विवरण पत्र (प्रॉस्पेक्टस) भी देखनेके लिए ले लेना अच्छा होगा। श्री उमरके पास 'सेंच्युरी डिक्शनरी' और अन्यान्य महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हैं, जिनका उनके लिए तनिक भी उपयोग नहीं है। मैंने अपने पत्रमें,[1] जिसे मैं इसके साथ भेज रहा हूँ, उनसे यह डिक्शनरी और जो अन्य पुस्तकें वे दे सकें, देनेको कहा था। इस सम्बन्धमें आप उनसे बात कर लें।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०४२) से।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

२४४. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
सितम्बर ३, १९०९

प्रिय हेनरी,

आपकी चिट्ठी और कतरनें मिलीं। आप जो कार्य कर रहे हैं वह अत्यन्त प्रशंसनीय है। मुझे हर्ष है कि आपको सब ओरसे बहुत अच्छा सहयोग प्राप्त हो रहा है और श्री जहांगीर पेटिट आपके साथ इतना अच्छा व्यवहार कर रहे हैं।[1]

समाचारपत्रोंसे मालूम हुआ कि आपने उस तारको प्रकाशित कर दिया है जो मैंने अधिनियमको रद कर देनेके प्रस्तावके सम्बन्धमें आपको भेजा था।[2] मुझे आश्चर्य हुआ। मेरा विश्वास था, आप यह समझ जायेंगे कि यह बातचीत बिलकुल खानगी है, और इस जानकारीको प्रकाशित नहीं की जा सकती। लॉर्ड ऍम्टहिल इस मामलेमें बहुत सख्त रहे हैं। सौभाग्यसे इसका कोई दुष्परिणाम नहीं हुआ। फिर भी, सावधानीके लिए मैंने अपने पिछले तारमें[3] आपसे कहा है कि आप यहाँसे भेजे जानेवाले किसी भी तारको प्रकाशित न करें।

शेरिफकी सभाका स्थगित किया जाना एक लज्जाजनक बात है। इसके सम्बन्धमें 'टाइम्स' में एक तार छपा था। मेरा खयाल है, आप 'इंडिया' पढ़ते ही रहते हैं। आप देखेंगे कि यह तार उसमें उद्धृत किया गया है। सर हेनरी कॉटन और श्री ओ'ग्रेडी इस सम्बन्धमें प्रश्न पूछनेवाले हैं। प्रेसिडेंसी एसोसिएशन कांग्रेसकी ब्रिटिश समितिको इस बारेमें एक निजी तार भेज देता तो अच्छा होता। हमारे लिए कोई कारगर कदम उठाना जरा मुश्किल है। बम्बई सरकारके कार्यका विरोध पहले बम्बईको करना चाहिए, हमें नहीं। फिर भी जो-कुछ सम्भव था, वह किया गया है। अब मैं किसी भी समय इस सम्बन्धमें आपका तार पानेकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ कि शेरिफके सहयोगके बिना सार्वजनिक सभा किस तारीखको की जा रही है।

श्री हाजी हबीब चाहते हैं कि आप उनके भाई श्री हाजी मुहम्मदसे, जो इस समय पोरबन्दरमें हैं, अपने काममें सहयोग माँगें। उनका कहना है कि यदि आप उनसे आग्रह करेंगे तो वे सहर्ष आपका हाथ बँटायेंगे। कृपया उनसे पत्र-व्यवहार करें। श्री उमर उन्हें अच्छी तरह जानते हैं। मैं इस मामलेमें शायद तार भी दूं।

लॉर्ड ऍम्टहिलके साथ जो पत्र-व्यवहार हुआ है, उसकी प्रतिलिपिसे आप देखेंगे कि अब किसी स्वीकार करने योग्य समझौतेकी सम्भावना नहीं है। साउदैम्टनसे जहाजमें रवाना होनेसे पहले जनरल स्मट्सने रायटरके संवाददाताको जो वक्तव्य दिया था, उसकी कतरन

१. अपने अगस्त १४ के पत्रमें पोलकने उन सब मुलाकातोंका तारीखवार ब्योरा दिया था जो बम्बईके प्रमुख व्यक्तियोंसे उन्होंने की थीं तथा उनकी सहानुभूति प्राप्त की थी।

२. देखिए "तार: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३५०।

३. देखिए "तार: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३७९।

मैं आपको भेज रहा हूँ। लेकिन अब ऐसा जान पड़ता है कि वे इतना ही करना चाहते हैं कि अधिनियमको वापस ले लें और शिक्षित भारतीयोंको एक सीमित संख्यामें निवासके स्थायी प्रमाणपत्र दे दें। इस तरह वे प्रवेशके "अधिकार"को स्वीकार करना नहीं चाहते। यदि वे ऐसा करें और इसकी सार्वजनिक रूपसे घोषणा कर दें तो मुझे हर्ष ही होगा। विवादका क्षेत्र फिर संकुचित हो जायेगा और एकमात्र प्रश्न शिक्षित भारतीयोंके दर्जे और भारतके आत्मसम्मानका रह जायेगा। तव हम इंग्लैंड और भारतके सामने एक स्पष्ट प्रस्ताव रखेंगे और ट्रान्सवालके भारतीयोंसे भी कहेंगे कि जवतक यह मुद्दा तय न हो जाये तवतक वे संघर्ष जारी रखें। आप लॉर्ड ऍम्टहिलको लिखे मेरे पत्रसे देखेंगे कि इस सम्वन्धमें मेरा दृष्टिकोण क्या है। मुझे तो ऐसा लगता है कि दक्षिण आफ्रिका लौटनेसे पहले हम भारत आ जायें और फिर दुवारा लंदन होकर लौटें। मैं जानता हूँ कि यदि जनरल स्मट्स लॉर्ड ऍम्टहिलके पत्रके अनुसार सार्वजनिक घोषणा करेंगे तो यहाँका संघर्ष अत्यन्त कठिन हो जायेगा। परन्तु इससे मैं निराश नहीं होता, यद्यपि मुझे इसमें वड़ा सन्देह है कि जवतक और अधिक कष्ट न उठाया जाये तवतक सार्वजनिक सभाएँ हो सकें तो उनसे और संसद-सदस्योंका समर्थन माँगनेसे कोई लाभ होगा। किसी ऐसे आन्दोलनको चलानेकी अपेक्षा, जो व्यर्थ-सा सिद्ध हो, मैं जेलमें रहना अधिक पसन्द करता हूँ। इससे वचनेकी इच्छाके पीछे थोड़ा आलस्य भी हो सकता है; परन्तु मुझे लगता है कि ऐसा है नहीं। जहाँ आवश्यक हो, वहाँ मुझे लोगोंसे मिलना पड़े और सभाओंमें भाषण देने पड़ें तो मैं इससे वचना नहीं चाहता। किन्तु जब-कभी मुझे शान्तिका एक क्षण मिलता है, मैं लगातार अपने मनमें सोचता रहता हूँ कि क्या लोगोंको समझाने-वुझानेके लिए मेरा यहीं वना रहना ठीक होगा।

जहाँ-कहीं आपकी सभा हो, मुझे आशा है कि आप उसमें श्री आर्म्सट्रांग और अन्य आंग्ल-भारतीयोंको वुलानेमें सफल होंगे। मुझे आशा है, आप गुजराती और अंग्रेजीकी कतरनें जोहानिसवर्ग भी भेज रहे होंगे। वहाँके लोगोंको निराशासे वचानेके उद्देश्यसे, दुहरी सावधानीके रूपमें, मैं आपसे प्राप्त कतरनें उन्हें भेजता जाता हूँ।

मैं आपका तारोंका उत्तर तुरन्त न दूँ तो आप इसका कोई खयाल न करें। आप मुझसे जितनी जल्दी उत्तरकी आशा करते हैं उतनी जल्दी उत्तर न मिले तो कृपया समझ लें कि मेरे उत्तर न देनेका पर्याप्त कारण है। उदाहरणके लिए, आपने मुझसे पूछा है कि क्या कोई आशा है। मैं इसका उत्तर देनेमें विलम्ब कर रहा हूँ, क्योंकि मैं लॉर्ड क्रू के वुलावेकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। तव मैं आपको कुछ निश्चित रूपसे वता सकूँगा कि कोई आशा है या नहीं। इस समय तो मुझे कहना चाहिए कि कोई आशा नहीं है।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई अंग्रेजी दफ्तरी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०४९) से।

२४५. शिष्टमण्डलकी यात्रा [–१०]

[सितम्बर ३, १९०९ के बाद]

अभी समझौतेकी खबर नहीं दे सकता, यह लिखते-लिखते मैं थक गया हूँ। लेकिन फिर भी यही लिखना पड़ता है। मैं यह भी जानता हूँ कि जो पूरे सत्याग्रही हैं वे तो ऐसी खबर पढ़कर उकतायेंगे नहीं, क्योंकि समझौतेके होने-न-होनेसे उनका कोई सम्बन्ध नहीं रहा है। वे तो विजयी हैं ही।

फिर भी इस बार तो कुछ ज्यादा खबरें दे सकता हूँ। ऐसी खबर मिली है कि जनरल स्मट्स कानूनको रद कर देंगे। किन्तु जहाँतक शिक्षित लोगोंका सवाल है स्मट्स उन्हें रियायतके तौरपर एक निश्चित संख्यामें स्थायी निवासके परवाने देंगे। उनको वही अधिकार मिलेंगे जो पंजीयन करा लेनेवाले (रजिस्टर्ड) भारतीयोंको। लेकिन मुझे इसमें कोई लाभ दिखाई नहीं देता। "मर गया" के बजाय "परलोक गया" कहा जायेगा, किन्तु मरा तो सही। हमें जिन्दोंसे टक्कर लेनी है। इसका अर्थ यह है कि हमें अभी लड़ना ही होगा। फिर भी यह खबर निश्चित नहीं है। ठीक क्या है यह थोड़े दिनोंमें पता चल जायेगा। मुझे ऐसा नहीं लगता कि इस बारके समझौतेमें कोई बाकायदा बातचीत होगी। जो-कुछ हमने माँगा है वह समय पूरा होनेपर मिलकर रहेगा और तभी हम अपने हथियार दीवारपर टाँग सकेंगे।

अब यदि ऊपर लिखे अनुसार कानून रद हो जाये और छः भारतीयोंको स्थायी निवासके परवाने मिल जायें तो लड़ाई ज्यादा जमेगी। उसका सच्चा स्वरूप ज्यादा समझमें आयेगा। तब तो सभी समझ जायेंगे कि हमारी लड़ाई [शिक्षित भारतीयोंकी] किसी खास संख्याके लिए नहीं है, बल्कि भारतकी प्रतिष्ठाके लिए है। कानूनके अनुसार हमें यूरोपीयोंके बराबर अधिकार हो, फिर भले ही व्यवहारमें यहाँ एक भी शिक्षित भारतीय न आये। हम यह सहन कर सकते हैं। किन्तु यदि कानूनमें [हमारी जातिपर] कालिख लगा दी जाये और बादमें भले ही पचास भारतीयोंको अनुमतिपत्र (परमिट) दे दिये जायें तो वे हमारे कामके नहीं हैं। लड़ाई शिक्षितोंकी या बहुशिक्षितोंकी नहीं, बल्कि भारतकी प्रतिष्ठाकी, हमारे सम्मानकी और हमारे प्रतिज्ञा-पालनकी है। उसके लिए जितना दुःख उठायें उतना सुख है। इस लड़ाईमें भाग लेनेवाला सच्चा सत्याग्रही — आत्मबली — है। मैं ऐसी सुन्दर और भव्य लड़ाईमें प्रत्येक भारतीयको भाग लेते देखना चाहता हूँ।

पाठक देखते होंगे कि इस शिष्टमण्डलका सारा काम पर्देके पीछे हुआ है। फिर भी उनको यह समझ लेना चाहिए कि जो-कुछ करना उचित है उसमें कोई कमी नहीं रहती। ब्रिटिश सरकारसे काम कराना हमारा लक्ष्य है। जबतक यह काम हो रहा है तबतक यहाँ (इंग्लैंडमें) करनेके लिए दूसरा काम नहीं है। दूसरा कोई काम करने लगेंगे तो समूची लड़ाईको धक्का पहुँचेगा।

जब ब्रिटिश सरकार इनकार कर देगी तब हमें सार्वजनिक कार्रवाई करनी पड़ेगी। बातचीतमें आठ हफ्ते निकल गये हैं। अब भी कुछ वक्त लगेगा। उसके बाद जरूरत पड़नेपर

सार्वजनिक कार्रवाई की जायेगी। इसमें वक्त लगता है। जितना खयाल था उससे ज्यादा वक्त लग जायेगा, लेकिन इससे छुटकारा भी दिखाई नहीं देता। इसके अलावा जब ब्रिटिश सरकार हमको सहायता देनेका प्रयत्न करनेके बाद अपने हाथ समेट लेगी, तब यहाँका काम बहुत मुश्किल हो जायेगा। लड़ाई उग्र, तेज और कठिन हो जायेगी। उसे सहन कर लेनेपर ही हम उसे, जिसे श्री दाउद मुहम्मदने हाथीका नाम दिया है, मार सकेंगे।

मैं ज्यों-ज्यों देखता हूँ त्यों-त्यों मुझे लगता है कि यदि शिष्टमण्डल या प्रार्थनापत्र आदिके पीछे सच्चा बल न हो तो वे सब निकम्मे हैं। लोगोंसे भेंट करनेकी अपेक्षा जेलमें रहना ज्यादा अच्छा है, यह अनुभव हो रहा है। मीराबाईने गाया है:

> मिश्री और गन्नेका स्वाद छोड़कर तू कड़वा नीम मत घोल,
> सूरज और चन्द्रमाका प्रकाश छोड़कर तू जुगनूसे प्रीति मत जोड़।[1]

यह भक्त नारी कह गई है कि प्रभु-भक्तिमें — खुदाकी वन्दगीमें — जिसका मन लीन हो गया है उसको दूसरी चीजें नीमके रसकी तरह कड़वी और जुगनूके प्रकाशकी तरह निस्तेज लगती हैं। उसी प्रकार जिसने सत्याग्रह — आत्मबल — का प्रयोग किया है और जिसपर उसका पक्का रंग चढ़ा है, उसको शिष्टमण्डल और प्रार्थनापत्र नीरस लगते हैं। इस स्थितिमें पाठकोंको पूछना ही चाहिए कि तब आप जेलका सुख छोड़कर शिष्टमण्डलमें क्यों गये? मैं पहले ही अपने पत्रमें[2] कह चुका हूँ कि शिष्टमण्डल भारतीय समाजकी कमजोरीका सूचक है। कमजोर लोगोंकी खातिर कुछ हद तक इसका आना कर्तव्य हो गया था। किन्तु मैं अनुभवके आधारपर कहता हूँ कि भारतीय समाज मेरा और दूसरे बहुतसे भारतीयोंका सदुपयोग, हमको जेलमें रखकर कर सकता है। सत्याग्रही जो जेलरूपी आवेदनपत्र देते हैं उससे ज्यादा चतुराईसे लिखा आवेदनपत्र लोग नहीं दे सकते जो शिष्टमण्डल ले जाते हैं। उस प्रकारके कार्योंपर से अब लोगोंका विश्वास उठ गया है। मैं तो निर्भय होकर कह सकता हूँ कि यदि यहाँ हमारी कोई सुनवाई होती है तो इसी कारण कि हम सत्याग्रही हैं और हमने कष्ट-सहनको अपना असली आधार माना है।

मेरे विचार तो ऐसे हैं; फिर भी मेरे मनमें यह खयाल आता है कि यदि समझौता न हो तो हम भारत जायें और वहाँ जो-कुछ करना उचित है वह करें; फिर इंग्लैंड लौट आयें और यहाँ जो-कुछ विशेष करने योग्य हो उसको निबटाकर ट्रान्सवाल लौट जायें। इस वक्त तो ये केवल शेखचिल्लीके-से मन्सूबे हैं। अभी तो यही नहीं कहा जा सकता कि समझौता होगा या नहीं। फिर भी ये विचार समाजको मालूम हो जायें तो अच्छा है, ऐसा खयाल करके इनको यहाँ दे रहा हूँ।

ऐसा दिखाई देता है कि श्री पोलक बम्बईमें बहुत बड़ा काम कर रहे हैं। वे बहुतसे लोगोंसे मिले हैं, और सभीने उनको सहायताका वचन दिया है। वे बम्बईके प्रेसीडेन्सी असोसिएशन और अंजुमन इस्लामकी बैठकोंमें हो आये हैं। बम्बईके लखपति श्री जहाँगीर पेटिटने

१. मूल पंक्तियाँ इस प्रकार हैं:
> शाकर सेलडीनो स्वाद तजीने, कडवो लीम्बड़ो घोळ मां रे।
> सूरज चन्दानुं तेज तजीने, आगीया संगाते प्रीत जोड मां रे।

२. देखिए "शिष्टमण्डलकी यात्रा [१]", पृष्ठ २७०।

उनको अपने यहाँ ठहराया है। वे उनकी खूब खातिर कर रहे हैं। और उन्होंने अपने खर्चसे पुस्तिका छपानेका वचन दिया है। इसी प्रकार अंजुमन इस्लामने श्री पोलकका भाषण अंग्रेजी और उर्दूमें छपाकर प्रचारित करनेका वचन दिया है।

एक तारसे मालूम हुआ है कि बम्बईके शेरिफने पहली तारीखको एक बड़ी सभा बुलाई थी; किन्तु बम्बई सरकारने शेरिफको वह सभा न करनेकी अन्यायपूर्ण आज्ञा दी। अब फिर तार आया है कि बम्बई सरकारने अपनी भूलपर खेद प्रकट करके सभा करनेकी स्वीकृति दे दी है। यह सभा ११ सितम्बरको होगी।[1] इस पत्रके छपने तक तो सभाकी खबर मिल भी जायेगी। इसलिए मुझे सूझता नहीं कि क्या लिखूँ। सभा न करनेका कारण सरकारने यह बताया था कि चूँकि दक्षिण आफ्रिकी संघ (यूनियन) तो बन चुका है, इसलिए शेरिफ जैसे सरकारी अधिकारीको [विरोध व्यक्त करनेके लिए] सभा न बुलानी चाहिए। इसमें तो दूसरी भूल है। एक तो यह है कि संघके साथ ट्रान्सवालकी लड़ाईका कोई सम्बन्ध नहीं है। दूसरा यह है कि यदि शेरिफ सभा करे तो उससे सभामें सरकारका भाग लेना नहीं माना जायेगा। शेरिफ सभा बुलाता है तो केवल लोगोंकी मर्जीसे। वह उसमें भाग भी नहीं लेता।

स्मट्स साहब रवाना होनेसे पहले रायटरसे यह कहते गये कि भारतीयोंके लिए सन्तोषप्रद समझौता हो जायेगा। इसके साथ उन्होंने यह भी कहा कि बहुत-से भारतीय लड़ते-लड़ते पस्तहिम्मत हो चुके हैं और संघर्षमें सिर्फ कुछ ही झगड़ालू लोग रह गये हैं। इस खबरसे मालूम होता है कि भारतीयोंके प्रश्नपर लॉर्ड क्रू से उनकी खूब बातचीत हुई है। किन्तु उन महानुभावका इरादा, जैसा मैं ऊपर बता चुका हूँ, हमारे साथ अधूरा समझौता करनेका है।

मैं तो भारतीय समाजका ध्यान उनके एक ही वाक्यकी ओर आकर्षित करता हूँ। वे कहते हैं कि "बहुत-से भारतीय तो [संघर्षसे] थक गये हैं।" इसमें सब आ जाता है। इससे जाना जा सकता है कि इतनी देर क्यों लगी और क्यों लग रही है। समझौता होना या न होना हमारी शक्तिपर निर्भर है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २-१०-१९०९

१. यह सभा १४ सितम्बरको हुई थी।

२४६. लन्दन

[सितम्बर ४, १९०९ से पूर्व]

नेटालका शिष्टमण्डल

शिष्टमण्डलने कर्नल सीली और लॉर्ड मॉर्लेसे भेंट की है। दोनों अधिकारियोंने बहुत सहानुभूति प्रकट की है। किन्तु कर्नल सीलीने कहा कि कुछ होना सम्भव नहीं है। लॉर्ड मॉर्लेने कहा कि यह उपनिवेश कार्यालयके हाथमें है, उनके अख्तियारकी बात नहीं है। फिर भी वे जितनी हो सकती है उतनी सहायता करते रहे हैं और करते रहेंगे। उन्होंने शिष्टमण्डलको याद दिलाया कि वे स्वशासित उपनिवेशके शासन-कार्यमें हस्तक्षेप नहीं कर सकते। शिष्ट-मण्डलके अनुरोधपर कर्नल सीलीने लिखित उत्तर देना स्वीकार किया है। शिष्टमण्डलके आवेदन-पत्रकी नकलें अभी भेजी जा रही हैं। सर मंचरजी भावनगरीसे भेंट होती रहती है और उनकी सलाह भी मिलती रहती है।

मन्त्री रवाना

श्री मेरीमैन, जनरल स्मट्स, श्री मूअर आदि दक्षिण आफ्रिकी मन्त्री गत सप्ताह यहाँसे रवाना हो चुके हैं।

डॉक्टर अब्दुर्रहमान

डॉक्टर अब्दुर्रहमान और उनके साथी उसी डाक-जहाजसे रवाना होंगे जिससे यह पत्र जायेगा। ये लोग अभी लड़ाई जारी ही रखेंगे। उन्होंने अभी यह नहीं बताया है कि उनकी लड़ाईका स्वरूप सत्याग्रह होगा या कोई दूसरा।

श्री मॉरिस

श्री मॉरिस, जो केपटाउनके उपनिवेश कार्यालयमें नौकर थे, कुछ काले लोगों द्वारा भेज गये हैं, यहाँ आये हैं।

सभ्यताका उन्माद

वायुमें विमान चलानेवाले श्री ब्लेरियट[1] और उत्तरी ध्रुवतक पहुँचनेका दावा करने-वाले डॉ० कुककी चर्चामें लन्दन पागल हो उठा है। अखबारोंमें उनके कामोंका ब्योरा खूब छप रहा है। देखते हैं, लोग इसमें हजारों पौंड फेंक देते हैं। इसमें उन्होंने कौन-सा चमत्कारी काम कर लिया, यह मैं तो समझ नहीं सकता। वायुमें विमान चलनेसे मानव-जातिको क्या लाभ होना है यह तो कोई नहीं बताता। कोई नया ढोंग करता दिखाई देता है तो लोग उसके पीछे पागलकी तरह भागते हैं। मुझे तो ऐसा लगता है कि यदि बहुत-से विमान वायुमें फिरेंगे तो हमारा जीवन असह्य हो जायेगा। नीचे देखें तो रेलगाड़ियाँ

१. लुई ब्लेरियट (१८७२–१९३६) फ्रांसीसी उड़ाका; इंग्लिश चैनलको वायुमार्गसे पार करनेवाला पहला व्यक्ति।

दौड़ रही हैं, ऊपर टेलिग्राफके तार लटक रहे हैं, और रास्तोंमें गाड़ियोंकी आवाज कानोंको बहरा किये दे रही है। अब वायुमें विमान चलने लगेंगे तब तो लोगोंको मरा ही समझिए। मैं स्वयं इस देशको देखकर पाश्चात्य सभ्यतासे ऊब गया हूँ। सड़कोंपर जो लोग मिलते हैं वे आधे पागल जैसे दिखाई देते हैं। वे अपना दिन राग-रंगोंमें या रोटी कमानेमें बिताते हैं और उसके बाद रातको थकावटसे चूर होकर सो जाते हैं। मैं नहीं समझ सकता कि ऐसी हालतमें वे ईश्वरका भजन कब कर सकते हैं। डॉक्टर कुक उत्तरी ध्रुवपर हो भी आये हों तो इससे लाभ क्या हुआ? इससे लोगोंके कष्टोंमें रत्ती-भरकी कमी नहीं होगी। पाश्चात्य सभ्यता अभी पुरानी नहीं हुई है। इतने दिनोंमें ही उसकी हालत ऐसी दिखाई देने लगी है कि या तो सभ्यताके इन साधनोंको दूर कर देना चाहिए या लोग पतंगोंकी भाँति मर मिटेंगे। इस समय भी यह देखा जा सकता है कि आत्महत्याओंकी संख्या दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही है। लोगोंका किसी खास कामसे या पढ़नेके लिए इंग्लैंड आना कुछ कारणोंसे उचित है। किन्तु सामान्यतः मेरा निश्चित विचार है कि इस देशमें आना और रहना बिलकुल ठीक नहीं है। इस सम्बन्धमें अधिक विचार फिर करेंगे।

जोज़ेफ रायप्पन

मैं यह खबर दे चुका हूँ कि श्री जोज़ेफ रायप्पन यहाँसे शनिवारको रवाना हो गये हैं।[1] मुझे ऐसे लक्षण दिखाई देते हैं कि उनके सामने जेल जानेके सिवा कोई रास्ता नहीं है। मुझे आशा है कि वे जायेंगे।

[गुजरातीसे]
इंडियन ओपिनियन, २–१०–१९०९

२४७. पत्र : लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन]
सितम्बर ६, १९०९

महोदय,

लॉर्ड ऍम्टहिलने श्री हाजी हबीबको और मुझे सूचित किया है कि लॉर्ड क्रू शीघ्र ही हमें या तो खुद भेंटके लिए बुलायेंगे या किसी व्यक्तिको नियुक्त करेंगे जिससे हम मिल सकें और ट्रान्सवालके भारतीयोंके प्रश्नपर बातचीत कर सकें।[2]

मैं जानता हूँ कि लॉर्ड महोदय अनेक राजकीय कार्योंमें बहुत व्यस्त हैं। तथापि मैं आपको स्मरण दिलाना चाहूँगा कि श्री हाजी हबीब और मैं राजधानीमें आठ सप्ताहसे अधिक समयसे हैं, और जिन लोगोंने हमें यहाँ भेजा है वे हमारे कार्यका परिणाम जाननेके लिए हमपर भारी दबाव डाल रहे हैं। मुझे यह उल्लेख करनेकी आवश्यकता नहीं है कि हम जानबूझकर समस्त सार्वजनिक कार्रवाइयाँ करनेसे बचते रहे हैं, ताकि उस बातचीतको हानि न पहुँचे, जो लॉर्ड महोदय संघर्षको समाप्त करनेकी दृष्टिसे ट्रान्सवालके मन्त्रियोंके साथ कृपापूर्वक चला रहे हैं।

१. देखिए "लन्दन", पृष्ठ ३७२।
२. गांधीजीको लिखे गये लॉर्ड ऍम्टहिलके ५ सितम्बरके पत्रमें यह सूचना दी गई थी।

यदि आप इस पत्रको लॉर्ड महोदयके सामने उपस्थित करेंगे और हमें सूचित करेंगे कि हमारी उपस्थितिकी आवश्यकता कब पड़ेगी तो मैं और मेरे साथी कृतज्ञ होंगे।[1]

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स, २९१/१४२; तथा टाइपकी हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०५३) से भी।

२४८. पत्र: अमीर अलीको

[लन्दन]
सितम्बर ६, १९०९

आपने मेरे पत्रका[2] उत्तर तत्काल दिया, इसके लिए मैं आपका बहुत आभारी हूँ।

मुझे हर्ष है कि महाविभव (हिज हाईनेस) आगाखाँने श्री आँगलियाका पत्र आपको भेज दिया है।

हम सब आपके मार्गदर्शन और परामर्शका लाभ प्राप्त करनेके लिए आपके लौटनेकी प्रतीक्षा करते रहेंगे। मैं आपसे पूर्णतया सहमत हूँ कि भारतमें मुसलमानों और हिन्दुओंमें चाहे जो भी मतभेद हों, दक्षिण आफ्रिकी शिकायतोंके इस मामलेमें कोई मतभेद नहीं हो सकता।[3] वास्तवमें मेरा जीवन यह सिद्ध करनेके लिए अर्पित है कि दोनोंके बीच सहयोग होना भारतीय स्वतन्त्रताकी अनिवार्य शर्त है।

बम्बई सरकारने शेरिफको अपनी सार्वजनिक सभा-सम्बन्धी सूचना वापस लेनेका जो निर्देश दिया था, उसके लिए उसने अब क्षमा-याचना की है। अब यह सभा ११ तारीखको करनेकी सूचना फिर निकाली गई है।

ट्रान्सवालके मामलोंमें बातचीत प्रगति कर रही है, यद्यपि गति मन्द है।

हम सबका अभिवादन।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०५५) से।

१. इस पत्रके संदर्भमें उपनिवेश कार्यालयकी ८ सितम्बरकी कार्यवाहीमें लिखा गया था: "उपनिवेश-मन्त्रीको श्री गांधी और उनके साथीसे मिलकर और मोटे तौरपर श्री स्मट्सके प्रस्तावोंकी व्याप्ति बता देना चाहिए। यदि वे अपनी माँगोंको कम करनेके लिए राजी न हों तो शायद ट्रान्सवाल-सरकार इस वर्ष कानूनमें संशोधन करनेके लिए और भी कम तैयार होगी। किन्तु यदि भारत-मन्त्रालय समझौतेको स्वीकार कर ले तो श्री गांधीका खयाल किये बिना ही ट्रान्सवाल सरकारपर वैसा करनेके लिए दबाव डालना नीति-कुशलता होगी।" गांधीजी और हाजी हबीबको १६ सितम्बरको लॉर्ड क्रू से मिलनेका समय दिया गया था।

२. इस पत्रपर अगस्त ३० की तारीख पड़ी थी। देखिए "पत्र: अमीर अलीको", पृष्ठ ३७४-७५।

३. अमीर अलीने लिखा था: "...हम अपने उन देशवासियोंके लिए जो दक्षिण आफ्रिकामें रहने लगे हैं, न्याय प्राप्त करनेके हेतु एक साथ काम कर सकते हैं और हमें ऐसा करना भी चाहिए। मैं नहीं सोचता कि इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिए संवैधानिक सहयोगकी योजना बनानेमें कोई कठिनाई होगी।"

२४९. पत्र : खुशालभाई गांधीको

लन्दन,
सितम्बर ७, १९०९

आदरणीय खुशालभाई,

आपका पत्र मिला।

मुझे इस बातसे बहुत सन्तोष है कि चि० छगनलाल परमार्थका जो काम कर रहा है, उसमें आप आड़े न आयेंगे और उसे आप मुझे ही सौंपा हुआ समझते हैं। मेरा तो पक्का विश्वास है कि दोनों भाई[1] और उनकी पत्नियाँ फीनिक्समें रहते हुए सच्चा आत्म-कल्याण कर रहे हैं। पश्चिमकी हवा फीनिक्समें कम ही है। पश्चिमकी जो बातें ग्रहण करने योग्य हैं, उनको ग्रहण करनेमें हमें तनिक भी झिझक नहीं होती। उससे जो-कुछ अच्छा फल निकलेगा उसका लाभ तो भारतको ही मिलनेवाला है। मैं तो यह मानता हूँ कि फीनिक्समें जो प्रवृत्ति चल रही है, वह धर्मकी प्रवृत्ति है।

चि० नारणदासने[2] अच्छा काम शुरू किया है। उसमें उसे प्रोत्साहन और आशीर्वाद दीजिएगा।

मैं अपने काममें भी गुरुजनोंका आशीर्वाद और प्रोत्साहन चाहता हूँ। सम्भव है, मेरी कोई प्रवृत्ति उनकी समझमें न आये। लेकिन मैं जो-कुछ करता हूँ, उसमें मेरा कोई स्वार्थ नहीं है। मैं उसे धर्म मानकर सद्भावसे करता हूँ — उन्हें यह विश्वास तो होना ही चाहिए। अगर यह विश्वास हो गया हो तो मैं समझता हूँ कि मैं उनके आशीर्वादके योग्य हूँ।

अभीतक समझौता नहीं हुआ है। बातचीत चल रही है। राजनीतिक मामले बहुत विकट होते हैं। मुझे ऐसा लगा है कि यहाँ लोगोंको समझाने-बुझानेसे जेल जाना अधिक सुगम और कल्याणकारी है। फिर भी स्वभाव यहीं बनता है। ऐसी ही मुसीबतोंमें यह मालूम होता है कि अभीतक मनमें रागद्वेष कितना प्रबल है।

भाभीको[3] मेरा दण्डवत् कहिए और दूसरे बड़ोंको भी।

मोहनदासके दण्डवत्

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ४८९४) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. छगनलाल और मगनलाल गांधी।
२. गांधीजीके भतीजे और छगनलाल गांधीके छोटे भाई।
३. खुशालचन्द गांधीकी पत्नी।

२५०. पत्र : नारणदास गांधीको

लन्दन,
सितम्बर ७, १९०९

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र पढ़कर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। तुमने भी वहाँ बैठे भारतीय भाइयोंके कष्टोंमें भाग लेनेका विचार किया, इसे मैं पुण्यका काम मानता हूँ।[1] अपने साथियोंको भी मेरी ओरसे बधाई दे देना।

यह अच्छा किया कि पण्डित साहब[2] और शुक्ल साहबसे[3] चन्दा लिखा लिया।

मैं जानता हूँ कि भारतके बहुत-से पढ़े-लिखे लोग इस लड़ाईका रहस्य नहीं जानते। इससे प्रकट होता है कि आत्मबलका वह ज्ञान, जो हमारे पुराने पुरखोंको था, अब दब गया है। उसको फिर प्रकाशमें लानेके लिए धीरजकी आवश्यकता होगी। इसमें समय लगेगा। लेकिन यह आत्मबल ज्यों-ज्यों समझमें आता जायेगा त्यों-त्यों लोग अधिकाधिक इसका प्रयोग सीखते जायेंगे। मैं जिस आत्मबलकी बात लिखता हूँ वह मन्दिर आदि स्थानोंमें जाने-जैसे बाहरी उपचारोंमें बिलकुल नहीं है। कई बार यह बाहरी उपचार उस बलके विपरीत होता है। अगर 'इंडियन ओपिनियन' लगातार पढ़ा हो तो उसमें तुमने यह सब कुछ-कुछ देखा होगा। छगनभाई ज्यादा समझा सकेंगे। वहाँ रहकर भी तुम उस बलका प्रयोग कर सकते हो। सत्य और अभयको विकसित करना उसका पहला पाठ है।

जो पैसा इकट्ठा करो उसे तुम तीनों व्यक्तियोंके हस्ताक्षरसे 'इंडियन ओपिनियन' में भेज देना। इसके अलावा जिन लोगोंने पैसा दिया है उन लोगोंको हिसाब भेजना। मुख्य नामोंको 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित करनेकी सूचना भी छगनभाईकी मारफत भेजना। अगर पण्डित साहब और शुक्ल साहब स्वयं उस पैसेको सहानुभूतिसूचक पत्रके साथ भेजेंगे तो अधिक अच्छा होगा। तुम सबको जैसा ठीक लगे, वैसे यह सब काम कर लेना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ४८९५) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी

१. नारणदास गांधीने दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहियोंके लिए चन्दा इकट्ठा करना शुरू किया था।
२. सीताराम पण्डित, राजकोटके बैरिस्टर।
३. डी० बी० शुक्ल, राजकोटके बैरिस्टर और गांधीजीके मित्र।

२५१. पत्र : श्रीमती काशी गांधीको

इंग्लैंड,
सितम्बर ७, १९०९

चि० काशी,

मुझे ठीक-ठीक मालूम नहीं कि तुम्हारे साथ सन्तोक भी है या नहीं। मैंने पिछले हफ्ते तुम्हें एक चिट्ठी[1] लिखी थी।

तुमने फीनिक्समें जो अच्छी बातें सीखी हैं उन्हें वहाँ भूल न जाना या झूठी लज्जावश छोड़ न देना। ठीक तो यही माना जायेगा कि तुम और दूसरी सद्गुणी स्त्रियाँ विनयपूर्वक किन्तु दृढ़तासे, और निडर होकर वह सब करें जो करना उचित है। मैं यह चाहता हूँ कि हमने फीनिक्समें जो कुछ अच्छा मानकर किया है उसे तुम धीरज रखकर और नारायणका नाम लेकर चि० छगनलालकी सलाहसे वहाँ भी करो। मैंने तुम्हें यह पत्र यही बतानेके इरादेसे लिखा है।

मुझे अभी यहाँ रहना पड़ेगा। इसलिए अगर तुम चिट्ठी लिखोगी तो वह मुझे मिल जायेगी।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ४८९६) से।
सौजन्य : छगनलाल गांधी

२५२. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
सितम्बर ८, १९०९

प्रिय हेनरी,

आपकी चिट्ठी और कतरनें मिलीं। मेरे तारोंको प्रकाशित करनेकी आपको यह क्या धुन सवार हो गई? अगर आप उन गुजराती कतरनोंको कहीं पढ़ पाते जिन्हें आप मेरे पास भेजते रहे हैं तो इस सबपर आपको हँसी आती। गुजराती लेखक हमारी भारी जीत होनेकी घोषणा कर रहे हैं और स्वभावत: हमारे यहाँके मित्र आपकी और मेरी हँसी उड़ाते हैं। मैं अंग्रेजीके स्तम्भोंमें भी देखता हूँ कि आप आंशिक जीतका दावा और बोअरोंका विरोध करके इस कठिन स्थितिसे निकलनेका प्रयत्न कर रहे हैं। सौभाग्यसे यहाँ भारतीय समाचारपत्रोंकी ओर कोई ध्यान नहीं देता, क्योंकि हमारे संघर्षका विषय वर्जित-सा है।

१. देखिए "पत्र : श्रीमती काशी गांधीको", पृष्ठ ३७३।

यदि ये कतरनें नीमेके[1] पास पहुँच जायें तो मैं अच्छी तरह कल्पना कर सकता हूँ कि वे हमें बहुत बड़ी हानि पहुँचा सकते हैं। मुझे आशा है, आपका खयाल यह नहीं है कि इस अधिनियमके रद करनेके बारेमें कोई समझौता हो गया है। मेरा इरादा अपने तारसे कोई ऐसा खयाल पैदा करनेका नहीं था। सम्भावनाएँ हैं कि अनाक्रामक प्रतिरोध बन्द करनेका सौदा किये बिना कुछ भी नहीं दिया जायेगा और फिर भी आपके बम्बईके समाचारपत्रोंमें दिये गये लेखोंसे यह आभास मिलता है कि आपने अधिनियमकी मंसूखी निश्चित मान ली है। मैं यह जानना चाहता हूँ कि जो सभा अब होगी उसमें आप इस समूचे प्रश्नका विवेचन कैसे करेंगे। मुझे आशा है, मेरे पत्रोंसे आपको सारी स्थिति स्पष्ट हो गई होगी। यदि उनसे स्थिति स्पष्ट न हुई हो तो मैं अपने-आपको कभी माफ न कर सकूँगा। अगर तीन वर्ष पहले कोई चीज इस प्रकार असमय प्रकाशित हो जाती और जहाँ जीत नहीं हुई वहाँ हमारी जीत बताई जाती तो शायद मैं अपने बाल नोंच डालता; क्योंकि तब अनाक्रामक प्रतिरोध तो था नहीं, जिसका हम आश्रय लेते। वर्तमान स्थितिमें, मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ मैंने इस चीजके प्रकाशित होनेपर गम्भीरतासे विचार तक नहीं किया है और न मुझे इससे कोई चिन्ता हुई है; क्योंकि मैं जानता हूँ कि हम जिस चीजके लिए लड़ रहे हैं वह जब कभी [हमें प्राप्त होगी][2] तब सत्याग्रहके कारण ही प्राप्त होगी . . .[3] मैं इस तारके प्रकाशनका उल्लेख इसलिए करता हूँ कि आप भविष्यमें सावधान रहें और यह जान लें कि हमारे मित्र (आप जानते हैं, मेरा तात्पर्य किनसे है) क्या कह रहे हैं।

सार्वजनिक सभाको रोककर बम्बई सरकारने कैसी मूर्खतापूर्ण भूल की है। यह घटना कैसे और क्यों घटित हुई, इस सम्बन्धमें मैं विस्तृत वर्णनकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। यह बड़े दुःखकी बात है कि सर फीरोजशाह अब भी आपकी प्रगतिमें बाधा डाल रहे हैं।[4] फिर भी मैं इस बातकी पूरी आशा कर रहा हूँ कि आप बम्बईके कामकी समाप्तिके साथ-साथ उन्हें रास्तेपर ले आयेंगे।

मैं आपसे बिलकुल सहमत हूँ कि जो वक्तव्य[5] मैंने भेजा है वह बम्बईके लिए बिलकुल काम न देगा। वह काम दे सकता है यह मैंने कभी सोचा भी नहीं। भारतके लिए उससे बहुत अधिक मँजे हुए और विस्तृत वक्तव्यकी आवश्यकता है।

यदि आप श्री पेटिट और दूसरे लोगोंको दोनों शिष्टमण्डलोंका व्यय देनेके लिए राजी कर सकें तो यह एक बड़ा काम होगा और इससे वह कठिनाई अपने-आप दूर हो जायेगी जिसे दूर करनेका प्रयत्न हम गत १२ महीनेसे कर रहे हैं।

यह पत्र लिखवानेके समय तक लॉर्ड क्रू ने भेंटके लिए कोई तारीख नहीं भेजी है। मैं नहीं जानता कि इस देरका क्या अर्थ है।

१. एल० ई० नीमे, **एशियाटिक डेंजर इन द कॉलोनीज़**के लेखक। इसका उत्तर **इंडियन ओपिनियन**के सम्पादकने एक पुस्तिका लिख कर दिया था।

२. यहाँ मूलमें कागज फट-फट गया है। ये शब्द अनुमानसे पूरे किये गये हैं।

३. यहाँ कुछ शब्द मिटे हुए हैं।

४. पोलकने अपने २१ अगस्तके पत्रमें लिखा था "मैं सार्वजनिक सभापर जोर दे रहा हूँ, पर सर फीरोज-शाह मेहता बाधक बन रहे हैं। वे देरी करानेके सिवा कुछ नहीं करते।"

५. देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण" पृष्ठ २८७-३००।

श्री गोखलेके स्वास्थ्यके समाचारसे मुझे बहुत दुःख हुआ है। उनको क्या तकलीफ है? उनका डॉक्टर निराश हो गया है, अथवा उसका अभिप्राय यह है कि वे जलवायु-परिवर्तनके लिए कहीं चले जायें?[1]

मैं यह जानना चाहता हूँ कि बड़े पादशाहके सम्बन्धमें आपका खयाल क्या है और यह बड़े पादशाहकी बात है या छोटेकी। दोनों प्रतिभाशाली व्यक्ति हैं, किन्तु मैं सदासे सुनता आया हूँ कि बड़े पादशाह साधुचरित्र पुरुष हैं। छोटे पादशाहको मैं अच्छी तरह जानता हूँ। वे मेरे साथ पढ़ते थे। वे इस खयालको पसन्द नहीं करते, या यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि मैं जब बम्बईमें था, तब कतई पसन्द नहीं करते थे, कि भारतीय विदेशोंमें जायें, और वे . . .[2] अगर वे हमारे [संघर्ष] में दिलचस्पी लेनेके लिए . . .[3]।

डॉक्टरीकी अहिंसक परीक्षा देनेके पक्षमें डॉक्टरीके कौन-से विद्यार्थी हैं? इसमें मुझे कुछ दिलचस्पी है, क्योंकि यहाँ मुझसे कहा गया है कि जीवोंको नष्ट किये बिना डॉक्टरीका अध्ययन बिलकुल असम्भव है। श्री गुलने मुझे बताया है कि उन्होंने[4] अपने अध्ययन-कालमें कमसे-कम ५० मेंढक अवश्य मारे होंगे। वे कहते हैं कि इसके बिना शरीर-विज्ञानकी परीक्षा सम्भव नहीं है। ऐसी बात है तो [यदि मुझे खुद पढ़नी हो] मैं डॉक्टरी बिलकुल पढ़ना न चाहूँगा। मैं न तो मेंढकको मारना चाहूँगा और न खास तौरसे चीरफाड़के लिए मारे गये मेंढकको चीरफाड़के काममें लाना चाहूँगा।

मुझे आशा है, आपने वहाँके मित्रोंको स्पष्ट बता दिया होगा कि हमने अपने प्रचारको यदि ट्रान्सवाल-सम्बन्धी दो माँगों तक ही सीमित रखा है, तो उसका यह अर्थ नहीं है कि अवसर आनेपर हम अन्य बातके लिए नहीं लड़ेंगे। इस समय केवल दो बातोंकी विशेष रूपसे चर्चा की जा रही है, तो उसका कारण यह है कि अनाक्रामक प्रतिरोधका प्रयोग केवल उन्हींके लिए किया गया है; और इसलिए सबसे अधिक ध्यान उन्हींपर दिया जाता है और दिया जाना भी चाहिए। मैं इस प्रश्नका उल्लेख इसलिए कर रहा हूँ कि इसके सम्बन्धमें लॉर्ड मॉर्ले और लॉर्ड क्रू से बातचीत हो चुकी है। लॉर्ड क्रू ने पूछा था कि दूसरी बातोंके मामलेमें हम क्या करना चाहते हैं। मैंने उनसे कहा था कि हम ट्रान्सवालमें अभीष्ट सुधार करानेके उद्देश्यसे कार्य करेंगे। और मैंने यह संकेत भी दिया था कि सुधारोंके सम्बन्धमें भी अनाक्रामक प्रतिरोधका आश्रय लिया जा सकता है। सर मंचरजी यह वक्तव्य देनेपर बहुत जोर देते हैं, क्योंकि उनका खयाल है कि अन्यथा वहाँके लोग शायद भविष्यमें काम न करें और सोचें कि उन्होंने वर्तमान समस्याको सुलझानेमें हमारी सहायता करके अपने कर्तव्यका पालन कर दिया है।

मैं देखता हूँ, आपने अपने पत्रमें कहा है कि संघ विधेयकके [पास होनेसे] हमारी स्थिति कुछ ज्यादा . . .[5] हो जाती है। लेकिन मेरा खयाल ऐसा नहीं है, क्योंकि खुद संघ

१. पोलकने लिखा था "श्री गोखले अत्यधिक कामके भारसे दबे जा रहे हैं। उनके डॉक्टर उनकी हालतसे बहुत निराश हैं।"

२ और ३. यहाँ मूलमें कुछ शब्द गायब हैं।

४. यहाँ मूलमें "आपने" शब्द है।

५. यहाँ कुछ शब्द गायब हैं। पोलकने लिखा था "संघ-कानूनके पास हो जानेसे आपका काम बहुत कठिन हो गया है। अब आपके पास एक शस्त्र और कम हो गया है।"

(यूनियनके) बारेमें हमने कभी कोई बात नहीं [उठाई]। वस्तुतः जहाँतक समझौतेकी बातचीतका सम्बन्ध है, संघ [बनानेका कानून पास होने] के बाद जो काम हुआ है वह पहलेकी अपेक्षा अधिक ठोस है।

बम्बईके रूपमें आपने भारतकी जो झाँकी देखी है, उसपर आपने बहुत प्रसन्नता व्यक्त की है। मुझे आपकी यह प्रसन्नता कम करनेकी जरूरत नहीं मालूम होती; फिर भी शायद मैं कम कर दूँ। मैं समझता हूँ, आप इस बातको जानते हैं कि आप पाश्चात्य रंगमें रंगे भारतको देख रहे हैं, वास्तविक भारतको नहीं, जिसे, मुझे आशा है, आप वहाँ रहते देख सकते हैं; परन्तु आप देखेंगे, इसमें मुझे सन्देह है। मैं पिछली रात एडवर्ड कारपेंटरकी एक बहुत ही ज्ञानवर्धक रचना — 'सिविलिजेशन : इट्स कॉज़ ऐंड क्योर' — पढ़ रहा था। मैंने पहला भाग समाप्त कर लिया। परन्तु उसे पढ़ते-पढ़ते मेरे मनमें आया कि मैंने जो चेतावनी दी है, वह दे दूँ। सभ्यताको हम जिस रूपमें जानते हैं, उसका विश्लेषण उन्होंने बहुत अच्छा किया है। यद्यपि उन्होंने सभ्यताकी बहुत कड़ी निन्दा की है, तथापि मेरी सम्मतिमें वह पूर्णरूपसे उपयुक्त है। उन्होंने जो उपाय सुझाया है वह अच्छा है; परन्तु मैं देखता हूँ कि वे स्वयं अपने तर्कसे भयभीत हैं। यह स्वाभाविक है, क्योंकि वे अपने तर्कके आधारके बारेमें निश्चित नहीं हैं। मेरी सम्मतिमें कोई भी मनुष्य जबतक भारतके हृदयका साक्षात्कार न कर ले, तबतक भविष्यका ठीक अनुमान नहीं दे सकता और न कोई उचित उपाय बता सकता है। अब आपने जान लिया है कि मेरे विचार मुझे किस दिशामें लिये जा रहे हैं। यदि आपने यह पुस्तक नहीं पढ़ी है और यदि वह आपकी आलमारीमें नहीं है तो वह आपको फीनिक्समें मिल जायेगी।

मुझे जोहानिसबर्गसे निम्न तार मिला है:

> मजिस्ट्रेटने बरनॉनको अदालतसे यह कहनेपर फटकारा कि एशियाइयोंको देशसे खदेड़ देना गोरोंका कर्तव्य है। 'लीडर' 'स्टार' में कड़ी आलोचना।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०५६) से।

२५३. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
सितम्बर ९, १९०९

लॉर्ड महोदय,

श्रीमानके सुझावपर[1] मैंने लॉर्ड मॉर्लेके सचिवको पत्र[2] लिखा था। उनके उत्तरकी प्रतिलिपि संलग्न है।

मैंने लॉर्ड क्रूको शनिवारको पत्र[3] लिखा था। अभी कोई जवाब नहीं मिला है। उनको लिखे पत्रकी प्रतिलिपि भी साथ भेज रहा हूँ।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५०५८) से।

२५४. पत्र : मणिलाल गांधीको

[लन्दन]
सितम्बर ९, १९०९

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। श्री कैलनबैकने खर्च किया, इससे मुझे दुःख हुआ है। लेकिन मैं जानता हूँ कि उन्हें रोका नहीं जा सकता। यह ज्यादा अच्छा है कि वे पूछें तो उन्हें अपनी आवश्यकता न बताई जाये।

मुझे दुःख है कि चि० हरिलाल[4] तुम्हारे पास नहीं है। लेकिन मानता हूँ कि फिलहाल उसका कर्तव्य ट्रान्सवालमें ही रहनेका है।

तुम्हारी पढ़ाईका कोई समाचार नहीं मिला। अगर श्री कॉर्डिजको फोड़े हो गये हैं, तो मुझे विश्वास है, तुम उनके घर जाते होगे और उनकी देखभाल करते होगे।

भाई पुरुषोत्तमदासने पत्र नहीं भेजा, यह भूल की है।

मोहनदासके आशीर्वाद

१. लॉर्ड ऍम्टहिलने अपने ३ सितम्बरके पत्रमें गांधीजीको लिखा था : "आप लॉर्ड मॉर्लेसे मिलनेका अनुरोध करें . . . वे प्रश्नको अभीतक समझ नहीं रहे हैं, लेकिन उन्हें इस सवालमें दिलचस्पी होनी ही चाहिए. . . संकेत भर कर दें कि आप सारी परिस्थितिको स्पष्ट करनेके लिए भारत जाना चाहते हैं। फिर इसे विस्तारपूर्वक कह दें।"

२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

३. यह पत्र दरअसल सोमवार ६ सितम्बरको भेजा गया था, देखिए; "पत्र लॉर्ड क्रूके निजी सचिवको", पृष्ठ ३८९।

४. हरिलाल गांधी छः महीनेकी जेल काटनेके बाद ९ अगस्तको रिहा किये गये थे और उसके बाद मणिलालको देखने डर्बन चले गये थे; मणिलाल वहाँ बीमार थे। लेकिन वे तुरन्त ही आन्दोलनके सम्बन्धमें ट्रान्सवाल वापस आ गये थे। देखिए "तार : ब्रिटिश भारतीय संघको", पृष्ठ ३५०।

[पुनश्चः]

आशा है, तुम देवीबहन[1] और श्रीमती पायवेलको[2] देखने भी अक्सर जाते रहते होगे।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ८८) से।

सौजन्य: सुशीलाबेन गांधी।

२५५. पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन]
सितम्बर १०, १९०९

महोदय,

नीचे दिया गया तार जोहानिसबर्गसे मिला है:

> **मजिस्ट्रेटने वरनॉनको अदालतमें यह कहनेपर फटकारा कि एशियाइयोंको देशसे खदेड़ देना गोरोंका कर्तव्य है। 'लीडर' 'स्टार' में कड़ी आलोचना।**

श्री वरनॉन, जिनका तारमें उल्लेख है, सुपरिंटेंडेंट वरनॉन हैं। उनको मैं अच्छी तरह जानता हूँ। उन्होंने, मेरी रायमें, जोहानिसबर्गमें अनाक्रामक प्रतिरोधियोंको असीम कष्ट दिया है। अवश्य ही उक्त बात कहनेका उनका ढंग ऐसा सन्तापजनक रहा होगा कि उसपर मजिस्ट्रेटको उन्हें फटकार देनी पड़ी और 'ट्रान्सवाल लीडर' तथा 'जोहानिसबर्ग स्टार' को उनकी कड़ी आलोचना करनी पड़ी।

मेरे देशवासियोंको ट्रान्सवालमें स्वेच्छापूर्वक स्वीकार किये कष्ट-सहनमें क्या-क्या बर्दाश्त करना पड़ता है, इस तारसे उसका संकेत मात्र मिलता है। लेकिन मेरे साथीके लिए और मेरे लिए शिकायत करनेका कोई कारण नहीं हो सकता। साथ ही हम अनुभव करते हैं कि हमें इस तारकी ओर लॉर्ड क्रू का ध्यान आकर्षित करना ही चाहिए। मैं नहीं जानता कि लॉर्ड क्रू ने जनरल स्मट्सका वह वक्तव्य देखा है या नहीं, जो उन्होंने दक्षिण आफ्रिकाके लिए जहाजमें बैठनेसे पहले रायटरको दिया था। उसमें उन्होंने निम्न बातें कही थीं:

> **ट्रान्सवालके भारतीयोंका बड़ा बहुमत अपने कुछ उग्र प्रतिनिधियों द्वारा संचालित आन्दोलनसे बेहद ऊब गया है और शान्तिपूर्वक कानूनके अधीन हो गया है।**

हमने इसको बात कहनेका सुन्दर ढंग मात्र माना है और समाचारपत्रोंमें उसका उत्तर नहीं दिया है, ताकि जनरल स्मट्स अपने दलकी किसी आपत्तिके बिना भारतीयोंकी प्रार्थनाको स्वीकार कर सकें। किन्तु, यदि उनका अभिप्राय वही है जो उन्होंने रायटरके प्रतिनिधिको बताया था तो क्या मैं यह कह सकता हूँ कि ट्रान्सवालसे प्राप्त सूचनासे इसके

१. ए० एच० वेस्टकी बहन कुमारी एडा वेस्टका भारतीय नाम।
२. ए० एच० वेस्टकी सास।

विपरीत बात सिद्ध होती है और यह भी कि ब्रिटिश भारतीयोंके विरोधका बल अभीतक कम नहीं हुआ है।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स २९१/१४२ और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५०६०) से।

२५६. पत्र: लॉर्ड मॉर्लेके निजी सचिवको

[लन्दन]
सितम्बर १०, १९०९

महोदय,

आपका ८ तारीखका पत्र मिला। मैं लॉर्ड मॉर्लेकी जानकारीके लिए लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको लिखे अपने पत्रकी प्रतिलिपि इसके साथमें भेज रहा हूँ।[1]

आपका विश्वस्त,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५०५९) से।

२५७. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
सितम्बर १०, १९०९

लॉर्ड महोदय,

कल रात जोहानिसबर्गसे निम्न तार आया था:

> मजिस्ट्रेटने वरनॉनको अदालतमें यह कहनेपर फटकारा कि एशियाइयोंको देशसे खदेड़ देना गोरोंका कर्तव्य है। 'लीडर' 'स्टार' में कड़ी आलोचना।

श्री वरनॉन, जिनका तारमें उल्लेख है, सुपरिटेंडेंट वरनॉन हैं। उन्हें मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। उन्होंने अनाक्रामक प्रतिरोधके दौरान ब्रिटिश भारतीयोंको असीम कष्ट दिया है। मैं जानता हूँ कि मजिस्ट्रेट न्याय-अधिकारीके रूपमें जितनी छूट दे सकता है, प्रायः उन्हें उससे अधिक छूट देता था। लेकिन स्पष्ट है कि वह भी उन्हें एशियाइयोंके विरुद्ध गोरोंको अबाध रूपसे भड़काते रहने नहीं दे सका। इस मामलेसे अवश्य ही सनसनी फैली होगी, इसलिए 'ट्रान्सवाल लीडर' और 'जोहानिसबर्ग स्टार' को कड़ी आलोचना करनी पड़ी। मैं तारकी नकल उपनिवेश-कार्यालयको भेज रहा हूँ।[2]

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ३९८।

मुझे लॉर्ड क्रू का उत्तर अभी नहीं मिला है। मेरे मनमें प्रायः यह प्रश्न उठता रहता है कि क्या मेरा कर्तव्य साम्राज्य-सरकारको अपने कर्तव्य-पालनके लिए तैयार करनेकी आशासे यहाँ व्यर्थ पड़े रहनेकी अपेक्षा ट्रान्सवालमें जाना और अपने देशवासियोंके कष्टोंमें भाग लेना नहीं है? मैं जानता हूँ कि जहाँतक संघर्षमें सबल और निर्बल दोनों तरहके लोग समान रूपसे शामिल हैं वहाँतक चुपचाप लगातार कष्ट सहना और बातचीत तथा सार्वजनिक आन्दोलन, दोनों ही बातें उसके अंग हैं। लेकिन फिर भी बातचीत और सार्वजनिक आन्दोलनकी अपेक्षा चुपचाप लगातार कष्ट सहनेकी शक्तिमें मेरा विश्वास बहुत ज्यादा है। आपको यह विश्वास दिलानेकी आवश्यकता नहीं है कि मैं अधीर नहीं हूँ और जबतक आपकी सम्मतिमें प्रतीक्षा करना आवश्यक हो तबतक प्रतीक्षा करनेके लिए खुशीसे तैयार हूँ।[1]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०६२) से।

२५८. लन्दन

[सितम्बर १०, १९०९]

नेटालका शिष्टमण्डल

नेटालका शिष्टमण्डल अभी अपना विवरण विभिन्न स्थानोंको भेज ही रहा है। उसने एक पत्र अखबारोंको भेजा है। उसकी नकल नीचे लिखे अनुसार है। यह पत्र आज (१० सितम्बरको) 'टाइम्स' में प्रकाशित हुआ है। शिष्टमण्डलने कर्नल सीलीसे लिखित उत्तर देनेकी प्रार्थना की है। एक-दो दिनमें उत्तर आ जानेकी आशा है।

'टाइम्स' में पत्र

> हमने नेटालके ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें विभिन्न स्थानोंको जो विवरण भेजा है, हम उसकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करते हैं।
>
> हम अनेक कष्टोंसे पीड़ित हैं। हम इन सब कष्टोंकी ओर आपका ध्यान एक ही बार आकर्षित करें तो हमारी बात व्यर्थ जानेका भय रहता है। इसलिए हमने उन्हीं बातोंको दिया है जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। दक्षिण आफ्रिकाके उपनिवेशोंमें नेटालकी स्थिति विशिष्ट है। जब नेटालमें समृद्धिका प्रवाह उलटा हो गया था तब भारतीय मजदूरोंको खास तौरसे बुलाया गया था। अब नेटाल उसका परिणाम भुगतनेसे इनकार करता है, अर्थात् वह चाहता है कि उपनिवेशको गिरमिटिया मजदूर जो लाभ पहुँचा सकें वह ले लिया जाये; किन्तु स्वतन्त्र भारतीयोंको न रखा जाये।

1. लॉर्ड ऍम्टहिल्ने इसके जवाबमें ११ सितम्बरके पत्रमें लिखा था: "मैं नहीं सोचता कि आपको लॉर्ड क्रू के उत्तरके लिए ज्यादा राह देखनी पड़ेगी। अगर वे आपका मामला एक बार फिर सुननेसे इनकार कर दें तो मुझे बहुत आश्चर्य और दुःख होगा। अगर यह पत्र मिलने तक आपको उनका उत्तर न मिले तो यह बिल्कुल मुनासिब ही होगा कि उन्हें आप याद दिला दें और बता दें कि आपका वक्त बहुत कीमती है और आप दक्षिण आफ्रिकाको वापस जानेके लिए बेचैन हो रहे हैं।"

इसके लिए उसने प्रथम तो भारतीय व्यापारियोंको व्यापारिक परवाने (लाइसंस) देना बन्द करके उनको गुजारेके साधनोंसे वंचित कर दिया है। जो अधिकारी ये परवाने जारी करते हैं या जिन्हें इनको एक स्थानसे दूसरेमें या एक व्यक्तिके नामसे दूसरे व्यक्तिके नाम बदलनेका अधिकार प्राप्त है, वे अधिकारी अपनी मनमानी चला सकते हैं। उनकी इस मनमानीसे बहुत-से भारतीयोंके परवाने छिन गये हैं। इसके लिए सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार दिया जाना चाहिए। दूसरे भारतीयोंको उपनिवेशसे चलता करनेके लिए गिरमिट खत्म होते ही भारतीय गिरमिटियों, उनकी स्त्रियों और बच्चोंपर भारी वार्षिक कर लगा दिया जाता है। तीसरे, भारतीयोंको सदा अज्ञानमें रखनेके लिए उनको जो थोड़ेसे शिक्षा-साधन प्राप्त थे, वे भी कम कर दिये गये हैं।

ऐसे एक चर्चापत्रमें हमारे कष्टोंका पूरा विवरण कैसे समा सकता है? अधिकारी भारतीय एक खास आयुसे अधिकके अपने बालकोंको भी नहीं बुला सकते या अपने परिवारकी किसी निराश्रित स्त्रीको अपने साथ नहीं ला सकते। इससे आप देखेंगे कि भारतीय समाजपर तीन ओरसे आक्रमण किया गया है। इसलिए हम न्याय प्राप्त करनेके उद्देश्यसे ब्रिटिश राज्यके इस प्रधान स्थानमें आये हैं। नेटाल स्वतन्त्र उपनिवेश रहे या दक्षिण आफ्रिकी संघमें मिल जाये; किन्तु [भारतीयोंके] पुराने अधिकारोंकी रक्षा करना ब्रिटिश सरकारका कर्तव्य है। वह अपने इस कर्तव्यको पूरा नहीं करती। नेटालके कानूनोंमें हमारी राय नहीं ली जाती है; इसलिए हमारी रक्षाका उपाय ब्रिटिश सरकारके हाथमें है। नेटालके मामलेमें तो ब्रिटिश सरकारके हाथोंमें प्रभावकारी उपाय है। वह यह है कि नेटाल भारतीय गिरमिटियोंको अपने फायदेके लिए बुलाता है; उनको वहाँ भेजना बन्द कर दिया जाये। ऐसा किया जानेपर नेटालको उक्त तीनों प्रकारके कष्टोंसे भारतीयोंको मुक्त करना ही पड़ेगा।

हम आशा करते हैं कि इंग्लैंडके सार्वजनिक अखबार हमारी सहायताके लिए आगे आयेंगे और ब्रिटिश सरकारको अपने कर्तव्यका पालन करनेके लिए बाध्य करेंगे।

अब्दुल कादिर
आमद भायात
एच० एम० बदात
एम० सी० आंगलिया

क्या वे उत्तरी ध्रुव पहुँच गये?

उत्तरी ध्रुवकी खोज हो गई है या नहीं, और हो गई है तो किसने की, इस बारेमें अमेरिकाके दो गोरोंमें बच्चों जैसी बहस चल रही है। इनमें से एकका नाम डॉक्टर पेरी है और दूसरेका डॉक्टर कुक। दोनों व्यक्ति कहते हैं कि वे उत्तरी ध्रुवपर खड़े हो आये हैं। डॉक्टर पेरी कहते हैं कि डॉक्टर कुककी बात बनावटी है और डॉक्टर कुक कहते हैं कि डॉक्टर पेरीकी बात गलत है। इस विवादको लेकर लोग पागल हो गये हैं। अखबार इसी विवादसे भरे रहते हैं। उनका सारा स्थान यह विवाद और फुटबाल-क्रिकेटकी खबरें ले लेती हैं। उत्तरी ध्रुवके मिलनेसे दुनियाको क्या लाभ हुआ, यह मेरी समझसे बाहरकी बात

है। किन्तु ये सभी बातें वर्तमान सभ्यताकी बहुत बड़ी निशानियाँ मानी जाती हैं। इनका महत्त्व क्या है, यह तो जाननेवाले जानें। मुझे तो ये सभी पागलपनकी निशानियाँ दिखाई देती हैं। मनुष्यको योग्य काम न मिले, इसलिए वह अपना वक्त जैसे-तैसे गुजारे, और धनके अति लोभके कारण जैसे भी सम्भव हो, धन कमानेका साधन निकाले ऐसी हालत, मैं तो कहूँगा, दुश्मनकी भी न हो।

स्त्रियोंके लिए मताधिकारका आन्दोलन करनेवाली महिलाएँ

मताधिकार प्राप्त करनेके लिए आन्दोलन करनेवाली कुछ स्त्रियाँ अधीर हो उठी हैं। वे जेल जाती हैं, यह तो अच्छी बात है। वे स्वयं कष्ट उठायें, इसमें तो कोई कुछ कह नहीं सकता। किन्तु मताधिकार तुरन्त नहीं मिलता, इसलिए अब वे प्रधानमन्त्री श्री एस्क्विथकी खिड़कियाँ तोड़नेके लिए उद्यत हो गई हैं। वे उनके आराममें खलल डालती हैं, और उनके घरपर धावा बोलती हैं। ऐसा तीन स्त्रियोंने किया। ये स्त्रियाँ पकड़ी गईं, फिर भी उनका क्या किया जा सकता था? उनपर मुकदमा भी नहीं चलाया गया। यह सब बेढंगा है; स्त्रियाँ होनेके कारण वे अपराध करनेपर भी छूट जाती हैं। अंग्रेज लोग स्त्री-जातिका आदर करते हैं, इसलिए इन स्त्रियोंपर कोई हाथ नहीं उठाता। ये स्त्रियाँ इस बातको जानती हैं, इसलिए इसका अनुचित लाभ उठाती हैं। इससे कुछ मताधिकार मिलनेवाला नहीं है। यदि अंग्रेज स्त्रियाँ केवल सत्याग्रहकी विधिसे ही लड़ती हों तो वे उक्त आचरण नहीं कर सकतीं थीं। सत्याग्रह और अधैर्यका मेल नहीं है। थोड़ी-सी स्त्रियाँ ही मताधिकार प्राप्त करना चाहती हैं और ज्यादा उसके विरुद्ध हैं, इसलिए इन थोड़ी-सी स्त्रियोंके सामने बहुत समय तक कष्ट-सहन करना ही एकमात्र मार्ग है। वे कष्टोंसे हारकर अपनी मर्यादाका त्यागकर मार-पीट करेंगी तो उनको जो सहानुभूति मिल चुकी है उसको खो देंगी और लोग उनका विरोध करेंगे। इससे हमें यह शिक्षा लेनी है कि हमें सत्याग्रह रूपी तलवारका त्याग करके कभी अधीर नहीं होना चाहिए। ऐसा करनेका अर्थ होगा आधी मंजिल पार करके लौट पड़ना। इसलिए दूसरोंके इस उदाहरणसे हमें धीरजकी शिक्षा लेनेकी बहुत जरूरत है। [हममें से] जो सत्याग्रही नहीं हैं उनके तो अधीर होनेकी बात ही नहीं है। जो सत्याग्रही हैं उनके लिए भी, यदि उन्हें सत्यके बलपर पूरा विश्वास हो तो धैर्य त्यागनेका कोई कारण नहीं है। जब जितना चाहिए उतना सत्य-बल इकट्ठा हो जायेगा तब असत्य अपने-आप नष्ट हो जायेगा।

गाइ एल्फ्रेड

गाइ एल्फ्रेड 'इंडियन सोशियालॉजिस्ट' के पिछले अंकके मुद्रकका नाम है। उनकी आयु २२ बरसकी है। उनका मुकदमा खत्म हो चुका है। सफाईमें तो कुछ कहा ही नहीं गया। पत्रमें हत्याकी खुली प्रशंसा की गई थी। उनको बारह मासकी जेल मिली है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-१०-१९०९

२५९. शिष्टमण्डलकी यात्रा [-११]

[सितम्बर ११, १९०९ से पूर्व]

हम जहाँ थे वहींके वहीं हैं — मुझे इस सप्ताह भी यही कहना पड़ रहा है। लॉर्ड क्रू का निमन्त्रण अभी नहीं आया है। यह नहीं कहा जा सकता कि आयेगा भी या नहीं, और आयेगा तो कब आयेगा। उनको कागज-पत्र भेजे गये हैं। जोहानिसबर्गसे यह तार मिला है कि अदालतमें बयान देते हुए पुलिस सुपरिंटेंडेंट वरनॉनने कहा कि एशियाइयोंको निकाल बाहर करना प्रत्येक यूरोपीयका कर्तव्य है। खबर है कि इसपर न्यायाधीशने कड़ी आलोचना की और 'स्टार' तथा 'ट्रान्सवाल लीडर'ने कड़ी टिप्पणियाँ लिखीं। इस सम्बन्धमें लॉर्ड क्रू को तुरन्त पत्र लिख दिया गया है। इस प्रकार जो-जो अन्याय होता है उससे हमको सहायता मिलनेवाली है। ट्रान्सवालका सवाल [साम्राज्य-] सरकारके लिए एक बहुत बड़ा सवाल बन गया है। अब वह यह सोच रही है कि क्या करे। ऐसी स्थितिमें हमारे ऊपर ज्यों-ज्यों ज्यादा कष्ट आते जाते हैं त्यों-त्यों [साम्राज्य-] सरकारपर ज्यादा बोझ पड़ता जाता है। श्री क्विनका तार मिला है कि चीनी अब भी गिरफ्तार किये जा रहे हैं, जबकि जनरल स्मट्स कहते हैं कि समझौता हो जानेकी सम्भावना है। श्री क्विन सवाल करते हैं कि यह कैसे हो सकता है। जनरल स्मट्सके मनमें समझौतेका जो रूप है उसके बारेमें मैं गत सप्ताह लिख चुका हूँ। हमारे लिए उतना काफी नहीं है, यह बात स्पष्ट है। इसलिए अभी पकड़ा-पकड़ी तो चलती ही रहेगी। यह जरूरी है कि भारतीय और चीनी सभी दृढ़ रहें। जनरल स्मट्स कहते हैं कि भारतीयोंका बल टूट चुका है और बहुतोंने कानून मान लिया है। यह आरोप असत्य है, यह बताना हमारे ऊपर है।

बम्बईकी सार्वजनिक सभा, जिस दिन यह पत्र डाकमें डाला जायेगा, उस दिन होगी।[1] यह ठीक हुआ कि बम्बई सरकारने आखिर माफी माँग ली और फिर सभा करनेकी सूचना निकालने दी। उसकी खबर तो वहाँ मिल ही जायेगी।

श्री पोलककी चिट्ठीसे मालूम होता है कि दोनों शिष्टमण्डलोंका खर्च बम्बईसे देनेकी हलचल चल रही है। पैसेकी जरूरत हमें भले ही न हो, किन्तु इस तरहकी हलचल जातीय सहानुभूतिकी सूचक है और उसका बल तो हमें निश्चय ही चाहिए।

अपनी लड़ाईके सम्बन्धमें केपके भूतपूर्व मन्त्री श्री सॉल सॉलोमनकी पत्नी और स्वर्गीय सर जॉन मॉल्टेनोकी पुत्रीके साथ हमारी बहुत बातें हुई हैं। यद्यपि ये दोनों महिलाएँ दक्षिण आफ्रिकाकी हैं, फिर भी हमसे [हमारे संघर्षमें] बहुत ही सहानुभूति रखती हैं और हमारी सहायता करनेकी हिम्मत रखती हैं। इस सम्बन्धमें मैं ज्यादा नहीं लिख सकता। कुमारी मॉल्टेनो शायद जल्दी ही दक्षिण आफ्रिका पहुँचेंगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-१०-१९०९

१. गांधीजीका खयाल था कि यह सभा ११ सितम्बरको होगी; देखिए "शिष्टमण्डलकी यात्रा [-१०]", पृष्ठ ३८७।

२६०. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
सितम्बर १३, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं आपके इसी ११ तारीखके पत्रके[1] लिए आपका अत्यन्त आभारी हूँ। जो पत्र[2] मैंने लॉर्ड मॉर्लेको भेजा था वह जैसा आपने सुझाया था ठीक वैसा ही था, और अब मेरी समझमें आता है कि शायद मैं अधिक अच्छा पत्र लिख सकता था। मुझे यह तय करनेमें सदा कठिनाई हुई है कि मैं आपकी दी हुई जानकारीके किस भागका उपयोग करूँ। मैं लॉर्ड मॉर्लेको भेजे अपने पहले पत्रकी दफ्तरी प्रति और अब जो पत्र लिखना ठीक जँचता है उसके मसविदेकी नकल आपको भेज रहा हूँ।

लॉर्ड क्रू ने अब मुझे भेंटका समय दे दिया है। उन्होंने यही १६ तारीख निश्चित की है। भेंटका दिन वही है जो प्रिटोरियामें जनरल स्मटस्के पहुँचनेका दिन है। मैं नहीं जानता कि ऐसा संयोगसे हो गया है या जान-बूझकर किया गया है।

आपका, आदि,

[सहपत्र]

लॉर्ड मॉर्लेको भेजे गये पत्रका मसविदा[3]

महोदय,

अपने इसी छः तारीखके पत्रको, जिसमें लॉर्ड महोदयसे भेंटका प्रस्ताव था, दुबारा पढ़नेपर मुझे मालूम होता है कि मैंने स्थितिको इतना स्पष्ट नहीं किया, जिससे लॉर्ड महोदयसे भेंटका प्रस्ताव उचित ठहर सकता।

लॉर्ड ऍम्टहिल, जिन्होंने ट्रान्सवालके भारतीयोंके कष्टोंमें गहरी दिलचस्पी ली है और हमें बहुत अधिक सहायता दी है, मेरे साथीको और मुझे सूचित करते हैं कि जनरल स्मट्स अब सीमित संख्यामें शिक्षित और सुसंस्कृत भारतीयोंके अधिवासके स्थायी प्रमाणपत्र देनेके लिए तो तैयार हैं, लेकिन सीमित संख्यामें ही क्यों न हो, वे इन भारतीयोंके ट्रान्सवालमें प्रवासके अधिकारको मान्य नहीं करेंगे। भारतीयोंका संघर्ष अधिकारके प्रश्नपर ही आरम्भ किया गया है। यद्यपि ट्रान्सवालके अधिवासी भारतीयोंको भारतसे शिक्षा-सम्बन्धी योग्यता-प्राप्त नये प्रवासी बुलानेकी आवश्यकता है, फिर भी ब्रिटिश भारतीय समाजकी सम्मतिमें, इस प्रकारकी सुविधा इतनी महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना महत्त्वपूर्ण ब्रिटिश भारतीयोंका सामान्य प्रवासी-परीक्षाके अन्तर्गत ट्रान्सवालमें आनेका सैद्धान्तिक अधिकार है। यदि एक अलग एशियाई अधिनियम, अर्थात् १९०८ का अधिनियम ३६, पास न किया जाता तो १९०७ के अधिनियम २

१. देखिए परिशिष्ट २३।

२. ६ सितम्बरको लिखा गया यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

३. यह मसविदा कुछ परिवर्तन करनेके बाद १६ सितम्बरको भेजा गया था; देखिए "पत्र : लॉर्ड मॉर्लेके निजी सचिवको", पृष्ठ ४०६-०७।

का मंसूखा ही किया जाना ऊपर बताये गये सैद्धान्तिक अधिकारकी रक्षा करने और इस प्रकार भारतकी प्रतिष्ठाको बचानेके लिए काफी होता; लेकिन आज १९०८ के अधिनियम ३६ के होनेसे शिक्षित भारतीयोंके प्रश्नका पृथक उल्लेख करना और ट्रान्सवालके वर्तमान कानूनमें थोड़ा परिवर्तन करना आवश्यक हो गया है। अगर लॉर्ड महोदयको समय हो तो मैंने उनसे भेंटका प्रस्ताव यह बतानेके लिए किया है कि जनरल स्मट्स जो-कुछ देनेके लिए तैयार हैं उसमें और ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंने जो कुछ माँगा है और अब भी माँग रहे हैं, उसमें एक आधारभूत अन्तर है।

मुझे इसमें सन्देह नहीं है कि ट्रान्सवालके प्रतिनिधि श्री पोलककी उपस्थितिसे बम्बईके लोगोंमें संघर्षके प्रति जो भारी दिलचस्पी पैदा हो गई है, इसका लॉर्ड मॉर्लेको पता होगा। मुझे प्रति सप्ताह अखबारोंकी जो कतरनें मिलती हैं, उनसे प्रकट होता है कि सभी प्रकारके विचारोंके प्रतिनिधि-अखबार इस प्रश्नके लिए काफी स्थान दे रहे हैं। श्री पोलकने प्रमुख भारतीयों और आंग्ल भारतीयोंसे भेंट की है और उन लोगोंसे उन्हें बहुत अधिक प्रोत्साहन मिला है। बम्बईकी इन गतिविधियोंसे प्रकट होता है कि उपनिवेशीय कानूनमें पहली बार भारतीय निर्योग्यताको स्थान देकर भारतका जो अपमान किया जा रहा है उससे उसे बहुत गहरी चोट लगी है और यह बिलकुल उचित भी है। और ट्रान्सवालमें एक साम्राज्यीय आदर्शकी प्राप्तिके लिए सैकड़ों ब्रिटिश भारतीय जो कष्ट उठा रहे हैं, उससे भी भारतको बहुत दुःख हुआ है।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०६६-७) से।

२६१. पत्र : लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन]
सितम्बर १४, १९०९

महोदय,

आपके ११ तारीखके पत्रके सम्बन्धमें निवेदन है कि श्री हाजी हबीब और मैं इसी १६ तारीखको दोपहर बाद ३-१५ पर लॉर्ड महोदयकी सेवामें उपस्थित होंगे।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५०७२) से।

२६२. पत्र: लॉर्ड मॉर्लेके निजी सचिवको

[लन्दन]
सितम्बर १६, १९०९

महोदय,

अपने इसी ६ तारीखके पत्रको[1], जिसमें लॉर्ड महोदयसे भेंटका प्रस्ताव था, दुबारा पढ़नेपर मुझे मालूम होता है कि मैंने स्थिति इतनी स्पष्ट नहीं रखी है कि लॉर्ड महोदयसे भेंटका प्रस्ताव उचित ठहर सके।

यद्यपि मेरे साथीको और मुझे लॉर्ड क्रू और ट्रान्सवालके मन्त्रियोंके बीच हुई बातचीतके परिणामोंकी सरकारी तौरपर कोई जानकारी नहीं मिली है; फिर भी हमारे पास यह अफवाह पहुँची है कि रियायतें दी जायेंगी; लेकिन वे हमारे उस एकमात्र लक्ष्यसे कम होंगी जिसके लिए हमने संघर्ष किया है और कष्ट सहे हैं। यह उद्देश्य है प्रवासके "अधिकार" की बहाली। हम इसके लिए तैयार हैं कि उपनिवेश-सरकार जिस सीमा तक आवश्यक या वांछनीय समझे उस सीमा तक यह अधिकार व्यवहारमें सीमित रखा जाये; लेकिन अगर हम सिद्धान्तके रूपमें इस अधिकारसे वंचित किया जाना मंजूर कर लेते हैं तो हमारी प्रतिज्ञाएँ झूठी हो जाती हैं, और हम भारतकी अप्रतिष्ठाके भागी बनते हैं। इसलिए हम ऐसा नहीं कर सकते। भारतीयोंने साम्राज्यके प्रत्येक भागमें प्रवेशके सैद्धान्तिक अधिकारका उपयोग किया है और अब भी कर रहे हैं, यद्यपि कुछ उपनिवेशोंमें व्यवहारमें यह अधिकार सीमित है। वे केवल ट्रान्सवालमें, और वह भी — पिछले दो वर्षोंमें ही, इस अधिकारसे वंचित किये गये हैं। लॉर्ड मॉर्ले संसार-भरमें ब्रिटिश उदारवादके प्रतीक माने जाते हैं, अतः हम यह विश्वास नहीं कर सकते कि यदि उन्हें इस चौंका देनेवाले तथ्यका प्रमाण मिल जाता तो वे ट्रान्सवाल सरकार द्वारा अपनाई गई इतनी प्रतिक्रियावादी और अनुदार नीतिको नज़र-अन्दाज़ कर देते। हम खुद हाजिर होकर यही प्रमाण प्रस्तुत करनेकी अनुमति माँगते हैं, क्योंकि हमें इसमें सन्देह है कि महामहिमकी सरकारने स्थितिको ठीक-ठीक समझ लिया है। यदि उसने समझ लिया होता तो वह निश्चय ही साम्राज्यमें "रंग सम्बन्धी प्रतिबन्ध" की पहली बार जानबूझकर की जानेवाली इस स्थापनाको टालनेके लिए कदम उठाती।[2]

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. यह अनुच्छेद लॉर्ड ऍम्टहिलने गांधीजीके १३ सितम्बरको भेजे गये मसविदेका दूसरा अनुच्छेद हटाकर उसकी जगह रख दिया था। उन्होंने अपने १५ सितम्बरके पत्रमें गांधीजीको लिखा था: "यह ऊपरका अनुच्छेद ज्यादा कड़ा है, लेकिन मैं चाहता हूँ कि आप सरकारकी नीतिके प्रतिक्रियावादी और अनुदार स्वरूपपर जोर दें। आपके मसविदेसे ऐसा पूरी तरह नहीं होता। आपने इस अधिकारसे वंचित किये जानेकी कार्रवाईके अभूतपूर्व स्वरूपका जो उल्लेख किया है, वह अन्तिम अनुच्छेदमें पड़कर दब गया है। वहाँ उसकी ओर निगाह नहीं भी जा सकती। मुलाकातके लिए और अगर फिर कोई पत्र लिखना पड़े तो उसके लिए भी सारी तफसील तैयार रखें। इस वक्त तो आपको इतना ही करना है कि आप लॉर्ड मॉर्लेको उनकी सरकारके अत्यन्त अनुदार कदमकी बात बता दें और कह दें कि साम्राज्यकी नीतिको इतना भ्रष्ट अबतक अन्य किसी बातने नहीं किया था। अगर आपको इस चिट्ठीपर झिड़की मिले तो बादमें आप उसे प्रकाशित करा सकते हैं, और दुनिया आपके कथनका समर्थन करनेवाले दूसरे प्रमाणोंसे खुद नतीजा निकालेगी।" देखिए अगला शीर्षक भी।

मुझे इसमें सन्देह नहीं है कि ट्रान्सवालके प्रतिनिधि श्री पोलककी उपस्थितिसे बम्बईके लोगोंमें जो भारी दिलचस्पी पैदा हो गई है, लॉर्ड मॉर्लेको उसका पता होगा। मुझे प्रति सप्ताह अखबारोंकी जो कतरनें मिलती हैं, उनसे प्रकट होता है कि सभी प्रकारके विचारोंके प्रतिनिधि अखबार इस प्रश्नको काफी स्थान दे रहे हैं। श्री पोलकने प्रमुख भारतीयों और आंग्ल भारतीयोंसे भेंट की है और उन लोगोंसे उन्हें बहुत अधिक प्रोत्साहन मिला है। बम्बईकी इन गतिविधियोंसे प्रकट होता है कि उपनिवेशीय कानूनमें पहली बार जातीय निर्योग्यताको स्थान देकर भारतका जो अपमान किया जा रहा है उससे उसे बहुत गहरी चोट लगी है और यह बिलकुल उचित भी है। और ट्रान्सवालमें एक साम्राज्यीय आदर्शकी प्राप्तिके लिए सैकड़ों ब्रिटिश भारतीय जो कष्ट उठा रहे हैं, उससे भारतको बहुत दुःख हुआ है।[1]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस एन० ५०७७) से।

२६३. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
सितम्बर १६, १९०९

लॉर्ड महोदय,

आपके इसी १५ तारीखके कृपापत्रके लिए आपको धन्यवाद। मैंने अब लॉर्ड मॉर्लेको साथकी प्रतिलिपिके[2] अनुसार पत्र लिख दिया है। मैंने बदले हुए अनुच्छेदके आरम्भमें केवल थोड़ा-सा शाब्दिक परिवर्तन किया है। "हम" के बजाय मैंने "मेरा साथी और मैं" रख दिया है। शेष ठीक श्रीमान्के मसविदे — जैसा ही रखा है।

लॉर्ड क्रू से हम आज मिल रहे हैं। मैं आपकी दी हुई कीमती सलाहको[3] ध्यानमें रखूंगा और आपको भेंटके परिणामकी सूचना दूंगा।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०७९) से।

१, इस पत्रकी पहुँच देते हुए लॉर्ड मॉर्लेके निजी सचिवने १८ सितम्बरको लिखा था: ". . .आप लॉर्ड मॉर्लेके सामने जिस मुद्देपर जोर देना चाहते थे वह उनके लिए कोई नया नहीं है। यद्यपि सूक्ष्म और सामान्य आधारोंपर इस सम्बन्धमें उनकी सहानुभूति आपके साथ है, लेकिन उन्हें नहीं लगता कि इसे उनके सामने अधिक स्पष्ट करनेसे कोई व्यावहारिक उद्देश्य सिद्ध होगा। इसलिए उन्हें खेद है कि वे आपको दूसरी मुलाकात नहीं दे सकते। लेकिन वे यह मानते हैं कि आपने अपने विचार उपनिवेश-मन्त्रीके सामने पूरी तरह रख दिये होंगे।"

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. लॉर्ड ऍम्टहिलने लिखा था: "मुझे आशा है कि जब आप लॉर्ड क्रू से मिलेंगे तो असली मुद्देपर जैसा मैंने यहाँ सुझाया है वैसे ही जोर देंगे। यह सिद्ध करनेके लिए तैयार रहें कि सैद्धान्तिक अधिकार तो असलमें सभी जगह है; क्योंकि वे इसी मुद्देपर आपसे पूछताछ करेंगे। आप मेरा नाम वहीं लें जहाँ उसके बिना काम न चल सके।"

२६४. लॉर्ड क्रू के साथ भेंटका सार[1]

[लन्दन,
सितम्बर १६, १९०९]

उपस्थित: लॉर्ड क्रू, हाजी हबीब और गांधी

लॉर्ड क्रू ने इन शब्दोंके साथ बातचीत आरम्भ की: मेरा खयाल है, लॉर्ड ऍम्टहिलका आपसे सम्पर्क रहा है और उन्होंने आपको सब-कुछ बता दिया है। मैंने आप लोगोंसे मिलनेको कहा था, ताकि मैं आपको यह बता दूँ कि बातचीतमें विलम्ब हो गया है, क्योंकि उपनिवेशके मन्त्रियोंको कई दूसरे काम करने थे। कर्नल सीली और मैं दोनों जनरल स्मट्ससे कई बार मिले। उनका रुख उचित था और वे समझौता करनेके लिए उत्सुक थे। वे कानूनको रद करना चाहते हैं, किन्तु लॉर्ड ऍम्टहिलके संशोधनको मंजूर करना नहीं चाहते। उन्होंने यह ज़रूर स्वीकार किया कि कुछ ब्रिटिश भारतीयोंको स्थायी अधिवास-प्रमाणपत्र (पर्मनेंट रेजिडेंशियल सर्टिफिकेट्स) दिये जाने चाहिए और कहा कि वे वर्तमान कानूनमें इस आशयका संशोधन करनेके लिए तैयार हैं। उन्होंने यह भी कहा कि वे अवास्तविक समानता नहीं चाहते। जनरल स्मट्स सार रूपमें जो-कुछ देनेको तैयार हैं उसे क्या आप स्वीकार नहीं कर सकते?

गांधी: मुझे भय है कि जनरल स्मट्स जो-कुछ देना चाहते हैं उससे ब्रिटिश भारतीय समाज सन्तुष्ट नहीं हो सकता। उसके बाद भी कानूनकी पुस्तकमें प्रजाति (रेस)–सम्बन्धी धब्बा रह ही जाता है।

लॉर्ड क्रू ने टोकते हुए कहा: मगर क्या आप यह नहीं मानते कि हास्यास्पद परीक्षाएँ लेकर प्रवेश-निषेध करनेकी आस्ट्रेलियाकी-सी नीति इस प्रश्नको तय करनेके लिए असन्तोषजनक है?

गांधी: मैं मानता हूँ कि वह असन्तोषजनक है, लेकिन काल्पनिक समानता अपेक्षाकृत छोटी बुराई है। और क्या स्वयं ब्रिटिश संविधानकी नींव बहुत-से काल्पनिक आदर्शोंपर रखी गई है? स्वयं मेरा पालन-पोषण भी इन्हीं परम्पराओंके बीच हुआ है। विद्यार्थी-जीवनमें ही मैंने इस प्रकारके आदर्शोंका मूल्य पहचाना था। दरअसल, काफी सोच-विचारकर मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि इन कथित अवास्तविकताओंके लिए एक बहुत उचित आधार है, और यदि जनरल स्मट्स सचमुच समझौता करनेके लिए उत्सुक हैं, और ब्रिटिश झण्डेके नीचे रहना चाहते हैं तो वे जानबूझकर ब्रिटिश संविधानमें हस्तक्षेप क्यों करेंगे — विशेषतः तब, जब कि वे जो-कुछ चाहते हैं, वह उस संविधानका उल्लंघन किये बिना प्राप्त किया जा सकता है? मैं श्रीमान्‌का ध्यान इस बातकी ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि उपनिवेशका प्रवासी कानून ताजके अधीन उपनिवेशोंके उपयुक्त कानून नहीं है, वह जनरल स्मट्सका

१. भेंटके बाद गांधीजीने स्वयं इसका सारांश लिखा; देखिए "पत्र: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ४१४। भेंटके विषयमें लॉर्ड क्रूके विवरणके लिए देखिए परिशिष्ट २४।

अपना बनाया हुआ है और उन्होंने उसमें निःसन्देह अवास्तविकताका आश्रय लिया है। कानून ऐसी धाराओंसे भरा पड़ा है।

लॉर्ड क्रू (बीचमें बोलते हुए) : मैं आपके विचारोंसे बहुत हद तक सहमत हूँ। मेरे खयालसे आप जो-कुछ कहते हैं वह बिलकुल न्यायसंगत और उचित है; लेकिन जनरल स्मट्स अंग्रेज नहीं हैं, और इसलिए वे सैद्धान्तिक समानताके खयालको भी पसन्द नहीं करते।

गांधी : यदि ऐसी बात है तो यह हमारे लिए कानूनकी किताबसे प्रजाति-सम्बन्धी धब्बेको मिटानेके लिए जोर देनेका और भी बड़ा कारण है। और इस विरोधके द्वारा, हमारा खयाल है, हम साम्राज्यकी सेवा कर रहे हैं। जैसा श्रीमानने देखा होगा, यह संघर्ष बादमें चल कर शुद्ध आदर्शोंका संघर्ष रह गया है। हमें कोई व्यक्तिगत स्वार्थ नहीं साधना है, और यदि यह प्रश्न केवल कुछ सुसंस्कृत भारतीयोंके प्रवेशका होता, तो वह समाजके कल्याणके लिए कितना ही वांछनीय क्यों न होता, जहाँतक मेरा अपना सम्बन्ध है, मैं अपने देशवासियोंको इतने कष्टोंमें डालने और उन्हें संघर्ष जारी रखनेकी सलाह देनेमें बहुत आगा-पीछा करता। यदि मैं आपका समय खराब नहीं कर रहा हूँ तो आपको यह बताना चाहूँगा कि संख्या सीमित करनेकी बात कैसे आरम्भ हुई। 'ट्रान्सवाल लीडर'के सम्पादक श्री कार्टराइटने, जो बोअरोंके मित्र हैं और सदा प्रतिनिधित्वहीन वर्गोंके मित्र रहे हैं और मेरे भी विशेष मित्र हैं, मुझसे कहा कि क्लबोंमें चर्चा यह है कि सैद्धान्तिक समानताकी आड़में मेरा कोई छुपा उद्देश्य है और दरअसल मैंने एशियाइयोंके वास्तविक प्रवेश-निषेधकी नीतिको स्वीकार नहीं किया है। श्री कार्टराइटके जो मित्र क्लबोंमें उनसे ऐसी बातें करते थे उनको वे सन्तोषजनक उत्तर दे सकें, इस खयालसे मैंने उनसे कहा था कि यदि ऐसी बात है तो वे अपने मित्रोंसे कह सकते हैं कि मैं भारतीय समाजको एक बहुत कड़ी परीक्षा स्वीकार करनेकी सलाह देनेके लिए तैयार हूँ। वह परीक्षा ऐसी कड़ी हो सकती है कि उससे लगभग छः उच्च शिक्षा प्राप्त भारतीय ही प्रति वर्ष देशमें प्रवेश कर सकें। इसलिए आप देखेंगे कि संघर्षके आरम्भसे ही, हमने भारतीयोंके प्रवेशको कभी कोई महत्व नहीं दिया है; बल्कि हम सदा कानूनी समानताके लिए लड़ते आये हैं।

लॉर्ड क्रू : लेकिन, क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि जनरल स्मट्सको अपने लोगोंसे लॉर्ड ऍम्टहिलका संशोधन मंजूर करानेमें कठिनाई हो सकती है?

गांधी : नहीं, मुझे तो नहीं लगता। मैं नहीं सोचता कि प्रगतिवादी दलसे उन्हें कोई कठिनाई हो सकती है। मुझे याद है कि सर्टिफिकेट जलानेके बाद कार्यकारिणी परिषद (एक्जिक्यूटिव कौंसिल) की बैठकमें जब हम इसी सवालपर चर्चा कर रहे थे तब सर जॉर्ज फेरारने जनरल स्मट्ससे इस कठिनाईसे निकलनेका कोई रास्ता सुझानेकी प्रार्थना की थी। लेकिन जनरल स्मट्सने कहा कि वे प्रवासी कानूनमें सुधार नहीं कर सकते। इसीलिए शिक्षित भारतीयोंके दर्जेका सवाल तय हुए बिना रह गया। उपनिवेशोंके लोग बेशक यह चाहते हैं कि आम तौरपर एशियाइयोंको आने न दिया जाये, ताकि स्पर्धासे बचा जा सके। यह नीति स्वीकृत कर ली गई है, इसलिए सैद्धान्तिक समानताके विरुद्ध उनको आपत्ति होगी, यह बात मेरी समझमें नहीं आती।

श्री हाजी हबीब : सच बात यह है कि हमें बम्बईसे प्रोफेसर गोखले और सर फीरोजशाह मेहताके दलका तार मिला है, जिसका आशय यह है कि हम दूसरे संशोधनको स्वीकार

करनेकी रजामन्दी दिखाकर उचित सीमासे ज्यादा आगे बढ़ गये हैं। उन्होंने यह भी कहा है कि इस मामलेसे भारतमें बहुत क्षोभ फैल रहा है।

गांधी : हमें जो-कुछ यहाँ हो रहा है उसके सम्बन्धमें स्वभावत: ही तार देना पड़ा। और श्री पोलकका जो पत्र मिला है उससे पता चलता है कि भारतमें प्रजातीय अपमानपर तीव्र रोष प्रकट किया जा रहा है। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि केवल ट्रान्सवालके भारतीय ही विरोध कर रहे हैं।

लॉर्ड क्रू : मैं बिलकुल सहमत हूँ और आप जो-कुछ कह रहे हैं, उसकी उपयुक्तता मेरी समझमें आती है। चूँकि मैं ट्रान्सवालके स्थानीय भारतीयोंकी माँगका औचित्य तीव्रतासे अनुभव करता हूँ, इसलिए मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ, मैंने इस प्रश्नको जनरल स्मट्सके सम्मुख साम्राज्यके प्रश्नके रूपमें रखा था। मैं स्वयं इस बातके लिए बहुत उत्सुक हूँ कि जैसे भी हो, समझौता हो जाये; किन्तु मुझे ऐसा लगता है कि हो सकता है, जनरल स्मट्स यह भी सोचें कि यदि सैद्धान्तिक समानता कायम रखी गयी तो उसका उपयोग माँगोंको बढ़ानेके लिए नये आन्दोलनके रूपमें किया जा सकता है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि उन्होंने मुझसे ऐसी कोई बात कही है।

गांधी : मैं इस प्रकारकी किसी आशंकाके उत्तरमें इतना ही कह सकता हूँ कि ट्रान्स-वालके मन्त्री जब यह समझें कि हम अपने वचनसे हट रहे हैं तब वे अधिक प्रतिबन्धकारी कानून बना सकते हैं। साथ ही मेरा कदापि यह कहना भी नहीं है कि यदि हमारी माँगें मंजूर कर ली जायें तो केवल उसीसे ट्रान्सवालमें तमाम आन्दोलन बन्द हो जायेगा। हम जो कठिनाइयाँ झेल रहे हैं, वे कुछ विशेष प्रकारकी हैं, और उनको दूर करानेके लिए नये प्रयत्न आवश्यक हो सकते हैं।

लॉर्ड क्रू : बिलकुल सही। ऐसे मामलोंमें कोई अन्तिम बात नहीं हो सकती। मैं इतना ही कहता हूँ कि यदि प्रश्न आपकी दृष्टिसे सन्तोषजनक रूपमें तय हो जाये तो कमसे-कम कुछ वर्षों तक तो चैनकी सांस लेनी चाहिए।

गांधी : मैं एक कदम और आगे जानेके लिए तैयार हूँ। जब मैंने नये आन्दोलनकी बात कही थी तब शिक्षित भारतीयोंके दर्जेके प्रश्नसे भिन्न कठिनाइयोंका जिक्र किया था। जहाँतक प्रवासके प्रश्नका सम्बन्ध है, हम एक लिखित वचन देनेके लिए तैयार हैं कि हमारी माँग पूरी हो जाये तो हम आगे कोई आन्दोलन न उठायेंगे। मैं यहाँतक कहता हूँ कि यदि कोई ऐसा अनुचित आन्दोलन होगा तो जैसा मैंने समझौतेके बाद किया था उसी तरह अपने ही देशवासियोंके विरुद्ध सत्याग्रह करनेको तैयार रहूँगा।

लॉर्ड क्रू : हाँ, मेरा ख़याल है कि यह बिलकुल ठीक है; और अब मैं जनरल स्मट्सको इस मुलाकातकी सब बातें बता दूँगा। और मुझे आशा तो है कि कोई समझौता हो जायेगा; लेकिन आपको अधिक आशा नहीं बँधाऊँगा। जनरल स्मट्सको आपका प्रस्ताव स्वीकार करनेमें कठिनाई हो सकती है। यदि उनको कठिनाई होती है तो क्या संघ-संसद (यूनियन पार्लियामेंट) की प्रतीक्षा कर लेना भी अच्छा न होगा?

गांधी : क्या मैं स्थितिको थोड़ा और साफ कर सकता हूँ? इस बीच अनाक्रामक प्रतिरोध जारी रखना पड़ेगा, और इससे कष्टकी अवधि छ: मास तक और बढ़ जायेगी। और यदि दक्षिण आफ्रिकी कानूनमें आपके कथनानुसार पेश किये गये संशोधनको मैंने

ठीक-ठीक समझा हो, तो मुझे लगता है कि संघ-संसदको प्रवासी कानूनमें संशोधन करनेका अधिकार न होगा; क्योंकि स्वयं उस कानूनके द्वारा कोई प्रजातीय निर्योग्यता नहीं लागू नहीं होती। संशोधनका लक्ष्य तो खुद वह कानून होगा जिसमें जातीय निर्योग्यताएँ रखी गयी हों।

लॉर्ड क्रू: यह ठीक है। पर मुझे केवल यह लगता है कि संघ-संसद ऐसे कष्टकी अवधि नहीं बढ़ाना चाहेगी। मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि जनरल स्मट्स भी संघर्षका लम्बा होना पसन्द नहीं करते। इसी कारण मेरा खयाल है कि संघ-संसद हस्तक्षेप कर सकती है और उचित समाधान करा सकती है। लेकिन यह जानना कठिन है कि संघ-संसदका रुख क्या होगा?

गांधी: यदि हम अभी राहत नहीं पा सकते, तो मैं जानता हूँ कि हमें प्रतीक्षा करनी पड़ेगी; हम अनिश्चित समय तक प्रतीक्षा करनेके लिए तैयार हैं। यदि बातचीत सफल नहीं होती, तो मैं यह खयाल लेकर लौटूंगा कि हमने अभी पर्याप्त कष्ट नहीं सहे हैं और इसलिए हमें अभी कष्ट सहना जारी रखना चाहिए।

लॉर्ड क्रू: बहुत अच्छा; अब मैं इस प्रश्नपर जनरल स्मट्ससे बातचीत करूँगा।

गांधी: श्रीमान जानते हैं, हम यहाँ पूरे दो महीने रह चुके हैं। क्या जनरल स्मट्सको तार देना ज्यादा अच्छा न होगा ताकि परिणाम जल्दी मालूम हो जायें?

लॉर्ड क्रू: मेरा खयाल था कि एक खरीता भेजना ज्यादा अच्छा रहेगा; लेकिन तार देना भी ठीक हो सकता है। मैं जानता हूँ कि आपको यहाँ लम्बे समय तक रहना पड़ा है।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९९५) से।

२६५. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
सितम्बर १६, १९०९

लॉर्ड महोदय,

श्री हाजी हबीब और मैं अभी-अभी लॉर्ड क्रू से मिले हैं। उन्होंने बहुत सहानुभूति प्रकट की। मेरा खयाल है, वे प्रश्नको पूरी तरह समझते हैं। मैंने यह भी देखा कि जब-जब मैं सोचकर कोई मुद्देकी बात उठाता था, तभी लॉर्ड क्रू बीचमें कह उठते थे यह बात उन्होंने आपसे सुन ली है। मेरा विश्वास है, वे यह भी अनुभव करते हैं कि सैद्धान्तिक समानताके प्रश्नपर हमारे दृष्टिकोणके पक्षमें कहनेको बहुत-कुछ है।

उन्होंने हमारी भेंटका परिणाम तारसे जनरल स्मट्सको भेजनेका और आपके द्वारा रखे हुए मेरे संशोधनको स्वीकार कर लेनेके लिए उनपर जोर देनेका वचन दिया है।

हमने उनका ध्यान इस ओर भी आकर्षित किया कि भारतमें इस सम्बन्धमें बहुत रोष है। उन्होंने उत्तर देते हुए स्वीकार किया कि यह प्रश्न साम्राज्यका प्रश्न है और इसे साम्राज्यका प्रश्न ही माना जाना चाहिए।[1]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०७८) से।

१. लॉर्ड ऍम्टहिलके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट २५।

२६६. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
सितम्बर १६, १९०९

प्रिय हेनरी,

मैं नहीं समझता कि आपको वेस्ट और उनकी बीमारीकी खबर अवतक फीनिक्ससे मिली होगी। वेस्टको भयंकर निमोनिया हो गया था। उनकी हालत ऐसी थी कि एक वार तो लोग उनके वचनेकी आशा भी छोड़ वैठे थे। कुमारी वेस्ट भी टायफाइडसे पीड़ित थीं।[1] उन दोनोंकी देखभाल डॉ० नानजोने की। यह समाचार वहुत चिन्ताजनक था। लेकिन मणिलालने मुझे लिखा है कि अगर यह चिट्ठी मेरे पास पहुँचने तक वे दोनों अच्छे न हुए तो मेरे पास तार पहुँच जायेगा। चूँकि मुझे तार नहीं मिला है, इसलिए मैं यह माने लेता हूँ कि वे दोनों अव विलकुल ठीक हो गये हैं। लेकिन इन वीमारियोंसे प्रकट होता है कि फीनिक्सके इन्तजाममें कुछ गड़वड़ी है। मैं एक लम्वी चिट्ठी[2] लिखकर वेस्ट और कॉर्डिज़से इस मामलेमें पूरी छानवीन करनेको कह रहा हूँ। कैलेनवैककी चिट्ठी मिली है, उससे मालूम होता है कि वे अभी डर्वनमें ही हैं। मैं देखता हूँ कि छगनलाल और मणिलालने वेस्टकी सार-सँभाल वहुत प्रेमसे की है। रातमें दोनों वारी-वारीसे उनकी देख-भालके लिए जागे हैं। कैलेनवैकने मणिलालकी सेवाकी वहुत सराहना की है। इस सवसे यही प्रकट होता है कि फीनिक्सके रहन-सहनसे उसके निवासियोंमें निश्चय ही सर्वोत्तम गुणों-का विकास हुआ है। स्वाभाविक ही है कि इन हालतोंमें छगनलालने अपनी रवानगी स्थगित कर दी। उसने मुझे लिखा है कि वह जवतक चिट्ठी न दे तवतक उसे मैं भारतके पतेपर नहीं, फीनिक्सके पतेपर ही पत्र लिखूँ। मुझे इस वातका खेद है कि अभी आपको विश्वस्त और टिक रहने वाले सेक्रेटरीके विना रहना पड़ेगा। फिर भी छगनलालने वेशक ठीक किया है।

मुझे आपका तार मिल गया। एक वहुत अच्छा तार 'टाइम्स' में भी छपा है। मैं आपको उसकी नकल भेज रहा हूँ। साफ है कि आपकी सभा[3] वहुत सफल हुई। आपने हद कर दी है। मुझे आपसे यही आशा थी। सभा लॉर्ड क्रू के दिये हुए समयसे [illegible] पहले हुई। मैं यह पत्र उनसे मिलनेसे पहले लिख रहा हूँ। आज गुरुवार है। हम उनसे सवा तीन वजे मिल रहे हैं। इसलिए मैं तुम्हें भेंटका पूरा हाल भेज सकूँगा। मुझे खुशी है कि कमसे-कम कुछ चन्दा तो हो ही जायेगा। उससे ट्रान्सवालकी लड़ाईके लिए लोगोंको शक्ति मिलेगी। मुझे विश्वास है कि आपने हर जहाजको देखने और निर्वासित भारतीयोंको

१. अक्तूबर ७ को मद्राससे पोलकने लिखा था: "मुझे फीनिक्सकी मुसीवतोंका समाचार मिल गया है। कॉर्डिज़ने उनका सजीव वर्णन किया है।"

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. वम्बईमें हुई सार्वजनिक सभा।

लिवा लानेकी व्यवस्था कर दी होगी। मुझे यह भी आशा है कि मनजीके[1] पुत्र और दूसरे लोग मिल गये होंगे। ये लोग आपके उतरनेसे पहले भारत पहुँच चुके थे। अगर उन सबका पता न लगा हो तो आप काठियावाड़ और सूरतमें किसीसे चिट्ठी-पत्री करके निर्वासितोंके नाम और हाल-चाल मालूम कर लेना।

अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके श्री अली इमाम यहाँ हैं। मैं अभी उनसे नहीं मिला हूँ। लेकिन हमारे नेटालके मित्र मिल चुके हैं। वे उनकी बहुत प्रशंसा करते हैं। वे शायद आपके वहाँ रहते ही लौट जायेंगे। वे पटनामें बैरिस्टरी करते हैं। आशा है, आप उनसे मिल लोगे। जरूरत हो तो पटना और अलीगढ़ भी जाना।

यद्यपि संयुक्त कार्रवाई की जा सकती है, फिर भी अंजुमनोंसे अलग-अलग कार्रवाई भी कराई जाये। इस बातपर जोर दिया जाये कि दक्षिण आफ्रिकामें मुसलमानोंके स्वार्थ बहुत ज्यादा हैं।[2]

मैंने जो नवीनतम संशोधन सुझाया है उसका आपने बहुत ठीक अर्थ लगाया है। मैं स्वयं इससे ज्यादा साफ नहीं बता सकता था। पुरस्कार-वितरण समारोहका जो हाल आपने लिखा है वह बहुत मनोरंजक है। आप इस परीक्षामें से निकल गये, यह अच्छा हुआ। गुजरातीके अखबारोंने, खास तौरसे एकने, लिखा है कि आपने मुझे कवि बताया है। कल्याणदाससे कह दें कि वह मुझे पत्र अवश्य लिखे।

मिली माताजीके साथ वेस्टक्लिफ गई हैं; वे अगले मंगलको लौटेंगी। मेरे खयालमें आपको वाल्डोके बारेमें तनिक भी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है। मैंने इस मामलेको इतना गम्भीर नहीं समझा कि इसके लिए डॉक्टरकी सलाह लेनेकी जरूरत हो। मुझे बच्चोंके शरीरको दवाओंका घर बनानेसे नफरत है। लेकिन डॉ० मेहता यहाँ जल्दी ही आ रहे हैं। अगर उनके पास औजार न होंगे तो मँगा लूँगा और उनसे वाल्डोको दिखवा लूँगा। मेरा खयाल है, डॉक्टर मेहताकी योग्यताके बारेमें मैं आपको बता चुका हूँ। वे बहुत ही योग्य हैं। कुछ भी हो, वे मुझे ठीक-ठीक बता देंगे कि क्या खराबी है। वे उचित समझेंगे तो नुस्खा भी लिख देंगे। उसे हम जरूरत होनेपर काममें ला सकते हैं। मैं इतवारके दिन सीलिया और एमीको वेस्टक्लिफ भेजनेका विचार कर रहा हूँ; वहाँसे वे उसी दिन लौट आयेंगी। मिली और मैं पिछले इतवारको श्रीमती रिचको देखने गये थे। सैलीने मुझे होटलसे क्रिकिलवुड तक घुमाया। इसमें आराम-आरामसे एक घंटा चालीस मिनिट लगे। इससे मैंने सैलीको कुछ ज्यादा पहचाना। इस बारेमें ज्यादा बातें मिलनेपर करेंगे। श्रीमती रिचकी हालत धीरे-धीरे ही सुधर रही है। मेरी रायमें रिचके सम्बन्धमें क्या किया जाना चाहिए, यह आप पिछले हफ्ते कैलेनबैकको भेजे मेरे पत्रकी[3] नकलसे देख लेंगे। मेरे खयालसे हमें ऐसी कमेटीकी जरूरत नहीं है कि जिसके लिए हर साल ५०० पौंड खर्च करने पड़ें। अगर कमजोर लोगोंको उसकी जरूरत है तो वे उसे रखें। मेरे दिमागमें एक योजना घूम रही

१. एक सत्याग्रही मनजी नाथूभाई घेलानी।

२. अपने उत्तरमें पोलकने गांधीजीको लिखा था: "अंजुमन स्वतन्त्र रूपसे भी कार्यवाही कर रही हैं। मैं भी मुसलमानोंके कष्टों और उनके हितोंपर ज्यादा जोर देता रहा हूँ। अंजुमनने वाइसरॉयसे ट्रान्सवालकी जेलोंमें होनेवाले अत्याचारों और रमजानके विषयमें भी विरोध किया।"

३. यह उपलब्ध नहीं है।

है। इस योजनाके अनुसार हम लन्दनमें बहुत कम रुपया खर्च करके कुछ काम कर सकते हैं, यद्यपि वह काम रिचके कामके बराबर अच्छा कभी नहीं हो सकता। जब मैं इसे विस्तृत रूपसे तैयार कर लूंगा और आपके साथ विचार-विमर्श करूँगा तो मुझे विश्वास है, आप इसे खूब पसन्द करेंगे।

लॉर्ड ऐम्टहिलसे की गई चिट्ठी-पत्रीकी नकलसे आपको मालूम हो जायेगा कि वे अभीतक किस पूर्णतासे काम कर रहे हैं।

बादमें लिखाया — शुक्रवार [सितम्बर १७, १९०९]

हम अब लॉर्ड क्रू से मिल चुके हैं। भेंटका परिणाम लॉर्ड ऐम्टहिलको भेजे गये पत्रमें[1] दिया गया है। उसकी नकल साथमें भेज रहा हूँ। इसलिए अब कष्टकी मियाद और लम्बी हो गई है।

मैंने सोचा था कि लॉर्ड क्रू के साथ जो भेंट हुई है उसका सार लिख लेना ज्यादा ठीक होगा, इसलिए मैं आपको इसकी नकल भेज रहा हूँ; या यों कहें कि डाकके समय तक पूरा कर सका तो भेज दूंगा।

मुझे यह नहीं मालूम है कि जो तार मुझे भेजे जा रहे हैं उनकी दूसरी नकल आपको भेजी जाती है या नहीं। कुछ भी हो, इस हफ्ते जो तार मिले हैं उनकी नकलें मैं आपको भेज रहा हूँ। पहला तार आपको लॉर्ड क्रू को भेजे गये पत्रकी[2] नकलमें मिलेगा। दूसरा चीनी संघका है। वह इस तरह है:

> **अध्यक्ष सहित ८० चीनी गिरफ्तार। पूरी सामर्थ्यसे अनाक्रामक प्रतिरोध करनेका संकल्प और अधिक दृढ़। चीनी संघ।**

दूसरा तार इसी १६ तारीखका है। उसमें कहा गया है:

> **कलकी सभा जोशीली। लड़ाई जारी रखनेका दृढ़ संकल्प। प्रस्तावोंमें रिहा लोगोंको बधाई, प्रतिनिधियोंपर पूर्ण विश्वासकी पुनराभिव्यक्ति, उनके प्रयत्नोंकी हार्दिक सराहना, पूर्ण समर्थनकी पुनः प्रतिज्ञा, बरनॉनके उस वक्तव्यका विरोध जो सरकार द्वारा खण्डन न होनेकी स्थितिमें एशियाइयोंकी दृष्टिमें सरकारी नीतिका द्योतक। रमजानमें मुसलमान कैदियोंको विशेष भोजन देनेकी प्रार्थना नामंजूर।**

मैं इन तारोंके आधारपर लॉर्ड क्रू को एक पत्र भेज रहा हूँ।[3] कह नहीं सकता कि उस पत्रकी नकल भी आपको भेज सकूंगा या नहीं। शायद वक्त न रहे।

पिछले हफ्ते जोहानिसबर्गसे एक चिट्ठी मिली है। इस चिट्ठीका एक अनुच्छेद नीचे दिया है। मैं इसे लॉर्ड क्रू को भेज रहा हूँ; लेकिन बहुत सचेत होकर ही। अगर आप इसका उपयोग करें तो कृपाकरके बहुत सावधान रहना। इसे छापना नहीं। हाँ, खास-खास कार्यकर्ता यह जान सकते हैं कि ट्रान्सवालकी जेलोंमें क्या हो रहा है। मेरी रायमें खबर कुछ बढ़ाकर दी गई है। लेकिन, जिस तमिलकी बात है उससे निर्दयताका बरताव किया गया

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ३९८-९९।
३. देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ४२१-२२।

होगा। मैंने स्वयं जो-कुछ देखा है, उसके आधारपर मैं इसपर पूरा विश्वास करता हूँ। वैसे ही कारणसे एक वतनी कैदीकी करीव-करीव जान ले ली गई थी। उसके शरीरसे इतना ज्यादा खून वहा था कि मैंने तमाम गलियारेमें उसके खूनके निशान देखे थे। मेरी समझमें नहीं आता कि वह लड़का कैसे वचा होगा।

> एक दिन कड़ाकेकी सर्दीमें लोगोंको नहानेका हुक्म दिया गया। एक आदमी नहाना नहीं चाहता था। इसलिए चार वतनी वार्डरोंसे कहा गया कि वे उसको रगड़ें। इसके अनुसार उन्होंने उस आदमीको पकड़कर हौजमें डुवा दिया और एक व्रशसे इतने जोरसे रगड़ना शुरू किया कि उसके शरीरसे खून निकलने लगा। संयोगसे उस समय वहाँसे अस्पतालका एक अर्दली जा रहा था। उसने वतनियोंको रोका और वह व्यक्ति अस्पताल ले जाया गया। वहाँ उसका इलाज कराया गया। यह वरताव के० के० सामीके साथ किया गया था, लेकिन चूँकि इस समाचारकी सरकारी रूपसे पुष्टि नहीं हुई है; इसलिए स्वभावतः हम इसके सम्वन्धमें कार्रवाई नहीं कर सकते। मुझे मालूम हुआ है कि उस व्यक्तिने इस वारेमें जेलके गवर्नरसे शिकायत की थी।

मैंने आपकी पुस्तिकाओंको पर्याप्त सावधानीसे पढ़ लिया है। मैं आपको उनके सम्वन्धमें लिखना चाहता हूँ; लेकिन लगता है, इस सप्ताह नहीं लिख सकूँगा।

जैसा हमने जोहानिसवर्गमें किया था,[1] मैं "अनाक्रामक प्रतिरोध"की नैतिकतापर सर्वोत्तम निवन्धकी विज्ञप्ति देनेका गम्भीरतासे विचार कर रहा हूँ। लेकिन मुझे इस मामलेमें डॉ० मेहतासे सलाह करनी है। अगर वे पुरस्कार देंगे तो हम विज्ञप्ति दे देंगे। लेकिन हम ऐसा तभी करेंगे जव लॉर्ड क्रू से वातचीत असफल हो जायेगी।

श्री डोककी पुस्तक अभीतक प्रकाशित नहीं हुई है; अक्तूवरके प्रथम सप्ताहमें प्रकाशित होनेकी सम्भावना है। मैं कुछ कारणोंसे, जिन्हें इस सप्ताह वतानेकी आवश्यकता नहीं है, कितावका पूरा संस्करण खरीद लेनेकी वात सोच रहा हूँ; और इसमें मुझे और किसी वातसे श्री डोकका ही खयाल ज्यादा है। वे सर्वथा असफल हो सकते हैं। अगर ऐसा हुआ तो उन्हें वहुत दुःख होगा। प्रकाशकने इसपर पूरा ध्यान नहीं दिया है, और चूँकि इसकी वहुत-सी प्रतियाँ मुफ्त वाँटनी होंगी, मैं सोचता हूँ कि अपनी व्यक्तिगत भावनाओंको एक ओर रखकर इस कामको स्वयं करूँ। मेरा खयाल है, अगर कोई घाटा होगा, तो डॉ० मेहता उसे पूरा करनेका जिम्मा ले लेंगे। मैंने इस मामलेमें उनसे पत्र-व्यवहार किया है। इसलिए आप कोई ऐसा पुस्तक-विक्रेता खोज सकते हैं जो किताव ले ले। सर्वोत्तम यह रहेगा कि कल्याणदास या छगनलालके भाई या वे दोनों इस कितावको लेकर वहुत-से लोगोंके पास स्वयं जायें। कुछ भी हो, आप किताव ऐसे किसी भी पुस्तक-विक्रेताको उधार न दें, जिसपर आप पूरा विश्वास नहीं कर सकते।[2]

मैंने आपको आज तार दिया है।[3] मुझे लगता है कि अगर उस ओरसे लगातार दवाव डाला गया तो सम्भव है कि वातचीतमें सफलता मिल जाये। अव लॉर्ड क्रू को प्रश्नके

१. देखिए खण्ड ७, पृष्ठ ५।

२. पोलकने लिखा था, "नटेसन यहाँके पुस्तक-विक्रेताओंके लिए २५० प्रतियाँ ले रहे हैं। जव छगनलाल आयें तो वह वम्बईमें पूछताछ कर लेंगे। किसी भी अविश्वसनीय पुस्तक-विक्रेताको उधार नहीं दिया जायेगा।"

३. यह उपलब्ध नहीं है।

सम्बन्धमें सब कुछ मालूम हो गया है और यदि उदारदलीय मन्त्रिमण्डल जल्दी ही समाप्त न हो गया तो कुछ किया जा सकता है।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१०४ अ) से।

२६७. शिष्टमण्डलकी यात्रा [-१२]

[सितम्बर १६, १९०९ के बाद]

मैं इस बार ऐसा तो लिख नहीं सकता कि हम जहाँ थे वहींके-वहीं हैं। हम लॉर्ड क्रू से १६ तारीखको मिले। उन्होंने कहा कि जनरल स्मट्स कानूनको रद करने और अमुक संख्यामें शिक्षितोंको स्थायी निवासके अनुमतिपत्र (परमिट) देनेकी बात मंजूर करते हैं। किन्तु यह बात उनके गले नहीं उतरती कि भारतीय शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षामें उत्तीर्ण होकर अधिकारपूर्वक दक्षिण आफ्रिकामें आयें। इसलिए हमने जवाब दिया कि जबतक [प्रवेशका] अधिकार नहीं मिलता तबतक लड़ाई तो जारी ही रहेगी। जबतक यह अधिकार नहीं मिल जाता, तबतक भारतकी प्रतिष्ठा नहीं होगी। लड़ाई ट्रान्सवालके भारतीयोंके व्यक्तिगत अधिकारकी रक्षाकी नहीं, बल्कि भारतकी प्रतिष्ठा की है। कानूनमें समान अधिकार रखनेके बाद भले ही व्यवहारमें वे न दिये जायें। उसको सहन किया जा सकता है। किन्तु कानूनमें अधिकार न देना तो भारतीयोंकी नाक काट लेनेके समान होगा। बहुत बहसके बाद लॉर्ड क्रू ने यह मंजूर किया कि हमारी लड़ाई शुद्ध और अधिकार-सम्बन्धी है। उन्होंने जनरल स्मट्सको तार देना स्वीकार किया है। अब उत्तर क्या आता है, यह देखना है। इससे ज्यादा क्या हो सकता है? हमने लॉर्ड क्रू से साफ कह दिया है कि यदि जनरल स्मट्स हमारी माँग स्वीकार न करेंगे तो हम समझेंगे कि अभी हमने पर्याप्त कष्ट नहीं उठाये हैं, पर हम और भी कष्ट उठानेके लिए तैयार हैं।

उक्त बातचीत करते-करते भारतमें जारी संघर्षके सम्बन्धमें भी बात हुई। ऐसा दिखाई देता है कि श्री पोलक भारतमें जो दौड़-धूप कर रहे हैं उससे [हमारे मामलेको] बहुत बल मिल रहा है। बम्बईकी विराट् सभाका तार यहाँके अखबारोंमें बहुत अच्छी तरह छापा गया था। उसके अनुसार सभामें [सरकारसे] माँग की गई कि गिरमिटियोंको नेटाल भेजना बन्द किया जाये। श्री पोलकके भाषणसे लोग बहुत आवेशमें आये। नागप्पनकी मृत्युकी खबरसे भी वे बहुत क्षुब्ध हुए। इसके अलावा, जो लोग निर्वासित किये गये हैं उनकी सहायताके लिए चन्दा भी शुरू किया गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह सभा बहुत ही अच्छी हुई।

जोहानिसबर्गसे चीनियोंकी गिरफ्तारी, जेलवासियोंके लिए रमजानमें खानेका खास इन्तजाम न करने और श्री वरनॉनकी आलोचनाके बारेमें जो तार आये हैं वे भी शुभ हैं। इसमें शक नहीं कि हमारे ऊपर ज्यों-ज्यों ज्यादा तकलीफें आती हैं, हम त्यों-त्यों ज्यादा दृढ़ होते जाते हैं और त्यों-त्यों हमें [संघर्षमें] सहयोग मिलता है। हम स्वयं कष्ट उठा रहे हैं, लॉर्ड क्रू भी इसीलिए हमारे वास्ते डटकर प्रयत्न कर रहे हैं।

लॉर्ड क्रू ने यह भी कहा है कि यदि कहीं जनरल स्मट्स हमारी माँग मंजूर न करें तो हमें संघ-संसद (यूनियन पार्लियामेंट)की राह देखनी चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि हमें संसदकी बैठक होने तक लड़ाई जारी रखना है। यदि हम लड़ाई बन्द कर देंगे तो समस्त दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी हालत बुरी हो जायेगी और जैसा श्री रुस्तमजीने कहा है, हम सारे भारतकी नाक अपने हाथसे काटेंगे और कायर भी साबित होंगे।

किन्तु मुझे यह कहनेमें जरा भी संकोच नहीं है कि जो भारतीय इस समय बहादुरी दिखा रहे हैं वे ऐसे हैं कि मृत्युपर्यन्त लड़ते रहेंगे। मुझे आशा है कि जो भाई जेलसे छूटे हैं वे जेल जानेके लिए तैयार ही हैं और जब सरकार गिरफ्तार करेगी तब जेलका स्वागत करेंगे। मैं आशा करता हूँ कि श्री दाउद मुहम्मद भी इस पत्रके पहुँचने तक जेलमें विराजते होंगे। मेरे विचारसे हमारा जेलमें रहकर मरना जेलके बाहर तन्दुरुस्त रहकर जीनेसे अच्छा है। ऐसा करनेसे हमारी इज्जत रहती है, और उसीमें भारतकी सेवा है। यह समय दुःख करनेका नहीं बल्कि कष्टोंके लिए बधाई देनेका है। जिस देशमें निर्दोष लोगोंपर गुलामी लादी जाती हो, उन्हें सजा दी जाती हो, उस देशमें सभी अच्छे लोगोंको जेलमें ही आनन्द और सुख मानना चाहिए। यह विचार प्रत्येक भारतीय वीरको अपने मनमें अंकित कर लेना है।

मैं पहले बता चुका हूँ कि यदि जनरल स्मट्सका जवाब निराशाजनक होगा तो हमें यहाँ कुछ समय तक सार्वजनिक सभा आदि करके फिर जेल जानेके लिए दक्षिण आफ्रिका वापस पहुँच जाना चाहिए। इस बीच यह भी विचार करना है कि हमें भारत जाना चाहिए या नहीं। इस सम्बन्धमें मैं स्वयं तो कोई निश्चित निर्णय नहीं कर सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१०-१९०९

२६८. पत्र : मणिलाल गांधीको

[लन्दन]
सितम्बर १७, १९०९

चि० मणिलाल,

श्री वेस्टके सम्बन्धमें तुम्हारा पिछली २१ तारीखका पत्र पढ़कर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। इस पत्रको मैंने दो बार पढ़ा है। मुझे तुम्हारे ऊपर गर्व हुआ और मेरे ऐसा पुत्र है, इसके लिए मैंने ईश्वरका अनुग्रह माना। मैं कामना करता हूँ कि तुम सदा ऐसे ही बने रहो। खरी शिक्षा यही है कि परोपकार किया जाये, दूसरोंकी सेवा की जाये, और ऐसा करनेमें मनमें जरा भी अभिमान न लाया जाये। तुम ज्यों-ज्यों उम्रमें बड़े होते जाओगे, त्यों-त्यों तुम्हें इसका अधिक अनुभव होता जायेगा। रोगियोंकी सेवाके मार्गसे अच्छा मार्ग दूसरा क्या होगा? इसमें बहुत-कुछ धर्म आ जाता है।

श्री वेस्टको चूज़ेका शोरवा और दूसरी चीजें दी गई, इस बारेमें हमें निष्पक्ष बुद्धि रखनी चाहिए। मेरे विचार तो तुम्हें मालूम हैं। शोरवा[1] दिये बिना बाका शरीरपात होता तो वह मुझे मंजूर था; लेकिन बा की अनुमति बिना मैं तो उन्हें शोरवा हरगिज न देने देता। देह आत्मासे प्यारी न होनी चाहिए। जो मनुष्य आत्माको जानता है और देहसे आत्माके अलग होनेकी वात भी जानता है, वह हिंसात्मक उपायोंसे देहकी रक्षा न करेगा। यह काम बहुत मुश्किल है; लेकिन जिसके संस्कार बहुत पवित्र हैं वह इस बातको सहज ही समझता है और उसपर आचरण करता है। यह मान्यता बहुत भूल-भरी है कि आत्मा देहमें रहकर ही भला या बुरा कर सकती है। इस मान्यताके कारण संसारमें घोर पाप हुए हैं और अब भी हो रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि तुम इस मान्यतासे मुक्त रहो। आत्मज्ञान बड़ी आयु पाकर ही होता हो, यह कोई नियम नहीं है। बहुत-से वृद्ध आत्मज्ञानके बिना ही मर जाते हैं। दूसरी ओर स्वर्गीय रायचन्दभाई जैसे पुरुष आठ वर्षकी आयुमें ही आत्माको पहचान सके हैं। आत्मज्ञान होनेपर भी मनुष्यसे भूलें होती हैं, पाप होता है। परन्तु इस सबसे बहुत विचार करनेपर छुटकारा हो सकता है। देह हमें दमन करनेके लिए ही मिली है।

समझौतेका अभी कोई निश्चय नहीं है। इस बारेमें विशेष छगनभाईके पत्रमें[2] देखना। ऊपर जो-कुछ लिखा है वह प्रसंगवश ही है। इसे दूसरे भाइयोंको भी पढ़ा देना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ८९) से।
सौजन्य: सुशीलाबेन गांधी।

२६९. पत्र: नारणदास गांधीको

लन्दन
सितम्बर १७, १९०९

चि० नारणदास,

चि० छगनलालका पत्र आया है। उससे देखता हूँ कि वह अभी वहाँ न आ सकेगा, क्योंकि श्री वेस्ट अचानक सख्त बीमार हो गये हैं। जैसे राम रखेगा वैसे रहना पड़ेगा। फिर हर्ष-विषाद क्या करें? तुम मुझे पत्र लिखते रहना। अभी समझौतेकी बात चल ही रही है। यह नहीं कहा जा सकता कि इसका परिणाम क्या होगा।

श्री खुशालभाईको और देवभाभीको दण्डवत्।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ४८९७) से।
सौजन्य: नारणदास गांधी।

१. यहाँ कस्तूरबाकी उस गम्भीर बीमारीका उल्लेख है जिसमें डॉ० नानजीने उनको गोमांसकी चाय दी थी। देखिए आत्मकथा, भाग ४, अध्याय २८।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

२७०. भारतीय मुस्लिम लीगकी लन्दन शाखाको लिखे पत्रका मसविदा

[लन्दन
सितम्बर १७, १९०९के बाद]

मन्त्री
अखिल भारतीय मुस्लिम लीग
लन्दन शाखा

प्रिय महोदय,

ट्रान्सवालके शिष्टमण्डलको जोहानिसबर्गसे नीचे लिखा तार मिला है :

कलकी सभा जोशीली। लड़ाई जारी रखनेका दृढ़ संकल्प। प्रस्तावोंमें रिहा लोगोंको बधाई, प्रतिनिधियोंपर पूर्ण विश्वासकी पुनराभिव्यक्ति, उनके प्रयत्नोंकी हार्दिक सराहना, पूर्ण समर्थनकी पुनः प्रतिज्ञा, बरनॉनके उस वक्तव्यका विरोध जो सरकार द्वारा खण्डन न होनेकी स्थितिमें एशियाइयोंकी दृष्टिमें सरकारी नीतिका द्योतक। रमजानमें मुसलमान कैदियोंको विशेष भोजन देनेकी प्रार्थना नामंजूर।

मैं आपका ध्यान विशेष रूपसे इस तारके आखिरी अनुच्छेदकी ओर दिलाता हूँ। इससे प्रकट होता है कि जो ब्रिटिश भारतीय मुसलमान ट्रान्सवालमें बस गये हैं और जिन्हें धर्म और विवेकके आधारपर एशियाई कानूनके नामसे प्रसिद्ध कानूनकी अवहेलना करने और अपने इस कार्यके लिए कैद भुगतनेकी जरूरत महसूस हुई है, उनकी धार्मिक भावनाओंको ट्रान्सवालकी सरकारने गहरी ठेस पहुँचाई है।

जो ब्रिटिश झण्डा सब धर्मोका सम्मान करता है, उसीके नीचे मुसलमान अनाक्रामक प्रतिरोधियोंको एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण धार्मिक व्रतका पालन करनेसे रोका जा रहा है। यह एक गम्भीर मामला है। मुझे आशा है कि लीग इस बारेमें फौरन कार्रवाई करेगी।

मैं यह भी बतला दूं कि पिछले साल फोक्सरस्टकी जेलमें रमजानके महीनेमें मुसलमान अनाक्रामक प्रतिरोधियोंको सुविधाएँ दी गई थीं।

आपका, आदि,

टाइप किये हुए अंग्रेजी मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१७९) से

२७१. लन्दन

[सितम्बर १८, १९०९ से पूर्व]

नेटालका शिष्टमण्डल

नेटालके सज्जनोंने अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके नेता बैरिस्टर अली इमामसे मुलाकात की। इमाम साहबने मदद देनेका वादा किया है। अगले हफ्ते वे ट्रान्सवालके सम्बन्धमें भी कैफियत सुनेंगे। न्यायमूर्ति अमीर अली जलवायु-परिवर्तनके लिए गये थे; वे अब वापस आ गये हैं। उन्होंने भी पूरी मदद करनेका वचन दिया है। शिष्टमण्डलने लॉर्ड क्रू से जो उत्तर माँगा था वह मिल गया है। उसमें लॉर्ड क्रू कहते हैं:

> जो कष्ट वर्तमान कानूनके अमलसे उत्पन्न होते हैं या जो कष्ट वर्तमान कानूनमें परिवर्तन करनेसे ही दूर हो सकते हैं, उनके सम्बन्धमें ब्रिटिश सरकार नेटाल सरकारसे सिर्फ सिफारिश कर सकती है। वह उनके सम्बन्धमें पूरा हस्तक्षेप नहीं कर सकती। लेकिन यदि नये कानूनमें कोई ऐसी बात हो तो उसको नामंजूर करनेका हक ब्रिटिश सरकारको हासिल है। नेटालमें भारतीयोंपर जो कष्ट आते हैं उनके सम्बन्धमें ब्रिटिश सरकारकी सहानुभूति भारतीयोंके साथ है। बड़ी-बड़ी शिकायतोंके सम्बन्धमें, जैसे विक्रेता-परवाना अधिनियम (डीलर्स लाइसेंसेज ऐक्ट) में अपीलका हक न होनेके सम्बन्धमें, वह नेटाल-सरकारको लिख भी चुकी है। इसके अलावा [भारतीयोंके] व्यापारको हानि पहुँचानेवाला जो कानून मंजूर किया गया है, उसपर दस्तखत करनेसे साम्राज्य सरकारने इनकार कर दिया है। अब भविष्यके सम्बन्धमें साम्राज्य सरकार आशा करती है कि संघ-संसद (यूनियन पार्लियामेंट), जिसको भारतीयों और दूसरे काले लोगोंके सम्बन्धमें कानून बनानेका अधिकार दिया गया है, ज्यादा उदारता दिखायेगी और भारतीयोंको राहत मिलेगी।

यह उत्तर अत्यन्त निराशाजनक है। इसमें अब फिर नेटाल सरकारको लिखनेका वचन नहीं दिया गया है। संघ-संसदके हाथमें सिर्फ लोगोंपर लागू होनेवाले कानून बनानेका विषय रहता है; किन्तु चूंकि विक्रेता-परवाना अधिनियम (डीलर्स लाइसेंसेज़ ऐक्ट) नामके लिए सब-पर लागू होता है, इसलिए उसमें नेटालकी संसद ही बहुत-कुछ परिवर्तन कर सकती है। अतः संघ-संसदकी कार्रवाईका लालच व्यर्थ है। फिर भारतीयोंको गिरमिटके अन्तर्गत भेजना बन्द करनेकी माँगके सम्बन्धमें कुछ भी उत्तर नहीं दिया गया है। इससे शिष्टमण्डलने लॉर्ड क्रू से फिर उत्तर माँगनेका विचार किया है। इस सम्बन्धमें ऊपर लिखे अनुसार पत्र[1] भी तैयार किया गया है। अब शिष्टमण्डल सर मंचरजी और न्यायमूर्ति अमीर अली आदि सज्जनोंकी सलाह लेकर उस जवाबको भेज देगा।

रमजान शरीफ शुरू होनेसे श्री हाजी हबीब और अन्य सज्जन रोजे रख रहे हैं। वे सब हालमें डॉक्टर अब्दुर्रहमानकी बहनके घर रहने चले गये हैं। इस प्रकार उनके लिए रमजान मनानेकी पूरी सुविधा है।

१. देखिए परिशिष्ट २६।

पटेटी और पारसी सत्याग्रही

सोमवारको पारसियों की पटेटी[1] थी। इसलिए उसको मनानेके लिए यहाँके मुख्य पारसी सज्जन और महिलाएँ टेम्स नदीके तटपर एक होटलमें दावतके लिए गये थे। उसमें सर मंचरजी भावनगरीकी मार्फत ट्रान्सवाल और नेटालके प्रतिनिधि भी निमन्त्रित किये गये थे। लगभग पचास सज्जन उपस्थित थे। सर मंचरजी अध्यक्ष थे। इस मण्डलीमें भारतके पितामह दादाभाई नौरोजीकी दो पोतियाँ भी थीं। जब टोस्ट लेकर शुभकामना प्रकट करनेकी बारी आई तो श्री गांधीने पारसी जातिके टोस्टमें सर मंचरजीके साथ श्री रुस्तमजी, श्री सोराबजी, श्री शापुरजी राँदेरिया और नादिरशा कामाके नाम भी लेनेकी सलाह दी। इसका सभामें स्वागत किया गया। अन्य प्रतिनिधियोंमें से श्री आंगलिया ही उपस्थित थे। उन्होंने भी अवसरके अनुरूप भाषण देते हुए सर मंचरजीको उनके प्रयत्नोंके लिए धन्यवाद दिया। भारतकी इस दुःख-गाथाको सबने ध्यानसे सुना और उससे सबके मनमें सहानुभूति उत्पन्न हुई।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१०-१९०९

२७२. पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन]
सितम्बर १८, १९०९

महोदय,

निम्न तार जोहानिसबर्गसे मिले हैं, पहला चीनी संघकी ओरसे, और दूसरा ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे:

पहला तार

जोहानिसबर्ग
सितम्बर, १६, १९०९

अध्यक्ष सहित ८० चीनी गिरफ्तार। पूरी सामर्थ्यसे अनाक्रामक प्रतिरोध करनेका संकल्प और अधिक दृढ़।

दूसरा तार

जोहानिसबर्ग
सितम्बर १६, १९०९

कलकी सभा जोशीली। लड़ाई जारी रखनेका दृढ़ संकल्प। प्रस्तावोंमें रिहा लोगोंको बधाई, प्रतिनिधियोंपर पूर्ण विश्वासकी पुनराभिव्यक्ति, उनके प्रयत्नोंकी हार्दिक सराहना, पूर्ण समर्थनकी पुनः प्रतिज्ञा, वरनॉनके उस वक्तव्यका विरोध जो सरकार

1. नया साल।

द्वारा खण्डन न होनेकी स्थितिमें एशियाइयोंकी दृष्टिमें सरकारी नीतिका द्योतक। रमजानमें मुसलमान कैदियोंको विशेष भोजन देनेकी प्रार्थना नामंजूर।

मेरे साथीकी और मेरी नम्र सम्मतिमें, इन तारोंसे प्रकट होता है कि ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीय समाज और प्रकटतः चीनी समाज भी, प्रतिरोध जारी रखनेका पक्का इरादा रखते हैं। मैं यह भी कहना चाहूँगा कि अगर चीनी संघ द्वारा भेजी गई गिरफ्तारियोंकी संख्याके सम्बन्धमें तारमें ही कोई गलती नहीं हो गई है तो यह पहला ही मौका है जब सरकारने इतनी बड़ी संख्यामें चीनियोंको गिरफ्तार करना उचित समझा है। आन्दोलनके दौरानमें मुझे एक भी ऐसा अवसर याद नहीं आता जब स्वयं भारतीय समाजमें से एक ही जगह और एक साथ इतने लोग गिरफ्तार किये गये हों। तथापि, तारोंसे यह बात साफ हो जाती है कि सरकार द्वारा उठाये कदमोंने एशियाई लोगोंको कमजोर करनेके बजाय उन्हें और ताकत दी है।

सरकार द्वारा श्री वरनॉनके इस आशयके वक्तव्यका खण्डन न किया जाना कि एशियाइयोंको देशसे खदेड़ बाहर करना गोरे लोगोंका कर्तव्य है कुछ दुर्भाग्यकी बात है। इस वक्तव्यका उल्लेख मैंने अपने १० सितम्बरके पत्रमें[1] भी किया है। इसी प्रकार, रमजानके महीनेमें, जिसमें मुसलमान अपने धर्मके अनुसार रोजे रखते हैं, मुसलमान कैदियोंको उनके भोजनके सम्बन्धमें विशेष सुविधाएँ देनेसे इनकार करना भी दुर्भाग्यपूर्ण है। मुझे विश्वास है कि लॉर्ड क्रू इसमें मुझसे सहमत होंगे। मैं उनका ध्यान इस बातकी ओर आकर्षित करता हूँ कि मैं जब पिछले साल फोक्सरस्टमें कैदकी सजा भुगत रहा था, तब मैंने देखा था कि रमजानमें मेरे उन साथी कैदियोंको, जो मुसलमान थे, विशेष सुविधाएँ दी गई थीं।

क्या आप यह पत्र लॉर्ड महोदयके सम्मुख पेश करनेकी कृपा करेंगे?

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स २९१/१४२; और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०८२) से भी।

१. देखिए पृष्ठ ३९८–९९। उपनिवेश कार्यालयकी २३ सितम्बरकी टिप्पणीमें लिखा गया था कि इस पत्र-व्यवहारकी नकल ट्रान्सवालके गवर्नरको भेजकर मुसलमान कैदियोंके प्रति व्यवहारके नियमोंके सम्बन्धमें उनकी राय मँगानी होगी।

२७३. पत्र: लॉर्ड मॉर्लेके निजी सचिवको

[लन्दन]
सितम्बर १८, १९०९

महोदय,

मैं इसके साथ परम माननीय उपनिवेश मन्त्रीको भेजे गये पत्रकी[1] प्रतिलिपि भेज रहा हूँ और आपसे निवेदन करता हूँ कि आप इसे लॉर्ड मॉर्लेके सामने पेश कर दें।

मैं लॉर्ड महोदयका ध्यान इस बातकी ओर खास तौरसे आकर्षित करना चाहता हूँ कि ट्रान्सवालके अधिकारियोंने रमजानके महीनेमें रोजा रखनेके धार्मिक व्रतके सम्बन्धमें मुसलमान कैदियोंको सुविधाएँ देनेसे इनकार कर दिया है। मेरी विनीत सम्मतिमें ट्रान्सवालके अधिकारियोंने अपनी मर्जीको जबरदस्ती मनवानेका जो यह तरीका अख्तियार किया है वह निश्चय ही नया है, क्योंकि इसका अर्थ कैदियोंपर उनके धर्मके माध्यमसे हमला करना है।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

इंडिया ऑफिस रेकर्ड्स: ३६०२/०९; और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०८३) से।

२७४. पत्र: लॉर्ड ऐम्टहिलको

[लन्दन]
सितम्बर १८, १९०९

लॉर्ड महोदय,

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके लिए श्रीमान्ने जो-कुछ किया है और जो-कुछ कर रहे हैं, उसके लिए श्री हाजी हबीब और मैं आपको जितना धन्यवाद दें, थोड़ा है।

श्रीमान्के इस सुअर्जित अवकाशके समय मैं श्रीमान्को कष्ट नहीं देना चाहता। फिर भी मुझे लगता है कि लॉर्ड क्रू को मैंने जो पत्र[2] भेजा है, उसकी प्रतिलिपि और उनके साथ जो भेंट हुई उसका सार[3] आपको भेजनेके लिए मैं कर्तव्य-बद्ध हूँ। मैंने इसको लेखबद्ध करना ज्यादा अच्छा समझा।

१. देखिए पिछला शीर्षक।
२. देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ४२१-२२।
३. देखिए "लॉर्ड क्रू से भेंटका सार", पृष्ठ ४०८-११।

यदि सर जॉर्ज फेरारकी सक्रिय सहानुभूति प्राप्त की जा सकती है, तो मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि भले ही जनरल स्मट्स लॉर्ड क्रू को प्रतिकूल उत्तर दें, उनको सर जॉर्जकी बात तो सुननी ही होगी।

यदि जनरल स्मट्सका उत्तर प्रतिकूल आता है तो मैं नहीं सोचता कि श्री हाजी हबीब और मेरे लिए दक्षिण आफ्रिकाको रवाना होना सम्भव होगा। मैं यह अनुभव करता हूँ कि हमें अपनी रवानगीसे पूर्व यहाँ कुछ सार्वजनिक कार्य करना आवश्यक होगा।

हम आशा करते हैं कि आपका अवकाश चैनसे बीतेगा और मुझे विश्वास है, आपको इच्छित विश्राम मिलेगा, जिसके आप अधिकारी हैं।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०८४) से।

२७५. पत्र: उपनिवेश-उपसचिवको[1]

[लन्दन]
सितम्बर २०, १९०९

महोदय,

नेटालके प्रवासी-प्रतिबन्धक विभागकी ओरसे मेरे साथी श्री आमद भायातके नाम भेजा गया एक पत्र यहाँ उनकी अनुपस्थितिमें आया है। श्री अमोद भायातने एक मौलवीके लिए, जिसे पीटरमैरित्सबर्गमें मस्जिदका और एक मदरसेका काम सम्भालना है, एक अस्थायी आवाजाही (विज़िटिंग) पासकी माँग करते हुए जो अर्जी दी थी, यह पत्र उसीके उत्तरमें भेजा गया है। यह अर्जी पीटरमैरित्सबर्गके सम्पूर्ण मुस्लिम समाजकी ओरसे और उसके ही नामसे भेजी गई थी। मैं इसके साथ पूर्वोक्त पत्रकी एक नकल भेज रहा हूँ।

मैं साहसपूर्वक यह मान लेता हूँ कि लॉर्ड क्रू उन ब्रिटिश भारतीय मुसलमानोंकी भावनाओंका आकलन कर सकेंगे, जो उस उपनिवेशमें ईमानदारीसे अपनी जीविका कमानेके उद्देश्यसे बसे हैं। मैं और मेरे सहकारी मानते हैं कि प्रवासी-प्रतिबन्धक विभागके इस पत्रसे मनुष्यके नाते, ब्रिटिश प्रजाके नाते, और उतना ही, मुसलमान होनेके नाते हमारी भावनाओंको कड़ी चोट पहुँची है। प्रवासी अधिकारीको खास तौरसे यह आश्वासन दे दिया

१. इस पत्रमें एम० सी० आंगलियाकी सही है, किन्तु इस बातका प्रमाण है कि मसविदा गांधीजीका था। पोलकने अपने १४ अक्तूबर, १९०९के पत्रमें लिखा था: "पीटरमरित्सबर्गके मौलवीके विषयमें (नेटालके प्रतिनिधियोंमें से एकके हाथों) भेजा हुआ आपका पत्र जोरदार है और बहुत अच्छा है, लेकिन, माफ कीजिए, उसकी लिखावट बहुत रद्दी है। लोग कहते हैं कि वकीलोंका लेखन व्याकरणकी दृष्टिसे बहुत खराब होता है। मुझे आशा है कि आप मुझपर ऐसा कोई दोष नहीं लगा पायेंगे। मैं इस पत्रको अपनी आगामी पुस्तकमें परिशिष्टकी तरह दे रहा हूँ। वह प्रकाशनकी दृष्टिसे दिलचस्प मालूम होता है और उसमें कोई भेद तो खोला नहीं गया है। . . ." पोलकने यह पत्र अपने ए ट्रैजेडी ऑफ एम्पायर नामक पुस्तिकामें परिशिष्ट–डीके रूपमें उद्धृत किया था। देखिए "पत्र: अमीर अलीको", पृष्ठ ४३२-३३।

गया था कि इस मौलवीकी जरूरत सिर्फ धार्मिक कार्योंके लिए है और वह व्यापारमें या किसी भी दूसरे व्यवसायमें नहीं पड़ेगा और इसलिए किसीके साथ प्रतियोगिता नहीं करेगा।

पूर्वोक्त साधारण अर्जी मंजूर करानेके लिए हमारे समाजको इतनी भारी मेहनत करनी पड़े और यह अर्जी इतने आपत्तिजनक ढंगसे मंजूर की जाये — और वह भी एक ऐसे मामलेमें जिसका उपनिवेशकी आर्थिक नीतिसे कहीं कोई सम्बन्ध नहीं है, सिर्फ यह बात जाहिर करता है कि ब्रिटिश भारतीयोंको नेटालमें कैसी दुःखदायी, अपमानजनक और कठिन परिस्थितियोंमें रहना पड़ता है। आवाजाही (विजिटिंग) पास सिर्फ तीन ही महीनोंके लिए क्यों दिया गया है, उसे हर तिमाहीके बाद नया करानेके लिए क्यों कहा गया है और जब उसे नया किया जाये तब हर बार उसके साथ बीस शिलिंग भरनेकी दण्ड-जैसी शर्त क्यों लगाई गई है — ये सारी बातें हमारी समझके बाहर हैं। इस शिष्टमण्डलकी नम्र रायमें ऐसी नीति अत्यन्त क्रूरतापूर्ण ही कही जा सकती है। वह भारतीय समाजकी सहन-शक्तिपर भारी बोझ लादती है। हमारे शिष्टमण्डलके यहाँ रहते हुए, मैं नम्रतापूर्वक यह अनुरोध करता हूँ कि लॉर्ड क्रू नेटालमें भारतीयोंकी इस विसंगत स्थितिपर गम्भीरतापूर्वक विचार करें। हम मानते हैं कि ऐसी स्थिति, साम्राज्यकी सुरक्षाका — उस साम्राज्यकी सुरक्षाका — खयाल करते हुए, जिसके प्रजाजन होनेका भारतीयोंको अभीतक गर्व रहा है, अधिक काल तक नहीं चलाई जा सकती और न चलाई जानी चाहिए। और इसका कारण यह है कि वह असह्य है। हम अपने प्रति, समाजका हममें जो विश्वास है उसके प्रति और साम्राज्यके प्रति अन्याय करेंगे यदि हम लॉर्ड महोदयको इस बातकी प्रतीति नहीं करा देते कि नेटालमें ब्रिटिश भारतीयोंके साथ जो अपमानजनक व्यवहार किया जा रहा है वह उनके हृदयमें शूलकी तरह चुभता है और यह हालत जिस दिन हदसे गुजर जायेगी उस दिन — वह दिन कभी भी आ सकता है — क्या परिणाम होंगे, उनकी कल्पना करना कठिन है।

मैंने अपनी बात अपने साथी प्रतिनिधियोंकी सम्मतिसे किंचित् आवेशपूर्वक लिखी है, किन्तु यह आवेश अवसरकी माँगके अनुसार जितना होना चाहिए उससे ज्यादा नहीं है।

आपका, आदि,

एम० सी० आंगलिया

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स : १७९/२५५।

२७६. पत्र : लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन]
सितम्बर २३, १९०९

महोदय,

श्री हाजी हबीबको और मुझे मालूम हुआ था कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी समस्या हल करनेके लिए जो बातचीत चल रही थी उसके सम्बन्धमें लॉर्ड क्रू जनरल स्मट्सको एक तार[1] भेजनेवाले थे। क्या मैं जान सकता हूँ कि इस तारका जनरल स्मट्सने कोई जवाब दिया है या नहीं?[2]

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स २९१/१४२।

२७७. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
सितम्बर २३, १९०९

प्रिय हेनरी,

मुझे आपका अपेक्षाकृत छोटा पत्र मिला। रमजानके महीनेमें सुविधाएँ देनेसे अधिकारियोंके इनकारके सम्बन्धमें जोहानिसबर्गसे गत सप्ताह प्राप्त तारकी नकल मैंने भेज दी थी।

अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी लन्दन शाखा द्वारा भारतकी केन्द्रीय लीगको भेजे गये तारकी नकल इसके साथ भेज रहा हूँ।[1] आशा है आप बम्बईसे केन्द्रीय लीगके साथ पत्र-व्यवहार कर रहे होंगे।

१. लॉर्ड क्रू ने यह वादा किया था कि वे गांधीजी और हाजी हबीबके साथ अपनी बातचीतका परिणाम तारसे जनरल स्मट्सको भेज देंगे और लॉर्ड ऍम्टहिलकी मार्फत पेश किये गये गांधीजीके संशोधनको मान लेनेपर भी जोर देंगे; देखिए "लॉर्ड क्रू से भेंटका सार", पृष्ठ ४११ और परिशिष्ट २४ भी।

२. इसके उत्तरमें गांधीजीको ४ अक्तूबरको उपनिवेश कार्यालयका यह पत्र मिला था: "ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके प्रश्नके सम्बन्धमें वे फिलहाल आपको कोई ज्यादा जानकारी दे सकेंगे, इसकी सम्भावना नहीं है। पिछले महीनेकी १६ तारीखको लॉर्ड महोदयसे अपनी भेंटके बाद आपने जो रुख अख्तियार किया है, उसकी जानकारी उपनिवेश सरकारको भेज दी गई थी। अब उस जानकारीको ध्यानमें रखते हुए पहले उपनिवेश सरकारको यह तय करना है कि वह श्री स्मट्सके सुझाये हुए आधारपर कानून बनानेके लिए तैयार है या नहीं।"

३. इसमें कहा गया था: "भारतीय शिष्टमण्डलको ट्रान्सवालसे तार मिला। मुसलमान सत्याग्रही कैदियोंको रमजानमें सुविधाएँ नहीं दी गई। तुरन्त कार्रवाई करें।"

मैं इस बातमें आपसे बिलकुल सहमत हूँ कि सभाका रद किया जाना आन्दोलनके पक्षमें बढ़िया विज्ञापन रहा और उससे अधिकारियोंकी मूर्खताका भी उतना ही अच्छा विज्ञापन हो गया।[1]

'ऐडवोकेट ऑफ़ इंडिया'का आक्षेप बिलकुल मूर्खतापूर्ण है।[2] उससे पत्र और उसके लेखकके अतिरिक्त अन्य किसीकी हानि नहीं हो सकती। यदि श्री वाडियाने उसका समाधान कर दिया हो तो ठीक ही है। यदि उन्होंने न किया हो तो भी, मेरा खयाल है, उससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि जिस कतरनमें यह आक्षेप था वह [आपके भेजे] कतरनोंके दो पैकेटोंमें नहीं मिली। मेरा खयाल है, कल्याणदासने या जिसने भी कतरनें बनाई हों, अवश्य ही यह सोचा होगा कि वह अनुच्छेद इतना तिरस्कार-योग्य है कि यहाँ रहनेवाले हम लोगोंको उसे देखना भी नहीं चाहिए।

मुझे अबतक लॉर्ड क्रू का उत्तर नहीं मिला है। मैं याद दिलानेके लिए एक चिट्ठी[3] भेज रहा हूँ।

मैं आपको भेजे अपने पत्रोंके खोले जानेकी बात समझ सकता हूँ, लेकिन आपको भेजे मिलीके पत्र इरादतन खोले जाते हैं, यह बात मेरी समझमें नहीं आती। हम आशा करें, इन पत्रोंको पढ़नेसे पढ़नेवालोंकी ज्ञान-वृद्धि हुई होगी और उनको पत्नी-भक्तिका अर्थ भी मालूम हो गया होगा। मिलीके पत्रोंसे उनको पूरी-पूरी शिक्षा मिल गई होगी।[4]

यदि स्मट्सका उत्तर अनुकूल न हुआ तो यहाँसे मेरी रवानगी अभी एक महीनेतक और सम्भव नहीं है। श्री मायर अब यहाँ हैं। मैंने उनसे भेंटका समय माँगा है। यदि जल्दी ही संसद भंग न हुई, तो अब यहाँका मौसम सार्वजनिक कार्यके लिए अनुकूल है।

मेरा खयाल है, आपको यह नहीं लिखा है कि मैं जिन भारतीय महिलाओंसे मिल सकता हूँ उन सबसे मिल रहा हूँ और उनसे 'इंडियन ओपिनियन'के सम्पादकके नाम

१. अपने ४ सितम्बरके पत्रमें श्री पोलकने लिखा था: "मंसूखकी गई सभासे हमारे कार्यका हित ही हुआ है। इससे ट्रान्सवालकी ओर लोगोंका ध्यान खिंचा है; कई ढुल-मुल लोगोंमें उत्साह भर गया है, हमारी भूमिका स्पष्ट हुई है तथा श्री फीरोजशाह मेहताका मन परिवर्तित हुआ है। वे अब बड़े उत्साहसे कार्यमें लग गये हैं। यह सभा, जिसने, ऐसी सफलता मिलनेका विश्वास है, जैसी आजतक नहीं मिली आखिरकार टाउनहॉल ही में तारीख १४ को होगी। सरकारने अज्ञानवश भूल की थी, किन्तु शेरिफने मूर्खतावश। सारा किस्सा ही मिथ्या भ्रम और प्रमादका है। सरकारने अब अपनी गलती महसूस की है और शेरिफ ने भी। इसके लिए क्षमा-याचना भी की है (जरा कल्पना करें!) और सभाके लिए टाउन हॉल दे दिया है।

२. श्री पोलकने इस सम्बन्धमें गांधीजीको ४ सितम्बरको लिखा था: "श्री गोखलेने गवर्नरके मनमें मेरे सम्बन्धमें जो गलतफहमी थी, उसे दूर कर दिया है गॉर्डन द्वारा ऐडवोकेट ऑफ इंडियामें मुझपर जो व्यक्तिगत आक्षेप किये गये हैं, उनमें आप इसकी ध्वनि पायेंगे। यह सरासर अन्यायपूर्ण है, क्योंकि रायटरके प्रधान व्यवस्थापकका एक व्यक्तिगत पत्र भी मैं उसके नाम लाया था। मुझे मालूम हुआ है कि यह (गॉर्डन) बड़ा लफंगा है। मेरा खयाल है, एच० ए० वाडिया इसका जवाब देंगे। मैं नहीं दे सकूँगा।" गांधीजीने ऐडवोकेट को जवाब दिया था। देखिए "पत्र: 'ऐडवोकेट ऑफ इंडिया' को", पृष्ठ ४३४-३५।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

४. १४ अक्तूबरको पोलकने इसके उत्तरमें लिखा था: "मिलीके पत्रोंके खोले जानेके विषयमें आप हम दोनोंसे ज्यादा सहिष्णु हैं। मुझे लगता है कि आपके प्रेम-पत्र लिखनेके दिन बीत चुके हैं। मुझे आपसे सहानुभूति है, पर मैंने मिलीको दाम्पत्य प्रेमकी शिक्षा देनेका अधिकार अभी नहीं दिया है।"

गुजरातीमें ऐसे पत्र ले रहा हूँ, जो आन्दोलनको उत्तेजन देनेवाले और भारतीय नारियोंकी निष्ठाकी सराहना करनेवाले हों। आपने मुझे सूचित किया था कि आप भारतीय स्त्रियोंकी एक सभामें भाषण देनेवाले हैं। आप उनसे जितने पत्र ले सकें, ले लें। आप उनसे अंग्रेजी-में भी पत्र लें। अंग्रेजीमें पत्र न लेनेका कोई कारण नहीं है। मैं गुजराती स्त्रियोंसे गुज-रातीमें लिखे पत्र ले रहा हूँ, क्योंकि मेरी चिन्ता यह है कि वे अपनी मातृभाषाकी उपेक्षा न करें। एक पत्र श्रीमती दुबेका[1] है। वे अत्यन्त मनोहारी व्यक्तित्वकी उत्तर भारतीय महिला हैं। वे बम्बईमें रही हैं, इसलिए गुजराती पढ़ और लिख सकती हैं। दूसरा पत्र श्रीमती के० सी० दिनशाका[2] है। वे कुछ समय डर्बनमें रही हैं और अब अपने पतिके साथ यूरोपमें यात्रा कर रही हैं। आप श्रीमती पेटिट, श्रीमती रानडे और अन्य महिलाओंसे पत्र लें। कुमारी विंटरबॉटम अपनी सैरसे लौट आई हैं। मैंने सुझाव दिया है कि अंग्रेज नारियाँ सहानुभूतिका पत्र दें[3] और अनाक्रामक प्रतिरोधियोंकी पीड़ित पत्नियों और पुत्रियोंके कष्ट-मोचनके लिए थोड़ा-थोड़ा चन्दा भी दें। मैं इसी प्रकारकी बात वहाँके लिए भी सुझाना चाहता हूँ। मैं रकमपर जोर नहीं देता; बल्कि इस बातपर जोर देता हूँ कि प्रत्येक सुसंस्कृत भारतीय स्त्री ट्रान्सवालकी अपनी बहनोंके लिए कुछ दे, चाहे वह एक पैसा ही हो। मैं इसका भारतमें अधिकतम प्रचार करूँगा। कोई कारण नहीं है कि स्त्रियोंकी एक सभा भी क्यों न की जाये। उसमें सिर्फ प्रस्ताव पास किये जायें।[4]

अनाक्रामक प्रतिरोधके सम्बन्धमें जैसे हमने जोहानिसबर्गमें पुरस्कारकी घोषणा करके निबन्ध लिखाये थे, वैसा ही एक निबन्ध मैं यहाँ और एक भारतमें लिखानेका विचार कर रहा हूँ। मैंने डॉ० मेहताके सम्मुख प्रस्ताव रखा था कि पुरस्कार वे दें। उन्होंने इस बारेमें विचार कर लिया है और वे पुरस्कार देनेके लिए रजामन्द हैं। मैं इसकी नियमावली बना लूँगा और उसकी एक प्रतिलिपि आपको भेजूँगा, किन्तु यह अगले सप्ताह करूँगा। इस बीच आप इन प्रश्नों पर विचार करें:

१. भारतमें निर्णायक कौन-कौन हों?
२. पुरस्कार किसके नामसे दिया जाये?

१. रामकुमारी दुबेका एक पत्र ११-९-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में छपा था।

२. खुरशेदबाई फैकुबाद कावसजी दिनशाका एक पत्र २३-१०-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में छपा था।

३. कुमारी फ्लॉरेंस विंटरबॉटमका एक पत्र २५-१२-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में "सत्याग्रहियोंकी पत्नियोंको सन्देश" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। इसके अलावा हिल्डा मार्गरेट हाउसिनका एक पत्र ११-१२-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में इस शीर्षकसे छपा था: "एक अंग्रेज स्त्रीका पत्र: सत्याग्रहियोंकी पत्नियोंके नाम।"

४. पोलकने उत्तरमें लिखा था "यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि आप लन्दनकी भारतीय महिलाओंसे सम्पर्क बनाये हुए हैं। मैं नटेसनके द्वारा श्रीमती सरोजिनी नायडूकी एक कविता पानेकी कोशिश कर रहा हूँ। श्रीमती रानडेकी सहयोगी महिलाओंने ट्रान्सवालकी महिलाओंके लिए सहानुभूतिका एक प्रस्ताव पास किया है जो जल्दी उन्हें भेज दिया जायेगा। उनमें से कुछ महिलाएँ नियत समयपर इं० ओ० के लिए लिखकर भी भेजेंगी। श्रीमती पेटिट स्वयं तो बड़ी खुशीसे पत्र भेजेंगी और मैं उनसे अनुरोध करूँगा कि वे दूसरी महिलाओंसे भी ऐसा करनेके लिए कहें। महिलाओंके एक संगठन सेवा-सदनने स्त्रियोंकी सहायताके लिए ५० रुपये ट्रान्सवाल भेजे हैं। वे और भी चन्दा देंगी। बम्बईमें स्त्रियोंकी सभामें प्रस्ताव पास करना ठीक नहीं था, क्योंकि बहुत-से अधिकारियोंकी पत्नियाँ भी वहाँ उपस्थित थीं।"

इस विषयमें थोड़ी सावधानी बरतनी होगी, क्योंकि यह स्पष्ट है, यद्यपि बात आश्चर्यजनक लगेगी, कि वहांके लोग अनाक्रामक प्रतिरोधको बिलकुल नहीं समझते; और यदि हमें वहां कोई ऐसा निबन्ध लिखाना हो, जिसका कुछ भी लाभ हो सके तो उसमें भारतमें सार्वजनिक आन्दोलनोंपर अनाक्रामक प्रतिरोधके प्रभावोंपर पूरी गवेषणा होनी चाहिए। आप इस सम्बन्धमें प्रो० गोखले और अन्य लोगोंसे बातचीत कर सकते हैं। पुरस्कारकी रकम ५० पौंड यहां और ५० पौंड वहां हो सकती है, ताकि हम दोनों देशोंमें अच्छे लेखकोंको आकर्षित कर सकें। मैं श्री मायर, डॉ० क्लिफर्ड और अन्य लोगोंसे सलाह करनेवाला हूँ। यदि यहां सार्वजनिक रूपसे कोई कार्रवाई करनी हो तो इस पुरस्कार-निबन्धसे ट्रान्सवालके मामलेका व्यापक विज्ञापन हो जायेगा।[1]

नेटालके मित्रोंमेंसे श्री एच० एम० बदात पेरिस चले गये हैं। उनका अन्तिम लक्ष्य पक्का है।

मेरा खयाल है, श्री उमर और ईसा हाजी सुमार अभी आपके साथ ही हैं।

मुझे सूरतकी सभाके सम्बन्धमें आपका तार मिला। मैं समझता हूँ कि दूसरी सभाएँ भी अच्छी रही होंगी, और आपके सब प्रस्ताव भारतके वाइसरायको भेजे जा रहे होंगे।

डॉ० मेहता यहां हैं और कुछ दिन रहेंगे। वे रविवारको पेरिसके लिए और पहली तारीखको मार्सेलीजसे रंगूनके लिए रवाना होंगे। वे २३ अक्तूबरको रंगून पहुँचेंगे। आप जहाँ भी हों, मेरा खयाल है, आप डॉ० मेहतासे पत्र-व्यवहार करके रंगून हो आयें तो ज्यादा अच्छा रहेगा। डॉ० मेहता आपका पत्र मिलनेसे पहले आपको न लिख सकेंगे; क्योंकि उनको आपका पता नहीं मालूम होगा। उनका खयाल है कि आपके रंगून जानेका विचार अच्छा रहेगा। वहाँ एक सभा की जा सकती है। किन्तु जो भी हो, मेरी चिन्ता यह है कि आप दोनों एक-दूसरेसे मिल लें। यदि श्री उमर आपके साथ जायें तो यह और भी अच्छा होगा। वहाँ कई मेमन और सूरती देशभक्त हैं। हमारे मित्र मदनजीत[2] तो वहाँ मिलेंगे ही, आप वहाँ संसारकी सबसे ज्यादा स्वतन्त्र नारियोंको भी देख सकेंगे।[3] कलकत्तासे तीन दिन और मद्राससे चार दिन लगते हैं; इसलिए आप जहाँ भी हों वहाँसे रंगून जा सकते हैं। मैं नहीं समझता कि आप रंगूनमें एक सप्ताहसे अधिक लगा सकते हैं। किन्तु यदि आपके पास समय कम रहे, तो कम समय दे सकते हैं। डॉ० मेहताका पता यह है: १४, मुगल स्ट्रीट, रंगून।

१. पोलक इस विषयमें गोखलेसे सलाह करना चाहते थे। वह यह भी जानना चाहते थे कि प्रोफेसर भाण्डारकर निर्णायक बनना स्वीकार करेंगे या नहीं।

२. मदनजीत व्यावहारिक; दक्षिण आफ्रिकामें गांधीके एक साथी; १८९८ में गांधीजीकी सलाहपर डर्बनमें इन्टरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस खोला, और उन्हींकी सहायतासे १९०३ में **इंडियन ओपिनियन** शुरू किया, १९०४ से जिसका संचालन गांधीजी करने लगे; देखिए खण्ड ३, पृष्ठ २७७।

३. पोलकने उत्तर दिया: "मैं भी संसारकी सबसे ज्यादा स्वतंत्र नारियोंको देखनेकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। फिर मैं मिलीसे उनके बारेमें बातचीत करूँगा, जैसी कल अडयारमें लेडबीटरके साथ मैंने थोड़ी-सी की थी। यहाँसे जानेसे पहले मैं मलाबार भी जानेकी कोशिश करूँगा, ताकि नैयर जातिकी स्त्रियोंको देख सकूँ जो मुझे बताया गया है, एक पतिका परित्याग कर दूसरेका वरण करती हैं। और आप लोग जो एकके बाद दूसरा विवाह करनेवाले हैं, उन्हें भी मात कर देती हैं। मुझे तो लगता है कि वे ठीक ही करती हैं!"

श्री ठाकरका सुझाव है कि हम इतने गरीब हैं कि हमें लन्दनकी चिट्ठीके[1] लिए दी जानेवाली एक गिन्नीकी बचत करनी चाहिए और कमसे-कम फिलहाल उसे बन्द कर देना चाहिए। मुझे भी ऐसा ही लगता है और मैं उनसे सहमत हूँ। फिर, यह देखते हुए कि आजकल अखबारका उपयोग मुख्यतः अनाक्रामक प्रतिरोधके लिए किया जा रहा है, क्या इस चिट्ठीको बन्द करनेमें बुद्धिमत्ता न होगी? कृपया मुझे अपनी सम्मति वापसी डाकसे दें।[2]

गत सप्ताह फीनिक्ससे वेस्ट और कुमारी वेस्टके सम्बन्धमें खबर बहुत आश्वासनप्रद मिली है। दोनों बिलकुल खतरेसे बाहर हैं।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०९१) से।

२७८. लन्दन

[सितम्बर २५, १९०९ के पूर्व]

नेटालका शिष्टमण्डल

इस शिष्टमण्डलकी गतिविधिके सम्बन्धमें कुछ ज्यादा नहीं कहना है। चिट्ठी-पत्री चल रही है। न्यायमूर्ति अमीर अलीसे भेंट हुई है। वे महानुभाव गिरमिटियोंका आना बन्द करनेको बहुत महत्त्व देते हैं। उन्होंने पूरी-पूरी सहायता देनेका वादा किया है। डॉ० गार्नेट नामके एक पादरी हैं; वे भी [प्रतिनिधियोंसे] मिलते रहते हैं।

श्री वदात इस सप्ताह पेरिस चले गये हैं। यह तय हुआ है कि वे वहाँसे इस्तम्बूल, इस्तम्बूलसे जद्दा और जद्दासे मक्का शरीफ जायेंगे।

भारतीयकी प्रतिभा

यहाँके 'डेली न्यूज़' अखबारमें खबर है कि एक पारसी सज्जनने ऐसी खोजकी है जिससे जाली दस्तखत वगैरहकी गुंजाइश बहुत कम की जा सकती है। 'डेली न्यूज़' के संवाददाताने आगे लिखा है कि इस खोजकी सार्वजनिक परीक्षा कुछ दिनोंमें की जायेगी।

जंजीबारके भारतीय

जंजीबारमें भारतीयोंको जो कष्ट उठाने पड़ते हैं, उनके सम्बन्धमें वहाँ एक सार्वजनिक सभा की गई थी। उसके बाद यहाँ तार आये। एक तार सर हेनरी कॉटनके नाम आया है। वह 'इंडिया' में छपा है। उसके सम्बन्धमें लोकसभामें प्रश्न भी पूछा गया था। उत्तरमें यह कहा गया कि जब तारमें उल्लिखित अर्जी आयेगी तब लॉर्ड क्रू जाँच करेंगे। मुझे आशा है कि जंजीबारके भारतीय संघने आवेदनपत्र भेज दिया होगा। अगर न भेजा हो तो उसको समयपर भेज देना चाहिए।

१. इंडियन ओपिनियनमें ऑब्ज़र्वरकी लन्दनसे भेजी हुई चिट्ठी छपती थी।

२. पोलकने उत्तर दिया: "मुझे लन्दनकी चिट्ठी बन्द करनेका विचार ठीक नहीं जँचता अखबारमें अनाक्रामक प्रतिरोधकी एक ही तो यह बात है जो बाहरी संसारसे हमारा सम्पर्क बनाये हुए है। पर आप जैसा चाहें, करें। आप वहीं मौजूद हैं और कुमारी स्मिथसे सलाह कर सकते हैं।"

लॉर्ड कर्ज़न बनाम लॉर्ड किचनर

"दरियामें लगी आग बुझा कौन सकेगा?"[1] लॉर्ड कर्जन और लॉर्ड किचनरके बीच ऐसी ही स्थिति हो गई है। एक व्यक्तिने यह खोज निकाला है कि लॉर्ड कर्ज़नने भारतसे रवाना होते समय जैसा भाषण दिया था वैसा ही भाषण, लगभग उन्हीं शब्दोंमें, लॉर्ड किचनरने दिया। इससे सभी अनुमान करते हैं कि लॉर्ड किचनरने लॉर्ड कर्ज़नके विचारोंकी चोरी की है। इस सम्बन्धमें अखबारोंमें बहुत चर्चा चल रही है। अगर बड़े कहे जानेवाले लोग चोरी करें तो फिर छोटे लोगोंका क्या कहना?

स्त्रियोंके मताधिकारका आन्दोलन करनेवाली महिलाएँ

मताधिकारका आन्दोलन करनेवाली अंग्रेज स्त्रियाँ अधीर हो गई हैं। उनमें से कुछने प्रधान मन्त्रीपर अनुचित आक्रमण किया, इसलिए वे गिरफ्तार कर ली गईं। उनपर मुक-दमा चलाया गया और उनको सजाएँ दे दी गईं। जेलमें उन्होंने खाना खानेसे इनकार कर दिया। ऐसा करनेमें उनका हेतु यह था कि उनको जेलसे छोड़ दिया जाये। किन्तु अधिकारी सेरपर सवासेर निकले और उन्होंने उनके पेटमें जबर्दस्ती भोजन पहुँचा दिया है। भारतीय सत्याग्रहियोंको इससे सीखना यह है कि ये स्त्रियाँ सत्याग्रही नहीं हैं, बल्कि अपना शरीर-बल आजमाने लगी हैं। वे अब पिछड़ जायेंगी, इसमें सन्देह नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-१०-१९०९

२७९. शिष्टमण्डलकी यात्रा [-१३]

[सितम्बर २५, १९०९के पूर्व]

लॉर्ड क्रू के पाससे अभी कोई विशेष उत्तर नहीं मिला। सम्भावना यह है कि उनका उत्तर असन्तोषजनक आयेगा। यह मान लेनेका कोई कारण नहीं है कि जनरल स्मट्स आनन-फानन कह देंगे कि मैं लॉर्ड क्रू की सलाह मान लूँगा। किन्तु मैं इतना जानता हूँ कि यदि जनरल स्मट्स यह सलाह नहीं मानेंगे तो इसमें दोष हमारा ही माना जायेगा। इस हफ्तेमें इससे ज्यादा नहीं लिख सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-१०-१९०९

१. यह उद्धरण हिन्दीमें ही है।

२८०. तार: ब्रिटिश भारतीय संघको

[लन्दन]
सितम्बर २७, १९०९

ब्रिआस,
जोहानिसबर्ग

हाजी हबीबको तार मिला है कि तुरन्त लौटो। उनके लोगोंसे पूरी पूछताछ कर उत्तर दें।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें अंग्रेजी मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०९८) से।

२८१. पत्र: अमीर अलीको

[लन्दन]
सितम्बर २७, १९०९

प्रिय श्री अमीर अली,

आपके पत्रके[1] लिए धन्यवाद। आपने जिस पत्रका मसविदा भेजा है, उसकी मैंने एक साफ नकल तैयार कर ली है। इसपर आज दस्तखत हो जायेंगे। श्री आंगलिया इसे लेकर आपके द्वारा दिये गये समयपर कल आपसे मिलेंगे।

उपमन्त्रीको जो पत्र[2] भेजा गया है उसमें उल्लिखित मामलेके तथ्य संक्षेपमें ये हैं:

नेटालकी राजधानी पीटरमैरित्सबर्गमें मसजिदके लिए एक मौलवीकी जरूरत थी। मौलवीको मसजिदके मदरसेमें मुर्दरिसका काम भी करना था। पुराना मौलवी जानेवाला था। उसकी जगह ये नये मौलवी आनेवाले थे। नेटालके कानूनके अनुसार जो व्यक्ति उपनिवेशमें आना चाहता है उसे कोई एक यूरोपीय भाषा आनी चाहिए। लेकिन इस मौलवीको कोई यूरोपीय भाषा नहीं आती थी; इसलिए मसजिदकी जमातने अर्जी दी कि सरकार मौलवीको प्रवासीका यानी स्थायी निवासीका हक न दे बल्कि उसे ऐसा प्रमाणपत्र दे दे जिसके अनुसार वह उपनिवेशमें तीन साल रह सके। अर्जदारोंने यह जमानत देनेका वादा किया कि मौलवी जबतक रहेगा, कोई व्यापार न करेगा और मीयाद खत्म होते ही नेटालसे चला जायेगा। बहुत इन्तजारके बाद सरकारने उत्तर दिया कि यह अनुमति दे दी जायेगी, लेकिन इस

१. २६ सितम्बरके इस पत्रमें लिखा था: "मसविदेके लिए धन्यवाद। उपनिवेश-उपमन्त्रीको लिखे पत्रमें जिस मामलेका आपने उल्लेख किया है, उसका पूरा विवरण वापसी डाकसे भेजनेकी कृपा करें। . . . अगर श्री आंगलिया मंगलवारको दोपहरके साढ़े तीन बजे रिफॉर्म क्लब आ जायें तो मुझे उनसे मिलकर प्रसन्नता होगी। मैं एक मसविदा वापस कर रहा हूँ। इसे टाइप करवा कर प्रतिनिधियोंसे हस्ताक्षर करवायें और कृपापूर्वक मुझे भेज दें।"

२. देखिए "पत्र: उपनिवेश-उपमन्त्रीको", पृष्ठ ४२४–२५।

शर्तपर कि प्रमाणपत्र हर तीसरे महीने बदलवा लिया जाये और उसपर हर बार एक पौंडका स्टाम्प लगाया जाये।

श्री आँगलिया आपको यह पत्र दिखा देंगे। आप इसके भीतरी अर्थको देखें तो मालूम हो जायेगा कि यह कितना अपमानजनक है। मेरी राय यह है कि एक आत्माभिमानी जातिके नाते हम इन सन्तापजनक शर्तोंको मंजूर नहीं कर सकते। मेरी राय यह भी है कि हर तीसरे महीने प्रमाणपत्र बदलवानेकी और उसपर एक पौंडका स्टाम्प लगानेकी शर्त बेहयाईके साथ लूटना ही है।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०९६) से।

२८२. पत्र: मणिलाल गांधीको

[लन्दन]
सितम्बर २७, १९०९

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

"तुम्हें क्या करना है?" — इस सवालसे तुम घबरा गये। अगर इसका उत्तर तुम्हारी ओरसे मैं दूँ तो यह कहूँगा कि तुम्हें अपना कर्तव्य पूरा करना है। तुम्हारा वर्तमान कर्तव्य माता-पिताकी सेवा करना, जितना हो सके उतना अध्ययन करना और खेती करना है। तुम्हें भविष्यकी चिन्ता नहीं करनी है। उसकी चिन्ता तुम्हारे माता-पिताको है। जब वे न रहेंगे तब तुम उसकी चिन्ता करना। इतना तो निश्चित मान लेना चाहिए कि तुम्हें बैरिस्टर या डॉक्टरका धन्धा नहीं करना है। हम गरीब हैं और गरीब रहना चाहते हैं। पैसेकी आवश्यकता केवल भरण-पोषणके लिए होती है। और जो मेहनत करते हैं भरण-पोषण उनको मिल ही जाता है। फीनिक्सको उठाना हमारा काम है, क्योंकि उसके द्वारा हम अपनी आत्माको खोज सकते हैं और देशकी सेवा कर सकते हैं। इतना पक्की तरह मान लेना कि मैं तुम्हारी चिन्ता सदा करता रहता हूँ। मनुष्यका वास्तविक कर्तव्य यही है कि वह अपना चरित्र बनाये। कमानेके लिए ही कुछ खास सीखना जरूरी हो, सो बात नहीं है। जो व्यक्ति कभी नीतिका मार्ग नहीं छोड़ता वह कभी भूखों नहीं मरता, और ऐसा अवसर आ जाये तो भयभीत नहीं होता। तुम निश्चिन्त रहकर वहाँ जो अध्ययन करते बने, करते रहना। यह लिखते हुए तुमसे मिलने और तुम्हें हृदयसे लगा लेनेका जी होता है। और वैसा हो नहीं सकता, इसलिए आँखोंमें पानी भर-भर आता है। भरोसा रखो, बापू कभी तुम्हारे प्रति निर्दयता नहीं बरतेगा। मैं जो-कुछ करता हूँ, तुम्हारे लिए हितकर समझकर ही करता हूँ। तुम यह मान लो कि तुम भटकोगे नहीं, क्योंकि तुम दूसरे लोगोंकी सेवा कर रहे हो।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ९०) से।
सौजन्य: सुशीलाबेन गांधी।

२८३. पत्र : 'ऍडवोकेट ऑफ़ इंडिया' को[1]

[लन्दन]
सितम्बर २८, १९०९

सेवामें
सम्पादक
'ऍडवोकेट ऑफ़ इंडिया',
[बम्बई]

महोदय,

आपने श्री जहाँगीर बोमनजी पेटिटके पत्रपर अप इसी ९ तारीखकेन अंकमें जो पाद-टिप्पणी दी है और उसमें अन्य बातोंके साथ श्री हेनरी एस० एल० पोलकको वेतनभोगी एजेंट कहनेपर जो खेद प्रकट किया है, उससे मुझे आपको यह पत्र लिखनेकी प्रेरणा मिली है।

आपने कहा है, "हमने श्री पोलकका उल्लेख वेतनभोगी एजेंटके रूपमें किया और कहा है कि उसके कारण उनके सम्बन्धमें हमारा खयाल बुरा नहीं होता। किन्तु यदि वे महानुभाव यह समझते हों कि इससे उनकी प्रतिष्ठापर आँच आती है और वे हमें विश्वास दिला सकते हों कि हमारी बात गलत है, तो हम उनसे क्षमा माँगनेके लिए तैयार हैं।" मैं आशा करता हूँ, निम्न विवरणसे आपको विश्वास हो जायेगा कि आपकी बात गलत है और आप ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंसे, जिनका प्रतिनिधित्व श्री पोलक करते हैं, क्षमा माँगेंगे; क्योंकि श्री पोलकको क्षमा-याचनाकी अपेक्षा नहीं है। यदि कोई बुराई हुई है तो उनके साथ हुई है जिनका वे प्रतिनिधित्व करते हैं।

आप कहते हैं कि यदि वे वेतनभोगी एजेंट हों तो भी उनके सम्बन्धमें आपका खयाल बुरा नहीं होता। फिर भी आपके अग्रलेखकी, जिसे मैंने कई बार पढ़ा है, ध्वनि ऐसी है

१. स्पष्ट है कि यह पत्र *ऍडवोकेट ऑफ़ इंडिया*में प्रकाशित नहीं किया गया था। लेकिन श्री जे० बी० पेटिटने इसे ७-११-१९०९ के *गुजराती*में 'ऍडवोकेट ऑफ़ इंडिया और श्री पोलक' शीर्षकसे छपवा दिया था। उसके साथ यह परिचयात्मक पत्र भी छपा था: "आपको याद होगा कि कुछ हफ्ते पहले *ऍडवोकेट ऑफ़ इंडिया*ने श्री पोलकको लगभग 'वेतनभोगी एजेंट' कहा था, और इस तरह, वे यहाँ हमारे ट्रान्सवालके पीड़ित भाइयोंकी ओरसे जो काम कर रहे हैं, उसके महत्त्वको घटानेकी कोशिश की थी। श्री पोलकने इसपर आपत्ति की तो सम्पादकने आधे मनसे अपने कथनको वापस लिया, लेकिन अपने आरोपको पूरी तरह वापस लेनेकी शालीनता या उदारता नहीं दिखाई। जब इस अशोभनीय आक्षेपकी ओर श्री गांधीका ध्यान गया तब उन्होंने २८ सितम्बरको सम्पादकको यह पत्र लिखा। इस पत्रको बम्बई आये लगभग पन्द्रह दिन हो चुके हैं; लेकिन यह अभीतक प्रकाशित नहीं किया गया है। क्या आप कृपा करके इस पत्रको अपने स्तम्भोंमें छाप देंगे? आपके सहयोगीने इस पत्रको न छापकर इस मामलेमें, जो बहुत नहीं है, अपने शेष व्यवहारके अनुरूप ही कार्य किया है।"

कि उससे श्री पोलकके प्रयत्नोंका मूल्य निःसन्देह बहुत कम हो जाता है। मैं उनको व्यक्तिगत रूपसे जानता हूँ; वे मेरे प्रिय मित्र और भाई हैं। वे इस आन्दोलनमें सम्मिलित हुए, उन्होंने गरीबीका व्रत लिया और जोहानिसबर्गके एक साप्ताहिक पत्रके सहायक सम्पादकका पद छोड़ दिया। यदि वे सांसारिक सम्पदाओंके अभिलाषी होते तो उनके लिए वह नौकरी अन्ततः महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकती थी। चार वर्षसे अधिक समय तक उन्होंने ब्रिटिश भारतीय समाजके कोषमें से एक पैसा भी नहीं लिया, क्योंकि उन्हें उसकी कोई जरूरत नहीं थी। इस पूरे समयमें वे इस समाजका काम करते रहे।

ट्रान्सवालके संघर्षसे श्री पोलक, बहुत-से भारतीयोंकी भाँति ही, अपनी आजीविका उपार्जित करनेके साधनोंसे या, यों कहें कि, अवसरसे भी वंचित हो गये। तबसे श्री पोलकने सम्मिलित कोषमें से रोटी जुटाने-भरको पैसा लिया है, हालांकि उन्होंने अपना एक-एक मिनट संघर्षमें ही लगाया है। यदि मैं उनको कुछ भी जानता हूँ, तो मैं यह कह सकता हूँ कि अगर समाजके पास अपने कार्यकर्त्ताओंको भोजन देने योग्य पर्याप्त पैसा न निकले तो भी श्री पोलक अपने काममें लगे रहेंगे और जरूरी होगा तो जिन लोगोंके पक्षमें वे बहुत-से दूसरे लोगोंके साथ-साथ वकालत कर रहे हैं, उनके लिए न्याय प्राप्त करनेके प्रयत्नमें वे अपना जीवन भी दे देंगे।

आप या बम्बईके लोग नहीं जानते कि श्री पोलकने अपने विवाहके प्रारम्भिक दिनोंसे ही अपना बहुत कम समय अपनी पत्नीको दिया है और उनकी पत्नीने भी लगभग अनिश्चित रूपसे लम्बे वियोगको इसलिए खुशीसे सहा है कि उनके पति स्वेच्छासे ग्रहण किये हुए अपने कर्तव्यको ज्यादा अच्छी तरह निभा सकें।

मेरा अनुमान है कि "वेतनभोगी एजेंट" शब्दोंका अर्थ ऐसा प्रतिनिधि जो अपने कामका पर्याप्त मूल्य ले लेता है, और यद्यपि अक्सर ऐसा होता है कि वह अपना काम काफी अच्छी तरह करता है, किन्तु फिर भी काम वह उस पैसेके लिए करता है, जो उसे मिलता है, न कि इसलिए अमुक काम उसको प्यारा होता है। एक पुत्र संयुक्त परिवारमें पुत्रका अपना कर्तव्य निभाता है, इसमें वह खूब मरता-खपता है। उसको कपड़ा और खाना परिवारके कोषमें से ही मिलता है। तब यदि हम उस सुपुत्रको वेतन-भोगी एजेंट कह सकें तो श्री पोलक भी निस्सन्देह वेतन-भोगी एजेंट कहे जा सकते हैं, अन्यथा नहीं।

मैंने जो तथ्य आपके सामने रखे हैं, यदि उनको जाननेके बाद भी आप श्री पोलकको वेतनभोगी एजेंट समझेंगे तो मुझे भय है कि उनके साथी प्रतिनिधि भी अवश्य ही 'वेतनभोगी एजेंट' माने जायेंगे; क्योंकि अगर उन्हें रवाना होनेसे पहले जनरल स्मट्सने गिरफ्तार न कर लिया होता तो वे भी श्री पोलकके साथ ही रहते और उनका मार्ग-व्यय और होटलका व्यय भी भारतीय समाज ही देता।

मुझे विश्वास है कि न्यायकी खातिर आप कृपा करके इस पत्रको स्थान देंगे।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०९९) से।

२८४. पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन]
सितम्बर २९, १९०९

महोदय,

श्री पोलकने कठूरसे[1] तार भेजा है कि कठूरमें इसी २३ तारीखको एक सार्वजनिक सभा हुई थी। सभाके अध्यक्षने अधिकारियोंको यह तार दिया है:

कठूर, खोलवाड़[2] और घेला[3] क्षेत्रोंके निवासियोंकी सार्वजनिक सभा; ट्रान्सवाल सरकार द्वारा देशभाइयोंके उत्पीड़नपर तीव्र विरोध प्रकट करती है; साम्राज्य-सरकारसे जोरदार अनुरोध करती है कि वे तुरन्त समस्याका हल खोजें, कष्टोंका जारी रहना रोकें, प्रजातीय अपमानको मिटायें।

श्री पोलकने तारसे यह खबर भी दी है कि अहमदाबाद और सूरतमें जोरदार सभाएँ हुईं। इनमें साम्राज्य सरकारसे राहत दिलानेका अनुरोध करते हुए दो प्रस्ताव पास किये गये।

अगर आप कृपा करके इस पत्रको लॉर्ड महोदयके ध्यानमें ला देंगे तो मैं आभारी होऊँगा।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: २९१/१४२।

२८५. पत्र: एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
सितम्बर २९, १९०९

प्रिय हेनरी,

डॉ० मेहताने मणिलालको जो छात्रवृत्ति देनेका प्रस्ताव किया था, उसके बारेमें आखिर मैंने फैसला कर लिया है। मेरा खयाल है, उस छात्रवृत्तिके सम्बन्धमें कुछ कि समय पहले मैंने आपको लिखा था। तब मैंने लिखा था कि मैंने डॉ० मेहतासे कहा है वे मुझे इस छात्रवृत्तिका उपयोग अपने चुने हुए किसी दूसरे फीनिक्सवासी छात्रके लिए भी करनेकी इजाजत दे दें। उन्होंने मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है। लेकिन मैं जानता हूँ कि उन्होंने जब छात्रवृत्तिका प्रस्ताव किया था, तब सिर्फ इसलिए किया था कि उन्हें लगा था, वे कमसे-कम मेरे एक पुत्रकी शिक्षाका दायित्व उठा लें। लेकिन आज वे आपके और मेरे समान

१, २ और ३. ये गाँव बड़ौदाकी भूतपूर्व रियासतमें थे। अब ये गुजरातके सूरत जिलेमें आते हैं। घेलाकी जगह घाला होना चाहिए।

ही अनाक्रामक प्रतिरोधी हैं और मुझसे पूर्णतः सहमत हैं कि उन्हें किसी दूसरे फ़ीनिक्सवासी छात्रको पढ़ानेका खर्च देना चाहिए।

मैंने छगनलालको पढ़ानेका निश्चय किया है, और इस सप्ताह जानेवाली डाकसे उसको पत्र[1] भी लिख दिया है। मैंने उसे गत सप्ताह एक पत्रमें[2] अपने सुझाव लिखे थे, लेकिन वह पत्र फ़ीनिक्सको भेजा गया था। मुझे इसका पता पीछे चला कि वह तो १५ तारीखको भारतको रवाना होनेवाला था। इसलिए वह शायद यह पत्र मिलने तक आपके पास पहुँच जायेगा। जिन बातोंको सोचकर मैंने नीचेके निष्कर्ष निकाले हैं उनकी चर्चा यहाँ नहीं करूँगा। वह वहाँ आपके साथ कुछ समय रह ले; उसके बाद लन्दन आ जाये। कहना चाहिए कि वह ज्यादासे-ज्यादा मार्चके अन्ततक यहाँ पहुँच जाये। वह किसी एक बैरिस्टरीके स्कूल (इन्स ऑफ़ कोर्ट) में दाखिल हो जाये। वह वस्तुतः बैरिस्टर बने या न बने, यह प्रश्न पीछे तय किया जायेगा (सम्भावना यह है कि उस समय तक हम ही उसे बैरिस्टर बनाना न चाहेंगे)। वह कानून पढ़नेके साथ-साथ यहाँकी किसी संस्थामें अंग्रेजीके वर्गमें दाखिल हो जाये। जहाजमें बैठनेसे पहले वह गरीबीसे रहने की निश्चित और विधिवत् शपथ ले। वह यह प्रतिज्ञा भी करे कि वह यहाँ जो-कुछ पढ़ेगा उसका उपयोग आजीविका उपार्जित करनेके लिए न करेगा। आजीविका उसे सदा फ़ीनिक्ससे मिलेगी और वह अपना जीवन फ़ीनिक्सके आदर्शोंकी प्राप्तिके लिए अर्पित कर देगा। वह किसी निरामिष-भोजी परिवारमें रहे (लन्दनमें और आसपास जो भी निरामिष-भोजी परिवार हैं मैं उन सबकी जानकारी प्राप्त कर रहा हूँ)। यदि आवश्यक हो तो वह किसी उपनगरमें घर लेकर रहे और वहाँ अपना खाना खुद बनाये और अपना हर काम खुद करे। सालके अन्तमें उसे अपने ऊपर भरोसा हो जाये तो हम फ़ीनिक्ससे लन्दनमें शिक्षण लेनेके लिए एक बारमें एक या अधिक छात्रोंको भेजें। ये छात्र उसके साथ उस घरमें रह सकेंगे। चूँकि वह मित्रों और परिचितोंका एक अच्छा समुदाय बना लेगा, इसलिए उसके साथ रहनेवाले छात्रोंको अंग्रेज परिवारोंमें रहे बिना ही अंग्रेजोंके सहवासके सब लाभ मिल सकेंगे। फिर, छगनलालके साथ रहनेकी अपेक्षा अंग्रेज परिवारोंमें रहनेका खर्च भी अवश्य ही ज्यादा आयेगा। साथ ही, अगर वांछनीय समझा जाये तो वे केवल कुछ समय किसी परिवारमें भी रह सकते हैं। छगनलाल वहाँ रहकर प्रत्येक भारतीय छात्रसे सम्पर्क स्थापित कर ले। वस्तुतः वह उनका ध्यान बलात् खींचे और धीरे-धीरे उनका अनुग्रह प्राप्त करनेके बाद अपने जीवन द्वारा और बातचीत द्वारा फ़ीनिक्सके आदर्शोंको उनके सम्मुख रखे। उसके यहाँ रहनेसे हम सप्ताह-प्रति-सप्ताह संघर्षकी प्रगतिकी सही जानकारी दे सकेंगे और वह कुछ हद तक रिचके जानेसे होनेवाली कमीकी पूर्ति करेगा। मुझे यहाँ ऐसा कोई दिखाई नहीं देता जो रिचका स्थान ले सके। किन्तु कुछ लोग, जो एड़ लगाये बिना कुछ नहीं कर सकते, छगनलाल-जैसे व्यक्तिको खुशीसे सहायता देंगे। यदि हम छगनलालको बैरिस्टर बनानेके लिए बँध न जायें तो उसको लन्दनमें पूरे तीन वर्ष रुकनेकी भी जरूरत नहीं है। यदि स्थितिका तकाजा हो तो वह कुछ दिनोंके लिए लन्दन छोड़ भी सकता है।

डॉ० मेहतासे कोई नियत छात्रवृत्ति नहीं लेनी है; वे छगनलालके रहनेका सारा खर्च भर देंगे। छगनलाल अपनेतईं स्वभावतः अपने-आपको उस पैसेका न्यासी (ट्रस्टी) समझेगा

१ और २. ये पत्र उपलब्ध नहीं हैं।

जो उसे दिया जायेगा, और लगभग पूरी सादगीका जीवन वितायेगा; इसलिए खर्च कमसे-कम होगा।

मैंने ये सब बातें छगनलालके सामने रख दी हैं। कृपया उसे यह पत्र भी दिखा दें। यदि उसको मेरे दिये हुए सब सुझाव स्वीकार हों तो यह तय करना बहुत-कुछ उसका और कुछ-कुछ आपका भी काम है कि वह यहाँ मार्चमें आये या उससे पहले। वह कुछ समय आपके पास रहे, लोगोंके सम्पर्कमें आये, उनको जाने और प्रश्नको कुछ ज्यादा अच्छी तरह समझ ले तो बेहतर होगा। उसको अपने साथ काफी गुजराती पुस्तकें, कुछ संस्कृत पुस्तकें, एक उर्दूका कायदा और कुछ अंग्रेजी पुस्तकें लानी चाहिए, जो शायद यहाँ न मिलें, या मिलें भी तो बहुत महँगी मिलें। उसको पुस्तकोंके सम्बन्धमें कमी करनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वे पुस्तकें यहाँ दूसरे छात्रोंके लिए उपयोगी होंगी। पुस्तकोंके चुनावके सम्बन्धमें आप डॉ० मेहतासे भी सलाह कर लें। मैं चाहूँगा कि छगनलाल डॉ० मेहताके पुत्रको, हुसेनको[1] और लन्दनमें रहनेवाले दूसरे गुजरातियोंको गुजराती भी सिखाये।

ऊपर बताई गई बातोंपर फीनिक्सके लोगोंसे मंजूरी तो लेनी ही होगी।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१००) से।

२८६. पत्र: लॉर्ड मॉर्लेके निजी सचिवको

[लन्दन]
सितम्बर ३०, १९०९

महोदय,

मैं इसके साथ लॉर्ड मॉर्लेकी जानकारीके लिए उस पत्रकी[2] नकल भेज रहा हूँ जो मैंने लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको लिखा है।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

इंडिया ऑफ़िस रेकर्ड्स: ३८१५/०९; और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१०३) से।

१. दाउद मुहम्मदका लड़का।
२. देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ४३६।

२८७. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको[1]

[लन्दन]
सितम्बर, ३०, १९०९

प्रिय हेनरी,

मैंने आपको छगनलालके सम्बन्धमें अलग पत्र लिखा है। मैं नहीं जानता कि आप किसकी सराहना करते हैं — जो धीरज दिखा सकता है उसकी, या जो धीरज नहीं दिखा सकता उसकी। पत्रमें जो वाक्य है उसके दोनों अर्थ निकलते हैं।[2] मॉड और रिच उसका एक अर्थ लगाते हैं और [मैं] दूसरा।

मुझे अहमदाबाद, कठूर और सूरतकी सभाओंके सम्बन्धमें आपका तार मिल गया। उन सबका असर होगा।

मैं 'ऍडवोकेट ऑफ़ इंडिया' के लेखोंको[3] बहुत कीमती समझता हूँ। ओछे लोग भी हमारी असाधारण सेवा कर जाते हैं। . . . गॉर्डनने जो-कुछ लिखा है, उसीको ले लें। उसने लिखा है कि इस मामलेमें आपका [निहित] स्वार्थ है। यह कथन अनुचित कदापि नहीं है। उसने वहाँ एक स्थायी समिति बनानेकी पूर्ण आवश्यकता सिद्ध कर दी है, जिसमें रिच-जैसा कोई व्यक्ति दिन-रात काम करता रहे और मामला ठंडा नहीं पड़ने दे। मुझे आशा है कि आप ऐसा व्यक्ति खोजनेमें सफल होंगे। क्या आपने 'गुजराती' के श्री एन० वी० गोखलेसे[4] भेंट की है? मैं यह कहना नहीं चाहता कि वे ऐसे व्यक्ति हैं। मुझे कोई ऐसा व्यक्ति याद नहीं आता। वह व्यक्ति ऐसा होना चाहिए, जिसे अपने कामसे प्रेम हो, जिसके पास दूसरे बहुत-से काम न हों और, साथ ही, जिसे इतनी फुरसत भी हो कि वह लगभग पूरा ध्यान दक्षिण आफ्रिकी प्रश्नपर लगा सके।

मैं आपके इस विचारसे बिल्कुल सहमत नहीं हूँ कि आप वेतन नहीं, अपने काममें होनेवाला खर्च ले रहे हैं। यदि केवल यही अन्तर होता तो मैं गॉर्डनकी इस बातसे सहमत हो जाता कि यह अन्तर सूक्ष्म है। आप देखेंगे कि मैंने 'ऍडवोकेट' को लिखे अपने पत्रमें, जिसकी प्रतिलिपि मैं साथ भेज रहा हूँ,[5] इसका किस प्रकार विवेचन किया है। मेरी सम्मतिमें फर्क

१. यह पत्र कहीं-कहीं कटाफटा और अस्पष्ट है। जहाँ सम्भव हुआ है वहाँ गांधीजीको लिखे पोलकके पत्रोंके संदर्भोंके आधारपर अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोंमें शब्द दे दिये गये हैं।

२. यह पोलकके १० सितम्बरके पत्रके सम्बन्धमें है जिसमें उन्होंने लिखा है: "आपका धीरज प्रशंसनीय है। मुझे आपसे ईर्ष्या होती है। मुझे गीताके निष्काम कर्मयोगके उपदेशकी अच्छाई अधिकाधिक दिखाई देती जाती है। लेकिन मुझे यह भी दिखता जाता है कि इसपर अमल करना कितना कठिन है। और उस मनुष्यकी मैं प्रशंसा करता हूँ जो इसपर अमल कर सकता है।" पत्र पोलककी लिखावटमें है और इसमें अन्तमें सम्बोधनका चिह्न अंग्रेजीके "कैन" (सकता है) शब्दसे मिल गया है, इसलिए 'नहीं कर सकता है' अर्थ भी देता है।

३. यहाँ एक शब्द गायब है।

४. गुजरातीके अंग्रेजी विभागके सम्पादक।

५. देखिए "पत्र: ऍडवोकेट ऑफ़ इंडियाको", पृष्ठ ४३४–३५।

बुनियादी है। मुख्य अन्तर देनेके तरीकेका है। बाहरी दुनियाको इस बातसे कोई सरोकार नहीं कि यह काममें होनेवाला खर्च कहा जा सकता है या वेतन। वह तो हर अदायगीको सन्देहसे देखेगी, वह तो काम-मात्रको शंकालु दृष्टिसे देखेगी और यह बात मानेगी ही नहीं कि लोग निस्स्वार्थ भावसे या किसी बड़े मुआवजेके बिना भी काम करते हैं। बम्बईमें हरएक व्यक्तिने [सम्पादक] के [विचारों] को उचित तिरस्कार-भावसे देखा है और आपने भी शायद वैसा ही किया होगा।[1] डॉ० मेहताने आपका [पत्र] देखा है। उन्होंने मुझे गुजरातीमें पत्र लिखा है, जिसका अनुवाद मैं आपके लिए कर रहा हूँ:

> उन (अर्थात् आप) पर 'ऐंडवोकेट ऑफ़ इंडिया' के लेखका प्रभाव पड़ा है, लेकिन वह इतना तिरस्कारके योग्य है कि उसपर ध्यान ही नहीं देना चाहिए। स्वार्थमय हेतु न होनेपर स्वार्थमय हेतु होनेका आरोप किया जाये तो उसको मनपर लेनेकी कोई बात ही नहीं है। जो अपने कर्तव्यका पालन कर रहा हो वह अनुचित आलोचनासे उत्तेजित क्यों हो? इसके विपरीत उसे जानना चाहिए कि इस अनुचित आलोचनाका कारण आलोचकका अज्ञान है। अगर किसी लोकसेवकके पास धन न हो तो उसके उचित भरण-पोषणका ध्यान रखना उनका कर्तव्य होता है जिनके पास धन हो। निश्चय ही उनके (आपके) सम्बन्धमें दक्षिण आफ्रिकामें जो व्यवस्था की गई, वह होनी ही चाहिए थी।

मैं आपको डॉ० मेहताकी सम्मतिका अनुवाद इसलिए भेज रहा हूँ कि वे अत्यन्त समंजस-बुद्धि और गम्भीर व्यक्ति हैं। फिर, मैं यह भी चाहता हूँ कि आप उनके यथासम्भव निकट सम्पर्कमें आयें। इसके कारण आप जानते ही हैं।

मैं इस सप्ताह श्री पेटिटको भी पत्र लिख रहा हूँ। उनको लिखे पत्रकी[2] प्रतिलिपि इसके साथ है।

१. वस्तुतः पोलकने वैसा नहीं किया था। उन्होंने गांधीजीको लिखा था। "आक्षेपको कोई भी व्यक्ति अहमियत नहीं देता, अलबत्ता इसके कारण गॉर्डनके प्रति क्षोभ पैदा होता है। मैंने नवीनतम आक्षेपका संक्षेपमें उत्तर भेज दिया है। मुझे यह आवश्यक लगा। जबतक डाक नहीं चली जाती, तबतक यह प्रकाशित नहीं होगा। आज उन्होंने मुझे एक नोट भेजा था, जिसमें लिखा था कि मैं उनसे मिलूँ। मैं इस बारेमें क्या सोचता हूँ, मैंने उन्हें बता दिया — अर्थात् उनके द्वारा प्रयुक्त शब्दोंसे लोगोंको लगा कि मैं भाड़ेका आन्दोलनकारी हूँ। मैंने उन्हें समझाया कि मैं एक सॉलीसिटर हूँ, और ऐसी ही दूसरी बातें भी समझाईं और कहा कि मैं अपने कानून-सम्बन्धी कार्यके लिए फीस लेता हूँ, तथा शिष्टमण्डलके सदस्यकी हैसियतसे मुझे मेरा खर्च मिलता है। मैंने उन्हें यह भी बताया कि सार्वजनिक निधिसे मुझे जो कुछ मिलता है उससे मेरा खर्च पूरा नहीं पड़ता — मिली इस बातकी साक्षी बड़ी खुशीसे देगी! मैंने उनसे कुछ नहीं छिपाया और उन्होंने यह कहकर बात समाप्त की कि यह "एक सुन्दर अन्तर" है। तब मैं लौट आया। इसके बाद मैंने इंडियन ओपिनियनमें (आपके द्वारा लिखित) अपना जीवनचरित भेजा। किन्तु इससे यही लगता है कि मेरे पारिश्रमिकको वेतन कहनेकी अपेक्षा फीस कहना ज्यादा अच्छा है। इससे कार्यका अवैतनिक स्वरूप सुरक्षित रहता है, और आखिर वेतनके रूपमें तो यह बहुत ही कम है, जबकि फीसके रूपमें ठीक है। मैं और आप तो इस सम्बन्धमें सब-कुछ समझते हैं। किन्तु ऐसे लोग सोचते हैं कि यह "एक सुन्दर अन्तर" है, और निःस्वार्थ कार्यकी बात तो उनकी समझमें आ ही नहीं सकती। आप इसे साउथ आफ्रिकाको भेज सकते हैं।"

२. यह उपलब्ध नहीं है।

प्राप्त कतरनोंमें मुझे आपके [सम्बन्धमें रचित] कविता[1] नहीं मिली है। मैंने आपका भेजा हुआ अनुवाद देखा है। [मैं] मूल कविता देखना [चाहता हूँ] मुझे 'सांझ वर्तमान'[2]का पटेटी अंक भी नहीं मिला है।

मुझे हर्ष है कि आप भारतके राष्ट्र-पितामहसे मिल लिये हैं। आपका [वर्णन] अत्यन्त करुण हैं।[3] मैं यह भी देखता हूँ कि आपने अपने बम्बई पहुँचनेपर जो ऊपरी चमक-दमक देखी थी, अब आप उसका भीतरी रूप देखने लगे हैं।

जब छगनलाल आपके पास होगा तब मुझे आशा है, आप उसके ही हितमें किसी रियायतके बिना उससे काम करवायेंगे और वहाँ जो-कुछ देखने और सीखने लायक है उसको देखने और सीखने देंगे। अगर लोग अनाक्रामक प्रतिरोधकी भावनाको पूरी तरह न समझें तो आप कमसे-कम नेताओंको तो उसका भान करा ही देंगे, यह मैं जानता हूँ। डॉ० मेहता बहुत चाहते हैं कि श्री गोखले उसको पूरी तरह समझ लें। मुझे आशा है कि आप जहाँ भी जायेंगे, श्री उमर आपके साथ रहेंगे, लेकिन अगर श्री हाजी मुहम्मद और दूसरे लोग भी अपने खर्चसे आपके साथ यात्रा करना चाहें तो आप उन्हें भी आमन्त्रित करें। इससे आपके कामका असर बढ़ जायेगा। क्या वहाँसे कोई 'इंडियन ओपिनियन'को गुजरातीमें विस्तृत विवरण भेज रहा है? अगर न भेज रहा हो तो इसकी तरफ ध्यान दें। हमें एक लम्बे संघर्षकी तैयारी करनी है। इसी कारण मैं इन ब्योरेकी बातोंकी चर्चा कर रहा हूँ। यदि आपको ऐसे एक या अनेक ईमानदार व्यक्ति मिलें, जो पूरी तरह लोकसेवामें लगना चाहते हों, लेकिन डॉ० मेहताके सिद्धान्तके अनुसार ही लगना चाहते हों और यदि उनको सहायताकी आवश्यकता हो तो आपको याद होगा, हम इस विषयमें विचार करके कह चुके हैं कि इसपर गौर किया जा सकेगा।

१. पोलक ९ सितम्बरको भारतीय संगीत सभाकी बैठकमें गये थे, जहाँ उनके विषयमें लिखी गई एक कविता उन्हें भेंट की गई।

२. बम्बईसे प्रकाशित एक गुजराती सांध्य दैनिक। उक्त अंकमें पोलककी तस्वीर और उनका एक लेख छपा था।

३. पोलकने लिखा था: "मैं शनिवारको दोपहरके बाद भारतके पितामहसे मिला था। उस दिन उनका जन्मदिवस था। महाप्रयाणसे पहले इस दुबले-पतले योद्धाका आराम करना एक मर्मस्पर्शी दृश्य उपस्थित करता था। जब हम वहाँ पहुँचे, वे आराम कुर्सीपर बैठे थे। उन्होंने निष्कपट भावसे हमारा स्वागत किया, और मुझे मेरे कामके लिए हार्दिक धन्यवाद दिया। उनके धन्यवाद देनेपर मुझे लज्जा महसूस हुई, क्योंकि उन्होंने इतना काम किया लेकिन उन्हें धन्यवाद नहीं मिला। उन्होंने मुझे आपको **इंडियन ओपिनियन** भेजनेके लिए धन्यवाद देनेको कहा। वे उसे नियमित रूपसे पढ़ते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि वे आपकी दृढ़ता और लगनकी प्रशंसा करते हैं। उनकी दृष्टिमें आपका पक्ष अत्यन्त न्यायानुकूल था। हम वहाँ देरतक नहीं रहे। उन्होंने शारीरिक और मानसिक थकानकी शिकायत की। वे 'केवल जी रहे हैं' — उनके लिए अब यही-भर शेष रह गया है। फिर भी उन्होंने एक पत्र सार्वजनिक सभाके लिए भेजा था। जब हम लौटे तब हमने अन्तिम बार फिर उन्हें अपनी आराम कुर्सीपर बैठे देखा था। वे शान्त मुद्रामें कभी समुद्रकी ओर कभी पश्चिमकी ओर देख रहे थे। ऐसा लगता था कि वे शान्तिदायक मृत्यु-लोककी खोज कर रहे हों। यह सुन्दर था — किन्तु मैंने अपनेको तुच्छ और अभिभूत पाया। जैसाकि श्री गोखले कहते हैं, जब कोई दादाभाईके दर्शनके लिए जाता है, वह तीर्थयात्रा करता है। ८५ वर्ष! हो सकता है वे अगले वर्ष तक न रहें। वे बहुत ही कमजोर हो गये हैं।"

अभी लॉर्ड क्रू ने कोई खबर नहीं दी है। मैं उनसे जल्दी करानेका शक्ति-भर प्रयत्न कर रहा हूँ, लेकिन यह काम ही ऐसा है, जिसमें जल्दी नहीं की जा सकती। मैं श्री मायर और डॉ० क्लिफर्डसे मिल चुका हूँ। श्री मायरने बहुत अच्छी तरह बात की। उन्होंने कहा कि अगर लॉर्ड क्रू का उत्तर सन्तोषजनक न होगा तो वे प्रभावशाली व्यक्तियोंकी एक सभा बुलायेंगे और आवश्यक कार्रवाई करेंगे।[1] मैं आपके पास पुरस्कारके प्रतिस्पर्धियोंके लिए एक कच्चा विवरणपत्र[2] भेज रहा हूँ। पुरस्कारदाताके रूपमें डॉ० मेहताके नामका उल्लेख नहीं करना है। एक निर्णायक डॉ० क्लिफर्ड होंगे। मैं 'ब्रिटिश वीकली' के सम्पादकसे मिलूँगा और विवरणपत्रको उनकी सलाहसे अन्तिम रूप दूँगा। प्रतियोगियोंको निमन्त्रित करनेकी सर्वोत्तम विधिके सम्बन्धमें भी उनसे बातचीत करूँगा।

मैं आगामी मासकी ८ तारीखको "अनाक्रामक प्रतिरोध" पर इमर्सन क्लबके सदस्योंके सम्मुख भाषण दूँगा और आगामी मासकी १३ या १४ तारीखको शायद "हेम्पस्टेड पीस ऐंड आर्बिट्रेशन सोसाइटी" में भी बोलूँगा।[3] इन दोनों सभाओंमें अप्रत्यक्ष रूपसे संघर्षकी चर्चा होगी। यह जर्मिस्टनकी सभाके समान ही होगी।[4]

कृपया डॉ० मेहतासे अत्यन्त नियमित रूपसे पत्र-व्यवहार करें।

मेरा खयाल है, मैंने आपको गत सप्ताह लिखा था कि डॉ० मेहताने मिली को देखा था। उनका खयाल है कि जहाँतक छातीका सवाल है, वह बिल्कुल ठीक है। मिलीसे बातचीत करके उन्होंने जो निदान किया, उसके बाद स्टेथस्कोपके प्रयोगकी आवश्यकता भी नहीं समझी। उन्होंने कहा कि स्टेथस्कोपसे वे कुछ अधिक नहीं जान सकते। उनका खयाल था . . .[5] और शायद गलेमें कुछ खराश . . .[6] मेरा विश्वास बहुत समयसे रहा है। मैंने कुछ समय पहले गलेके लिए मिट्टीकी पट्टियोंका सुझाव दिया था। मैंने अपनी सलाह दे दी है। इसलिए अब वे गलेपर शायद मिट्टीकी पट्टियाँ बँधवायेंगे। कुछ भी हो, खतरा जरा भी नहीं है। क्या आप भारतके राष्ट्र-पितामहका एक विशेष चित्र 'इंडियन ओपिनियन' के लिए प्राप्त कर सकते हैं? यदि कोई उपलब्ध हो तो ठीक है। आशा है, वे विशेष रूपसे चित्र खिंचवा लेनेका कष्ट करेंगे। आप जिन नेताओंको अच्छे और सच्चे देशभक्त समझें उनके परिचय और चित्र भी प्राप्त कर सकते हैं। आप प्रो० बेलिनकरसे मिले या नहीं? आपने इसका जिक्र नहीं किया है।

अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके अली इमाम इस समय यहाँ हैं। मैं उनसे थोड़ी देर तक बातचीत कर चुका हूँ। वे मुझे बहुत अच्छे व्यक्ति लगे; वे बिल्कुल सादे मिजाजके हैं। वे पटनाके वकीलोंके नेता हैं और उदारमना व्यक्ति हैं। आज उनको एक भोज दिया जा रहा है। मैं आपको इस सम्बन्धमें निकाली गई सूचनाओंकी एक प्रति भेज रहा हूँ। वे यहाँसे एक पखवाड़ेमें भारतको रवाना हो जायेंगे। वे यहाँ अपने बेटोंको ऑक्सफोर्डमें दाखिल कराने

१. बादमें रेवरेंड मायरने एक सभा १२ नवम्बरको आयोजित की थी। देखिए निबन्धकी शर्तें।

२. यह कागज बादमें नवम्बर १२ को जिसपर "एथिक्स ऑफ पैसिव रेजिस्टेंस" ("अनाक्रामक प्रतिरोधका नीति-पक्ष") पर निबन्ध लिखनेकी शर्तें दी गई थीं, उपलब्ध नहीं है।

३. देखिए "भाषण: इमर्सन क्लबमें", पृष्ठ ४७०। और पृष्ठ ४७४–७६।

४. देखिए "भाषण: जर्मिस्टनमें", पृष्ठ २४२–४४।

५ और ६. यहाँ कुछ शब्द गायब हैं।

आये थे और यहां आनेपर स्वभावत: वे लॉर्ड मॉर्ले और अन्य नेताओंसे, मुख्यत: मुसलमानोंके प्रतिनिधित्वके सम्बन्धमें मिल रहे हैं। आप कृपा करके अखबारोंको देखते रहें और ज्यों ही वे आयें त्यों ही, उनसे पत्र-व्यवहार करें। उनसे आपको बहुत बड़ी सहायता मिलेगी।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५१०२) से।

२८८. पत्र : लिओ टॉल्स्टॉयको

लन्दन
अक्तूबर १, १९०९

महोदय,

ट्रान्सवाल (दक्षिण आफ्रिका) में लगभग पिछले तीन वर्षोंसे जो-कुछ चल रहा है उसके प्रति मैं आपका ध्यान आकर्षित करनेकी धृष्टता कर रहा हूँ।

उक्त उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंकी आबादी कोई १३,००० है। ये भारतीय विगत कई वर्षोंसे अनेक कानूनी निर्योग्यताओंसे त्रस्त रहे हैं। उपनिवेशमें रंगके, तथा कुछ बातोंमें एशियाइयोंके विरुद्ध सख्त पूर्वग्रह हैं। जहाँतक एशियाइयोंका सवाल है, व्यापारिक ईर्ष्याका इसमें काफी बड़ा हाथ है। इस पूर्वग्रहकी पराकाष्ठा आजसे तीन वर्ष पूर्व एक कानून[1] बननेके साथ हुई। मैंने और अन्य बहुत-से लोगोंने भी ऐसा माना कि यह कानून अपमानजनक है, और इसका मंशा इसके प्रभावक्षेत्रमें आनेवाले लोगोंको कापुरुष बना देना है। मुझे लगा कि ऐसे कानूनके आगे झुकना सच्चे धर्मकी भावनासे विसंगत है। मैं और मेरे कुछ साथी बुराईका विरोध न करनेके सिद्धान्तमें दृढ़ आस्था रखते थे और आज भी रखते हैं। मुझे आपकी कृतियोंके अध्ययनका भी सौभाग्य प्राप्त हुआ था और उनकी मेरे मनपर गहरी छाप पड़ी है। पूरी तरहसे परिस्थिति समझायी जानेपर ब्रिटिश भारतीयोंने यह सलाह मान ली कि हमें इस कानूनके आगे नहीं झुकना चाहिए, बल्कि इसे भंग करनेके बदलेमें जेल या अन्य जो सजा कानूनन दी जाये, उसे स्वीकार करना चाहिए। फलस्वरूप भारतीय आबादीमें से करीब आधे लोग, जो संघर्षकी कठिनाइयोंको सहने और जेल जीवनके कष्टोंको उठानेमें समर्थ नहीं हुए, कानूनके आगे झुकनेके बजाय, जिसे उन्होंने अपमानजनक माना है, ट्रान्सवाल छोड़कर चले गये। बचे हुए लोगोंमें से करीब २,५०० लोगोंने आत्मप्रेरणासे जेल जाना स्वीकार किया है। कुछ लोग तो पाँच-पाँच बार जेल गये हैं। जेलकी सजा ४ दिनसे लेकर ६ महीने तक की रही है। ज्यादातर लोगोंको सजाएँ सपरिश्रम दी गई हैं। अनेक आर्थिक दृष्टिसे बर्बाद हो गये हैं। इस समय ट्रान्सवालकी जेलोंमें सौसे अधिक सत्याग्रही हैं। इनमें कुछ लोग बहुत गरीब हैं — रोज कुआँ खोदना, रोज पानी पीना, यह उनकी अवस्था रही है। परिणामस्वरूप उनके परिवारोंका पालन सार्वजनिक चन्देसे करना पड़ा है। यह चन्दा भी अधिकांशत: सत्याग्रहियोंसे ही प्राप्त हुआ। ब्रिटिश भारतीयोंपर इसके कारण बहुत बोझ आ पड़ा है। किन्तु मेरी समझमें उन्होंने अपनेको अवसरके अनुकूल सिद्ध कर दिया है। संघर्ष

१. ट्रान्सवाल एशियाई कानून संशोधन अध्यादेश; देखिए खण्ड ५ और ६ ।

अभी जारी है और कहा नहीं जा सकता इसका अन्त कब आयेगा। तथापि हममें से कुछ लोग तो यह अच्छी तरह समझ गये हैं कि जहाँ पशुबलकी हार निश्चित हो, अनाक्रामक प्रतिरोध वहाँ भी विजयी होगा और हो सकता है। हमने यह भी देखा है कि जहाँतक संघर्षके लम्बे चलनेकी बात है बहुत अंशोंमें उसका कारण है हमारी अपनी ही कमजोरी और उसी कमजोरीसे उत्पन्न सरकारकी यह धारणा कि हम बहुत दिनों तक लगातार कष्ट सहनेमें समर्थ नहीं होंगे।

मैं अपने एक मित्रके साथ यहाँ साम्राज्यीय अधिकारियोंसे मिलने और परिस्थितियोंको उनके सामने रखनेके लिए आया हूँ, ताकि राहत मिल सके। सत्याग्रहियोंने यह समझ लिया है कि सरकारके सामने अनुनय-विनय करनेसे उन्हें कोई वास्ता नहीं रखना है, किन्तु समाजके अपेक्षाकृत निर्बल सदस्योंके आग्रहसे शिष्टमण्डल यहाँ आया है और इसलिए वह उनकी शक्तिका नहीं, अशक्तिका प्रतिनिधित्व करता है।

मैंने यहाँ आकर जो-कुछ देखा-सुना, उससे ऐसा लगता है कि यदि अनाक्रामक प्रतिरोधकी आचार-नीति और उसकी अमोघतापर एक आम निबन्ध-प्रतियोगिता आयोजित की जाये तो उससे आन्दोलन लोकप्रिय होगा और लोग इस विषयमें विचार करेंगे। प्रस्तावित प्रतियोगिताके सन्दर्भमें एक मित्रने नैतिकताका प्रश्न उठाया है। उनका खयाल है कि ऐसी प्रतियोगिताका आमन्त्रण देना अनाक्रामक प्रतिरोधकी वास्तविक भावनासे मेल नहीं खाता और यह तो एक तरहसे सहमति खरीदना हो जायेगा। मैं नैतिकताके बारेमें आपकी राय जाननेका अभिलाषी हूँ। यदि आपकी समझमें निबन्ध-लेखनके आमंत्रणमें कोई बुराई न हो तो मैं आपसे उन व्यक्तियोंके नाम सुझानेकी प्रार्थना भी करूँगा जिनसे इस विषयपर लिखनेकी विशेष प्रार्थना की जानी चाहिए।

एक और बातके लिए मैं आपका कुछ समय लेना चाहता हूँ। मुझे एक मित्रसे भारतकी वर्तमान अशान्तिके बारेमें एक हिन्दूके[1] नाम आपके लिखे गये पत्रकी प्रतिलिपि मिली है। देखनेसे तो लगता है कि उसमें आपका मत ही प्रतिबिम्बित है। मेरे मित्रकी इच्छा है कि वे अपने खर्चसे उसकी २०,००० प्रतियाँ छपवाकर बँटवा दें और उसका अनुवाद भी करायें। किन्तु हमें इसकी मूल प्रति नहीं मिल सकी है और हमें लगता है कि जबतक यह निश्चय न हो जाये कि पत्र आपका ही है और प्रति बिलकुल सही है, तबतक उसका प्रकाशन ठीक नहीं होगा। मैं प्रतिलिपिकी प्रतिलिपि साथमें भेज रहा हूँ और यदि आप यह सूचित कर सकें कि पत्र आपका है या नहीं, उसकी प्रतिलिपि सही है या गलत और आप उसे उपर्युक्त ढंगसे प्रकाशित करनेकी अनुमति दे रहे हैं या नहीं तो मैं आभारी होऊँगा। यदि आप पत्रमें कुछ जोड़ना चाहें तो कृपा करके अवश्य जोड़ दें। मैं एक बात और सुझानेकी धृष्टता करूँगा। उपसंहारके अनुच्छेदमें आपने पाठकको पुनर्जन्मके विश्वाससे विरत करना चाहा है। मैं नहीं जानता (यदि मेरा यह करना आप अनुचित न मानें) कि

१. वैंकूवरसे गुप्त रूपसे प्रकाशित **फ्री हिन्दुस्तान,** नामक एक पत्रिकाके सम्पादकोंने टॉल्स्टॉयके नाम एक पत्र लिखा था। यह पत्र उसीके जवाबमें लिखा गया था। पत्रिकाके प्रधान सम्पादक तारकनाथ दास थे। टॉल्स्टॉयका पत्र **इंडियन ओपिनियन**के २५-१२-१९०९ और १-१-१९१० के अंकोंमें गांधीजी द्वारा लिखित प्रस्तावनाके साथ छपा था। गांधीजीने इसका गुजराती अनुवाद भी किया था, जो पहले **इंडियन ओपिनियनमें** छपा और फिर एक पुस्तिकाके रूपमें।

आपने इस प्रश्नका विशेष अध्ययन किया है अथवा नहीं। भारतमें करोड़ों लोगोंका पुनर्जन्म या देहान्तरणमें युगोंसे गहरा विश्वास रहा है और चीनमें भी यही बात है। कहा जा सकता है कि अनेक व्यक्तियोंको तो इसका अनुभव भी हुआ है और उनके लिए अब यह तर्कपर आधारित मान्यता नहीं है इससे जीवनके अनेक रहस्य तर्कसंगत ढंगसे समझमें आ जाते हैं। ट्रान्सवालके जेल जीवनके कष्ट झेलनेवाले अनेक सत्याग्रहियोंको इससे सांत्वना मिली है। आपको ऐसा लिखनेमें मेरा उद्देश्य आपके निकट सिद्धान्तकी सत्यता प्रमाणित करना नहीं है; बल्कि यह पूछना है कि आपने जिन-जिन बातोंसे पाठकोंको विरत करना चाहा है, क्या आप उनमें से केवल 'पुनर्जन्म' शब्दको हटानेकी कृपा करेंगे।' आपने उक्त पत्रमें आपने विस्तार से 'कृष्ण'[२] को उद्धत किया है और बहुतसे अनुच्छेदोंके हवाले दिये हैं। ये उद्धरण आपने जिस पुस्तकमें से दिये हैं, यदि आप उसका नाम दे सकें तो आपका आभार मानूंगा।

मेरा यह पत्र बहुत लम्बा हो गया। मैं जानता हूँ कि जो आपका आदर करते हैं और अनुसरण करना चाहते हैं उन्हें आपका समय लेनेका कोई अधिकार नहीं है, बल्कि उनका कर्तव्य यह है कि जहांतक बने आपको कष्ट न दें। मैं आपके निकट नितान्त अपरिचित हूँ, फिर भी मैंने सत्यके हितको दृष्टिगत करके आपको यह पत्र लिखनेकी धृष्टता की है और उन समस्याओंके बारेमें आपका मार्गदर्शन चाहा है जिन्हें हल करना आपने अपने जीवनका ध्येय माना है।'

विनीत,

मो० क० गांधी

[काउंट लिओ टॉल्स्टाय
यास्नाया पॉल्याना
रुस]

[अंग्रेजीसे]

'टॉलस्टॉय और गांधी' डा० कालिदास नाग, प्रकाशक पुस्तक भंडार पटना, पृष्ठ ५९-६२।

१. टॉल्स्टॉयने स्वयं ऐसा करना स्वीकार नहीं किया। अलबत्ता कहा कि कि यदि आप न चाहें तो अपने पत्रमें प्रकाशित करते हुए उस हिस्सेको छोड़ दें। देखिए परिशिष्ट २७।

२. उन दिनों कैलिफोर्नियामें निवास करनेवाले बाबा प्रेमानन्द भारती नामक एक बंगाली सन्त द्वारा सन् १९०४ में लिखी एक पुस्तिका।

३. टॉल्स्टॉयने इस पत्रका उत्तर ७ अक्तूबरको दिया था; देखिए परिशिष्ट २७।

२८९. लन्दन

[अक्तूबर १, १९०९के बाद]

नेटालका शिष्टमण्डल

नेटालके शिष्टमण्डलकी गतिविधिके सम्बन्धमें फिलहाल कोई ज्यादा खबर देने योग्य नहीं है। लॉर्ड क्रू को इससे पहले जो पत्र लिखा था, उसका उत्तर अभी नहीं मिला है। शायद न मिले, यह भी बिलकुल सम्भव है। श्री अली इमामने मदद करनेका वादा किया है। शिष्टमण्डलने मैरित्सबर्गकी मसजिदके लिए एक मौलवीके आनेका अनुमतिपत्र (परमिट) माँगा था। नेटाल सरकारने उसका उत्तर दे दिया है। इसके विरोधमें लॉर्ड क्रू को एक कड़ा पत्र भेजा गया है। नेटाल सरकारने श्री आमद भायातको यह उत्तर दिया है कि वह मौलवीके लिए तीन-तीन महीने बाद बदला जानेवाला अनुमतिपत्र देगी और उस अनुमतिपत्रपर हर बार एक पौंडकी फीस देनी होगी। इसका अर्थ यह हुआ कि एक सालमें चार पौंड कर देना पड़ेगा। इस पत्रके सम्बन्धमें शिष्टमण्डलने लॉर्ड क्रू को लिखा है कि ऐसा उत्तर स्पष्ट अपमान है और इससे भारतीय समाजकी भावनाओंको ठेस पहुँचती है। भारतीय समाज इस शर्तपर मौलवीको कैसे बुला सकता है? इस प्रश्नको मुस्लिम लीगने भी उठाया है। मैं तो आशा करता हूँ कि इस अनुचित अत्याचारको सहन करनेके बजाय भारतीय समाज सत्याग्रह करेगा। इस सम्बन्धमें पहले तो यह होना चाहिए कि मौलवी सूचना देकर उपनिवेशमें प्रविष्ट हो जायें। फिर यदि उन्हें जेल भेजा जाये तो वे जेल चले जायें। यदि उन्हें सीमा-पार करें तो वे सीमा-पार हो जायें और देशमें झंडा उठायें। सत्याग्रही जेल जानेसे न डरे और सीमा-पार किये जानेसे भी न डरे। वह भिखारी हो जाये तो भी परवाह न करे और उसको ओखलीमें कूटें तो भी न डरे। सत्याग्रहीका ज्यों-ज्यों दमन हो त्यों-त्यों उसका तेज निखरे और उसकी हिम्मत भी बढ़े। तभी वह सत्याग्रही गिना जायेगा। मैं तो मौलवीके सम्बन्धमें दिये गये उत्तरको धर्ममें हस्तक्षेपके बराबर मानता हूँ। इसका अर्थ तो यह हुआ कि यदि हमें धर्म-पालनकी भी सुविधा न दी जाये तो हम अन्तमें डरकर देश-त्याग देंगे। भारतीयोंमें पानी होगा तो वे देश-त्याग नहीं करेंगे और सभी यहाँ नेटालमें अपने-अपने धर्मका पूरा पालन करेंगे। सरकार सत्ताके मदमें जो अत्याचार करेगी, हम उससे दबेंगे नहीं। किसी बेहूदा अन्यायके विरुद्ध सीधा, सरल और शीघ्र न्याय पानेका मार्ग सत्याग्रह ही है।

स्त्रियोंके मताधिकारके लिए आन्दोलन करनेवाली महिलाएँ

अब स्त्रियोंकी मताधिकारकी लड़ाई फिर सामने आ खड़ी हुई है। मैं लिख चुका हूँ कि कुछ स्त्रियोंने अपनी मर्यादाका त्याग दिया है। उन्होंने प्रधान मन्त्रीकी गाड़ीपर पत्थर फेंके। इतना ही नहीं, उन्होंने सिपाहियोंपर भी प्रहार किया। [इसके लिए] वे खुद हथियारोंसे लैस थीं। ये स्त्रियाँ बहुत बहादुर थीं, इसमें तो शक नहीं; किन्तु उन्होंने बहादुरीका दुरुपयोग किया। लगता तो ऐसा है कि वे कह रही हैं, मताधिकार न मिलेगा तो

हम सिर्फ पत्थर ही नहीं फेंकेंगी, वल्कि इससे आगे भी वढ़ेंगी; हम आग लगायेंगी और हत्या करेंगी। यदि सब ऐसा ही करने लगें तो इसका अर्थ यह हुआ कि जब-कभी कोई उचित या अनुचित अधिकार लेना चाहे और वह उसे न मिले, तो वह हत्या तक कर सकता है। ऐसा हो तो कौमें नष्ट हो जायेंगी। वे स्त्रियाँ अव उन कष्टोंको सहन करना नहीं चाहतीं जो उन्हें उठाने पड़ते हैं। जेलसे तुरन्त छूटनेकी नीयतसे उन्होंने खाना खानेसे इनकार कर दिया। सरकार अब उनको जबरदस्ती खाना खिलाने लगी है। अधिकारी पेटमें नली डालकर उसके द्वारा भोजन पहुँचाते हैं। यदि स्त्रियाँ शरीर-बलसे काम लेंगी तो उनके विरुद्ध शरीर-बलका प्रयोग किया ही जायेगा। ऐसा होगा तो इंग्लैंड रहने योग्य देश न रह जायेगा। यदि ये ही स्त्रियाँ सत्याग्रहपर कायम रहें तो कोई परेशानी न होगी। इससे मताधिकार मिलनेमें देर भले ही लगे, किन्तु उनकी कार्रवाईसे सारे समाजको खतरा पैदा न होगा। अगर उन्होंने भूल की है तो उसका फल उन्हींको भोगना होगा। उन्होंने ये उत्पात आरम्भ किये हैं; इससे बहुत-सी स्त्रियाँ उनके विरुद्ध हो गई हैं। एक स्त्री तो लिखती है कि यदि हत्या या मार-काटसे मताधिकार मिलता हो तो उसे वह नहीं चाहिए। ये स्त्रियाँ कहती हैं कि वर्तमान कानून-निर्माता धूर्त हो गये हैं। लेकिन, यदि वे मारकाट करके सत्ता लेंगी तो उनका शासन कुछ अच्छा होगा, ऐसा नहीं माना जा सकता। मैं कह चुका हूँ कि इन स्त्रियोंके उदाहरणोंसे हमें मार-काट आदिसे अलग रहनेकी शिक्षा लेनी है। उनसे सीखने योग्य दूसरी बात उनकी बहादुरी है। वे फिलहाल जिस उपायका आश्रय ले रही हैं, वह बुरा है; किन्तु वे जिस दृढ़तासे लड़ रही हैं, कष्ट उठा रही हैं और पैसे इकट्ठा कर रही हैं, वह सब अनुकरणीय है। वे किसी बातसे नहीं हारतीं। उनकी प्रतिज्ञा है कि वे मताधिकार लेकर ही छोड़ेंगी। और उस प्रतिज्ञाके अनुसार वे धन देती हैं और प्राण भी। जब स्त्रियोंको अपने अधिकारोंके लिए अपनी ही जैसी चमड़ीके लोगोंसे इतना जूझना पड़ता है तब फिर भारतीय सत्याग्रहियोंको अधिक समय तक जूझना पड़े, कैदमें रहना पड़े, मार खानी पड़े और भूखा रहना पड़े तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

टॉल्स्टॉयका सत्याग्रह

काउंट टॉल्स्टॉय एक रूसी सामन्त हैं। कभी उनके पास बहुत सम्पत्ति थी। उनकी आयु अब लगभग ८० वर्षकी है। उन्होंने बहुत दुनिया देखी है। वे पाश्चात्य लेखकोंमें श्रेष्ठ माने जाते हैं। सत्याग्रहियोंमें वे प्रमुख गिने जा सकते हैं।

उनकी बात मानकर हजारों लोग जेल गये हैं और अब भी जा रहे हैं। रूसी सरकार उनसे डरती है। उनके लेख बहुत तीखे होते हैं। वे लोगोंको निर्भय होकर यह सलाह देते हैं कि वे रूस-सरकारके कानूनको न मानें और फौजमें भर्ती न हों, आदि। उनके लेखोंको छापने नहीं दिया जाता। फिर भी उनके लेख बहुत छपते हैं। इससे रूस-सरकारने उनके शिरस्तेदारको गिरफ्तार कर लिया है और जेल भेज दिया है। काउंट टॉल्स्टॉयने इस कार्रवाईकी आलोचना करते हुए जो-कुछ लिखा है[1] वह जानने लायक है; इसलिए उसका सार नीचे देता हूँ:

> रूस-सरकारने मेरे शिरस्तेदारको गिरफ्तार कर लिया है। उसने इसी प्रकार बहुतोंको गिरफ्तार किया है; परन्तु यह घटना मेरी आँखोंके सामने घटित हुई,

१. यह पत्र डेली न्यूजमें छपा था और यह एल० डब्ल्यू० रिचके नाम लिखा गया था।

इसलिए मेरे ऊपर इसका प्रभाव ज्यादा हुआ। ठीक देखें तो उसे मुझको गिरफ्तार करना था, क्योंकि उसने मेरे ही लेखोंका प्रचार किया है।

जब पुलिसने गुसेफको पकड़ा तब मैं रो पड़ा।[1] यह रोना उसपर दया आनेसे या उसकी हालत देखकर नहीं आया। उसपर दया आनेका तो कोई कारण ही नहीं था, क्योंकि मैं जानता था कि गुसेफको अपने आत्मबलपर भरोसा है। जो व्यक्ति अपने आत्मबलका भरोसा करता है उसको बाहरी बातें प्रभावित नहीं कर सकतीं। ऐसा व्यक्ति जानता है कि उसका सच्चा सुख किस बातमें है। मेरे आँसू हर्षके आँसू थे, क्योंकि मैंने देखा कि गिरफ्तार किये जानेपर गुसेफने प्रसन्नता प्रकट की और वह मुखपर मुसकान लेकर जेल गया। जिस व्यक्तिको अधिकारियोंने पकड़ा है वह स्नेही, ईमानदार और किसीको कष्ट न पहुँचानेवाला है। उस आदमीको रातमें गिरफ्तार किया गया। वह ऐसी जेलमें रखा गया है जहाँ रतवा (टाइफस) ज्वरकी छूत लगती है और उसको निर्वासित करके ऐसी जगह भेजा जायेगा जहाँ लोगोंको बहुत कष्ट सहने पड़ते हैं।

अधिकारी मुझे गिरफ्तार करनेसे डरते हैं। मैं लोगोंसे कहता हूँ कि हत्या ठीक नहीं है; यह उनको पसन्द नहीं है। मुझे पाँच-सात सालके लिए जेलमें बन्द कर दें तो मैं बोलने और लिखनेसे रुक जाऊँ। किन्तु जैसे ये अधिकारी मुझे पागल मानते हैं, वैसे ही यूरोपके दूसरे लोग नहीं मानते। इसलिए अधिकारी मुझे गिरफ्तार नहीं करते, मेरे लोगोंको गिरफ्तार करते हैं।

किन्तु ऐसा अत्याचार व्यर्थ है। मैं मानता हूँ कि मेरे विचार सच्चे हैं और उनका प्रचार करना मेरा धर्म है। मैं इसीके लिए जीता हूँ। इसलिए जबतक मेरे शरीरमें प्राण हैं तबतक मैं अपने विचारोंको प्रकट करता ही रहूँगा। जैसे गुसेफकी मार्फत मैं अपने लेख भेजता था, वैसे ही अब दूसरोंकी मार्फत भेजूँगा। गुसेफकी जगह लेनेके लिए बहुत-से लोग तैयार हैं। और जब मेरे पास काम करनेके लिए आनेवाले सभी लोगोंको वे पकड़ लेंगे तो मैं अपने लेख उन लोगोंको स्वयं भेजूँगा अथवा दूँगा, जिन्हें उनकी जरूरत होगी।

किन्तु मैं यह पत्र सिर्फ अपनी या गुसेफकी खातिर नहीं लिखता। जो हजारों लोगोंपर अत्याचार करते हैं, उनको कैदमें भेजते हैं या फाँसी देते हैं, उनके बारेमें क्या कहूँ? जो अत्याचारोंसे कुचल गये हैं उनकी आत्माएँ उन्हें शाप दे रही हैं। उनकी हाय अत्याचारियोंको लग रही है। कुछ अत्याचारी समझते होंगे कि उनके कामोंसे आमलोगोंको लाभ होता है। ऐसे अत्याचारियोंपर मुझे दया आती है। उन्हें समझना चाहिए। वे ईश्वरकी दी हुई आत्मबलकी पूँजीको बर्बाद कर रहे हैं। उनको सच्चे सुखका स्वाद चखनेको नहीं मिलता। गुसेफ और मेरे सम्बन्धमें जो घटना घटित हुई है, वह असलमें देखें तो कुछ भी नहीं है। किन्तु इस अवसरपर

१. यह घटना अगस्त १८, १९०९ को हुई थी।

मैं अत्याचारी शासकोंसे कहता हूँ: "अपनी जिन्दगीपर विचार करो, अपनी आत्माको खोजो और अपने ऊपर दया करो।"

जो व्यक्ति इस प्रकार लिख सकता है, सोच सकता है और उसके अनुसार व्यवहार कर सकता है, उसने तो जगत जीत लिया है, दुःख पर विजय प्राप्त कर ली है और अपना जीवन सार्थक बना लिया है। ऐसे जीवनमें ही सच्ची स्वतन्त्रता अथवा सच्ची आजादी है। हम ट्रान्सवालमें ऐसी ही स्वतन्त्रताकी आकांक्षा करते हैं। अगर भारत ऐसी स्वतन्त्रताका उपभोग करने लगे तो वह स्वराज्य ही होगा।

पोलकका काम

श्री पोलक भारतमें जो काम कर रहे हैं, वह अवश्य ही किसी दिन फल देगा। मुझे दूसरे लोगोंसे जो पत्र मिले हैं, उनपरसे देखा जा सकता है कि इस समय बम्बईमें हमारी लड़ाईकी ही चर्चा चल रही है। श्री पोलकने बम्बईके लोगोंका मन हर लिया है।

पेटिटकी दानशीलता

इस काममें श्री जहाँगीर बोमनजी पेटिटसे श्री पोलकको बहुत मदद मिली है। श्री पोलक उनके यहाँ ही ठहरे हैं। इतना ही नहीं, श्री पोलककी जो पुस्तिका छपी है, उसकी २०,००० प्रतियाँ भी श्री पेटिटने अपने ही खर्चसे छपाई हैं। इसमें उन्होंने १,००० रुपये खर्च किये हैं।

ऐसे उद्योगसे सत्याग्रहियोंमें दुगना शौर्य आना चाहिए।

पागलपन

'वन्दे मातरम्' नामका पत्र भारतमें या इंग्लैंडमें नहीं निकल सकता, इसलिए हाल ही में स्विट्ज़रलैंडसे निकाला गया है। इसमें खुल्लमखुल्ला मार-काट करनेकी सलाह दी गई है, मानो ऐसा करनेसे भारत आज ही स्वतन्त्र हो जायेगा। किन्तु, अगर स्वतन्त्र भी हो जाये तो वह उस स्वतन्त्रताका करेगा क्या? खैर; मैं इस बार मार-काटकी बातपर ज्यादा लिखना नहीं चाहता। नई हवावाले कुछ भारतीय युवक बिना विचार किये उन लोगोंको गालियाँ देते हैं और उनका तिरस्कार करते हैं, जिन्होंने आजतक भारतकी सेवा की है। ऐसा करनेसे भारत स्वतन्त्र होनेवाला नहीं है। 'वंदे मातरम्' के इस अंकमें श्री गोखले और उनके साथियोंपर आक्षेप किया गया है। लेखक कहता है कि श्री गोखले और उनके साथी नीच और कायर हैं। उसका खयाल है कि ऐसा आक्षेप करनेमें देशका कल्याण है। मुझे तो लगता है कि ऐसा लेख लिखनेवालेको निरा बालक ही होना चाहिए। जरा विचार करें! यह सम्भव है कि श्री गोखले, सर फीरोजशाह मेहता आदि उतनी दूर नहीं जाते जितनी दूर नौजवान जा सकते हैं। ऐसा हो तो क्या इससे उनका किया हुआ काम व्यर्थ हो जाता है? श्री गोखलेने भिखारी-जैसी हालतमें रहकर, अट्ठारह वर्षतक केवल जीवन-निर्वाहका खर्च लेकर फर्ग्युसन कॉलेजके विद्यार्थियोंको पढ़ाया। उनमें इतनी शक्ति है कि अगर वे चाहते तो बहुत कमाई कर सकते थे। इस समय परिषद (लेजिस्लेटिव कौन्सिल) के सदस्यके रूपमें उनको जो पैसा मिलता है उसका अधिकांश वे परोपकारमें लगा देते हैं। जब श्री गोखलेने ऊपर लिखे अनुसार [त्याग] किया तब कम ही लोगोंमें ऐसा उत्साह था। उनका त्याग बहुत बड़ा था, यह सभी स्वीकार करेंगे। सर फीरोजशाहने बम्बई

कॉरपोरेशनमें तीस वर्ष काम किया है। उन्होंने जिन दिनों यह काम किया उन दिनों वैसा काम करनेवाले लोग कम ही थे। अगर वे आज हमारी तरह विचार न करें तो क्या हम उनका तिरस्कार करेंगे? उन्होंने जो काम किया, उसीके फलस्वरूप आज हम ज्यादा काम करनेके योग्य बन सके हैं। मैं इस सवालपर बहस नहीं करता कि वे इस समय भूल कर रहे हैं या नहीं। मैं तो इतना ही कहता हूँ कि वे भूल कर रहे हों तो भी उनकी निन्दा करना हमें शोभा नहीं देता। इसमें हमारा ओछापन है, और इससे प्रकट होता है कि हमें स्वतन्त्रताका पहला पाठ अभी पढ़ना है। स्वतन्त्रताका अर्थ स्वच्छन्दता नहीं है। मुझे स्वयं अपनी चीजोंके उपभोगकी स्वतन्त्रता हो सकती है। लेकिन ऐसा मालूम होता है कि हम तो दूसरोंकी चीजें छीन लेनेका विचार कर रहे हैं। मुझे ये विचार प्रकट करनेकी जरूरत इसलिए पड़ती है कि मैं जानता हूँ, ऊपर बताये हुए पत्रके अंक 'इंडियन ओपिनियन' के भी कितने ही पाठकोंके हाथोंमें आते होंगे। वे गर्मदली हों या नर्मदली, इससे यहाँ मेरा कोई सरोकार नहीं। दोनोंका कर्तव्य है कि जो लोग भारतके स्तम्भ कहे गये हैं उनकी बनाई हुई इमारतको तोड़ें नहीं; उसके ऊपर वे चिनाई भले ही करें। ऐसा न करेंगे तो वे जिस डाल पर बैठे हैं उसीको काटनेके बराबर होगा। नम्रता, गम्भीरता और विचारपूर्ण व्यवहार — ये स्वराज्यके स्तम्भ हैं। जो जी चाहे बोलना-चालना तो प्रलाप कहा जायेगा।

डॉक्टर मेहता

डॉ० मेहताने हाल ही में सत्याग्रह-कोषमें पैसे दिये हैं। वे अब रंगून चले गये हैं।

आजम हाफिजी

देखता हूँ, 'इंडियन ओपिनियन' में यह खबर छपी है कि श्री आजम हाफिजी परीक्षामें पास हो गये हैं। यह गलत है। श्री आजम अभीतक पैसेकी तंगीके कारण किसी स्कूलमें दाखिल ही नहीं हो सके हैं; तब वे पास कहाँसे होंगे?

सैयद अली इमाम

अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी बिहार शाखाके अध्यक्ष श्री सैयद अली इमामके सम्मानार्थ पहली अक्तूबरको भोज दिया गया था। इसमें लगभग सौ लोग आये होंगे। डॉक्टर अब्दुल मजीद प्रमुख थे। आमन्त्रण-समितिमें हिन्दू और मुसलमान, दोनों ही थे। श्री वर्मा और श्री जाफर मन्त्री थे। उपस्थित सज्जनोंमें सर हेनरी कॉटन, डॉक्टर रदरफोर्ड, श्री अपटन, सर मंचरजी भावनगरी, नवाब साहब सैयद हुसेन बिलग्रामी, मेजर सैयद हुसेन, श्री रिच, श्री [जे० एच०] पोलक, श्री विपिनचन्द्र पाल, श्री खापरडे, श्री परीख, श्री छोटालाल पारेख आदि थे।

श्री अली इमामने भाषणमें कहा कि भारत इंग्लैंडके साथ रह सकता है, उसके अधीन नहीं रह सकता। भारतीयोंको अंग्रेजोंके बराबर अधिकार दिये जाने चाहिए। लॉर्ड मॉर्लेने जो-कुछ दिया है, उसका अच्छा उपयोग किया जाये और उसके आगे और माँगा जाये। हिन्दुओं, मुसलमानों और पारसियों, सबको एक राष्ट्र बनकर रहना है। तुर्कीमें मुसलमान, यहूदी और ईसाई सब एक होकर रहते हैं। इसीसे उनको सम्मान मिलता है। भारतमें जहाँ हिन्दू ज्यादा हों और मुसलमान कम हों वहाँ उचित यह है कि हिन्दू मुसलमानोंको

ज्यादा हक पानेमें मदद दें। जहाँ मुसलमान ज्यादा हों वहाँ मुसलमानोंको उचित है कि वे हिन्दुओंके ज्यादा हक पानेमें मददगार हों। अगर ऐसा किया जाये तो हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न रहे ही नहीं। भारतमें हमें बहुत सुधार करनेकी जरूरत है। हमें शिक्षा-प्रसार करना चाहिए और स्त्रियोंके अधिकारोंकी रक्षा करनी चाहिए। जो काम हमें खुद करना है, उसमें पीछे न रहना चाहिए। सभामें उनकी स्वास्थ्यकी शुभ-कामनाका स्वागत तालियोंकी गड़गड़ाहटसे किया गया।

उनके बाद सर हेनरी कॉटनने छोटा-सा भाषण दिया। उन्होंने कहा कि भारतीयोंके अधिकार भारतीयोंके हाथमें हैं।

फिर सर मंचरजी भावनगरी बोलनेको खड़े हुए। उन्होंने ट्रान्सवाल और नेटालके शिष्टमण्डलों [की सफलता] के लिए शुभ-कामना करनेकी अपील की। उन्होंने अपने भाषणमें कहा कि दक्षिण आफ्रिकाका प्रश्न बहुत गम्भीर प्रश्न है। उसके सम्बन्धमें यहाँ दो शिष्ट-मण्डल आये हुए हैं। उनको मदद देनेकी जरूरत है। हमारे भाई दक्षिण आफ्रिकामें बहुत कष्ट पा रहे हैं। उनकी इस अपीलका भी सभामें बड़े उत्साहसे स्वागत किया गया।

इसके बाद श्री गांधीने उत्तर दिया। उन्होंने कहा कि भारतीय राष्ट्रका निर्माण दक्षिण आफ्रिकामें हो रहा है। जहाँ लोग स्वतन्त्रताके खातिर कष्ट-सहन करते हैं वहीं राष्ट्रका निर्माण होना सम्भव है। इसके अलावा, दक्षिण आफ्रिकामें हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न उठता ही नहीं है। इस प्रश्नका निर्णय वहाँ हुआ-जैसा ही है। श्री अली इमाम कहते हैं कि अल्पसंख्यकोंको अधिक अधिकार दिये जाने चाहिए, यह बात बिल्कुल उचित है। ऐसा होनेसे ही हिन्दू और मुसलमान एक हो सकते हैं।

[उन्होंने कहा] ट्रान्सवालके भारतीय अपने स्वार्थकी लड़ाई नहीं लड़ रहे हैं; बल्कि भारतकी प्रतिष्ठाके लिए लड़ रहे हैं। पारसी रुस्तमजी इसीके लिए जेल भुगत रहे हैं। कुछ सिख भी जेल गये हैं। जबतक श्री अली इमाम-जैसे लोगोंको ट्रान्सवालमें साधिकार प्रवेशकी स्वतन्त्रता नहीं मिल जाती तबतक भारतीय जेल जाते ही रहेंगे। वे यह अधिकार लेकर रहेंगे।

नेटालमें सरकार भारतीय व्यापारियोंको कुचल देना चाहती है। वह गरीब भारतीयों तकसे तीन पौंड वार्षिक कर लेती है और उनके बच्चोंको पढ़ने नहीं देती। ऐसे अन्यायका विरोध प्रत्येक भारतीयको करना चाहिए। नवाब साहब इंडिया कौंसिलके सदस्य हैं। इन भारतीयोंके लिए न्याय माँगना उनका कर्तव्य है और यदि न्याय न मिले तो उनका सदस्यता-से त्यागपत्र दे देना उचित होगा।

भारतीय युवकोंको यह विचार करना चाहिए कि यह समस्या क्या है। अगर ऐसा हो तो इसका हल तुरन्त निकल आये।

मेजर सैयद हुसेननें भाषण देते हुए कहा कि जैसे हिन्दू और मुसलमान इंग्लैंडके होटल-में एक मेज पर बैठकर खाना खाते हैं वैसा भारतमें भी किया जाना चाहिए।

श्री विपिनचन्द्र पालनें भाषण करते हुए कहा कि हिन्दू और मुसलमान एक हो सकते हैं और उनको एक होना चाहिए। श्री अली इमामको हिन्दुओं और मुसलमानों, सबने सम्मान दिया, यह बहुत ठीक हुआ है। हिन्दू हिन्दू हैं और मुसलमान मुसलमान हैं; यह तो है ही, लेकिन उनको भारतीय होनेमें अधिक गर्व मानना चाहिए।

श्री अली इमामने फिर बोलते हुए कहा कि दक्षिण आफ्रिकाका प्रश्न बहुत बड़ा है, इसीसे उन्होंने अपने भाषणमें उसके सम्बन्धमें कुछ नहीं कहा है। किन्तु वह प्रश्न उन्हें सालता रहता है, और वे उसको भूल नहीं सकते। भारतीयोंके कष्ट दूर करनेके लिए उनसे जितना हो सकेगा उतना वे करेंगे ही।

डॉ० रदरफोर्डने कहा कि उनमें श्री गांधीका भाषण सुननेके बाद नया उत्साह आ गया है। ट्रान्सवालमें भारतीय एक अच्छी लड़ाई लड़ रहे हैं। सभी लोगोंको उनके उदाहरणका अनुकरण करना चाहिए। वे यथाशक्ति सहायता तो देंगे ही।

संसद-सदस्य श्री अपटनने भी वैसा ही भाषण दिया। उनके बाद श्री परीख बोले और तब सभा समाप्त हो गई। मुझे कहनेकी आवश्यकता नहीं कि भोजमें दोनों शिष्ट-मण्डलोंके सदस्य मौजूद थे।

श्री अली इमामके सम्मानमें दूसरा समारोह मंगलवार शामको चार बजे होगा। उसका आयोजन अखिल भारतीय मुस्लिम लीगकी ओरसे किया जायेगा। श्री अली इमामको यहाँसे इस्तम्बूल जाना है और वहाँसे वे भारत जायेंगे।

गुजरातियोंकी सभा

गुजराती भाषाके सुधार और विकासके उपायों पर [विचार करनेके लिए] एक सम्मेलन काठियावाड़में किया जानेवाला है। इसके समर्थनके लिए मंगलवारको सर मंचरजी भावनगरीकी अध्यक्षतामें गुजरातियोंकी एक सभा की जायेगी।[1] इस सभाके संयोजक श्री रुस्तम देसाई, श्री हुसेन दाउद मुहम्मद और श्री जेठालाल परीख हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१०-१९०९

२९०. पत्र: नारणदास गांधीको

लन्दन
अक्तूबर ३, १९०९

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र फिर नहीं मिला। तुम्हारा चन्दा इकट्ठा करनेका काम चल रहा होगा। मैं चाहता हूँ कि यदि चि० छगनलाल इंग्लैंड आनेका विचार करे तो तुम दक्षिण आफ्रिका जाओ। तुम्हारा भी यही विचार हो तो मेरा आग्रह है कि तुम जाओ। इसमें सहज ही आत्म-कल्याण होगा, ऐसा मैं मानता हूँ। लेकिन इसके लिए तुम्हें पहले अपने पिताकी अनुमति लेनी चाहिए। मैं आदरणीय खुशालभाईको लिख रहा हूँ[2]। अगर उनका विचार तुम्हें भेजनेका हुआ तो वे तुम्हें यह पत्र देंगे अथवा पत्र देते हुए अपना विचार बतायेंगे। मैं यहीं हूँ, यह मानकर उत्तर देना। तुम्हारा जाना तय हो तो भी फीनिक्ससे मंजूरी मँगानी होगी।

१. देखिए "भाषण: गुजरातियोंकी सभामें" पृष्ठ ४५६-५९।
२. देखिए अगला शीर्षक।

तुम जेल जानेके लिए आओ तो मंजूरीकी जरूरत नहीं है, क्योंकि तब तो तुम्हें जोहानिसबर्ग आना होगा। अगर मानें तो जेलमें दुःख तनिक भी नहीं है, सुख ही है। तुम विशेष विचार-विमर्श चि० छगनलालसे करना। गांधी-परिवारने सदाचरण किया है और दुराचरण भी किया है। किन्तु, हम सदाचरणके लिए प्रसिद्ध हैं। इसमें वृद्धि हो सके तो यह परिवारकी सच्ची सेवा है। इसलिए परिवारमें जितने सदाचारी युवक हैं उन्हें चुरा लेनेकी इच्छा मुझे सदा रहती है।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ४८९८) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी।

२९१. पत्र : खुशालचन्द गांधीको

लन्दन
अक्तूबर ३, १९०९

आदरणीय खुशालभाई,

चि० छगनलालने पहले आपसे चि० नारणदासको भी फीनिक्समें होम देनेकी इजाजत माँगी थी। लेकिन उस वक्त तो इजाजत नहीं मिली थी। मुझे याद है कि मैंने भी लिखा था। अब फिरसे विचार किया जा रहा है।

अगर चि० नारणदासको दे दें तो बुरा न होगा, इसमें उसका कल्याण है।

ऐसा चाहना स्वाभाविक है कि उत्तर अवस्थामें सब बेटे आपके पास रहें, लेकिन यह मोह भी है। अगर वे अलग रहकर आत्मकल्याण कर सकते हों और एक बेटा आपके पास रह सकता हो तो दूसरे अलग क्यों न रहें? अपने बेटोंको सदा पास रखना सचमुच स्वार्थ है। हमारा धर्म तो सदा परमार्थ सिखाता है। फिर, अगर लड़कोंके उस मार्गपर आरूढ होनेका प्रसंग आये तब तो मुझे लगता है, उन्हें उसपर जाने ही देना चाहिए। अगर यह बात गले उतर सके तो मेरी विनती है कि आप चि० नारणदासको इजाजत दे दें।

इस सम्बन्धमें सबसे पहले ध्यान इस बातका रखना है कि उसकी अपनी वृत्ति वैसी होनी चाहिए। उसका विचार हो तभी मेरी यह विनती लागू होती है। मुझे याद नहीं है कि नारणदासका ब्याह हो गया है या नहीं। अगर न हुआ हो, और सगाई भी न हुई हो, तो मेरे खयालसे वह ज्यादा अच्छा काम कर सकेगा। मैंने इस विषयमें बहुत विचार किया है। वैसा आचरणभी किया है, और कर रहा हूँ। [इस समय] इसमें गहरे नहीं उतरता। [सिर्फ] अपने विचार आपके सामने रखता हूँ, क्योंकि मुझे लगता है और मैं यह मान लेता हूँ कि हम सब भाइयोंमें आप ही मुझे कुछ-कुछ समझते होंगे।

विशेष चि० छगनलाल आपसे कहेगा। उसकी बात सुनकर जैसा ठीक लगे वैसा करें।

मोहनदासके दण्डवत

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ४८९९) से।
सौजन्य : नारणदास गांधी।

२९२. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अक्तूबर ५, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं आपके इसी ४ तारीखके पत्रके लिए धन्यवाद देता हूँ।[1] आप जो थोड़ा-सा अवकाश ले सके हैं, आशा है वह सानन्द बीता होगा। मैंने जान-बूझकर इस विषयमें और जानकारी देकर आपको परेशान नहीं किया। लेकिन अब मैं कह दूं कि श्री पोलक भारतमें बहुत काम कर रहे हैं। बम्बईमें जो सार्वजनिक सभा की गई थी वह बहुत सफल रही। उसके बाद सूरत, अहमदाबाद और कठूरमें सभाएँ की गई हैं। भारतके अखबारोंमें इस सवालपर पहलेसे ज्यादा विस्तारपूर्वक और निश्चय ही बहुत ज्यादा समझदारीसे चर्चा की जा रही है। अब अखबार यह मानते हैं कि ट्रान्सवालके भारतीय किसी स्वार्थपूर्ण उद्देश्यसे कष्ट नहीं उठा रहे हैं, बल्कि राष्ट्रीय अपमानको दूर करानेके लिए कष्ट उठा रहे हैं। वे अबतक इस बातको स्वीकार नहीं करते थे।

आपने लॉर्ड मॉर्लेके पत्रके सम्बन्धमें जो सलाह दी है और लॉर्ड सभाके सूचना-पत्रमें अपने प्रश्नके[2] सम्बन्धमें जो खबर दी है उसके लिए मैं कृतज्ञ हूँ।

मुझे अभी-अभी लॉर्ड क्रू का उत्तर मिला है।[3] उनके पत्रकी नकल और उत्तरका मसविदा इसके साथ भेजता हूँ। मसविदा आपकी मंजूरी या आपके संशोधनके लिए है। कल 'टाइम्स' ने अपने जोहानिसबर्गके संवाददाताकी भेजी हुई जो खबर छापी थी, उत्तर बहुत-कुछ वैसा ही है। श्री स्मट्सने 'रैंड पायोनियर्स' भाषण दिया था। संवाददाताने उनके भाषणका सारांश देते हुए लिखा है:

> श्री स्मट्सने वर्तमान राजनीतिकी कोई चर्चा नहीं की, यद्यपि इस बातका प्रयास बहुत किया गया कि वे संयुक्त मंत्रिमण्डलके बारेमें सरकारके विचार और एशियाई सत्याग्रहियोंके प्रति उसके रुखमें परिवर्तनकी अफवाह आदि विषयोंपर कुछ कहें। सरकारके रुखमें किसी तरहके परिवर्तनकी बात अब भी अफवाह ही है।

मेरी रायमें लॉर्ड क्रू का उत्तर सन्तोषजनक भी है और बहुत असन्तोषजनक भी — असन्तोषजनक इसलिए कि लॉर्ड क्रू स्पष्टतः श्री स्मट्ससे जरूरतसे ज्यादा डरते हैं; सन्तोषजनक इसलिए कि बातचीत . . .[4]।

१. गांधीजीने लॉर्ड ऍम्टहिलको २१ और २२ सितम्बरको पत्र लिखे थे, लेकिन वे उपलब्ध नहीं हैं। परन्तु लॉर्ड ऍम्टहिलके उत्तरसे थोड़ा-बहुत मालूम हो जाता है कि गांधीजीने इन पत्रोंमें क्या लिखा था। देखिए परिशिष्ट २८।

२. इस प्रश्नका उत्तर लॉर्ड क्रू ने १६ नवम्बरको लॉर्ड सभाके शीतकालीन अधिवेशनमें दिया था।

३. इसपर ४ अक्तूबरकी तारीख थी; देखिए संलग्न-पत्र, पृष्ठ ४५५।

४. यहाँ एक पंक्ति मिट गई है।

ऐसा लगता है कि श्री हाजी हबीबको और मुझे सार्वजनिक रूपसे कुछ काम करनेके बाद ही यहाँसे जाना चाहिए। सामान्यतः देखनेसे तो यही आवश्यक मालूम होता है। अगर हो सके तो हमें लोकसभाके उन सदस्योंकी, जो हमारी बात सुनना चाहें, एक बैठक बुलानी चाहिए। हमें सभी दलोंसे सहायता और सहयोगकी माँग करनी चाहिए। हमें विविध धार्मिक सम्प्रदायोंके प्रतिनिधियोंके सामने भी स्थिति रखनी चाहिए। आपने जो छोटा विवरण पसन्द किया है उसे भी वितरित करना चाहिए और उसके साथ एक ऐसा परिचयात्मक पत्र भेजना चाहिए, जिसमें अबतककी सब स्थिति दी जाये। हमें उन सम्पादकोंसे भी मिलना चाहिए जो हमसे मिलना मंजूर करें और अखबारोंको एक आम पत्र भेजना चाहिए।[1] इसके लिए शायद हमें कमसे-कम इस महीनेके आखिरतक ठहरना पड़ेगा। मैं यह भी फिरसे सोच रहा हूँ कि अगर हमें जोहानिसबर्गकी यूरोपीय और भारतीय समितियाँ मंजूरी दे दें तो क्या हमारा थोड़े-से समयके लिए भारत जाना और फिर लन्दनसे होते हुए दक्षिण आफ्रिका लौटना ज्यादा अच्छा न होगा? लेकिन मेरे खयालसे हमें पहला कदम यह उठाना चाहिए कि हम लॉर्ड क्रू को एक पत्र लिखें। इस पत्रको मैं आपके पाससे मसविदा वापस मिलते ही भेज दूँगा। बाकी बातोंके बारेमें, अगर आपको फुरसत हो और आप शहर जा रहे हों तो आप जब चाहें, हम बातचीत कर सकते हैं।[2] अगर यह न हो सके तो मेरे लिए आपकी सलाह ही मूल्यवान होगी।

आपका, आदि,

[संलग्न-पत्र]

पत्रका मसविदा

[लन्दन]
अक्तूबर ५, १९०९

उपनिवेश-उपमन्त्री
कलोनियल ऑफिस, एस० डब्ल्यू०
महोदय,

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके प्रश्नके सम्बन्धमें आपका इसी ४ तारीखका पत्र पानेका सौभाग्य मिला। लॉर्ड क्रू ने सन्तोषजनक समझौता करानेके उद्देश्यसे जो प्रयत्न किये हैं और वे आगे जो करेंगे उनके लिए श्री हाजी हबीब और मैं उनके आभारी हैं। लेकिन मेरे साथी और मैं यह अनुभव करते हैं कि अब वक्त आ गया है, जब हमें अपनी रवानगीसे पहले जनताको अपनी सब बात बता देनी चाहिए; और अब हम यहाँ ज्यादा देर रुकना भी नहीं चाहते। मेरा खयाल है कि बातचीत जहाँतक चली है वहाँतक उसका विशुद्ध परिणाम सार्वजनिक रूपसे प्रकट करनेमें लॉर्ड क्रू को कोई आपत्ति न होगी।[3]

आपका, आदि,

टाइप की हुई अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१११–२) से।

१. यह नवम्बर ५, १९०९ को प्रकाशनार्थ भेजा गया।

२. गांधीजी लॉर्ड ऍम्टहिलसे दूसरे दिन दोपहरको मिले थे।

३. गांधीजीने इसका दूसरा मसविदा तैयार किया था; "पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको", पृष्ठ ४५९। लेकिन अन्तमें जो पत्र भेजा गया वह भिन्न था; देखिए "पत्र: उपनिवेश-उपमन्त्रीको", पृष्ठ ४६७-६८।

२९३. भाषण: गुजरातियोंकी सभामें[1]

[लन्दन
अक्तूबर ५, १९०९]

भारतमें आजकल नई हवा चल रही है। हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सभी आतुरतापूर्वक "मेरा देश" अथवा "हमारा देश" की रट लगा रहे हैं। हम इसके विषयमें फिलहाल राजनीतिक दृष्टिसे विचार नहीं करेंगे। भाषाकी दृष्टिसे विचार करते हुए सहज ही मालूम हो जाता है कि हृदयसे "हमारा देश" कहकर पुकारनेसे पहले हममें अपनी भाषाके प्रति अभिमान उत्पन्न होना चाहिए। यदि हम ताजे उदाहरणोंपर विचार करें तो देखेंगे कि बोअर लोगोंको आज जो स्वराज्य मिला है उसका एक प्रबल कारण तो यह है कि वे स्वयं भी और उनके बाल-बच्चे भी अधिकतर बोअर भाषाका ही उपयोग करते हैं। जनरल बोथा लॉर्ड क्रू से बात करते समय भी बोअर भाषाका उपयोग करते हैं। उनका अंग्रेजीका ज्ञान हमारे अंग्रेजीके ज्ञानसे बढ़ा-चढ़ा माना जा सकता है, किन्तु वे अपने सम्मानकी रक्षा करने और आदर्श उपस्थित करनेके विचारसे भी अपनी जन्मभूमिकी भाषाका उपयोग करते हैं। हमें ऐसे उदाहरण और भी मिलते हैं, किन्तु उनको यहाँ देनेकी आवश्यकता नहीं है।

इसलिए मुझे तो लगता है कि भारतमें छोटे-बड़े सभीका ध्यान अपनी-अपनी भाषाकी ओर जा रहा है, यह एक सन्तोषजनक प्रगति है। इस उद्गारकी अभिव्यक्ति भी देखनेमें आती है कि सारा भारतीय राष्ट्र एक भाषाका उपयोग कर सकता है। भविष्यमें शायद ऐसा हो भी सके। वह भाषा भारतकी ही होनी चाहिए, इसे सब कबूल कर लेंगे। किन्तु वह बादकी मंजिल हो सकती है। "मैं भारतीय हूँ", ऐसा अभिमान मनमें आये तो उसके अन्दर यह अभिमान भी होना चाहिए कि "मैं गुजराती हूँ"। यदि ऐसा न होगा तो हमारी "तीनमें न तेरहमें" की स्थिति हो जायेगी। हरएक प्रान्तके नेताओंको दूसरे प्रान्तकी भाषा अवश्य जाननी चाहिए। गुजरातीको बंगला, मराठी, तमिल, हिन्दी इत्यादि भाषाएँ सहज ही आ सकती हैं। यह कोई मुश्किल बात नहीं है। हम अपनी कुछ [गलत] धारणाओंके कारण अंग्रेजी भाषा सीखनेके लिए व्यर्थ ही जितनी माथापच्ची और मेहनत करते हैं, उससे आधा परिश्रम भी भारतीय भाषाओंको सीखनेके लिए करें तो कुछ और ही रंग आये। भारतका उद्धार बहुत-कुछ इसीमें समाया हुआ है। [किसी समय] मैं भारतकी शिक्षाके सम्बन्धमें लॉर्ड मैकॉलेके विचारोंके मोहमें पड़ गया था। दूसरे लोग भी मोहमें पड़े हैं। लेकिन मेरा वह मोह दूर हो गया है। मैं चाहता हूँ, दूसरोंका भी दूर हो जाये। लेकिन, शायद यह अवसर इस सम्बन्धमें ज्यादा कहने या सोचनेका नहीं है।

१. राजकोटमें गुजराती साहित्य सम्मेलनका तीसरा अधिवेश होनेवाला था। सम्मेलनके समर्थनमें उसके पूर्व ही, ५ अक्तूबरको, लन्दनमें गुजरातियोंकी एक सभा आयोजित की गई थी। उसमें गांधीजीने भाषण देते हुए यह प्रस्ताव पेश किया था: "यह सभा राजकोटमें इसी महीने होनेवाले गुजराती साहित्य सम्मेलनके तीसरे अधिवेशनको अपनी बधाई भेजती है और उसकी सफलताकी कामना करती है।" सभाकी रिपोर्ट **इंडियन ओपिनियन**में "गुजराती भाषाके सम्बन्धमें कुछ विचार" शीर्षकसे प्रकाशित हुई थी; देखिए परिशिष्ट २९।

यदि ऊपरकी दलील ठीक है, तो हम आगे खास गुजराती भाषाके बारेमें विचार कर सकते हैं। गुजराती आपसमें अंग्रेजी भाषाका व्यवहार करते हैं। इसपर कहना पड़ेगा कि यह उनकी अधम दशाका सूचक है। इसके कारण मातृभाषा कंगाल हो गई है। हम स्वयं उसका अपमान करते हैं और फलतः स्वयं दीन बनते जाते हैं। मैं यह सोचकर काँप उठता हूँ कि मैं अपने विचार गुजरातीमें ठीक-ठीक व्यक्त नहीं कर सकता और अंग्रेजीमें कर सकता हूँ। जिस व्यक्तिने अपनी भाषाका अनादर किया है, वह अपने देशका क्या भला करेगा? महान् गुजराती समाज कभी गुजरातीको भूलकर अन्य भाषा अंगीकार करेगा, यह स्वप्नमें भी सम्भव नहीं। यदि यह सम्भव नहीं है, तो यह कहनेमें कोई अतिशयोक्ति न होगी कि जो अपनी भाषाकी उपेक्षा करते हैं, वे अपने देश और समाजके द्रोही हैं। यह वचन अनुचित नहीं है कि भाषामें उसे बोलनेवालोंका प्रतिबिम्ब होता है। यदि ऐसा है, तो यह एक बड़ा अच्छा लक्षण है कि गुजराती, बंगला, उर्दू, मराठी आदिके सम्मेलन होने लगे हैं।

विदेश जानेवाले भारतीयोंके लिए यह बात बहुत विचार करने योग्य है। उनकी जिम्मेदारी बड़ी है। उन्हें अपनी जातिका नेतृत्व करना है। यदि वे ही अपनी भाषा भूल जायेंगे, तो पापके भागी होंगे।

मैंने अंग्रेजीकी काफी शिक्षा पाये हुए कुछ लोगोंके लेखोंमें पढ़ा है, और कुछको ऐसा कहते भी सुना है कि वे गुजरातीकी अपेक्षा अंग्रेजी अधिक जानते हैं। यह हमारे लिए बहुत शर्मकी बात है। सच कहा जाये तो यह ठीक भी नहीं है। मुझे यह कहनेमें कोई झिझक नहीं कि ऐसा लिखने और बोलनेवाले अंग्रेजी भाषा शुद्ध नहीं लिखते-बोलते। ऐसा ही होना भी चाहिए। मैं मानता हूँ कि कुछ विचार अंग्रेजी भाषामें आसानीसे प्रकट किये जा सकते हैं; यद्यपि यह भी हमारे लिए शर्मकी बात है। लेकिन, साधारणतः यह कहना कठिन है कि हम अंग्रेजी भाषाके मुहावरे और व्याकरणसे अच्छी तरह परिचित हैं। [इसके विपरीत,] गुजराती भाषाके मुहावरे और व्याकरणसे साधारणतः सभी भारतीय सहज परिचित होते हैं। हम गुजरातीमें भूतकालके बदले वर्तमान कालका प्रयोग कभी नहीं करते; किन्तु बहुत अंग्रेजी पढ़े-लिखे भारतीयोंके लेखोंमें भी कालका अशुद्ध प्रयोग मिलेगा। मुहावरोंकी अशुद्धियोंका तो पार नहीं है। ऐसा होता है कि [कभी-कभी] हम गुजराती उच्चारण ठीक नहीं करते और संयुक्ताक्षर नहीं बोल पाते। लेकिन, यह एक ऐसा दोष है, जिसे आसानीसे दूर किया जा सकता है। इसीके कारण यह नहीं कह सकते कि हम गुजराती कम जानते हैं।

कई बार यह भी सुना जाता है कि जो विद्यार्थी अंग्रेजी पढ़नेके लिए [यहाँ] आते हैं उन्हें अंग्रेजीका अभ्यास करना होता है; इस स्थितिमें वे गुजरातीकी चिन्ता क्यों करें? यह वहम है। जब गुजराती मिलें-जुलें तब यदि वे गुजरातीमें ही बोलें, तो उनका अंग्रेजीका ज्ञान कम नहीं होगा, उसका बढ़ना ही सम्भव है; क्योंकि तब वे अंग्रेजोंकी ही अंग्रेजी सुनते रहेंगे, जिससे उनके कान तेज होंगे और वे गलत अंग्रेजी फौरन पकड़ सकेंगे। इसके सिवा, विलायतमें रहनेवाले भारतीय विद्यार्थी अपनी पढ़ाई-लिखाईमें कुछ इतने व्यस्त नहीं रहते कि वे थोड़े समय भी गुजराती पुस्तकें न पढ़ सकें। अन्तमें यदि उन्हें देशकी सेवा करनी है, सार्वजनिक काम करना है, तो अपनी मातृभाषाके लिए उन्हें समय निकालना ही पड़ेगा। यदि अपनी भाषाकी हानि करके अंग्रेजी सीखनेमें ही अपना समय देना है, तो अंग्रेजी पढ़नेका जो

हेतु है — अर्थात् देशकल्याण -- वही खत्म हो जायेगा। यदि ऐसा हो, तो उससे यही सिद्ध होगा कि अंग्रेजी पढ़नेकी कोई जरूरत नहीं है। अगर ऑपरेशनसे बीमारकी मौत ही हो जाये तो कोई भी कह सकता है कि ऑपरेशन नहीं किया जाना चाहिए।

फिर, गुजराती कोई त्यागने योग्य भाषा नहीं है। जिस भाषामें नरसी मेहता[1], अखा भगत[2] और दयाराम[3]-जैसे कवि हो गये हैं और उसे विकसित कर गये हैं, तथा जिसको बोलने-वाले दुनियाके तीन बड़े धर्मो — हिन्दू, इस्लाम और जरथुस्त्र — के अनुयायी हैं, उस भाषाकी उन्नतिकी कोई सीमा नहीं बाँधी जा सकती। एक ही विचार गुजराती भाषामें अनेक बार तीन तरहसे पेश किया जा सकता है। पारसी जिसे खुदा, मुसलमान जिसे अल्ला-ताला और हिन्दू जिसे ईश्वर कहेंगे, अंग्रेजी भाषामें उसके लिए एक ही नाम है "गॉड"। मुसलमान जो गुजराती लिखेगा उसमें अरबी और शेख सादीकी[4] फारसीकी छाया पड़ेगी; पारसीकी गुजरातीमें जरथुस्त्रके 'जेन्द' की छाया पड़ेगी और हिन्दूकी गुजरातीपर संस्कृतका प्रभाव होगा। हिन्दू और मुसलमान तो भारतकी सब भाषाओंकी सेवा करते हैं, लेकिन जान पड़ता है, पारसियोंको तो ईश्वरने ईरानसे गुजरातीकी सेवाके लिए ही यहाँ भेजा है। उनके उत्साही स्वभावके कारण गुजराती भाषाको बहुत लाभ हो सकता है। उनके हाथमें अनेक गुजराती पत्र-पत्रिकाएँ हैं। इसलिए उन्हें गुजरातीके भविष्यको बहुत यत्नपूर्वक सम्भालना चाहिए। मैं उनसे एक ही विनती करना चाहता हूँ, "जो भाषा आपकी मातृभाषा बन गई है, और जिसे अब आप छोड़ नहीं सकते, उस भाषाका आप खून न करें।" पारसी लेखक सरल गुजरातीमें सुन्दर विचार प्रस्तुत करते हैं, लेकिन भाषाके उच्चारण और हिज्जोंके सम्बन्धमें ऐसा व्यवहार करते हैं, मानो जान-बूझकर उससे वैर ठान लिया हो। यह खेदकी बात है। सभी गुजरातियोंको इसपर विचार करना चाहिए। गम्भीरतापूर्वक विचार करने-पर हमें मानना पड़ेगा कि हिन्दू, मुसलमान और पारसी, इन तीनोंके पंथ न्यारे हैं। ऐसा लगता है, मानो तीनों "अपनी-अपनी सम्भालने" का निश्चय कर बैठे हों। मुसलमानोंने अभीतक शिक्षामें गहरी दिलचस्पी नहीं ली है। इसलिए उन्होंने गुजराती भाषापर अभी तक कोई स्पष्ट छाप नहीं डाली है। लेकिन वे शिक्षा ले रहे हैं। हिन्दुओं और पारसियोंको उन्हें शिक्षित करनेके लिए पूरा उद्योग करना चाहिए। यदि ऐसा हो, तो उनसे गुजराती भाषाको बहुत बड़ा सहारा मिलेगा।

राजकोटमें जो सम्मेलन होनेवाला है, उससे मैं नम्रतापूर्वक विनती करूँगा कि उसके नेता गुजराती भाषाके विज्ञ हिन्दू, मुसलमान और पारसी विद्वानोंकी एक मिली-जुली समिति बनायें। उस समितिका काम तीनों कौमोंके गुजराती लेखनपर निगाह रखना और लेखकोंको सलाह देना हो। विचारशील लेखकोंके लिए इस समितिसे अपने लेख बिना पारिश्रमिक दिये सुधरवाना भी सम्भव होना चाहिए।

१. (१४१४-७९) गुजरातके सन्त कवि; गांधीजीके प्रिय भजन "वैष्णव जण तो तेने कहिये" के रचयिता।

२. सत्रहवीं शताब्दीके रहस्यवादी कवि, जो अपने व्यंग्यके लिए प्रसिद्ध थे। ये वेदान्ती और बुद्धिवादी भी थे।

३. (१७७७-१८५३) वैष्णव कवि। अनेक गीतोंके रचयिता जो गुजरात-भरमें लोकप्रिय हैं।

४. (११८४-१२९२) पारसी कवि।

विलायतमें रहनेवाले भारतीयोंसे मैं यह कहता हूँ कि विलायतमें आकर उन्हें अपने बाप-दादोंकी भाषा न भूलनी चाहिए, बल्कि अंग्रेजोंसे सबक लेकर उन्हें उस भाषासे अधिक प्रेम करना चाहिए। यदि वे परस्पर लिखने या बोलनेमें अपनी मातृभाषाका ही उपयोग करेंगे, तो भाषाका उद्धार शीघ्र होगा। इससे भारतकी उन्नति होगी और वे अपने कर्तव्य पूरे कर सकेंगे। जरा विचारपूर्वक देखनेपर यह काम आसान मालूम होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–११–१९०९

२९४. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अक्तूबर ६, १९०९

लॉर्ड महोदय,

इस पत्रके साथ मैं सर फ्रांसिस हॉपवुडको लिखे पत्रका मसविदा भेज रहा हूँ। चूँकि इस प्रकारके मजमूनका पत्र भेजनेमें कोई नुकसान नहीं हो सकता, इसलिए यह बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं है कि वह पत्र भेजा जाता है या कल जो मसविदा[1] भेजा गया है, उसके अनुसार लिखा पत्र भेजा जाता है। इस मामलेमें जितना सोचता हूँ उतना ही मुझे लगता है कि हमें इस वक्त इससे ज्यादा सन्तोष न मिलेगा। मुझे यह भी लगता है कि स्थितिको जान-बूझकर अस्पष्ट रखा गया है और इसके पीछे कूटनीति है। इसलिए इसके स्पष्ट किये जानेकी गुंजाइश नहीं रहती। गूढ़ राजनीति और कूटनीतिका अनुभव मुझे बिल्कुल नहीं है, इसलिए मुझे तो वही मसविदा ज्यादा ठीक लगता है जो मैंने कलके पत्रके साथ आपको भेजा था। लेकिन हमें यहाँ जो आन्दोलन करना है उसकी मोटी रूपरेखा उसमें जोड़ दी जाये और अपना भारत जानेका इरादा भी बता दिया जाये। परन्तु इस बारेमें मैं बिल्कुल आपपर निर्भर हूँ और आप जो भी सलाह देनेकी कृपा करेंगे, वही करूँगा।[2]

आपका, आदि,

१. देखिए "पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको", पृष्ठ ४५५।

२. लॉर्ड ऍम्टहिलने ७ अक्तूबरको गांधीजीके ५ और ६ अक्तूबरके पत्रोंकी प्राप्ति सूचित करते हुए लिखा था: "... देखता हूँ आगे विचार करनेपर आपकी इच्छा विस्तृत प्रक्रियाको अपनानेकी नहीं है, जो मैंने तब सुझाई थी। मुझे कहना चाहिए कि आप सहज मनसे जो सोचते हैं वह बिल्कुल ठीक है; और ऐसा माननेका पर्याप्त कारण मौजूद है कि अगर इस समय लॉर्ड क्रू चाहें भी तो आपके मामलेकी ओर पूरा ध्यान नहीं दे सकेंगे। ऐसी हालतमें आपके निर्णयमें हस्तक्षेप करना अच्छा नहीं लगता। मैं इस बातसे सहमत हूँ कि अगर आप वैसा ही लिखें जैसा पहले लिखना चाहते थे तो वह गलत न होगा। हाँ, आप जिन तरीकोंसे जनतासे अपनी बातें कहना चाहते हैं, उनको स्पष्ट करनेके लिए कुछ पंक्तियाँ जोड़ दें।"

[संलग्न-पत्र]

पत्रका मसविदा

[लन्दन]
अक्तूबर ६, १९०९

सर फ्रांसिस जे० जी० हॉपवुड
कलोनियल ऑफिस, एस० डब्ल्यू०

महोदय,

आपके हस्ताक्षरोंसे युक्त ४ अक्तूबरके पत्र, संख्या ३१६४९, के सम्बन्धमें मैं आपको अनौपचारिक रूपसे लिखनेकी धृष्टता कर रहा हूँ। सो इसलिए कि आपका समय बचा सकूँ, और हो सके तो पत्रका सही अर्थ भी जान सकूँ। चूंकि आप ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके प्रश्नके सम्बन्धमें हुई बातचीतसे परिचित हैं, इसलिए मेरे साथी श्री हाजी हबीब और मैं आपसे अनौपचारिक भेंटकी प्रार्थना करते हैं।

हमारे सामने कठिनाई यह है। जिस पत्रका उल्लेख मैंने किया है उसमें कहा गया है:

> उपनिवेशकी सरकारको पहले यह तय करना चाहिए . . . कि वह श्री स्मट्सके सुझाये हुए आधारपर कानून बनानेके लिए तैयार है या नहीं।

चूंकि अर्ल ऑफ़ क्रू से भेंटके समय मेरे रुखका उल्लेख किया गया है, इसलिए मैं नहीं जानता कि श्री स्मट्स जो कानून पेश करना चाहते हैं वह भेंटमें दिये गये मेरे सुझावके आधारपर होगा या दक्षिण आफ्रिका जानेसे पहले श्री स्मट्स द्वारा सुझाये गये आधारपर। आप जानते ही हैं कि मेरे सुझाये गये भारतीय प्रस्तावमें और श्री स्मट्स जो-कुछ देनेको तैयार थे उसमें बुनियादी फर्क है। यह तो माना ही जायेगा कि लॉर्ड महोदयके तारके बाद श्री स्मट्सने जो रुख अख्तियार किया है उसे ठीक-ठीक जान लेना मेरे और साथीके लिए अधिकसे-अधिक महत्वकी बात है; क्योंकि स्पष्ट है लॉर्ड महोदयने अपना तार उक्त भेंटके बाद भेजा था।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५११४ और ५११५) से।

२९५. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
अक्तूबर ६, १९०९

प्रिय हेनरी,

कठूरसे लिखा आपका पत्र मिला। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि आप अपनी बातचीतमें — कमसे-कम मेरे साथ अपनी बातचीतमें — मेरी चर्चा न करें? मैं समझता हूँ, हमारे उद्देश्यके हितकी दृष्टिसे भी मुझे विचारसे बाहर ही रखना चाहिए। हाँ, जहाँ मेरी चर्चा करना आपको आवश्यक जान पड़े, वहाँ बात दूसरी है। मैं जानता हूँ, उत्तरमें आप कहेंगे कि आपने कभी भी मेरी अनावश्यक चर्चा नहीं की, लेकिन बात दरअसल ऐसी है नहीं। जैसाकि आप भी स्वीकार करेंगे, कभी-कभी आप अपने उत्साहमें बह जाते हैं। आप देखेंगे कि अगर आप ऐसा ही करते रहे तो एक दिन इसकी प्रतिक्रिया होगी — सो मेरे विरुद्ध नहीं; और मेरे विरुद्ध हो भी तो उसे तो अच्छी तरह सहा जा सकता है। प्रतिक्रिया हमारे उद्देश्यके विरुद्ध होगी, जो कमसे-कम आपको तो अच्छी नहीं लगेगी। मुझे एक बार श्री गोखलेसे भी, जब मैं उनके साथ कलकत्तेमें था[1] और उन्होंने मेरे खयालसे मेरी बहुत ज्यादा प्रशंसा कर दी थी, कुछ ऐसा ही कहना पड़ा था। बल्कि उनसे तो मैं कुछ कड़वे स्वरमें बोल गया था।

मुझे इस बातसे खुशी हुई कि आपको वहाँके जीवनमें परायापन नहीं लगता। मैंने अपेक्षा भी यही की थी। आपने पहले ही उसके अच्छे होनेकी कल्पना कर ली थी।

इस हफ्ते बहुत कम कतरनें मिली हैं। इसके लिए जिम्मेदार कोई भी रहा हो, उसने अपना कर्तव्य पूरा नहीं किया। मुझे 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया' की रिपोर्टतक नहीं मिली। 'बॉम्बे गजट' भी नहीं मिला। आपने महिलाओंकी जिस सभामें भाषण दिया,[2] उसकी भी कोई रिपोर्ट नहीं मिली और न आपके सम्मानमें लिखी गई कविता ही। मूल देखनेकी बड़ी तीव्र इच्छा है।

यह पत्र मैं लॉर्ड क्रू की चिट्ठी मिलनेके बाद लिखवा रहा हूँ। उसके बारेमें आगे लिखूंगा। फिर भी, इतना कह देना चाहूँगा कि जाहिर है, हमारे वहाँके मित्रोंको, जो ऐसी उत्साहपूर्ण सभाओंके बावजूद इतने हताश हैं, या तो हमारे पक्षकी सचाईमें विश्वास नहीं है या इस बातमें भरोसा नहीं है कि अन्तमें सत्यकी विजय होती है। अन्तसे मेरा मतलब धूमिल और दूरस्थ भविष्यसे नहीं, बल्कि किसी ऐसी अवधिसे है, जिसका अन्दाजा लगाया जा सके और यह अन्दाजा इस बातसे लगाया जायेगा कि हम कोशिश कितनी करते हैं। क्या आप उन्हें यह नहीं समझा सकते कि सच्ची सफलता स्वयं प्रयत्नमें निहित है, और हमारा प्रयत्न है अनाक्रामक प्रतिरोध; कि हम अपने-आपको उत्तम प्रकारकी शिक्षा दे रहे हैं, जो किसी भी विश्वविद्यालयकी शिक्षासे अच्छी है; कि संघर्ष जितना लम्बा होगा, लोग अन्तमें उससे उतने ही निखरकर निकलेंगे, और आगे सुधारोंको प्राप्त करनेकी उनकी

१. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके १९०१ का अधिवेशन समाप्त होनेपर गांधीजी कोई महीने-भर कलकत्तेमें श्री गोखलेके साथ रहे थे। देखिए **आत्मकथा**, भाग ३, परिच्छेद १७-१९।

२. सितम्बर १५ को पोलकने बम्बईमें आयोजित महिलाओंकी एक सभामें भाषण दिया था। विषय था, "दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय महिलाओंकी अवस्था और स्थिति"।

पात्रता बढ़ेगी तथा उन्हें लड़कर लेनेकी उनमें ज्यादा सामर्थ्य होगी? अगर नेतागण हमारे उद्देश्यों या सभाओंकी उपयोगितामें आस्था रखे बिना वहाँ सभाएँ करते हैं तो निश्चित है कि वे बुरी तरह असफल होंगी। हो सकता है कि सभाएँ ऊपरसे उत्साहपूर्ण दिखाई देती हों, लेकिन वह अन्तर्धारा, जिसे स्वयं नेताओंने लक्षित किया होगा, सरकारकी नजरोंसे भी छिपी नहीं रहेगी। क्या आप उन्हें यह नहीं समझा सकते कि यद्यपि भारतमें हमें वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है, फिर भी इसका मतलब यह नहीं कि अगर ट्रान्सवालके भारतीय योग्य होनेपर भी अपनी स्थिति सुदृढ़ नहीं कर सकते और भारतमें रहनेवाले भारतीयोंसे उन्हें वह सहायता प्राप्त नहीं हो सकती जिसका उन्हें हक है? क्या वे यह नहीं देख सकते कि ट्रान्सवालमें चलनेवाले प्रयत्नों और तदनुरूप भारतमें किये जानेवाले प्रयासोंका स्वरूप ही ऐसा है कि वे भारतको उसके लक्ष्यके अधिकाधिक निकट ले जायेंगे, और सो भी बड़े शुद्ध तरीकेसे? क्या हम शिष्टताकी सीमाका उल्लंघन किये बिना उन्हें यह नहीं दिखा सकते कि भारतमें किसी भी संघर्षको वैसा आदर्शरूप नहीं दिया गया है, जैसाकि ट्रान्सवालके संघर्षको दिया गया है? कांग्रेस जितने भी सुधारोंकी माँग कर रही है, सबका उद्देश्य कोई-न-कोई ठोस और भौतिक लाभ प्राप्त करना है। उसके किसी भी सुधारका उद्देश्य विशुद्ध रूपसे उस प्रकारके लाभकी प्राप्ति नहीं है जिससे, किन्हीं दृश्य लक्षणोंके बिना, मात्र राष्ट्रीय पौरुषकी अभिवृद्धि होती है। तब अगर ट्रान्सवालके मुट्ठी-भर भारतीय भारतके सम्मानकी खातिर अपने-आपको उत्सर्ग कर देनेके लिए कृतसंकल्प हैं तो भारत अपनेको अवसरके योग्य सिद्ध करके इन बातोंको अपने कार्यक्रममें प्रमुख स्थान क्यों नहीं देगा? भारतके नेता इस प्रश्नको भारतमें या उपनिवेशोंमें निर्भीकतापूर्वक लोगोंके सामने ला सकते हैं और उन्हें लाना चाहिए। ऐसा नहीं हो सकता कि ये उपनिवेश हर तरहके दण्डभयसे मुक्त होकर भारतका अपमान भी करते जायें और ब्रिटिश झण्डेके हकदार होनेका झूठा दावा भी करते रहें। हम जानते हैं कि हम बहुत ही सीमित ढंगकी सैद्धान्तिक समानताके लिए लड़ रहे हैं, और उससे तत्काल कोई लाभ भी होनेका नहीं है। लेकिन इसी कारणसे, मेरे और आपके लिए, यह और अधिक जरूरी हो जाता है कि हम अपना पूरी शक्ति लगा दें। क्या वहाँके नेता यह सब नहीं समझ सकते? क्या वे नहीं देख सकते कि इस लड़ाईके द्वारा हम मातृभूमि भारतके सेवार्थ भविष्यके लिए एक अनुशासित सेना तैयार कर रहे हैं? यह सेना ऐसी होगी जो बड़ीसे-बड़ी वहशी ताकतसे सामना होनेपर भी अपना जौहर दिखा सकेगी। अब वहाँके नेता ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षकी मार्फत हमें लिख भेजें कि हम संघर्ष जारी रखें और उनका आशीर्वाद हमारे साथ है।

शुक्रवारको मैं इमर्सन क्लबमें "अनाक्रामक प्रतिरोधकी नैतिकता" पर बोल रहा हूँ,[1] और बुधवार तारीख १३ को हैम्पस्टेडकी शान्ति और पंच-फैसला समिति (पीस ऐंड आर्बिट्रेशन सोसायटी) में "पूर्व और पश्चिम" पर।[2]

आपको नागप्पनकी तसवीर मिल गई होगी। मेरी इच्छा है, आप वहाँके अखबारोंमें उसे प्रकाशित करवा दें। इसके लिए आप 'इंडियन रिव्यू' और मद्रासके अन्य अखबारोंको लिखें तो अच्छा हो। मेरा खयाल है, मैं आपको यह बता चुका हूँ कि मैंने अपने जोहानिस-

१. देखिए "भाषण: इमर्सन् क्लबमें", पृष्ठ ४७०।
२. देखिए "भाषण: हैम्पस्टेडमें", पृष्ठ ४७४-७६।

वर्गवासी बन्धुओंको नागप्पनके नामपर एक छात्रवृत्ति प्रारम्भ करनेकी सलाह दी है। अगर बम्बई या मद्रासमें ऐसा करनेवाला कोई आदमी मिल जाये तो बड़ी शानदार बात हो। उन्हें इस बातका एहसास होना चाहिए कि २० वर्षके एक सच्चरित्र युवकने देशके लिए अपने प्राण उत्सर्ग कर दिये।

श्री डोककी पुस्तक शायद अगले हफ्ते मुझे मिल जायेगी। श्री कूपरने[1] तो कुछ प्रतियाँ शनिवारको ही देनेको कहा है।

शुक्रवारको श्री अली इमामके सम्मानमें समारोह किया गया। लोगोंने पहलेसे बिल्कुल सोच नहीं रखा था, लेकिन "टोस्ट"की विधिके सिलसिलेमें दक्षिण आफ्रिकी शिष्टमण्डलोंके प्रति भी शुभकामनाएँ व्यक्त की गईं। समारोहकी अध्यक्षता सर मंचरजी कर रहे थे, और वे बहुत अच्छा बोले। इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि वे संघर्षके महत्त्वको पूरी तरह समझते हैं। "टोस्ट"का जवाब[2] देते हुए मैंने श्री अली इमामको इस बातके लिए जरा आड़े हाथों लिया कि उन्होंने अपने भाषणमें दक्षिण आफ्रिकी प्रश्नका कोई उल्लेख नहीं किया। मैंने कौंसिलके भारतीय सदस्योंसे अपील की कि वे शिकायतें दूर करनेकी माँग करें और अगर भारतीय कौंसिल तब भी कुछ नहीं करती तो अपने पद त्याग दें। कौंसिलके मुसलमान सदस्य समारोहमें उपस्थित थे। इसपर श्री अली इमामने उठकर यह बताया कि उन्होंने दक्षिण आफ्रिकी प्रश्नका जिक्र क्यों नहीं किया था, और कहा कि प्रश्न इतना बड़ा था कि उसपर अनेक अन्य विषयोंके साथ-साथ विचार नहीं किया जा सकता था; लेकिन वह उनके हृदयमें पैठा हुआ है और वे उसके लिए भारतमें जो-कुछ बन पड़ेगा, करेंगे। कल उनको एक प्रीति-भोज दिया गया था। मैं उसमें नहीं जा सका, क्योंकि मुझे गुजराती साहित्य प्रोत्साहन समितिकी एक बैठकमें शामिल होना था। लेकिन, उन्होंने मॉडसे कहा है कि अगर आप कलकत्तेके आसपास कहीं होंगे तो वे आपको अपने यहाँ निमन्त्रित करेंगे। आपको यह बता दूं कि श्री अली इमाम बड़े स्नेही आदमी हैं और आप जब-कभी उधर जायें और वे आमन्त्रित करें तो आप उनके साथ अवश्य ठहरें। आप उनकी टोह रखिए। वे इसी महीने भारतके लिए प्रस्थान करेंगे।

श्री कैकुबाद कावसजी दिनशा और श्रीमती दिनशा शनिवारको रवाना हो गये। जिस जहाजसे यह पत्र जायेगा, उसीसे वे बम्बई पहुँच रहे हैं। श्री पेटिट उन्हें जानते हैं। आप जंजीबारमें उनके परिवारके लोगोंसे मिल सकते हैं। श्रीमती दिनशाने मुझे 'इंडियन ओपिनियन' के सम्पादकके नाम गुजरातीमें एक पत्र[3] दिया है। उसमें उन्होंने हमारे प्रति सहानुभूति व्यक्त की है और जो महिलाएँ कष्ट उठा रही हैं उन्हें प्रोत्साहन दिया है। याद नहीं, मैंने आपको यह बताया या नहीं कि अबतक रैमजे मैकडॉनाल्ड[4] भी वहाँ पहुँच गये होंगे। कुमारी विंटर-बॉटम उन्हें बड़ा ईमानदार व्यक्ति बताती हैं और उनकी बहुत प्रशंसा करती हैं। वे किसी नैतिकता समितिके सदस्य भी थे। मैं चाहूँगा कि आप उनसे अवश्य मिलें।

१. इंडियन क्रॉनिकलके सम्पादक नसरवानजी एम० कूपरने डोक द्वारा लिखी गांधीजीकी जीवनी प्रकाशित की थी।

२. देखिए "लन्दन", पृष्ठ ४५९।

३. यह २३-१०-१९०९ के अंकमें प्रकाशित किया गया था।

४. (१८६६-१९३७); मजदूर-दल (लेबर पार्टी) के एक प्रमुख सदस्य, और १९२४ तथा १९२९-३५ में इंग्लैंडके प्रधान मन्त्री।

अगर आपने पारसी रुस्तमजी, रांदेरी, सोरावजी, व्यास, नानालाल, कामा, दाउद मुहम्मद, रविकृष्ण, मेढ . . .[1] हरिलाल, चेट्टियार तथा अन्य लोगोंके पास दो-चार पंक्तियाँ लिखकर नहीं भेजी हों तो कृपया अब वैसा कर डालिए।

जारी — ७-१०-१९०९

विभिन्न पत्रों और पत्रोंके मसविदोंसे आपको पता चल जायेगा कि स्थिति कैसी है। यह पत्र मिलते-मिलते मेरा एक तार[2] भी आपके पास पहुँच जायेगा। लॉर्ड क्रू का जवाब जैसा मैंने लॉर्ड एम्टहिलको लिखे पत्रमें[3] बताया है वैसा ही है। एक बात अब निश्चित है, और वह यह कि संघर्ष अभी जारी रहेगा। मैं उसके लिए आतुर हूँ। दुःख मुझे सिर्फ इस बातका है कि मैं ट्रान्सवालमें होनेके बदले यहाँ हूँ। कल समितिकी एक बैठक थी, जिसका मुख्य उद्देश्य नेटालके प्रतिनिधियोंसे मिलना था। लेकिन जहाँ-कहीं दक्षिण आफ्रिकाकी चर्चा होगी, ट्रान्सवालका प्रश्न तो आ ही जायेगा। लॉर्ड ऍम्टहिल वहाँ मौजद थे, लेकिन उन्होंने मेरा पत्र नहीं देखा था। मैंने उन्हें कार्यक्रमकी एक रूप-रेखा तैयार कर दी थी, जिसे उन्होंने पूरी तरह स्वीकार कर लिया था। तदनुसार अब वक्तव्यकी प्रतियोंका वितरण होगा; शायद हाउस ऑफ़ कॉमन्सके सदस्योंकी एक बैठक तथा ऐसी ही कुछ और भी बातें होंगी। इसमें पूरे तीन हफ्ते लगेंगे। काम शुरू करनेके पहले मुझे लॉर्ड ऍम्टहिलसे पत्रके एक-न-एक मसविदेपर स्वीकृति लेनी है, फिर उसे भेजकर उसके उत्तरकी राह देखनी है। हो सकता है, इसमें एक कीमती सप्ताह पूरा निकल जाये। लेकिन सबसे बड़ा सवाल है — भारतकी प्रस्तावित यात्रा। दरअसल तो मुझे भारत बिल्कुल जाना ही नहीं चाहिए। मेरे लिए उपयुक्त स्थान ट्रान्सवाल है, लेकिन जिस कारणसे मैं यहाँ आ गया हूँ वही कारण मेरी भारत-यात्रापर भी लागू होता है। फिर भी, मेरा निश्चित मत है कि अगर मुझे भारत आना ही है तो श्री हाजी हबीबके बिना हर्गिज नहीं आना चाहिए। वे भारत-यात्राका महत्त्व समझते हैं, लेकिन ट्रान्सवालमें उन्हें अपना कोई आवश्यक काम है। वे मुझे भरोसा दिलाते हैं कि उन्होंने संघर्षके आन्तरिक उद्देश्यको समझ लिया है और वे ट्रान्सवालमें भी उसमें पूरा हिस्सा लेना चाहते हैं। तब अगर उन्हें दक्षिण आफ्रिका लौट ही जाना है तो मुझे भी वैसा ही करना पड़ेगा। इसलिए कुछ ऐसा लगता है कि भारत-यात्रा नहीं हो सकेगी। लॉर्ड ऍम्टहिल तो (यह बात गोपनीय है) भारतकी प्रस्तावित यात्रापर बहुत जोर देते जान पड़ते हैं। समितिकी कलकी बैठकमें सर मंचरजी भी उपस्थित थे। उन्होंने 'साँझ वर्तमान' में प्रकाशित बम्बईकी सभाकी रिपोर्ट देखी। इस बातसे वे बहुत दुःखी थे कि "इकनिया" चन्दा नहीं हुआ। उनका खयाल है कि कुछ ऐसे कार्यकर्ता होने चाहिए जो "इकनिया" या "पैसा" चन्दा[4] इकट्ठा करनेका व्रत ले लें, और वहाँके अखबार इस उगाहीको अधिकसे-अधिक प्रचारित करें। यह, निःसन्देह, शिक्षाका एक सुन्दर तरीका है, लेकिन इसके लिए हमें कार्य-

१. यहाँ मूल कट-फट गया है, जिससे बीचके नाम पढ़े नहीं जा सके।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. देखिए "पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको", पृष्ठ ४५९।

४. गांधीजीने एक-एक चन्दा लेनेका सुझाव दिया था; देखिए "तार: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ३६६। "पैसा-फंड" के नामसे प्रसिद्ध इस चन्देका विचार मूलतः लोकमान्य तिलकका था। इस समय तक बम्बई प्रान्तमें इसने एक संस्थाका रूप धारण कर लिया था। इस कोषका उपयोग स्वदेशी आन्दोलनको बढ़ावा देनेके लिए किया जाता था।

कर्ताओंकी एक सेना चाहिए। अगर आप ऐसे कार्यकर्ता प्राप्त कर सकें तो यह एक योग्य कार्य है। कार्यकर्ता वे लोग हों तो अच्छा रहे, जिन्हें दक्षिण आफ्रिकाका अनुभव है। यह जरूरी नहीं कि उनकी संख्या बहुत अधिक हो। अगर आपको हर केन्द्रमें पाँच भी मिल जायें तो पर्याप्त है। सर मंचरजी भी यह सोचते हैं कि नेटालके लिए गिरमिटिया मजदूरोंकी भर्ती गैर-सरकारी तौरपर भी बन्द करनेकी कोशिश होनी चाहिए। उनका खयाल है कि हमारे पास कुछ ऐसे वक्ता होने चाहिए, जो ऐसे हर स्थानका दौरा करें, जहाँ भर्ती-एजेंट भेजे जाते हैं, और भावी प्रवासियोंसे नेटालके लिए गिरमिटमें न बँधनेको कहें। इस कामके बारेमें आप केवल कलकत्ता और मद्रासमें बातचीत कर सकते हैं। मुझे भरोसा है कि आप इन दोनों नगरोंमें प्रवासी-केन्द्रोंको देखने अवश्य जायेंगे, बल्कि अधिकारियोंसे भी मिलेंगे, तथा इस प्रणालीका अध्ययन करेंगे, और सम्भव हुआ तो, भर्ती-एजेंटोंसे भी सम्पर्क स्थापित करेंगे। इस तरह आप देख सकते हैं कि वहाँ आपका काम अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण होता जा रहा है, और हमारे प्रयत्नोंका केन्द्र-बिन्दु भारतकी ओर खिसकता जा रहा है। जबतक ट्रान्सवालमें अनाक्रामक प्रतिरोधकी आग प्रज्वलित नहीं रखी जाती, और भारतमें उसकी कोई ठोस प्रतिक्रिया नहीं होती तबतक यहाँ कोई प्रभावकारी काम न हो सकता है, और न होनेका है। अगर छगनलाल यहाँ आनेको तैयार हो तो उसके लिए अच्छा यही होगा कि आपके साथ कुछ दिन घूम-फिरकर मार्चसे पहले ही आ जाये और यहाँकी ठंडका मजा ले। बात दरअसल यह है कि भारतीय इंग्लैंडमें अपनी पहली सर्दियोंकी सख्ती महसूस नहीं करते हैं, और ऐसा ही छगनलालके साथ भी हो सकता है। रिचके यहाँसे चले जानेके बाद — और मुझे लगता है, वे चले जायेंगे — छगनलाल कुछ उपयोगी काम कर सकेगा। कभी-कभी ऐसे सवाल भी उठ सकते हैं, जिनके सम्बन्धमें लॉर्ड ऍम्टहिलको कुछ जानकारीकी जरूरत हो। इसके लिए उन्हें कोई आदमी तो चाहिए ही।

आप श्री मेहताको भी गुजराती और अंग्रेजी दोनों भाषाओंके अखबारोंकी कतरनें भेज दें तो कृपा हो।

मैं आपको बता चुका हूँ कि नेटाल शिष्टमण्डलके श्री बदात कुछ दिन पहले ही रवाना हो गये हैं। और यह देखते हुए कि यहाँ सचमुच करनेको कुछ है नहीं, श्री भायात भी अगले शनिवारको, यानी जिस दिन यह पत्र भेजा जायेगा उसी दिन, प्रस्थान कर रहे हैं। मैं समझता हूँ, श्री आंगलिया, जबतक हम लोग यहाँ हैं, ठहरेंगे।

आज सुबह मुझे लॉर्ड ऍम्टहिलका एक पत्र मिला है। उसकी एक नकल भेज रहा हूँ। इसलिए पहले पत्रका मसविदा[1] अर्ल ऑफ़ क्रू को भेजा जायेगा।

हृदयसे आपका,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५११३ और ५१५२'अ')से।

1. देखिये लॉर्ड ऍम्टहिलको लिखे पत्र (पृष्ठ ४५९) के साथ संलग्न मसविदा।

२९६. शिष्टमण्डलकी यात्रा [–१४]

[अक्तूबर ८, १९०९ से पूर्व]

मैं हफ्ते-दर-हफ्ते अनिश्चित खबर देता जाता हूँ। आशा है कि इससे कोई भारतीय निराश न होगा।

यह कहावत याद रखनी चाहिए कि अपने बलके बराबर कोई बल नहीं होता। इतना तो मुझे निश्चित जान पड़ता है कि जो विलम्ब हो रहा है, उसके कारण हम ही हैं। किसीको यह तो मानना ही नहीं चाहिए कि हममें जो निर्बलता है, उसको सरकार नहीं जान सकती। सबलता है, उसको तो हम देखते हैं; किन्तु ऐसा आभास मिलता रहता है कि हम अपनी निर्बलताको छुपाना चाहते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए। अब हम जेलके तो अभ्यस्त हो ही गये हैं।

खबर आई है कि श्री नानालाल शाहको फिर सीमाके बाहर भेज दिया गया और फिर तुरन्त गिरफ्तार भी कर लिया गया। मुझे इस खबरको पढ़कर बहुत खुशी हुई है। मैं उनको मुबारकबाद देता हूँ। हमें यह सीख लेना है कि जेलसे बाहर रहकर कोई भी सुख भोगनेसे जेलमें रहकर मर जाना ज्यादा अच्छा है।

नैतिकता-संघ (यूनियन ऑफ़ एथिकल सोसाइटीज़) ने मुझे इमर्सन क्लबमें भाषण देनेके लिए आमन्त्रित किया है।[1] यह भाषण राजनीतिक नहीं है। इसका विषय सिर्फ यह है कि सत्याग्रह क्या है। किन्तु उसमें लड़ाईकी बात आ जायेगी। इसी प्रकारका एक और भाषण देनेकी भी बात चल रही है।[2]

श्री मायरसे जोहानिसबर्गमें ही मेरी जान-पहचान हुई थी। उसी आधारपर मैं उनसे मिला हूँ। यदि लॉर्ड क्रू से प्रतिकूल जवाब मिले तो उन्होंने भी सहायता करनेका वचन दिया है। डॉ० क्लीफर्ड ने भी ऐसा ही वचन दिया है। वे श्री डोकके परिचित हैं और यहाँके एक प्रख्यात पादरी हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–१०–१९०९

१. गांधीजीने यह भाषण ८ अक्तूबरको दिया था; देखिए "भाषण: इमर्सन क्लबमें", पृष्ठ ४७० ।

२. देखिए "भाषण: हैम्पस्टेडमें", पृष्ठ ४७४-७६ ।

२९७. पत्र : उपनिवेश-उपमन्त्रीको

[लन्दन]
अक्तूबर ८, १९०९

महोदय,

मुझे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके प्रश्नपर आपका इसी मासकी ४ तारीखका पत्र प्राप्त करनेका सौभाग्य मिला। आपके पत्रका अन्तिम भाग मेरी और मेरे साथीकी समझमें साफ-साफ नहीं आया है। हमारे सामने कठिनाई यही है। इस पत्रमें कहा गया है:

उपनिवेशकी सरकारको पहले यह तय करना चाहिए कि वह . . . श्री स्मट्सके सुझाये हुए आधारपर कानून बनानेके लिए तैयार है या नहीं।

मैं नहीं जानता कि श्री स्मट्स जो कानून पेश करना चाहते हैं, वह गत मासकी १६ तारीखकी भेंटमें दिये गये मेरे सुझावके आधारपर होगा या दक्षिण आफ्रिका जानेसे पहले श्री स्मट्स द्वारा सुझाये गये आधारपर। मेरे सुझाये गये प्रस्तावमें और श्री स्मट्स जो-कुछ देनेके लिए तैयार थे, उसमें एक बुनियादी फर्क है। यह तो माना ही जायेगा कि लॉर्ड महोदयके तारके बाद श्री स्मट्सने जो रुख अख्तियार किया है उसे ठीक-ठीक जान लेना मेरे और मेरे साथीके लिए अधिकसे-अधिक महत्त्वका है। स्पष्ट है कि लॉर्ड महोदयने अपना तार उक्त भेंटके बाद भेजा था।

हम मानते हैं कि आखिरी नतीजा मालूम होनेसे पहले बातचीतमें कुछ वक्त लगेगा। फिर भी हमारी इच्छा यह है कि हमें इस देशमें अनिश्चित रूपसे लम्बे अर्से तक न रुकना पड़े। इसलिए मेरे साथी और मैं यह अनुभव करते हैं कि हमारे लिए अपनी रवानगीसे पहले लोगोंको सब बातें बतानेका वक्त यही है। हम ऐसा करना जरूर चाहते हैं, लेकिन इससे हम अर्ल ऑफ़ क्रू को परेशानीमें कतई नहीं डालना चाहते। दरअसल, हम उन प्रयत्नोंके लिए लॉर्ड महोदयके कृतज्ञ हैं जो सन्तोषजनक समझौता करानेकी गरजसे उन्होंने किये हैं और आगे भी करेंगे। इस सार्वजनिक कार्यको उठानेमें हमारी इच्छा केवल यह है कि हम लॉर्ड महोदयके हाथ मजबूत करें और अपने कार्यका सन्तोषजनक ब्योरा अपने दक्षिण आफ्रिकी देशवासियोंको दे सकें। हम उन लोकमान्य नेताओंसे भी मिलना चाहते हैं जिनको हमारी मुसीबतोंका खयाल हो सकता है। सम्भव हो तो हम गिने-चुने लोगोंकी सभाओंमें भाषण देना, अखबारोंमें एक छोटा-सा वक्तव्य छपाना, आदि काम भी करना चाहते हैं। यदि हमें जोहानिसबर्गकी यूरोपीय और भारतीय समितियाँ सलाह दें और हमारे पास समय रहा तो हमारा विचार भारत जाने और अपने यहाँके कामका ब्योरा भारतीय जनताके सामने रखनेका भी है।

मेरा यह खयाल है कि अपनी बातचीतके दौरान हमने जो प्रगति की है और हम जिन निर्णयोंपर पहुँचे हैं, उन्हें हम प्रकट कर दें तो लॉर्ड क्रू को कोई आपत्ति न होगी।

क्या मैं आपसे जल्दी उत्तर देनेकी प्रार्थना कर सकता हूँ?

आपका, आदि,

मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स २९१/१४२; और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५११९) से।

२९८. पत्र: लॉर्ड मॉर्लेके निजी सचिवको

[लन्दन
अक्तूबर ८, १९०९]

महोदय,

मैं इस पत्रके साथ, ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय प्रश्नके सम्बन्धमें लॉर्ड क्रू के आखिरी पत्र और उसके उत्तरकी[1] नकल सेवामें भेज रहा हूँ। यह लॉर्ड मॉर्लेकी जानकारीके लिए है।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५११८) से।

२९९. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अक्तूबर ८, १९०९

लॉर्ड महोदय,

मैं आपके पत्रके[2] लिए आभारी हूँ। चूंकि आपने सारी जिम्मेदारी मुझपर डाल दी है, मैंने बीचका रास्ता अपनाया है और दोनों पत्रोंको मिलाकर एक पत्र बना दिया है। पत्र जिस रूपमें गया है,[3] उसकी नकल मैं साथ भेज रहा हूँ। मुझे भरोसा है कि आप इसे पसन्द करेंगे।[4] इस बीच, मुद्रकको विवरणकी[5] २,००० प्रतियाँ छापनेका आदेश दिया जा रहा है।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो–नकल (एस० एन० ५१२०) से।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. अक्तूबर ७को लिखा पत्र।

३. देखिए "पत्र: उपनिवेश-उपमन्त्रीको", पृष्ठ ४६७-६८।

४. लॉर्ड ऍम्टहिलने ९ अक्तूबरको उत्तर देते हुए इस बातसे इनकार किया था: उन्होंने "सारी जिम्मेदारी" गांधीजीके कन्धोंपर डाल दी थी। उपनिवेश कार्यालयको उनके विचारसे भेजी गई चिट्ठीमें सुधारकी कोई ज्यादा गुंजाइश नहीं थी। "मुझे ऐसा लगता है कि उसमें सारी बात कह दी गई है और बहुत अच्छी तरहसे कही गई है, इसलिए अगर आपको सन्तोषजनक उत्तर न मिला तो मुझे बहुत निराशा होगी।"

५. देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंवासी मामलेका विवरण", पृष्ठ २८७-३००।

३००. पत्र : 'गुजराती पंच' को

[लन्दन]
अक्तूबर ८, १९०९

सेवामें
सम्पादक
'गुजराती पंच'
[बम्बई]

महोदय,

आपने मुझसे अपने दिवाली विशेषांकके लिए कुछ लिख भेजनेका अनुरोध किया है।

मेरा जीवन इस समय एक ही काममें लगा है और वह है ट्रान्सवालवासी दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी प्रतिज्ञा पूरी करानेमें मृत्यु-पर्यन्त जूझना। यह प्रतिज्ञा भारतकी प्रतिष्ठाकी रक्षाके निमित्त हिन्दू, मुसलमान, पारसी, पंजावी, बंगाली, मद्रासी, गुजराती और दूसरे हजारों गरीब भारतीयोंने ली है। ट्रान्सवाल, जो भारतके सामने ऐसा ही है जैसे महासागरके सामने अंजलि, हमारे राष्ट्र-पितामह[1]-जैसे व्यक्तिको भी आने देनेसे इनकार करता है। यहाँके मुट्ठी-भर अशिक्षित व्यापारी, फेरीवाले और मजदूर भारतीय इस अपमानको सहन नहीं कर सकते और न करेंगे। इस अपमानको दूर करानेके लिए और अपने धर्मका, फिर वह चाहे हिन्दू धर्म हो, इस्लाम हो अथवा जरथुस्त्री धर्म हो, पालन करनेके लिए ट्रान्सवालकी तेरह हजार भारतीय आवादीमें से २,५८० भारतीय अवतक जेल भोग आये हैं, वहुत-से अव भी भोग रहे हैं और आगे भोगेंगे। अपनी प्रतिज्ञाका पालन न करें तो हम धर्म-भ्रष्ट हो जायेंगे, यह सव धर्मोकी शिक्षा है। मुझे यह भी कह देना चाहिए कि यह जेल भयंकर है। वहाँ हमें उचित भोजन नहीं दिया जाता और हमें काफिरोंकी श्रेणीमें रखा जाता है। वहुत-सी अवला कही जाने-वाली, लेकिन दरअसल सवल, भारतीय नारियाँ वियोगका दुःख सहती हैं ताकि उनके पति इस संघर्षमें लड़ सकें। कितनी ही अपने वाल-वच्चों सहित भूखी रहती हैं। इस दुःखको सहन करनेवालोंमें गुजराती काफी हैं, क्योंकि इस देशमें गुजरातके हिन्दू और मुसलमान ज्यादा हैं।

अगर यह पत्र छप जाये तो 'गुजराती पंच' के पाठक इस दिवालीके उत्सवपर अपने मनमें यह सोचें कि इस समय उन्हें ट्रान्सवालमें रहनेवाले भारतीयोंके लिए क्या करना है। ट्रान्सवालके भारतीयोंके लिए तो दिवाली, ईद या पटेटीका त्यौहार तभी हो सकता है, जव वे इस लड़ाईमें जीतकर वापस लौटें।

आपका,
मोहनदास करमचन्द गांधी

'ईजिप्टनो उद्धारक अथवा मुस्तफा कामेल पाशानुं जीवन-चरित्र तथा वीजा लेखो' नामकी मूल गुजराती पुस्तकसे।

१. दादाभाई नौरोजी।

३०१. भाषण: इमर्सन क्लबमें[1]

[लन्दन
अक्तूबर ८, १९०९]

युद्धको शरीर-बलका गुणगान करके गौरवान्वित किया जाता है, लेकिन वह मूलतः मनुष्यका पतन करनेवाला है। वह उनका नैतिक बल तोड़ देता है, जिन्हें उसकी शिक्षा दी जाती है। वह स्वभावतः सौम्य प्रकृतिके लोगोंको क्रूर बना देता है। वह नैतिकताके हर सुन्दर सिद्धान्तका उल्लंघन करता है। उसमें प्रतिष्ठा प्राप्त करनेका मार्ग वासनाके आवेगोंसे दूषित और हत्याओंके रक्तसे रंजित है। हमारे लक्ष्य तक पहुँचनेका मार्ग यह नहीं है। हमारा लक्ष्य तो सबल, पवित्र और सुन्दर चरित्रका विकास करना है और उसे सिद्ध करनेमें उत्तम सहायता मिलती है — कष्ट सहनसे। आत्म-संयम, स्वार्थहीनता, धैर्य और नम्रताके फूल उनके चरणोंके नीचे खिलते हैं जो स्वयं कष्ट सहन करते हैं परन्तु दूसरोंको कष्ट देनेसे इनकार करते हैं, और जोहानिसबर्ग, प्रिटोरिया, हाइडेलबर्ग तथा फोक्सरस्टके भयावने कारागार इस दिव्य नंदनवनके चार सिंह द्वार हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-२-१९१०

३०२. शिष्टमण्डलकी यात्रा [-१५]

[अक्तूबर ८, १९०९ के बाद]

इस बार मैं ज्यादा खबर दे सकता हूँ; किन्तु मुझे भय है कि इससे बहुत सन्तोष नहीं होगा। लॉर्ड क्रू लिखते हैं कि "फिलहाल" वे ज्यादा जानकारी नहीं दे सकते। जनरल स्मट्स अपने दूसरे मन्त्रियोंके सामने बात रखेंगे। उसके बाद जानकारी मिलेगी। जनरल स्मट्स मन्त्रियोंके सामने क्या बात रखेंगे, यह मालूम नहीं। अगर वे बात लॉर्ड क्रू के तारके अनुसार रखेंगे, तो वह हमारी ही माँग होगी। यदि वे अपने मनमें निश्चित की हुई बात रखेंगे तो वह होगी कानून रद करनेकी बात, और रियायतके तौरपर एक निश्चित संख्यामें पढ़े-लिखे लोगोंको स्थायी रूपसे आने देनेकी बात। यदि वे इस बातको रखना चाहते हैं तो कहा जा सकता है कि यह बेकार है। यदि वे हमारी माँगें रखते हैं तो ठीक है। किन्तु [लॉर्ड क्रू के] इस पत्रका जो भीतरी मतलब है वह प्रत्येक भारतीयके समझने योग्य है। उस पत्रका मतलब यह है

१. यह "अनाक्रामक प्रतिरोधका नीति-पक्ष" पर दिये गये गांधीजीके भाषणका एक अंश है। इसे नवम्बर, १९०९ के **इंडियन रिव्यूने** प्रकाशित किया था और उससे **इंडियन ओपिनियनने** उद्धृत किया था। कलकत्तेकी **अमृत बाजार पत्रिकामें** उसके लन्दन-स्थित संवाददाताकी भेजी यह खबर छपी थी कि सभा रिफॉर्म क्लबमें की गई, ताकि ज्यादा लोगोंके बैठनेकी व्यवस्था हो सके।

कि जनरल स्मट्स ऐसा करके समय प्राप्त करना चाहते हैं, और समय मिल जानेपर वे इस बीच सत्याग्रहियोंका उत्साह तोड़ देना चाहते हैं। यदि उनका उत्साह न टूटा तो फिर हम जो-कुछ माँगते हैं, वे दे देंगे। यह भेद समझकर सत्याग्रहियोंको पूरा बल लगा देना चाहिए। उन्हें न चुप बैठना है और न दुर्बलता दिखानी है।

[लॉर्ड क्रू के] उपर्युक्त जवाबसे स्पष्ट है कि [हमारे कष्ट दूर करनेका] सच्चा उपाय इंग्लैंडमें नहीं, बल्कि हमारे अपने हाथोंमें है। वह उपाय है केवल हमारा आत्मबल। इसका परिचय हमने अभी पूरी तरहसे दिया नहीं है, इसलिए हम जो-कुछ माँगते हैं, वह मिल नहीं पाया है।

लोग जेल गये हैं, इतना ही काफी नहीं है। मैं बहुत बार कह चुका हूँ कि हमारा मन मैला न होना चाहिए। हमें अपने कष्ट-सहनकी हद नहीं बाँध लेनी चाहिए। जो दुःख आयें, उन्हें सहनेके लिए हमें तैयार रहना चाहिए। उन्हें न सहेंगे तो हम हार जायेंगे। हमें एक बार या दस बार भी जेल जाना काफी न समझना चाहिए। जबतक हमारी माँगें पूरी न हों तबतक हमें जेलका दुःख ही नहीं, मौतका दुःख भी खुशी-खुशी सहनेको तैयार रहना चाहिए। इसलिए मैं आशा करता हूँ कि सारे सत्याग्रही अपने निश्चयपर पूरी तरह दृढ़ रहेंगे और जेलोंको भर देंगे। सब भारतीयोंको याद रखना चाहिए कि ट्रान्सवालकी गाथा सारे भारतमें गाई जा रही है। श्री पोलककी आवाज भारतमें गूँज रही है। अखबार हमारी चर्चासे भरे हुए हैं। आशा है, इस सबको ध्यानमें रखकर भारतीय कतई पैर पीछे न हटायेंगे और कमजोर नहीं पड़ेंगे। इंग्लैंडमें भी यही चर्चा है कि ट्रान्सवालके भारतीयोंने हद कर दी है और वे पीछे न हटेंगे। यह याद रखना चाहिए कि ट्रान्सवाल पूरे दक्षिण आफ्रिकाकी लड़ाई लड़ रहा है।

लॉर्ड क्रू के उपर्युक्त पत्रसे प्रकट होता है कि शिष्टमण्डलका केवल खानगी तरीकेसे काम करना अब काफी नहीं है। अब उसके बाहर निकलनेकी जरूरत है। इसलिए लॉर्ड क्रू से मामलेको प्रकट करनेकी मंजूरी मँगाई है।[1] उनकी मंजूरी मिलनेपर लोगोंके सम्मुख सारा मामला रख दिया जायेगा। फिर, यदि हाउस ऑफ कॉमन्सके सदस्य हमारी बात सुनेंगे तो हम उनके सामने सब तथ्य रखेंगे। अखबारोंमें यथासम्भव चर्चा की जायेगी, और सभाएँ करना सम्भव हुआ तो वे भी की जायेंगी।

एक बड़ा सवाल यह उठा है कि थोड़े समयके लिए ही सही, हम दोनोंको भारतका एक चक्कर लगाना चाहिए या नहीं। इस सम्बन्धमें हमारे हितैषियोंका मत यह है कि जाना तो उचित है। कुछ कारणोंसे ऐसा प्रतीत होता भी है कि यदि जा सकें तो ठीक हो।

मेरा अपना विचार तो यही है कि हमारा मुख्य काम ट्रान्सवालमें है और ट्रान्सवालमें भी वहाँकी जेलोंमें है। केवल एक ही विचार आड़े आता है। इस बार हम यहाँ आये हैं तो अपनी दुर्बलता बतानेके लिए ही। हम यह खयाल लेकर आये हैं कि शायद समझौता जल्दी हो जाये। जिस दृष्टिसे हम यहाँ आये हैं, उसी दृष्टिसे हमारा भारत जाना भी ठीक है। लेकिन, तब बहुत-सी दूसरी बातें भी हैं। इससे हमारे आफ्रिका लौटनेमें देर लगती है। जैसा हमने ऊपर बताया, यह काम करनेमें कुछ वक्त लगेगा। हम ३० अक्तूबरके बाद ही भारत जा सकेंगे। वहाँ लगभग एक महीना लगेगा, और एक महीना यात्रामें भी लग

१. देखिए "पत्र: उपनिवेश-उपमन्त्रीको", पृष्ठ ४६७-६८।

जाना है। इस प्रकार दिसम्बर आ जायेगा। हम दिसम्बरके अन्त तक ही लौट सकेंगे। और यदि इतनेपर भी समझौता न हुआ तो हम जहाँके-तहाँ रहेंगे। ऐसा करनेकी अपेक्षा सीधा रास्ता तो यही जान पड़ता है कि भारत जानेका विचार छोड़ दें। फिर भी, जिस विषयपर यहाँ चर्चा की गई है, उसको सब लोगोंके सामने रखना जरूरी है। फिर, इस प्रकार मामलेको लम्बा करनेसे पैसेका खर्च भी बढ़ेगा। मैं खुद बिल्कुल निश्चित राय नहीं दे सकता। सत्याग्रहीकी हैसियतसे मेरी अकेलेकी राय पूछी जाये तो मैं एक ही जवाब दूँगा कि हमें तुरन्त ट्रान्सवालमें फिर दाखिल हो जाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–११–१९०९

३०३. लन्दन

[अक्तूबर ८, १९०९के बाद]

नेटालका शिष्टमण्डल

नेटालके शिष्टमण्डलसे मिलनेके लिए [दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय] समितिकी खास बैठक बुलाई गई थी। वह गत बुधवारको हुई थी। उसमें लॉर्ड ऍम्टहिल, सर रेमंड वेस्ट, डॉक्टर थॉर्नटन, सर मंचरजी भावनगरी, श्री पोलक और श्री रिच उपस्थित थे। श्री आंगलियाने सर रेमंडको सारी स्थिति बताई। लॉर्ड ऍम्टहिलने उनसे इससे सम्बन्धित सारे कागजात माँगे। इन्हें वे खुद पढ़ेंगे। उन्होंने लॉर्ड क्रू का उत्तर पढ़नेके बाद कहा कि अब-ज्यादा कुछ करने योग्य नहीं रहता।

श्री आंगलियाने लन्दनके[1] 'डेली टेलीग्राफ' के सम्पादकको सारे तथ्य भेज दिये हैं। लॉर्ड क्रू का उत्तर मिला है कि वे और लॉर्ड मॉर्ले, दोनों इसपर विचार कर रहे हैं। वे नेटालके विषयमें विचार कर रहे हैं, उनके इस उत्तरसे भी प्रकट होता है कि नेटालपर ट्रान्सवाल का असर पड़ता है। उनको यह भय लगा हुआ है कि कहीं नेटाल भी न सत्याग्रहका रास्ता अख्तियार कर ले।

श्री आमद भायात उसी जहाजसे लौट रहे हैं, जिससे यह पत्र जा रहा है। उनको लगता है कि अब यहाँ कोई काम शेष नहीं रहा। ऐसा जान पड़ता है कि जबतक ट्रान्सवालका शिष्टमण्डल यहाँ रहेगा तबतक श्री आंगलिया भी यहाँ रहेंगे। शायद श्री अब्दुल कादिर भी वैसा ही करेंगे।

आत्मबलकी नीति

श्री गांधीने शुक्रवारकी रातको इमर्सन क्लबके सदस्योंके सामने "आत्मबलकी नीति" पर भाषण दिया।[2] यह क्लब यहाँकी नीतिवर्धिनी सभा (यूनियन ऑफ़ एथिकल सोसाइटीज़) का है। सभाकी अध्यक्षता कुमारी विंटरबॉटमने की थी। भारतीयोंकी उपस्थिति खासी थी। उनमें

१. मूलमें लखनऊ है, जो स्पष्टतः छपाईकी भूल है।
२. देखिए "भाषण: इमर्सन क्लबमें", पृष्ठ ४७०।

सर मंचरजी, श्री पॉल, श्री परीख और अन्य लोग भी थे। कुमारी जोशी और श्रीमती दुबे भी आई थीं। श्री गांधीके भाषणका सार यह था कि आत्मबल शरीर-बलसे बहुत ऊँचा और अजेय है। उन्होंने उसके सम्बन्धमें पूछे गये बहुत-से सवालोंके जवाब भी दिये। उन्होंने ट्रान्सवालका प्रश्न भी उठाया, और हमारे कष्टोंकी कथा सुनकर सभी लोग प्रभावित हुए। श्री पॉलने भी भाषण दिया, जिसमें उन्होंने कहा कि आत्मबलके पीछे शरीर-बल होना चाहिए। श्री गांधीने कहा कि वह बल आत्मबल कहा ही नहीं जायेगा। सभामें श्रीमती टेडमन, श्रीमती पोलक और श्री रिच भी बोले।

स्त्रियोंके मताधिकारके लिए आन्दोलन करनेवाली महिलाओंका जलसा

तारीख ७ को स्थानीय अल्बर्ट हॉल नामक विशाल भवनमें स्त्रियोंके मताधिकारके लिए आन्दोलन करनेवाली महिलाओं (सफ्रेजेट्स) का बहुत बड़ा जलसा हुआ। उसमें सैकड़ों स्त्रियाँ आई थीं। श्रीमती पैंकहर्स्ट आदिने भाषण दिये। सभामें उत्साह इतना था कि लड़ाई चलानेके लिए ३,००० पौंड वहीं इकट्ठे हो गये। चार व्यक्तियोंने ढाई-ढाई सौ पौंड दिये। इन स्त्रियोंने अबतक ५१,००० पौंड इकट्ठे कर लिये हैं। उनके अखबारका प्रचार प्रति सप्ताह ५०,००० प्रतियों तक है। उन्हें देखनेसे ऐसा लगता था कि वे मरते दम तक लड़ेंगी। वे शरीर-बलका उपयोग करती हैं। हम इसे छोड़ दें तो उनका बल, उनका उत्साह और उनका चातुर्य, ये सब गुण अनुकरणीय हैं। उनकी-जैसी व्यवस्था पुरुष भी नहीं कर सकते। हम कह सकते हैं कि उनके पास स्वयंसेविकाओंकी एक बहुत बड़ी सेना है। उनकी युक्तियाँ असीम हैं। वे बहुत कष्ट सहती हैं। मताधिकार प्राप्त करनेके प्रयत्नमें उनमें से बहुत-सी महिलाएँ गरीब हो गई हैं। बहुत-सी स्त्रियोंने अपनी नौकरियाँ छोड़ दी हैं। यह लड़ाई कोई मामूली लड़ाई नहीं है। भारतीय उनके चरण-चिह्नोंपर चलें तो काफी है। किन्तु हमें उनके शरीर-बलका अनुकरण नहीं करना है। यह समझ लेना चाहिए कि शरीर-बलसे कोई लाभ न होगा।

मेरी आशा

श्री आमद भायात यह सब देखकर यहाँसे जा रहे हैं। वे समझ गये हैं कि ट्रान्सवालकी लड़ाईसे नेटालको भी लाभ पहुँचा है। उन्होंने यह भी देख लिया है कि यहाँ आवेदनपत्र देनेसे यहाँके लोगोंको भी न्याय नहीं मिलता। आवेदनपत्रका कोई महत्त्व नहीं है, यह सब समझते हैं। इसीलिए आशा करता हूँ कि श्री आमद भायात वहाँ पहुँचकर सत्याग्रहका आश्रय लेंगे। उन्होंने ट्रान्सवालके सत्याग्रहमें सहायता देनेका वचन तो दिया ही है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-११-१९०९

३०४. पत्र : मणिलाल गांधीको[1]

[लन्दन][2]
अक्तूबर १२, १९०९

चि० मणिलाल,

तुम श्री वेस्ट और दूसरे लोगोंकी जो सेवा-शुश्रूषा कर रहे हो, वह तुम्हारी सबसे अच्छी पढ़ाई है। जो व्यक्ति अपने कर्तव्यका पालन करता है, वह सदा पढ़ता ही रहता है। तुमने लिखा है कि तुम्हें पढ़ाईको छुट्टी दे देनी पड़ी है। ऐसा नहीं है। तुम सेवा-शुश्रूषा करते हुए पढ़ाई ही कर रहे हो। हाँ, यह कहना ठीक होगा कि अक्षरज्ञानको छुट्टी दे देनी पड़ी है। इस तरह छुट्टी देनेमें कोई हानि भी नहीं है। अक्षरज्ञान तो फिर प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन सेवा-शुश्रूषा करनेका अवसर फिर आयेगा, यह नहीं कहा जा सकता . . .।[3] अपने मनमें यह बात अंकित कर लेना कि तुम्हारा मन स्वच्छ है, इसलिए सेवा-शुश्रूषा करते हुए तुम बीमार नहीं पड़ोगे। अगर उसके बावजूद तुम बीमार हो जाओगे तो मैं उसकी चिन्ता नहीं करूँगा। इस तरह की पढ़ाईसे ही तुम और मैं सभी पूर्ण बन सकेंगे। ठीक तरहसे रहना सीखना ही पढ़ाई है। शेष सब पढ़ाई झूठी है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

'गांधीजीना पत्रो' से

३०५. भाषण : हैम्पस्टेडमें[4]

[लन्दन
अक्तूबर १३, १९०९]

श्री गांधीने कहा कि पूर्व और पश्चिमका प्रश्न बहुत बड़ा और उलझा हुआ प्रश्न है। मुझे पूर्व और पश्चिमके संपर्कका अठारह वर्षोंका अनुभव है। मैंने इस प्रश्नको समझनेकी कोशिश की है। मुझे लगता है कि ऐसे लोगोंके सामने, जैसे इस सभामें मौजूद हैं, मैं अपने सूक्ष्म अवलोकनके परिणाम बता सकता हूँ। जब मैं इस विषयका खयाल करता हूँ, मेरा दिल घबरा-सा जाता है। मुझे कई बातें ऐसी कहनी होंगी जो आपको अरुचिकर लगेंगी और

१. जान पड़ता है, **गांधीजीना पत्रो**में, जहाँसे यह चिट्ठी ली गई है, इसका पहला अंश छोड़ दिया गया है।

२. साधन-सूत्रमें पत्र लिखनेका स्थान जोहानिसबर्ग दिया गया है। स्पष्ट ही यह गलत है, क्योंकि गांधीजी तब इंग्लैंडमें थे।

३. यहाँ कुछ शब्द छोड़ दिये गये हैं।

४. गांधीजीने हैम्पस्टेड पीस ऐंड आर्बिट्रेशन सोसाइटीके तत्त्वावधानमें फ्रेंड्स मीटिंग हाउसमें की गई सभामें "पूर्व और पश्चिम" इस विषयपर यह भाषण दिया था। अध्यक्ष सी० ई० मॉरिस थे।

कड़े शब्दोंका प्रयोग भी करना होगा। जिस पद्धतिमें मैं पला-पुसा हूँ, उसके विरुद्ध भी कहना होगा। अगर आपकी भावनाओंको मेरे कथनसे चोट पहुँचे तो आशा है, आप मुझे क्षमा करेंगे। मुझे ऐसी कई धारणाओंका खण्डन करना होगा, जो मुझे और मेरे देशके लोगोंको प्रिय रही हैं और शायद आपको भी प्रिय रही हों। इसके बाद उन्होंने किपलिंगकी कविताकी उन दो पंक्तियोंका उल्लेख किया जिनका अर्थ है, "पूर्व पूर्व है और पश्चिम पश्चिम; ये दोनों कभी न मिल पायेंगे।" फिर उन्होंने कहा, मैं समझता हूँ कि यह सिद्धान्त निराशावादका सिद्धान्त है और मानव-विकाससे मेल नहीं खाता। मुझे लगता है कि इस तरहके सिद्धान्तको मान्य करना मेरे लिए बिल्कुल असम्भव है। अंग्रेजीके एक दूसरे कवि टेनिसनने अपनी "विजन" ["स्वप्न"] शीर्षककी कवितामें स्पष्ट भविष्यवाणी की है कि पूर्व और पश्चिम मिलेंगे। चूँकि उस "स्वप्न" में मेरा विश्वास है, इसीलिए मैं दक्षिण आफ्रिकाके लोगोंके सुख-दुःखका साथी बन गया हूँ। वे लोग वहाँ बहुत बड़ी कठिनाइयोंमें रह रहे हैं। मेरा खयाल है, दोनों जातियोंके लोग एक-दूसरेसे बराबरीका बरताव करते हुए साथ-साथ रह सकते हैं। इसीलिए मैं दक्षिण आफ्रिकामें रहता हूँ। अगर मेरा विश्वास किपलिंगके सिद्धान्तमें होता तो मैं वहाँ कभी न रहा होता। अंग्रेजों और भारतीयोंके, आपसमें बिना किसी खटपटके, एक ही घर रहनेके उदाहरण जहाँ-तहाँ मिलते हैं और जो बात व्यक्तियोंपर लागू होती है, वही जातियोंपर भी लागू हो सकती है। एक हद तक यह सच है कि इन संस्कृतियोंमें मिलता-जुलता कुछ भी नहीं है। जापानियों और यूरोपीयोंके बीचकी दीवारें दिन-प्रति-दिन ढहती जा रही हैं, क्योंकि जापानियोंने पाश्चात्य सभ्यताको पचा लिया है। मेरे खयालसे आधुनिक सभ्यताका मुख्य लक्षण है, आत्मासे अधिक शरीरकी चिन्ता और शरीरकी प्रतिष्ठाके लिए सर्वस्वका समर्पण। रेल, तार और टेलीफोन क्या पाश्चात्य लोगोंके नैतिक उत्थानमें सहायक हैं? जब मैं भारतपर निगाह डालता हूँ तो अंग्रेजोंके राज्यमें वहाँ क्या दिखाई देता है? भारतपर आधुनिक सभ्यता राज्य कर रही है। उसने क्या किया है? जब मैं यह कहता हूँ कि आधुनिक सभ्यतासे भारतकी कोई भलाई नहीं हुई है तो, मुझे आशा है, मेरे इस कथनसे आपको सदमा न पहुँचेगा। वहाँ रेलों, तारों और टेलीफोनोंका जाल बिछा है; आपने कलकत्ता, मद्रास, बम्बई, लाहौर और बनारस-जैसे नगर खड़े कर दिये हैं, जो स्वतन्त्रताके नहीं, दासताके सूचक हैं। मैंने देखा है कि यातायातके इन आधुनिक साधनोंने हमारे तीर्थों — पवित्र स्थानों — को अपवित्र बना दिया है। मैं सभ्यताकी इस उन्मत्त दौड़के पहलेके बनारसकी कल्पना कर सकता हूँ। और आजका बनारस भी मैंने अपनी इन आँखोंसे देखा है जो एक अपवित्र नगर है। मैंने जो चीज भारतमें देखी वही चीज यहाँ भी देखी है। इस उन्मत्त सरगरमीने हमारी चूलें उखाड़ दी हैं। यद्यपि मैं स्वयं भी इसी व्यवस्थामें रह रहा हूँ, फिर भी मुझे आपसे वही कहना जरूरी मालूम होता है जो कह रहा हूँ। मैं जानता हूँ कि जबतक अंग्रेज अपने तरीके न बदलें, भारतमें दोनों जातियाँ साथ-साथ नहीं रह सकतीं। आपने हिन्दू तीर्थस्थानोंमें आखेट और आमोद-प्रमोद करके हिन्दुओंकी धार्मिक भावनाको ठेस पहुँचाई है। यदि यह उन्माद-भरी दौड़ बन्द नहीं की जाती, तो संकट अवश्य आयेगा। हमारे सम्मुख एक मार्ग यह हो सकता है कि हम आधुनिक सभ्यताको अपना लें; लेकिन मैं तो यह हर्गिज नहीं कह सकता कि हमें कभी भी यह सभ्यता अपनानी चाहिए। ऐसा हुआ तो भारत संसारका क्रीड़ा-कन्दुक बन जायेगा और दोनों राष्ट्र एक-दूसरेपर टूट पड़ेंगे। भारत अब भी नष्ट नहीं हुआ है; वह काहिल हो गया है। ऐसी बहुत-सी बातें

हैं जो समझमें नहीं आ सकतीं। इन्हें समझनेके लिए हमें धीरज रखना होगा। लेकिन एक बात निश्चित है; वह यह कि जबतक यह उन्माद-भरी दौड़, जिसमें शरीरका ही महत्त्व है, चलती रहेगी, तबतक शरीरके भीतर प्रतिष्ठित अमर आत्मा दुर्बल ही रहेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया, २२-१०-१९०९

३०६. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अक्तूबर १४, १९०९

लॉर्ड महोदय,

जोहानिसबर्गसे अभी एक तार मिला है। इसमें कहा गया है:

> **श्री स्मट्सने अखबारों [के प्रतिनिधियों] से कहा है कि वे अपने प्रस्तावोंके बारेमें मन्त्रीके उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।**

मैं इस तारका अर्थ यह लगाता हूँ कि लॉर्ड क्रू के जिस पत्रका मैंने जवाब भेजा है, उस पत्रमें उल्लखित प्रस्ताव श्री स्मट्सके मूल प्रस्ताव हैं; और श्री स्मट्स यह जाननेको ठहरे हुए हैं कि अगर ये प्रस्ताव अमलमें लाये जायेंगे तो क्या अनाक्रामक प्रतिरोध बन्द हो जायेगा। अभी लॉर्ड क्रू का कोई उत्तर नहीं मिला है।[1] मुझे यह साफ दिखाई देता है कि अगर लॉर्ड क्रू और लॉर्ड मॉर्लेको अपना कर्तव्य निभाना है तो उसके लिए ठीक अवसर यही है। दक्षिण आफ्रिकाके लिए जहाजमें बैठनेसे पहले साउदैम्टनमें श्री स्मट्सने जब रायटरके प्रतिनिधिको वक्तव्य दिया था तब वे बहुत प्रसन्न और आश्वस्त होकर बोले थे। उनका खयाल था कि अनाक्रामक प्रतिरोधियोंमें अब लड़नेका दम नहीं रहा। यह साफ है कि प्रिटोरिया पहुँचनेपर उनका यह भ्रम दूर हो गया। इसलिए अब वे जानना चाहते हैं कि हम यहाँके लोग उनके प्रस्तावोंको मानने और अनाक्रामक प्रतिरोधको बन्द करनेकी सलाह देनेके लिए तैयार हैं या नहीं। आन्दोलन बन्द होना सैद्धान्तिक अधिकार दिये बिना असम्भव है। श्री डोकने मुझे एक पत्र लिखा है। इसमें उन्होंने कहा है कि अनाक्रामक प्रतिरोधी दक्षिण आफ्रिकासे उनके पत्रकी रवानगीके वक्त जितने मजबूत थे उतने मजबूत पहले कभी नहीं रहे।

आपका आज्ञाकारी सेवक,

हस्तलिखित दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१२५) से।

१. गांधीजीको उत्तर दूसरे दिन मिल गया था; देखिए "पत्र: उपनिवेश-उपमन्त्रीको", पृष्ठ ४८६-८७।

३०७. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
अक्तूबर १४, १९०९

प्रिय हेनरी,

आपका मद्राससे भेजा हुआ तार मिला। मुझे दुःख है कि श्री डोककी किताब अभी तैयार नहीं है। प्रकाशनसे पहले भेजी गई दो प्रतियाँ मुझे अभी मिली हैं; लेकिन मेरा खयाल है, इनमें से एक आपको भेजनेकी जरूरत नहीं है। प्रतियाँ तैयार होते ही मैं श्री कूपरसे कहूँगा कि वे २५० प्रतियाँ श्री नटेसनको भेज दें।

'टाइम्स' में मद्रासकी सभाका[1] जो हाल छपा है, उसकी कतरन इसके साथ भेज रहा हूँ। आपको प्रिटोरियाका एक तार भी मिलेगा। मैं नहीं जानता, इसका क्या अर्थ है। श्री स्मट्सके जानेके बाद बातचीत बेशक जारी रही है। लेकिन हमें तो यह समझकर ही काम करना है, मानो बातचीत असफल हो गई हो। भारतीय प्रवासी-आयोग (इमिग्रेशन कमीशन) की रिपोर्ट इस मौकेपर अच्छी है। मेरा खयाल है, आप जब कलकत्तेमें हों तब एक अखिल भारतीय शिष्टमण्डलको लॉर्ड मिन्टोसे[2] मिलानेकी कोशिश की जाये। आप सर चार्ल्स टर्नरको अपने साथ ले सकते हैं, यद्यपि मैं आपकी कठिनाई समझ सकता हूँ। लेकिन वे आपका साथ दें या न दें, शिष्टमण्डल बनानेमें कोई कठिनाई न होगी; मद्रास, बम्बई, इलाहाबाद, लाहौर, आदि [नगरों] से एक-एक प्रतिनिधि आ सकता है। मैं आपको कांग्रेस और मुस्लिम कान्फ्रेंसमें प्रतिनिधि बनानेके सम्बन्धमें लिख रहा हूँ। मेरा खयाल है, उनके अधिवेशन लगभग एक साथ होंगे; लेकिन अगर वे एक ही दिन हों तो आप मुस्लिम कान्फ्रेंसमें जायें या कांग्रेसमें, इस बारेमें आपको अपनी विवेकबुद्धिसे काम लेना होगा। अनाक्रामक प्रतिरोधकी दृष्टिसे तो मुझे लगता है कि मुस्लिम कान्फ्रेंसमें जाना सबसे अच्छा होगा। मैं यह भी मान लेता हूँ कि आप अलीगढ़ जायेंगे।

मैं अब भी धीरे-धीरे प्रगति कर रहा हूँ। मैंने सोचा था कि मेरे पत्रके उत्तरमें लॉर्ड क्रू का पत्र तुरन्त आ जायेगा; लेकिन यह पत्र लिखनेके वक्त तक (गुरुवारके प्रातःकाल तक) उत्तर नहीं आया है; और जबतक वे बातचीतका असली नतीजा प्रकाशित करनेका अधिकार नहीं देते, मुझे लगता है तबतक कुछ नहीं किया जा सकता। अगर उनका उत्तर इस सप्ताह आ जाये तो भी अब इसमें सन्देह है कि मैं आगामी ३० तारीखसे पहले [लोक-] शिक्षणका काम पूरा कर सकूँगा। आप करीब-करीब सारे भारतकी सैर करेंगे। यह एक विशेष सुविधा है, जो अभीतक मुझे भी नहीं मिल पाई है। इसलिए मैंने यहाँ ज्यादा गम्भीर निरीक्षणके बाद जो निश्चित निष्कर्ष निकाले हैं, उन्हें, मेरा खयाल है, अब मुझे लिख डालना चाहिए।[3]

१. यह ११ अक्तूबरको हुई थी।

२. (१८४५–१९१४); भारतके वाइसरॉय और गवर्नर-जनरल, १९०५-१०।

३. साबरमती संग्रहालयकी दफ्तरी प्रतिमें यहाँसे आगेके दो सफे खो गये हैं जो सर्वेन्ट्स ऑफ़ इंडिया सोसायटी, पूनामें सुरक्षित प्रो० गोखलेके कागजातमें रखी हस्तलिखित प्रतिसे ले लिये गये हैं, और डॉ० प्रा० जी० मेहताकी पुस्तक **एम० के० गांधी ऐंड द साउथ आफ्रिकन इंडियन प्रॉब्लेम**में दिये गये इस पत्रके अंशसे मिला लिये गये हैं।

यह बात मेरे दिमागमें पहलेसे ही थी, लेकिन कोई निश्चित और साफ चित्र नहीं उभरा था। मुझे पीस ऐंड आर्बिट्रेशन सोसायटीकी ओरसे "पूर्व और पश्चिम" विषयपर बोलनेके[1] लिए जो निमन्त्रण दिया गया था उसे स्वीकार करनेके बाद मेरा हृदय और मस्तिष्क, दोनों अधिक क्रियाशील हो उठे। सभा पिछली रात हुई और मेरा खयाल है कि वह काफी सफल रही। श्रोता बड़े उत्साही थे, लेकिन दक्षिण आफ्रिकाकी स्थितिके बारेमें कुछ उद्धृत प्रश्न भी किये गये। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि हैम्पस्टेडमें भी दक्षिण आफ्रिकाके दुःखद नाटककी हिमायत करनेवाले और भारतीय व्यापारियोंको सड़ा घाव और न जाने क्या-क्या बताकर, उनके बारेमें तरह-तरहकी ऊल-जलूल बातें कहनेवाले काफी लोग थे। एक बहुत ही वृद्ध महिलाने उठकर कहा कि आप राज्य-विरोधी बातें कर रहे हैं। और जैसे हमें दक्षिण आफ्रिकामें रीति-रिवाज और ऊपरी बातों — उदाहरणके लिए अँगुलियोंके निशान — के बारेमें सोचनेवाले और उन्हींसे चिपके रहनेवाले अन्धविश्वासियोंसे निबटना पड़ता है, वैसा ही पिछली रात मुझे फ्रेंड्स हाउसमें भी करना पड़ा। मुझसे किये गये प्रश्नोंकी झड़ीमें मेरा मुख्य उद्देश्य खो गया, और तफसीलकी बातोंपर ही गरमागरम बहस होती रही। उससे प्राप्त निष्कर्ष इस प्रकार हैं :

(१) पूर्व और पश्चिमके बीच भेदकी कोई दुर्लंघ्य दीवार नहीं है।

(२) पश्चिमी या पूर्वी सभ्यता-जैसी कोई चीज नहीं है। हाँ, एक आधुनिक सभ्यता अवश्य है और वह सर्वथा भौतिकवादी है।

(३) आधुनिक सभ्यतासे प्रभावित होनेके पूर्व यूरोपके लोग बहुत-सी बातोंमें पूर्वके लोगोंसे, या कमसे-कम भारतीयोंसे, काफी मिलते-जुलते थे; और आज भी जो यूरोपीय आधुनिक सभ्यताके प्रभावसे अछूते हैं, वे उस सभ्यताके सपूतोंकी तुलनामें भारतीयोंसे बहुत ज्यादा आसानीसे घुलमिल सकते हैं।

(४) भारतपर राज्य ब्रिटिश लोग नहीं कर रहे हैं, बल्कि रेल, तार, टेलीफोन, और सभ्यताके विजय-भूषण माने जानेवाले लगभग सारे आविष्कारोंके माध्यमसे यही आधुनिक सभ्यता कर रही है।

(५) बम्बई, कलकत्ता और भारतके अन्य प्रमुख नगर मुसीबतके असली स्थान हैं।

(६) अगर कल ब्रिटिश शासनका स्थान आधुनिक तौर-तरीकोंपर आधारित भारतीय शासन ले ले, तो इससे भारतकी स्थिति अच्छी नहीं हो जायेगी। तब भारतीय भी यूरोप या अमरीकाके दूसरे या पाँचवें संस्करण बनकर रह जायेंगे। हाँ, इतना जरूर होगा कि जो धन बहकर इंग्लैंड चला जाता है, उसका कुछ अंश देशमें ही रह जायेगा।

(७) पूर्व और पश्चिम वास्तविक रूपमें तभी मिल सकते हैं, जब पश्चिम आधुनिक सभ्यताका लगभग पूर्ण रूपसे परित्याग कर दे। दिखावेमें तो वे तब भी मिल सकते हैं, जब पूर्व भी आधुनिक सभ्यताको स्वीकार कर ले; लेकिन वह मिलन सशस्त्र-शान्तिके समान होगा — ऐसी शान्तिके समान, जैसी उदाहरणके लिए, जर्मनी और इंग्लैंडके बीच है। ये दोनों ही देश एक-दूसरे द्वारा लील लिये जानेके खतरेसे बचनेके लिए मृत्युके गढ़में अपने दिन काट रहे हैं।

(८) यदि कोई एक व्यक्ति या व्यक्तियोंका संगठन सारी दुनियाको सुधारना शुरू करे या उसकी बात भी सोचे तो यह हिमाकत ही होगी। ऊँचे दर्जेकी कारीगरीसे बने

१. देखिए "भाषण: हैम्पस्टेडमें", पृष्ठ ४७४-७६।

और तेज चालवाले वाहनोंके सहारे भी ऐसा करनेका प्रयत्न असम्भवको सम्भव बनानेका प्रयत्न होगा।

(९) सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि भौतिक सुविधाओंकी वृद्धि होनेसे नैतिक विकासमें किसी तरह कोई सहायता नहीं मिलती।

(१०) चिकित्सा-विज्ञान इस कालेे जादूका सार है; जिसे हम उच्च चिकित्सा-कौशल मानते हैं, उससे तो नीमहकीमी लाख दर्जे अच्छी है।

(११) अस्पताल वे साधन हैं जिनका उपयोग शैतान अपने उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए, अपने साम्राज्यपर अपना अधिकार बनाये रखनेके लिए करता है। वे दुराचार, दुःख, गिरावट और वास्तविक दासताको स्थायी बनाते हैं।

(१२) जब मैंने चिकित्सा-शास्त्रकी शिक्षा लेनेकी सोची थी तब मैं बिल्कुल बहक ही गया था। अस्पतालकी घृणित प्रक्रियाओंमें भाग लेना मेरे लिए हर तरहसे एक पापपूर्ण कृत्य होगा।

अगर यौन रोगोंके लिए, या क्षय-रोगियोंके लिए भी, अस्पताल न होते तो हमारे बीच क्षय रोग कम होता और यौन पाप भी इतने न होते।

(१३) भारतकी मुक्ति इसी बातमें है कि उसने पिछले पचास वर्षोंमें जो-कुछ सीखा है, उसे भूल जाये।

रेल, तार, अस्पताल, वकील, डॉक्टर आदि — सबको जाना होगा; और तथाकथित उच्च वर्गोंके लोगोंको इस बोधके साथ कि किसानका सादा जीवन ही सच्चा सुख देनेवाला है, अन्तरात्माको साक्षी बनाकर, धर्म मानकर और मनको वशमें करके वह जीवन बिताना सीखना होगा।

(१४) भारतीयोंको मिलके कपड़े नहीं पहनने चाहिए, चाहे वे यूरोपीय मिलोंमें तैयार हुए हों या भारतीय मिलोंमें।

(१५) इंग्लैंड इसमें भारतका सहायक हो सकता है, और तभी वह भारतपर अपने अधिकारका औचित्य सिद्ध कर पायेगा। आज इंग्लैंडमें भी ऐसा सोचनेवाले बहुत लोग दिखाई देते हैं।

(१६) पुराने ऋषियोंमें सच्चा ज्ञान था। तभी तो उन्होंने समाजकी व्यवस्था ऐसी की थी कि लोगोंकी भौतिक स्थिति मर्यादित हो जाये। शायद पाँच हजार साल पुराना आदिम हल आज भी किसानके लिए उपयुक्त हल है। हमारी मुक्ति उसीसे होगी। ऐसी हालतोंमें लोग ज्यादा जीते हैं या, ज्यादा शान्तिसे रहते हैं। उसकी तुलनामें आधुनिक उद्योगवादको अपनानेके बाद यूरोपके लोगोंको उतनी शान्ति नहीं मिलती है। मुझे लगता है कि प्रत्येक प्रबुद्ध व्यक्ति चाहे तो इस सत्यको सीख सकता है और उसके अनुसार आचरण कर सकता है; प्रत्येक अंग्रेज भी, अवश्य ही ऐसा कर सकता है।

लिखनेके लिए बातें बहुत हैं। आज आपको उतना नहीं लिख सकता। लेकिन ऊपर दी गई सामग्री विचारके लिए काफी है। जब आप यह देखें कि मैं गलत कहता हूँ, तो मुझे रोक सकते हैं।

आप यह भी देखेंगे कि मैं उपर्युक्त निष्कर्षोंपर, जो करीब-करीब निश्चित हैं, अनाक्रामक प्रतिरोधकी सच्ची भावनासे ही पहुँचा हूँ। अनाक्रामक प्रतिरोधीके रूपमें मुझे इस बातकी कोई

चिन्ता नहीं है कि जो लोग उन्माद-भरी वर्तमान दौड़में सन्तोष अनुभव कर सकते हैं, उनमें इतना बड़ा सुधार — अगर उसे सुधार कहूँ तो — किया जा सकता है या नहीं। अगर मैं यह समझ लूँ कि यह बात सच है तो मैं इसके अनुसार चलनेमें आनन्द अनुभव करूँगा और इसलिए मैं सब लोगोंके शुरू करने तक न ठहरूँगा। हममें से जो लोग इस तरह सोचते हैं, उन सबको इसके लिए जरूरी कदम उठाना पड़ेगा। अगर हम ठीक रास्तेपर हैं तो बाकी लोग जरूर ही हमारे पीछे आयेंगे। सिद्धान्त मौजूद है; हमें अपना व्यवहार यथासम्भव इससे मिलता-जुलता रखना होगा। इस भीड़में रहते हुए, सम्भव है, हम सभी बुराइयोंको न छोड़ सकें। मैं जब भी रेलगाड़ीमें बैठता हूँ, बसमें जाता हूँ, मैं जानता हूँ कि मैं जो ठीक समझता हूँ, उसके विरुद्ध आचरण कर रहा हूँ। इसके मुझे स्वाभाविक परिणामोंका भय नहीं है। इंग्लैंड आना बुरा है और दक्षिण आफ्रिका और भारतके बीच समुद्री जहाजोंसे आवागमन भी अच्छा नहीं है, आदि। आप और मैं अपने इस जीवनमें इन चीजोंसे बच सकते हैं और सम्भव है, बच जायें; लेकिन खास बात तो अपने सिद्धान्तको सही करनेकी है। आप वहाँ सब तरहके लोग और उन्हें सब दशाओंमें देख रहे होंगे। इसलिए मुझे लगता है कि मैंने मानसिक दृष्टिसे जो कदम उठाया है, और जिसे, प्रगतिशील कदम मानता हूँ मैं उसे आपसे न छुपाऊँ। अगर आप मुझसे सहमत हैं तो क्रान्तिकारियों और दूसरे सब लोगोंसे यह कहना आपका कर्तव्य होगा कि वे जो स्वतन्त्रता चाहते हैं, या उनका खयाल है कि वे चाहते हैं, वह स्वतंत्रता लोगोंको मारनेसे या हिंसा करनेसे नहीं मिलेगी, बल्कि अपना सुधार करने और सच्चे अर्थोंमें भारतीय बननेसे और भारतीय रहनेसे मिलेगी। तब अंग्रेज शासक भी सेवक होंगे, स्वामी नहीं। वे संरक्षक होंगे, सतानेवाले नहीं और वे भारतके सब निवासियोंके साथ बिल्कुल शान्ति तथा मेल-जोलसे रहेंगे। इसलिए भविष्य अंग्रेज जातिके हाथमें नहीं, बल्कि स्वयं भारतीयोंके हाथोंमें है। और अगर उनमें काफी आत्म-त्याग और संयम है तो वे इसी क्षण स्वतन्त्र हो सकते हैं। हम भारतके लोग जब उस सादगीको स्वीकार कर लेंगे, जो बहुत-कुछ अब भी हमारी विशेषता है और जो कुछ साल पहले तक हमारी पूरी विशेषता थी, तो तमाम भारतमें अब भी सर्वोत्तम भारतीय और सर्वोत्तम यूरोपीय एक-दूसरेसे मिल-जुलकर रह सकेंगे और एक-दूसरेकी उन्नतिमें सहायता कर सकेंगे। जब तेज चलनेवाली गाड़ियाँ न थीं तब व्यापारी और धर्मोपदेशक देशके एक सिरेसे दूसरे सिरे तक खतरोंको झेलते हुए पैदल जाते थे, आत्मसुख या स्वास्थ्य लाभके लिए नहीं (यद्यपि ये उनको पैदल यात्राओंसे मिल जाते थे), बल्कि मानव जातिके हितके लिए। तब बनारस और दूसरे तीर्थ पवित्र स्थान थे; लेकिन आज तो वे घृणास्पद बन गये हैं।

आपको याद होगा, आप मुझपर अपने बच्चोंसे गुजरातीमें बोलनेपर नाराज हुआ करते थे। अब मुझे अधिकाधिक विश्वास होता जाता है कि अगर मैं उनसे अंग्रेजीमें बात करनेसे इनकार करता था तो बिल्कुल ठीक ही करता था। कल्पना तो कीजिए, एक गुजराती दूसरे गुजरातीको अंग्रेजीमें पत्र लिखता है! आप यह कहें तो ठीक ही होगा कि वह गलत उच्चारण करता है और व्याकरणकी दृष्टिसे गलत लिखता है। मैं अंग्रेजी लिखने या बोलनेमें जैसी भद्दी गलतियाँ करता हूँ वैसी निश्चय ही गुजरातीमें न करूँगा। मेरा खयाल है, मैं जब-जब किसी भारतीयसे या विदेशीसे अंग्रेजीमें बात करता हूँ, तब एक हद तक उस भाषाको भुलाता हूँ। अगर मैं उस भाषाको अच्छी तरह सीखना चाहता हूँ और अपने कानोंको उसके

स्वरका अभ्यस्त बनाना चाहता हूँ तो मैं ऐसा एक अंग्रेजसे बात करके और उसको बात करते हुए सुनकर ही कर सकता हूँ।

अब मैं समझता हूँ कि मैं आपको बहुत बड़ी खुराक दे चुका हूँ। मुझे आशा है, आप इसे पचा सकेंगे। बहुत सम्भव है कि आप भी, भारतके अपने विविध अनुभवोंके आधारपर, शायद स्वतंत्र रूपसे इसी निष्कर्षपर पहुँचे हों, क्योंकि आपकी कल्पनाशक्ति और व्यावहारिक ज्ञान जबरदस्त है। आखिर ये निष्कर्ष नये तो नहीं हैं; अभी तो इन्होंने निश्चित रूपमात्र लिया है और मुझे एकदम आक्रान्त कर लिया है।

मुझे अभी-अभी जोहानिसबर्गसे निम्नलिखित तार मिला है :

> **स्मट्सने अखबारों [के प्रतिनिधियों] से कहा है कि वे अपने प्रस्तावोंके बारेमें उपनिवेश-मन्त्रीके उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। लन्दनकी समिति फिलहाल काम जारी रख रही है।**

इस तारका अर्थ यह है कि जोहानिसबर्गमें इस प्रश्नपर कुछ हलचल मची हुई है और स्मट्स अनाक्रामक प्रतिरोधको कुचलनेके बारेमें आशान्वित नहीं हैं। इससे यह भी प्रकट होता है कि अगर लॉर्ड क्रू पूरी शक्तिसे प्रयत्न करें तो वे समझौता करा सकते हैं। लेकिन [तबतक] हमें तो लड़ाई जारी ही रखनी होगी। सो, लन्दनकी समिति अपना काम जारी रख रही है। इससे हालत बदलती नहीं, और रिचकी स्थिति सुधर जाती है।

बेचारी श्रीमती रिचको एक और ऑपरेशन कराना होगा। सम्भव है, वे उससे न उबरें। अगर उनकी यह जिन्दा मौत असली मौत बन जाये तो उनको बड़ी राहत मिलेगी।

बादमें — इस पत्रका इससे पहला भाग समाप्त होनेपर यहाँ मिली आ गई थीं। चूंकि मेरे खयालसे यह प्रत्र महत्त्वपूर्ण था, इसलिए मैंने उन्हें पढ़कर सुना दिया। इसके बाद उपयोगी विचार-विमर्श हुआ, जिसकी कल्पना आप खुद कर सकते हैं।

श्री अली इमाम अब भी यहीं हैं। मेरा खयाल है कि वे सोमवारको रवाना होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५१२७), हस्तलिखित अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल और 'एम० के० गांधी एंड साउथ आफ्रिकन प्रोब्लेम' से।

३०८. शिष्टमण्डलकी यात्रा [–१६]

[अक्तूबर १५, १९०९]

पिछल हफ्ता बुरा बीता है। पहले तो 'टाइम्स'में इस आशयका तार देखनेमें आया कि समझौतेकी बात बिल्कुल गलत है। [तारमें आगे कहा गया है,] श्री स्मट्सने लॉर्ड क्रू से बातचीत की थी; किन्तु सरकारका विचार भारतीयोंकी माँग मंजूर करनेका नहीं है।

एक दूसरी खानगी खबर भी तारसे आई है, जिसमें कहा गया है कि श्री स्मट्स लॉर्ड क्रू के जवाबकी राह देख रहे हैं।

लॉर्ड क्रू का जवाब आज (शुक्रवारको[1]) मिला है। वे उसमें लिखते हैं कि जनरल स्मट्स जो-कुछ देना चाहते हैं, वह अपने पिछले विचारके अनुसार ही देना चाहते हैं, तथापि वे कानून रद कर देंगे और [प्रवासी प्रतिबन्धक कानूनमें] ऐसा परिवर्तन करा देंगे जिससे उनकी पसन्दके कुछ शिक्षित भारतीय [प्रति वर्ष] स्थायी रूपसे आ सकें। इसके अलावा लॉर्ड क्रू लिखते हैं, यहाँ कोई खुला आन्दोलन किया जाये या नहीं, इस सम्बन्धमें हमें ही सोचना है। साथ ही इसपर भी विचार कर लेना है कि यहाँ किये गये आन्दोलनका जनरल स्मट्सपर क्या असर होगा!

यह यहाँकी स्थिति है। अब विचार करनेकी बात यह है कि क्या करना ठीक होगा। यदि श्री स्मट्स सचमुच हमारी माँगें मंजूर करना चाहते हों तो यहाँ खुली लड़ाई लड़नेसे उनकी स्थिति विषम होती है। यदि उनका विचार ऐसा न हो तो यहाँ खुला आन्दोलन करना ठीक ही होगा।

बिल्कुल निश्चित सम्मति दे देना सरल नहीं है। सत्याग्रहकी नीतिके अनुसार [परिणाम-के प्रति] उदासीन रहा जा सकता है। किन्तु जहाँ दुर्बल और सबल सभी तरहके लोग मौजूद हों, वहाँ विचार करना जरूरी है। अब यह देखना है कि लॉर्ड ऍम्टहिल आदि महानुभाव क्या कहते हैं। यह पत्र छपनेसे पहले ही यहाँ कार्रवाई शुरू कर दी जायेगी। सवाल भारतका है। किन्तु मुझे तो लगता है कि लड़ाई जैसे-जैसे आगे बढ़ती जायेगी वैसे-वैसे सही रास्ता सूझता जायेगा। इस बीच सबको धीरज और साहसकी जरूरत होगी और भारी दुःख सहन करने पड़ेंगे।

रूसके एक महापुरुष काउंट टॉल्स्टॉय हैं। उनको मैंने इस लड़ाईके सम्बन्धमें और उससे सम्बन्धित अन्य विषयोंपर पत्र लिखा था।[2] उन्होंने उस पत्रका जो उत्तर दिया है, उसका एक अनुच्छेद नीचे दे रहा हूँ[3]:

> मुझे आपका अत्यन्त मनोरंजक पत्र मिला। उससे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। खुदा हमारे ट्रान्सवालवासी भाइयों और साथियोंकी मदद करे। नर्म दिलके लोगों और

१. अक्तूबर १५, देखिए "पत्र: उपनिवेश उपमन्त्रीको", पृष्ठ ४८६।

२. देखिए "पत्र: टॉल्स्टॉयको", पृष्ठ ४४३-४५।

३. टॉल्स्टॉयके हस्ताक्षरयुक्त मूल अंग्रेजी पत्रके अनुवादके लिए देखिए परिशिष्ट २७।

कड़े दिलके लोगोंके बीच ऐसी लड़ाई — जिसमें एक ओर गरीबी और आत्मबल होते हैं और दूसरी ओर अभिमान और शरीर-बल — यहाँ भी आये दिन जोरोंसे चलती रहती है। यह लड़ाई मुख्यतः तब होती है जब यहाँके लोग फौजी नौकरी करनेसे इनकार करते हैं। यह लड़ाई खुदाई कानून और इनसानी कानूनके बीच है। रूसके लोग दिन-प्रतिदिन फौजी नौकरी करनेसे इनकार करते जाते हैं।

मैं आपको अपना भाई मानता हूँ और आपसे सम्पर्क होनेपर मुझे बहुत प्रसन्नता है।

इन महापुरुषकी आयु अभी अस्सी वर्ष है। यूरोपमें तो उनके समान पवित्र और धर्मात्मा पुरुष दूसरा दिखाई नहीं देता। वे फौजमें रहे हैं, उन्होंने लाखोंके ऊपर हुक्म चलाया है, लाखोंकी सम्पत्तिका उपभोग किया है और बहुत सुख देखा है। उन-जैसा लेखक आज यूरोपमें दूसरा नहीं है। फिर भी, वे इस समय स्वेच्छासे फकीरकी तरह रहते हैं। वे खुद रूसके अत्याचारी कानूनोंका पूर्ण विरोध करते हैं और दूसरोंको भी उनका विरोध करनेके लिए प्रेरित करते हैं। किन्तु वे शरीर-बलका प्रयोग कभी नहीं करते और दूसरोंको भी उसका प्रयोग करनेसे रोकते हैं। वे आत्मबलपर पूरा भरोसा रखते हैं। उनकी कृतियाँ सारी दुनियामें चावसे पढ़ी जाती हैं। इस देशमें उनकी शिक्षाके अनुसार चलनेवाले बहुत-से लोग दिखाई देते हैं। उनका विश्वास बिलकुल ईश्वरके ही ऊपर है। इसलिए उनके शब्दोंसे मेरा उत्साह तो बहुत ही बढ़ा है। मैं आशा करता हूँ कि प्रत्येक भारतीय उनके शब्दोंका स्वागत करेगा और उनके अनुसार आचरण करेगा। ऐसा महापुरुष हमारा समर्थक है, यह बहुत ही खुशीकी बात है। उनके पत्रसे भली भाँति प्रकट हो जाता है कि आत्मबल या सत्याग्रह हमारा एकमात्र अवलम्ब है। शिष्टमण्डल भेजना आदि प्रयत्न तो व्यर्थ हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–११–१९०९

३०९. पत्र: 'साउथ आफ्रिका' को[1]

[लन्दन
अक्तूबर १६, १९०९के पूर्व]

महोदय,

आपके जोहानिसबर्गके संवाददाताने अपनी साप्ताहिक चिट्ठीमें, जिसे आपने अपने अखबारके इसी अंकमें प्रकाशित किया है, नागप्पनके मामलेसे सम्बन्धित तथ्योंको गलत रूपमें पेश करके ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय समाजके प्रति भारी अन्याय किया है। इसके अतिरिक्त उसने अपने पत्रमें यह नहीं कहा कि ब्रिटिश भारतीयोंके अतिरिक्त भी बहुत-से लोगोंने, जिन्होंने

१. यह "साउथ आफ्रिका: फिर भूल-सुधार" शीर्षकसे छपा था। इसके साथ वह खरीता भी छपा था, जिसका उत्तर गांधीजीने दिया था; देखिए परिशिष्ट ३०।

कमिश्नरके[1] सामने पेश किये गये प्रमाणोंको पढ़ा है, कमिश्नरकी जाँचके निष्कर्षोको अस्वीकार किया है; और श्री बेन्सनने,[2] जिन्होंने जाँचमें ब्रिटिश भारतीयोंका प्रतिनिधित्व किया था, ट्रान्सवालके अखबारोंमें तीन कालमका एक पत्र छपवाकर जाँचके निष्कर्षोंकी कमजोरी बताई है। उनके उस पत्रका उत्तर अभीतक नहीं दिया गया है। और आखिर मेजर डिक्सनके निष्कर्ष हैं क्या? मृत व्यक्तिके पास दो कम्बल थे या नहीं, इस प्रश्नके सम्बन्धमें तो उन्होंने कोई निर्णय दिया ही नहीं। उन्होंने यह स्वीकार किया है कि मृत व्यक्तिको चावल नहीं दिया जाता था। आपके संवाददाताने यह कहकर बड़ी उदारता प्रकट की है कि यदि चावल नहीं दिया जाता था तो पानी तो निश्चय ही दिया जाता था और वह भी काफी। लेकिन मेरे देशवासी यह मानते हैं कि पानी काफी दिया जानेपर भी वह चावलका स्थान नहीं ले सकता। कमिश्नरने यह निष्कर्ष भी नहीं निकाला है कि बेचारा नागप्पन, जैसा आपके संवाददाताने कहा है, जेलमें अधिक स्वस्थ था। कोई साधारण व्यक्ति भी, और मेरा तो खयाल है कि कोई चिकित्सक भी, यह मानेगा कि यदि कोई अन्य बात न हो तो आंशिक भुखमरी और अपर्याप्त वस्त्र ही ट्रान्सवालके इस ऊँचे पठारकी इस कड़ी सर्दीमें निमोनियाको जन्म देनेके लिए काफी हैं, जिससे यह बेचारा अनाक्रामक प्रतिरोधी जेलसे छूटनेपर छः दिनके भीतर ही मर गया। डॉ० गॉडफ्रेका[3] खयाल बेशक यही था।

आपके संवाददाताके इस कथनके बावजूद ट्रान्सवालके और, वस्तुतः समस्त दक्षिण आफ्रिकाके, भारतीयों और कितने ही अन्य निष्पक्ष यूरोपीयोंका[4] यह खयाल बना ही रहेगा कि नागप्पन कर्तव्यकी वेदीपर बलि हो गया, और उसकी मृत्युका खयाल उन लोगोंकी अन्तरात्माको सालता रहेगा जिनकी अधीनतामें वह अपनी कैदकी सजा काट रहा था।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१०-१९०९

१. मेजर एफ० जे० डिक्सन; इन्होंने १९ जुलाईको, योंवसाई रिवर प्रिजन्स कैम्पके मामलेकी खुली जाँचकी थी। इस सिलसिलेमें जो गवाही दी गई थी उसकी रिपोर्ट २४-७-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में छपी थी, और कमिश्नरके निष्कर्ष १४-८-१९०९ के अंकमें।

२. एलेक्स एस० बेन्सन द्वारा भेजा गया मुकदमेका आँखों देखा हाल २४-७-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में छपा था। १४ अगस्तको उन्होंने **ट्रान्सवाल लीडर**को एक पत्र लिखा था, जिसमें जोहानिसबर्गके कुछ अखबारों द्वारा कमिश्नरके निर्णयको जैसाका-तैसा स्वीकार करनेकी आलोचना की गई थी। यह पत्र भी २१-८-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में छापा गया था।

३. डॉ० विलियम गॉडफ्रे नागप्पनकी अंतिम बीमारीके समय उसके चिकित्सक थे। उन्होंने बादमें यह प्रमाणपत्र भी दिया था कि नागप्पनकी मृत्यु निमोनियासे हुई और "अगर जो कुछ कहा गया है वह सत्य है तो जेल-अधिकारियोंका बरताव उसकी हालत बिगाड़नेके लिए उत्तरदायी है।"

४. ऐसा करनेवालोंमें रेवरेंड जे० जे० डोक और एडवर्ड डैलो भी थे। ट्रान्सवालके अखबारोंको लिखे गये उनके पत्र २१-८-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में भी उद्धृत किये गये थे।

३१०. पत्र: मगनलाल गांधीको

[लन्दन]
अक्तूबर १८, १९०९

प्रिय श्री मगनलाल,

तुम्हारा गत मासकी[1] १५ तारीखका लिखा पोस्टकार्ड मिला। श्री वद्रीके सम्बन्धमें, यदि तुम कागजात उनके डैनहाउज़रके पतेपर तुरन्त भिजवा दो तो बहुत अच्छा हो। कागजात रजिस्ट्रीसे भेजे जाने चाहिए। मैं श्री वद्रीको भी लिख रहा हूँ।[2]

शुभेच्छु,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५१३२) से।

३११. पत्र: बद्रीको

[लन्दन]
अक्तूबर १८, १९०९

प्रिय महोदय,

आपके इसी ८ तारीखके पत्रके सन्दर्भमें निवेदन है कि मेरा खयाल था, आप डर्वनमें होंगे, इसलिए मैंने जमाकी रसीद इसी १२ तारीखको श्री मगनलाल गांधीको भेज दी थी और उनसे अनुरोध किया था कि वे उसपर आपके हस्ताक्षर ले लें। अब मैंने उन्हें लिख दिया है कि वे उसे आपको भेज दें। आपकी ठीक तरहसे भरी हुई रसीद मिलते ही मैं आपके निवेदनके अनुसार रकम फिर जमा कर दूंगा।

आपका विश्वस्त,

श्री बद्री
मार्फत गुरदीन अहीर
डैनहाउज़र

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५१३३) से।

१. मूल अंग्रेजीमें जो शब्द है, उसका अर्थ होगा "इसी मासकी"। यह गलत जान पड़ता है।
२. देखिए अगला शीर्षक।

३१२. पत्र : उपनिवेश-उपमन्त्रीको

[लन्दन]
अक्तूबर १९, १९०९

महोदय,

मुझे आपका इसी १५ तारीखका पत्र[1] प्राप्त करनेका सौभाग्य मिला।

इस पत्रने मुझे और मेरे साथीको बड़ी अनिश्चित अवस्थामें डाल दिया है। पिछले महीनेकी १६ तारीखको श्री हाजी हबीब और मैं जब लॉर्ड क्रू से मिले थे तब उन्होंने कृपापूर्वक हमसे कहा था कि मैंने जो प्रस्ताव रखा है, उसे वे उचित मानते हैं और मंजूरीके लिए स्मट्सके सामने पेश करेंगे। जिस पत्रका यह उत्तर है, उसमें यह नहीं बताया गया है कि वह प्रस्ताव श्री स्मट्सके सामने रखा गया या नहीं और अगर रखा गया था तो उसके बारेमें उन्होंने क्या फैसला किया है। जहाँतक जनता [के सामने मामला रखने] का सम्बन्ध है, हमने बिल्कुल कुछ नहीं किया है, और जबतक मेरे रखे प्रस्तावके आधारपर बातचीत चलती है, तबतक यह रुख बनाये रखना हम अपना कर्तव्य समझेंगे ताकि बात-चीतको हानि न पहुँचे। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि लॉर्ड महोदय हमारे इस रुखको समझेंगे। ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय बहुत दिनोंसे जो भारी तकलीफें सह रहे हैं, उनका अन्त तभी हो सकता है जब मेरे प्रस्तावके अनुसार पढ़े-लिखे ब्रिटिश भारतीयोंका सैद्धान्तिक अधिकार सुरक्षित कर दिया जाये। क्या श्री स्मट्स ट्रान्सवालके मन्त्रियोंके सामने और ट्रान्सवाल-संसदमें अपने उसी मूल प्रस्तावको रखना चाहते हैं जो उन्होंने यहाँसे दक्षिण आफ्रिकाको रवाना होते वक्त रखा था? अगर ऐसी बात है तब तो हम सादर निवेदन करते हैं कि जहाँतक ब्रिटिश भारतीयोंका सम्बन्ध है, उन्हें निष्क्रियताकी नीतिसे कोई लाभ न होगा। मुझे विश्वास है, लॉर्ड महोदय इस बातसे सहमत होंगे कि हमें बातचीतके सम्बन्धमें निश्चित स्थिति मालूम होनी चाहिए, ताकि हम उसको ध्यानमें रखकर अपना व्यवहार निश्चत करें और, जहाँतक यह हमारे वशकी बात है, इस बातचीतमें सहायक हों। इसलिए क्या मैं आपसे बातचीतके बारेमें जल्दी ही ज्यादा पूरी जानकारी देनेकी प्रार्थना कर सकता हूँ?

मैं यह भी कह दूँ कि जोहानिसबर्गसे एक तार मिला है, जिसमें कहा गया है कि श्री स्मट्सने एक संवाददातासे कहा है, वे अर्ल ऑफ़ क्रू के उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहे हैं, और

१. यह गांधीजीके ८ अक्तूबरके पत्रके उत्तर-स्वरूप था। इसमें लिखा था:
"...इस विभागके इसी ४ तारीखके पत्रमें ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके प्रश्नसे सम्बन्धित क़ानूनके सम्भावित आधारके रूपमें जिन प्रस्तावोंका संकेत किया गया है, वे श्री स्मट्सके प्रस्ताव हैं। ये प्रस्ताव उन्होंने यहाँसे रवाना होनेसे पहले रखे थे। ये प्रस्ताव वे नहीं हैं जो आपने पिछले महीनेकी १६ तारीखकी मुलाक़ातमें रखे थे।

"मुझे यह भी कहना है कि इस विवादके सम्बन्धमें आपको क्या कदम उठाना है, यह प्रश्न तो आपके ही तय करनेका है। लेकिन, इसमें मुझे कोई शक नहीं है कि आप जो रास्ता अपनाना चाहते हैं, उसका श्री स्मट्सके प्रस्तावोंके प्रति ट्रान्सवाल सरकार और ट्रान्सवाल-संसदके रुखपर क्या असर पड़ेगा, इस बातका आप खयाल रखेंगे। साथ ही आप यह भी सोच लेंगे कि आगे कार्रवाई करनेसे पहले इस मामलेमें सरकारकी नीतिकी घोषणा होने तक रुका रहना क्या ज्यादा अच्छा न होगा।"

यह उत्तर मिलनेपर ही वे इस प्रश्नपर अपने प्रस्तावोंके सम्बन्धमें कोई सार्वजनिक वक्तव्य देंगे। जबतक हमें यह न मालूम हो कि लॉर्ड महोदयने पिछले महीनेकी १६ तारीखकी मुलाकातके बाद जो कार्रवाई करनेकी बात कही थी उसका क्या हुआ, तबतक हमारे लिए यह तय करना कठिन हो जाता है कि हम अब क्या रास्ता अख्तियार करें।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स, २९१/१४२, और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१३६) से भी।

३१३. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अक्तूबर १९, १९०९

लॉर्ड महोदय,

आपके इसी १८ तारीखके पत्रके लिए और आपकी बहुत ही कृपापूर्ण और अच्छी सलाहके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।[1]

अब मैंने एक पत्र लॉर्ड क्रू को भेजा है।[2] उसकी नकल इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। मेरा खयाल है कि इसमें आपके पत्रके सारे मुद्दे आ गये हैं। आशा है, इसे आप पसन्द करेंगे।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५१३७) से।

१. अपने १८ अक्तूबरके पत्रमें लॉर्ड ऍम्टहिलने लिखा था : "बेशक यह आशा तो थी ही कि उपनिवेश कार्यालय आपको चुप रखना चाहेगा, और यह तय करना मुश्किल है कि उसकी यह सलाह कहाँतक निष्पक्ष है या निष्पक्ष नहीं है। कार्यालयका कहना है कि विचार जनरल स्मट्सके प्रस्तावोंपर किया जा रहा है; लेकिन उसने आपको यह नहीं बताया कि लॉर्ड क्रू ने ट्रान्सवाल सरकारको यह बतानेके लिए कोई कदम उठाया है या नहीं कि ये प्रस्ताव बिलकुल अपर्याप्त हैं। अगर आपकी जगह मैं होता तो मैं कोई दूसरा काम करनेसे पहले पत्र लिखकर या मिलकर उपनिवेश कार्यालयका ध्यान इस ओर दिलाता। मैं कहता, यद्यपि हम स्वभावतः उस बातचीतमें उलझन डालना नहीं चाहते, जो हमारी ओरसे चलाई जा रही है, फिर भी हमें यह विश्वास तो दिलाया जाना चाहिए कि आपकी ताजी लिखा-पढ़ीकी उपेक्षा तो नहीं की जा रही है। मैं उन्हें बिलकुल साफ-साफ, लेकिन मुनासिब और सावधानीसे चुने हुए शब्दोंमें कहता, हम असन्तोषजनक 'समझौते' की बातचीत नहीं होने दे सकते। हमें इस बारेमें बातचीतसे अलग रखा जा रहा है। जब यह खत्म हो जायेगी और हम आपत्ति करनेके लिए मजबूर हो जायेंगे तब हमें कहा जायेगा कि 'आप तो नये सवाल उठा रहे हैं।' मैं समझता हूँ कि उन्होंने आपको इस तरह अपनी बात रखनेका मौका दिया है। आपको अपनी बात एक चतुराई-भरे कूटनीतिक तरीकेसे कैसे रखनी है, यह अच्छी तरह मालूम है। आपको इस तरह टाला और प्रतीक्षा करनेपर मजबूर किया जा रहा है, उससे आपको अवश्य ही हैरानी होती होगी। मैं आशा करता हूँ कि उपनिवेश-कार्यालय सीधा तरीका बरत रहा होगा और आपने धीरज और आत्म-संयमका जो साफ सबूत दिया है, उससे अपना मतलब नहीं गाँठ रहा होगा।"

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३१४. लन्दन

[अक्तूबर २०, १९०९के पूर्व]

नेटालका शिष्टमण्डल

फिलहाल तो मुझे इस शिष्टमण्डलके लिए यहाँ कोई काम दिखाई नहीं देता। श्री आंगलिया और श्री हाजी हबीव कुछ समयके लिए पेरिस चले गये हैं। उनके एक-दो दिनोंमें वापस आ जानेकी आशा है।

अली इमाम

श्री अली इमाम यहाँके सभी भारतीयोंसे बरावर मिलते-जुलते रहते हैं। उन्होंने आज अपनी रवानगीसे पहले बहुत-से भारतीयोंको चायके लिए निमन्त्रित किया था। इसमें काफी भारतीय आये थे। श्री अली इमाम २० तारीखको भारतको रवाना होंगे। उन्होंने वादा किया है कि वहाँ पहुँचकर हमारे काममें पूरी सहायता देंगे। उनको पटनामें सरकारी वकीलका पद दिया गया है।

स्त्रियोंके मताधिकारके लिए आन्दोलन करनेवाली महिलाओंकी वीरता

मताधिकार माँगनेवाली स्त्रियों — सफ्रेजेट्स — के विरुद्ध मैं सख्तीसे लिख चुका हूँ, और सख्तीसे बोल चुका हूँ; क्योंकि वे शरीर-बलका उपयोग कर रही हैं। लेकिन वे जो वीरता दिखाती हैं और जो कष्ट सहन करती हैं, उसके लिए तो हमें उनके सामने सिर झुकाना ही पड़ेगा। उनमें से कुछ बहुत सुकुमार स्त्रियाँ हाल ही में गिरफ्तार की गई थीं। उन्हें जेलकी सजा दी गई। उन्होंने वहाँ खाना खानेसे बिल्कुल इनकार कर दिया, इसलिए उनमें से जो कमजोर थीं उनको दो-चार दिन भूखा रखकर छोड़ दिया गया। बाकी अभी जेलमें हैं और खाना खानेसे इनकार कर रही हैं। इस कारण उनको गलेमें नली डालकर जबरदस्ती खाना खिलाया जा रहा है।

इन स्त्रियोंने ऐसा आतंक फैला दिया है कि मन्त्रिमण्डलका कोई भी सदस्य सभाओंमें शान्तिपूर्वक भाग नहीं ले सकता। वे जहाँ भी जाते हैं, इन स्त्रियोंकी गुप्तचर उनके पीछे पहुँच जाती हैं और उनको हैरान करती हैं। उनपर पत्थरोंकी वर्षा तक करती हैं। इन मुट्ठी-भर स्त्रियोंने ऐसा आतंक फैला रखा है, मानो कोई बड़ी लड़ाई चल रही हो।

श्री लॉयड जॉर्ज मन्त्रिमण्डलके सदस्य हैं। न्यू कैंसिलमें उनकी एक सभा थी। लेकिन मताधिकारका आन्दोलन करनेवाली स्त्रियोंका इतना डर था कि उन्हें बहुत इन्तजाम करवाना पड़ा। इस सम्बन्धमें 'टाइम्स'ने लिखा है:

> श्री लॉयड जॉर्जकी सभामें लोहेकी मजबूत छड़ें, पुलिसके घुड़सवार सिपाही और लोगोंके दल दिखाई देते थे। कुछ ही दिन पहले स्थिति ऐसी थी कि इस तरहकी सभाओंमें लोग बिना टिकट जा सकते थे। शान्ति-रक्षाके लिए पुलिसके एक या दो सिपाही होना काफी हो जाता था। किन्तु मताधिकार माँगनेवाली स्त्रियोंने यह सब स्थिति बदल दी है। जब मन्त्रिमण्डलके किसी सदस्यको भाषण देना होता

है तब स्थानीय पुलिस अधिकारियोंको सब मुख्य मार्ग बन्द कर देने पड़ते हैं और आसपासके शहरोंसे पुलिसके बहुत-से पैदल और घुड़सवार सिपाही बुलाने पड़ते हैं। जो लोग सभामें जाना चाहते हैं, उन्हें सभाकी जगहसे एक-दो गली पहले ही अपने टिकट दिखाने पड़ते हैं। अन्तमें वे तंग गलियोंमें होकर ही सभामें पहुँचते हैं। वहाँ जानेवालोंमें अगर किसीपर शक हो जाये तो उसे अपना नाम-धाम भी बताना पड़ता है। इस सब इन्तजाममें बहुत पैसा खर्च होता है।

ऐसा जोश ये स्त्रियाँ दिखा रही हैं। ये घड़ी-भर दम लेनेके लिए भी नहीं बैठतीं। उनका विरोध लाखों स्त्रियाँ करती हैं। वे उन्हें उनके विरोधका इतना ही उत्तर देती हैं, "आप अपना हित नहीं समझतीं। हम आपके लिए लड़ेंगी। आप मदद न करें तो हमें फिक्र नहीं है।" इसके अलावा, उन्होंने सरकारको इस आशयकी चिट्ठी लिखी है कि अगर सरकार योग्य स्त्रियोंको मताधिकार दे दे तो जो स्त्रियाँ जेलमें हैं, वे उपद्रव किये बिना अपनी सजाएँ भुगत लेंगी। वे अपने लिए मताधिकार भी न माँगेंगी। ऐसी वीर स्त्रियाँ कभी नहीं हारेंगी। उनका स्वार्थ नहीं है, यह तो स्पष्ट है। मारपीट हो, धन जाये और लोग लज्जित करें — चाहे जो हो — उससे वे डरती नहीं हैं। इस दुनियामें अधिकार प्राप्त करनेका सुगम मार्ग कहीं भी नहीं है। ये स्त्रियाँ स्वयं ही उपद्रव करके अपनी ऐसी अच्छी लड़ाईको बट्टा लगा रही हैं। उन्हें अन्तमें अपनी करनी पार उतरनी होगी।[1] यहाँके लोग शरीर-बलसे डर जाते हैं और शरीर-बलकी पूजा करते हैं, इसलिए स्त्रियाँ मताधिकार तो ले लेंगी, किन्तु वे मताधिकार लेकर वही अन्याय स्वयं भी करेंगी, जिसका वे विरोध कर रही हैं। इसलिए लोगोंकी हालत जैसीकी-तैसी रहेगी। यदि ये केवल सत्याग्रहके द्वारा लड़तीं तो सारे इंग्लैंडकी हालतको बदल सकती थीं। साथ ही उनका प्रभाव दुनिया-भर में पड़ा होता। वे शरीर-बलको आजमाती हैं। इसमें अन्तमें स्वार्थ आ खड़ा होगा। हमें उनसे शरीर-बलका आश्रय त्यागनेकी शिक्षा लेनी है और उनकी कष्ट-सहनकी वीरताका अनुकरण करना है। इसके अलावा, हमें यह भी देखना है कि अंग्रेज लोग ऐसे हैं, जो अपनी स्त्रियोंको भी कसौटीपर कसे बिना अधिकार नहीं देते।

चोटके बदले चोट

मैंने बम्बईके 'गुजराती' नामक पत्रमें दो अत्यन्त सुन्दर कविताएँ पढ़ी हैं; उनमें से एकमें कविने अनजाने ही सत्याग्रहकी तसवीर खींच दी है। वह कविता इस प्रकार है:[1]

जबतक दीपक नहीं जलता
तबतक पतंगा कहाँ गिरकर जलेगा!
हमें जलानेका प्रयत्न करनेसे
पहले तुम्हें जलना पड़ेगा!

तुम्हारे और हमारे बीच शरीर
और जीवका सम्बन्ध है,
तुम जबतक अपने ऊपर चोट न करोगे
तबतक हमें चोट न लगेगी।

१. मूल गुजराती कविता इस प्रकार है:

बळे दीवो न ज्यां सुधी
पतंगो क्यां पडी बळशे?
हमोने बाळवा जातां
प्रथम बळवुं तुने पडशे।

सम्बन्ध शरीर-जीवनो ते
तमारा ने हमारामां,
न करशो घाव निजपर त्यां
सुधी हमने नहीं अडशे।

मैं तुम्हारा प्रेमी हो गया
तबसे तुम मेरे प्रेमपात्र बन गये;
मैंने तुम्हें जो यह नाम दिया है
वह मेरे साथ ही मिटेगा।
तुम आज यह मान करते हो
और आँखें तरेरकर मुकरते हो;
परन्तु तुम्हारे ये तीर मुझे घायल न करके
वापस तुम्हारे ऊपर मुड़ जायेंगे।
यह निश्चय जान लो कि मैं हूँ
तो तुम हो, मैं नहीं हूँ तो तुम भी नहीं हो।
बीज न हो तो वृक्ष कहाँसे होगा?
तब फल किसपर फलेगा?
जबतक प्रजा है तबतक राजा है,
प्रजा नहीं है तो राजा भी नहीं है।
वह प्रजाके बिना राज्य क्या जंगल
और पत्थरपर करेगा?
मेरे अस्तित्वमें तुम्हारा अस्तित्व
अजीब ढंगसे घुला है।
मुझपर चोट करते हुए चोट
तुम्हारे ऊपर ही पड़ेगी।

—दिवाना

यह गजल बहुत दिलचस्प है। इसको एक भारतीय एक अंग्रेजको सम्बोधन करके सुनाता है। 'तुम्हारे ये तीर मुझे घायल न करके वापस तुम्हारे ऊपर मुड़ जायेंगे।' इस वाक्यमें सत्याग्रहका ईश्वरीय नियम आ जाता है। जबतक विरोधी प्रतिरोध नहीं करता तबतक मारनेवाले व्यक्तिको स्वयं ही चोट लगती है। हवामें घूँसा मारें तो हाथ झटका खाकर रह जाता है। इसलिए यदि एक ओरसे बलका प्रयोग किया जाता है तो वह प्रतिरोधके अभावमें व्यर्थ हो जाता है। इसीलिए सब धर्मोंमें बताया गया है कि अगर दुनियामें सभी लोग भले बन जायें तो दुनियामें जहरीले जीव और हिंस्र पशु तक न रहें। यह नियम विज्ञान-सम्मत कहा जा सकता है। यदि यह नियम ठीक हो तो जिस हद तक मैं अपने विरुद्ध किये जानेवाले शरीर-बलका प्रतिरोध अपने शरीर-बलसे नहीं करता, उस हद तक तो मेरी जीत ही है। जो मुझे मारनेके लिए आता है, अन्तमें उसीको मरना पड़ेगा। उसी तरह वह "प्रजाके बिना राज्य क्या जंगल और पत्थरपर करेगा?" इस वाक्यका अर्थ यह है कि यदि प्रजा राजाकी सत्ताको स्वीकार न करे तो राजाकी सत्ता व्यर्थ है। प्रजा सत्याग्रहका आश्रय लेकर कहे, "हम तुम्हारी आज्ञा नहीं मानते; हमें जेलमें रखो या मारो। हमें इसकी परवाह नहीं।" दुनियामें ऐसा राजा न तो कभी हुआ है और न कभी होगा, जो सारी प्रजाको जेलमें डालकर राज्य करे। यह ठीक है कि [आज्ञा न माननेवाले

हमे आशक थया तारा
गणाई त्यार थी माशुक,
अमे ए नाम आप्युं छे,
अमारी साथ ए टळशे।
करो छो आज आ नखरां
फरो छो आंख खेंचीने;
तमारां तीर ए पाछां
हमो विण तम उपर वळशे।
अमे तो तुं, हमे नहीं तो—
नहीं तुं, जाणजे निश्चे;
नहीं जो बीज क्यां थी वृक्ष?
फळ कोना उपर फळशे?
प्रजा छे त्यां सुधी राजा,
प्रजा नहीं तो नहीं राजा;
प्रजा विण राज्य शुं जंगल
अने पत्थर उपर करशे?
हमारी हस्तीमां हस्ती
रही तारी अजब रीते;
अमो पर घाव करतां घाव
आवी तम उपर पडशे।

—दिवाना

लोग] थोड़े होते हैं तो उनको कैदमें रखा जाता है; लेकिन उसमें भी राजा ही बाजी हारता है। जेल जानेवाले सत्याग्रहियोंकी आत्माएँ काम करती ही रहती हैं और अन्तमें दूसरे लोग भी वैसे ही विरोध करते हैं। उक्त कविताकी सभी पंक्तियाँ विचार करने लायक हैं।

"हमारी फकीरी"

"हमारी फकीरी" शीर्षक दूसरी कविता[1] भी मैंने अखबारमें पढ़ी। यह भी दिलचस्प है, इसलिए इसको भी नीचे देता हूँ:

हमने अपनी [मातृ] भूमिके लिए
यह फकीरी ली है;
हमने भारतके लिए यह
प्रेमकी धूनी जलाई है।
हमने मूर्तियोंकी पूजा छोड़ दी है
और पुस्तकें राखमें डाल दी हैं।
हम सबने अब भारतकी खातिर
यह कीमती झोली ले ली है।
हमने देवदूतों और धर्माचार्योंकी
सब वाणीको भुला दिया है।
हमने मधुर सुखोंको त्यागकर
यह कड़वा जहर पिया है।
हमने वेदों, पुराणों और ग्रन्थोंको
पानीमें डाल दिया है;

हमें ईश्वरकी परवाह नहीं है,
हमें भारतकी परवाह है।
हमारी नस-नसमें बहुत तेज
नशा छा गया है।
वैद्य, तुम उसको दूर करनेके लिए
क्यों आते हो?
तुमको तो सुख और सुविधाओंकी
आदत पड़ गयी है;
किन्तु हमें वफादार
रहनेकी बुरी आदत है।
हम मस्तानोंके मस्ताने हैं,
हमारी यह मस्ती दूसरी ही तरहकी है;
हमारा यह जीवन
भारतके निमित्त है।

—बुलबुल

१. मूल गुजराती कविता इस प्रकार है:

अमे लीधी फकीरी आ
अमारी भूमिने काजे;
जगावी इश्कनी धूणी
अमारा हिन्दने काजे।
बूतो-पूजा दीधी छोडी,
किताबो राखमां रोळी;
अमे सौ हिन्दने माटे
लीधी वरवी हवे झोळी।
फिरस्ता मुर्शिदोना सौ
वचनने दूर तो कीधां,
अमृतसम सुख त्यागीने
कटुसम झेरने पीधां।
किताबो वेद पुराणोने
दीधां पाणी महीं सरवा;

खुदानी नातमां अमने
अमोने हिंदनी परवा।
अमोने सौ नसेनसमां
बुरो नशो बधे व्याप्यो,
तमो तेने दफा करवा
हकीमो शीदने आवो?
तमोने छे पडी टेवो
मजेदारी उडावानी;
अमारी ओ बुरी आदत
वफादारी उठावानी।
अमो मस्तानना मस्ताननी
ओ और मस्ती छे;
अमारी आ अमारा
हिन्दने काजे ज हस्ती छे।

—बुलबुल

यह कविता उतनी अच्छी तो नहीं है, जितनी पहली कविता है, फिर भी इसम विचार अच्छा है; शब्दोंकी रचना भी अच्छी है। इस कविताकी भावना सत्याग्रहीपर लागू होती है। इस भावना — इस फकीरी — के विना सत्याग्रही होना कठिन है। भारतकी सेवाके लिए अलख धूनी रमानी है। तभी हम उस कर्जको चुका सकेंगे जो हमने भारतमें जन्म लेकर अपने ऊपर चढ़ा लिया है। जब यह गम्भीर आवाज हमारे हृदयसे निकलेगी कि हमारा जीवन भारतके लिए है, तभी ईश्वर हमारी प्रार्थना सुनेगा। वह हृदयको देखनेवाला है। वह शब्दोंसे धोखा नहीं खा सकता। यह खेल तो सचाईका है। इसमें नटका काम नहीं है।

भारतकी भाषाएँ

ऊपरकी गुजराती कविताओंको पढ़कर यह खयाल पैदा होता है कि ऐसे विचारोंको ऐसे माधुर्यके साथ अंग्रेजीमें प्रकट करना कठिन है, क्योंकि सत्याग्रह और फकीरी — ये दोनों अंग्रेजोंके खूनमें नहीं हैं। जो भाषा इतनी सुन्दर है, उसका उपयोग हम क्यों न करें? जब हम भारतकी सभी भाषाओंमें देशभक्तिकी भावना भरेंगे, तभी भारतीय जागृत होंगे। श्री लॉयड जॉर्ज़, जिनके विषयमें मैं लिख चुका हूँ, वेल्सके एक परगनेमें उत्पन्न हुए हैं। वेल्स इंग्लैंडका एक तालुका है। वहाँ एक अलग भाषा बोली जाती है। लॉयड जॉर्ज़ यह प्रयत्न कर रहे हैं कि वेल्सके बालक वेल्सकी भाषाको न भूलें। वेल्सके लोगोंको अपनी भाषाकी रक्षा करनेकी जितनी आवश्यकता है, उसके मुकाबले भारतीयोंको भारतीय भाषाओंकी रक्षा करनेकी कितनी ज्यादा जरूरत और गरज होनी चाहिए?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३–११–१९०९

३१५. पत्र: एन० एम० कूपरको

[लन्दन]
अक्तूबर २१, १९०९

प्रिय श्री कूपर,

क्या आप श्री डोककी पुस्तक इस प्रकार भेज देनेकी कृपा करेंगे: २४ प्रतियाँ डॉक्टर मेहता, १४ मुगल स्ट्रीट, रंगून, भारतको; २५० प्रतियाँ मेसर्ज़ नटेसन ऐंड कम्पनी, पुस्तक विक्रेता, मद्रास, भारतको।

२५० प्रतियाँ मैनेजर, इन्टरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, डर्बन, नेटाल, दक्षिण आफ्रिका (डाकका पता: बॉक्स १८२, डर्बन, नेटाल) को।

आपका विश्वस्त,

श्री एन० एम० कूपर,
१५४, हाई रोड,
इलफोर्ड
इसेक्स

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५१४०) से।

३१६. पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन]
अक्तूबर २२, १९०९

महोदय,

नीचेका तार जोहानिसबर्गसे अभी-अभी मिला है:

अस्वात सहित इक्कीस गिरफ्तार। थम्बी तीन मासके लिए जेल भेजे गये। सोराबजी, जोशी, मेढको निर्वासन-आज्ञा।

श्री अस्वात मुसलमान और ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन) के उपाध्यक्ष हैं और अब तीसरी बार जेल गये हैं। श्री थम्बी तमिल समाजके नेता थम्बी नायडू हैं और अब पाँचवीं या छठी बार जेल गये हैं। जो तीन दूसरे व्यक्ति निर्वासित किये गये हैं, उनमें से एक पारसी और दो हिन्दू हैं। वे सब सुसंस्कृत और सुशिक्षित ब्रिटिश भारतीय हैं। उनमें से दोने जूलू-विद्रोहके[1] समय बनाये गये डोलीवाहक दलमें सार्जेंटकी हैसियतसे काम किया था।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: २९१/१४२; और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१४१) से।

३१७. पत्र: एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
अक्तूबर २२, १९०९

प्रिय हेनरी,

इस हफ्ते मैं विस्तारके साथ नहीं लिखूँगा। आप विभिन्न पत्रोंकी प्रतिलिपियाँ देखेंगे, जिनसे प्रकट हो जाता है कि मुझे अब भी प्रतीक्षा करनी है।

अगले हफ्ते श्रीमती रिचका दूसरा भारी ऑपरेशन होगा। रिच अब यहाँ लगभग जम ही गये हैं, सम्भवतः सदैवके लिए।

श्री डोककी पुस्तक अब भी नहीं मिल सकती। बेचारे कूपर समझ नहीं पा रहे हैं कि क्या करें। उनके मुद्रक[2] जेलमें हैं, इसलिए उनकी पत्नी अपने वादेको पूरा नहीं कर सकी हैं। मेरा खयाल है कि अगले हफ्तेमें पुस्तक जरूर मिल जायेगी।

१. सन् १९०६ में; देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ३८०-८३।
२. देखिए "लन्दन", पृष्ठ ३०९।

मैं आपको टॉल्स्टॉयकी एक पुस्तिका भेज रहा हूँ। इसे आप पढ़ें। मेरा खयाल है, यह बहुत अच्छी है।

श्री अब्दुल कादिर कल दक्षिण आफ्रिकाको रवाना हो रहे हैं। इसलिए अब यहाँ केवल श्री आंगलिया और श्री हाजी हबीब रह जायेंगे।

मैं इसके साथ श्री फेल्पका पत्र और श्री रूज़वेल्टके नाम लिखा गया एक पत्रक (पैम्फलेट) भेज रहा हूँ।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१४४) से।

३१८. शिष्टमण्डलकी यात्रा [–१७]

[अक्तूबर २२, १९०९]

मैं तो थक गया हूँ। मुझे लगता है कि पाठक भी अनिश्चित खबरोंसे थक गये होंगे। अभी लॉर्ड क्रू के पाससे निश्चित खबर नहीं मिली है, इसलिए पत्र-व्यवहार जारी है।[1] जबतक वे हमें साफ-साफ जवाब नहीं दे देते, तबतक लोगोंको कोई बात न बताना ही ठीक लगता है। लॉर्ड ऍम्टहिलने भी यही सलाह दी है।

अभी जोहानिसबर्गसे तार मिला है कि वहाँ इक्कीस लोगोंपर मुकदमा चलाया गया था और उन सभीको तीन-तीन महीनेकी जेल दे दी गई है। इन लोगोंमें श्री अस्वात और थम्बी नायडू भी हैं। इसके अलावा श्री सोराबजी, श्री जोशी और श्री मेढको देशनिकाला दिया गया है। मैं इन सब भाइयोंको बधाई देता हूँ और ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह उनको पूरा बल दे। मेरी नजरमें यही [बल] सच्चा शिष्टमण्डल है। इसमें [सफलताकी] चाबी है। जब मुझे श्री अस्वात और श्री सोराबजीकी सेहतका खयाल आता है तब मैं कुछ काँप भी जाता हूँ। फिर भी मैं जानता हूँ कि सेहत खराब हो या अच्छी, जेल जाना ही ठीक है; इसलिए मैं तुरन्त धीरज बाँध लेता हूँ।

इस समय मेरी यही इच्छा है कि श्री दाउद मुहम्मदको ट्रान्सवालमें प्रवेश करते हुए देखूँ। तबीयत अच्छी हो या खराब, सैनिक उसके लिए ठहर नहीं सकता। मेरा विश्वास है कि तबीयत खराब हो तो भी देशकी खातिर जेल भोगना हमारा कर्तव्य है। मेरा खयाल है कि श्री दाउद मुहम्मदपर बहुत-से भारतीय स्नेहवश तबीयत अच्छी हो जानेपर ही मैदानमें आनेके लिए दबाव डाल रहे हैं। मेरी उनसे विनती है कि वे ऐसी सलाह न मानें। जो ऐसी सलाह देते हैं उनसे भी प्रार्थना है कि वे कौमके भलेकी खातिर श्री दाउद मुहम्मदको एक घड़ीके लिए भी न रोकें। यहाँ [मताधिकारके लिए] लड़नेवाली स्त्रियाँ बुरी सेहतकी परवाह न करके जेल जाती हैं। इतना ही नहीं, वे जेलमें जाकर बिल्कुल खाना नहीं खातीं। लड़ाईमें पड़ना तो सिर हथेलीपर रख लेना है। इसलिए सबसे मेरा नम्र निवेदन है कि वे श्री दाउद मुहम्मदको न रोकें; बल्कि जैसे पहले हजारों

१. देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ४९३।

लोग उनको विदाई देनेके लिए निकले थे, वैसे ही विदाई देनेके लिए निकलें और उनको ट्रान्सवाल भेज दें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०-११-१९०९

३१९. पत्र: मणिलाल गांधीको

[लन्दन
अक्तूबर २२, १९०९]

चि० मणिलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं देखता हूँ कि तुम फिर अपनी पढ़ाईकी चिन्तामें पड़ गये हो। बात यही है न कि जब कोई पूछता है कि तुम किस दर्जेमें हो, तो तुम जवाब नहीं दे सकते? अब कहना, "बापूके दर्जेमें हूँ।" तुम्हें पढ़नेका खयाल क्यों आता रहता है? कमानेके खयालसे आता है तो वह ठीक नहीं है, क्योंकि ईश्वर दाना-पानी तो सभीको देता है। तुम मजदूरी करके भी पेट भर सकते हो। फिर हमें तो फीनिक्समें या और कहीं ऐसे ही काममें मरना है। तब कमानेकी बात ही क्या रही? अगर तुम्हें देशकी खातिर पढ़ना हो तो वैसा तुम अब भी कर रहे हो। अगर तुम्हें आत्मज्ञान प्राप्त करनेके लिए पढ़ना हो तो तुम्हें अच्छा बनना सीखना चाहिए। तुम अच्छे हो, यह तो सभी कहते हैं। अब रह गई ज्यादा काम करनेके खयालसे पढ़नेकी बात। उसके लिए उतावली करनेकी जरूरत नहीं है। फीनिक्समें जो हो सके वह करो। आगे फिर विचार कर लेंगे। अगर तुम्हें यह विश्वास हो कि मुझे तुम्हारी चिन्ता रहती है, तो तुम चिन्ता करना छोड़ देना।

तुमने डॉ० नानजीको ठीक उत्तर दे दिया।

ज्यादा क्या लिखूं?

यही चाहता हूँ कि तुम निर्भय होकर रहो और मेरे ऊपर भरोसा रखो।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रति (सी० डब्ल्यू० ९१) से।
सौजन्य: सुशीलाबेन गांधी।

३२०. लन्दन

[अक्तूबर २३, १९०९के पूर्व]

नेटालका शिष्टमण्डल

श्री अब्दुल कादिर उसी जहाजसे रवाना होनेवाले हैं[1] जिससे यह पत्र जायेगा। इसलिए अब केवल श्री आंगलिया रह गये हैं। वे श्री हाजी हबीबके साथ पेरिससे इंग्लैंड वापस आ गये हैं।

अली इमाम

श्री अली इमामने रविवारको भारतीय समाज संघ (इंडियन सोशल यूनियन) में भाषण दिया था। इसमें उन्होंने कहा कि हिन्दुओं और मुसलमानोंमें एकता होनेकी आवश्यकता है। दोनों कौमोंमें फूट कतई नहीं होनी चाहिए। मुसलमानों और हिन्दुओं, दोनोंकी मिट्टी भारतमें ही मिलनी है। उन्हें चाहिए कि वे एक-दूसरेके प्रति उदारता बरतें और छोटी-मोटी बातोंका खयाल न करें। भारतको स्वराज्य मिलना ही चाहिए। वह अंग्रेजों [की सद्भावना] से ही मिल सकता है। उनके भाषणका आशय यही था। वे बुधवारको भारतके लिए रवाना हो गये। उनकी विदाईके वक्त श्री परीख, श्री बनर्जी, डॉक्टर अब्दुल मजीद और श्री बोस आदि लगभग पन्द्रह भारतीय मौजूद थे। श्री अली इमामने जाते-जाते भी कहा कि वे दक्षिण आफ्रिकाके मामलेमें पूरा प्रयत्न करेंगे। स्टेशनपर श्री पोलककी बहन भी मौजूद थीं। श्री अली इमामने श्री पोलकको पूरी सहायता देनेका वचन दिया। उनके साथ श्री अब्दुल अजीज पेशावरी भी गये हैं।

छोटालाल पारेख

श्री छोटालाल ईश्वरलाल पारेख यहाँके प्रथम भारतीय बैंकके प्रथम मैनेजर हैं। इस बैंककी स्थापना स्वदेशी आन्दोलनके बाद की गई थी। इसमें ज्यादातर पूंजी भारतीयोंकी ही लगी है। श्री पारेखने बैंककी नींव मजबूत कर दी है। इस खयालसे और स्वदेशी आन्दोलनको उत्तेजन देनेके खयालसे उनकी विदाईके समय एक समारोह किया गया था। श्री पारेख दो वर्ष-तक यहाँ काम करनेके बाद अब बम्बई जा रहे हैं। समारोहमें पचासके करीब लोग मौजूद थे। सर मंचरजी अध्यक्ष थे। चाय आदिसे सबका सत्कार करनेके बाद सर मंचरजीने भाषण दिया। उसमें उन्होंने बैंकका और श्री पारेखकी समझदारीका उल्लेख किया। इसके बाद उनको एक चाँदीका टी-सेट भेंट किया गया। श्री पारेखने आभार मानते हुए कहा कि बैंकका व्यवसाय भारतमें नया नहीं है। उनको अपने अनुभवसे ऐसा लगता है कि यह बैंक भविष्यमें उन्नति करेगा। इंग्लैंडमें उनके कार्यमें कोई कठिनाई नहीं आई।

डॉक्टर अब्दुल मजीद और श्री गांधीने भी कुछ शब्द कहे।

१. अक्तूबर २३ को; देखिए "पत्र: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ४९४।

श्रीमती रिच

मुझे यह लिखते हुए दुःख होता है कि श्रीमती रिचका रोग अभीतक गया नहीं है। उनको फिर ऑपरेशन करवाना पड़ेगा। इस बारका ऑपरेशन कुछ खतरनाक होगा। लेकिन श्रीमती रिचमें हिम्मत खूब है। श्री रिच तो खर्चके बोझसे पिस ही गये हैं।

स्त्रियोंके मताधिकारके लिए आन्दोलन करनेवाली महिलाएँ

मताधिकार-आन्दोलन करनेवाली स्त्रियाँ पूरी दौड़-धूप कर रही हैं। यहाँके अखबारोंमें उनकी चर्चा रोज होती है। श्री चर्चिलने उन्हें सलाह दी थी कि वे लोगोंपर आक्रमण करना बन्द कर दें। इससे उनका विरोध बढ़ गया है। श्री चर्चिलको एक सभामें भाषण देना था। स्त्रियोंने उस सभाको भंग करनेका प्रयत्न किया। वे खुल्लम-खुल्ला कहती हैं कि बगावत किये बिना उन्हें न्याय न मिलेगा। इसलिए उन्होंने आक्रमण जारी रखने, मन्त्रियोंकी सभाओंको भंग करने और उन्हें दूसरी तरहसे भी परेशान करनेका निश्चय किया है। उनका नेतृत्व करने-वाली स्त्रियाँ बहुत कष्ट उठा रही हैं। वे शारीरिक कष्टसे तनिक भी नहीं डरतीं। उनकी मुखिया श्रीमती पैंकहर्स्ट स्त्रियोंमें आन्दोलनकी भावना जागृत करनेके लिए अमेरिका गई हैं।

शरीर-बलकी व्यर्थता

स्पेनमें फेरर नामका एक प्रख्यात व्यक्ति था। उसका काम लोगोंमें शिक्षा-प्रचार करना था। इसके अलावा वह रोमन कैथॉलिक धर्मावलम्बियोंका बहुत बड़ा विरोधी था। वह खुद नास्तिक था और राज्यसत्ताका शत्रु था। ऐसा मालूम होता है कि कुछ समय पूर्व स्पेनके एक भागमें जो विद्रोह हुआ था, उसको उसीने भड़काया था और उसमें उसका हाथ था। इससे उसके ऊपर फौजी अदालतमें मुकदमा चलाया गया और उसको गोलीसे उड़ा देनेकी आज्ञा दी गई। उसके बाद उस आज्ञापर तुरन्त अमल किया गया। इस कारण यूरोपके बहुत-से गोरे उत्तेजित हो गये हैं। उनका कहना है कि फेररपर कानूनके मुताबिक मुकदमा नहीं चलाया गया और उसके साथ अन्याय किया गया। विद्रोहमें उसका हाथ था, यह सिद्ध नहीं हुआ। बहुत-से स्थानोंमें सभाएँ करके स्पेन-सरकारकी निन्दा की गई। पेरिसके कुछ लोग तो इतने उत्तेजित हो गये थे कि कोई भारी फसाद हो जानेकी आशंका उत्पन्न हो गई थी। एक सिपाहीकी तो जान भी चली गई।

यहाँ भी रविवारको एक खुले मैदानमें बहुत बड़ी सभा की गई थी। लोगोंने स्पेनके दूतावासपर धावा बोल दिया था; लेकिन पुलिसका नियन्त्रण पर्याप्त था, इसलिए दूता-वासकी इमारत बच गई।

कुछ यूरोपीयोंका कहना है कि यूरोपके दूसरे देशोंके लोगोंको स्पेनके आन्तरिक मामलोंमें इस तरह दखल न देना चाहिए। उनको ऐसा करनेका हक नहीं है।

मुझे तो इससे यह खयाल होता है कि अब फेररके भाई-बंद उसके गोलीसे उड़ा दिये जानेका बदला लेना चाहते हैं। इससे आपसी घृणा और वैर बढ़ेगा। इस समय ऐसी अफवाह है कि लोग स्पेनके राजाका खून कर देंगे। ऐसा हो तो भी क्या होगा? इससे किसीका लाभ तो होता नहीं दीखता। इसमें तो शक नहीं कि फेरर खुद शरीर-बलपर जोर देता था। उसने अपने प्राण गँवाये, इसलिए यूरोपके क्रान्तिकारी बिना सोचे-विचारे उत्तेजित हो गये हैं। इसमें न्यायकी बात तो है ही नहीं। बस "मारो, मारो"—यही

कहा जा रहा है। अगर यही परिस्थिति रही तो यूरोपमें किसीका भी जीवन सुरक्षित न रहेगा। बादशाह और बड़े अधिकारी तो आज भी सुरक्षित नहीं हैं। वे भी तो शरीर-बलके पुजारी हैं। इसलिए दिन-प्रति-दिन यह आँधी बढ़ेगी। कुछ भारतीय भारतमें भी यही साधन अपनाना चाहते हैं। मुझे लगता है कि उन्हें फेररके उदाहरणसे शिक्षा लेनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–११–१९०९

३२१. लन्दन

[अक्तूबर २४, १९०९ के बाद]

विजयादशमी

इंग्लैंडमें भारतीय जातियाँ अपने-अपने त्योहार मनायें, यह कुछ आश्चर्यकी बात है। ठीक देखें तो इसमें आश्चर्य कुछ नहीं है, लेकिन हम ऐसी हीन अवस्थामें पहुँच गये हैं कि हमें इस देशमें अपने त्योहारोंका भान नहीं रहता। जबतक हमारी यह स्थिति है तबतक यह कैसे कहा जा सकता है कि हम एक राष्ट्र होने योग्य हैं, अगर हम इस स्थितिके लिए शासकोंकी निन्दा करें तो वह भी उचित न होगा। इसमें तो स्पष्टतः हमारा ही दोष है। इसलिए यह अच्छी बात है कि अब इंग्लैंडमें विभिन्न [भारतीय] जातियाँ अपने-अपने त्यौहार मनाने लगी हैं।

इस दिशामें पहल तो पारसियोंने की है। वे पटेटीका त्यौहार कई बरससे मना रहे हैं। मुसलमान भी ईद मनाते हैं। दो बरससे हिन्दू अपने उत्सव मनाने लगे हैं। इन उत्सवोंमें सभी जातियाँ थोड़ा-बहुत हिस्सा लेती है। ऐसा ही होना चाहिए। हम सबको एक-दूसरेके त्यौहारोंकी जानकारी रखना जरूरी ही है।

विजयादशमीके दिन[1] यहाँ हिन्दुओंने एक भोज दिया था। उसमें सब टिकटसे आये थे। जो हिन्दू न थे उन्हें [अतिथि-रूपमें] निमन्त्रित किया गया था। बाकी लोगोंने ४ शिलिंग प्रति टिकट दिये थे। भोजन बनानेवाले सभी भारतीय चिकित्सा-शास्त्र या कानूनके विद्यार्थी थे और उन्होंने स्वेच्छासे खाना बनाया। उनमें एक भारतीय बहुत प्रतिभाशाली था। उसने बहुत कष्ट सहकर कानूनके अध्ययनका अवसर प्राप्त किया है। परोसनेवाले भी यही लोग थे। यह नहीं कहा जा सकता कि सब व्यवस्था ठीक थी। निश्चित समयसे कुछ विलम्ब हो गया था। परोसनेवालोंको भी परोसनेका काम ठीक-ठीक नहीं आता था। फिर भी नया काम था, इस खयालसे यही कहा जा सकता है कि सब काम ठीक तरह पूरा हो गया।

इस समारोहमें श्री हुसेन दाउदने जेलकी कई कविताएँ गाकर सुनाईं। श्री गांधीको अध्यक्ष-पद दिया गया था। विजयादशमी राम-रावणके युद्धकी याद दिलाती है। श्री गांधीने अपने भाषणमें कहा कि ऐतिहासिक पुरुषके रूपमें रामचन्द्रजीको प्रत्येक भारतीय सम्मान दे सकता है। जिस देशमें श्री रामचन्द्र सरीखे पुरुष हो गये हैं उस देशपर हिन्दुओं, मुसलमानों और पारसियों — सभीको गर्व करना चाहिए। श्री रामचन्द्रजी महान भारतीय हो गये हैं, इस

१. अक्तूबर २४ को।

दृष्टिसे वे प्रत्येक भारतीयके लिए माननीय है। हिन्दुओंके लिए तो वे देवता-रूप हैं। अगर, रामचन्द्रजी, सीताजी, लक्ष्मणजी और भरतजी-जैसे लोग भारतमें फिर पैदा हों तो भारत ही शीघ्र एक सुखी देश बन जाये। पहले तो यह याद रखना चाहिए कि रामचन्द्रजीने देश-सेवाके योग्य बननेसे पूर्व १२ बरस[1] वनवास भोगा। सीताजीने बहुत दुःख सहन किया और लक्ष्मणजीने इतने सालतक नींद त्यागी और ब्रह्मचर्यका पालन किया। जब भारतीय ऐसा जीवन वितायेंगे तब वे स्वतन्त्र ही माने जायेंगे। इससे भिन्न मार्ग अपनानेसे भारत सुखी न होगा।

श्री हाजी हबीबने भारतके लिए मंगल-कामना की। श्री चट्टोपाध्यायने उनका समर्थन किया। श्री सावरकरने रामायणकी महानतापर जोशीला भाषण दिया। उन्होंने सभी भारतीयोंसे इस बातपर विचार करनेका अनुरोध किया कि विजयादशमीसे पहले नवरात्रिके व्रत (रोजे) आते हैं। इस समारोहमें लगभग सत्तर भारतीय उपस्थित थे।

लालाजीका मुकदमा

स्थानीय 'डेली एक्सप्रेस' पत्रमें लाला लाजपतरायके विरुद्ध कुछ आरोप छापे गये थे। इसपर लालाजीने पत्रपर मानहानिका दावा दायर किया। इस मुकदमेमें लालाजीको ५० पौंड हर्जाना और खर्च दिलाया गया है। इस मामलेमें न्यायाधीशने जो मत व्यक्त किया, उससे प्रकट होता है कि जब राजनीतिक मामलोंमें मुकदमा चलाया जाता है तब अदालतसे न्याय मिलना अत्यन्त कठिन हो जाता है। न्यायाधीशने तो यही मत व्यक्त किया कि लॉर्ड मॉर्ले-जैसे व्यक्तिने जब लालाजीको निर्वासित किया है तब कुछ तो कारण होगा ही। सच कहा जाये तो टीका यह बिल्कुल अनुचित थी। इसके अलावा न्यायाधीशके सामने इस सम्बन्धमें कोई प्रमाण भी नहीं थी। फिर भी न्यायाधीशने यह मत प्रकट किया, इसका उद्देश्य तो केवल यही था कि जैसे-हो-वैसे लालाजीको पंचोंकी नजरोंमें गिराया जाये और उनके (ज्यूरीके) मनमें भ्रम उत्पन्न किया जाये।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-११-१९०९

३२२. पत्र: लॉर्ड क्रूके निजी सचिवको

[लन्दन]
अक्तूबर २९, १९०९

महोदय,

नीचेका तार जोहानिसबर्गसे अभी-अभी मिला है:

प्रिटोरियाके भारतीयोंपर १८९९ के नगर-विनियमके खण्ड ३९ के अनुसार नगरमें रहनेके आरोपमें मुकदमा। पहली पेशी एक नवम्बरको। सोराबजी, मेढ वापस आये; छः महीनेकी सजा।

१. यह छपाईकी भूल हो सकती है। वनवास १४ वर्षका था।

तारका पहला हिस्सा बताता है कि एक पुराना कानून, जो ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध कभी लागू नहीं किया गया, अब उन्हें प्रिटोरिया शहरसे एक पृथक बस्तीमें भेजनेकी दृष्टिसे पुनर्जीवित किया जा रहा है। पिछला हिस्सा बताता है कि श्री सोराबजी और मेढ, जिनके निर्वासित किये जानेकी सूचना मैंने अपने इसी २२ तारीखके पत्रमें[1] दी थी, छः महीनेके लिए जेल भेज दिये गये हैं। मेरा खयाल है, श्री सोराबजी अब पाँचवीं बार और श्री मेढ चौथी बार जेल गये हैं।[2]

आपका, आदि,

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: २९१/१४२; और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१४५) से।

३२३. पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको

[लन्दन]
अक्तूबर २६, १९०९

महोदय,

नीचेका तार मद्राससे मिला है:

मदुरा, तिनेवेली, पालमकोट्टा, त्रिचनापल्ली, सेलम, मछलीपट्टम, बेलारी, पेनूकोंडामें शानदार सभाएँ। मद्रास मुस्लिम लीग, दर्जनसे ऊपर जिला कांग्रेस कमेटियोंकी भी सभाएँ, उनमें ट्रान्सवालकी कार्रवाईकी निन्दा; तत्काल हस्तक्षेप, भर्ती बन्दीका अनुरोध; सब जगह भारी नाराजी।

तारमें जिस भर्तीका जिक्र है वह नेटालके लिए भारतीय मजदूरोंकी भर्ती है।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स २९१/१४२; और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१४७) से।

१. देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ४९३।

२. इसका जवाब ४ नवम्बरको देते हुए गांधीजीको उपनिवेश कार्यालयसे लिखा गया था कि इस विषयपर ट्रान्सवाल सरकारके साथ पत्र-व्यवहार चल रहा है। उपनिवेश कार्यालयने ट्रान्सवाल सरकारसे गांधीजीके वक्तव्योंकी सचाईके बारेमें जिज्ञासा की थी।

३२४. लन्दन[1]

[अक्तूबर २६, १९०९ के बाद]

सभ्यता या बर्बरता?

इन दिनों यहांके अखबारोंमें यहांके खाद्य पदार्थोंपर टीका-टिप्पणी निकलती रहती है। उसमें यह बताया जाता है कि प्रायः सभी तैयार खाद्य पदार्थोंमें मिलावट की जाती है। बहुत-से खाद्य पदार्थोंमें तैंतीस प्रतिशत मिलावट होती है और कभी-कभी वह मिलावट नुकसानदेह होती है। जेली आदिके बड़े-बड़े कारखानोंमें निपुण रासायनिकोंको रखा जाता है, ताकि [उनके रसायन-कौशलकी बदौलत] घटिया खाद्य-पदार्थ भी देखनेमें अच्छे माल-जैसे ही लगें। यह कार्य रसायन मिलाकर किया जाता है और इससे पैसोंका फायदा होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि खाद्य-निर्माताओंकी दृष्टि केवल अपने लाभपर ही रहती है; उस लाभको प्राप्त करनेमें लोगोंको क्या हानि पहुँचती है, वे इस बातका ध्यान रखते ही नहीं। ये ही लोग इस प्रकार अन्यायसे कमाये हुए पैसेमें से कुछ पैसा लोकोपयोगी कहलानेवाले कार्योंमें दे देते हैं और वाहवाही लूटते हैं। उन्हें भला और नीतिवान माना जाता है। मतलब यह है कि इस सभ्यतामें अनीति नीति बन बैठी है। ज्यादातर तैयार मालमें चर्बी तो काममें लाई ही जाती है। मिसालके तौरपर, विलायती चावलोंको साफ करने और चमकीला बनानेके लिए चर्बीका इस्तेमाल किया जाता है। यह बात भयंकर है, फिर भी सही है। इससे हिन्दुओं और मुसलमानों दोनोंका धर्म भ्रष्ट होता है। इसलिए उपाय तो यह है कि पश्चिमकी कोई भी चीज इस्तेमाल न की जाये। तैयार खाद्य तो काममें लाया ही न जाये।

जापानका वीर योद्धा

स्थानीय अखबारोंमें यह खबर छपी है कि जापानके वीर पुरुष मार्क्विस ईटो[2] एक कोरियाईकी रिवाल्वरकी गोलीसे मारे गये, कोरिया जापानके निकटका देश है। जिस प्रकार अंग्रेज मिस्र और भारतमें शासन करते हैं उसी प्रकार जापानी कोरियामें करते हैं। अंग्रेजोंका जितना अधिकार भारत या मिस्रमें है, जापानका उतना ही अधिकार कोरियामें है। जापान कुछ कोरियाकी भलाईके लिए वहाँ नहीं गया है; बल्कि उसने इसलिए वहाँ हस्तक्षेप किया है कि कोरिया दुर्बल राष्ट्र माना गया है और यदि उसपर रूस या चीनका अधिकार हो तो जापानको हानि पहुँचेगी। यह कोरियाके लोगोंको कुछ पसन्द नहीं आया। कोरियाके लोग जापानकी ओर सदैव द्वेषकी दृष्टिसे देखते आये हैं। ईटोपर इससे पहले भी दो बार वार किया गया था। किन्तु जापान, जिसने एक बार रूसका खून चख लिया है, कोरियासे जल्दी नहीं हटेगा। सत्ताका मद

१. यह ८-१-१९१० के **इंडियन ओपिनियन**में इस प्रस्तावनाके साथ प्रकाशित हुआ था कि गांधीजीने ये अनुच्छेद अपनी लन्दनकी विभिन्न चिट्ठियोंमें लिखे थे, लेकिन स्थानकी कमीके कारण उन्हें अबतक नहीं छापा गया था।

२. प्रिंस हिरोबूमी ईटो (१८४१-१९०९); जापानी राजनीतिज्ञ और सुधारक; सन् १८८६ से लेकर १९०१ तक चार बार प्रधान मन्त्री हुए। वे १९०५में कोरियामें रेजिडेन्ट जनरल नियुक्त किये गये और १९०९ में जापानकी प्रिवी कौंसिलके अध्यक्ष हुए। उक्त कोरियाईने, जब वे हारबिनकी यात्रापर थे, उनकी हत्या कर दी।

ऐसा ही होता है। तलवारधारी प्रायः तलवारसे ही मरता है, जैसे तैराक प्रायः डूबकर मरता है। रिवाल्वर चलानेवालेने साफ-साफ कहा कि कोरियामें जापानका शासन उससे सहन नहीं हुआ, इसलिए उसने ईटोको मारा है। कहा जाता है कि जापानने कोरियापर अपनी सत्ता जमानेके लिए करीब १२,००० कोरियाइयोंका वध किया है। इतिहास बताता है कि सत्ता बुरी वस्तु है और दूसरे देशपर हाथ डालकर सुखसे बैठना सम्भव नहीं है। हमारे कुछ नवयुवक मानते हैं कि [कुछ लोगोंका] खून करके अंग्रेजोंको भारतसे निकाला जा सकता है। यह सम्भव हो, तो भी व्यर्थ है। जापानकी कुछ बातें प्रशंसनीय हैं; परन्तु जापानने जो पश्चिमी प्रथाओंको अपनाया है वह किसी भी प्रकार प्रशंसनीय नहीं माना जायेगा।

तब ईटोको वीर क्यों माना? यह बात अलग है। ईटोमें बचपनसे ही स्वदेशाभिमान था। उनका जन्म १८४१ में हुआ था। उन्होंने जबसे होश सँभाला तभीसे जापानके उत्थानका खयाल रखा। उसको अमलमें लानेके लिए उन्होंने बहुत कष्ट सहे। रूसके साथ जो युद्ध हुआ उसमें उन्होंने बहुत वीरता दिखाई। इस प्रकार युद्धमें, गणितमें, शिक्षण-कार्यमें और शासन-व्यवस्थामें — अर्थात् सभी बातोंमें वे पूर्ण दक्ष थे। इसलिए वे वीर तो माने ही जायेंगे। उन्होंने कोरियाको जीतनेमें अपनी वीरताका दुरुपयोग किया। परन्तु जो लोग पश्चिमी सभ्यतापर मोहित होते हैं वे ऐसा किये बिना रह नहीं सकते। शस्त्रोंसे जापानका अस्तित्व रखना, उसकी रक्षा करना और उसको उन्नत बनाना हो तो उसके लिए अपने इर्द-गिर्दके देशोंको अधीन करना अनिवार्य ही है। इससे सार यह निकला कि जो राष्ट्रका सच्चा हिताकांक्षी है वह तो उसे सत्याग्रहके रास्तेपर ही ले जायेगा।

भारतकी जागृतिपर एक गोरेके विचार

श्री जी० के० चेस्टरटन यहाँके महान् लेखक हैं। वे उदार दिलके अंग्रेज हैं। उनके लेखोंको लाखों लोग चावसे पढ़ते हैं। उनके लिखनेकी खूबी ही ऐसी है। १८ सितम्बरके 'इलस्ट्रेटेड लन्दन न्यूज़'में उन्होंने भारतकी जागृतिके सम्बन्धमें एक लेख लिखा है। वह पढ़ने और समझने लायक है। मेरा खयाल है, उन्होंने बहुत उचित बात लिखी है, मैं लेखके ज्ञातव्य अंशोंका सार नीचे देता हूँ।

> भारतके लिए स्वराज्यकी बात करनेवाले भारतीय युवक जब यह बात करते हैं तब मुझे ऐसा भासित होता है कि वे जो कहते हैं उसे समझते नहीं हैं। जो स्वराज्य माँगते हैं वे अच्छे लोग हैं, यह मैं स्वीकार करता हूँ। देशप्रेमसे प्रेरित प्रायः सभी लोग अच्छे होते हैं। हमारे अफसर प्रायः अज्ञानी और अत्याचारी होते हैं, इसमें मुझे सन्देह नहीं है। ऐसे अफसर प्रायः अज्ञानी और अत्याचारी होते ही हैं; परन्तु जब मैं स्वराज्य माँगनेवालोंके अखबारोंको और उनके विचारोंको देखता हूँ तब मैं ऊब जाता हूँ और मुझे उनके सम्बन्धमें सन्देह होता है। भारतीय स्वराज्य माँगनेवाले जो-कुछ माँगते हैं वह न भारतीय है और न स्वराज्य ही है। वे हर्बर्ट स्पेंसरकी[1] और ऐसी ही दूसरी बातें करते हैं। यदि वे हर्बर्ट स्पेंसरके विचारोंसे नहीं बच सकते तो भारतीय स्वराज्य किसे कहा जाये? बुद्धका तत्त्वज्ञान मुझे अधिक प्रिय नहीं है, परन्तु उनकी शिक्षाएँ स्पेंसरकी शिक्षाओंके समान खोखली नहीं हैं। बुद्धकी शिक्षाओंमें कुछ ऊँचे हेतु हैं।

१. (१८२०-१९०३); अंग्रेज दार्शनिक; **प्रिंसिपल्स ऑफ़ साइकॉलॉजी, सिंथेटिक फिलॉसफ़ी** और **प्रिंसिपल्स ऑफ़ सोशियॉलॉजीके** लेखक।

यह बात स्पेंसरकी शिक्षाओंमें नहीं है। उनका एक अखबार 'इंडियन सोशियॉलॉजिस्ट' कहलाता है। क्या भारतीय युवक स्पेंसरकी शिक्षाओंको ग्रहण करके अपने प्राचीन गांवों और अपने प्रेमपूरित घरोंमें विष फैलाना चाहते हैं?

किसीके अपनी पुरानी जीवन-व्यवस्था मांगने और दूसरोंकी खोजी हुई नई वस्तु मांगनेमें बड़ा अन्तर है। विजित लोगोंके अपनी प्राचीन राज्य-व्यवस्था वापस मांगने और विजेताओंकी राज्य-व्यवस्था मांगनेमें अन्तर है। मान लें कि एक भारतीय कहता है: "भारत सदा गोरोंसे और उनके कामोंसे अलग रहता तो ठीक होता। हर चीजमें कुछ-न-कुछ कमी तो होती ही है जो हमें अपनी ही चीज पसन्द है। हमारी पुरानी राज्य-व्यवस्थामें रजवाड़ोंमें लड़ाइयां होतीं, परन्तु हमें अस्पतालोंमें मरनेसे लड़ाईमें मरना अधिक पसन्द है। पुरानी व्यवस्थामें अत्याचार होता है। किन्तु एक ही राजा, जिसे मैं शायद ही कभी देख सकूं, इन सैकड़ों राजाओंसे, जो मेरे बेटों और मेरी रोटीपर अधिकार रखना चाहते हैं, अच्छा है। हमारी व्यवस्थामें, सम्भव है, महामारी फैलती, किन्तु सदा मृत्युके भयसे मृतवत् बने रहनेकी अपेक्षामें हमें महामारीसे एक ही झपाटेमें मर जाना अधिक पसन्द है। हम लोग अपने धर्मके विरोधको लेकर कभी-कभी आपसमें लड़ते, परन्तु धर्महीन शान्तिकी अपेक्षा धर्मकी रक्षा करते हुए अशान्ति भोगना हमें ज्यादा पसन्द है। जिन्दगी छोटी है, हर आदमीको किसी तरह जीना है, कहीं-न-कहीं मरना तो है ही। आपकी जीवन-पद्धतिके अनुसार आपके किसानोंको जो शरीर-सुख प्राप्त है उससे हमारी जीवन-पद्धतिका सुख कम नहीं है। हमारी पद्धति आपको अच्छी न लगे तो हमारी आपसे कोई जबरदस्ती नहीं। आप चले जायें और हमारी चीज हमारे पास रहने दें।"

कोई भारतीय ऊपरके अनुसार कहे तो मैं उसे भारतके लिए स्वराज्य माँगनेवाला मानूंगा। ऐसा भारतीय सच्चा भारतीय माना जायेगा। और मुझे लगता है कि उसके तर्कका खण्डन करना कठिन होगा। किन्तु मैंने भारतके लिए स्वराज्यके समर्थकोंके जो लेख पढ़े उनमें वे लोग यही लिखते रहते हैं: "हमें बैलट बॉक्स (मतदान-पेटी) दो, हमें अधिकार दो, हमें जजकी टोपी दो। प्रधान मन्त्री बनना हमारा स्वाभाविक अधिकार है। हमें बजट पेश करनेका हक है। यदि मुझे 'डेली मेल' अखबारका सम्पादकत्व प्राप्त नहीं होता तो मुझे बेचैनी होती है।" इस आशयकी बातें भारतमें स्वराज्य माँगनेवाले करते हैं। जो ऐसा कहते हैं, उनको उत्तर देना कठिन नहीं। जिसे बहुत सहानुभूति है वह व्यक्ति भी कह सकता है: "भले भारतीय, तुम बात तो ठीक कहते हो, किन्तु तुम जो चीज माँगते हो वह तो हमने बनाई है। यदि यह चीज उतनी अच्छी है जितनी तुम मानते हो, तो इसके सम्बन्धमें तुमने सुना भी तो हमारी ही कृपासे है। यदि ये अधिकार स्वाभाविक हैं तो हमारे बताये बिना तुम्हें अपने ये अधिकार सूझते भी नहीं। मताधिकार ऐसी बड़ी बात हो (जिसके सम्बन्धमें स्वयं मुझे सन्देह है), तो हमें, जो उसको सिखानेवाले हैं, कुछ सत्ता होनी चाहिए।" जब भारतीय बड़े गर्वसे मताधिकार माँगते हैं तब मुझे उलटी बात याद आती है। यह तो ऐसी बात हुई जैसे मैं तिब्बतमें जाकर लामासे महात्मा बननेका परवाना माँगूं। यदि मैं लामासे उक्त माँग करूँ तो वह मुझसे कहेगा: "हमारी पद्धति खरी या खोटी, ग्राह्य या अग्राह्य — जैसी भी है, हमारी है। यदि आपका ज्ञान हमसे उच्च है तो हमारी पद्धतिसे आपको कोई काम नहीं।

यदि हमारी पद्धति अच्छी है, ऐसा आप मानते हैं तो याद रखें कि वह हमारी खोजी हुई है, हमने उसका अभ्यास किया है और कोई व्यक्ति महात्मा है या नहीं, यह हम जान सकते हैं। यदि आपको हमारे विशेष अधिकार चाहिए तो आपको हमारे विशेष नियमोंका पालन करना होगा और हमने जो मानदण्ड निश्चत किया है, उसपर खरा उतरना होगा। तभी हम आपको वह चीज दे सकेंगे जिसकी आप माँग कर रहे हैं।"

मैं इस प्रकार लिखता हूँ इससे कोई ऐसा खयाल करेगा कि मैं भारतको स्वराज्य देनेके विरुद्ध हूँ। परन्तु यह गलत माना जायेगा। मैं तो केवल आसपासका विचार करता हूँ। और जब दो सम्पूर्ण सभ्यताओंके बीच संघर्ष उत्पन्न हो, तब आसपासका विचार करना आवश्यक है। फिर मैं यह भी स्वीकार करता हूँ कि स्वाभाविक अधिकार होते हैं। लोग अपने विचार प्रकट करें, अपनी पद्धतिके अनुसार आचरण करना चाहें, यह स्वाभाविक है। भारतवासियोंको भारतीय बनने और रहनेका अधिकार है। परन्तु हर्बर्ट स्पेंसर कोई भारतीय नहीं है। उसकी शिक्षा भारतीय नहीं है। शिक्षा-शास्त्र आदिकी ढोंग-भरी बातें भारतीय नहीं हैं। मैं चाहता हूँ कि अंग्रेजोंमें ऐसा ढोंग न हो। परन्तु हमारी पहली कठिनाई यह है कि भारतके लिए स्वराज्य माँगनेवाला भारतीय ऐसा नहीं है जो भारतीय जातिके लिए शोभास्पद हो।

श्री चेस्टरटनने ऊपर जो विचार व्यक्त किये हैं, उनको सम्मुख रखकर प्रत्येक भारतीयको सोचना है कि भारतको क्या माँगना उचित है। भारतकी जनता किस प्रकार सुखी होगी? हम भारतकी जनताके नामपर अपने स्वार्थकी पूर्ति कराना तो नहीं चाहते? भारतकी जनताने जिस वस्तुकी सहस्त्रों वर्षसे बड़े यत्नसे रक्षा की है, उसको हम एक क्षणमें उखाड़कर फेंक देना तो नहीं चाहते? श्री चेस्टरटनके लेखोंको पढ़कर मेरे मनमें तो ये सब विचार उत्पन्न हुए हैं, इसलिए इनको 'इंडियन ओपिनियन' के पाठकोंके सम्मुख रखता हूँ।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–१–१९१०

३२५. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अक्तूबर २८, १९०९

श्रीमान,

मद्रास प्रेसीडेन्सीमें जगह-जगह जो सभाएँ हुई हैं,[1] उनके बारेमें लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको एक पत्र भेजा गया है। उसकी एक नकल मैं इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ।

मैं यह भी कह दूँ कि जोहानिसबर्गसे जो तार मिले हैं, उनमें कहा गया है कि ट्रान्सवालमें अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके विरुद्ध फिर सरगर्म कार्रवाइयाँ शुरू कर दी गई हैं। इक्कीस व्यक्तियोंको गिरफ्तारकर तीन-तीन महीनेकी सजायें दे दी गई हैं। इनमें ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन) के कार्यवाहक अध्यक्ष भी हैं। तीन पढ़े-लिखे

१. देखिए पिछला शीर्षक।

भारतीय निर्वासित किये गये थे। इनमें से दो वापस आ गये। ये फिर गिरफ्तार कर लिये गये और छ:-छ: महीनेके लिए जेल भेज दिये गये।[1]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१४८) से।

३२६. पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
अक्तूबर २९, १९०९

श्रीमन्,

मुझे निम्नलिखित तार मिला है:

समितिकी सलाह है कि यदि लन्दनका काम समाप्त हो गया हो तो प्रतिनिधिगण आफ्रिका लौट आयें।

यह (अपने जर्मन मित्र कैलेनबैकको, जो श्री डोकके साथ वहाँके संघर्षसे सम्बन्धित मामलोंको देखते हैं, गत ८ तारीखको लिखे) मेरे उस पत्रके[2] उत्तरमें है, जो नीचे लिखे अनुसार है:

> यह पत्र बृहस्पतिवारको आपको मिलेगा। मेरा कार्यक्रम अब यह है कि हम इस मासकी ३० तारीखको यहाँसे चलेंगे। इस बातकी पूरी आशा है कि उस समय तक हम काम समाप्त कर लेंगे। यदि ऐसा हो जाये तो बादमें भारतके बारेमें सवाल उठेगा। रवानगीकी प्रस्तावित तारीखसे दो दिन पहले यह पत्र आपके हाथोंमें होगा। यदि मैं आपको इसके विपरीत कुछ सूचना न भेजूं तथा परिस्थिति और तरहसे बदल न जाये तो कृपापूर्वक मुझे तार द्वारा सूचित करें कि समितिका इरादा क्या है? शायद अगले सप्ताह खुद मुझे ही पूरी हिदायतोंके लिए तार भेजना पड़े। परन्तु यदि मैं न भेजूं तो इस पत्रके पानेके बाद आपका भेज देना जरूरी होगा। भारतीय दौरेका अर्थ है दो महीनेका समय। एक महीना वहाँ जाने-आनेके लिए और एक महीना भारतमें बितानेके लिए। ज्यादा समय भी लग सकता है। एक सत्याग्रहीके नाते मुझे लगता है कि भारतकी यात्रा इस यात्राके ही समान व्यर्थ है। परन्तु गैर-सत्याग्रहियोंके दृष्टिकोणसे सोचते हुए लगता है कि जैसे कुछ महीने लन्दनमें लगा

१. लॉर्ड ऍम्टहिलने १ नवम्बरको इसकी पहुँच देते हुए लिखा था: "आपने मुझे जो खबर भेजी है उसके लिए मैं आपका बहुत आभारी हूँ। मैं देखता हूँ कि अखबारोंने हमारे मामलेका पूरा बहिष्कार कर रखा है, इसलिए आपकी खबर न मिलती तो मैं भारत और दक्षिण आफ्रिकाकी घटनाओंके बारेमें अज्ञानमें ही रहता। मुझे यह जानकर हैरानी हो रही है कि ट्रान्सवालमें 'अनाक्रामक प्रतिरोधियों' के विरुद्ध की जानेवाली सरगर्म कार्रवाइयोंमें कोई कमी नहीं हुई है।"

२. पत्रकी मूल प्रति उपलब्ध नहीं है।

दिये गये हैं, वैसे ही भारतका काम समाप्त कर देनेके लिए भी दो महीने और लगा दिये जायें। उस दशामें पैसेका प्रश्न भी उठेगा और पैसा मेरे पास तार द्वारा भेजना होगा।

इसका कारण चाहे समिति द्वारा विशुद्ध सत्याग्रही दृष्टिकोण अपनाया जाना हो या धनाभाव हो, अथवा दोनों हों, लगता है कि परिस्थितिके देखते हुए हमें कमसे-कम वर्तमान समयमें भारत-यात्राका विचार छोड़ देना चाहिए। यह मामला श्री पोलकके तारसे और भी मुश्किल हो गया है। उन्होंने आज भारतसे नीचे लिखे अनुसार तार भेजा है:

बहुत जोर देकर आपको आनेकी सलाह देता हूँ।

परन्तु कुल मिलाकर मुझे यह लगता है कि संघर्ष किसी भी मंजिलपर क्यों न हो, हम १३ नवम्बरको निश्चित रूपसे दक्षिण आफ्रिकाके लिए रवाना हो जायेंगे और ट्रान्सवालकी सीमापर गिरफ्तारीके लिए ललकारेंगे।

लॉर्ड क्रू का उत्तर अभीतक नहीं मिला। मैं नहीं जानता कि इसका क्या अर्थ है। परन्तु यदि वह इतनी देरसे आया कि यहाँ रहते हम उसपर सार्वजनिक रूपसे कार्यवाही न कर सकें तो मैं सोचता हूँ कि उस दशामें उसपर समितिको कार्रवाई करनी चाहिए।[1] श्री रिच इस विचारसे सहमत हैं।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१५०) से।

३२७. पत्र: एल्मर मॉडको

[लन्दन]
अक्तूबर २९, १९०९

प्रिय महोदय,

मैंने पिछले हफ्ते आपके कृपापूर्ण पत्रके उत्तरमें आपको एक पत्र[2] लिखा था। चूँकि मैं आपसे भेंटकी तारीख नियत की जानेकी प्रतीक्षा उत्सुकतासे कर रहा हूँ, इसलिए आपको फिर याद दिलाता हूँ। कहीं मेरा पत्र इधर-उधर तो नहीं चला गया?

मैं आपसे अनाक्रामक प्रतिरोध-सम्बन्धी मामलोंपर बातचीत करना चाहता हूँ। इनमें से एक मामला टॉल्स्टॉयके "एक हिन्दूके नाम लिखे पत्र"[3] के प्रकाशनसे सम्बन्धित है। मेरा खयाल है, पिछले महीने जब आप रूस गये थे तब आपने वह पत्र टॉल्स्टॉयके यहाँ देखा होगा। मैं इस पत्रको छापनेके लिए किसे भेजूं, इस सम्बन्धमें आपकी सलाहकी कद्र करूँगा।

१. इस पत्रकी प्राप्ति-सूचना देते हुए लॉर्ड ऍम्टहिलने भी इस विचारसे अपनी सहमति प्रकट की।
२. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
३. देखिए "पत्र: टॉल्स्टॉयको", पृष्ठ ४४३-४५।

मैंने यह पत्र प्रकाशनके लिए 'डेली न्यूज़'को दिया था; लेकिन श्री गार्डिनरने खबर दी है कि यह पत्र ज्यादा लम्बा है और उनके स्तम्भोंमें इसकी गुंजाइश नहीं है।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

श्री एल्मर मॉड[1],
ग्रेट वैडो,
चेम्सफोर्ड।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४३८) से।

३२८. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
अक्तूबर २९, १९०९

प्रिय हेनरी,

श्री डोककी किताबें आखिर तैयार हो गईं। भारतके जिन अखबारोंको पुस्तकें भेंट-स्वरूप भेजी गई हैं उनकी सूची साथ है। अगर कुछ ऐसे अखबार रह गये हों जिन्हें आपकी रायमें भेंटकी प्रतियाँ दी जानी चाहिए तो उनके लिए प्रतियाँ उस पार्सलमें से ले लें जो नटेसनको मिलेगा। मुझे भय है कि पार्सल इस डाकसे नहीं जायेगा, जिससे यह पत्र जा रहा है; बल्कि इससे अगली डाकसे जायेगा। मुझे ये प्रतियाँ बड़ी मुश्किलसे मिली हैं। रिच और मैं इस नतीजेपर पहुँचे हैं कि भेंटकी प्रति अखबारोंके अलावा किसी लोकसेवकको न दी जाये। इसीलिए ऐसी कोई प्रति नहीं भेजी गई है। लेकिन अगर आप समझते हों कि आपकी तरफ किसीको भेंटकी प्रतियाँ भेजी जानी चाहिए तो आप डॉ० मेहतासे सलाह कर लें और फिर बाँट दें। डॉ० मेहताने इस तरह बाँटनेके लिए २५ प्रतियाँ खरीदी हैं। आप या तो कुछ प्रतियाँ डॉ० मेहतासे ले लें या वे अपनी प्रतियाँ किस-किस व्यक्तिको देंगे, यह उनसे पूछनेके बाद आप नटेसनसे ले लें, ताकि किसी एक व्यक्तिके पास दो प्रतियाँ न पहुँच जायें। मेरा खयाल है, आपने नटेसनके साथ कोई ऐसा प्रबन्ध कर लिया होगा, जिससे हमें तुरन्त पैसा मिल जाये। यहाँ भेंट-स्वरूप ८५ प्रतियाँ बाँटी गई हैं। इनमें से ८१ अखबारोंके लोगोंको दी गई हैं। अखबारोंमें जो समालोचनाएँ निकलें उनकी कतरनें क्या आप श्री डोकको भिजवानेकी व्यवस्था कर देंगे?

मुझे आपके दो तार मिले हैं — एक मद्रास प्रेसिडेन्सीकी विभिन्न सभाओंके बारेमें और दूसरा आपके रंगून जानेके इरादेके बारेमें। मद्रास इस मामलेमें जिस तरह आगे आया है, वह कमालकी बात है। वहांके लोग बहुत व्यावहारिक दिखते हैं। वे या तो कामको अच्छी तरह करते हैं या बिल्कुल करते ही नहीं। मुझे खुशी है कि आप डॉ० मेहताके आते ही लगभग उसी समय उनसे मिल लेंगे। आशा है, आप दोनोंको एक-दूसरेसे मिलकर खुशी होगी।

१. टॉल्स्टॉयकी जीवनीके लेखक जिन्होंने अपनी रूसी पत्नीकी सहायतासे उनकी अधिकांश रचनाओंका अनुवाद अंग्रेजीमें किया।

लॉर्ड क्रू का उत्तर अभीतक नहीं आया है, इस पत्रको लिखानेके वक्त (गुरुवारकी शाम) तक[१]। आपका पिछला पत्र (मेरा मतलब उस लम्बे पत्रसे है जो, मालूम होता है, आपने बोलकर लिखाया है) बड़ा मनोरंजक था। उसे आपके पूरे परिवारने पढ़ लिया है। सैली, मॉड और आपके परिवारके दूसरे लोगोंके बारेमें मिलनेपर बातें होंगी। मॉड मेरे पाससे चली गई है, फिर भी करीब-करीब हर रोज मिलती है, और इसी तरह सैली भी। कुछ समयसे मेरी हिम्मत बढ़ गई है। मैं दोपहरके वक्त होटलमें बैठनेके कमरेमें ही फलोंका भोजन करता हूँ, जैसा हम जोहानिसबर्गमें करते हैं। सैली भी वहीं आ जाती है। हफ्तेमें दो बार मिली भी हमारे पास आती है। सिमंड्स भी वहीं होता है, और बहुत बार माइरन जे० फेल भी। वे अपना हिस्सा लानेकी जिद करते हैं। रिच भी आ जाते हैं। इसके आगेकी कल्पना आप स्वयं कर सकते हैं। पिछले इतवारको मैंने दशहरा-उत्सवकी भोज-सभाकी अध्यक्षता की थी।[२] इसका इन्तजाम करीब-करीब गर्मदली कमेटीने ही किया था। लगभग ७० भारतीय आये थे। मैंने यह प्रस्ताव बिना झिझक स्वीकार कर लिया था, जिससे वहाँ इकट्ठे होनेवाले लोगोंसे सुधार करानेमें हिंसाकी व्यर्थताके सम्बन्धमें बात कर सकूँ। ऐसा ही मैंने किया। मेरी शर्तें ये थीं कि कोई राजनीतिक विवाद न छेड़ा जायेगा। इनका पूरा पालन किया गया। रामायणकी जिस शिक्षाकी ओर मैं ध्यान दिलाना चाहता था उसको मैंने उनके सामने रखा। दशहरेका उत्सव रावणपर रामकी — अर्थात्, असत्यपर सत्यकी विजयका उत्सव है। मैं यहाँ अपना वक्त कैसे गुजारता हूँ, यह बात आप समझ सकें, इस खयालसे ही मैं आपको यह सब बातें लिख रहा हूँ। मैंने यहाँ भरसक ज्यादासे-ज्यादा भारतीयोंसे मिलनेकी कोशिश की है। कार्यक्रम अब भी वही है। अगर लॉर्ड क्रू उत्तरमें बेजा देर न कर दें या कोई ऐसा बहुत जरूरी काम न आ जाये जिससे हमारे रुकनेकी जरूरत हो, तो आशा करता हूँ कि मैं १३ नवम्बरको यहाँसे रवाना हो जाऊँगा। भारत जानेका इरादा तो बिलकुल छोड़ ही दिया है। शनिवारको मैं "इंडियन सोशल यूनियन"[३] की सभामें भाषण दूँगा। मंगलवारको भारतीय विद्यार्थियोंकी एक दूसरी सभा है।[४] तीसरी सभा कैम्ब्रिजमें इंडियन मजलिसकी ओरसे इस इतवारके बादवाले इतवारको होगी।[५]

शनिवारको श्रीमती रिचका ऑपरेशन होगा, जो कुछ खतरनाक है। कांग्रेसको सन्देश भेजनेकी माँग कुछ कठिन है। फिर भी, मैं कुछ लिखनेकी कोशिश करूँगा। आपको इसके साथ शायद मेरे पत्रकी[६] एक प्रतिलिपि मिलेगी।

मैं देखता हूँ कि आप मद्रासमें खासा रुपया इकट्ठा कर रहे हैं। इकट्ठा किया हुआ रुपया कैसे वितरित किया जाता है, यह जानना जरूरी है। यह रुपया किसके हाथमें रहता है? चूँकि संघर्ष लम्बा चलेगा, इसलिए हमें निश्चय ही जेल जानेवाले लोगोंके परिवारोंका भरण-पोषण करना होगा। यह प्रश्न उठ ही चुका है, इसलिए इस धनको या इसके एक हिस्सेको इन परिवारोंके भरण-पोषणके लिए भेजा जा सकता हो तो यह बड़े सन्तोषकी

१. जान पड़ता है, यह पत्र दूसरे दिन, यानी शुक्रवार, अक्तूबर २९ को भेजा गया।
२. देखिए "लन्दन", पृष्ठ ४९८-९९।
३. देखिए "भाषण: न्यू रिफॉर्म क्लबमें", पृष्ठ ५१५ और "पत्र: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ५१८।
४. देखिए "भाषण: भारतीयोंकी सभामें", पृष्ठ ५१६।
५. इस अवसरपर दिये गये भाषणकी रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।
६. देखिए "पत्र: जी० ए० नटेसनको", पृष्ठ ५१०-१२।

बात होगी। एक सज्जन . . . दूसरोंसे भी इसी तरहका चन्दा प्राप्त करना . . .।[1] मुझे आशा है कि आपको वहाँ कठिनाई न होगी। जो लोग निर्वासित किये जाते हैं उनकी देखभालके लिए क्या कुछ लोगोंको खास तौरसे नियुक्त कर दिया गया है? अगर नियुक्त किया गया है तो क्या आपको उनमें से किन्हींके नाम मालूम हैं? ये सब बातें प्रकाशित की जानी चाहिए। जिन्हें सहायता मिलती है उनके पत्र भी भिजवाये जा सकते हैं।

मैं इस वक्त इतना ही कह सकता हूँ कि अपना दौरा खत्म करनेके बाद आपको जबतक संघर्षका अन्त नहीं होता, वहीं रहना पड़ेगा। अगर बात ऐसी हो, तो मेरे खयालसे आपके लिए हिन्दी या गुजराती सीखना बहुत जरूरी है। चूँकि आप लगातार कमेटीका काम करेंगे इसलिए आपके लिए कुछ वक्त निकालना शायद मुश्किल नहीं होगा।

आपका वह तार मिला जिसमें आपने मुझे भारत आनेकी जोरदार सलाह दी है। मुझे जोहानिसबर्गसे एक और तार मिला है, जिसमें कहा गया है कि यहाँ काम खत्म हो गया हो तो हम ट्रान्सवाल लौट जायें। इसलिए मेरा खयाल है कि मेरा ट्रान्सवाल जाना बहुत ही जरूरी है। मुझे लगता है कि मैं यहाँ बहुत ज्यादा ठहर गया हूँ। इसलिए आप इस स्थितिमें ज्यादासे-ज्यादा जो-कुछ कर सकें, वह करें। मैं जानता हूँ कि हमारे भारत आनेमें स्पष्ट लाभ है। लेकिन हमारा इस वक्त भारत न आना भी शायद उतना ही अच्छा है।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५१५१) से।

३२९. शिष्टमण्डलकी यात्रा [-१८]

[अक्तूबर २९, १९०९]

शिष्टमण्डलके विषयमें टिप्पणी

अभी तक लॉर्ड क्रू की ओरसे अन्तिम निर्णयकी चिट्ठी नहीं आई। इस बीच जोहानिसबर्गसे तार[2] मिला है कि यदि इंग्लैंडमें काम खत्म हो गया हो तो शिष्टमण्डल [दक्षिण आफ्रिका] वापस आ जाये। साथ ही मद्राससे भी तार मिला है कि हमारा भारत जाना नितान्त आवश्यक है। सर मंचरजीकी राय भी पूरी तरह हमारे भारत जानेके पक्षमें है। फिर भी मुझे विश्वास हो गया है कि भारत न जाना ही ठीक होगा। इसलिए हमने वर्तमान योजनाके अनुसार यहाँसे रवानगीकी तारीख १३ नवम्बर मुकर्रर की है। हमने यह सोचा है कि यदि लॉर्ड क्रू का अन्तिम उत्तर न आये तो भी हम सार्वजनिक रूपमें कोई काम किये बिना चल पड़ें। सार्वजनिक काममें तो केवल ये तीन ही बातें हैं: अपना [अर्थात् अपने मामलेका] इतिहास प्रकाशित करना, रेवरेंड मायरकी मार्फत सब पादरियोंकी सभा बुलाना और यदि सम्भव हो तो लोकसभाके सदस्योंके सामने मामलेके तथ्य रखना। लगता है, इनमें से रेवरेंड मायरकी मार्फत जो काम किया जाना है उसे तो हम अभी कर लेंगे। इतिहास प्रकाशित करना

१. मूलमें यहाँ एक पंक्ति कटी हुई है।

२. यह तार २९ अक्तूबरको मिला था; देखिए "पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको", पृष्ठ ५०५-०६।

ठीक लगे तो हमारे जानेके बाद प्रकाशित किया जाये और सम्भव हो तो कॉमन्स सभाके सदस्योंकी बैठक भी तभी की जाये।

भारतीयोंको पूरी खबर देना आवश्यक है, इस खयालसे भारतीयोंकी एक सभा शनिवारको होनेवाली है। इसमें मुझे भाषण देना है। दूसरी सभा मंगलवारको होगी। इसमें भारतीयोंको क्या करना चाहिए, यह बताना है। तीसरी सभा कैम्ब्रिजमें होगी। फिलहाल तो यही कार्यक्रम है।

किन्तु यह तो निश्चित समझ लेना चाहिए कि जबतक हम पूरा बल नहीं लगायेंगे तबतक कुछ न होगा। मुझे बार-बार यह लिखनेकी जरूरत मालूम होती है कि इसके सिवा कोई दूसरा बल नहीं है। इसीलिए मुझे खुशी हुई है कि श्री सोराबजी और श्री मेढ फिर लौट गये। मैं उनको बधाई देता हूँ। सब लोगोंको इन वीर भारतीयोंका अनुकरण करना चाहिए। दूसरी लड़ाईकी नींव श्री सोराबजीने डाली थी। लगता है, उसका अन्त भी उन्हींके हाथों होगा। भविष्यमें जो भी हो, किन्तु भारतीयोंको समझ लेना चाहिए कि जहाँ जुल्मी लोग राज्य करते हैं वहाँ अच्छे लोगोंका घर जेलमें ही होना चाहिए।

सत्याग्रहियोंकी सहायता

एक सज्जनने, जो अपना परिचय "एक भारतीय सेवक" के नामसे देना चाहते हैं, यह निश्चय किया है कि जबतक यह लड़ाई जारी रहेगी तबतक वे गरीबोंकी सहायताके लिए प्रति मास ५० रुपये देते रहेंगे। उन्होंने ३ पौंडका पहला चेक दे भी दिया है। अगर दूसरे भारतीय भी इसी तरह सहायता करें तो अच्छा होगा। मेरा खयाल है, वे अवश्य ही सहायता करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७–११–१९०९

३३०. पत्र : जी० ए० नटेसनको[1]

[लन्दन
अक्तूबर २९, १९०९ के बाद]

प्रिय महोदय,

आपने मुझे तार दिया है कि कांग्रेसका जो अधिवेशन होनेवाला है उसके लिए मैं सन्देश भेजूँ। मैं कोई सन्देश भेजनेके योग्य भी हूँ, यह मैं नहीं जानता। लेकिन आपके तारके उत्तरमें कुछ कहूँ, यह सामान्य सौजन्यकी माँग है। फिलहाल मेरे दिमागमें उस संघर्षके अतिरिक्त, जो ट्रान्सवालमें चल रहा है, कोई दूसरी बात नहीं आ सकती। इस वक्त यही काम मेरे सामने है। चूँकि यह संघर्ष भारतके सम्मानकी रक्षाके लिए आरम्भ किया गया है, इसलिए मुझे आशा है कि मेरे सब देशवासी उद्देश्यकी दृष्टिसे इसे राष्ट्रीय

१. यह **इंडियन रिव्यूके** दिसम्बरके अंकमें छपा था। उसी समय गांधीजीने इसकी एक नकल स्पष्ट ही **इंडियन ओपिनियनको** भी भेज दी थी जो, उसमें "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसको सन्देश," शीर्षकसे छपी थी; देखिए "पत्र : एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ५०७।

संघर्ष मानेंगे। मुझे खुल्लमखुल्ला यह कहनेमें भी कोई झिझक नहीं हुई है कि यह संघर्ष इस युगका सबसे बड़ा आन्दोलन है, क्योंकि इसका उद्देश्य भी शुद्ध है और इसके तरीके भी। हो सकता है, मेरा यह खयाल गलत हो। हमारे जो देशवासी ट्रान्सवालमें रहते हैं वे इसलिए लड़ रहे हैं कि सुसंस्कृत भारतीयोंको ट्रान्सवालमें आनेका वैसा ही अधिकार प्राप्त हो, जैसा यूरोपीयोंको प्राप्त है। इस संघर्षमें जो लोग लड़ रहे हैं उन्हें अपना कोई निजी स्वार्थ सिद्ध नहीं करना है। जिस अधिकारका यहाँ उल्लेख है (और जो उपनिवेशीय कानूनमें पहली बार छीना गया है), उसके बहाल किये जानेके बाद किसीको कोई भौतिक लाभ भी नहीं होना है। भारतके जो सपूत ट्रान्सवालमें हैं, वे यह दिखा रहे हैं कि वे एक विशुद्ध आदर्शके लिए लड़ सकते है। राहत पानेके लिए उन्होंने जिन साधनोंको अपनाया है, वे भी उतने ही शुद्ध हैं। इन भारतीयोंने हर तरहकी हिंसा सर्वथा त्याग दी है। उनका विश्वास है कि कष्ट-सहन स्थायी सुधार प्राप्त करनेका एकमात्र सच्चा और प्रभावकारी साधन है। वे घृणाका सामना प्रेमसे करने और उसे प्रेमसे ही जीतनेका प्रयत्न करते हैं। वे पशुबल या शरीर-बलका मुकाबला आत्मबलसे करते हैं। वे मानते हैं कि लौकिक सत्ता या विधानके प्रति वफादारी ईश्वर और उसके विधानके प्रति वफादारीकी तुलनामें गौण हैं। यह सम्भव है कि उनकी अन्तरात्मा ईश्वरके विधानकी व्याख्या करनेमें भूल कर जाये। इसीलिए वे जिन मानवीय कानूनोंको ईश्वरके नित्य कानूनोंके विरुद्ध पाते हैं उनका मुकाबला करते हैं या उनकी अवहेलना करते हैं। इसके लिए उन मानवीय कानूनोंमें जो सजाएँ बताई गई हैं उन्हें वे चुपचाप सहन करते हैं। साथ ही उनका विश्वास यह है कि उनकी स्थिति समय पाकर मनुष्यकी सहज सत्प्रकृतिसे सुधर जायेगी। अगर वे गलती कर रहे हैं तो वे ही तकलीफ पाते हैं और प्रतिष्ठित व्यवस्था ज्योंकी-त्यों रह जाती है। इस काममें २,५०० से ज्यादा भारतीय ऐसी कैदकी सजा भुगत चुके हैं, जिसमें भयंकर कष्ट झेलने पड़ते हैं। यह संख्या यहाँकी इस वक्तकी भारतीय आबादीकी करीब आधी या यहाँकी सम्भावित भारतीय आबादीके पाँचवें भागके बराबर है। इनमें से कुछ लोग एकाधिक बार जेल गये हैं, कितने ही परिवार गरीब हो गये हैं। कुछ व्यापारियोंने पौरुषका त्याग करनेकी अपेक्षा कष्ट सहना स्वीकार किया है। दक्षिण आफ्रिकामें संयोगसे हिन्दू-मुस्लिम समस्या हल हो गई है। हम यहाँ अनुभव करते हैं कि दोनों एक-दूसरेके बिना नहीं रह सकते। यहाँ मुसलमान, पारसी और हिन्दू — सूबोंके खयालसे कहें तो — बंगाली, मद्रासी, पंजाबी, अफगान और बम्बइये — सब कन्धेसे-कन्धा मिलाकर खड़े हैं।

मैं यह कहना चाहता हूँ कि यह संघर्ष ऐसा है जिसकी ओर कांग्रेस अगर पूरा ध्यान न दे सके तो उसे ज्यादासे-ज्यादा ध्यान तो देना ही चाहिए। अगर अशिष्टता न समझी जाये तो मैं यह बताना चाहूँगा कि इसमें और कांग्रेस-कार्यक्रमके दूसरे विषयोंमें क्या अन्तर है। कांग्रेस-कार्यक्रमके दूसरे विषयोंमें कानूनों या नीतिका जो विरोध किया जाता है, उसमें कोई भौतिक हानि उठानेकी बात नहीं आती। कांग्रेसका काम किसी मामलेमें विचार प्रकट करने तक ही सीमित है, उसे कर्मका बल पहुँचाया जाता नहीं। ट्रान्सवालके मामलेमें जो गलत कानून और नीति है, हम उसकी अवज्ञा करते हैं, इसलिए अन्तरात्माकी आवाजपर और सोच-समझकर भौतिक और शारीरिक हानि उठाते हैं। हम अपने विचारके अनुसार कार्रवाई करते हैं। जो विचार यहाँ दिया गया है, अगर वह ठीक है तो मुझे यह कहनेकी

अनुमति दें कि मैंने ट्रान्सवालके मामलेको कांग्रेसके कार्यक्रममें सबसे पहली जगह देनेकी माँग करके अनुचित नहीं किया है। क्या मैं यह भी कह सकता हूँ कि ऊपर जिस अनाक्रामक प्रतिरोधकी व्याख्या की गई है, उसपर विचार करने और ध्यान जमानेसे शायद हमें अनाक्रामक प्रतिरोधके रूपमें उन बहुत-सी बुराइयोंकी अचूक औषधि मिल जाये जिनसे हम भारतके लोग पीड़ित हैं। यह सावधानीसे विचार करनेके योग्य है। मुझे विश्वास है कि यह हमारे लोगोंकी और हमारे देशकी प्रकृतिके अनुकूल एकमात्र शस्त्र सिद्ध होगा। हमारा देश प्राचीनतम धर्मोंकी जन्म-भूमि है। उसे आधुनिक सभ्यतासे बहुत कम सीखना है, क्योंकि उसका आधार जघन्यतम हिंसा है, जो मनुष्यके समस्त दिव्य गुणोंके विपरीत है। यह सभ्यता आत्मविनाशके पथपर आँख मूंदकर दौड़ रही है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-११-१९०९

३३१. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको[1]

[लन्दन
अक्तूबर ३०, १९०९][2]

लॉर्ड महोदय,

पिछले कुछ दिनोंसे मेरी यह इच्छा रही है कि यहाँके थोड़े दिनोंके प्रवासमें मैंने अपने देशके लोगोंके राष्ट्रीय आन्दोलनका जो निरीक्षण किया है, उसके परिणामोंको आपके सामने रखूँ।

अगर आप इजाजत दें तो मैं कहना चाहता हूँ कि मैं आपकी निष्पक्षता, सचाई और ईमानदारीसे, जिनका आजकल हमारे बड़े-बड़े लोकसेवकोंमें इतना अभाव दिखाई देता है, बहुत प्रभावित हुआ हूँ। मैंने यह भी देखा है कि आप अपनी साम्राज्य-भावनाके कारण उन मामलोंको देखनेसे इनकार नहीं करते, जिनके पक्षमें स्पष्ट न्याय होता है। साथ ही आपको भारतसे सच्चा और बहुत ज्यादा प्यार है। इसके अलावा मैं उन भारतीय मामलोंसे सम्बन्धित, जिनका ट्रान्सवालके संघर्षपर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ सकता है, अपनी गतिविधियोंके बारेमें आपसे कुछ भी छुपाना नहीं चाहता। इन सब बातोंके कारण मैंने

१. यद्यपि मसविदेमें पानेवालेका नाम नहीं है, फिर भी विषयसे यह स्पष्ट है कि पत्र लॉर्ड ऍम्टहिलको लिखा गया था। इसकी पहुँच देते हुए उन्होंने १ नवम्बरको गांधीजीको लिखा था: "... यद्यपि मैं अभी कुछ भी कहना नहीं चाहता, तथापि विचारोंकी अभिव्यक्तिके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ और उनकी सचाई और भावनाकी सराहना करता हूँ किन्तु मुझे कहना पड़ता है कि आपके तर्क पूरी तरह मेरी समझमें नहीं आये और आपके निष्कर्षोंके विषयमें भी मैं द्विधामें हूँ। मैं आपसे इस विषयमें बात करना चाहूँगा। (चूँकि अब लन्दनमें हूँ), जैसे ही फुरसत पाऊँगा, आपको आकर मिलनेके लिए कहूँगा।"

२. मूलमें कोई तारीख नहीं है; यह इस पत्रके उत्तरमें लिखी लॉर्ड ऍम्टहिलकी चिट्ठीसे ली गई है।

जो-कुछ देखा है उसे बताना यद्यपि आवश्यक नहीं है, फिर भी उसे बतानेकी मैं धृष्टता कर रहा हूँ।

मैंने यहाँ सब विचारोंके भारतीयोंसे मिलनेका खास खयाल रखा है। चूंकि मैं सभी तरहकी हिंसाके विरुद्ध हूँ, इसलिए मैंने उन लोगोंसे खास तौरसे मिलनेकी कोशिश की है जो गर्मदली कहे जाते हैं लेकिन जिन्हें हिंसाकारी दलके लोग कहना ज्यादा ठीक होगा। ऐसा मैंने इसलिए किया है कि अगर सम्भव हो तो उन्हें यह विश्वास दिला सकूं कि उनके तरीके गलत हैं। मैंने यह देखा है कि इस दलके कुछ सदस्य सच्चे लोग हैं, जिनमें ऊँचे दर्जेकी नैतिकता है, भारी बौद्धिक क्षमता है, और उच्च कोटिका आत्मत्याग है। यहाँके भारतीय युवकोंपर उनका प्रभाव है, इस बारेमें कोई सन्देह नहीं। वे भी इन युवकोंको अपने विश्वासोंसे प्रभावित करनेमें कोई कसर नहीं रखते। इनमें से एक सज्जन मेरे पास आये थे। वे मुझे यह विश्वास दिलाना चाहते थे कि मेरा तरीका गलत है और उनके खयालके अनुसार हम जिन अन्यायोंसे पीड़ित हैं, उन्हें सिर्फ छुपी या खुली अथवा दोनों तरहकी हिंसाका प्रयोग करके ही दूर करना सम्भव है।

इसमें कोई शक नहीं कि राष्ट्रीय भावना जागृत हो चुकी है। लेकिन ज्यादातर लोगोंमें वह अपरिमार्जितरूपमें मौजूद है। और उनमें तदनुरूप आत्मत्यागकी भावना नहीं है। मुझे हर जगह यह दिखाई दिया है कि लोग ब्रिटिश राजसे अधीर हो उठे हैं। कुछ लोगोंको पूरी जातिसे बड़ी तीव्र घृणा है। अंग्रेज राजनयिकोंके प्रति अविश्वास तो लगभग सभीके मनमें स्पष्ट रूपसे व्याप्त है। माना यह जाता है कि वे निःस्वार्थ भावसे कुछ करते ही नहीं। जो हिंसाके विरुद्ध हैं, वे भी सिर्फ वक्तके विचारसे वे उसे नापसन्द नहीं करते। लेकिन वे इतने कायर या स्वार्थी हैं कि अपनी रायको खुलेआम मंजूर नहीं कर सकते। कुछ लोगोंका खयाल है कि अभी हिंसाका समय नहीं आया है। मुझे लगभग ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिला जिसका यह विश्वास हो कि भारत हिंसाके बिना कभी स्वतन्त्र हो सकता है।

मेरे खयालसे दमन बेकार होगा। साथ ही मुझे लगता है कि अंग्रेज शासक समयपर पर्याप्त अधिकार न देंगे। ऐसा लगता है कि व्यावसायिक स्वार्थने ब्रिटिश लोगोंको अन्धा बना रखा है। इसमें दोष आदमियोंका नहीं, पद्धतिका है। इस पद्धतिका प्रतीक वर्तमान सभ्यता है, जिसका यहाँके और भारतके लोगोंपर विनाशकारी प्रभाव हुआ है। भारतका शोषण विदेशी पूँजी-पतियोंके स्वार्थके लिए किया जाता है, और केवल इसी कारण भारत अतिरिक्त कष्ट पाता है। मेरी नम्र सम्मतिमें इसका सच्चा उपाय यह है कि इंग्लैंड आधुनिक सभ्यताका, जो स्वार्थ और भौतिकताकी भावनासे भरी होनेकी वजहसे उद्देश्यहीन और निरर्थक है और जो ईसाइयतके विरुद्ध है, परित्याग कर दे। लेकिन यह एक दुराशा है। तब यह भी सम्भव हो सकता है कि भारतके ब्रिटिश शासक कमसे-कम भारतीयोंकी तरह व्यवहार करें और उनपर आधुनिक सभ्यताको तो न थोपें। रेलें, मशीनें और उनके साथ बढ़ी हुई आरामतलबीकी आदतें यूरोपीयोंकी भाँति ही भारतीयोंके लिए भी दासताके सच्चे चिह्न हैं। इसलिए शासकोंसे मेरा कोई झगड़ा नहीं है। हाँ उनके तरीकोंसे मेरा पूरा विरोध है। मैं पहले मानता था कि लॉर्ड मैकॉलेने अपनी शिक्षा-सम्बन्धी रिपोर्ट लिखकर भारतका हित-साधन किया है, लेकिन अब नहीं मानता। मेरा खयाल यह भी है कि ब्रिटेनने अपने अधीनस्थ देशोंको जो शान्ति-सुव्यवस्था दी है, उसका बहुत ज्यादा

ढिंढोरा पीटा जाता है। मेरे खयालसे कलकत्ता और बम्बई-जैसे शहरोंका बनना दुःखकी बात है, बधाई देनेकी नहीं। भारतको ग्राम-प्रथाके आंशिक उन्मूलनसे हानि हुई है। उनकी तरह मुझमें भी राष्ट्रीय भावना है; इसलिए गर्मदलियों या नर्मदलियोंके तरीकोंसे मेरा पूरा मतभेद है। इसका कारण यह है कि दोनों ही दल आखिरकार हिंसामें विश्वास करते हैं। हिंसात्मक तरीकोंका अर्थ है आधुनिक सभ्यताको, और इस तरह उसी विनाशकारी स्पर्धाको अंगीकार करना, जिसे हम यहाँ देखते हैं। इसका अर्थ है अन्तमें सच्ची नैतिकताका ध्वंस। कौन शासन करता है, इस बातमें मेरी दिलचस्पी नहीं है। मैं तो चाहूँगा कि शासक मेरी इच्छाके अनुसार शासन करें, अन्यथा मैं उन्हें अपने ऊपर शासन करनेमें सहायता न दूँगा। मैं उनके विरुद्ध अनाक्रामक प्रतिरोध करूँगा। अनाक्रामक प्रतिरोध शरीर-बलके विरुद्ध आत्मबलका प्रयोग है — दूसरे शब्दोंमें, घृणापर विजय प्राप्त करनेवाला प्रेम का।

मैं नहीं जानता कि मैं अपनी बात कहाँतक समझा सका हूँ, और मैं यह भी नहीं जानता कि मैं अपने इस विवेचनसे आपको कहाँतक सहमत कर सका हूँ। परन्तु मैंने ऊपर बताये गये तरीकेसे अपने देशके लोगोंके सामने सारा मामला रखा है। मैंने आपको यह पत्र दो उद्देश्योंसे लिखा है। पहला उद्देश्य आपको यह बताना है कि जब-कभी समय मिलेगा, मैं राष्ट्रीय पुनरुत्थानमें अपना विनम्र योगदान करना चाहूँगा और दूसरा उद्देश्य यह है कि मैं जब-कभी बड़ा काम करूँ तब या तो उसमें आपका सहयोग ले सकूँ या आपसे उसकी आलोचनाका अनुरोध कर सकूँ।

मैंने आपको जो जानकारी दी है वह बिल्कुल गोपनीय है, उसका और कोई ऐसा प्रयोग नहीं किया जाये जिससे मेरे देशके लोगोंके हितकी हानि हो। मुझे लगता है कि जबतक सत्य भली भाँति मालूम नहीं हो जाता तबतक कोई उपयोगी उद्देश्य सिद्ध न होगा।

अगर आप कुछ और जानना चाहते हों तो आप जो भी प्रश्न पूछना चाहें, मैं उसका उत्तर खुशीसे दूँगा। श्री रिचको इस पत्रकी पूरी जानकारी है। अगर बातचीत आवश्यक समझें तो मैं तैयार हूँ।

अन्तमें आशा है, मैंने आपके सौजन्यका अनुचित और अवांछनीय लाभ नहीं उठाया है और आपका ध्यान इस ओर अकारण ही आकर्षित करनेकी धृष्टता नहीं की है।

आपका, आदि,

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी मसविदेकी फोटो नकल (एस० एन० ५१५२) से।

३३२. भाषण : न्यू रिफॉर्म क्लबमें[1]

[लन्दन
अक्तूबर ३०, १९०९]

(उन्होंने कहा,) यह लड़ाई अन्तरात्माकी स्वतन्त्रता, विचारोंकी स्वतन्त्रता और कर्मकी स्वतन्त्रताके लिए लड़ी जा रही है, मत देनेके यान्त्रिक अधिकारके लिए नहीं। ब्रिटिश भारतीय सबसे पहले १८८३ में ट्रान्सवाल आये थे, और तभीसे उन लोगोंने, जो यह न समझ सकते थे कि ऐसे देशमें रहना भारतीयोंके लिए कितना मुश्किल है, उनके गुणोंको दोष मान लिया था।

हमने लॉर्ड लैंसडाउनसे सुना था कि [बोअर] युद्ध जितना डचेतर गोरोंके लिए लड़ा गया था उतना ही ब्रिटिश भारतीयोंके लिए भी। लेकिन लड़ाईके खत्म होनेपर ब्रिटिश भारतीयोंकी हालत और भी ज्यादा खराब हो गई। उनके लिए खास बस्तियाँ बना दी गई हैं; वे सिर्फ वहीं व्यापार कर सकते हैं या जमीनें ले सकते हैं। उन्हें नागरिक अधिकार बिलकुल नहीं दिये गये हैं और उनको पैदल पटरीपर चलने तकका हक नहीं है। जब कानूनकी निगाहमें उनकी हालत इतनी गिरा दी गई है तब यह अनुमान किया जा सकता है कि ट्रान्सवालके लोग उनके साथ कैसा बरताव करते होंगे। कई राजनयिक उन थोड़े-से आन्दोलन-कारियोंकी बातोंमें आ गये हैं, जो व्यापारमें ब्रिटिश भारतीयोंके प्रतिस्पर्धी हैं; और १९०६ के नये पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) कानूनका उपयोग ब्रिटिश भारतीयोंपर अत्याचार करनेके लिए किया गया है। जिन लोगोंमें कुछ भी आत्म-सम्मानका भाव है, उनके लिए उस कानूनको मानना असम्भव है। शिष्टमण्डलोंसे मिलनेसे इनकार कर दिया जाता है और अदालती जाँचकी प्रार्थना भी नहीं मानी जाती। ब्रिटिश भारतीय जेलोंमें ठूँस दिये गये हैं, काले लोगोंके साथ वर्गीकृत किये गये हैं और वे उन्हींकी खूराक लेनेके लिए मजबूर किये गये हैं। इसका नतीजा यह हुआ है कि उन्हें करीब-करीब भूखों मरना पड़ता है। वे अपने जातीय सम्मानकी रक्षाके लिए अनाक्रामक प्रतिरोधी बन गये हैं। सम्भव है, उनकी सुनवाई होनेमें वर्षों लग जायें; लेकिन इस विलंबका कारण यही होगा कि अभी उन्होंने पर्याप्त कष्ट नहीं सहे हैं। न्याय उनके पक्षमें है। हिन्दुओं, मुसलमानों और तमिलोंने इस उद्देश्यके लिए साथ-साथ काम करके एक बड़ी जातीय समस्या हल कर दी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया, ५-११-१९०९

1. गांधीजीने इंडियन यूनियन सोसायटीके सदस्योंके सामने "दक्षिण आफ्रिकामें सह-नागरिकताके लिए संघर्ष : उससे शिक्षाएँ" विषयपर यह भाषण दिया था।

३३३. भाषण : भारतीयोंकी सभामें[1]

[लन्दन
नवम्बर २, १९०९]

श्री गांधीने कहा कि जहाँतक दक्षिण आफ्रिकाका सम्बन्ध है, ब्रिटिश भारतीयोंके दर्जेका फैसला ट्रान्सवालमें होगा। भारतमें भी इसका दूरगामी प्रभाव हुआ है। निश्चय ही सभी भारतीय इस कार्यमें सहायता देनेका अधिकसे-अधिक प्रयत्न करेंगे, क्योंकि ट्रान्सवालकी लड़ाई उनके राष्ट्रीय सम्मानकी रक्षाकी लड़ाई है। मुझे लगता है कि अगर लन्दनमें और उसके आसपासके क्षेत्रोंमें प्रचार करनेके लिए कुछ भारतीय स्वयंसेवक आगे आयें तो लोकमत तैयार करनेकी दिशामें बहुत-कुछ किया जा सकता है और इस लोकमतका प्रभाव तो आखिरकार ट्रान्सवालपर पड़ेगा ही। स्वयंसेवकोंको अपने मामूली कामकाज करते हुए कुछ वक्त निकाल लेना चाहिए। इसमें वे घर-घर जाकर सत्याग्रहियों और उनके परिवारोंके कष्ट दूर करनेके लिए चन्दा करें, जो कमसे-कम एक-एक फार्दिंग हो। वे लोगोंसे एक प्रलेखपर[2] दस्तखत भी करायें, जिसमें अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके संघर्षके प्रति सहानुभूति प्रकट की जाये[2] और उन्हें प्रोत्साहन देते हुए यह विश्वास वयक्त किया जाये कि अधिकारी उनके कष्ट दूर करेंगे।[3]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-१२-१९०९

१. यह सभा श्री डेल्गाडो और लन्दन मुस्लिम लीगके एक मन्त्री श्री आजादने बुलाई थी। सभा दिनके ३ बजे स्ट्रेंडके एसेक्स-भवनमें श्री पारेखकी अध्यक्षतामें हुई थी। इसमें हाजी हबीब और श्री एम० सी० आंगलियाने भी भाषण दिये। सभामें लगभग ४० भारतीय आये थे। पूरे विवरणके लिए देखिए "शिष्टमण्डलकी आखिरी चिट्ठी" पृष्ठ ५२९।

२. देखिए "पत्र: ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको", पृष्ठ ५२५-२६।

३. सभाकी रिपोर्टमें बताया गया है कि २० भारतीयों और लगभग इतने ही यूरोपीयोंने श्री एल० डब्ल्यू० रिचके मार्गदर्शनमें लन्दनमें प्रचारका काम करनेके लिए अपनी सेवाएँ दीं। यह तय किया गया कि बादमें एक साप्ताहिक बुलेटिन निकाला जाये जिसमें संघर्षकी प्रगतिका ब्योरा दिया जाये और जिसका खर्च इस कार्यमें सहानुभूति रखनेवाले लन्दनके अंग्रेज उठायें। "पत्र: एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ५१८-१९ भी देखिए।

३३४. पत्र : उपनिवेश-उपमन्त्रीको

[लन्दन]
नवम्बर ३, १९०९

महोदय,

अगर अब लॉर्ड क्रू मेरे १९ अक्तूबरके पत्रका उत्तर देनेकी कृपा कर सकें तो मैं आभारी होऊँगा।

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५१५८) से।

३३५. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
नवम्बर ४, १९०९

लॉर्ड महोदय,

अब मुझे लॉर्ड क्रू का पत्र मिल गया है। इसकी एक प्रतिलिपि[1] साथ भेज रहा हूँ। इससे साफ जाहिर हो जाता है कि हमारी स्थिति क्या है। अन्तिम अनुच्छेद मेरी समझमें बिल्कुल नहीं आया। लॉर्ड क्रू को जो उत्तर देना चाहता हूँ उसका मसविदा[2] संलग्न कर रहा हूँ। जबतक श्रीमानकी सलाह नहीं मिल जाती तबतक इसे नहीं भेजूंगा।[3]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१५९) से।

१. देखिए परिशिष्ट ३१।

२. यह उसी पत्रका मसविदा था, जो ६ नवम्बरको भेजा गया था। देखिए "पत्र: उपनिवेश-उपमंत्रीको", पृष्ठ ५२४–२५।

३. लॉर्ड ऍम्टहिलके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट ३१।

३३६. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
नवम्बर ५, १९०९

प्रिय हेनरी,

यद्यपि मुझे बहुत-कुछ कहना है तथापि आज मैं आपको एक छोटा-सा पत्र ही लिख सकता हूँ। लॉर्ड क्रू के पत्र और मेरे उत्तरकी प्रतिलिपि आपको साथ मिलेगी। उत्तर अभी लॉर्ड क्रू को दिया नहीं गया है, क्योंकि वह स्वीकृतिके लिए लॉर्ड ऐम्टहिलको भेजा गया है।[1]

विवरण[2] अब वितरित किया जा रहा है। मैं आपको 'टाइम्स' के साहित्य-परिशिष्टके साथ पार्सलसे उसकी एक प्रति भेज रहा हूँ और आशा है कि विवरणके साथ जो पत्र भेजा जायेगा उसकी भी एक प्रति भेज सकूँगा। इससे अबतक का ब्योरा पूरा हो जाता है। लॉर्ड क्रू का पत्र समयपर आ गया है; इसलिए कांग्रेस अपने कर्तव्यका पालन कर सकती है। हम आशा करें कि वह ऐसा करेगी।

हम १३ नवम्बरको रवाना होंगे। गत शनिवारको मैंने इंडियन यूनियन सोसायटीकी एक सभामें भाषण दिया।[3] अब प्रत्येक भारतीयको स्थिति बतानेके लिए ये सब बातें आवश्यक हैं। इस सभाका विवरण शायद 'इंडिया' के स्तम्भोंमें छपे। जैसा कि संलग्न कार्डसे मालूम होगा, मंगलवारको यहाँ नौजवान भारतीयोंकी एक सभा यह विचार करनेके लिए हुई थी कि वे क्या कर सकते हैं। उसमें श्री आंगलिया, श्री हाजी हबीब और मैं बोला।[4] मैंने उनके सामने यह विचार रखा कि विद्यार्थी और अन्य आवासी भारतीय प्रचार-कार्यके लिए नियमित रूपसे जितना समय दे सकें, उतना समय दें; वे यहाँके हजारों लोगोंसे एक स्मरणपत्रपर हस्ताक्षर करायें और संघर्षको चालू रखनेके लिए जितना वे देना चाहें, उनसे उतना चन्दा लें। मैं आपको स्मरणपत्रका मसविदा भेज रहा हूँ।[5] कार्यक्रम और स्मरणपत्रके मसविदेपर विचार करनेके लिए कल एक सभा होनेवाली है। यदि सम्भव हो तो एक साप्ताहिक बुलेटिन भी प्रकाशित करनेका विचार है, जिसमें भारत और दक्षिण आफ्रिकाकी स्थितिका सार दिया जाये। परन्तु इस पत्रिकाके सम्बन्धमें स्पष्ट कठिनाइयाँ हैं। मेरी सम्मतिमें इस पत्रिकाके लिए रुपया भारतसे नहीं लिया जा सकता। यह स्वावलम्बी होनी चाहिए और यदि कुछ घाटा हो तो उसे अंग्रेजोंको पूरा करना चाहिए, क्योंकि मेरी मान्यता है कि अनेक दृष्टियोंसे इस कामको हाथमें लेना उनका कर्तव्य है। परन्तु हमें एक ऐसा आदमी चाहिए, जो काफी योग्य हो और जो इस कार्यमें अपना पूरा ध्यान लगा सके। रिच इस समय यह काम नहीं कर सकते।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. यह १६ जुलाई, १९०९ का छपा हुआ विवरण था, जो अबतक वितरित नहीं किया गया था। यह एक परिचय पत्रके साथ प्रकाशित किया गया था। देखिए अगला शीर्षक।

३. देखिए "भाषण : न्यू रिफॉर्म क्लबमें", पृष्ठ ५१५

४. देखिए "भाषण : भारतीयोंकी सभामें", पृष्ठ ५१६।

५. देखिए "पत्र : ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको", पृष्ठ ५२५–२६।

इसलिए यह देखना है कि बुलेटिन निकल सकता है या नहीं। यदि छगनलाल यहाँ समयपर आ गया तो बुलेटिन निकलनेकी सम्भावना है। समितिका कार्य जारी रहेगा। मेरा खयाल है, आप रिचके साथ नियमित रूपसे पत्रव्यवहार करते रहेंगे।

मैं आपको इसके साथ लॉर्ड ऍम्टहिलके नाम लिखे अपने पत्रकी एक प्रतिलिपि भेज रहा हूँ।[1] यह सर्वथा गोपनीय है, परन्तु आपको पूरी स्थिति तो मालूम होनी ही चाहिए। मैं चाहता हूँ कि आप इस पत्रको पढ़नेके बाद फाड़ डालें। मैं एक नकल डॉक्टर मेहताको भेज रहा हूँ, और उनसे भी ऐसी ही प्रार्थना कर रहा हूँ। इस पत्रकी भी नकल उनको भेज रहा हूँ, ताकि मुझे इसी बातके बारेमें फिर न लिखना पड़े। यदि स्वयंसेवक यहाँ अपना कर्तव्य निभायें और भारतमें पर्याप्त प्रयत्न किया जाये तो इस कार्यके पूरा न होनेका कोई कारण नहीं है। हाँ, यह शर्त तो है ही कि हम ट्रान्सवालके लोग दृढ़ रहें। यह एक विचित्र संयोग है कि लॉर्ड क्रू के पत्रके साथ ही ट्रान्सवालसे समाचार मिला है कि हरिलाल सकुशल जेल पहुँच गया! मैं भी उसके पास जा पहुँचनेके लिए छटपटा रहा हूँ।

आपका वह तार मिल गया, जिसमें आपने मेरे पिछले तारके अन्तिम शब्दको दुहरानेके लिए कहा है। मैं इसे कल भेजूँगा, शायद कुछ और भी लिख सकूँगा। अन्तिम शब्द था "निर्यक्टिक"। इसका अर्थ है १३ नवम्बर। यह ए० बी० सी० कोडके पाँचवें संस्करणमें आया है।

मैं इतवारको कैम्ब्रिजमें इंडियन मजलिसकी एक सभामें भाषण दूँगा।[2]

स्वयंसेवकोंकी सूचीसे आपको मालूम हो जायेगा[3] कि सैली और मॉड दोनों सहायताके लिए तैयार हैं। माताजी और पिताजी भी कल आ रहे हैं। मैं नहीं जानता कि वे क्या करेंगे। निश्चय ही यदि चाहें तो वे भी सेवा-कार्य कर सकते हैं। परन्तु मुझे नहीं लगता कि ऐसा हो सकेगा। कुमारी विंटरबॉटम उसमें तन-मनसे लग गई हैं।

श्री डोककी पुस्तककी समालोचना 'एडिनबरा ईवनिंग न्यूज़'में करीब २० पंक्तियोंमें की गई है। 'टाइम्स'ने केवल चार पंक्तियोंमें इसकी प्राप्ति स्वीकार की है। मेरे खयालसे अभी कहीं अन्यत्र इसकी समालोचना नहीं हुई है। श्री मायरने इसी १२ तारीख, शुक्रवारको, एक सभा हमें विदाई देने और स्थितिके सम्बन्धमें मेरे विचार सुननेके लिए बुलाई है। इसमें लगभग ६० व्यक्ति चायपर बुलाये गये हैं।[4]

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ५१६२) से।

१. देखिए "पत्र: लॉर्ड ऍम्टहिलको", पृष्ठ ५१२-५१४।

२. इस भाषणकी कोई रिपोर्ट उपलब्ध नहीं है।

३. देखिए "शिष्टमण्डलकी आखिरी चिट्ठी", पृष्ठ ५२९।

४. देखिए "भाषण: विदाईकी-सभामें", पृष्ठ ५४५-५५०।

३३७. पत्र : अखबारोंको

लन्दन
नवम्बर ५, १९०९

महोदय,

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंका शिष्टमण्डल गत १० जुलाईको लन्दनमें आया था। उस उपनिवेशके *ब्रिटिश भारतीयोंके मामलेका संलग्न विवरण*[1] इस शिष्टमण्डलके लन्दनमें आते ही तैयार किया गया था। लेकिन तब शान्तिपूर्ण समझौता करनेकी दृष्टिसे नाजुक बातचीत चल रही थी; इसलिए इसे प्रकाशित नहीं किया। हमें अब मालूम हुआ है कि यह बातचीत असफल हो गई है और स्थिति जैसी थी वैसी ही है। इसलिए हमारे लिए यहाँके लोगोंको यह बताना आवश्यक हो गया है कि स्थिति क्या है और ट्रान्सवालमें भारतीयोंके संघर्षका मतलब क्या है।

ट्रान्सवालके भूतपूर्व उपनिवेश-सचिवने गत फरवरी मासमें, जब यह उपनिवेश ताजके शासनाधीन था, एक दक्षिण आफ्रिकी पत्रिकामें एक लेख लिखा था। उसमें उन्होंने इस प्रश्नका सही-सही खुलासा इस प्रकार किया था :

> **भारतीय नेताओंकी स्थिति यह है कि वे ऐसा कोई कानून सहन न करेंगे जिसमें, प्रवासके सम्बन्धमें उनको यूरोपीयोंके समान अधिकार न दिये जायें। वे यह स्वीकार कर लेंगे कि एशियाइयोंकी संख्या प्रशासकीय कार्रवाईसे सीमित कर दी जाये. . .। उनका आग्रह है कि कानूनमें समानता होनी ही चाहिए।**

स्थिति अब भी वही है।

ट्रान्सवालके वर्तमान उपनिवेश-सचिव श्री स्मट्सने उस पंजीयन-कानूनका[2], जिसे लेकर पिछले तीन सालसे आन्दोलन चल रहा है, रद करनेका और ट्रान्सवालमें पहलेसे आबाद भारतीयोंके अलावा एक निश्चित संख्यामें ब्रिटिश भारतीयोंको स्थायी निवासके प्रमाणपत्र देनेका प्रस्ताव किया है। अगर ब्रिटिश भारतीयोंका उद्देश्य केवल यह होता कि उपनिवेशमें उनके कुछ भाई और आ जायें तो इस रियायतमें कुछ सार माना जाता। लेकिन इस कानूनको रद करानेके लिए वे जो आन्दोलन कर रहे हैं, उसका उद्देश्य है प्रवासके सम्बन्धमें कानूनी या सैद्धान्तिक समानता प्राप्त करना। इसीलिए कानूनी निर्योग्यताको कायम रखनेके इस प्रस्तावसे उनके उद्देश्यकी पूर्तिकी दिशामें एक कदम प्रगति भी नहीं होती। ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयों द्वारा अनाक्रामक प्रतिरोध जारी रखनेके बावजूद वर्तमान कानूनमें श्री स्मट्सके द्वारा सुझाया गया ऊपरका परिवर्तन किया जायेगा या नहीं, यह हम नहीं जानते। लेकिन हम इतना अवश्य कह सकते हैं कि जो रियायतें देनेका प्रस्ताव किया गया है, उनसे अनाक्रामक प्रतिरोधियोंको संतोष नहीं होगा। भारतीय समाजने यह संघर्ष इस उद्देश्यसे शुरू किया था कि उक्त कानूनसे समस्त भारतपर जो कलंक लगता है, वह दूर किया जा सके। यह एक ऐसा कानून है जिससे उपनिवेशीय कानूनके इतिहासमें पहली बार किसी ब्रिटिश उपनिवेशके प्रवासी कानूनोंमें प्रजातीय और रंग-सम्बन्धी प्रतिबन्धका समावेश होता है। इससे यह सिद्धान्त स्थापित होता है कि ब्रिटिश भारतीय ट्रान्सवालमें सिर्फ ब्रिटिश भारतीय होनेके कारण नहीं आ सकते। यह परम्परागत

१. देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २८७–३००।
२. रजिस्ट्रेशन लॉ।

नीतिका सम्पूर्ण परित्याग है, अ-ब्रिटिश है और असह्य है। यदि इस सिद्धान्तपर ब्रिटिश भारतीय अपनी मौन स्वीकृति दे भी देंगे तो हमारा खयाल है कि वे अपने-आपको, अपनी जन्मभूमिको और जिस साम्राज्यमें वे रहते हैं उसको धोखा देंगे। फिर, ऐसे मामलेमें सवाल सिर्फ ट्रान्सवालके अनाक्रामक प्रतिरोधियोंका ही नहीं है। ट्रान्सवालके इस कानूनसे जो अपमान होता है उसे तमाम भारत अनुभव कर रहा है। हमें लगता है कि साम्राज्यके इस केन्द्रीय भागके लोगोंपर भी साम्राज्यीय परम्पराओंके विपरीत उठाये जानेवाले इस अभूतपूर्व कदमका असर हुए बिना न रहेगा। जनरल स्मट्सका प्रस्ताव इस मामलेको बिलकुल स्पष्ट रूपसे सामने लाता है। अगर हम एक सिद्धान्तके लिए नहीं, बल्कि छोटे-मोटे निजी स्वार्थोंके लिए लड़ रहे होते तो जनरल स्मट्स फौरन् उनको पूरा करनेके लिये तैयार हो जाते, और तिरस्कारपूर्वक उन थोड़े-से सुसंस्कृत ब्रिटिश भारतीयोंके लिए निवासके अनुमतिपत्र दे देते, जिनकी हमें जरूरत पड़ सकती है। लेकिन हमारा आग्रह तो यह है कि उपनिवेशके कानूनमें जो जातीय कलंक निहित है, उसे निकाल दिया जाये, इसीलिए स्मट्स एक इंच भी पीछे हटनेके लिए तैयार नहीं हैं। वे हमें सार निकालकर छूँछ देना चाहते हैं। वे हमारे गलेसे हीनताका पट्टा हटानेसे इनकार करते हैं; हाँ, मौजूदा भद्दे पट्टेके बजाय एक सुन्दर चमकता हुआ पट्टा बाँध देनेके लिए तैयार हैं। परन्तु ब्रिटिश भारतीय इस धोखेकी टट्टीमें फँसना नहीं चाहते। वे सब-कुछ दे सकते हैं, कोई भी स्थिति मंजूर कर सकते हैं; लेकिन पहले यह पट्टा हटाया जाना चाहिए। इसलिए हम विश्वास करते हैं कि जिन दिखावटी रियायतोंको देनेका प्रस्ताव किया जा रहा है, उनसे यहाँके लोग गुमराह न होंगे। वे यह न मान लेंगे कि ब्रिटिश भारतीय इन रियायतोंको मंजूर नहीं करते, इसलिए उनकी माँगें बेजा हैं वे जिद्दी हैं, और समझदार तथा व्यावहारिक लोगोंकी सहानुभूति और सहायताके पात्र नहीं हैं। हमें लॉर्ड क्रू से जो अन्तिम उत्तर मिला है, उसमें यह रुख अख्तियार किया गया है :

> **लॉर्ड महोदयने आपको बता दिया था कि भारतीयोंको प्रवेशके अधिकार या दूसरी बातोंके सम्बन्धमें यूरोपीयोंकी बराबरीकी स्थितिमें रखा जाना चाहिए, आपकी इस माँगको श्री स्मट्स मंजूर करनेमें असमर्थ हैं।**

यही मूल कठिनाई है। ब्रिटिश भारतीय प्रवेशके अधिकारके सम्बन्धमें कानूनी समानता चाहते हैं, चाहे कभी एक भी व्यक्ति प्रविष्ट न हो। वे इसीके लिए लड़ रहे हैं। हमें ट्रान्सवालसे जो खबरें मिली हैं, साम्राज्यकी विविध जातियोंको एक ही प्रभुसत्ताके अधीन एक सूत्रमें बाँध रखनेका औचित्य सिर्फ बुनियादी समानता है। लेकिन, उनमें कहा गया है कि इसके लिए कुछ लोग तो अपनी जान दे देंगे। ट्रान्सवालके कानूनसे इस सिद्धान्तकी जड़पर ही कुठाराघात होता है, और इसीलिए ब्रिटिश भारतीयोंने इसका तीव्र विरोध किया है।

कहा जा सकता है कि ट्रान्सवाल स्वशासित उपनिवेश है और अब दक्षिण आफ्रिका संघ-राज्य बन गया है, इसलिए इस मामलेमें कोई राहत नहीं दी जा सकती; लेकिन यह तर्क तथ्योंके विरुद्ध होगा। स्थितिकी विषमताका कारण साम्राज्यके केन्द्रमें की गई गलती है। साम्राज्यके संविधानके विरुद्ध जो अपराध किया गया है, उसके लिए साम्राज्य-सरकार जिम्मेदार है। उसने उक्त कानूनको उस वक्त मंजूर किया जब उसे ऐसा करनेकी जरूरत नहीं थी जब उसे नामंजूर करना उसका कर्तव्य था। अब वह निःसन्देह इस दुःखदायी मामलेको तय करनेके लिए बहुत व्यग्र है। लॉर्ड क्रू ने सन्तोषजनक परिणाम प्राप्त करनेका प्रयत्न किया

है; किन्तु यह उन्होंने बहुत देरसे किया है। श्री स्मट्सने लॉर्ड महोदयको इस बातकी उचित याद दिलाई है कि उक्त कानूनपर सम्राट्की मंजूरी मिल चुकी है। ट्रान्सवालके भारतीयोंने उस कानूनको भंग करना और उसको भंग करनेकी सजा भुगतना शुरू कर दिया है; केवल इसीलिए उन्हें अपना पग पीछे हटानेको न कहना चाहिए, न कहा जा सकता है। "श्वेत दक्षिण आफ्रिका" में एक राजनीतिज्ञ और उच्च पदके आकांक्षीके रूपमें उनकी स्थिति निर्विवाद है। किन्तु इससे न तो ब्रिटिश लोगोंका कोई सम्बन्ध है और न भारतीयोंका ही। फिर वे ब्रिटिश सरकारके इस अपराधके लिए जिम्मेदार भी नहीं हैं।

हम यह भी कह दें कि पिछले चार महीनोंमें गिरफ्तारियों और सजाओंमें कोई कमी नहीं हुई है। समाजके नेताओंका जेल जाना जारी है। जेलके कायदोंकी सख्ती कायम है। जेलका खाना और भी खराब कर दिया गया है। जोहानिसबर्गके प्रमुख डॉक्टरोंने गवाही दी है कि भारतीय कैदियोंकी मौजूदा भोजन-तालिका अपर्याप्त है। अधिकारियोंने मुसलमान कैदियोंकी धार्मिक मान्यताओंकी उपेक्षा की है और उन्हें, जिन पवित्र रोजोंको लाखों मुसलमान साल-दर-साल निष्ठासे रखते चले आये हैं, उनको रखनेकी सुविधाएँ देनेसे इनकार कर दिया है। ऐसा पिछले साल नहीं किया गया था। अभी हालमें साठ अनाक्रामक प्रतिरोधी प्रिटोरिया जेलसे छूटे हैं; वे क्षीण और दुर्बल होकर आये हैं। उन्होंने हमें यह खबर भेजी है कि यद्यपि उन्हें भूखों रहना पड़ा, फिर भी सरकार उनको जब गिरफ्तार करना चाहे, वे उसके लिए तैयार हैं। ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यवाहक अध्यक्ष अभी गिरफ्तार किये गये हैं और तीन मासकी सख्त कैदकी सजा देकर जेल भेजे गये हैं। यह उनकी तीसरी जेल-यात्रा है। वे मुसलमान हैं। एक वीर पारसी, जो एक सुशिक्षित व्यक्ति हैं, नेटालको निर्वासित कर दिये गये थे। वे फिर आ गये और अब छः महीनेकी कड़ी कैदकी सजा काट रहे हैं। वे पाँचवीं बार जेल गये हैं। उनके साथ एक दूसरा भारतीय युवक भी, जो कभी स्वयंसेवकोंका सार्जेंट था, तीसरी बार जेल गया है। उसे भी वही सजा दी गई है जो उक्त पारसीको दी गई है। जेल गये हुए ब्रिटिश भारतीयोंके स्त्री-बच्चे टोकरियोंमें फल भरकर इधर-उधर फेरी लगाते हैं और इस तरह अपनी आजीविका कमाते हैं, या उनकी परवरिश चन्देसे की जाती है। श्री स्मट्सने दक्षिण आफ्रिकाके लिए जहाजमें सवार होते समय कहा था कि उनका लॉर्ड क्रू से ऐसा समझौता हो गया है जिससे बहुसंख्यक ब्रिटिश भारतीयोंको, जो आन्दोलनसे अत्यन्त ऊब गये हैं, सन्तोष हो जायेगा। लेकिन उसके बादकी घटनाओंसे उनकी भविष्यवाणी बिल्कुल गलत साबित हुई है।

आपके, आदि,

मो० क० गांधी

हाजी हबीब

[संलग्नपत्र]

वक्तव्यका सारांश

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय पिछले ढाई सालसे अकथनीय कष्ट भुगत रहे हैं। उनका उद्देश्य है:

ट्रान्सवालके एशियाई पंजीयन अधिनियम (१९०७ के कानून २)को रद कराना। कानूनके निर्माता उसे उपनिवेशमें रहनेके अधिकारी ब्रिटिश भारतीयोंकी शिनाख्त

करनेकी कार्रवाई मात्र बताते हैं; किन्तु ब्रिटिश भारतीय खुद उसे अत्यन्त आपत्तिजनक मानते हैं। क्योंकि वास्तवमें —

(१) इस कानूनसे उनकी धार्मिक भावनाओंको चोट लगती है और कई तरहसे उनका अपमान होता है; और

(२) बादकी तारीखके एक दूसरे कानूनके साथ (जो प्रवासी अधिनियम कहलाता है) मिलाकर पढ़नेसे यह भारतीयोंके प्रवासके मार्गमें, चाहे ये भारतीय कितने ही सुसंस्कृत क्यों न हों, उनकी जाति और रंगके कारण एक अलंघ्य रुकावट पैदा करता है।

वे जो राहत चाहते हैं, वह पंजीयन कानूनको रद करने और प्रवासी कानूनके छोटे-से संशोधनसे, उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंकी बाढ़ रोकनेकी नीतिको खतरेमें डाले बिना, आसानीसे दी जा सकती है। कानूनको रद करने और संशोधनकी कार्रवाईका क्रियात्मक प्रभाव होगा जातीय अपमानका निराकरण और उससे शायद कुछ थोड़े-से नवागन्तुक भारतीय ही प्रवेश कर पायेंगे, जिनकी यहाँ आबाद भारतीय समाजकी आध्यात्मिक और बौद्धिक आवश्यकताएँ पूरी करनेके लिए जरूरत है।

ट्रान्सवालमें वास्तवमें इस समय जो भारतीय रहते हैं, उनकी संख्या लगभग ५,००० है।

ट्रान्सवालमें अधिवास-प्राप्त भारतीय आबादी करीब १३,००० है।

इस अन्तरका अर्थ यह है कि लगभग ८,००० भारतीय फिलहाल ट्रान्सवालसे भगा दिये गये हैं, क्योंकि वे इतने कमजोर हैं कि जेल जीवनके शारीरिक कष्टोंको सहन नहीं कर सकते।

२,५०० से ज्यादा ब्रिटिश भारतीय ट्रान्सवालकी जेलको सुशोभित कर आये हैं। इनमें से १५० के सिवा बाकी सबको सपरिश्रम कारावासकी सजाएँ दी गई हैं। ये सजाएँ चार दिनसे लेकर छः मास तक की कड़ी कैदकी थीं। इस संघर्षमें सैकड़ों भारतीय बर्बाद हो चुके हैं। कितने ही परिवारोंका भरण-पोषण जनताके चन्देसे किया गया है, क्योंकि परिवारके कमाऊ लोग ट्रान्सवालकी जेलोंमें बन्द हैं। बूढ़े और जवान सभी भारतीयोंने कैद भुगती है और अब भी भुगत रहे हैं। कितने ही नेता इस समय जेलोंमें हैं। इनमें ब्रिटिश भारतीय संघके मुस्लिम अध्यक्ष और एक पारसी सज्जन भी हैं, जो समस्त दक्षिण आफ्रिकामें अपनी दानशीलताके लिए प्रसिद्ध हैं। बाप और बेटोंने साथ-साथ कैद भोगी है। लगभग साठ भारतीय भारतको निर्वासित कर दिये गये हैं। वे जब वहाँ उतरे तब उनके पास न एक पैसा था और न कोई मित्र।

ट्रान्सवालके कुछ उदारमना यूरोपीयोंके एक दलने, जिसमें ट्रान्सवालके संसद-सदस्य श्री डब्ल्यू० हॉस्केन भी हैं, न्याय-प्राप्तिके लिए अपनी एक समिति बना ली है।

हिन्दू और मुसलमान, पारसी और सिख कन्धेसे-कन्धा मिलाकर लड़ रहे हैं। आजका संघर्ष अपने तीस करोड़ देशवासियोंकी सम्मान-रक्षाके लिए जारी रखा जा रहा है और वह बिलकुल निःस्वार्थ है। कष्ट भुगतनेवाले लोगोंको अपना कोई स्वार्थ सिद्ध नहीं करना है।

भारतीयोंका कहना है कि ट्रान्सवालके उपनिवेश-सचिव जनरल स्मट्स १९०७ के एशियाई पंजीयन कानूनको रद करनेके लिए वचनबद्ध हैं। यदि यह कानून वापस ले लिया जाता, तो शिक्षित-भारतीयोंका प्रश्न अपने-आप हल हो जाता, क्योंकि इसके बिना ऊपर कहे हुए

प्रवासी कानूनसे उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंके प्रवेशमें कोई रुकावट नहीं होती। जनरल स्मट्सका कहना है कि उन्होंने श्री गांधीसे इस कानूनको रद करनेके सम्बन्धमें बातचीत की थी, लेकिन कोई निश्चित वचन देनेकी बात उनको याद नहीं आती। श्री गांधीने हलफ-नामा दाखिल किया है कि ऐसा वचन दिया गया था और अपने कथनके समर्थनमें लिखित प्रमाण भी पेश किये हैं। जनरल स्मट्सका कहना है कि भारतीयोंकी माँगें क्रियात्मक रूपमें पूरी हो गईं, क्योंकि उनकी इच्छा पंजीयन कानूनको अमल-बाहर मानकर चलनेकी है; वे इसके लिए तैयार हैं कि शिक्षित भारतीय अनुमति लेकर और अस्थायी अनुमतिपत्रोंसे प्रवेश करें और इन अनुमतिपत्रोंकी अवधि समय-समयपर बढ़ाई जाती रहेगी। भारतीयोंकी मान्यता है कि उक्त कानूनको रद करवाना उनका महत्त्वपूर्ण दायित्व है और यदि यह कानून अमल-बाहर है तो इससे सरकारको कोई लाभ नहीं हो सकता। उनका यह भी कहना है कि शिक्षित भारतीयोंका अनुमति लेकर प्रवेश करना बेकार है, क्योंकि यह आन्दोलन कुछ व्यक्तियोंके प्रवेश प्राप्त करनेके लिए नहीं, बल्कि जातीय सम्मानकी रक्षाके लिए किया जा रहा है। **इस अनावश्यक कानूनी जातीय निर्योग्यतासे स्थिति इतनी अपमानास्पद हो जाती है और यह समस्त भारतीय जातिके लिए कष्टका स्थायी स्रोत बन जाती है।** यह कानून उपनिवेशोंके इतिहासमें इस ढंगका पहला कानून है। किसी भी दूसरे स्वशासित उपनिवेशमें ऐसा कानून नहीं है जिसमें ऐसा जातीय अपमान हो, जिसे लॉर्ड मॉर्लेने "दुष्टतापूर्ण प्रतिबन्ध" कहा है।

ब्रिटिश भारतीयोंकी इच्छा यह नहीं है कि उनके देशवासी ट्रान्सवालमें अन्धाधुन्ध भर जायें। उनका निवेदन यह है कि प्रवासी कानूनके उचित अमलसे थोड़े-से भारतीयों — उदाहरणार्थ प्रति वर्ष छः उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीयों — के अतिरिक्त सब उपनिवेशमें प्रविष्ट होनेसे रोक दिये जायें। केप, आस्ट्रेलिया और दूसरे उपनिवेशोंने एशियाइयोंके प्रवासका प्रश्न जातीय कानूनका सहारा लिये बिना ही तय कर लिया है।

छपी हुई अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१८०) से।

३३८. पत्र: उपनिवेश-उपमन्त्रीको

[लन्दन]
नवम्बर ६, १९०९

महोदय,

मुझे आपका इसी ३ तारीखका पत्र, संख्या ३४५१९/१९०९, प्राप्त करनेका सौभाग्य मिला।[1] यह अत्यन्त खेदजनक बात है कि अर्ल ऑफ़ क्रू प्रवासके सम्बन्धमें उस सैद्धान्तिक समानताको मंजूर करानेकी आशा नहीं बँधा सकते जिसकी माँग ब्रिटिश भारतीय करते हैं। यह सैद्धान्तिक समानता अबतक सारे उपनिवेशोंमें मान्य रही है और, सादर निवेदन है कि, एकमात्र इसके कारण ही एक प्रभुसत्ताके अधीन विश्वकी विभिन्न जातियोंके एकीकरणका औचित्य सिद्ध हो सकता है। इस स्थितिको जनताके सामने रख देने और ट्रान्सवाल लौट

१. देखिए परिशिष्ट ३१।

जानेके सिवा मेरे और मेरे साथीके लिए अब कुछ करना शेष नहीं रहता। परन्तु यह प्रश्न साम्राज्यीय महत्त्वका प्रश्न है, यह देखते हुए मैं और मेरे साथी सम्मानपूर्वक आशा करते हैं कि श्रीमान् अब भी ट्रान्सवालके प्रवासी कानूनोंमें मौजूद अपमानजनक रंग-सम्बन्धी प्रतिबन्धको दूर करानेके लिए अपने प्रभावको काममें लायेंगे।[1]

आपका, आदि,

मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स २९१/१४२ और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१६४); से भी।

३३९. पत्र : ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको[2]

[लन्दन
नवम्बर ६, १९०९]

हमें, ब्रिटेनके लोगोंको, आपकी ओरसे यहाँ काम करनेवाले व्यक्तियोंसे आपकी उन मुसीबतों और दिक्कतोंका पता चला है, जिन्हें आप ब्रिटिश झण्डेके नीचे भोग रहे हैं। आप अपनी प्रजाति (रेस) और मातृभूमिकी मान-रक्षाके लिए लड़ रहे हैं, इसकी हम प्रशंसा करते हैं। हमारे खयालसे ट्रान्सवाल सरकारको उन ब्रिटिश प्रजाजनोंपर, जो उनसे भिन्न प्रजातिके और भिन्न रंगके हों, रंग या प्रजातिके आधारपर उपनिवेशमें आनेकी रोक लगानेका कोई हक नहीं है। इसे हम उस साम्राज्यकी, जिसमें आप और हम रहते हैं, परम्पराओंके विपरीत मानते हैं। आपने जो नरम रुख अख्तियार किया है, हम उसकी सराहना करते हैं, क्योंकि जहाँ आप स्वभावतः अपने जातीय सम्मानको निष्कलंक बनाये रखनेपर जोर देते हैं, वहाँ आप ट्रान्सवालके उपनिवेशियोंकी भारतीय प्रवासको नियन्त्रित और सीमित करनेकी इच्छाका विरोध नहीं करते। लेकिन आप चाहते हैं कि यह कार्रवाई सामान्य और अप्रजातीय कानूनके अन्तर्गत और ऐसे आर्थिक आधारपर की जाये जो उपनिवेशियोंको उचित प्रतीत हो।

आपने अपनी शिकायतें दूर करानेका जो तरीका अपनाया है वह धर्मको जीवनकी पथ-प्रदर्शक शक्ति माननेवाले हम लोगोंको अच्छा लगा है। आपने अपनी स्थितिको मजबूत करने

१. नवम्बर ९ को लिखे एक आलेखसे उपनिवेश-कार्यालयपर हुई प्रतिक्रियाका पता चल जाता है। गांधीजीका पत्र पानेपर उपनिवेश कार्यालयने ट्रान्सवाल सरकारको एक तार भेजा था। देखिए परिशिष्ट ३३।

२. इसका मसविदा गांधीजीने तैयार किया था। यह ५ तारीख तक तैयार हो चुका था, क्योंकि अगले दिन होनेवाली सभामें कार्यक्रम और मसविदा विचारार्थ प्रस्तुत किये जानेवाले थे। देखिए "पत्र : एच० एस० एल० पोलकको", पृष्ठ ५१८। यह ब्रिटेनके जो लोग अनाक्रामक प्रतिरोध आन्दोलनसे सहानुभूति रखते थे उनकी ओरसे "ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय भाइयों और बहनोंको" लिखा गया था। इसपर स्वयंसेवकोंके एक दलने उन लोगोंके दस्तखत करवाये थे।

और अधिकारियोंको अपने उद्देश्यके न्यायोचित होने और अपनी माँगकी सचाईका विश्वास दिलानेमें हिंसा और शरीरवलका सहारा नहीं लिया है, वल्कि उस कानूनको, जिसे आप उचित ही अपनी अन्तरात्माके विरुद्ध समझते हैं, माननेसे वहादुरीके साथ इनकार करके स्वयं कष्ट सहा है और कानूनकी अवज्ञाके फलस्वरूप मिलनेवाले दण्डको स्वीकार करके आपमें से २,५०० लोग अवतक जेल जा चुके हैं। ये सजाएँ छः महीने तक की और ज्यादातर सख्त कैदकी थीं। आपमें से कुछ लोग कंगाल हो गये हैं। स्त्रियोंने धैर्यपूर्वक अपने पतियोंका वियोग सहा है और उनकी हालत करीव-करीव भूखों मरनेकी हो गई है। आपके व्यापारियोंने अपना माल विक जाने दिया है और अपने लेनदारोंको माल ले जाने दिया। इस तरहके कष्ट सहकर आप विश्वके विभिन्न धर्मोके महान आचार्योंके सच्चे साहसका परिचय दे रहे हैं। हमें आपसे सहानुभूति है। कहनेका आशय यह है कि हमारा समस्त जीवन साक्षी रहेगा कि हम कितने सच्चे दिलसे चाहते हैं कि यह संघर्ष जारी रखनेके लिए आपको वल और साहस प्राप्त हो। आपके प्रति अपनी सहानुभूतिको व्यक्त करनेके लिए हम इस पत्रपर अपने हस्ताक्षर कर रहे हैं। आपके कष्ट दूर करनेके लिए जितना धन देना हमें जरूरी लगता है उतना धन भी दे रहे हैं। हमें आशा है कि ट्रान्सवालके अधिकारी और लन्दनके अधिकारी भी अपनी आँखें खोलेंगे और तुरन्त सहायता प्रदान करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-१२-१९०९

३४०. शिष्टमण्डलकी आखिरी चिट्ठी[1]

[नवम्बर ६, १९०९ के वाद]

लॉर्ड क्रू का उत्तर

अव सव दिनके उजाले-जैसा साफ दिखाई देता है। लॉर्ड क्रू ने स्पष्ट उत्तर दे दिया है। उन्होंने लिखा है:[2]

> श्री स्मट्स दो वातें स्वीकार करते हैं: १९०७ का कानून २ रद कर दिया जायेगा और हर साल छः शिक्षित एशियाइयोंको स्थायी निवासीके रूपमें यहाँ आने दिया जायेगा। आप स्वीकार करेंगे कि यह जो वे देना चाहते हैं, आगेकी ओर एक कदम माना जायेगा; क्योंकि इससे कानूनको वदलनेका जो असर होना चाहिए वह तो हो जायेगा। लेकिन आप जो भारतीयोंको कानूनमें यूरोपीयोंके वरावर हक देनेकी माँग करते हैं, उस माँगके मंजूर होनेकी आशा लॉर्ड क्रू नहीं दिला सकते। १६ सितम्वरकी भेंटमें लॉर्ड क्रू ने आपसे कहा था कि प्रवेश और अन्य वातोंके सम्वन्धमें भारतीयोंको यूरोपीयोंके वरावर हक देनेकी माँग श्री स्मट्स मंजूर नहीं कर सकते।

१. यह **इंडियन ओपिनियन**में इन शीर्षकोंसे छपा था, "इंग्लैंडमें किया गया काम: अखवारोंको विस्तृत पत्र: लड़ाईमें मदद प्राप्त करनेके लिए स्वयंसेवक।"

२. पूर्ण पाठके लिए देखिए परिशिष्ट ३१।

शिष्टमण्डलका उत्तर

इस पत्रका उत्तर शिष्टमण्डलने नीचे लिखे अनुसार दिया है :[1]

टिप्पणी

अब सब भारतीयोंको समझ लेना चाहिए कि यह लड़ाई किस लिए लड़ी जा रही है और कितनी बड़ी है। हम सारे भारतका बोझ उठा रहे हैं। ऐसा करना हमारा कर्तव्य है। अगर हम यह मंजूर कर लें कि यूरोपीय और हम बराबर नहीं हैं तो फिर स्मट्स, हम जो कुछ माँगें, देनेके लिए तैयार हैं। लेकिन वे कानूनमें यह बात जरूर रखना चाहते हैं कि हम गोरोंके बराबर नहीं हैं। उन्होंने ब्रिटिश नीति और मानवीय सिद्धान्तोंकी जड़पर कुल्हाड़ी मारी है। हमने यह चोट अपने ऊपर झेल ली है, क्योंकि हम इन सिद्धान्तोंकी रक्षा करना चाहते हैं। अगर इस मूलपर कुल्हाड़ी लगती है तो ब्रिटिश राज्य व्यर्थ है और ट्रान्सवालमें या दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंका रहना गुलामी है। लेकिन हमें कोई भी हमारी मर्जीके बिना गुलाम नहीं बना सकता। अगर हम उसके सिद्धान्तोंको न मानें, उसकी आज्ञाका पालन न करें तो हम गुलाम नहीं रहते। पहले जमानेमें लोग मार-मारकर गुलाम बनाये जाते थे; अब फुसलाकर गुलाम बनाये जाते हैं। पहला जमाना अच्छा था, क्योंकि उसमें सब सड़ाँध सतहपर तैर आती थी। इससे लोग देख सकते थे और उससे उन्हें घृणा हो जाती थी। गुलाम भी जब कष्ट सहन न होता तो भाग जाते थे या मर जाते थे। अब हमें लालच देकर गुलामीमें फँसाया जाता है और हम इस गुलामीको मंजूर कर लेते हैं, और जानते भी नहीं कि यह गुलामी है। हम दक्षिण आफ्रिकामें ऐसी दशामें रहना नहीं चाहते, इसलिए सत्याग्रहकी लड़ाई लड़ रहे हैं। सरकार यह बात जानती है कि अगर हम उसके गुलाम बनानेके प्रयत्नोंको असफल कर देंगे तो हमारे लिए दूसरी बातें आसान हो जायेंगी। अगर हम इस बातको न जानते हों तो हमें इसे अब जानना चाहिए। हम सच्चे मताधिकारकी लड़ाई लड़ रहे हैं। हम यह दिखा रहे हैं कि एक राष्ट्र बननेकी आकांक्षा रखनेवाले लोगोंमें जो संभावनायें और भावना होनी चाहिए, वह हममें है।

इसके अतिरिक्त हम केवल ट्रान्सवाल [सरकार] से ही नहीं लड़ रहे हैं; बल्कि साम्राज्य सरकारसे भी लड़ रहे हैं, क्योंकि उसीने यह कानून[2] मंजूर किया है। "कानूनमें बराबरीके हककी माँग छोड़ो तो तुम्हें मुँहमाँगा मिलेगा," इसका अर्थ तो यह है कि "तुम गुलामीका पट्टा लिख दो तो तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार किया जायेगा।" यह तो ऐसी ही बात हुई, मानो जर्मन अंग्रेजोंसे कहें : "तुम हमारे आधीन हो जाओ तो तुमसे अच्छा व्यवहार किया जायेगा।" अंग्रेज इसका उत्तर यह देंगे : "हमें तुम्हारे अच्छे व्यवहारकी जरूरत नहीं है। हमें अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा करनेमें दुःख भी हो तो वह भी हमारे लिए सुख है।" ऐसा ही उत्तर हम तीन बरससे दे रहे हैं और आशा है, सदा देते भी रहेंगे। यह लड़ाई प्रवासके सम्बन्धमें कानूनमें बराबरीका हक लेनेके लिए लड़ी जा रही है। उस हकको लेनेके लिए फकीरी तो बहुत लोगोंने ली है और उसे लेनेके लिए हम प्राण भी दे देंगे। मैं यह माने लेता हूँ कि जो शूर रणमें उतरे हैं वे कभी पीछे नहीं हटेंगे। प्रत्येक भारतीयको स्वयं याद

१. इसके पाठके लिए देखिए "पत्र : उपनिवेश उपमन्त्रीको", पृष्ठ ५२४–२५ ।
२. सन् १९०७ का एशियाई पंजीयन अधिनियम, क्र० २ ।

रखना चाहिए कि इसका उपाय केवल हमारे हाथमें है, ब्रिटिश सरकार या ट्रान्सवाल सरकारके हाथमें नहीं। उनके सामने सब तथ्य विधिवत् पेश करना और उनको समझाना हमारा काम है। लेकिन हमें यह न भूलना चाहिए कि अपने बलके सिवा दूसरा बल कभी काम न देगा।

भावना

एक ओर मुझे लॉर्ड क्रू की चिट्ठी मिली और दूसरी ओर अखबारोंमें मेरे लड़के हरिलालके जेल जानेका तार समाचारपत्रोंमें छपा। इससे मुझे निःसन्देह प्रसन्नता हुई। मुझे यह जरा भी अच्छा नहीं लग रहा था कि जब बहुत-से भारतीय गिरफ्तार हो गये हों तब मेरा बेटा और मैं जेलके बाहर रहें। तभी यह तार आ गया। कुमारी पोलक इस सम्बन्धमें मेरी भावनाको समझती हैं; इसलिए उन्होंने मुझे यह खबर देते हुए बधाई दी। यद्यपि मैं जानता हूँ कि इससे उस बालकको कष्ट होगा; फिर भी मैं उस खबरका स्वागत करता हूँ। इसमें उसका हित है, मेरा भी हित है और जातिकी सेवा है। यह ईश्वरकी आज्ञा भी है। नागप्पन! तुम भी तो बालक ही थे। तुमने अपने देशके लिए अपनी बलि दे दी। मैंने इसमें तुम्हारे परिवारका कल्याण माना। मैं यह मानता हूँ कि तुम मरकर अमर हो गये हो। अब मैं अपने बेटेके जेल जानेपर क्यों घबरा जाऊँ? उसके साथी फिर जेल चले गये हैं। इसमें उनका कोई स्वार्थ नहीं है। फिर भी वे जेलका दुःख भोग रहे हैं। मैं यह नहीं मानता कि इस दुःखके बदले सुख न मिलेगा और हमारी प्रतिज्ञाके अनुसार कानून रद नहीं होगा। मुझे आशा है कि कोई भी भारतीय ऐसा माननेकी कायरता नहीं दिखायेगा।

दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंसे

मैं समस्त दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंसे कहता हूँ कि यह लड़ाई केवल ट्रान्सवालकी नहीं है। यह आप सबकी है। इसलिए आप सब लड़नेवालोंको पूरी हिम्मत बँधायें। श्री अब्दुल कादिर और श्री आमद भायात यहाँका रंगढंग देखकर गये हैं; मैं उनसे कहता हूँ कि लोगोंको यथाशक्ति उत्साहित करना उनका कर्तव्य है। इस लड़ाईमें सभी मदद कर सकते हैं; कोई अपने शब्दोंसे, कोई अपने धनसे और कोई जेल जाकर। मुझे आशा है कि सभी ऐसा करेंगे।

हमारे रवाना होनेमें एक ही हफ्ता बाकी है।[1] और इस बीच बहुत सारे काम निबटाने हैं। छपा विवरण तैयार है, उसे अभी सब जगह भेजना है। उसके साथ पत्र भी लिखा है। वह इस प्रकार है:[2]

आशा है, यह पत्र अखबारोंमें प्रकाशित किया जायेगा।

इंडियन यूनियन सोसाइटी

इंडियन यूनियन सोसाइटीकी बैठक शनिवारको हुई। इसमें भारतीयों और यूरोपीयोंके सामने लड़ाईकी पूरी स्थिति रखी गई। इसका संक्षिप्त समाचार स्थानीय अखबारोंमें छपा है।

१. शिष्टमण्डल इंग्लैंडसे १३ नवम्बरको रवाना हुआ था।

२. इसके पाठके लिए देखिए "पत्र अखबारोंको", पृष्ठ ५२०–२२।

लन्दनके भारतीयोंकी सभा

गत मंगलवारको यहाँ रहनेवाले भारतीयोंकी सभा हुई थी। इस सभामें चालीस-पचास भारतीय आये होंगे। उनके सामने श्री हाजी हबीब, श्री आंगलिया और मैंने भाषण दिये। मैंने मांग की कि कुछ भारतीय स्वयंसेवक बनें और घर-घर जाकर एक सहानुभूति-पत्रपर[1] हस्ताक्षर करायें। लोग पत्रपर हस्ताक्षर करनेके साथ-साथ जितना चाहें उतना पैसा भी दें, जो कमसे-कम एक फार्दिंग हो। ऐसे हजारों हस्ताक्षर प्राप्त हो सकते हैं। उनका असर ब्रिटिश सरकार और दूसरोंपर हुए बिना न रहेगा। इस माँगको स्वीकार करके लगभग २० भारतीयोंने तत्काल ही अपने नाम दिये। यह एक बड़ी बात है। इसकी जड़ें गहरी जा सकती हैं। और यदि सब स्वयंसेवक पूरी ईमानदारीसे काम करें तो बहुत बड़ा काम हो सकता है। ऐसी हालतमें यदि एक ओर भारतमें और दूसरी ओर इंग्लैंडमें जोरोंसे काम चले और हम ट्रान्सवालमें उत्साह बनाये रखें तो बहुत शीघ्र लड़ाईका अन्त हो सकता है। बादमें कुछ यूरोपीयोंके नाम भी मिले। कुल मिलाकर ये नाम मिले हैं:

सर्वश्री जी० सी० वर्मा, एस० पी० वर्मा, एफ० लालन, जे० पी० पटेल, के० अमीद, एन० द्वारकादास, डी० सी० घोष, एच० एम० बोस, जी० एच० खान, अब्दुल हक, एस० मंगा, ए० हाफिजी, बी० सहाय, एच० आर० बिलिमोरिया, डी० सिंह, बी० प्रसाद, हुसेन दाउद, ए० एच० गुल, आर० जी० मुंसिफ, एम० के० आजाद, पी० बनर्जी, ए० मैन और एच० ई० चीजमैन। निम्न महिलाएँ भी हैं: कुमारी एफ० विंटरबॉटम, श्रीमती जी० नाग, श्रीमती पोलक, श्रीमती दुबे, कुमारी हुसेन और श्री पोलककी पुत्रियाँ।

अखबार निकालनेका सुझाव

इसके अलावा ऐसा विचार भी है कि जबतक लड़ाई चलती है तबतक यहाँ एक छोटा-सा अखबार निकाला जाये। इस अखबारमें दक्षिण आफ्रिका और भारतसे प्राप्त समाचारोंका सार छापा जाये और यह अखबार अनेक स्थानोंमें बेचा जाये। ऐसा निश्चय किया गया है कि यह तभी निकाला जाये जब इसका खर्च यहींके गोरे उठायें। इसको चलाना गोरोंका कर्तव्य है। और उन्हें ऐसा करना भी चाहिए। दिक्कत यह आती है कि श्री रिचको इतनी फुरसत नहीं है और इनकी तरह काम करनेवाला कोई दूसरा इस समय है नहीं। उनके मातहत काम करनेवाले बहुत मिलते हैं, लेकिन जरूरत किसी ऐसे व्यक्तिकी है जो अपना सारा वक्त उसमें लगा दे। ऐसा व्यक्ति मिले, तभी अखबार निकल सकता है।

मायरकी सहायता

अन्तमें, प्रख्यात पादरी श्री मायरने, जो कुछ समयके लिए जोहानिसबर्ग आये थे, अपने खर्चसे एक चायपार्टीका आयोजन किया है। इसका उद्देश्य यह है कि लोग हम दोनोंसे मिल सकें। पार्टीमें उन्होंने लगभग ६० लोगोंको बुलाया है। उसमें सब मामला समझाया जायेगा। समारोह शुक्रवार, १२ तारीखको होगा।[2] अब चारों ओर ऐसा सब हो रहा है। किन्तु, इसका असर कितना होगा, यह हमारी हिम्मतपर निर्भर है। श्री मायरके अन्तिम शब्द ये थे:[3] "हम

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. देखिए "भाषण: विदाई सभामें," पृष्ठ ५४५–५०।

३. गांधीजी २४ सितम्बरको दोपहरके भोजनपर रेवरेंड मायरसे मिले थे।

(अंग्रेज) आपकी बहुत सहायता नहीं कर सकते। आपको कष्ट सहने होंगे, आपको जेल जाना पड़ेगा। ऐसा करनेपर और जब भारत जगेगा तभी, इसका अन्त होगा। आप याद रखिए कि इसके बिना कुछ नहीं होगा। मैं तो, जो मुझसे हो सकेगा, करूँगा ही।" यह कहना ठीक ही है। दूसरे लोग हमारे लिए कुछ कर देंगे, यह मान बैठना भ्रमपूर्ण है।

डॉ० कुमारी जोशी और श्री महस्करने लड़ाईके लिए तीन-तीन पौंड दिये हैं। श्री गोकुलभाई दलालने १० शिलिंगकी रकम भेजी है। डॉ० जोशीने ['इंडियन ओपिनियन'के] सम्पादकको पत्र भी लिखा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-१२-१९०९

३४१. लन्दन

[नवम्बर ८, १९०९ के पूर्व]

स्त्रियोंके मताधिकारके लिए आन्दोलन करनेवाली महिलाएँ

मुझे तो लगता है कि इस समय स्त्रियाँ मताधिकार लेनेके लिए जो लड़ाई चला रही हैं, वह हमारे लिए अधिकसे-अधिक उपयोगी है। उसका महत्त्व दक्षिण आफ्रिका और भारत, दोनोंके लिए है। हमें उनकी बहुत-सी बातोंका अनुकरण करना चाहिए, और बहुत-सी बातें छोड़ देनी चाहिए। वे हमारी ही भाँति मानती हैं कि उनके हक मारे जा रहे हैं। उनको [पुरुषोंसे] हीन माना जाता है। उनकी लड़ाई लम्बे अर्सेसे चल रही है। उनमें भी दो पक्ष हैं — एक कमजोर और दूसरा ताकतवर। उनमें और हममें अन्तर यह है कि वे सत्याग्रही नहीं हैं, बल्कि शरीर-बलकी पूजा करनेवाली हैं।

उनकी वीरता, उनकी एकता, उनकी धन-त्याग करनेकी वृत्ति और उनकी बुद्धिमत्ता, सभी तारीफ करने और अनुकरण करने लायक हैं। वे पत्थर फेंकती हैं, दूसरोंको कष्ट देती हैं और मर्यादाका अतिक्रमण करती हैं — ये सब छोड़ने लायक हैं। ऐसी तीन घटनाएँ[1] अभी हालमें हुई हैं। मैंचेस्टर जेलमें एक स्त्रीको जबरदस्ती खाना खिलाया जा रहा था। इसलिए उसने ऐसी युक्ति की जिससे [कोठरीका] दरवाजा खोला ही न जा सके। इसपर अधिकारियोंने उसके ऊपर बम्बेसे पानी छोड़ा; उसने फिर भी दरवाजा नहीं खोला। इस स्त्रीकी बहादुरी सच्ची बहादुरी है; लेकिन उसने उसका अनुचित उपयोग किया। जो कष्ट सहन करनेके लिए बैठे हैं, उनसे ऐसा होगा ही नहीं। इसमें उसका उद्देश्य जेलसे छूटना था। वह पूरा हो गया लेकिन इससे स्त्रियोंको अधिकार तो नहीं मिला। जब बम्बेसे पानी छोड़नेकी बात फैली तब उस स्त्रीको रिहा करनेका हुक्म दे दिया गया।

यहाँके एक हलकेमें कॉमन्स सभाके लिए सदस्यका चुनाव किया जा रहा था। दो स्त्रियाँ मतदानपत्रोंको खराब करनेके इरादेसे निकलीं। उन्होंने कागज जलानेका तेजाब अपने

१. इनमें से पहली दो घटनाओंकी खबरें ६-११-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**के गुजराती स्तम्भोंमें छपी थीं।

साथ ले लिया था। वे किसी युक्तिसे मतदान-केन्द्रमें घुस गईं और वहाँ उन्होंने वह तेजाब उड़ेल दिया। उससे ज्यादा कागज तो खराब नहीं हुए; लेकिन उनमें से एक स्त्रीकी हरकतसे एक अधिकारीकी आँखको बहुत नुकसान पहुँचा। यह बहुत ओछा काम है। उसकी निन्दा सभी कर रहे हैं। फिर भी उनके संघने इसका दायित्व अपने ऊपर ले लिया है। इन स्त्रियोंपर अब मुकदमा चलाया जा रहा है।

एक जगह जो डॉक्टर जबरदस्ती खाना खिलाता था, उसके घरके किवाड़ोंके काँच तोड़ दिये गये। इसका उद्देश्य डॉक्टरकी सम्पत्तिको हानि पहुँचाना ही था। इसमें डॉक्टरका क्या कसूर था? वह तो अधिकारी था; इसलिए उसने वह काम अपने जिम्मे लिया था। ये सब [निस्सन्देह] हिम्मतके काम हैं; लेकिन सिर्फ हिम्मतसे कहीं अधिकार नहीं मिलते। हिम्मतका उपयोग अच्छा होना चाहिए।

मुझे हालमें ही मालूम हुआ है कि मताधिकारका आन्दोलन करनेवाली स्त्रियोंके चार अखबार निकलते हैं — तीन साप्ताहिक और एक मासिक। उनके संघकी एक शाखाने निश्चित अवधिसे पहले ही ५०,००० पौंडकी निश्चित रकम इकट्ठी कर ली; इसलिए अब वे १,००,००० पौंड इकट्ठे करनेका विचार कर रही हैं। उनका अपना बैंड अलग है और उनके पत्रोंका अपना चित्रकार भी अलग है। संघकी शाखाओंकी बैठकें सप्ताह-भर कहीं-न-कहीं होती ही रहती हैं। अभी मताधिकार मिलनेकी कोई आशा नहीं, लेकिन वे हार नहीं मान रहीं हैं, लड़ती ही जा रही हैं। उनका यह उत्साह मामूली नहीं है।

बजट

कॉमन्स सभामें बजटपर छः महीने तक बहस चली। अब बजटका बिल मंजूर हो गया है, और सोमवारको लार्ड-सभामें जायेगा। उसपर बहुत विवाद होनेकी सम्भावना है। बहुत-से लोगोंका खयाल है कि लॉर्ड-सभा बजटको नामंजूर कर देगी। ऐसा हुआ तो जनवरीमें नये चुनाव होंगे। बहुत-से लोग यह मानते हैं कि अगर ऐसा होगा तो भी उदार दल ही जीतेगा। इंग्लैंडके लोग फिलहाल तो इस काममें व्यस्त हैं। उनको दूसरी बात सूझती ही नहीं, क्योंकि कॉमन्स सभा और लॉर्ड-सभामें बड़ा संघर्ष चल रहा है। सदस्य एक दूसरेको गालियाँ देते हैं और एक-दूसरेको झूठा मानते हैं। बस, इतनी ही कसर है कि मारपीट नहीं करते। मारपीट नहीं करते तो भलमनसाहतके कारण नहीं, बल्कि इसलिए कि उस रास्तेसे दोनोंमें से किसीको भी फायदा नहीं। लेकिन यह बात तो बिल्कुल साफ है कि कोई भी दल अपना झगड़ा तय करानेके लिए किसी तीसरेको न बुलायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४–१२–१९०९

३४२. भेंट: रायटरके प्रतिनिधिको[1]

[लन्दन
नवम्बर ९, १९०९]

श्री गांधीने रायटर-एजेंसीके प्रतिनिधिके भेंट करनेपर श्री स्मट्सके साथ बातचीत असफल होनेपर निराशा प्रकट की। लॉर्ड क्रू ने ट्रान्सवाल सरकारसे एशियाई प्रश्नपर समझौता करानेके जो प्रयत्न किये, श्री गांधीने उनकी प्रशंसा की; लेकिन उन्होंने कहा कि जो रियायतें दी गई हैं, वे कानूनी समानताके महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तको स्पर्श भी नहीं करतीं।

श्री गांधीने कहा, आशंका यह है कि श्री हाजी हबीब और मैं ट्रान्सवालकी सरहदपर गिरफ्तार कर लिये जायेंगे। लेकिन जिस आन्दोलनसे मेरा सम्बन्ध है वह आन्दोलन भारतमें, ब्रिटेनमें और दक्षिण आफ्रिकामें जोर-शोरसे जारी रखा जायेगा। इन देशोंमें भारतीय और अंग्रेज स्वयंसेवकोंने सहायता और धन प्राप्त करनेके लिए घर-घर घूमनेका कार्यक्रम बनाया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-११-१९०९

३४३. पत्र: एलमर मॉडको

लन्दन,
नवम्बर १०, १९०९

प्रिय श्री मॉड,

मैं 'मैंचेस्टर गार्जियन' को "एक हिन्दूके नाम टॉल्स्टॉयका पत्र" प्रकाशित करनेके लिए राजी नहीं कर सका हूँ। मैं स्वयं ब्रिटिश म्यूजियम नहीं जा सका हूँ, परन्तु मैंने एक मित्रसे कहा था कि वे वैलोज़की पुस्तकें देखें।[2] उनकी पुस्तकें वहाँ हैं।

क्या अब आप कृपापूर्वक मुझे बता सकते हैं कि आप 'अनाक्रामक प्रतिरोध' विषयपर लिखाये गये निबन्धके सम्बन्धमें डॉ० क्लिफर्डके साथ सह-निर्णायकका कार्य कर सकेंगे?

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त हस्तलिखित मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४४३९) से।

१. यह "लन्दनकी खबर" शीर्षकसे प्रकाशित किया गया था।

२. ब्रिटिश म्यूजियमकी पुस्तक-सूचीमें हेनरी बैलोज़ (१७०७-१७८२)की केवल एक पुस्तकका उल्लेख है। उसका नाम है *ए ट्रीटाइज़ ऑफ़ इक्विटी*। इसका प्रथम प्रकाशन १७३७में हुआ था और ब्रिटिश म्यूजियममें १७५६का संस्करण उपलब्ध है।

३४४. पत्र : लॉर्ड ऍम्टहिलको

[लन्दन]
नवम्बर १०, १९०९

लॉर्ड महोदय,

आपके आजके पत्रके लिए मैं बहुत आभारी हूँ। चूँकि आप लॉर्ड-सभाकी अगली बहसमें भेंटकी[1] जानकारीका उपयोग करना चाहते हैं, इसलिए मैं इस बातसे बिल्कुल सहमत हूँ कि उस भेंटका विवरण लॉर्ड क्रू के पास पुष्टिके लिए भेज दिया जाये या. . .।[2]

यह जानकर हर्ष हुआ कि आपके पुत्रके स्वास्थ्यमें सुधार हो रहा है।[3]

आपका, आदि,

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१७२) से।

३४५. पत्र : लिओ टॉल्स्टॉयको

लन्दन
नवम्बर १०, १९०९

प्रिय महोदय,

"एक हिन्दूके नाम पत्र" के सम्बन्धमें और अपने पत्रमें[4] मैंने जिन बातों की चर्चा की थी, उनके सम्बन्धमें आपने जो रजिस्टर्ड पत्र भेजा है, उसके लिए मैं नम्रतापूर्वक आपको धन्यवाद देता हूँ।

आपके गिरते हुए स्वास्थ्यका समाचार सुन चुका था, इसलिए आपको कष्ट न देनेके खयालसे और यह भी जानते हुए कि धन्यवादकी लिखित अभिव्यक्ति केवल अनावश्यक औपचारिकता होगी, मैंने आपको इस पत्रकी प्राप्तिकी सूचना नहीं दी। किन्तु श्री एल्मर मॉडने, जिनसे मेरी भेंट अब हो पाई है, मुझे आश्वस्त किया कि आपका स्वास्थ्य बहुत अच्छा है और पत्र-लेखनका कार्य तो आप प्रतिदिन सुबह निरपवाद रूपसे और नियमपूर्वक करते ही हैं। यह समाचार पाकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ और उससे मुझे उन बातोंके विषयमें, जो मेरे खयालसे आपकी शिक्षाके अनुसार अत्यन्त महत्त्वकी हैं, आपके साथ और अधिक चर्चा करनेका प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है।

१. देखिए "लॉर्ड क्रू के साथ भेंटका सार", पृष्ठ ४०८-११ और परिशिष्ट ३३।

२. यहाँ दफ्तरी प्रतिमें कुछ शब्द मिट गये हैं।

३. लॉर्ड ऍम्टहिलने ७ नवम्बरको गांधीजीको खबर दी थी कि उनका एक बच्चा बीमार हो गया है, और इसलिए उन्होंने अगले दिनके लिए गांधीजीके साथ निश्चित भेंट स्थगित कर दी थी।

४. देखिए "पत्र : लिओ टॉल्स्टॉयको", पृष्ठ ४४३-४५।

इसके साथ मैं आपको अपने जीवनके सम्बन्धमें एक मित्र द्वारा लिखित पुस्तककी[1] एक प्रति भेज रहा हूँ। ये मित्र अंग्रेज हैं और इस समय दक्षिण आफ्रिकामें रह रहे हैं। पुस्तक मेरे जीवनके उस पहलूपर है, जिसका वर्तमान संघर्षसे बहुत गहरा सम्बन्ध है — उस संघर्षसे, जिसे मैंने अपना जीवन समर्पित कर दिया है। चूँकि मैं उसमें आपकी सक्रिय रुचि और सहानुभूतिके लिए आतुर हूँ, मैंने ऐसा माना है कि आपको यह पुस्तक भेज देना अनुचित न होगा।

मेरी रायमें ट्रान्सवालमें भारतीयोंका यह संघर्ष आधुनिक युगका सबसे महान् संघर्ष है। कारण, उसमें साध्य और उस साध्यकी प्राप्तिके लिए स्वीकृत साधन — दोनोंको आदर्श बनानेका प्रयत्न किया गया है। मैं ऐसे किसी दूसरे संघर्षको नहीं जानता जिसमें संघर्ष-कारियोंको संघर्षके अन्तमें कोई वैयक्तिक लाभ न हो और जिसमें उससे प्रभावित व्यक्तियोंमें से ५० प्रतिशतने सिर्फ एक सिद्धान्तके लिए कठिन कष्ट और संकट झेले हों। इस लड़ाईको मैं जितनी प्रसिद्धि देना चाहता था उतनी नहीं दे पाया हूँ। आज आपकी बात पढ़ने और सुननेवालोंकी संख्या दुनियामें कदाचित् सबसे ज्यादा है। यदि आपको श्री डोककी पुस्तकमें दिये गये तथ्योंसे सन्तोष हो और आप यह समझते हों कि मैंने जो परिणाम निकाले हैं वे तथ्योंकी दृष्टिसे उचित ठहरते हैं, तो क्या मैं आपसे, जिस तरह भी आप ठीक समझें इस आन्दोलनको लोकप्रिय बनानेके लिए अपने प्रभावका उपयोग करनेका अनुरोध कर सकता हूँ? यदि यह आन्दोलन सफल होता है तो वह न सिर्फ अधर्म, असत्य और विद्वेषपर धर्म, सत्य और प्रेमकी विजय होगी, बल्कि बहुत सम्भव है कि वह भारतके लाखों-करोड़ों निवासियों और दुनियाके दूसरे हिस्सोंमें बसनेवाले पददलित लोगोंके लिए एक अनुकरणीय उदाहरण होगा और हिंसाकी नीतिमें विश्वास करनेवाले दलोंका बल तोड़नेमें, कमसे-कम भारतमें, तो वह अवश्य ही बहुत सहायक सिद्ध होगा। यदि हम अपने प्रयत्नमें अन्ततक डटे रहते हैं, और मेरा खयाल है कि हम डटे रहेंगे, तो उसकी अन्तिम सफलताके विषयमें मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है; और आपने जो रास्ता सुझाया है, उसमें आपके प्रोत्साहनसे हमारे अपने निश्चयको और अधिक बल मिलेगा।

प्रश्नके समाधानके लिए जो समझौता-वार्ता चल रही थी वह लगभग विफल हो गई है और मैं अपने साथीके साथ इसी सप्ताहमें दक्षिण आफ्रिका चला जाऊँगा; और वहाँ जेल जानेकी कोशिश करूँगा। मैं यह भी बता दूँ कि सौभाग्यसे मेरा लड़का भी इस संघर्षमें मेरा साथ दे रहा है; वह आजकल छः माहकी सख्त कैदकी सजा भोग रहा है। इस संघर्षके दौरान यह उसकी चौथी जेल-यात्रा है।

यदि आप इस पत्रका उत्तर देनेकी कृपा करें तो पत्र बॉक्स ६५/२२, जोहानिसबर्ग, द० आ० के पतेपर भेजें।

आपका, आदि,

मो० क० गांधी

'महात्मा', खण्ड १, में दिये गये मूल अंग्रेजी की और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१७३) से

१. डोक-लिखित गांधीजीकी जीवनी—**एम० के० गांधी: एन इंडियन पेट्रिअट इन साउथ आफ्रिका।**

३४६. पत्र : एच० जस्टको

लन्दन
नवम्बर १०, १९०९

प्रिय श्री जस्ट[1],

सरकारी पत्र, संख्या ३४९२४/१९०९ की याद दिलाते हुए क्या मैं आपको यह कष्ट दे सकता हूँ कि इस पत्रमें मेरे २४ अगस्तके जिस पत्रका[2] उल्लेख है, उसकी एक नकल आप मुझे भेज दें? ऐसा लगता है कि मेरे मुहर्रिरसे उसकी कार्बन-नकल कहीं गुम गई है।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

श्री एच० जस्ट
कलोनियल ऑफ़िस
डाउनिंग स्ट्रीट
[लन्दन]

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स २९१/१४२

३४७. पत्र : उपनिवेश-उपमन्त्रीको

[लन्दन]
नवम्बर १०, १९०९

महोदय,

मैं लॉर्ड क्रू का ध्यान रंगूनसे मिले नीचेके तारकी ओर-सादर आकर्षित करता हूँ :
कल भारी सार्वजनिक सभा हुई। समाजके भारतीय, चीनी, बर्मी सभी वर्ग शामिल। ट्रान्सवाल एशियाई कानूनकी जोरदार निन्दा। जातीय अपमान दूर करने और वहाँ रहनेवाले एशियाइयोंके साथ भविष्यमें दुर्व्यवहार बन्द करनेके लिए साम्राज्य-सरकारसे फौरन दखल देनेपर जोर। मौजूदा शिकायतें दूर होनेतक दक्षिण आफ्रिकाके लिए भारतीय मजदूरोंकी भर्ती बन्द करनेपर भी जोर। ट्रान्सवालवासी एशियाइयोंके रुखकी

१. हार्टमैन जस्ट (१८५४–१९२९); सहायक उपनिवेश-उपमन्त्री, १९०७-१६।
२. देखिए "पत्र : लॉर्ड क्रू के निजी सचिवको", पृष्ठ ३६५।

प्रशंसा करते हुए दूसरे भी प्रस्ताव पास। उनकी जरूरतें पूरी करनेके लिए चन्दा इकट्ठा करनेके लिए समिति बनाई जा रही है। बहुत रोष, उत्साह दिखाया गया।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स, २९१/१४२; और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१७४) से।

३४८. भेंट: 'डेली एक्सप्रेस' के प्रतिनिधिको[1]

[लन्दन
नवम्बर १०, १९०९]

आपत्तिजनक एशियाई कानूनको रद कर देनेकी बात कहकर जनरल स्मट्स एक कदम आगे बढ़े थे। उन्होंने यह भी कहा था कि जहाँतक इस कानूनके अन्तर्गत शिक्षित भारतीयोंके दर्जेका प्रश्न है, वे एक सीमित संख्यामें भारतीयोंको स्थायी निवासके प्रमाणपत्र देनेको तैयार हैं। बात जहाँतक पहुँची है वहाँतक तो सन्तोषजनक है; लेकिन हम जिस एकमात्र सिद्धान्तके लिए लड़ रहे हैं, उसे तो यह स्पर्श भी नहीं करता। वह सिद्धान्त है प्रवासके सम्बन्धमें कानूनी समानताके अधिकारका। जनरल स्मट्स जो-कुछ देनेके लिए तैयार हैं, वह हमारा सत्याग्रह रोकनेके लिए अपर्याप्त है। श्री हाजी हबीब और मैं फौरन ही जोहानिसबर्ग वापस जा रहे हैं। अगला कदम शायद यह होगा कि हम दोनोंको ट्रान्सवालकी सीमापर गिरफ्तार कर लिया जायेगा, लेकिन लड़ाई उसी उत्साहसे चलती रहेगी। अबतक हम लोगोंने भारतसे या दक्षिण आफ्रिकाके बाहरके किसी स्थानसे चन्दा नहीं माँगा। लेकिन अब चन्दा माँगना आवश्यक हो गया है, क्योंकि अब हमारे साधनोंपर बहुत बोझ पड़ रहा है और उन बर्बाद परिवारोंकी संख्या बहुत बढ़ गई है, जिनका भरण-पोषण हमें करना पड़ता है। हमने भारतीय और अंग्रेज स्वयंसेवकोंका एक दल तैयार किया है। यह दल हमारे इस देशसे जाते ही लन्दन और बाहरी प्रान्तोंमें घर-घर जाकर एक स्मरणपत्रके लिए लोगोंसे हस्ताक्षर लेना शुरू कर देगा। यह स्मरणपत्र ट्रान्सवाल और लन्दनके अधिकारियोंके नाम भेजा जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया, १२-११-१९०९

१. भेंटका यह विवरण १०-११-१९०९ के डेली एक्सप्रेसमें छपा था और बादमें इंडियामें उद्धृत किया गया था।

३४९. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

लन्दन
नवम्बर ११, १९०९

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

यद्यपि श्री पोलकके द्वारा मुझे आपका यह कृपापूर्ण सन्देश मिल गया था कि मैं आपको प्रोफेसर कहकर सम्बोधित न करूँ,[1] तथापि मैं आपके प्रति श्रद्धाके कारण इससे ज्यादा अपनेपनकी भाषा न अपना सकूँगा।

अपने पिछले पत्रमें श्री पोलकने मुझे लिखा है कि अधिक काम और चिन्तासे आपका स्वास्थ्य बिगड़ गया है और आपकी स्पष्टवादितासे आपकी जान जोखिममें पड़ गई है।[2] मैं तो यह सुझाव दूंगा कि आप ट्रान्सवाल आ जायें और हमारे साथ काम करें। मेरा दावा है कि ट्रान्सवालका संघर्ष हर अर्थमें राष्ट्रीय है। वह अधिकतम प्रोत्साहनके योग्य है। मैं उसे आधुनिक युगका महानतम संघर्ष मानता हूँ। मुझे इसमें रंचमात्र भी सन्देह नहीं है कि वह अन्तमें सफल होगा। परन्तु यदि यह जल्दी सफल हो जायेगा तो इससे भारतमें हिंसात्मक आन्दोलन समाप्त हो जायेगा।

मैं यहाँ अपने देशवासियोंसे बहुत खुलकर मिला-जुला हूँ और मुझे उनमें आपके प्रति तीव्र कटुता दिखाई देती है। ज्यादातर लोगोंका खयाल यह है कि कोई भी सुधार करवानेके लिए हिंसा एकमात्र उपाय है। हम ट्रान्सवालमें यह दिखानेका प्रयत्न कर रहे हैं कि हिंसा व्यर्थ है और उचित उपाय है स्वयं कष्ट सहना, अर्थात्, अनाक्रामक प्रतिरोध। इसलिए यदि आप सार्वजनिक रूपसे यह घोषणा करके ट्रान्सवाल आयें कि आप हमारे दुःखोंमें भाग लेना और इसलिए साम्राज्यके नागरिककी हैसियतसे ट्रान्सवालकी सीमाको पार करना चाहते हैं तो आपके इस कार्यसे आन्दोलनको विश्वव्यापी महत्त्व मिलेगा, संघर्ष जल्दी समाप्त हो जायेगा और आपके देशवासी आपको और अच्छी तरह जान जायेंगे। सम्भवतः यह पिछली बात आपकी दृष्टिमें महत्त्वपूर्ण न हो, परन्तु उन देशवासियोंकी दृष्टिसे मैं इसे महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। यदि आप यहाँ आयें और आपको पकड़ा न जाये तथा मैं स्वतन्त्र रहूँ तो मैं आपकी सेवा करना अपना बहुत बड़ा सम्मान समझूँगा। यदि आप गिरफ्तार कर लिये जायें और जेल भेज दिये जायें तो मुझे प्रसन्नता होगी। यह मेरी भूल हो सकती है, किन्तु मुझे तो लगता है कि यह एक ऐसा कदम है जो भारतकी खातिर उठाने लायक है। मैं इस बातको बहुत ज्यादा महसूस करता हूँ, इसलिए मुझे यह सुझाव देनेके लिए क्षमा किया

१. पोलकने अपने १० सितम्बरके पत्रमें गांधीजीको सूचित किया था कि श्री गोखले इसे "बहुत औपचारिक" मानते हैं, और वे और आप एक दूसरेको इतनी अच्छी तरह जानते हैं कि इन औपचारिकताओंकी कोई जरूरत नहीं है।"

२. पोलकने १४ अक्तूबरको लिखा था: "आप देखेंगे कि बेचारे गोखलेको कितनी तकलीफ सहनी पड़ती है। उन्होंने मुझे (गुप्त रूपसे) बताया है कि उन्हें गवर्नरने बुलाया और चेतावनी दी है कि उनकी जिन्दगी खतरेमें है।"

जाये कि ट्रान्सवालके प्रश्नको कांग्रेसके मंचपर प्रमुख स्थान दिया जाना चाहिए, और आप इस संघर्षमें भाग लेनेकी घोषणा कर देंगे तो इससे अधिक प्रभावशाली अन्य कोई बात नहीं हो सकती।

मैंने यह पत्र विघ्न-बाधाओंके बीच लिखा है। इसलिए जो मैं चाहता था वह सब यहाँ स्पष्ट नहीं कर सका हूँ। मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि आपके प्रति श्रद्धाके कारण ही मुझे यह सुझाव देनेकी प्रेरणा मिली है। मैं आपको दक्षिण आफ्रिकामें अपने देशवासियोंके बीचमें पूर्णता प्राप्त करते हुए देखना चाहता हूँ। यहाँ आपके सम्बन्धमें कोई भ्रम नहीं होगा और आपका इतना मान होगा जितना और कहीं नहीं हो सकता।

क्या आप मुझे जोहानिसबर्ग, बॉक्स ६५२२ के पतेपर उत्तर देनेकी कृपा करेंगे?

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९२४) से।
सौजन्य: सर्वेंट्स ऑफ़ इंडिया सोसाइटी, पूना ।

३५०. पत्र: एच० एस० एल० पोलकको

[लन्दन]
नवम्बर ११, १९०९

प्रिय हेनरी,

मैं आपको एक बहुत लम्बा पत्र लिखना चाहता हूँ, परन्तु समझमें नहीं आता कि कैसे लिखूँ। मुझे आपको बहुत-सी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बातें बतानी हैं, परन्तु मेरे पास जो समय है उसमें मैं वह सब अच्छी तरह नहीं कह सकता। फिर भी पहली बात जिसकी मैं चर्चा करना चाहता हूँ, मॉडकी स्थिति है। मैंने उससे केवल एक बार, हँसीमें कहा था कि क्या वह दक्षिण आफ्रिका जाना चाहती है और वह हँसी हाजी हबीबकी एक बातपर की गई थी; परन्तु स्पष्टतः उसने इस सम्बन्धमें बहुत गम्भीरतापूर्वक विचार किया है। कल शाम वह अपने-आपको रोक न सकी और उसने मुझे बताया कि वह दक्षिण आफ्रिका जाने और आन्दोलनके निमित्त कार्य करनेके लिए बहुत व्याकुल है। इससे मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। फिर भी यह बिलकुल सत्य नहीं है, क्योंकि मुझे थोड़ा अचम्भा तो हुआ ही। कारण, मुझे कुछ ऐसा लगता रहा है कि वह जिस स्थानपर है वहाँ स्थायी रूपसे जमी है। यह नहीं कि वह स्थान मुझे जरा भी प्रिय है, किन्तु वर्तमान स्थितियोंमें वह मुझे सर्वोत्तम प्रतीत हुआ है। उसका स्वभाव बहुत मधुर है। मेरा खयाल है कि उसमें महान आत्मत्यागकी क्षमता है और वह कार्य करनेके लिए इच्छुक है; परन्तु मैं नहीं जानता कि फीनिक्सका जीवन उसको कहाँतक अनुकूल पड़ेगा। मेरा खुदका यह खयाल है कि यदि वह केवल अपनी जीविका अर्जित करनेके लिए दक्षिण आफ्रिका जाना चाहती है तो इसका कुछ लाभ नहीं होगा। परन्तु यदि वह एक आदर्शके लिए कार्य करना चाहती है तो उसमें इसके लिए

सामर्थ्य और साहस होना चाहिए। मैंने उसको स्थितिके सम्बन्धमें, जो मैं बता सकता था, वह सब बता दिया है। मैंने उसको वहाँ प्रतिकूल पड़नेवाली सारी बातें, जितनी अच्छी तरह मैं बता सकता था, उतनी अच्छी तरह बता दी हैं। मैंने उसको यह भी कह दिया है कि उस कार्यमें आर्थिक-लाभ नहीं है। इसके अतिरिक्त मैंने उसे बताया कि स्वयं मिलीको फीनिक्सके जीवनसे मेल बैठानेमें कठिनाई होती है। मैं उसे जितनी जानकारी दे सकता था उतनी-उसको मिल गई है। मैंने उसको यह भी बताया है कि मैं कोई निश्चित सम्मति देनेकी स्थितिमें नहीं हूँ। उसे सबसे पहले पिताजी और माताजीकी अनुमति प्राप्त करनी चाहिए और फिर सैलीकी। जब उसे इन तीनोंकी अनुमति मिल जाये तब उसे अपनी स्थिति आपके सामने रखनी चाहिए और अन्ततः उसे मिलीकी सलाहपर निर्भर करना चाहिए। मैंने उससे यह भी कह दिया है कि मेरे दृष्टिकोणका वह कितना ही सम्मान करे और उसे कितना ही पसन्द करे, फिर भी मैं अपने-आपको एक स्त्रीकी समस्त भावनाओंको समझनेके अयोग्य समझता हूँ और जब उसको मिलीकी प्रेमपूर्ण सहायता, और सलाह मिल सकती है तब वह मिलीके निर्णयपर निर्भर रहनेसे अधिक अच्छा और कुछ नहीं हो सकता। उसने मुझे कहा है कि वह घरको प्रति मास ४ पौंड भेजनेकी गुंजाइश चाहती है। मैंने उसको कहा है कि यह असम्भव नहीं है; परन्तु मुख्य विचारणीय बात यह है कि वह फीनिक्सके जीवनको ठीक-ठीक समझ और पसन्द कर सकेगी या नहीं। मैंने उससे यह भी कहा है कि ऐसा कोई निश्चित कार्य नहीं है जो उसे सौंपा जा सके। फीनिक्समें उन गृहकार्योंसे लेकर, जिन्हें छोटेसे-छोटा समझा जाता है, बच्चोंको पढ़ाने और उनके चरित्रका निर्माण करनेतक कुछ भी काम हो सकता है। अब मेरा खयाल है कि मैंने आपको सब-कुछ बता दिया है। वह आपको पूरी-पूरी बातें लिखेगी। आप उसे मेरी अपेक्षा अधिक अच्छी तरह जानते हैं और उसके नैतिक कल्याणके लिए जो मार्ग सर्वोत्तम समझते हैं उसे उसको दिखा सकेंगे। कुछ अन्य घरेलू मामलोंके सम्बन्धमें मैं आपके साथ विचार-विमर्श करना चाहता हूँ। अगर मदीरा पहुँचने तक अवकाश न मिला, तो आपको प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। परन्तु मेरी समुद्र-यात्राका कार्यक्रम इतना व्यस्त है कि उन घरेलू मामलोंपर, जो तात्कालिक महत्त्वके नहीं हैं, सम्भवतः विचार न कर पाऊँगा। मॉड आपको बहुत विस्तारसे लिख रही है और उसने अपना पत्र मुझे दिखानेका वचन दिया है। और यदि उस पत्रको पढ़नेके बाद मुझे कुछ और सुझाव देने होंगे तो मैं फिर लिखूंगा। मिली वेस्टक्लिफसे यहाँ शुक्रवारको आयेंगी और मैं इस सम्बन्धमें उनसे और यदि माताजी और पिताजीसे मिलनेका अवसर मिला तो उनसे भी भली भाँति विचार-विमर्श करूँगा। मिली होटलमें सोयेंगी, इसलिए आशा करता हूँ कि मैं उसके साथ इतमीनानसे लम्बी बातचीत कर पाऊँगा। स्वभावतः अब हम जोहानिसबर्गकी अपेक्षा, जहाँ मैं उनसे अलग बहुत कम मिलता था, एक-दूसरेके बहुत करीब हैं; क्योंकि एक-दूसरेसे ज्यादा मिल पाये हैं। वाल्डो और ब्राउनी बहुत ही अच्छे दिखते हैं। मेरी अब भी यह राय है कि सुन्दरतामें वाल्डोकी बराबरी करना असम्भव नहीं, तो कठिन अवश्य है। वह दिनपर-दिन अधिकाधिक हठी होता जा रहा है। वह निश्चय ही बहुत मनमौजी है और आपको यह जान कर प्रसन्नता होगी कि उसको सिमंड्सके साथमें पूरा आनंद मिलता है। सैली मेरे पास बैठी हुई है। उसने मुझे याद दिलाया है कि मैं आपको ब्राउनीके सम्बन्धमें कुछ बताये बिना यह पत्र समाप्त न करूँ। उसकी ऊपरी कुरूपता मिट रही है और वह अब बोलने लगा है, य समाचार तो पुराने हो गये हैं। परन्तु कदाचित् आपको यह

मालूम नहीं है कि पहला नाम, जिसे उसने बोलना सीखा, सैलीका था। सैली अपने कार्यालयमें शायद अच्छी कार्यकत्री होगी। वह एक आदरणीय महिला मताधिकार-आन्दोलनकर्त्री होनेका दावा करती है और किसीसे सिर्फ इस बातसे हार नहीं खा सकती कि वह पुरुष है। मैं उसे निश्चय ही प्रमाणपत्र दे सकता हूँ कि जब वह वाल्डो और ब्राउनीके साथ होती है तब उसके गुण ज्यादासे-ज्यादा खिल जाते हैं। जब भी कोई ऐसी स्त्री मिले जो बच्चोंके प्रति उत्तम व्यवहार करती है तब आप जानते ही हैं, उसके बारेमें मेरी सम्मति कितनी अच्छी होती है।

इस पत्रको लिखानेके बाद मेरी सैलीसे भेंट हो गई है। कल्पना तो कीजिए, सैली कह रही है कि वह भी फीनिक्स जानेके लिए उत्सुक है और उसको वह जीवन बिल्कुल पसन्द है। मैं सोचता हूँ कि क्या सादगीकी छूत (?) सारे परिवारको लगी हुई है और क्या उसको पूर्ण रूपसे प्रकट करनेके लिए ज़रा-से सहारेकी ही आवश्यकता है? वह कहती है कि उसने ही मॉडको बाहर जानेकी बात सुझाई थी; परन्तु उसका यह भी कहना है कि वह अपने माँ-बापको छोड़ना नहीं चाहती। इसलिए वह स्वीकार करती है कि उनमें से किसी-न-किसीको घर रहना चाहिए। मैं नहीं जानता कि इस सबसे क्या समझा जाये। मुझे लगता है कि उसके इस उत्साहका कारण बहुत-कुछ मैं ही हूँ। मैंने सादगीकी सुन्दरता आदिका बखान ऐसी भावपूर्ण भाषामें किया कि उसने फीनिक्सकी कल्पना स्वर्गके रूपमें कर ली है। सिमंड्सने मुझे सावधान किया कि मैं जल्दबाजीमें कोई सलाह न दूँ और न कोई कदम उठाऊँ। मैं उसकी चेतावनीके लिए बहुत आभारी हूँ, इसलिए इसकी चर्चा आपसे कर रहा हूँ। मेरा इरादा इन लड़कियोंको एकदम कूद पड़नेकी सलाह देनेका नहीं है।

जैसा कि मैंने एक दूसरे पत्रमें लिखा था, मैं बहुत विस्तारसे लिखना चाहता था और फिर भी यह पत्र रातके १ बजेके बाद लिखवा रहा हूँ और शनिवारसे पहले बहुत-से छोटे-मोटे काम निपटाने हैं।

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१७५) से।

३५१. पत्र: उपनिवेश-उपमन्त्रीको

[लन्दन]
नवम्बर ११, १९०९

महोदय,

मुझे आपका इसी ९ तारीखका पत्र पानेका सम्मान प्राप्त हुआ। पत्रके साथ आपने ब्रिटिश भारतीय कैदियोंके साथ किये जानेवाले व्यवहारके बारेमें ट्रान्सवालके गवर्नरके खरीतेकी नकल और ट्रान्सवालके मन्त्रियोंकी रिपोर्ट भेजी है।

मैं देखता हूँ, प्रधान मन्त्रीके प्रिटोरिया-स्थित दफ्तरसे डिपुटी गवर्नरको भेजी गई रिपोर्टमें कहा गया है कि जो भी शिकायतें की गई हैं वे बिल्कुल गलत हैं। लेकिन मैं लॉर्ड महोदयके सामने विचारके लिए यह तथ्य पेश करता हूँ कि मुझे जो शिकायतें मिली हैं और जो मैंने

उपनिवेश-कार्यालयको भेजी हैं, उनमें से अधिकांश, ट्रान्सवालकी विभिन्न जेलोंमें मैंने स्वयं जो-कुछ देखा है, उसके आधारपर सच मालूम होती हैं।

स्वर्गीय नागप्पनकी मृत्युके सम्बन्धमें मजिस्ट्रेटके जाँचके परिणामपर भारतीय समाजने और श्री हॉस्केनकी अध्यक्षतामें नियुक्त यूरोपीय-समितिने आपत्ति की है।[1] इस घटनाके सम्बन्धमें फिर जाँच करनेकी माँग की गई थी; लेकिन वह नामंजूर कर दी गई।[2] इसके अलावा, मैं लॉर्ड महोदयका ध्यान इस ओर भी आकर्षित करना चाहता हूँ कि मृत व्यक्तिको चावल न दिया जानेका आरोप सही मान लिया गया है। उसके पास दो कम्बल थे या नहीं, मजिस्ट्रेटने इस प्रश्नपर कोई निर्णय नहीं दिया है। मृत व्यक्ति जोहानिसवर्गसे कड़ी सर्दीमें कैम्प जेलमें ले जाया गया था और उससे कड़ा काम कराया गया था, ये बातें निर्विवाद हैं।

खुराकके बारेमें लॉर्ड महोदयको जोहानिसबर्गके स्वतन्त्र डॉक्टरोंकी विस्तृत रिपोर्ट मिल ही चुकी है जिससे यह सिद्ध होता है कि वर्तमान खुराक काफी नहीं है।

कैदी मुहम्मद खाँके बारेमें मैं अपने १६ अगस्तके पत्रमें[3] कह ही चुका हूँ कि उसमें कुछ अतिशयोक्ति हो सकती है। लेकिन सम्बन्धित अधिकारी शिकायतोंको सच नहीं मानते, यह कोई जवाब नहीं है। मैं विश्वास करता हूँ, आप मुझे यह कहनेके लिए क्षमा करेंगे। सरकार चाहती तो मुहम्मद खाँसे कह सकती थी कि वह या तो अपनी बातकी सचाई साबित करे या अपनी शिकायतको वापस ले ले। वह ऐसा अब भी कर सकती है।

इसके बाद दूसरी घटनाएँ हुई हैं। भारतीय कैदियोंको धार्मिक सन्तोष प्राप्त करनेकी और रमजानके पवित्र महीनेमें मुसलमानोंको रोजे रखनेकी सहूलियत देनेसे इनकार कर दिया गया है। इससे यह कथन तो सत्य सिद्ध नहीं होता कि भारतीय कैदियोंसे दयाका बरताव किया जाता है और जेल अधिकारी, अनाक्रामक प्रतिरोधी होनेके कारण ही, उनके साथ सख्ती बरतना नहीं चाहते।

१. ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यवाहक अध्यक्ष ई० आई० अस्वातने ६ अगस्तको **रैंड डेली मेल**को एक पत्र लिखा था और उसमें कमिश्नरके निर्णयपर आश्चर्य व्यक्त किया था। उन्होंने यह भी महसूस किया था कि कुछ लोगोंकी गवाहीको महत्त्व नहीं दिया गया। उपनिवेश-मन्त्रीको ३० सितम्बर १९०९को प्रिटोरिया-स्थित ब्रिटिश भारतीय समितिका एक पत्र मिला था जिसमें कहा गया था कि सरकारसे इस मामलेमें फिरसे जाँच करनेका अनुरोध किया गया है। कलोनियल ऑफिसके अधिकारीने १ अक्तूबरके कार्य-विवरणमें लिखा था: "मुझे लगता है, यह बात बुरी है। नागप्पनकी मृत्युकी सरकारी जाँच बिल्कुल लीपापोती है, और इसलिए स्वभावतः मन्त्रियोंने उसे स्वीकार कर लिया है।... लेकिन, यह साफ जाहिर है कि गवाहीसे आयोगके निष्कर्षों की पुष्टि नहीं होती...।"

२. यूरोपीय समितिने ट्रान्सवालके कार्यवाहक गवर्नर लॉर्ड मेथुएनसे अपील की थी। लेकिन उन्होंने अपने मन्त्रियोंकी सलाहसे दुबारा जाँच करनेकी आज्ञा देनेसे इनकार कर दिया।

३. देखिए "पत्र: लॉर्ड क्रूके निजी सचिवको", पृष्ठ ३५७।

भारतीय कैदी शायद अब हमेशा अलग कोठरियोंमें बन्द किये जाते हों; लेकिन मैं यह जानता हूँ कि मई महीने तक वे वतनी कैदियोंकी कोठरियोंमें उनके साथ ही बन्द किये जाते थे।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स २९१/१४२; और टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१७७) से।

३५२. पत्र : 'डेली टेलीग्राफ' को

[लन्दन]
नवम्बर ११, १९०९

सम्पादक
'डेली टेलीग्राफ'

प्रिय महोदय,

आप मुझसे मिलनेके लिए थोड़ा-सा समय भी नहीं निकाल सके, इसका मुझे खेद है। मुझे यह सन्देश मिला है कि मैं अपनी बात आपको लिखकर भेज दूँ। ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके प्रश्नके सम्बन्धमें अखबारोंको एक विवरण भेजा गया था।[1] अबतककी पूरी स्थिति उस विवरणमें दी गई है। मुझे आशा है कि उसकी प्रति आपने देखी होगी। ट्रान्सवालके भारतीयोंका प्रश्न कितना गम्भीर है, यह मैं व्यक्तिगत रूपमें मिलकर आपको बताना चाहता था। आप पूरक विवरणसे देखेंगे कि अब प्रश्न ट्रान्सवालको एशियाइयोंकी बाढ़से बचानेका नहीं है। अब साफ और सीधा प्रश्न यह रह गया है कि सुसंस्कृत ब्रिटिश भारतीय यूरोपीय प्रवासियोंके बराबर ट्रान्सवालमें प्रवेशका हक पा सकते हैं या नहीं। उस कानूनके बननेसे पहले, जिसके विरुद्ध सत्याग्रह किया गया है, उन्हें यूरोपीय प्रवासियोंके समान अधिकार था और दूसरे ब्रिटिश उपनिवेशोंमें अब भी प्राप्त है। श्री चेम्बरलेनका कहना है कि भारतके करोड़ों लोगोंका यह "अपमान" उपनिवेशीय कानूनके इतिहासमें पहली बार किया गया है। इसीलिए मेरा खयाल है कि हमें ब्रिटेनके अखबारोंसे समर्थनकी आशा करनेका हक है। मैं आशा करता हूँ कि आप, जैसे बने वैसे, हमारे आन्दोलनका उचित प्रचार करेंगे और उसका समर्थन करनेकी कृपा करेंगे। यह भी स्मरणीय है कि ट्रान्सवालके करीब-करीब पचास प्रतिशत भारतीय जेल जा चुके हैं। एक युवक भारतीय[2] निमोनियासे मर भी चुका है। उसे जेलमें ही निमोनिया हुआ था, यह बात गवाहोंकी साक्षीसे सिद्ध हो चुकी है।

आपका, आदि,

टाइप की हुई अंग्रेजी दफ्तरी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१७६) से।

१. देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २८७–३०० और "पत्र : अखबारोंको", पृष्ठ ५२०–२२

२. स्वामी नागप्पन; देखिए "ट्रान्सवालवासी भारतीयोंके मामलेका विवरण", पृष्ठ २९८।

३५३. पत्र : उपनिवेश-उपमन्त्रीको

[लन्दन]
नवम्बर १२, १९०९

महोदय,

मुझे आपका इसी ९ तारीखका पत्र पानेका सम्मान प्राप्त हुआ। श्री पोलकके तारमें जो-कुछ बताया गया है, परिस्थितियोंकी उससे अधिक जानकारी मुझे नहीं है। परन्तु मुझे श्री चुन्नीलाल पानाचन्दके निर्वासनकी जानकारी है। वे अंग्रेजी जानते हैं, इसलिए नेटाल तथा केप कालोनीमें प्रवेश करनेके अधिकारी हैं। साथ ही वे डेलागोआ-बेके अधिवासी भी हैं। फिर भी वे निर्वासित करके भारतको भेज दिये गये हैं। उनका मामला काफी प्रसिद्ध है।

मैंने स्वयं एक दूसरे मामलेमें पैरवी की थी। यह मामला श्री शेलतका था।[1] अगर उन्होंने मुझे खबर न दी होती और मैंने मामला ठीक करानेके लिए मजिस्ट्रेटके सामने पैरवी न की होती तो वे भारतको निर्वासित कर दिये गये होते। इस तरहके बहुत-से मामले निश्चय ही पेश किये जा सकते हैं। कानूनके निर्वासन-सम्बन्धी खण्डसे बहुत कष्ट होता है, यह उस खण्डके अमलका मुझे जो अनुभव है उसके आधारपर भली-भाँति सिद्ध किया जा सकता है।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

टाइप की हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१७८) और कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स; २९१/१४२ से।

३५४. पत्र : भारतीय अखबारोंको[2]

[लन्दन
नवम्बर १२, १९०९]

महोदय,

मेरे साथी श्री हाजी हबीबने और मैंने ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके संघर्षके बारेमें एक विवरण निकाला है। मुझे भरोसा है, आप उसका अधिकसे-अधिक प्रचार करेंगे। यह भीषण संघर्ष चल तो रहा है ट्रान्सवालमें, लेकिन इस तथ्यको कोई भी बहुत आसानीसे देख सकता है कि यह मामला पूरे भारतके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। ट्रान्सवालकी सरकारने यह बात बिलकुल साफ कर दी है, सो इस तरह कि उसने जोरदार शब्दोंमें यह घोषित

१. देखिये "नायडू और अन्य लोगोंका मुकदमा, पृष्ठ २५१–५२ और "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी" पृष्ठ २६४।
२. यह "ट्रान्सवालमें भारतीयोंका संघर्ष" शीर्षकसे छपा था; देखिए "पत्र : अखबारोंको", पृष्ठ ५२०–२४।

कर दिया है कि हम जिस सिद्धान्तके लिए लड़ रहे हैं, सरकार उसके बारेमें हमारी माँग माननेके लिए तैयार नहीं है, यद्यपि उस सिद्धान्तको मान लेनेपर मिलनेवाले हक वह हमें दे देगी। अतः, यह संघर्ष चलता रहेगा। हम जिस सिद्धान्तके लिए लड़ रहे हैं, उसकी उससे अधिक अच्छी और कोई व्याख्या नहीं हो सकती जो स्वयं ट्रान्सवाल सरकारने की है। लॉर्ड क्रू ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय शिष्टमण्डलको भेजे गये अपने जवाबमें कहते हैं:

> **लॉर्ड महोदयने आपको बता दिया था कि भारतीयोंको प्रवेशके अधिकारके या दूसरी बातोंके सम्बन्धमें यूरोपीयोंकी बराबरी की स्थितिमें रखा जाना चाहिए — श्री स्मट्स आपकी इस माँगको मंजूर करनेमें असमर्थ हैं।**[1]

"या दूसरी बातोंके सम्बन्धमें" — इस वाक्यांशपर विचार करनेकी बात तो फिलहाल छोड़ी जा सकती है। हमने जो-कुछ माँगा है, वह इतना ही है कि हमें प्रवेशके मामलेमें कानूनी तौरपर यूरोपीयोंके बराबर हक दिया जाये। स्मरण रहे कि आज हम इस बराबरीके हककी बहालीके लिए लड़ रहे हैं। यह हक इस कानूनके पास होनेतक — बोअरोंके शासनमें और अंग्रेजोंका कब्जा होनेके बाद भी, अर्थात्, सन् १९०६ के अन्ततक — हमें हासिल था। जो सिद्धान्त ट्रान्सवाल-सरकारने स्थापित किया है और साम्राज्य-सरकारने जिसपर स्वीकृति दी है, उस सिद्धान्तसे साम्राज्यकी जड़पर ही कुठाराघात होता है। लॉर्ड ऍम्टहिल, जिन्होंने इस कार्यको अपना कार्य बना लिया है, कहते हैं[1]:

> **यह मामला हमारे प्रजातीय सम्मानको ठेस पहुँचानेवाला है, और सारे साम्राज्यकी एकताको प्रभावित करता है; इसलिए इसका सम्बन्ध साम्राज्यके हर हिस्सेसे है। इसके अलावा, यह निश्चित है कि अगर साम्राज्यके इस केन्द्र-स्थलमें सिद्धान्तको छोड़कर चलनेकी किसी भी बातको स्वीकार किया गया या उसकी उपेक्षाकी गई तो उससे बाहर भी और भीतर भी दूसरे स्थानोंके लिए एक बुरी मिसाल कायम होती है, और तब सारी व्यवस्थाको कोई बड़ा आघात लगनेके बाद ही इस नैतिक पतनको रोकना सम्भव होगा।**

लॉर्ड महोदय आगे फिर कहते हैं:

> **किसी सिद्धान्तमें अमल करते वक्त देश और कालकी जरूरतके मुताबिक फेरफार किया जा सकता है; लेकिन अगर सिद्धान्तको ही उठाकर ताकपर रख दें तो अमल-पर नियन्त्रण रखनेका कोई साधन नहीं रह जाता।**

हमारी जो स्थिति है, उसे मैं इससे अधिक स्पष्ट शब्दोंमें नहीं कह सकता। अगर ट्रान्सवाल सरकारका सिद्धान्त सही है तो भारतकी जनता साम्राज्यमें साझेदार नहीं रह जाती; और इसी खतरनाक, अनैतिक और घातक सिद्धान्तका विरोध करनेके लिए हम ट्रान्सवालमें लड़ रहे हैं। भारतीय, जिनमें आंग्ल-भारतीय भी शामिल हैं, इस राष्ट्रीय संघर्ष-में कैसे मदद दे सकते हैं? स्मरण रहे कि हम इसके निराकरणके लिए सक्रिय कदम भी उठा चुके हैं; अर्थात् हम जिस कानूनको अपनी अन्तरात्माके और, धर्म शब्दका उत्कृष्ट

१. डोक-कृत गांधीजीकी जीवनीकी प्रस्तावना लॉर्ड ऍम्टहिलने लिखी थी। ये अनुच्छेद उसीसे लिये गये हैं। देखिए परिशिष्ट १८ भी।

अर्थ लें तो, धर्मके भी विरुद्ध समझते हैं, उस कानूनको माननेसे इनकार करके स्वयं कष्ट झेल रहे हैं। सभी वर्गोंके सैकड़ों भारतीय, जो वैसे अशिक्षित हैं, अपने आदर्शकी रक्षाके लिए जेल गये हैं। क्या भारत उनकी रक्षा न करेगा? क्या वह इस मामलेको अधिकतम महत्त्व न देगा? क्या कांग्रेस इसे अपने कार्यक्रममें सबसे ऊँचा स्थान देगी? क्या सुधारके बाद गठित विधान-परिषद इस समस्याको हल करनेका दायित्व लेकर अपने अधिकार और सम्मानकी रक्षा करेगी? यह सब हो या न हो, अन्तमें मैं भारतके लोगोंको यह आश्वासन दिलानेकी धृष्टता करता हूँ कि जबतक एक भी सत्याग्रही जीवित है, ट्रान्सवालमें यह संघर्ष जारी रहेगा। ट्रान्सवालके भारतीय जो लड़ाई लड़ रहे हैं, वह हर सत्याग्रहीके मर जानेपर भी खत्म हो सकती है, इसमें मुझे बहुत सन्देह है।

आपका, आदि,

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

गुजराती, ५-१२-१९०९

३५५. भाषण : बिदाई-सभामें

[लन्दन

नवम्बर १२, १९०९]

श्री गांधीने श्री मायरको सभाका आयोजन करने और उन्हें तथा उनके साथीको ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी कठिनाइयोंका विवरण पेश करनेका मौका देनेके लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा, हम लोग ट्रान्सवालमें जो-कुछ कर रहे हैं उसके सम्बन्धमें श्री मायरकी दी हुई चेतावनी बहुत उचित है।[2] हम इंग्लैंडकी जनताके पास इसलिए नहीं आये हैं कि इस

१. गांधीजी और हाजी हबीबके दक्षिण आफ्रिका रवाना होनेके पहले उन्हें विदाई देनेके लिए वेस्ट मिंस्टर पैलेस होटलमें एक सभा हुई थी। अन्यान्य व्यक्तियोंके सिवा इस सभामें डॉ० रदरफोर्ड, संसद-सदस्य, सर रेमंड वेस्ट, सर फ्रेडरिक लेली, सर मंचरजी भावनगरी, जे० एम० परीख, माननीय श्री खरे, मोतीलाल नेहरू और एल० डब्ल्यू० रिच भी थे। सभाके संयोजक रेवरेंड एफ० बी० मायरने गांधीजी और हाजी हबीबका परिचय कराया। गांधीजीके अलावा श्री रेमंड वेस्ट और सर फ्रेडरिक लेलीने भी सभामें भाषण दिये थे। यह अंश **इंडियन ओपिनियन**में प्रकाशित सभाकी रिपोर्टसे लिया गया है।

२. रेवरेंड मायरने कहा था: "यहाँ जो लोग आये हैं, उनकी उपस्थितिका यह अर्थ नहीं है कि अपनी लम्बी और कठिन लड़ाईमें श्री गांधीने जो-कुछ भी कहा है या किया है, हम उसका पूरा-पूरा समर्थन करते हैं। आदमी गलतियाँ न करे तो वह कुछ कर ही नहीं सकता। ऐसा कोई आदमी नहीं है जिसे अपनी कही हुई किसी बातपर या किये हुए किसी कार्यपर बादमें पछतावा न हुआ हो और ऐसा न लगा हो कि उस बातको ज्यादा अच्छी तरह कहा जा सकता था या उस कार्यको ज्यादा अच्छी तरह किया जा सकता था। लेकिन उनकी उपस्थिति यह बताती है कि वे विशुद्धतामें बेजोड़ और अत्यन्त निःस्वार्थ भावसे चलाये जानेवाले उस संघर्षका अनुमोदन करते हैं। मेरा यह भी खयाल है कि हम यहाँ उन बहुसंख्यक लोगोंका, जो इस संघर्षको बड़ी दिलचस्पीसे देख रहे हैं और जो यह अनुभव करते हैं कि उन्हें इस संघर्षमें अपने प्रभावका योगदान अवश्य करना चाहिए, प्रतिनिधित्व करते हैं।"

संघर्षमें हमने जो भी किया है, आप उस सबको अपनी स्वीकृति दे दें; हम तो आपके पास इसलिए आये हैं कि हम जिस संघर्षमें लगे हुए, उसमें आपका प्रोत्साहन, सहानुभूति और प्रेरणा प्राप्त हो। मैं आपका ध्यान चन्द मिनटों तक जिस सवालपर एकाग्र करना चाहता हूँ, वह सवाल, मेरी नम्र रायमें, न सिर्फ ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके लिए — जो यह संघर्ष चला रहे हैं — बल्कि सारे ब्रिटिश साम्राज्यके लिए गम्भीर महत्त्वका सवाल है। यह बात बिलकुल सही है कि इस संघर्षके सम्बन्धमें [सरकारकी ओरसे] समझौतेका एक प्रस्ताव हमारे पास आया था और श्री मायरने यह कहकर स्थितिको आपके सामने बिलकुल सही तौरपर रख दिया है कि हमने उस प्रस्तावको इसलिए नामंजूर कर दिया कि उसमें उस सिद्धान्तको स्वीकार नहीं किया गया था, जिसके लिए हम लड़ रहे हैं। दक्षिण आफ्रिकामें लगभग १५०,००० ब्रिटिश भारतीय हैं, जो वहाँ यदि ज्यादा नहीं तो लगातार ४० वर्षोंसे बसे हुए हैं। [दक्षिण आफ्रिकामें] ब्रिटिश भारतीयोंके प्रवेशका आरम्भ नेटालमें गिरमिटिया मजदूरोंकी प्रथासे हुआ। इसके बाद मुक्त ब्रिटिश भारतीय आये, जिन्होंने अपनी यात्राका खर्च खुद उठाया। इन मुक्त ब्रिटिश भारतीयोंके कारण ही व्यापारके क्षेत्रमें उनके प्रतिद्वंद्वियोंके मनमें व्यापारिक ईर्ष्याका भाव जगा। दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंकी मौजूदा समस्याका मूल यही है। उस देशमें उनकी स्थिति बहुत कठिन और नाजुक है। वह बहुत ही ज्यादा अनिश्चित भी है। नेटाल, केप, ऑरेंज फ्री स्टेट और ट्रान्सवालमें ऐसे [कितने ही] कानून हैं, जिनसे उनकी भावनाओंको, उनके आत्मसम्मानको चोट पहुँचती है और जिनसे ईमानदारीसे अपनी जीविका कमानेके उनके अनेक रास्ते बन्द हो जाते हैं। खासकर ट्रान्सवालमें तो परिस्थिति बहुत ही उग्र हो गई है। युद्धके पहले हालत यह थी कि वे भू-सम्पत्ति रख ही नहीं सकते थे। उन्हें नागरिकोंके अधिकार नहीं थे, यह कहनेकी तो आवश्यकता ही नहीं है। वे सिर्फ बस्तियों [लोकेशन्स] में रह सकते थे। उन्हें पैदल पटरियोंपर चलने और ट्राम-गाड़ियोंमें बैठनेकी मनाही थी। बस्तियोंमें ही रहनेकी कठिनाई तो अब दूर हो गई है, यद्यपि इसका कारण सरकारका सद्भाव नहीं, बल्कि यह है कि वहाँके तत्सम्बन्धी कानूनोंमें बादमें त्रुटि पाई गई। आप देख सकेंगे कि दूसरे सारे प्रतिबन्धोंसे ट्रान्सवालमें और सारे दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिपर कितना गहरा असर पड़ता है। अभी हालतक, यानी सन् १९०६ तक, हम लोग इन सारे प्रतिबन्धोंको सहते रहे। हमें निषेधोंसे उत्पन्न ये सारी कठिनाइयाँ भोगनी पड़ती थीं। हमने सरकारको अर्जियाँ भेजीं। हम ब्रिटिश एजेंटके पास पहुँचे। मेरे मित्र और सह-प्रतिनिधि श्री हाजी हबीब आपको बता सकते हैं कि एक प्रतिष्ठित व्यापारीके रूपमें प्रिटोरियाके अपने निवासकालमें, युद्धके पहले, राहतके लिए, वे ब्रिटिश एजेंटके पास कितनी ही बार गये होंगे, लेकिन उन्हें लगभग कुछ नहीं मिला। फिर भी संकटके समय ब्रिटिश एजेंटका हमें सहारा था। वह हमें सहानुभूति देता था और कभी-कभी कुछ अंशमें हमारी शिकायतें भी दूर कर देता था। [ऐसी स्थिति थी,] किन्तु ब्रिटिश भारतीयोंको तबतक ऐसा नहीं लगा था कि उन्हें वे जो-कुछ कर रहे हैं, उससे आगे बढ़कर कोई कदम उठाना चाहिए। लेकिन जब १९०६ में वह कानून पास हुआ है, जिसके सम्बन्धमें आपको बता रहा हूँ, तब मुझे लगा

कि हमें नीचा गिराने और दक्षिण आफ्रिकासे निर्वासित करनेके लिए जो प्रयत्न किये जा रहे हैं यह उनकी हद है। यह कानून, जैसा कि मैंने अन्यत्र कहा है, अविश्वासकी सन्तान है, इसका जन्म गुनाहके वातावरणमें हुआ और पालन-पोषण अहंकार और उद्धतताके वातावरणमें। यह कानून जिस समय आया उस समय मेरे समाजपर तरह-तरहके आरोप लगाये गये थे। ये सारे आरोप बादमें निराधार सिद्ध हुए। यह कानून हमारी अन्तरात्मापर किया गया प्रहार है और मैं तो कहूँगा कि धर्म शब्दके गम्भीरतम और उच्चतम अर्थमें वह हमारे धर्मपर किया गया प्रहार भी है, क्योंकि वह हमसे हमारा मानवीय गौरव छीनता है। हमारा विश्वास है कि ऐसे कानूनको स्वीकार करना हमारे लिए असम्भव है। हम अपनी फरियाद लेकर फिर सरकारके पास पहुँचे। यहाँ मैं यह भी कहना चाहूँगा कि इस कानूनका मंशा हमें सिर्फ नीचा गिराने और अपमानित करनेका ही नहीं है। जिन महोदयने यह कानून पेश किया था, उन्होंने एक दूसरे कानूनकी पूर्व-सूचना भी दी है; इस भावी कानूनके साथ प्रस्तुत कानूनका उद्देश्य ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंके प्रवेशपर रोक लगाना भी है। यह कानून उपनिवेशीय कानूनोंके इतिहासमें पहली बार जारी किया जा रहा है। मेरा समाज समझ गया है कि यह सब किसलिए किया जा रहा है। इस कानूनके द्वारा ट्रान्सवालकी सरकार उपनिवेशकी कानूनकी किताबमें इस सिद्धान्तको दाखिल करनेका प्रयत्न कर रही है कि वह ब्रिटिश भारतीयोंका, ब्रिटिश भारतीयोंके नाते, ट्रान्सवालमें आनेका अधिकार खत्म करना चाहती है। हमें यह बात बहुत खली। हमें लगा कि इस कानूनको स्वीकार कर लेना और उपनिवेशमें बने रहना और ऐसे गम्भीर सवालपर सरकारको सिर्फ अर्जियाँ और प्रार्थनापत्र भेजकर ही सन्तुष्ट हो जाना हमारी राष्ट्रीय भावना और हमारे इन्सानी गौरवके लिए अपमानजनक है। और यही कारण है कि जब न्याय प्राप्त करने और इस अशुभ प्रतिबन्धको दूर करानेके हमारे सब प्रयत्न विफल हो गये तो मेरे मित्र और सहकारी श्री हाजी हबीबने जोहानिसबर्गके एक थियेटरमें ब्रिटिश भारतीयोंकी एक सार्वजनिक[1] सभामें उन्हें इस बातकी शपथ दिलाई कि वे इस कुटिल कानूनके आगे कभी झुकेंगे नहीं। इस सभामें करीब दो हजार आदमी उपस्थित थे और इस सभाने एक स्वरसे शपथपूर्वक यह घोषणा की कि यदि उक्त कानून साम्राज्य-सरकार द्वारा मंजूर कर दिया गया तो वे उसे स्वीकार नहीं करेंगे, बल्कि उसे तोड़नेके कारण उन्हें जो भी दण्ड दिया जायेगा सो सह लेंगे। आप लोग देख सकते हैं कि इसमें वैयक्तिक स्वार्थ सिद्ध करनेकी बात नहीं है। जबतक सवाल वैयक्तिक था, जबतक उससे हमें केवल आर्थिक हानि ही होती थी तबतक हम इन निर्योग्यताओंको सहते रहे; लेकिन जब हमारे राष्ट्रीय सम्मानपर चोट होने लगी, जब सवालका रूप यह हो गया कि प्रवेशके मामलेमें भी हमें यूरोपीयोंके बराबर नहीं माना जायेगा, और जब हमने देखा कि ट्रान्सवाल उपनिवेश उस नींवको ही खोदे डालता है जिसपर ब्रिटिश संविधान खड़ा है तब हमने महसूस किया कि हमारे अधिक साहसपूर्ण कदम उठानेका समय आ पहुँचा है। हमारे सामने दो रास्ते थे। एक तो यह था कि हिंसाका जवाब

१. देखिए खण्ड ५, पृष्ठ ५३०–३४ और ४५४।

हिंसासे दिया जाये। हमने इस सिद्धान्तको अमान्य किया। और दूसरा रास्ता क्या था? समाजके नेताओंने यह निश्चय किया कि वे कोई हिंसात्मक तरीका न अपनायेंगे, लेकिन वे इस कानूनको स्वीकार न करेंगे। इसके बदले वे जो दण्ड मिलेगा, सहन करेंगे। इस तरीकेको एक बेहतर नाम न मिलनेके कारण "पेसिव रेजिस्टेंस" की संज्ञा दी गई। मैं नहीं जानता कि इस नामके जो अर्थ मैं लगाना चाहता हूँ, उसकी व्याख्या किस प्रकार करूँ। मुझे इस बातकी चिन्ता रही है कि मैं अपने श्रोताओंके सम्मुख अपने लोगोंका रवैया किस प्रकार स्पष्ट करूँ। मुझे 'बाइबिल'की एक घटना स्मरण आती है — डैनियलके जीवनकी एक घटना — और मैं कहूँगा कि ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीय वही करते रहे हैं जो डैनियलने उस समय किया था जब उससे मीडों और फारसियोंके कानून स्वीकार करनेको कहा गया था। मुझे यह कहते खेद होता है कि साम्राज्यीय सरकार इस अपराधमें भागीदार है। उसके [साम्राज्यीय सरकारके] लिए यह कानून स्वीकार करना जरूरी नहीं था। उसे यह मालूम होना चाहिए था कि इस कानूनसे ब्रिटिश भारतीयोंकी भावनाको गहरी ठेस पहुँचेगी, और उनके लिए आत्मसम्मानपूर्वक उसे स्वीकार करना असम्भव हो जायेगा। साम्राज्यीय सरकारको ट्रान्सवाल सरकारपर रोक लगानी चाहिए थी। और कुछ नहीं, तो ऐसे कानूनको स्वीकृति देनेसे पहले वह कुछ झिझक सकती थी। लेकिन दलगत राजनीतिके दबावके आगे वह झुक गई। मैं यह नहीं कह सकता कि किन मतलबोंसे उसने ऐसे कानूनको मंजूर किया होगा। भारतीयोंने अनुभव किया कि उसे स्वीकार करना असम्भव है, अतः वे सत्याग्रही बन गये। वस्तुतः, उन्होंने ट्रान्सवाल सरकारसे कहा: "हम लोग आपकी जेलें भर देंगे, और आप जो दण्ड देंगे, हम सहन करेंगे, लेकिन यह कानून स्वीकार करना हमारे लिए असम्भव है।" मैं क्षणभर रुककर मनमें विचार करना चाहता हूँ कि ब्रिटिश संविधानके क्या अर्थ हैं। क्या वह संविधानमें विहित साम्राज्यके विभिन्न सदस्योंको समानताका अधिकार नहीं देता? मैं यह बात समझ सकता हूँ। मैं इस सिद्धान्तपर आधारित साम्राज्यकी प्रजा बने रहनेको सहमत हो सकता हूँ, किन्तु अपने अनुभवके बलपर मैं कहना चाहूँगा कि मेरे लिए एक ऐसे साम्राज्यके प्रति निष्ठावान रहना नितान्त असम्भव है, जिसमें मेरे साथ साम्राज्यके किसी सदस्यकी ही भाँति समानताका व्यवहार न किया जाये, चाहे वह मात्र सिद्धान्त रूपमें ही हो। यदि मेरे साथ एक हीनतर व्यक्ति-जैसा व्यवहार किया जाना है तो मैं बराबरीके दर्जेकी कभी कामना नहीं करूँगा। मैं एक ऐसे साम्राज्यका सदस्य होकर सन्तुष्ट रहूँगा जिसकी [गतिविधियोंमें] मेरा भी कुछ हिस्सा होगा, चाहे वह केवल एक प्रतिशत ही हो। किन्तु यदि मुझे गुलाम ही रहना है तो साम्राज्यका मेरे लिए कोई मतलब नहीं है। वैसी दशामें "ब्रिटिश प्रजा" की संज्ञा मेरे लिए कोई अर्थ नहीं रखती। उस कानूनके इसी प्रभावको मैं इस सभाके सामने स्पष्ट कर देना चाहता हूँ, इसे जिसे हम पिछले तीन बरसोंसे महसूस करते रहे हैं। ट्रान्सवाल उपनिवेशका यह कानून ब्रिटिश साम्राज्यकी जड़ोंको काटता रहा है, और इस प्रकारके कानूनमें निहित सिद्धान्तका प्रतिरोध करके हम न केवल ब्रिटिश भारतकी बल्कि [सम्पूर्ण] ब्रिटिश साम्राज्यकी सेवा करते रहे हैं। मुझे विश्वास है कि यह सभा असन्दिग्ध रूपमें मुझे इस बातका भरोसा देगी कि ऐसा करके हम ठीक ही करते रहे हैं

("वाह, वाह" और हर्षध्वनि)। हम अनुभव करते हैं कि यदि इतना भी नहीं करते तो हम साम्राज्यके सदस्य होने योग्य न रह जाते — हम साम्राज्यमें साझीदार होनेके योग्य न रह जाते, और अगर साझीदारी नहीं हो तो साम्राज्यका अस्तित्व ही नहीं रह जाता इसीलिए मैंने यह कहनेमें तनिक भी संकोच नहीं किया है कि यह संघर्ष वर्तमान युगके महानतम संघर्षोंमें से एक है; और ऐसा इसलिए कि एक महान सिद्धान्त दांवपर लगा हुआ है, हम एक पवित्र आदर्शके लिए लड़ रहे हैं, और इसलिए भी कि हमने उस आदर्शकी प्राप्तिके प्रयत्नोंमें शुद्ध तरीके अपनाये हैं। और अब वह प्रस्ताव क्या है जो [हमसे] किया गया है? वह यह है कि वह कानून तो रद हो जाना चाहिए, लेकिन प्रस्तावके जरिए जो शर्त थोपनेकी कोशिश है वह यह है कि भविष्यमें ब्रिटिश भारतीय कानूनकी दृष्टिमें यूरोपीयोंके साथ बराबरीका दर्जा लेकर ट्रान्सवालमें प्रवेश न करें। ट्रान्सवाल सरकार कानूनमें इस परिवर्तनके कारण होनेवाले परिणामका लाभ ब्रिटिश भारतीयोंको देनेके लिए राजी थी, अर्थात् चन्द भारतीय ट्रान्सवालमें प्रवेश कर सकेंगे। ब्रिटिश भारतीय इतनेसे सन्तुष्ट नहीं हैं। उदाहरणके लिए आप मान लें कि एक स्वामी अपने दाससे कहता है: "तुम मेरे साथ मेजपर बैठ सकते हो, मेरे साथ रह सकते हो, तुम ये तमाम सुविधाएँ भोग सकते हो, किन्तु इस शर्तपर कि दास और स्वामीका यह रिश्ता हमारे बीच सर्वदा बना रहेगा।" क्या आप सोच सकते हैं कि दास इससे सन्तुष्ट हो जायेगा? जबतक दासताका कलंक लगा हुआ है तबतक चाहे उसे मेजपर सर्वोच्च पद ही मिले, क्या वह दास सन्तुष्ट हो सकेगा? क्या यह साफ नहीं है कि समर्पणकी भावना तबतक असम्भव है जबतक वह भेद कायम है, जबतक दासताका कलंक लगा हुआ है? उपनिवेश सरकार अब जो-कुछ देनेको कहती है उसे पर्याप्त मानकर स्वीकार नहीं कर सकते; और इसलिए हम अपने संघर्षमें ब्रिटिश जनतासे उसकी सहानुभूति और समर्थन मांगनेके लिए यहाँ आये हैं। मैं समझता हूँ कि साम्राज्यीय सरकारके लिए शस्त्र-बलसे ट्रान्सवाल सरकारको कुछ करनेके लिए विवश करना असम्भव है। हम स्वयं भी किसी बलका प्रयोग नहीं करते। हम किसीसे नहीं कहते कि हमारी ओरसे बलका प्रयोग करे; लेकिन हम यह जरूर सोचते हैं कि ब्रिटिश जनताको मालूम हो कि उस संघर्षका मतलब क्या है, वह जाने कि [ट्रान्सवालके] अधिवासी [भारतीय] समाजमें से ५० प्रतिशत पहले ही जेल हो आये हैं; उसे मालूम हो कि जेलमें निमोनिया हो जानेके कारण एक नौजवानकी मृत्यु हो चुकी है; वह जाने कि पिता और पुत्र साथ-साथ जेल गये हैं; वह जान सके कि माताओंने टोकरियाँ ले ली हैं और सड़कोंपर फल बेचती हैं, ताकि जबतक उनके पति जेलमें हैं, वे अपनी और अपने बच्चोंकी परवरिश कर सकें; उसे मालूम हो कि बहुत-से परिवार दरिद्र हो गये हैं और चन्देकी रकमसे उनका गुजारा होता है। यदि आजकी सभामें उपस्थित आप सभीको लगे कि जिन आदर्शोंने सत्याग्रहियोंको खुशी-खुशी ये कष्ट झेलनेके लिए प्रेरित किया है, वे आपकी दृष्टिमें सही हैं, तो आप सत्याग्रहियोंके उस छोटे-से समुदायको अपने प्रोत्साहन, सहानुभूति और उमंग पैदा करनेवाले कुछ शब्द भेजें। आप साम्राज्य-सरकारको कमसे-कम यह दिखा दें कि साम्राज्यीय अन्तरात्माके विरुद्ध इस पापमें आप भागीदार बननेको

तैयार नहीं हैं। ट्रान्सवालमें रहनेवाले हम लोग जानते हैं कि हमें इंग्लैंडकी सहानुभूतिपर नहीं, बल्कि अपनी शक्तिपर निर्भर करना है, और मैं अनुभव करता हूँ कि हममें वह शक्ति है। मैं मानता हूँ कि जबतक एक भी सत्याग्रही जीवित रहेगा, वह संघर्ष जारी रखेगा। मुझे जोहानिसबर्गसे अभी-अभी एक तार मिला है, जिसमें कहा गया है कि [वहाँके] लोग संघर्षको अन्ततक जारी रखनेके लिए कटिबद्ध हैं। यह सन्देश ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा ही नहीं भेजा गया है, इसमें यूरोपीय कार्यकर्ताओंका वह छोटा-सा दल भी शामिल है जिसने विधानसभाके एक सदस्य, श्री विलियम हॉस्केनकी अध्यक्षतामें एक समितिकी स्थापना की है। मैं अपने सुननेवालोंसे कहूँगा कि वे उस यूरोपीय समितिका अनुकरण करें और उन्हें जितना अधिक सम्भव हो, उत्साह प्रदान करें तथा इस प्रकार हमारे कष्टोंका यथाशीघ्र अन्त करायें।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-१२-१९०९

१. गांधीजीके बाद सर रेमंड वेस्ट और सर फ्रेडरिक ऐली बोले। सभाकी समाप्तिपर निम्नलिखित प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे पास किया गया: "यह सभा ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयों द्वारा अपने नागरिक अधिकारोंके लिए किये जानेवाले शान्तिपूर्ण और निःस्वार्थ संघर्षके प्रति अपनी हार्दिक सहानुभूति व्यक्त करती है, और इस संघर्षमें सच्चे मनसे प्रोत्साहन प्रदान करती है।"

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम (१९०८)

सम्पूर्ण पाठ

हम नीचे ट्रान्सवालकी संसद द्वारा हाल ही में पारित उस अधिनियमका पूरा पाठ दे रहे हैं "जिसका उद्देश्य उन एशियाइयोंके, जो सन् १९०७ के अधिनियम संख्या २ के उपबन्धोंका पालन नहीं कर पाये, स्वेच्छया पंजीयनको वैध करना है और एशियाइयोंके पंजीयनकी अतिरिक्त व्यवस्था करना है।"

ट्रान्सवालकी विधान-परिषद और विधान-सभाकी सलाह और सम्मतिसे हमारे परमश्रेष्ठ महामहिम महाराज निम्नलिखितको कानूनके रूपमें मान्य करें:

१. इस अधिनियममें, बशर्ते कि वह संदर्भसे असंगत न हो,

"बालिग" का अर्थ होगा सोलह साल या उससे ज्यादाकी उम्रवाला;

"पंजीयन-प्रार्थनापत्र" का अर्थ होगा एशियाइयोंके रजिस्टरमें दाखिल की जानेवाली ऐसी अर्जी जो [तत्सम्बन्धी] विनियमके द्वारा निर्धारित रीति और नमूनेके अनुसार लिखी और भेजी गई हो और जिसके साथ विनियमकी माँगके अनुसार अपना विवरण और शिनाख्तके उपाय भी बताये गये हों;

"एशियाई" का अर्थ होगा एशिया महाद्वीपमें रहनेवाली प्रजातियोंका कोई भी पुरुष-व्यक्ति; उसमें कुली, अरब और मलायी शामिल होंगे किन्तु निम्नलिखित शामिल नहीं होंगे —

(क) ऐसा मलायी जिसका जन्म दक्षिण आफ्रिकाके किसी ब्रिटिश उपनिवेशमें या ब्रिटिश अधिकृत प्रदेशमें हुआ हो और जो वहाँ निवास करता हो; या

(ख) ऐसा कोई व्यक्ति जो इस उपनिवेशमें १९०४ के "श्रम-आयात अध्यादेश" (लेबर इम्पोर्टेशन ऑर्डिनेन्स) के अधीन लाया गया हो; या

(ग) किसी विदेशी दूतावासमें काम करनेवाला अधिकारी;

"पंजीयन प्रमाणपत्र" का अर्थ होगा सन् १९०७ के अधिनियम संख्या २ के अन्तर्गत दिया गया प्रमाणपत्र, अथवा इस अधिनियमके अन्तर्गत इसीकी अनुसूचीमें बताये गये नमूनेके अनुसार या विनियम द्वारा निर्धारित विधिके अनुसार दिया गया प्रमाणपत्र;

"इस अधिनियमका आरम्भ" — इस शब्द-समुच्चयका अर्थ होगा वह तारीख जिससे कि यह अधिनियम अमलमें आया;

"गवर्नर" का अर्थ होगा वह अधिकारी जो किसी समय इस उपनिवेशकी सरकारका, कार्यकारी परिषदकी सलाह और सम्मतिके अनुसार, संचालन कर रहा हो;

"संरक्षक" का अर्थ होगा किसी नाबालिग एशियाईका पिता या माता या कोई भी दूसरा आदमी जिसके संरक्षणमें वह नाबालिग व्यक्ति उस समय रह रहा हो और ऐसे किसी आदमीके अभावमें उस नाबालिगका मालिक।

"वैध धारक" (लॉफुल होल्डर) का अर्थ, पंजीयन प्रमाणपत्रके सिलसिलेमें होगा (प्रमाणपत्रके उल्लिखित नाबालिगसे भिन्न) वह व्यक्ति जिसका पंजीयन उस प्रमाणपत्रसे प्रमाणित होता है;

"नाबालिग" का अर्थ होगा सोलह सालसे कम उम्रवाला;

"एशियाइयोंका रजिस्टर" शब्दोंका मतलब होगा इस अधिनियमके प्रयोजनोंकी सिद्धिके लिए, विनियममें निर्धारित विधिके अनुसार रखा जानेवाला रजिस्टर;

"पंजीयक" का अर्थ होगा गवर्नर द्वारा एशियाइयोंका रजिस्टर रखनेके लिए नियुक्त किया गया अधिकारी या कोई दूसरा व्यक्ति जो उस पदपर वैध रीतिसे काम कर रहा हो;

"विनियम" का मतलब होगा इस अधिनियमके खण्ड १७ के अन्तर्गत बनाया गया कोई भी विनियम;

"अपंजीकृत एशियाई" का अर्थ होगा ऐसा बालिग एशियाई जो पंजीयन प्रमाणपत्रका धारक नहीं है।

भाग १

स्वेच्छया पंजीयनका वैधीकरण

२. (१) प्रत्येक व्यक्ति —

(क) जो सन् १९०७ के अधिनियम संख्या २ में दी गई परिभाषाके अनुसार एशियाई है; और

(ख) जिसके द्वारा या जिसके विषयमें सन् १९०८ की १० फरवरीको या उसके बाद सन् १९०८ की १० मई तक किसी भी दिन पंजीयक या अन्य किसी समुचित अधिकार प्राप्त अमलदारके नाम पंजीयनके लिए अर्जी दी गई हो; और

(ग) जिसे या जिसके विषयमें पंजीयकके द्वारा इस अधिनियमकी अनुसूचीमें दिये गये नमूनेके अनुसार प्रमाणपत्र दिया गया हो;

इस प्रमाणपत्रको प्राप्त कर लेनेपर ऐसे प्रमाणपत्रका वैध धारक माना जायेगा जिससे उसे उपनिवेशमें प्रवेश करने और रहनेका अधिकार मिलता है।

(२) ऐसा प्रत्येक व्यक्ति भी जो सन् १९०७ के अधिनियम संख्या २ के अन्तर्गत पंजीयनके प्रमाणपत्रका वैध धारक था और इसलिए जिसे उस प्रमाणपत्रके बदलेमें इस अधिनियमकी अनुसूचीमें दिये गये नमूनेके अनुसार [नया] प्रमाणपत्र लेनेकी अनुमति दे दी गई है, उस प्रमाणपत्रका वैध धारक माना जायेगा जिससे उपनिवेशमें प्रवेश करने और रहनेका अधिकार मिलता है।

(३) प्रत्येक एशियाई, जिसके पास इस खण्डमें उल्लिखित कोई प्रमाणपत्र है, हर तरहसे, सन् १९०७ के अधिनियम संख्या २ के उपबन्धोंके नहीं, बल्कि इस अधिनियमके उपबन्धोंके अधीन होगा।

भाग २

इस अधिनियमके आरम्भ होनेके बाद एशियाइयोंका पंजीयन

३. कोई भी एशियाई इस अधिनियमके अन्तर्गत अपना पंजीयन करानेका अधिकारी होगा, यदि —

(क) वह खण्ड ४ के उपखण्ड (२) या (३) में वर्णित शर्तोंको पूरा करता हो, चाहे वह इस अधिनियमके आरम्भ होते समय इस उपनिवेशमें रहा हो या न रहा हो; या

(ख) सन् १९०७ के अधिनियम संख्या २ के अन्तर्गत दिये गये पंजीयन प्रमाणपत्रका वैध धारक होनेके नाते वह उस प्रमाणपत्रके बदलेमें इस अधिनियमके अन्तर्गत दिया जानेवाला पंजीयन प्रमाणपत्र लेना चाहता हो; या

(ग) इस अधिनियमका आरम्भ होनेके समय वह इस उपनिवेशका नाबालिग अधिवासी था और इसलिए उसने उपनिवेशमें पहली बार ऐसे बालिग एशियाईके साथ प्रवेश किया था जो उसका अभिभावक था और जो सन् १८८५ के कानून संख्या ३ के अन्तर्गत या उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत पंजीयित था या इस अधिनियमके अन्तर्गत पंजीयित है या पंजीयनका अधिकारी है; या

(घ) उसका जन्म दक्षिण आफ्रिकाके किसी ऐसे हिस्सेमें हुआ था जो उसके जन्मकी तारीखके समय ट्रान्सवालकी सीमाओंके अन्दर था।

४. (१) इस अधिनियमका आरम्भ होनेके समय इस उपनिवेशमें निवास करनेवाला प्रत्येक अपंजीयित वालिग एशियाई ऐसी तारीख या तारीखोंके पहले और उस स्थान या स्थानोंमें और उस व्यक्ति या व्यक्तियोंको, जिन्हें उपनिवेश-सचिव उपनिवेशके विशिष्ट इलाकोंके लिए 'गज़ट' में सूचना देकर नियत करे, पंजीयनके लिए अर्जी देगा और पंजीयक इस वातका इतमीनान कर लेनेके वाद कि वह एशियाई पंजीयनका अधिकारी है, उसे पंजीयन प्रमाणपत्र दे देगा।

(२) इस अधिनियमका आरम्भ होनेके समय उपनिवेशके वाहर निवास करनेवाला प्रत्येक अपंजीकृत वालिग एशियाई।

(क) यदि वह सन् १८९९ के अक्तूबर महीनेकी ११ तारीखके पहले ट्रान्सवालमें तीन साल तक निवास कर चुका हो; और

(ख) इस अधिनियमके आरम्भ होनेके वाद एक सालके अन्दर इस उपनिवेशके वाहर किन्तु दक्षिण आफ्रिकाके भीतर अब स्थित किसी जगहसे पंजीयनके लिए अर्जी और

(ग) पंजीयकको इस उप-खण्डमें उल्लिखित तथ्योंका विश्वास करा दे; तो वह पंजीयन-प्रमाणपत्र पानेका अधिकारी होगा।

(३) ऐसा प्रत्येक अपंजीयित वालिग एशियाई जो इस अधिनियमके आरम्भ होनेके समय इस उपनिवेशके वाहर निवास कर रहा था किन्तु जो

(क) सन् १९०२के क्षतिपूर्ति तथा शान्ति रक्षा अध्यादेश (इंडेम्निटी ऐंड पीस प्रिज़र्वेशन ऑर्डिनेन्स) के अन्तर्गत या उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत अथवा सन् १९०० के सितम्बरकी पहली तारीख और उक्त अध्यादेशके पास होनेकी तारीखके वीचमें किसी समय दिये अनुमतिपत्रके वलपर (वशर्ते कि यह अनुमतिपत्र छलसे न प्राप्त किया गया हो) इस उपनिवेशमें प्रवेश करने और रहनेका समुचित अधिकार रखता था; या

(ख) मई, १९०२की ३१ तारीखको इस उपनिवेशका अधिवासी था और यहाँ सचमुच हाजिर था;

पंजीयकको इस उपखण्डके अनुच्छेद (क) और (ख) में उल्लिखित तथ्यका विश्वास करा देनेपर और उपनिवेशके वाहर किन्तु दक्षिण आफ्रिकाके अन्दर अवस्थित किसी जगहसे पंजीयनके लिए अर्जी देनेपर, पंजीयनका प्रमाणपत्र प्राप्त करनेका अधिकार होगा।

नावालिग एशियाई

५. जिसका जन्म इस उपनिवेशमें हुआ है और जो इस उपनिवेशमें सन् १९०४ के लेवर इम्पोर्टेशन ऑर्डिनेन्सके अन्तर्गत लाये गये किसी मजदूरकी सन्तान नहीं है, ऐसे प्रत्येक अपंजीकृत (गैर-रजिस्टर्ड) नावालिग एशियाईके विषयमें निम्नलिखित उपबन्ध लागू होंगे;

(१) यदि उसका संरक्षक एशियाई है तो उस नावालिगका नाम, उसकी उम्र, उसका निवास और संरक्षकसे उसका रिश्ता उसके संरक्षकके पंजीयन प्रमाणपत्रमें दर्ज किया जायेगा।

(२) यह नावालिग सोलह वर्षकी उम्रका हो जानेपर, एक माहके अन्दर पंजीयकको पंजीयन प्रमाणपत्रके लिए अर्जी देगा; किन्तु यदि वह उस उम्रको पहुँचनेपर या उसके एक माह वाद उपनिवेशमें हाजिर न हो तो वह दक्षिण आफ्रिकाके अन्दर, लेकिन उपनिवेशसे वाहर अवस्थित किसी जगहसे पंजीयकको पंजीयनके लिए अर्जी दे सकता है और पंजीयकको इस वातका इतमीनान करा देनेपर कि वह पंजीयनका अधिकारी है, पंजीयक उसे पंजीयनका प्रमाणपत्र दे देगा और तव नावालिगके रूपमें दर्ज उसका नाम एशियाइयोंके रजिस्टरसे काट दिया जायेगा और फिर वह उसके संरक्षकके पंजीयनके प्रमाणपत्रमें शामिल न माना जायेगा।

६. (१) जब भी पंजीयकको यह इतमीनान हो जाये कि कोई एशियाई, जो खण्ड ३ के अधिकारका दावा करता हो [सचमुच] उसका अधिकारी नहीं है, वह उसे पंजीयनका प्रमाणपत्र देनेसे इनकार कर देगा और इसकी सूचना उस एशियाईको उसके अर्जीपत्रमें दिये पतेपर डाकसे भेज दी जायेगी।

(२) पंजीयक द्वारा पंजीयनका प्रमाणपत्र देनेसे इनकार करनेके हरएक मामलेमें, इनकारीकी सूचनाकी तारीखसे चौदह दिनके अन्दर उपनिवेश-सचिवके नाम लिखित पत्रके द्वारा अपील की जा सकती है और यह अपील ऐसी अपीलें सुननेके लिए गवर्नर द्वारा खास तौरपर नियुक्त मजिस्ट्रेट द्वारा सुनी जायेगी और यह अपील सुनते समय उक्त मजिस्ट्रेटको, सन् १९०२ के एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ़ जस्टिस प्रोक्लेमेशनके खण्ड उन्नीसके अन्तर्गत, निम्न कोटिकी अदालत माना जायेगा।

(३) ऐसे एशियाईके मामलेमें जो दक्षिण आफ्रिकामें तो है किन्तु इस उपनिवेशके बाहर है, ज्यों ही ऐसी अपीलकी सुनवाईकी तारीख निश्चित होगी त्यों ही प्रवास विभागका कार्यकारी अधिकारी अपील-कर्ताको उसकी पंजीयन-अर्जीमें दिये गये पतेपर डाकके जरिए एक अस्थायी अनुमतिपत्र भेज देगा जिससे उसे उपनिवेशमें प्रवेश करने और तबतक रहनेका अधिकार मिल जायेगा जबतक कि अपीलका फैसला नहीं हो जाता। यदि अपील खारिज हो जाती है तो वह मजिस्ट्रेट लिखित रूपमें एक आदेश जारी करेगा कि उस अपीलकर्ताको उपनिवेशसे निकाल दिया जाये और ऐसा हरएक आदेश सन् १९०७ के प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके खण्ड ६ या उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत दिया गया आदेश माना जायेगा।

(४) इस उपनिवेशमें स्थित ऐसे बालिग एशियाईके मामलेमें जिसने इस खण्डके उपखण्ड २ द्वारा निर्धारित अवधिके अन्दर अपील न की हो या की तो हो किन्तु उसपर आगे कार्रवाई न की गई हो या जिसकी अपील खारिज कर दी गई हो, उपरोक्त मजिस्ट्रेट लिखित आदेश जारी करेगा कि उस एशियाईको उपनिवेशसे बाहर निकाल दिया जाये और ऐसा प्रत्येक आदेश सन् १९०७ के प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके खण्ड ६ या उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत दिया गया आदेश माना जायेगा।

उपनिवेशसे निष्कासन

७. जो बालिग एशियाई उस तारीख या तारीखोंके बाद, जो उपनिवेश-सचिव द्वारा 'गज़ट' में अधिसूचित की जायें, उपनिवेशके अन्दर पाया जायेगा और खण्ड ९ में उल्लिखित माँगके किये जानेपर पंजीयनके ऐसे प्रमाण-पत्रको जिसका वह वैध धारक है पेश न कर सकेगा, उसे बिना वारंटके गिरफ्तार किया जा सकता है और अधिवासी मजिस्ट्रेट (रेज़िडेंट मजिस्ट्रेट) या सहायक अधिवासी मजिस्ट्रेट (असिस्टेंट रेज़िडेंट मजिस्ट्रेट) के सामने पेश किया जा सकता है और यदि वह उक्त मजिस्ट्रेटको इस बातका यथेष्ट प्रमाण न दे सके कि वह पंजीयन प्रमाणपत्रका वैध धारक है, अथवा जिस अवधिके अन्दर उसे इस प्रमाणपत्रके लिए अर्जी दे देनी चाहिए, वह अभी समाप्त नहीं हुई है तो मजिस्ट्रेट, अगले खण्डमें उल्लिखित परिस्थितिको छोड़कर, लिखित रूपमें यह आदेश जारी करेगा कि उसे इस उपनिवेशसे बाहर निकाल दिया जाये और ऐसा प्रत्येक आदेश सन् १९०७ के प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके खण्ड ६ या उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत किया गया आदेश माना जायेगा।

८. जो बालिग एशियाई खण्ड ४ के उपखण्ड (१) के उपबन्धोंके अनुसार पंजीयनके लिए अर्जी नहीं दे सका है, यदि वह उस मजिस्ट्रेटको जिसके सामने वह पेश किया जाये इस बातका इतमीनान करा देगा कि उसकी इस चूकका कोई उपयुक्त और पर्याप्त कारण था तो वह मजिस्ट्रेट पूर्वोक्त आदेश जारी करनेके बजाय उस एशियाईको आठ दिनके अन्दर पंजीयनके लिए अर्जी देनेका निर्देश दे सकता है और यदि वह एशियाई इस निर्देशका पालन करेगा तो उसकी अर्जीपर ठीक उसी तरह विचार किया जायेगा मानो वह पूर्वोक्त उपखण्डके उपबन्धोंके अनुसार दी दी गई हो और इस अधिनियमके सारे उपबन्ध, जो कि उस हालतमें लागू होते, यहाँ भी लागू होंगे। किन्तु यदि वह इस निर्देशका पालन न कर सकेगा तो मजिस्ट्रेट उसे पहले कहे अनुसार [उपनिवेशसे] बाहर निकाल देनेका आदेश करेगा और ऐसा आदेश सन् १९०७ के प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके खण्ड ६ या उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत किया गया आदेश माना जायेगा।

भाग ३

सामान्य और स्फुट बातें

९. जो भी एशियाई इस उपनिवेशमें प्रवेश करे या यहाँ रह रहा हो उसे यहाँ विधिवत् स्थापित पुलिस-दलके किसी यूरोपीय सदस्य, या उपनिवेश-सचिव द्वारा अधिकार-प्राप्त किसी अन्य यूरोपीय व्यक्तिकी माँगपर पंजीयनका अपना प्रमाणपत्र, जिसका वह वैध धारक है, पेश करना होगा और माँग की जानेपर विनियम (रेग्युलेशन) द्वारा निर्धारित अन्य ब्योरा और अपनी शिनाख्तके साधन भी पेश करने पड़ेंगे। वैध रूपसे माँग किये जानेपर जो एशियाई ऐसा प्रमाणपत्र पेश न कर सकेगा उसपर, यदि वह पंजीयनके प्रमाणपत्रका वैध धारक न हो तो, खण्ड ८ में उल्लिखित रीतिके अनुसार कार्रवाई की जा सकेगी।

१०. (१) यदि किसी समय कोई पंजीयन-प्रमाणपत्र खो जाये या नष्ट हो जाये तो जिस व्यक्तिके नाम वह दिया गया था वह फौरन पंजीयकको नया प्रमाणपत्र देनेके लिए अर्जी देगा और जब वह व्यक्ति विनियममें निर्धारित विधि पूरी कर देगा और पाँच शिलिंगकी फीस जमा कर देगा तब पंजीयक उसे नया प्रमाणपत्र दे देगा। यह फीस नये प्रमाणपत्रकी अर्जीपर लगाये गये रेवेन्यू स्टैम्पोंके रूपमें चुकाई जायेगी और पंजीयक उन्हें काट देगा।

(२) ऐसा प्रमाणपत्र जिस व्यक्तिको मिले, बशर्ते कि पानेवाला वही न हो जिसके नाम वह जारी किया गया था, वह उसे यथाशीघ्र एशियाइयोंके पंजीयकको सौंप देगा या भेज देगा।

११. प्रत्येक पंजीयन प्रमाणपत्र सब जगह इस बातका निश्चयात्मक प्रमाण माना जायेगा कि उसके वैध धारकको इस उपनिवेशमें प्रवेश करने और रहनेका अधिकार है; किन्तु यह खण्ड उन व्यक्तियोंपर लागू नहीं होगा जो सन् १९०७ के प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके खण्ड ५ या ६ के अथवा उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत उपनिवेशसे निकाल दिये गये हैं।

१२. इस अधिनियमके अन्तर्गत चलाये गये किसी मुकदमेमें या किसी दूसरी कार्रवाईमें जब भी किसी एशियाईकी उम्रके सम्बन्धमें सन्देह होगा तब पंजीयक अपनी रायके अनुसार उसकी जो भी उम्र समझकर प्रमाण-पत्रमें भर देगा वही उसकी उम्र मानी जायेगी बशर्ते कि वह एशियाई उससे भिन्न उम्र प्रमाणित न कर दे।

१३. पंजीयनके लिए अर्जी करनेवाले किसी व्यक्तिको विनियमके निर्देशके अनुसार जो हलफनामा देना होगा या शपथपूर्वक जो घोषणा करनी होगी वह स्टैम्प-शुल्कसे मुक्त होगी।

व्यापारिक परवाने

१४. (१) सन् १९०५ के राजस्व परवाना अध्यादेश या उसके किसी संशोधनके अन्तर्गत या स्थानिक संस्थाके अधिकार-क्षेत्रमें जारी किसी उपनियम या विनियमके अन्तर्गत कोई एशियाई तबतक कोई व्यापारिक परवाना न पा सकेगा जबतक वह परवाना प्रदान करनेके लिए नियुक्त व्यक्तिके समक्ष पंजीयनका वह प्रमाणपत्र जिसका वह वैध धारक है प्रस्तुत न करे और जबतक या तो अंग्रेजीमें अपनी सही न दे दे अथवा ऐसी दूसरी या अतिरिक्त जानकारी न दे अथवा अपनी शिनाख्तके ऐसे साधन न जुटा दे जो उपनिवेश-सचिव द्वारा सामान्यतया या कुछ खास मामलोंके लिए निर्धारित किये गये हों।

(२) इस अधिनियमके खण्ड २ के उपखण्ड (१) (ख) में निर्धारित रूपमें अर्जी देनेवाले किसी एशियाईको पूर्वोक्त अध्यादेश या पूर्वोक्त उपनियम या विनियमके अन्तर्गत, १० फरवरी १९०८ और आरम्भ होनेके बीचमें जो भी परवाने दिये गये होंगे, वे सन् १९०७ के अधिनियम संख्या २ के खण्ड इस अधिनियमके १३ के उपबन्धोंके बावजूद, वैध रीतिसे दिये गये माने जायेंगे।

(३) सन १९०७ के अधिनियम संख्या २ का खण्ड १३ रद कर दिया जायेगा और इसके द्वारा रद किया जाता है।

दण्ड

१५. जो भी व्यक्ति

(क) पंजीयनकी अर्जीके हेतुसे या उसके सिलसिलेमें या पंजीयनका प्रमाणपत्र पानेके लिए किसी भी तरहका छलपूर्ण कार्य करेगा या झूठा बयान देगा या झूठा बहाना बनायेगा;

(ख) इस अधिनियमकी अनुसूचीमें बताये हुए नमूनेके अनुसार कोई जाली दस्तावेज बनायेगा या इस अधिनियमके आरम्भ होनेसे पहले ऐसे जाली दस्तावेजकी रचना कर चुका है या जाली पंजीयन प्रमाणपत्र बनायेगा या यह जानते हुए भी कि अमुक दस्तावेज या प्रमाणपत्र जाली हैं उनका उल्लेख करेगा;

(ग) ऐसे किसी जाली दस्तावेज या ऐसे किसी प्रमाणपत्रका जिसका वह वैध धारक नहीं है पंजीयनके प्रमाणपत्रके रूपमें उपयोग करेगा या उपयोग करनेकी कोशिश करेगा;

वह अपराधका दोषी होगा और उसपर पाँच सौ पौंड तक का जुर्माना किया जा सकेगा, और जुर्माना न देनेपर उसे दो साल तक की सख्त या सादी कैदकी सजा दी जा सकेगी या जुर्माना और कैदकी सजा दोनों एक साथ दी जा सकेंगी; और जो भी व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्तिको ऐसा अपराध करनेको उकसायेगा, या उसमें मदद करेगा, या हिमायत करेगा वह [भी] समान दण्डका भागी होगा।

अस्थायी अनुमतिपत्र

१६. सन् १९०७ के प्रवासी-प्रतिबन्धकमें या इस अधिनियममें जो भी कहा गया है उसके बावजूद गवर्नर ऐसा अनुमतिपत्र देनेकी अनुमति दे सकता है, जो विनिमय द्वारा निर्धारित नमूनेके अनुरूप हो। उससे किसी भी एशियाईको उपनिवेशमें प्रवेश करने और अनुमतिपत्रमें उल्लिखित अवधितक रहनेका अधिकार मिल जायेगा; उस अवधिके बीत जानेपर वह व्यक्ति जिसके नाम वह अनुमतिपत्र दिया गया था ऐसा व्यक्ति माना जायेगा जिसे इस उपनिवेशमें रहनेका समुचित अधिकार नहीं हैं; यदि वह [उक्त अवधिके बाद यहाँ] पाया गया तो उसे बिना वारंटके गिरफ्तार किया जा सकेगा; और प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमके खण्ड ६ या उसके किसी संशोधनके उपबन्ध उसपर इसी तरह लागू होंगे मानो वह उसके अनुच्छेद (ग) में उल्लिखित व्यक्ति है।

गवर्नरके अधिकार

१७. गवर्नर समय-समयपर निम्नलिखित उद्देश्योंमें से किसी भी उद्देश्यके लिए विनियम (रेग्युलेशन्स) बना सकता है, बदल सकता है या रद कर सकता है:

(१) इस अधिनियमके उद्देश्योंके लिए रखे जानेवाले रजिस्टरका रूप निर्धारित करना।

(२) पंजीयनकी अर्जी देनेकी रीति और उसका रूप, और इस अर्जीके सिलसिलेमें या उसके उद्देश्यसे अर्जदारको जिन बातोंका ब्योरा देना होगा या शिनाख्तके जो साधन प्रस्तुत करने होंगे — उन्हें निर्धारित करना।

(३) पंजीयन प्रमाणपत्रका रूप निर्धारित करना।

(४) (क) खण्ड ९ में उल्लिखित माँग की जाये तब किसी एशियाईको; [और]

(ख) पंजीयन प्रमाणपत्र खो जाने या नष्ट हो जानेपर नयेके लिए अर्जी देनेवाले किसी एशियाईको जिन बातोंका ब्योरा देना होगा या शिनाख्तके जो साधन प्रस्तुत करने होंगे, उन्हें निर्धारित करना।

(५) खण्ड ८ में उल्लिखित मजिस्ट्रेटको की गई अपीलोंके सम्बन्धमें पालन की जानेवाली कार्यविधि निर्धारित करना।

(६) खण्ड १६ के अन्तर्गत दिये जानेवाले अनुमतिपत्रका रूप निर्धारित करना।

(७) सामान्य तौरपर इस अधिनियमके लक्ष्यों और उद्देश्योंका ज्यादा अच्छा सम्पादन करनेके लिए।

१८. जो एशियाई या किसी एशियाईका संरक्षक इस अधिनियमके या विनियमोंके किसी तकाजेका पालन नहीं करेगा, वह स्पष्ट रूपसे निर्दिष्ट परिस्थितियोंको छोड़कर, दोषी ठहराये जानेपर, एक सौ पौंड तक के जुर्मानेका भागी होगा। जुर्माना अदा न करनेपर उसे तीन महीने तक की सख्त या सादी कैदकी सजा दी जा सकेगी।

१९. १२ अगस्त, सन् १८८६ के फोक्सराड रिज़ोल्यूशन आर्टिकल १४१९ द्वारा संशोधित सन् १८८५ के कानून संख्या ३ के उपखण्ड (ख) में इसके प्रतिकूल जो-कुछ भी हो, उसके बावजूद प्रिटोरियाकी चर्च स्ट्रीटमें ३७३ नम्बरकी जमीनका वह हिस्सा जो मरहूम अबूबकर अमोदके नामसे रजिस्टर था और जो इस अधिनियमके आरम्भ होनेके समय हेनरी सॉलोमन लियॉन पोलकके नामसे रजिस्टर था, पूर्वोक्त अबूबकरके उत्तराधिकारियोंके नामपर बदला जा सकता है।

२०. इस अधिनियमका उल्लेख हर मामलेमें एशियाटिक्स रजिस्ट्रेशन अमेंडमेंट ऐक्ट १९०८ (सन् १९०८ का एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम) के नामसे किया जा सकता है और यह तबतक लागू न होगा जबतक कि गवर्नर 'गज़ट' में प्रकाशित विज्ञप्ति द्वारा यह घोषित न कर देगा कि महामहिम महाराजने उसे मंजूर करनेकी कृपा की है और उसके बाद यह उस तारीखसे लागू होगा जिसे गवर्नर ऐसी ही एक विज्ञप्तिके द्वारा घोषित करेगा।

अनुसूची

ट्रान्सवालका एशियाई पंजीयन प्रमाणपत्र

पूरा नाम ....

प्रजाति .... उम्र .... ऊँचाई ....

हुलिया ....

दाहिने हाथके अँगूठेकी छाप

....

एशियाइयोंका पंजीयक

तारीख .... को दिया गया

धारककी सही ....

पत्नीका नाम .... निवास-स्थान ....

१६ सालसे कम उम्रके पुत्र और अन्य पुरुष संरक्षित

नाम		निवास-स्थान	संरक्षकसे रिश्ता

एशियाइयोंके पंजीयकके सिवा इस प्रमाणपत्रके ऊपरी पृष्ठपर किसी अन्य व्यक्तिको न तो कोई परिवर्तन करना चाहिए, न टिप्पणी लिखनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-९-१९०८

परिशिष्ट २

सन् १९०७ के प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियमके खण्ड ६ के अन्तर्गत किसी व्यक्तिके निष्कासनके लिए वारंट

चूँकि . . . . को सन् १९०७ के अधिनियम २, खण्ड ८, उपखण्ड ३ के अन्तर्गत ट्रान्सवाल छोड़कर चले जानेका आदेश दिया गया था और उसने इस आदेशका पालन नहीं किया है, तुम्हें महामहिम महाराजा साहिबके नामपर हुक्म दिया जाता है कि तुम पूर्वोक्त . . . . को तुरन्त गिरफ्तार कर लो और उसे उपनिवेशसे बाहर निकाल दो और उसे ट्रान्सवाल-नेटालकी सीमापर उस जगह छोड़ दो जहाँ फोक्सरस्ट और चार्ल्सटाउनको जोड़नेवाली रेलवे लाइन पूर्वोक्त सीमाको काटती है।

(ह०) जे० सी० स्मट्स

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-९-१९०८

परिशिष्ट ३

रंगके प्रश्नपर श्री पी० डंकनका भाषण

श्री पैट्रिक डंकन सी० एम० जी० ने महिला-संघ (लीग ऑफ वीमेन) की रोज बैंक शाखाके आमन्त्रणपर उसकी सालाना बैठकमें रंग-भेदके प्रश्नपर भाषण दिया। उनका भाषण इसी ५ तारीखके 'स्टार' में दिया गया है। हम उसके महत्त्वपूर्ण अंश नीचे उद्धृत करते हैं:

जिस देशके बारेमें यह माना जाता है कि वहाँ राजनीतिक स्वतंत्रता है, उसमें आबादीके सबसे बड़े हिस्सेके राजनीतिक अधिकार बिलकुल छीन लेना बहुत कठिन मामला है। यह तो गुलामीकी-सी हालत हुई। और, गुलामीकी-सी हालतमें पड़ी किसी हीन जातिके बल्पर जीनेवाली कोई जाति कभी दीर्घकालतक जीवित नहीं रह सकी। यह स्थिति उन्नत और हीन दोनों जातियोंके लिए बुरी है। जहाँ आबादीका एक छोटा उन्नत भाग अपनेसे बड़े हीन भागके कामपर जीवित रहता है और उसको राजनीतिक अधिकार नहीं देता वहाँ हम देखेंगे कि इस तरहकी हालत ज्यादा दिनतक नहीं टिकती। इस समय समाज सभ्यताकी जिस अवस्थामें है उसमें हमारे लिए यह कहना सम्भव नहीं है कि अगर किसी आदमीकी चमड़ी उत्तम गोरे रंगकी नहीं है तो वह राजनीतिक अधिकारोंसे वंचित कर दिया जायेगा — फिर चाहे वह कितना ही पढ़ा-लिखा क्यों न हो और सभ्यतामें हर तरहसे कितनी ही प्रगति भी क्यों न कर चुका हो। अगर हम राजनीतिक अधिकारोंके लिए रंगको कसौटी बनायेंगे तो इसमें कोई सीमा-रेखा निश्चित करना बहुत कठिन होगा। हम देखेंगे कि ऐसा करनेसे ऐसे बहुत-से लोगोंको हम बहुत कष्ट पहुँचा रहे हैं, जो हमारी ही तरह सर्वथा सभ्य, शिक्षित और जिम्मेदार नागरिक हैं। अतः बहुत-से लोगोंके प्रति बहुत गम्भीर अन्याय किये बिना और उन्हें बहुत भारी हानि पहुँचाये बिना मताधिकारके लिए प्रतिबन्धके रूपमें रंग-भेदको कायम रखना मुश्किल है।

इस प्रश्नका एक सामाजिक पहलू भी है। हमें हर आदमीके साथ कानूनकी निगाहमें बराबर न्याय करना चाहिए, फिर उसका रंग चाहे जो हो। हमें उसे अपनी हालत सुधारनेका मौका देना चाहिए। वह जिन तरीकोंसे अपनी हालत सुधारता है वे कितने ही अजीब या अटपटे क्यों न हों; हमें उन्हें तिरस्कारकी दृष्टिसे नहीं देखना चाहिए। यह नहीं हो सकता कि हम उसकी मेहनतसे लाभ उठायें और उसे अपना सामाजिक स्तर

ऊँचा करनेका अवसर देनेसे इनकार करें। इस देशमें रंगके कारण लोगोंके विरुद्ध बेहद द्वेष-भाव है। गोरे इस देशमें प्रमुख हिस्सेदार होने चाहिए, इस सिद्धांतको लागू करनेमें उन्हें रंगदार लोगोंको भी उनके अधिकारोंके अनुसार रहने देना चाहिए। हमें उन्हें उनकी क्षमताके अनुसार पूरा विकास करने देना चाहिए और यह अपेक्षा न करनी चाहिए कि वे बोझा ढोनेवाले पशु ही बने रहें और उनकी कोई दूसरी स्थिति हो ही नहीं।

हमें उन्हें ज्यादा साफ तरीकेसे और ज्यादा अच्छी तरह रहनेका हरएक मौका देना चाहिए। दक्षिण आफ्रिकामें शहरोंके बाहर बनी हुई गन्दी जगहें, जो बस्तियाँ (लोकेशन) कही जाती हैं, सभ्यताको कलंक लगानेवाली हैं। अगर हम वतनी लोगोंको ऐसी गन्दी जगहोंमें रहनेके लिए मजबूर करें तो उनसे शिष्ट नागरिक बननेकी अपेक्षा नहीं रख सकते। हम जब यह शिकायत करते हैं कि वे समाजके लिए खतरनाक हैं तब हमें यह याद रखना चाहिए कि अगर हम किसी आदमीसे जानवरकी तरह रहनेकी अपेक्षा करते हैं तो वह जानवर ही हो जायेगा। लेकिन अगर हम यह चाहते हैं कि वह आदमी बने तो हमें उससे ठीक तरहका बरताव करना चाहिए। हम वतनियोंको बर्बरतापूर्ण दण्ड देकर ही अपराध करनेसे नहीं रोक सकेंगे। हम उन्हें अपनी जगह सामाजिक जीवनमें उठनेकी प्रेरणा दें। उसी जगह उनका आदमीके रूपमें सम्मान करें। प्रश्न कठिन है। कुछ लोग उन्हें अलग रखनेकी बात करते हैं। यह असम्भव है। दोनों जातियोंको साथ-साथ रहना है; और इस देशमें जो गोरे लोग हैं वे दोनों जातियोंके भविष्यके ट्रस्टी हैं। इसलिए उन्हें यह सोचना है कि दोनों जातियाँ किस तरह साथ-साथ रहें जिससे दोनोंका हित हो।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-९-१९०८

परिशिष्ट ४

पंजीयन कानूनकी मंसूखीके बारेमें हलफनामे

(१) एच० एस० एल० पोलकका हलफनामा

मैं जोहानिसबर्गवासी हेनरी सॉलोमन लियोन पोलक संजीदगी और सचाईसे इसके द्वारा निम्न घोषणा करता हूँ:

मैं एक ब्रिटिश नागरिक हूँ। मेरा जन्म इंग्लैंडमें हुआ था और मैं ट्रान्सवालमें बस गया हूँ। मैं इस उपनिवेशकी संसदका रजिस्टर्ड मतदाता हूँ; ट्रान्सवालके सर्वोच्च-न्यायालयका अटर्नी हूँ और ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन) का अवैतनिक सहायक मन्त्री भी हूँ। एशियाई जातियोंके स्वेच्छया पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) के, जो समझौता होनेके तुरन्त बाद पिछली १० फरवरीको शुरू हुआ था, आरम्भिक कालमें मुझे संघके सहायक मन्त्रीकी हैसियतसे स्थितिके सम्बन्धमें एशियाई रजिस्ट्रार श्री चैमनेसे विचारविमर्श करनेका बहुत बार मौका मिला था। श्री चैमनेने मुझसे रजिस्ट्रेशन दफ्तरमें ही कहा था कि कानून बेशक संसदका अधिवेशन आरम्भ होते ही रद कर दिया जायेगा, लेकिन शर्त यह है कि स्वेच्छया पंजीयन सन्तोषजनक रूपसे पूरा हो जाये। मैंने उस वक्त यह बात खास तौरसे नोट तो नहीं की, लेकिन मुझे अच्छी तरहसे याद है कि मैंने श्री चैमनेको उन दिनों अलग-अलग अवसरोंपर रजिस्ट्रेशन दफ्तरमें कई लोगोंसे ऐसी ही बात कहते सुना था।

हेनरी एस० एल० पोलक

मेरे सामने,

चास एच० स्मिथ

जस्टिस ऑफ़ द पीस

जोहानिसबर्गमें
आज ९ सितम्बर १९०८ को घोषित

(२) पी० के० नायडूका हलफनामा

मैं जोहानिसबर्गवासी पी० के० नायडू संजीदगी और सचाईसे इसके द्वारा निम्न घोषणा करता हूँ:

जिस दिन श्री गांधीपर समझौतेके सम्बन्धमें हमला किया गया था उस दिन उस घटनाके कुछ घंटे बाद मैं रजिस्ट्रारके दफ्तरमें गया था। एशियाई कानून संशोधन अधिनियमके अन्तर्गत स्वेच्छया पंजीयन प्रार्थनापत्रोंकी रसीदके जो फार्म जारी किये गये थे, उनके विरुद्ध ही मैं दफ्तरमें आपत्ति करने गया था। मैंने रजिस्ट्रारसे कहा था कि भारतीय अधिनियमको न मानेंगे। चूँकि हमें यह विश्वास दिलाया गया है कि स्वेच्छया पंजीयन करा लेनेपर यह कानून रद कर दिया जायेगा, इसलिए ही हम स्वेच्छया पंजीयन करा रहे हैं। उस वक्त श्री नादिरशा कामा मौजूद थे। श्री चैमनेने हमें जोरोंसे विश्वास दिलाया कि स्वेच्छया पंजीयन पूरा होनेपर कानून निश्चय ही रद कर दिया जायेगा। उन्होंने कहा कि एशियाई कानून संशोधन विधेयकके अन्तर्गत फार्म गलतीसे जारी किये गये हैं। हमपर अधिक प्रभाव डालनेके लिए उन्होंने दूसरे फार्म टाइप कराये। उनमें एशियाई कानून संशोधन विधेयकका कोई उल्लेख न था।

पी० के० नायडू
मेरे सामने,
जे० रिल
जस्टिस ऑफ़ द पीस

जोहानिसबर्गमें
आज ५ सितम्बर १९०८ को घोषित

(३) एन० कामाका हलफनामा

मैं जोहानिसबर्गवासी नादिरशा कामा संजीदगी और सचाईसे इसके द्वारा निम्न घोषणा करता हूँ:

मैंने श्री पी० के० नायडूका आजकी तारीखका हलफनामा पढ़ लिया है। मैं उसमें कही गई बातोंकी पुष्टि करता हूँ। लोगोंको समझौता मंजूर करनेके लिए राजी करनेमें मेरा बड़ा हाथ था और मैं श्री चैमनेसे श्री नायडूकी मौजूदगीमें मिलनेके अलावा भी कई बार मिल चुका था। श्री चैमनेने बहुत बार यह आश्वासन दिया था कि कानून रद कर दिया जायेगा। इस तरह वे मेरे हाथ मजबूत करना और लोगोंको शान्त करना चाहते थे।

नादिर कामा
मेरे सामने,
जे० रिल
जस्टिस ऑफ़ द पीस

जोहानिसबर्गमें
आज ५ सितम्बर १९०८ को घोषित

(४) ए० एम० एन्ड्रूजका हलफनामा

मैं जोहानिसबर्गवासी ए० एम० एन्ड्रूज संजीदगी और सचाईसे इसके द्वारा निम्न घोषणा करता हूँ:

वॉन ब्रैंडिस स्क्वेयरमें स्वेच्छया पंजीयनका दफ्तर खुलनेके बाद दूसरे या तीसरे दिन मैं अपना प्रार्थनापत्र देनेके लिए दफ्तरमें घुसा। श्री चैमनेने मुझे अपने अँगूठोंके निशान देनेके लिए कहा। मैंने इससे इनकार कर दिया। मैंने कहा कि शिक्षा सम्बन्धी योग्यताके आधारपर मुझे इससे मुक्त किया जाना चाहिए। एक कारण यह भी था कि मुझे कुछ शक था, क्योंकि उससे पहले दिन मैंने स्वेच्छया पंजीयनकी अर्जीकी रसीदें देखी थीं जो एशियाई कानूनके अन्तर्गत बनाये गये फार्मों पर दी गई थीं। तब श्री चैमनेने मुझे समझाया। उन्होंने कहा कि मुझे अँगूठेके निशान दे देने चाहिए, जिससे सरकारको शिनाख्तका कोई साधन मिल सके। उन्होंने मुझे बताया कि नेताओंने अँगुलियोंके निशान दे दिये हैं, और अँगुलियोंके निशान देना भारतीयोंकी

ओरसे केवल एक सद्‌भावनात्मक काम है, जिसका कानूनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि कानूनके अन्तर्गत छपे फार्मोंपर रसीदें क्लर्ककी गलतीसे जारी की गई हैं। और जब स्वेच्छया पंजीयन पूरा हो जायेगा तब वह कानून विधान-संहितामें से निकाल दिया जायेगा। उस वक्त थम्बी नायडू भी वहाँ मौजूद थे।

ए० एम० एन्ड्रूज
मेरे सामने,
एल० लॉयनेल गोल्डस्मिड
जस्टिस ऑफ द पीस

जोहानिसबर्गमें
आज ९ सितम्बर १९०८ को घोषित

(५) थम्बी नायडूका हलफनामा

मैं जोहानिसबर्ग-निवासी थम्बी नायडू संजीदगी और सचाईसे इसके द्वारा निम्न घोषणा करता हूँ:

जोहानिसबर्ग जेलसे पिछली २९ जनवरीको एशियाई पंजीयन कानूनके बारेमें ट्रान्सवालके उपनिवेश सचिवको जो पत्र[1] भेजा गया था, उसपर मैंने भी हस्ताक्षर किये थे। मैंने जब वह पत्र भेजा था तब मुझे यह पूरा विश्वास था कि एशियाई स्वेच्छया पंजीयन करा लेंगे तो कानून रद कर दिया जायेगा। पत्रमें इसका कोई निश्चित उल्लेख नहीं था, जिससे सरकारकी स्थिति यथासम्भव निर्विघ्न हो सके। लेकिन यह बात कह दी गई थी कि यह कानून उन लोगोंपर लागू न किया जाये जो स्वेच्छासे पंजीयन करा लें और यह धारा उनपर लागू हो जो समझौतेकी तारीखको ट्रान्सवालमें रहनेवाले एशियाइयोंके स्वेच्छया पंजीयनके लिए दी गई तीन महीनेकी मीयाद बीतनेपर भविष्यमें कभी उपनिवेशमें आयें। इससे अभिप्राय यही था कि जब एशियाई अपने दायित्वको ईमानदारीसे पूरा कर देंगे तब १९०७ का कानून २ सरकारके लिए किसी कामका नहीं हो सकता, इसलिए वह स्वभावतः रद कर दिया जायेगा। परन्तु कानूनको रद करनेका वादा ठीक-ठीक क्या हो, इस विषयको उपनिवेश सचिव तथा उक्त पत्रके प्रथम हस्ताक्षरकर्ता श्री गांधीके बीच मुलाकातमें बहसके लिए रख छोड़ा था। उक्त पत्र उपनिवेश-सचिवके पास भेजा जानेके दो दिन बाद ही श्री गांधी प्रिटोरिया बुलाये गये। उनके प्रिटोरियासे लौटनेके बाद सब कैदी छोड़ दिये गये और उसी दिन अर्थात् शुक्रवार ३१ जनवरीको[2], दोपहरके बाद ब्रिटिश भारतीयोंकी एक सभा की गई, जिसमें श्री गांधीने भाषण दिया। इस सभामें श्री गांधीने घोषणा की कि जनरल स्मट्सने कानून रद करनेका वादा किया है; लेकिन शर्त यह है कि एशियाई समझौतेका अपना भाग पूरा कर दें, अर्थात् स्वेच्छया पंजीयनके लिए प्रार्थनापत्र दे दें।

इसके बाद, जब समझौता अमलमें आ गया और जब श्री गांधी और ईसप मियाँपर हमला किया गया उस समय श्री गांधीको और अधिक चोट आनेसे बचानेके प्रयासमें मुझे भी मार खानी पड़ी। मैं पट्टियाँ बँधवा कर ही पंजीयन दफ्तरमें गया और वहाँ मैंने अधिकारियोंको सहायता दी। इसमें कोई शक नहीं कि हमलेका कारण सन्देह था। हमला करनेवाले लोगोंको यह सन्देह था कि श्री गांधीने ठीक काम नहीं किया है। अगर सरकारने कानूनको रद करनेका वादा किया भी है तो वह उसको पूरा न करेगी। हमलेका दूसरा कारण यह था कि नेताओंने दस अँगुलियोंके निशान देकर पंजीयन करानेका सिद्धान्त मान लिया था। इससे पठान और कुछ दूसरे लोग बेहद नाराज हुए। मुझपर और मेरे साथियोंपर यह जिम्मेदारी आ गई थी कि हम लोगोंको स्वेच्छया पंजीयन करानेके लिए तैयार करें। समझौता उचित हुआ है और कानून रद कर दिया जायेगा, लोगोंको इसका विश्वास भी हमें ही दिलाना था।

इस सम्बन्धमें मैंने एशियाई रजिस्ट्रार श्री चैमनेसे कई बार स्थितिपर बातचीत की। श्री चैमनेने मुझसे निश्चित रूपसे कहा था कि स्वेच्छया पंजीयन करानेपर कानून रद कर दिया जायेगा। मुझे मालूम है कि

१. देखिए, खण्ड ८, पृष्ठ ४१।
२. वही, पृष्ठ ४५।

श्री चैमने श्री गांधीके पास एक नोटिसका मसविदा भी ले गये थे, जो कानूनकी मंसूखीके बारेमें 'गज़ट' में छपाया जानेको था। मुझे जो आश्वासन दिया गया था, उसे मैंने अपने देशवासियोंको बता दिया। मुझे निश्चय है कि अगर यह आश्वासन न दिया गया होता तो भारतीय समाजने समझौता मंजूर न किया होता।

सी० के० थम्बी नायडू

मेरे सामने,

ए० एस० सी० बारट्रॉप

जस्टिस ऑफ द पीस

जोहानिसबर्गमें

आज ५ सितम्बर १९०८को घोषित।

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१२८।

परिशिष्ट ५

प्रस्ताव: सार्वजनिक सभामें

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १०, १९०८]

"ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सार्वजनिक सभा उन ब्रिटिश भारतीयोंको भारी सजाएँ दी जानेपर खेद प्रकट करती है, जिनपर मंगलवार, ८ सितम्बरको फोक्सरस्टकी अदालतमें मुकदमे चलाये गये थे। उनमें से कुछ व्यक्ति दक्षिण आफ्रिकाके अत्यन्त प्रमुख भारतीय हैं और ट्रान्सवालमें अनेके इकका दावा उन सभीका है। सरकार ब्रिटिश भारतीयोंको जो कष्ट देती है, उसके बावजूद ब्रिटिश भारतीय इस प्रस्ताव द्वारा निश्चय करते हैं कि वे तबतक कष्ट सहते रहेंगे जबतक उन्हें उनकी शिकायतोंके सम्बन्धमें वह समाधान प्रदान नहीं किया जाता, जिसके वे अधिकारी हैं।"

यह प्रस्ताव सोराबजी शापुरजीने पेश किया। श्री चेट्टियार (अध्यक्ष, तमिल बेनिफिट सोसाइटी) ने उसका अनुमोदन और सर्वश्री अब्दुल गनी, इमाम अब्दुल कादिर बावजीर (अध्यक्ष, हमीदिया इस्लामिया अंजुमन), खुरशेदजी देसाई और पी० लच्छीरामने उसका समर्थन किया।

"यह सभा महामहिम सम्राट्की सरकारसे प्रार्थना करती है कि वह हस्तक्षेप करके अनिश्चितता, चिन्ता और इस अत्यन्त कष्टमय स्थितिको समाप्त कर दे, जो ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय सह रहे हैं।

इस प्रस्तावको श्री इब्राहीम कुवाड़ियाने पेश किया और श्री नादिरशाह कामाने इसका अनुमोदन और सर्वश्री उमरजी साले और पी० के० नायडूने समर्थन किया।

"यह सभा इस प्रस्ताव द्वारा अध्यक्षको अधिकार देती है कि ये प्रस्ताव सम्बन्धित अधिकारियोंको भेज दें।"

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-९-१९०८

परिशिष्ट ६

गांधीजीको लिखा पादरी जे० जे० डोकका पत्र

११ सदरलैंड एवेन्यू
जोहानिसबर्ग
सितम्बर ३०, १९०९

प्रिय बन्धु,

आपकी 'साँग सेलेस्टियल'[1] की सुन्दर भेंट मुझे बहुत पसन्द आई है। यह हर दृष्टिसे मेरे पासकी बहुमूल्य वस्तुओंमें से एक है — रूपमें रुचिर, विषयवस्तुकी दृष्टिसे मनमोहक, अत्यन्त मूल्यवान और मित्रताका स्मृति-चिह्न। इसे मैं कृतज्ञतापूर्वक सदा याद रखूँगा — हाँ सदा, अगर आपकी हार्दिक कामना पूरी हो जाये और मैं उसके लिए जेल चला जाऊँ तो भी।

इस सिलसिलेमें मैं स्वीकार करता हूँ कि हालमें मैं पूरे मनोयोगसे जेल-सुधारके सम्बन्धमें विचार कर रहा हूँ; और, आशा है, इस आधारपर आप मेरे ऊपर किसी स्वार्थमय हेतुका आरोप न करेंगे। फिर भी कौन जानता है कि क्या हो जाये? इस कृपाके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं 'भगवद्गीता'को गहरी दिलचस्पीसे पढ़ रहा हूँ, यद्यपि मैं नहीं कह सकता कि मैं इस सिद्धान्तसे पूरी तरह सहमत हूँ: "जो यह कहता है, मैंने मनुष्यको मारा है और जो यह समझता है, मैं मारा गया हूँ, वे दोनों ही अज्ञानी हैं; आत्मा न मारता है और न मरता है।" लेकिन यह तो बहुत तर्कका विषय है। काव्य और उसमें ग्रथित बहुत-सी शिक्षा सुन्दर है। मैं आज प्रातः क्विनसे मिलनेकी आशासे दफ्तर गया था; लेकिन वे मिले नहीं। मुझे भय है कि वे बेचारे बहुत मुसीबतमें हैं। मूर्खतापूर्ण मुकदमे पहलेकी तरह ही चल रहे हैं — इनमें एक, जो दूसरेसे ज्यादा स्पष्ट है, अभी एक क्षणके लिए — केवल एक क्षणके लिए — जनताके ध्यानमें आया है, वह कल विस्मृत हो जायेगा। ऐसे ही हम सब भी विस्मृत हो जायेंगे और अन्तमें एशियाई प्रश्न भी तय हो जायेगा। हिम्मत रखिए, मेरे मित्र, अब भी सब अच्छा ही होगा।

आप कोशिश कीजिए और अगर हो सके तो अभी जेल जाने, निर्वासित होने या इस तरहकी अन्य बातोंसे बचिए। मुझे हजारों प्रश्न पूछने हैं। उनमें से हरएकपर, बेशक, साम्राज्यका कल्याण निर्भर है। मैं जानना चाहता हूँ कि भारतीयोंने तार भेजकर आपको भारतसे क्यों बुलाया?[2] मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या डर्बनके लोगोंने भारतीय डोली-वाहकोंको कोलेंजो और स्पिअन कोप जाते समय अच्छी तरह विदाई दी थी?[3] और आपने लड़ाईके मैदानमें जो काम किया, क्या उससे लोगोंका आपके प्रति मैत्रीभाव बढ़ा था? तबसे जो-कुछ हुआ है, मैं वह सब जानता हूँ। और मैं आपकी कैबिनेट साइजकी एक अच्छी तसवीर खास तौरसे चाहता हूँ। उसमें आप अपनी टोपी न लगाये हों। तो, आप अभी गिरफ्तार न हों। हम सब श्रीमती गांधीको और आपको प्रेमपूर्वक याद करते हैं।

आपका विश्वस्त,
जोजेफ जे० डोक

[पुनश्चः]

ऑलिवने मुझे बताया है कि आपका जन्म-दिन निकट है। आप चिरजीवी हों और ईश्वर आपको सुखी रखे।

हस्तलिखित मूल अंग्रेजी प्रति (एस० एन० ४८८३) की फोटो-नकलसे।

१. भगवद्गीताका एडविन ऑर्नोल्ड कृत पद्यानुवाद।
२. सन् १९०२ में; देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३८४।
३. वही, पृष्ठ १३८-३९ और पृष्ठ १५७-५८।

परिशिष्ट ७

जेलमें बरताव : सख्त मेहनत

(१) ब्रिटिश भारतीय संघ, जोहानिसबर्ग द्वारा अक्तूबर १५, १९०८ को दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति, लन्दनको भेजे गये तारका अंश

"...गांधी आज पब्लिक स्क्वेयर, फोक्सरस्टमें मशक्कत कर रहे हैं..."

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: १७९/२५१

(२) नेटाल इंडियन कांग्रेस, डर्बन द्वारा एल० डब्ल्यू० रिच, लन्दनको भेजे गये तारका अंश

"... गांधी तथा अन्य मार्केट स्क्वेयरमें मशक्कत कर रहे हैं: ऐसे बरतावपर क्षोभ प्रकट किया जाता है..."[1]

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: १७९/२५१

(३) उपनिवेश कार्यालय, लन्दनको लिखे एल० डब्ल्यू० रिचके दिसम्बर १, १९०८के पत्रका पाठ

मेरी समितिका ध्यान कर्नल सीलीके उत्तरकी ओर आकर्षित किया गया है। कल डॉक्टर रदरफोर्ड द्वारा कॉमन्स सभामें पूछे गये सवालके जवाबमें उन्होंने यह कहा था कि ट्रान्सवालके गवर्नरसे प्राप्त एक तारसे ज्ञात होता है कि श्री गांधीने कभी भी आम सड़कोंपर मशक्कत नहीं की है।

मुझे मन्त्री महोदयको यह सूचित करनेका निर्देश मिला है कि मेरी समितिको आज सुबह एक तार मिला है, जो इस प्रकार है:

"कर्नल सीलीको गांधीजीके प्रति बरतावके बारेमें बिलकुल गलत सूचना मिली है। हलफनामे भेज रहे हैं।"

मुझे यह बता देनेका भी निर्देश है कि अक्तूबर १७ को रायटरके फोक्सरस्ट-स्थित संवाददाताने जोहानिसबर्गके समाचारपत्रोंको इस प्रकारका तार दिया था:

"श्री गांधी-सहित जिन भारतीयोंको कल सजा सुनाई गई थी वे आज यहाँके मार्केट स्क्वेयरमें सड़क बनानेका काम कर रहे थे।"

इसके अलावा, पादरी जे० जे० डोकने २१ अक्तूबरको पादरी एफ० बी० मायरको एक पत्र लिखा था। उसमें लेखक कहते हैं:

"श्री गांधीको पिछले बुधवारको २ महीनेकी सख्त कैदकी सजा हुई और वे अब कैदियोंकी पोशाकमें काफिरोंके झुंडके साथ फोक्सरस्टमें मार्केट प्लेसमें हाथमें गैंती लिये सड़क बनाते हुए देखे जा सकते हैं।"

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१३२

(४) 'रैंड डेली मेल' को लिखे रॉबर्ट सदरलैंडके पत्रका अंश

... यदि राष्ट्रपति क्रूगरने श्री गांधी तथा अन्य उच्च वर्गके शिक्षित ब्रिटिश भारतीयोंको, केवल इस कारणसे कि उन्हें सजा मिली है, जेलकी पोशाकमें भूतपूर्व गणतंत्रकी आम सड़कोंपर पत्थर तोड़नेके लिए भेजा होता; यदि उन्होंने भारतीय स्त्रियों तथा बच्चोंके प्रति अमानवीय बरताव किया होता, जैसा कि एक चश्मदीद गवाह

१. रिचने इन तारोंकी नकलें १७ अक्तूबरको कलोनियल ऑफिस, लन्दनको भेज दी थीं।

हमारे सीमान्त शहरमें हुआ बताता है, और मुसलमान राजनीतिक वन्दियोंको चर्बी खाने या भूखे रहनेपर मजबूर किया होता; यदि उन्होंने भारतकी समतल भूमिमें जन्मे और पले लोगोंको शीतकालकी किसी सुबह — और सो भी ऐसी सर्द हवाके दिनोंमें, जो उनके लिए बहुत सख्त हो — बर्फ-जैसे ठंडे पानीमें पूरे एक घंटे तक बिल्कुल नंगा खड़ा रखा होता तो ब्रिटिश सरकारने चौबीस घंटेके अन्दर यह सब बन्द कर देनेके लिए अन्तिम चेतावनी दे दी होती। तथापि यह ब्रिटिश उपनिवेश, जिसकी स्थापना मात्र अट्ठारह महीने पूर्व हुई थी और अभी-अभी जो राजनीतिक प्रतिबन्धोंसे मुक्त ही हुआ है, यह सब निःशंक होकर कर रहा है। . . . श्री गांधीका अपराध वस्तुतः यही है कि वे इन घृणित कानूनोंका विरोध करते हैं; और उन्हें तीरके चौड़े चिह्नोंसे अलंकृत कपड़े पहने हुए, फोक्सरस्टकी सड़कोंपर गिट्टी फोड़कर इस अपराधका फल भोगना पड़ रहा है। भारतमें ऐसे सम्माननीय व्यक्ति हैं, जो दर्जेमें नेपालके प्रधान-मन्त्रीसे, जो हालमें ही इंग्लैंडके सम्मानित अतिथि रहे हैं, कहीं ऊँचे हैं और कई ऐसे हैं जो सेन्ट जेम्सके दरबारमें इस देशके किसी व्यक्तिसे पहले स्थान पाते हैं। लेकिन ऐसे ऊँचेसे-ऊँचे दर्जेके व्यक्तिके लिए भी ट्रान्सवालके कानूनमें उसी अपमानका विधान हैं।

श्री गांधी, जिन्हें इस देशके कानूनोंके अनुसार सजा दी गई है, उसी वर्गके व्यक्ति हैं, जिसके नेपालके प्रधानमन्त्री हैं। उनके पिता अपनी मृत्युके समय पश्चिमी भारतकी एक रियासतके प्रधानमन्त्री थे और उनका भी वही दर्जा था। श्री गांधी स्वयं भी उच्च शैक्षणिक योग्यताओंवाले व्यक्ति हैं। वे इन्स ऑफ़ कोर्टके बैरिस्टर हैं। उनका चरित्र बड़ा ऊँचा है और वे आदर्श जीवन बिताते हैं। वे जन्मसे हिन्दू हैं; परन्तु उन्होंने अपने मार्गदर्शनके लिए सभी धर्मोंके सर्वोत्तम तत्त्व स्वीकार कर लिये हैं। उनमें ईसाई धर्म भी शामिल है, जिसका सार उन्होंने अधिकतर नामधारी ईसाइयोंकी अपेक्षा कहीं अधिक सख्तीसे आचरणमें उतारा है।

बताया जाता है कि न्यायाधीशने सजा सुनाते समय कहा था कि मुझे एक ऐसे व्यक्तिको, जो इस देशके न्यायालयोंका वकील है, इस दशामें देखकर दुःख होता है, और यदि मैं न्यायाधीशकी कुर्सीपर न होकर अपने निजी घरमें होता तो इतने ही औचित्यके साथ यह भी कह सकता कि मुझे एक ऐसे कानूनको अमलमें लानेमें शर्म महसूस होती है, जिसने एक उच्च विचारोंवाले देशभक्तको अपने देशके सम्मान तथा देशभाइयोंकी खातिर अपनेको बलिदान करनेपर मजबूर किया है।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ७-११-१९०८

(५) "ट्रान्सवाल संघर्षपर टिप्पणी" का अंश

शनिवारको भारतीय बन्दियोंको २० से २५ तक की कमानोंमें म्यूनिसिपैल्टीके वॉटर वर्क्सपर काम करने तथा श्मशान साफ करने व सैनिकोंकी कब्रोंकी मरम्मत करनेको भेजा गया था। श्री गांधी भी उनमें शामिल थे। बोअर युद्धमें बीमार तथा घायल व्यक्तियोंकी सेवा करने और हालके नेटाल विद्रोहमें डोली-वाहक दल (स्ट्रेचर बेयरर कोर) का नेतृत्व करनेके बाद उन्हें अपना यह आजका काम सोचकर अजीब लगा होगा — समय बदलता है।

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २१-११-१९०८

(६) आर० एम० सोढाका हलफनामा[1]

मैं, नेटालका रतनशी मूलजी सोढा, जो अभी जोहानिसबर्गमें हूँ, गम्भीरतापूर्वक और ईमानदारीसे यह घोषित करता हूँ:

अक्तूबर १४ को श्री गांधीको, कुछ अन्य भारतीयोंको और मुझे फोक्सरस्टमें सख्त कैदकी सजाएँ सुनाई गई थीं। १५ तारीखकी सुबह श्री गांधीको, मुझे तथा १३ अन्य लोगोंको, करीब १५ वतनियोंके साथ, इस

१. इसकी तथा तीन और हलफनामोंकी नकलें रिचने उपनिवेश कार्यालयको भेज दी थीं।

वाड़के समीप कृषि-प्रदर्शनी स्थलपर काम करने ले जाया गया, जो उस जमीनको आम सड़कसे अलग करता है। वहाँ हमारा काम पत्थरोंको खोदना व हटाना था। हम उस जमीनको आम सड़कसे अलग करनेवाली वाड़के बिल्कुल नजदीक थे। हम सड़कसे भी बिल्कुल करीब थे, और वहाँसे गुजरनेवाला कोई भी व्यक्ति हमें आसानीसे देख सकता था और साफ सुन सकता था कि वहाँ क्या बातें हो रही हैं। बहुत-से यूरोपीय तथा वतनी उस तरफसे गुजरे भी। वह जमीन फोक्सरस्टकी म्युनिसिपैल्टीकी हदमें है और उस सड़कपर काफी लोग चलते हैं। भारतीय कैदियोंके पहरेपर नियुक्त यूरोपीय संतरी श्री गांधीसे बार-बार और मेहनतसे काम करनेको कहता रहा, हालाँकि श्री गांधी अपनी शक्तिभर ज्यादासे-ज्यादा मेहनत कर रहे थे। उधरसे गुजरनेवालोंको यह सब साफ-साफ सुनाई दिया होगा। वह सन्तरी जिन शब्दोंका प्रयोग कर रहा था वे ठीक-ठीक ये थे: "मेहनत करो, गांधी; मेहनत करो।"[1] श्री गांधीने जवाब दिया कि मैं अपनी शक्तिभर अधिकसे-अधिक काम कर रहा हूँ और ज्यादा भी करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। जब श्री गांधी अपनी हथेलियोंपर, जो छालोंके छिल जानेसे गीली हो रही थीं, मिट्टी मलनेके लिए जमीनसे मिट्टी उठानेको झुके थे तब यह देखकर भी सन्तरी उसी तरह पीछे पड़ा रहा। जब करीब ९ घंटेके लगातार श्रमके बाद, जिसमें १२ और १ बजेके बीच सिर्फ एक घंटेका विराम था, श्री गांधी जेलको लौटे तो वे दर्द और थकानसे इतने जकड़ गये थे कि कठिनाईसे चल पाते थे। उसी दिन १२ बजे एक भारतीय कैदी अधिक मेहनत और गर्मीके मारे तथा पानीके अभावमें, क्योंकि वार्डरने उसे पानी पीने नहीं जाने दिया, बेहोश हो गया था और उसे एक कूड़ा-गाड़ीमें जेल ले जाया गया था। श्री गांधी उस गाड़ीमें उसके साथ गये। उस दिन तीसरे पहर हम एक वतनी सन्तरीकी निगरानीमें थे। वह भी श्री गांधीसे काम करते रहनेको बराबर कहता रहा, यद्यपि वे अपनी शक्ति-भर कर रहे थे। जो शब्द इस्तेमाल किये गये थे वे ये थे: "मेहनत करो, गांधी; मेहनत करो।" उधरसे गुजरनेवाले आसानीसे यह सुन व देख सकते थे। अगले दिन हमें सड़कके किनारेकी एक जमीन पर ले जाया गया। यह जमीन सुलेमान अहमद काजीके स्टोरके करीब-करीब सामने थी। श्री काजी स्टोरके सामने खड़े थे। वे, जो-कुछ हो रहा था, सब आसानीसे देख व सुन सकते थे। यह तो खैर, सड़कके उस पारसे होता था; परन्तु राहगीर हमारे बिल्कुल करीब आ सकते थे। हम पेड़ोंके लिए गड्ढे खोद रहे थे और पहले दिनकी ही तरह उस दिन भी हमने नौ घंटे काम किया।

(हस्ताक्षर) आर० एम० सोढा
मेरे सामने,
(हस्ताक्षर) ए० एल० सी० वारट्रॉप
जस्टिस ऑफ़ द पीस

जोहानिसबर्गमें
आज ३० नवम्बर १९०८को घोषित।

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: २९१/१३२।

(७) ट्रान्सवालके प्रधानमन्त्रीकी टिप्पणी

[प्रिटोरिया
जनवरी ३०, १९०९]

मन्त्रियोंको परमश्रेष्ठ गवर्नरकी पिछले दिसम्बर ३१ की टिप्पणी, संख्या १५/१/०८, और परमश्रेष्ठ डिप्टी गवर्नरकी १४ तारीखकी टिप्पणी, संख्या १५/१/०९, की प्राप्ति स्वीकार करनेका सौभाग्य प्राप्त है। इनके साथ क्रमशः माननीय उपनिवेश-मन्त्रीके खरीते, संख्या ४२४ और ४५१, भी हैं। ये सब श्री गांधीके साथ, जब वे जेलकी सजा भुगत रहे थे, किये गये बरतावके विषयमें हैं।

[1] "कम ऑन, गांधी; कम ऑन गांधी।"

२. जाहिर है कि दो बातोंके सम्बन्धमें जानकारी माँगी गई है। और वे हैं: फोक्सरस्टमें और जोहानिसबर्ग रेलवे स्टेशनसे जेल तक की यात्रामें श्री गांधीके साथ बरताव।

३. पहली बातके सम्बन्धमें, माननीय उपनिवेश-मन्त्रीको नवम्बर ३ को भेजे गये तारकी मन्त्रिगण पुष्टि करते हैं। उस तारमें यह कहा गया था कि श्री गांधी, जो हमेशा भारतीय कैदियोंकी कमानमें काम करते हैं, ढाई दिन फोक्सरस्टमें कृषिके प्रदर्शन-स्थलमें कामपर लगाये गये। वहाँ वे पेड़ोंके लिए गढ़े खोदते थे। उसके बाद उनसे म्यूनिसिपैलिटीके तथा जेलके बगीचोंमें काम लिया गया। उन्होंने कभी भी आम सड़कोंपर कठिन मेहनतका काम नहीं किया था। आगे जाँच करनेपर भी यह जाहिर होता है कि भारतीय कैदियोंके साथ जेलके नियमोंका पालन करते हुए हर तरहकी मुरौवतसे काम लिया जाता था। वे बिल्कुल हलके ढंगका काम करते थे, और पानीकी तो जब भी जरूरत हुई, कभी मनाही ही नहीं की गई। एक कैदी बेहद गर्मीसे बेहोश हो गया था और उसे कूड़ा-गाड़ीमें नहीं, जैसा कि आरोप है, बल्कि एक साधारण गाड़ीमें जेल वापस भेज दिया गया था।

४. दूसरी बातके सम्बन्धमें, मन्त्रिगणका यह निवेदन है कि श्री गांधी फोक्सरस्टसे जोहानिसबर्ग-जेलको जेलके नियमोंके अनुसार जेलके ही कपड़ोंमें भेजे गये थे। जोहानिसबर्ग स्टेशनपर फोक्सरस्टसे यात्राके दरम्यान साथके सन्तरीने श्री गांधीसे कहा था कि वह उनके लिए एक गाड़ी ला देनेको तैयार है। स्टेशन पहुँचनेपर उसने फिर वह प्रस्ताव दुहराया। फिर भी श्री गांधीने जेल तक पैदल जाना पसन्द किया और नियमोंके अनुसार वे अपना सामान खुद उठाकर ले गये। जेल पहुँचनेपर उन्हें मुख्य सन्तरीने दाखिल किया। श्री गांधीने उससे कहा कि मुझे कोई शिकायत नहीं करनी है। अगले दिन जेलके गवर्नर उनसे मिले। उनसे भी उन्होंने वही बात कही।

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: २९१/१३६

परिशिष्ट ८

जेलमें दुर्व्यवहार: (क) कैदियोंकी पोशाकमें पैदल ले जाये गये

(१) समाचारपत्रोंको एच० एस० एल० पोलकके २६ अक्तूबर, १९०८ के पत्रका एक अंश

श्री गांधीको शिनाख्तके लिए बिल्कुल अनावश्यक अँगुलियोंकी छाप न देनेके कारण दो महीनेकी सख्त कैदकी सजा हुई है। उनसे फोक्सरस्टकी आम सड़कोंपर काम कराया जा रहा है। इसके लिए किसीको शिकायत नहीं है। यह तो उस दण्डका हिस्सा है, जिसे उन लोगोंको सहन करना है, जिन्हें जनरल स्मट्स अन्तरात्मागत आपत्ति करनेवाले (कॉन्शेंशस ऑब्जेक्टर्स) कहते हैं। किन्तु क्या श्री गांधीको कैदियोंके वस्त्रोंमें फोक्सरस्टसे जोहानिसबर्ग लानेका, जैसा कि कल हुआ, और उन्हें पार्क स्टेशनसे फोर्ट तक सरेआम पैदल ले जानेका भी कोई औचित्य है? निस्सन्देह यह सब कायदे-कानूनका ही हिस्सा था। मेरा विश्वास है कि जब स्पेनकी ईसाई अदालतें[1] (स्पेनिश इनक्विजीशन) अपराधियोंको, जिनमें शायद मेरे पूर्वज भी रहे होंगे, जलील करना चाहती थीं तब वे उन्हें प्रचलित रीतिसे जिन्दा जला देनेसे[2] पहले झोलानुमा पीले वस्त्र पहनाकर इसी तरह सड़कोंपर

१. रोमन कैथॉलिक धर्मके विरुद्ध अपराध करनेवालोंको दण्डित करनेके लिए १३ वीं शताब्दीमें यूरोपके विभिन्न देशोंमें धार्मिक अदालतें नियुक्त हुई थीं। ये अदालतें धर्मके नामपर अत्याचार करनेके लिए कुख्यात थीं। अपराधियोंको सामान्यत: जीवित जला दिया जाता था, या अन्य यातनाएँ दी जाती थीं। स्पेनमें ऐसी ईसाई अदालतें सबसे अधिक समय, सन् १२३७ से १८२० ई० तक, रहीं।

२. अपराधियोंको जीवित जला दिये जानेका दण्ड मिलता था, क्योंकि रोमन कैथॉलिक चर्चके नियमानुसार रक्त बहानेका निषेध है।

घूमाती थीं। ऐसा नहीं लगता कि हम ट्रान्सवालके अंग्रेज, अपने अपराधियोंका दिमाग दुरुस्त करनेकी अपनी इच्छामें उन मध्ययुगीन यन्त्रणाओंके तरीकोंसे कुछ आगे बढ़े हैं। क्या इसमें कुछ आश्चर्यकी बात है कि भारतीय समाज उत्तरोत्तर कटु और अधीर होता जा रहा है; और क्या आप इसकी सराहना नहीं करेंगे कि उन आघातों और अपमानोंके बावजूद उस समाजके लोग केवल सत्याग्रही बने रहनेमें सन्तुष्ट हैं और उपनिवेशके अपने यूरोपीय सह-निवासियोंको कष्ट देनेके बजाय स्वयं कष्ट सहन कर रहे हैं? इन गैर-ईसाई लोगोंके ईसाइयों-जैसे उदाहरणकी तुलना उनके ईसाई शासकोंकी बर्बर क्रूरताओंसे कीजिए। इस सबके विचार-मात्रसे लज्जा आती है।

[अंग्रेजी से]

इंडियन ओपिनियन, ३१-१०-१९०८

(२) "एक दिल दहलानेवाला दृश्य"[1]

पिछले रविवारको श्री गांधी फोक्सरस्ट जेलसे जोहानिसबर्गकी फोर्ट जेल ले जाये गये। उन्हें डाह्यालालके मुकदमेमें सरकारी गवाहके तौरपर अदालतमें उपस्थित होनेका आदेश दिया गया था। डाह्यालालपर जाली पंजीयन प्रमाणपत्र रखनेका अभियोग था और अब उनका मुकदमा फौजदारीकी अदालतमें भेजा जा रहा है। श्री गांधीको कैदियोंकी वर्दीमें एक वार्डरकी देखरेखमें जोहानिसबर्ग ले जाया गया। [ब्रिटिश भारतीय] संघकी समितिके कुछ सदस्योंको उनके तबादलेकी खबर लग गई थी, और शामको छः बजे गाड़ी जब पार्क स्टेशन पहुँची तब वे वहाँ मौजूद थे। श्री गांधी कैदियोंकी वर्दीमें थे। वे अपने कपड़ोंका बंडल एक बड़े थैलेमें लिये थे, जिसपर तीरका चौड़ा निशान बना था। वे एक टोकरी भी लिये थे, जिसमें किताबें थीं। उन्हें हिरासतमें ही पार्क स्टेशनसे फोर्टतक पैदल ले जाया गया। उस समय उजाला हो चुका था और सड़कें तमाशबीनोंसे भरी हुई थीं, जिनमें से कुछने श्री गांधीके भद्दे वस्त्रोंके बावजूद उन्हें पहचान लिया। श्री गांधी आसानीसे पहचानमें आ जायें, ऐसी रंगदार कैदियोंकी वर्दी पहने हुए थे। निस्सन्देह यह सब कायदेके मुताबिक हुआ, लेकिन यह बात सरकारकी एशियाई-विरोधी नीतिका ही दृष्टान्त है कि श्री गांधीका तबादला साधारण कपड़ोंमें हो और उन्हें फोर्ट तक बग्घीमें ले जाया जाये, इस आशयके कोई निर्देश नहीं जारी किये जायें। जबतक सुसंस्कृत भारतीय सत्याग्रहियों और अन्तरात्मागत आपत्ति करनेवालोंके साथ ऐसा बरताव किया जाता रहेगा, जैसे वे कोई जघन्य अपराध करनेवाले असभ्य वतनी हों, तबतक यह संघर्ष जारी रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-१०-१९०८

(३) एच० एस० एल० पोलकका हलफनामा

मैं, जोहानिसबर्गका हेनरी सॉलोमन लिओन पोलक, गम्भीरतापूर्वक और सच्चे मनसे निम्नलिखित घोषणा करता हूँ :

मैं एक ब्रिटिश प्रजा हूँ, मेरा जन्म इंग्लैंडमें हुआ था, और मैं ट्रान्सवालके सुप्रीम कोर्टका अटर्नी हूँ। मैं ब्रिटिश भारतीय संघका सहायक अवैतनिक मन्त्री हूँ। मैं गत २५ अक्तूबर रविवारको तीसरे पहर उस समय मौजूद था जब श्री गांधी नेटालवाली गाड़ीसे फोक्सरस्टसे [यहाँ] पहुँचे। वे हिरासतमें थे और कैदियोंकी वर्दी पहने थे। वे एक बड़ा बंडल और किताबोंकी एक टोकरी लिये थे। गाड़ी नियत समयपर शामको ६ बजे आई। उस समय दिनका पूरा उजाला था। सूरज उसके काफी देर बाद डूबा। श्री गांधीको स्टेशनसे जोहानिसबर्ग जेल तक आम सड़कोंसे पैदल ले जाया गया। इसमें कोई बारह मिनट लगे होंगे। इस सारे

१. यह साप्ताहिक स्तम्भ "ट्रान्सवालके संघर्षपर टिप्पणियाँ : हमारे संवाददाता की ओरसे" के अन्तर्गत छापा गया था।

समय काफी उजाला रहा होगा। मैं श्री गांधीके बगलमें चलता हुआ जेलकी ओर कुछ दूर तक गया। जेलसे आधे रास्तेपर मैं श्री गांधीसे अलग हो गया। इसके बाद अपनी ट्राम पकड़नेके लिए मैं वापस कोई दस मिनटतक चला और फिर घर चला गया। जब मैं घर पहुँचा, उस समय भी दिनकी धुँधली रोशनी थी। जब श्री गांधी सड़कोंसे गुजर रहे थे तब हरएक राहगीर उन्हें साफ देख सकता था और कई लोगोंने उन्हें पहचान लिया। उस संध्याको सूर्यास्तका समय ६ बजकर १७ मिनट था। मैं यह बयान इसलिए दे रहा हूँ कि, कहा गया है, श्री गांधीको सूर्यास्तके बाद सड़कोंसे ले जाया गया था। यह बात सच नहीं है। जितने समय मैं श्री गांधीके साथ रहा, दिनका पूरा उजाला था।[1]

(हस्ताक्षर) एच० एस० एल० पोलक

मेरे सामने,

जोहानिसबर्गमें
आज ३० नवम्बरको घोषित

(हस्ताक्षर) ए० एल० सी० बारट्रॉप
जस्टिस ऑफ़ द पीस

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: २९१/१३२

(ख) हथकड़ियाँ पहनाकर पैदल चलाया गया

(१) 'रैंड डेली मेल' को पादरी जे० जे० डोकका पत्र[2]

[जोहानिसबर्ग
मार्च ११, १९०९]

सेवामें
सम्पादक
'रैंड डेली मेल'
महोदय,

जैसा कि आपके अधिकतर पाठक जानते हैं, श्री गांधी अपनी शिनाख्तके साधन प्रस्तुत न करनेके अपराधमें तीन महीनेकी कड़ी कैदकी सजा भोग रहे है।

उन्हें अब फोक्सरस्ट से हटाकर प्रिटोरियाकी सेंट्रल जेलमें तनहाईमें रखा गया हैं।

कल उनका किसी मुकदमेके सिलसिलेमें मजिस्ट्रेटकी अदालतमें उपस्थित होना जरूरी हो गया था। मुझे पता चला है कि उन्हें साधारण कपड़ोंमें, लेकिन हथकड़ी लगाकर जेलकी कोठरीसे वहाँ लाया गया।

निःसन्देह हममें कुछ ऐसे लोग हो सकते हैं जिन्हें यह जानकर खुशी होगी कि इस महान् भारतीय नेताको बराबर अपमानका शिकार बनाया जा रहा है; लेकिन मैं यह आशा करनेका साहस करता हूँ कि हमारे अधिकांश उपनिवेश इस बातपर लज्जित और क्रोधित होंगे कि श्री गांधी-जैसे चरित्र और प्रतिष्ठावाले व्यक्तिको अकारण ही इस प्रकार अपमानित किया जा रहा है।

---

१. ऐसा ही एक हलफनामा थम्बी नायडूने भी दिया था। ये उन हलफनामोंमें शामिल थे, जिनकी नकल एल० डब्ल्यू० रिचने २१ दिसम्बरको उपनिवेश कार्यालयको भेजी थीं।

२. यह पत्र और इसके बादवाला पत्र, दोनों ही २०-३-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में पुनः प्रकाशित किये गये थे। इसके अतिरिक्त २७-३-१९०९ के **इंडियन ओपिनियन**में "हैंडकफ्ड" (हथकड़ी पहनाई गई) शीर्षकसे एक सम्पादकीय भी छपा था।

श्री गांधी अपनी इच्छासे नेटालसे यहाँ गिरफ्तार होनेके लिए आये थे। उन्होंने अधिकारियोंके साथ अपने व्यवहारमें सदैव ज्यादासे-ज्यादा उदारताका परिचय दिया है। तब भला उनका ऐसा लज्जास्पद अपमान क्यों किया गया?

निःसन्देह कुछ लोग कहेंगे, "यह तो महज जेलके कायदेकी बात है।" मुझे यह बतानेकी अनुमति दें कि श्री गांधी जिस वर्गके कैदी हैं उस वर्गके कैदीके लिए कोई कायदा नहीं है; क्योंकि वह वर्ग अपराधियोंका नहीं है, बल्कि जैसा कि श्री स्मट्सने कहा, "अन्तरात्मागत आपत्ति करनेवालों" का है। फोक्सरस्टसे प्रिटोरिया तक हथकड़ियोंकी जरूरत नहीं समझी गई थी, और न उनका उपयोग जोहानिसबर्गमें ही किया गया। निश्चय ही, प्रिटोरियामें इस अनावश्यक अपमानको टालना चाहिए था।

बताया गया है कि परमश्रेष्ठ उच्चायुक्त महोदयने गत सप्ताह केप टाउनमें वतनियोंके सवालपर अपने बहुत ही अच्छे भाषणमें "तंग करनेकी नीति" और उसके "समग्र रूपसे होनेवाले प्रभाव" के बारेमें जोरदार शब्दोंमें अपने विचार व्यक्त किये।

यही "तंग करनेकी" नीति है, जिसे एशियाइयोंके विरुद्ध, किन्हीं गैरजिम्मेदार लोगों द्वारा नहीं, बल्कि सरकारके अधिकारियों द्वारा लागू किया जा रहा है। इससे भारतमें जनताकी झुँझलाहट बढ़ती है और, साथ ही, इससे इस कठिन समस्याका निदान करना भी लगभग असम्भव हो जाता है।

आपका, आदि,
जोजेफ जे० डोक

[अंग्रेजीसे]
रैंड डेली मेल, १२-३-१९०९

(२) 'ट्रान्सवाल लीडर'को लिखा एमिल नैथनका पत्र

[जोहानिसबर्ग
मार्च १२, १९०९]

श्री गांधी एक बड़े कामके सिलसिलेमें, जिसे उन्होंने सही हो या गलत, अपना लिया है, तीन माहकी कैद भोग रहे हैं। कुछ दिन हुए ऐसी खबर उड़ी थी कि जब वे प्रिटोरियाकी एक अदालतमें बयान दे रहे थे उस समय उनके हाथोंमें हथकड़ियाँ पड़ी थीं। इस खबरको सच मानना कठिन था, लेकिन आपके आज सुबहके अंकमें पादरी डोकने इस खबरकी ओर फिर ध्यान आकृष्ट किया है।

मुझे नहीं मालूम कि जेलके कायदोंके अनुसार किसी कैदीको अदालतमें गवाही देते समय सब परिस्थितियोंमें हथकड़ी पहनाना जरूरी है या नहीं। यदि यह सच है कि श्री गांधीको — जो निहायत शान्त और सरल, उच्च शिक्षा-प्राप्त और अत्यन्त शिष्ट व्यक्ति हैं — हथकड़ियाँ पहनाकर अनावश्यक अपमानका भागी बनाया गया था तो मुझे यह बात बहुत ही बर्बर, अत्यन्त लज्जास्पद और शर्मनाक लगती है।

मुझे विश्वास है कि इसकी जाँच की जायेगी, और यदि खबर सच्ची तथा [हथकड़ी पहनानेकी] कार्रवाई नाजायज हो तो [श्री गांधीके प्रति किये गये] अन्याय और अपमानका प्रतिकार किया जायेगा और गलती करनेवालेको पर्याप्त दण्ड दिया जायेगा।

आपका, आदि,
एमिल नैथन

[अंग्रेजीसे]
ट्रान्सवाल लीडर, १५-३-१९०९

(३) "खेद-प्रकाशन"[1]

विषयकी चर्चाके दौरान ही हम इस बातपर खेद प्रकट करना चाहेंगे, और हमारा विश्वास है कि यह खेद-प्रकाश नेटालकी सामान्य जनताकी ओरसे है, कि ट्रान्सवालके कुछ अधिकारियोंने अभी उस दिन श्री गांधीको पुलिस अदालतमें गवाही देनेके लिए पैदल ले जाते समय हथकड़ियाँ पहनाकर उन्हें अपमानित करना आवश्यक समझा। हमारा विश्वास है कि कायदोंके अन्तर्गत ऐसी ही व्यवस्था है। लेकिन श्री गांधी और कुछ नहीं तो एक राजनीतिक कैदी हैं, और इस दृष्टिसे उन्हें नीची हालतमें गिरे हुए अपराधियोंकी अपेक्षा बेहतर व्यवहार पानेका हक हैं। जो कायदा किसी आदमीको, उसपर कोई भी अभियोग क्यों न हो, ऐसे व्यवहारका भागी बनाता है, अमानुषिक है; और इस खास मामलेमें तो उसका उपयोग और भी नहीं करना चाहिए था, क्योंकि इससे एशियाइयोंके प्रति ट्रान्सवाल [सरकार] के रवैयेके विरोधियोंको एक नया कारण मिलेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-३-१९०९

(४) कामन्स सभामें प्रश्न

श्री ओ'ग्रेडीने पूछा कि क्या उपनिवेश उपमन्त्रीको ज्ञात है कि ट्रान्सवालके भारतीय नेता श्री गांधीको, जो पंजीयन कानूनोंके अन्तर्गत तीन महीनेकी कड़ी कैदकी सजा भोग रहे हैं, १० मार्चको प्रिटोरिया जेलसे मजिस्ट्रेटकी अदालत तक, जहाँ कि उनकी उपस्थिति गवाहके रूपमें आवश्यक थी, हथकड़ी पहनाकर ले जाया गया; क्या वे इस बातकी जाँच करेंगे कि अधिकारियोंने श्री गांधीको जानबूझकर इस प्रकार अपमानित किया था अथवा ऐसा गल्तीसे हुआ; और क्या ट्रान्सवाल सरकारसे प्रार्थना की जायेगी कि वह ब्रिटिश भारतीयोंके साथ, जो अपनी अन्तरात्माके अर्थ जेल जा रहे हैं, नैतिक अपराधोंके लिए दण्डित कैदियोंकी अपेक्षा कम कठोर व्यवहार करे?

कर्नल सीली: ऐसा कोई प्रमाण नहीं है कि श्री गांधीको कोई विशेष असुविधा सहनी पड़ी है। श्री गांधीके साथ हर दृष्टिसे वैसा ही व्यवहार किया गया जैसा कि किसी दूसरे कैदीके साथ होता, और पहले एक मौके-पर श्री गांधीने स्वयं कहा था कि मैं दूसरी तरहका व्यवहार नहीं चाहता. . . मुझे अपने इस कथनके ठीक होनेमें विश्वास है कि श्री गांधीके साथ किसी विशेष प्रकारका अपमानजनक व्यवहार नहीं किया गया है . . . मेरे सामने जो प्रमाण आये हैं उनसे मैं सन्तुष्ट हूँ कि श्री गांधीको उस अपमानसे तनिक भी ज्यादा नहीं सहन करना पड़ा है जो वैसे किसी मामलेमें किसी भी रंगके किसी भी व्यक्तिको सहना पड़ता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-६-१९०९

(५) ट्रान्सवालके प्रधानमन्त्रीकी कार्यवाही

प्रधानमन्त्रीका कार्यालय
प्रिटोरिया
मई २१, १९०९

कार्यवाही नं० २२३

मन्त्रियोंको परमश्रेष्ठ डिप्टी गवर्नरके इस माहकी १३ तारीखकी कार्यवाही, संख्या १५/१/०९ (२), की प्राप्ति स्वीकार करनेका सम्मान प्राप्त है। इस कार्यवाहीके साथ संलग्न परममाननीय उपनिवेश-मन्त्री द्वारा प्रेषित २४ अप्रैलका पत्र, संख्या १४६, भी प्राप्त हुआ, जो श्री मो० क० गांधीके साथ जेलमें हुए व्यवहारके विषयमें है।

१. यह अंश "ट्रीटमेन्ट ऑफ़ मि० गांधी" (श्री गांधीके साथ व्यवहार) शीर्षक रिपोर्टसे लिया गया है।

२. उत्तरमें मन्त्री सम्मानपूर्वक परमश्रेष्ठको यह सूचित करते हैं कि यह कथन सही है कि मो० क० गांधीको हथकड़ी पहनाकर प्रिटोरिया जेलसे प्रिटोरियाके मजिस्ट्रेटकी अदालत तक पैदल ले जाया गया। कैदियोंको पैदल ले जाते समय हथकड़ी पहनाना एक सामान्य नियम है, और जब जेलकी गाड़ी उपलब्ध न हो तब उन्हें पैदल ले जाया जाता है, जैसा कि विचाराधीन मामलेमें हुआ। यह नियम सजा पाकर यूरोपीय कैदियोंपर भी समानरूपसे लागू होता है और इसीलिए एक भारतीयको उससे बरी करनेका कोई कारण न था। श्री गांधीको अपनी बाहोंसे हथकड़ी छिपा लेने और हाथमें एक किताब लिए रहनेकी अनुमति दे दी गई थी, जिससे उनके हथकड़ी पहने होनेकी बात छिप गई थी।

[अंग्रेजीसे] लुई बोथा

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स २९१/१३७

परिशिष्ट ९

'रैंड डेली मेल' की टिप्पणी

इस महीनेकी २१ तारीखके 'रैंड डेली मेल' ने निम्नलिखित सम्पादकीय टिप्पणी लिखी है:

ट्रान्सवालके एशियाइयोंकी अपनी दूकानें बन्द कर देनेकी योजना निःसन्देह चतुराईसे भरी हुई है, किन्तु इससे इस देशमें उनका पक्ष लोकप्रिय तो होनेसे रहा। इसका अर्थ केवल यही है कि कथित सत्याग्रह जोर-जबरदस्तीपर उतर आया है। इसमें सन्देह नहीं है कि बहुत-से भारतीयोंको उनके जाति-भाइयोंने डराया-धमकाया है और वे व्यापारिक परवाने लेनेमें डर रहे हैं; अब योजना यहाँतक बढ़ी है कि यूरोपीय व्यापारियों और ट्रान्सवालकी सरकारको भी आतंकित किया जाये। आशा है कि श्री हॉस्केन, 'ट्रान्सवाल लीडर' और इस उपनिवेशमें जानबूझकर कानून तोड़नेके अन्य हिमायती इस तौर-तरीकेको ठीक मानते होंगे। किन्तु जहाँतक अधिकांश जनताका सवाल है हमें निश्चय ही लगता है, कि इस तरहका रवैया एशियाइयोंके पक्षके प्रति रही-सही सहानुभूतिको भी खत्म कर देगा। कुछ भी हो, हमें यकीन है कि ट्रान्सवाल सरकार ऐसे तरीकोंसे डरकर झुकेगी नहीं। हम यह आशा भी करते हैं कि सम्बन्धित थोक व्यापारी कानून भंग करनेवाले भारतीयोंके हाथका खिलौना नहीं बनेंगे। हम नहीं समझते कि श्री गांधीकी क्षुद्र योजनाके जालमें ज्यादा एशियाई फँसेंगे और जब सत्याग्रह ऐसा अजीब नया रूप ग्रहण कर लेगा तो उसे बढ़ानेके लिए अपना सर्वनाश कर लेंगे। हमारा विश्वास है कि सख्त रुख अपनानेसे यह षड्यन्त्र तुरन्त विफल हो जायेगा। इसी बीच सरकारको धरना देनेके उस ढंगपर थोड़ा और ध्यान देना चाहिए जिसके डरके मारे कानूनके अनुसार चलनेवाले बहुत-से भारतीय कानूनका यथार्थ पालन नहीं कर पाते।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१-१९०९

परिशिष्ट १०

काफिरका मामला

(१) 'रैंड डेली मेल' के ५-१०-१९०९ के अंकमें 'साम्राज्यकी एक दारुण विपत्ति' ('ए ट्रैजडी ऑफ़ एम्पायर') पर श्री एच० एस० एल० पोलककी जो आलोचना छपी थी, उसका अंश:

"... कहा जाता है कि जब श्री गांधी जेलमें थे, उन्हें 'एक काफिरने पकड़ लिया, ऊपर उठाया और ज़ोरसे ज़मीनपर पटक दिया था। अगर श्री गांधीने गिरते-गिरते दरवाजेकी चौखट न पकड़ ली होती तो जरूर ही उनका सिर फट गया होता।'"

(२) 'पादरी जे० जे० डोक द्वारा ७ अक्तूबरको 'रैंड डेली मेल' में लिखे पत्रका अंश:

"इस विषयपर आपके मंगलवारके अंकमें एक सम्पादकीय टिप्पणी छपी है। मैं देखता हूँ कि उसमें आपने श्री पोलकके इस कथनको सच माननेमें झिझक दिखाई है कि जब श्री गांधी जोहानिसबर्ग जेलमें थे तब उनपर एक काफिरने क्रूरतापूर्ण हमला किया था। आपने लिखा है, 'श्री गांधीने जेल-अधिकारियोंसे शिकायत करके उस काफिरको सजा दिलाई थी या नहीं, यह नहीं बताया गया है।' ... और आप आगे लिखते हैं, 'कुछ भी हो, हमें हमला ऐसा नहीं मालूम होता जिसके लिए ट्रान्सवाल सरकार जिम्मेदार ठहराई जा सके।"

संयोगसे जो जानकारी नहीं दी गई है वह मैं दे सकता हूँ। जब मुझे इस लज्जाजनक हमलेकी बात मालूम हुई, जिसका ब्योरा जैसा स्वाभाविक ही है, आपने नहीं छापा, तब मैंने स्वयं इसके बारेमें श्री रूज़से बातचीत की। श्री रूज़ने इसपर खेद प्रकट किया और बताया कि श्री गांधी उन्हें यह बात बता चुके हैं। मेरा खयाल है, काफिरको सजा नहीं दी गई थी, क्योंकि श्री गांधीने अपनी अन्तरात्माके अनुरोधपर उस व्यक्तिकी शिनाख्त न करनेका निश्चय कर लिया था, जिसने उनको चोट पहुँचाई थी। इसी प्रकार उन्होंने उस पठानपर मुकदमा चलानेसे भी इनकार कर दिया था जिसने उनपर हमला किया था।

रहीं सरकारकी जिम्मेदारीकी बात — इस बारेमें मैं आपकी रायसे सहमत नहीं हो सकता। यह बिलकुल सही है कि हमलेसे सरकारका कोई सीधा सम्बन्ध नहीं था। इसपर निजी तौरपर बहुत खेद भी प्रकट किया गया और इसमें मुझे सन्देह नहीं कि इस घटनाके होनेपर खेद अनुभव भी किया गया; लेकिन फिर भी जिस प्रणालीके अन्तर्गत यह घटना सम्भव हुई उसकी जिम्मेदार सरकार है। सच बात यह है कि अनाक्रामक प्रतिरोधी भारतीय वतनियों और अपराधियोंके वर्गमें रखे गये हैं और जहाँतक मैं जानता हूँ, इस स्थितिको बदलवानेकी सब कोशिशें बेकार गई हैं। श्री गांधी 'वतनी' के रूपमें एक बार वतनियोंके साथ एक ही कोठरीमें रखे गये थे। वहाँ उन्हें सारी रात घोर यातना सहनी पड़ी, जिसका वर्णन श्री पोलकने किया है। 'वतनी' के रूपमें उन्हें वतनियोंके साथ रहना पड़ा और उस मजबूरीकी हालतमें उनपर यह हमला किया गया। अब जहाँतक हो सकता है वहाँतक भारतीयोंको ही साथ-साथ रखनेका प्रयत्न किया जा रहा है और मेरा खयाल है, वह सफल भी हुआ है। लेकिन जबतक भारतीय अपराधियोंके रूपमें वतनियोंके वर्गमें और वतनी वार्डरोंकी निगरानीमें रखे जाते हैं तबतक किसी भी क्षण वैसी घटना हो सकती है जैसी श्री गांधीके साथ फोर्टमें, नागप्पनके साथ योकस्काई रिवर कैम्प जेलमें और दूसरे लोगोंके साथ विभिन्न जेलोंमें हुई है।"

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१०-१९०९

परिशिष्ट ११

'टाइम्स' को यूरोपीयोंका पत्र[1]

सेवामें
सम्पादक
'टाइम्स'
लन्दन

महोदय,

इस पत्रपर जिन लोगोंके हस्ताक्षर हैं उनमें से ज्यादातर दक्षिण आफ्रिकामें बहुत सालसे रहनेवाले उपनिवेशी हैं। इनमें से एक ट्रान्सवाल विधानसभाके सदस्य हैं, कुछ विभिन्न ईसाई सम्प्रदायोंके पादरी हैं और कुछ किसी-न-किसी ऊँचे धन्धेमें लगे हैं या कोई व्यापार-व्यवसाय करते हैं। हम आपको यह पत्र लिख रहे हैं, इसका कारण जिस प्रश्नको ट्रान्सवालका एशियाई प्रश्न कहा जाता है उसकी मौजूदा हालतके बारेमें हमारी चिन्ताकी भावना है। हम इस स्थितिको साफ-साफ मंजूर करते हैं कि इस उपनिवेशमें एशियाइयोंका और अधिक आगमन ज्यादासे-ज्यादा कड़ाईसे सीमित रखा जायेगा और यह स्थिति स्वयं एशियाइयोंने सार्वजनिक रूपसे मंजूर कर ली है।

लेकिन हालकी घटनाओंसे हमने यह देख लिया है कि अगर मौजूदा हालत जल्दी खत्म न की जा सकी तो साम्राज्यकी सुख-समृद्धि, जिसे हम हृदयसे चाहते हैं, खतरेमें पड़ जायेगी। जो भारतीय ट्रान्सवालके अधिवासी हो चुके हैं वे आज भारतमें रहनेपर साम्राज्यके लिए गम्भीर खतरेका मूल बन सकते हैं। इसका कारण यह है कि वे इस उपनिवेशसे अपने हृदयोंमें ताजके अधीनस्थ अपने यूरोपीय सहप्रजाजनोंके कठोर व्यवहारकी स्मृति लेकर जायेंगे, और उसे अपनी मातृभूमिमें हमदर्द लोगोंके बीच प्रकाशित करनेमें वे देर न करेंगे।

यह बात शायद बहुत आसानीसे मान ली गई है कि ट्रान्सवालकी गोरी आबादीकी राय संयुक्त रूपसे एशियाइयोंकी माँगोंके विरुद्ध है। लेकिन हमारा विश्वास है कि समाजके यूरोपीय वर्गमें एक खासी बड़ी संख्या ऐसे लोगोंकी भी है जिनकी सहानुभूति एशियाइयोंके साथ है और जिन्हें एशियाइयोंके प्रति किसी प्रत्यक्ष लाभदायक उद्देश्यके बिना ऐसा व्यवहार किया जानेपर दुःख होता है और चोट लगती है, यद्यपि ऐसे यूरोपीय हमदर्दोंकी संख्या ज्यादा नहीं है, जो अपने विचार खुल्लमखुल्ला प्रकट कर सकें। एशियाई जो माँगें करते हैं हमने उनकी जाँच सावधानीसे कर ली है और हमें यह इतमीनान करनेके मौके मिले हैं कि ये माँगें उचित हैं और इतनी सामान्य हैं कि उनको मंजूर कर लेनेसे उपनिवेशको कोई खतरा नहीं है, इसलिए वे मंजूर की जा सकती हैं। अमली तौरपर ये माँगें केवल दो हैं। पहली माँग यह है कि संसदके अगले अधिवेशनमें घृणित एशियाई कानून-संशोधन अधिनियमको, जिसे उपनिवेश-सचिवने अनुपयोगी घोषित कर दिया है, रद करनेके लिए सरकार एक कानून पेश करे। यह कानून संसदने एशियाई नेताओंसे सलाह किये बिना सर्वसम्मतिसे स्वीकृत किया था। सब लोगोंका खयाल यह था कि ट्रान्सवालमें एशियाई बड़ी संख्यामें गैरकानूनी तौरपर आ रहे हैं। लेकिन जहाँतक अमली उद्देश्योंकी पूर्तिका सम्बन्ध है, इसकी जगह नया वैधीकरण अधिनियम (वैलिडेशन ऐक्ट) बन गया है, जिसे आम तौरसे एशियाई मंजूर करते हैं। उससे वह कलंकका टीका भी मिट जाता है, जो उन्हें लगता है,

१. यह **इंडियन ओपिनियन**में ६-२-१९०९ को उद्धृत किया गया था और इसपर "जोहानिसबर्ग, नवम्बर, १९०८" की तारीख पड़ी हुई थी।

तबतक उनके माथेपर लगा हुआ है, जबतक कानूनकी किताबमें पुराना कानून मौजूद है। रिपोर्टके अनुसार, पिछली ५ फरवरीको रिचमंड, जोहानिसबर्गमें भाषण देते हुए जनरल स्मट्सने यह कहा था:

"वह कानून इस तरहका है कि वह एक बार लागू किया जाये, एक बार असर करे और हमेशाके लिए असर करे। वह कानून बहुत जोखिम-भरा है, क्योंकि अगर एशियाई इस अवधिमें पंजीयन कराने न आयें तो पंजीयन असम्भव हो जायेगा और कानून बेकार हो जायेगा। हुआ क्या है? हम पूर्ण गतिरोधकी स्थितिमें हैं। अब हम इसी स्थितिमें पहुँच गये हैं। इस गतिरोधके लिए सरकार या कोई दल दोषी नहीं है; बल्कि इसका कारण यह है कि एक कानून पास किया जा चुका है जिसमें भारतीयका सहयोग प्राप्त करना आवश्यक है। भारतीयोंने यह सहयोग नहीं दिया। वे बिल्कुल अलग खड़े हो गये हैं।"

इस तरह पुराने एशियाई कानूनको उपनिवेश-सचिवने अनुपयोगी तो घोषित कर ही दिया है; इसके अलावा वह एक हाल्के बने कानूनसे, जो आम तौरपर आपत्ति-रहित है, रद भी हो गया है, इसलिए अब किसीके लिए उस पुराने कानूनका कोई वास्तविक उपयोग नहीं है। एशियाइयोंने उस आरोपपर हमेशा नाराजी जाहिर की है जिसपर पुराने कानूनकी नीति आधारित है। इसीलिए वे यह भी अनुभव करते हैं कि जबतक वह कानून है तबतक उनकी हालत खतरनाक ही है। हमारी रायमें इसमें कोइ सन्देह नहीं है कि उन्होंने कानून रद किया जानेका विश्वास होनेपर ही स्वेच्छया पंजीयन कराया था। इसलिए वे यह अनुभव करते हैं कि उन्होंने अपने स्वेच्छागत दायित्वको निभा कर जो ईमानदारीका काम किया है उसकी एवजमें सरकारकी ओरसे वैसी कोई कार्रवाई नहीं हुई है।

दूसरा मुद्दा यह है कि एशियाई सामान्य प्रवासी कानूनके अन्तर्गत उपनिवेशमें शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशके अधिकारको मान्य कराना चाहते हैं। यह स्वीकार किया जाता है कि अकेले प्रवासी कानूनसे उपनिवेशमें शिक्षित एशियाइयोंके प्रवेशपर रोक नहीं लगती। एशियाई स्वयं इस बातके लिए तैयार हैं कि सरकार एशियाई प्रवासियोंकी शिक्षा-परीक्षा ऐसी कर दे कि प्रशासनिक तरीकोंसे प्रवास सीमित हो जाये और उपनिवेशमें ऊँचे धन्धोंके लोगों या विश्वविद्यालयोंके स्नातकोंके सिवा दूसरे लोगोंका आना असम्भव हो जाये। इसके सिवा उन्होंने सार्वजनिक रूपसे यह बात भी मान ली है कि सरकार अपनी व्यवस्थासे ऐसे आनेवाले लोगोंकी संख्या सालमें छः तक सीमित रखे। उनका कहना यह है कि समय-समयपर नये किये जानेवाले अस्थायी परमिटोंकी व्यवस्था अंग्रेजोंके लिए अशोभनीय है और उससे हमारी जरूरतें पूरी नहीं हो सकतीं। इसका कारण यह है कि ये परमिट जिन लोगोंको दिये जायेंगे उनका उपनिवेशमें प्रवेश रियायती होगा, अधिकारके रूपमें नहीं। वे ऐसे निषिद्ध प्रवासी होंगे जिनकी सजाएँ स्थगित कर दी गई हों; फलस्वरूप वे अपने धन्धे ठीक तरहसे न चला सकेंगे। हम उनकी इस बातसे सहमत हैं। हम अनुभव करते हैं कि स्वयं एशियाइयोंकी सुख-सुविधाके लिए इन थोड़े-से पढ़े-लिखे एशियाइयोंको निर्बाध आने देना आवश्यक है। यह यूरोपीय आबादीके लिए तो और भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। एक समाजके रूपमें विकासके साधनोंके अभावमें एशियाई लोग, कुछ समयमें, गोरे उपनिवेशियोंके लिए खतरा बन जायेंगे क्योंकि अपने स्वाभाविक नेताओंके न मिलनेपर उनकी दशा इतनी अवनत हो जायगी कि जिसकी कल्पना मात्रसे भय होता है।

दूसरी सब बातें सिर्फ तफसीलकी हैं और आसानीसे तय की जा सकती हैं। इसलिए इन दो मुद्दोंको मंजूर करानेके लिए ही एशियाई अनाक्रामक प्रतिरोधकी दृढ़ नीतिपर चल रहे हैं। अपने कामोंसे सबसे ज्यादा हानि उन्होंने ही उठाई है। चूँकि धारासभामें उनका कोई प्रतिनिधित्व नहीं है और वे ऐसे अल्पसंख्यक हैं, जिनकी दूसरी तरह भी कोई सुनवाई नहीं होती और धारासभाने करीब-करीब हर मौकेपर उनके विचारोंकी उपेक्षा की है, इसलिए उन्होंने अपनी शिकायतें दूर करानेके लिए जो रास्ता अख्तियार किया है उसके सिवा कोई दूसरा रास्ता ढूँढ़ना मुश्किल है।

यह कहा गया है कि एशियाइयोंने मौजूदा संघर्षके जिन कष्टोंपर इतनी जोरदार आपत्ति की है, वे बहुत-कुछ झूठे हैं। हम इस रायका समर्थन करनेमें असमर्थ हैं। हमारे खयालमें एशियाइयोंकी शिकायतें कुल मिलाकर ठीक हैं। इस दुर्भाग्यपूर्ण गलतफहमीके कारण उन्हें बहुत कठिनाइयाँ हुई हैं और कष्ट उठाने पड़े हैं। जिन लोगोंको

स्वयं जनरल स्मट्सने "अन्तरात्मागत आपत्ति करनेवाले" कहा है उनमें से करीब ९०० लोगोंको आन्दोलनका नया दौर शुरू होनेसे अबतक चार महीनोंमें कड़ी कैदकी सजाएँ दी गई हैं। जेलमें उनके साथ आदिवासी वतनी बदमाशोंके समान बरताव किया गया है; और जेलका खाना उनकी जातीय आदतोंके बिल्कुल अनुकूल नहीं है। असलमें कुछ जेलोंमें धार्मिक दृष्टि से "अपवित्र" भोजन दिया गया है। इसके कारण बहुत-से एशियाई कैदी अध-पेट रहे हैं। इसमें भी कोई सन्देह नहीं हो सकता कि जबसे यह आन्दोलन आरम्भ हुआ है तबसे पिछले दो सालसे ज्यादा अरसेसे एशियाई जातियोंको भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ी है। इसमें उनका वास्तविक खर्च भी ज्यादा हुआ है और उन्हें व्यापारपर प्रतिबन्ध होनेसे व्यापारिक हानि भी हुई है। वर्तमान अस्थिरताके कारण एशियाइयोंको बहुत मानसिक चिन्ता भी रही है और इसकी प्रतिक्रिया आबादीके सभी वर्गोंपर हुई है।

जहाँतक हमारी बात है, हमने अपनी निजी जाँच-पड़तालसे यह इत्मीनान कर लिया है कि एशियाई लोग जिस बातको अपना वास्तविक अधिकार समझते हैं उसकी प्राप्तिका कार्य सचाई और दृढ़तासे चला रहे हैं। उन्होंने अपने कर्तव्योंके पालनमें काफी साहस, आत्मत्याग और सच्चा इरादा दिखाया है, जिसकी प्रशंसा सभीने की है। उनके कई नेता, जो आज अपने देशवासियोंकी खातिर जेलमें हैं, पढ़े-लिखे आदमी हैं और उनसे किसी भी समाजका सम्मान बढ़ेगा। उनमें ऊँचे धन्धोंके लोग, धनी व्यवसायी, पंडित-मौलवी और प्रसिद्ध व्यापारी हैं। जो लोग आज जेलमें हैं उनमें एशियाई जातियोंके फेरीवालोंसे लेकर थोक व्यवसायी तक और क्लार्कसे लेकर ऊँचे धन्धोंके लोगों तक, सभी वर्गोंके प्रतिनिधि हैं। उनमें सभी धर्मों और जातियोंके लोग शामिल हैं। एशियाइयोंने ऐसी एकता दिखाई है जो प्रशंसाके योग्य और आशातीत है। हम यह अनुभव करते हैं कि इस आन्दोलनके जारी रहनेसे इस देशके वाणिज्य-व्यवसायपर बहुत हानिकर प्रभाव पड़ेगा और इसको एक राष्ट्रका रूप देनेमें जो बहुत-सी कठिनाइयाँ हैं उनमें अनावश्यक वृद्धि होगी।

ऐसी स्थितिमें हम विश्वास करते हैं कि ट्रान्सवाल सरकार ऊपर बताये गये आधारपर समझौता करनेका प्रयत्न करेगी। हमारी रायमें एशियाई लोगोंकी माँगें ऐसी नहीं हैं जो मानी न जा सकें। जो संघर्ष इस समय चल रहा है उसके सच्चे स्वरूपके बारेमें ब्रिटेनकी जनताके गुमराह होनेका खतरा है। हमें ऐसा लगता है कि अगर भविष्यमें प्रतिनिधित्व-हीन वर्गोंके सम्बन्धमें उनके नेताओंसे सलाह किये बिना कोई कानून न बनाया जाये यह बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिताकी बात होगी। सरकार यूरोपीयों और एशियाइयोंकी होड़में सन्तुलन रखनेके जो प्रयत्न कर रही है उन सबसे हमारी पूरी सहानुभूति है। हम चाहते हैं कि यह बात समझ ली जाये। लेकिन इस उद्देश्यको पूरा करनेके लिए बुद्धिमत्ता इसमें होगी कि नगरपालिकाके, सफाईके और दूसरे मौजूदा मानदण्डोंको केवल कड़ाईसे लागू ही न किया जाये, बल्कि उनके स्तरको और भी ऊँचा किया जाये। लेकिन हम सादर निवेदन करते हैं कि एशियाइयोंको विकासके अवसरोंसे वंचित करने और इस तरह उनकी आवश्यकताओंको बढ़ानेके बजाय कम करनेकी यूरोपीय प्रजातिपर जो हानिकर प्रतिक्रिया होगी उससे ज्यादा हानिकर प्रतिक्रिया किसी दूसरी चीजकी न होगी।

आपके, आदि,
डब्ल्यू० एम० हॉस्केन, एम० एल० ए०
एच० कैलेनबैक
जोजेफ जे० डोक
और २४ अन्य

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स, ६-१-१९०९

परिशिष्ट १२

गांधीजीके नाम लॉर्ड कर्जनका पत्र

ग्रूट शूर
रांडेबॉश
फरवरी २, १९०९

प्रिय महोदय,

मुझे अत्यन्त खेद है कि अस्वस्थताके कारण अपने कार्यक्रममें परिवर्तन हो जानेसे मैं जोहानिसबर्गमें बहुत थोड़े समय रुका और आपकी समितिसे व्यक्तिगत रूपसे मिलकर मामलेपर बातचीत करनेमें असमर्थ रहा।

तथापि, मैंने निजी जाँच-पड़ताल करके और आप तथा अन्य लोगोंके सौजन्यसे उपलब्ध कागजातकी मददसे मामलेके दोनों पहलुओंको जान लेनेका प्रयत्न किया।

मेरे यहाँ आनेपर परमश्रेष्ठ लॉर्ड सेल्बोर्नने जनरल बोथा और श्री स्मट्ससे मेरी मुलाकातका प्रबन्ध किया था। इन लोगोंने मामलेपर लम्बी और मैत्रीपूर्ण चर्चा की, और उसके हर पहलूपर विचार किया गया।

आपकी ओरसे बोलनेका अधिकार मुझे नहीं था। किन्तु भारतके साथ और मामलेके पूर्व इतिहाससे मेरा जो सम्बन्ध रहा है, उसे देखते हुए मैं कुछ राय दे सकनेकी स्थितिमें था।

बातचीत आरम्भ करते समय मेरा खयाल था कि वर्तमान कठिनाईका एक ऐसा हल निकाल सकना असम्भव नहीं है जो सभी पक्षोंके लिए समान रूपसे सम्मानजनक हो। मुझे जनरल बोथा और श्री स्मट्सने बारबार आश्वासन दिया कि वे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके साथ उदारता और न्यायका बरताव करनेको उत्सुक हैं।

अब यह अनुमान लगाना तो व्यर्थ ही होगा कि यदि मैं उपनिवेशमें और अधिक समयतक रुकता और सब मुख्य पक्षोंसे व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित कर पाता तो कोई समझौता हो जाता या नहीं।

उस समय समझौतेके रास्तेमें जो मुख्य बाधा मालूम पड़ती थी, वह यह थी कि यदि सम्पूर्ण दक्षिण आफ्रिकामें एक ही सरकार स्थापित होनेकी आशा फलित हुई — जैसा कि हम सबको विश्वास है, होगी — तो शीघ्र ही सारे मामलेपर एक ऐसी सत्ता द्वारा पुनर्विचार किया जायेगा जो किसी भी एक राज्यकी अपेक्षा कहीं अधिक शक्तिशाली होगी। और तब समस्याका हल भी केवल ट्रान्सवालके भारतीयोंकी स्थितिको प्रभावित करनेवाले मुद्दोंको दृष्टिमें रखकर नहीं, बल्कि एक अधिक व्यापक स्तरपर किया जायेगा।

जैसे ही इस देशमें संघ बनेगा वैसे ही दक्षिण आफ्रिकाकी संयुक्त सरकार और साम्राज्य-सरकारके बीच इस सवालपर और अन्य दूसरे मसलोंपर बातचीत चलेगी। मैं व्यक्तिगत तौरपर यह आशा करता हूँ कि इस बातचीतके मौकेपर, जिसमें अब बहुत विलम्ब होनेकी सम्भावना नहीं है, इस जटिल समस्याका अन्तिम और संतोषजनक फैसला हो जाना चाहिए।

यदि उस अवसरपर या अन्य किसी भी समय मैं दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजकी कोई सेवा कर सकूँ तो मुझे बहुत प्रसन्नता होगी।

आपका विश्वस्त,
कर्जन

सेवामें
अवैतनिक मन्त्री, ब्रि० भा० संघ
जोहानिसबर्ग

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९२०) से।

परिशिष्ट १३

बैठककी कार्यवाही जून १३, १९०९ को हुई

ब्रिटिश भारतीयोंकी एक विशेष समितिकी स्थापना की गई है, जो इंग्लैंड जानेवाले शिष्टमण्डलके सदस्योंका चुनाव करेगी।

निम्नलिखित व्यक्ति समितिके सदस्य हैं:

१. हा० व० अली, २. मो० क० गांधी, ३. हाजी हबीब, ४. अ० मु० काछलिया, ५. टी० नायडू, ६. एन० ए० कामा, ७. शहाबुद्दीन, ८. उमरजी साले, ९. कमीसा, १०. दादाभाई, और ११. जी० वी० गॉडफ्रे।

श्री गांधी प्रस्ताव करते हैं कि काछलिया और स्वयं वे [गांधीजी] श्री वी० ए० चेट्टी और हाजी हबीबके साथ — श्री हाजी हबीबके साथ इसलिए कि अब वे भी अपनेको सत्याग्रही घोषित करते हैं — इंग्लैंड जायें।

श्री अली प्रस्तावका इस आधारपर विरोध करते हैं कि (१) यह घोषणा हृदयसे नहीं की गई है, (२) क्योंकि आदेश एकीकरणपर नहीं है, और (३) क्योंकि वी० ए० चेट्टी योग्य नहीं हैं।

श्री कमीसा श्री अलीसे सहमत हैं। श्री कामा चुने जायें तो उन्हें बेहतर समझा जायेगा।

श्री जी० वी० गॉडफ्रे प्रस्तावपर इसलिए आपत्ति करते हैं कि: (१) शिष्टमण्डलके कुछ सदस्य तो अयोग्य होनेके कारण इंग्लैंडमें किसी कामके नहीं होंगे, और (२) ट्रान्सवालके अधिकांश भारतीय इस एकतरफा प्रस्तावसे सहमत नहीं होंगे।

श्री दादाभाई दूसरा प्रस्ताव करते हैं कि श्री कामा, श्री गांधी और श्री हबीबको जाना चाहिए।

श्री कामा श्री गांधीके मूल प्रस्तावका समर्थन करते हैं।

श्री नायडू समझाते हैं कि सभाको श्री चेट्टीकी योग्यताओंके बारेमें गलतफहमी है। वे अंग्रेज श्रोताओंके सम्मुख भाषण करनेमें समर्थ हैं। श्री नायडू सुधारकर कहते हैं कि श्री चेट्टी अपनी बात उतनी ही स्पष्टतासे कह सकते हैं जितनी कि श्री हबीब या श्री काछलिया। और अब श्री शहाबुद्दीन प्रस्ताव करते हैं कि "सत्याग्रह न करनेवालोंको जाना चाहिए, सत्याग्रहियोंको नहीं।"

इस प्रस्तावपर मत लिया जाता है और निम्नलिखित सज्जन इसके पक्षमें मत देते हैं: श्री अली, गॉडफ्रे, शहाबुद्दीन, कमीसा और हाजी हबीब। विरोधमें मत देनेवाले ये हैं: कामा, गांधी, नायडू, दादाभाई, काछलिया और उमरजी साले।

श्री गांधी अपना मूल प्रस्ताव पेश करते हैं। इसपर मत लिये जानेपर वह ३ मतोंके विरुद्ध ६ मतोंसे स्वीकार किया जाता है। पक्षमें मत देनेवाले ये हैं: श्री गांधी (प्रस्तावक), श्री उमरजी साले (अनुमोदक), नायडू, कामा, दादाभाई और काछलिया। विरोध करनेवाले ये हैं: श्री अली, गॉडफ्रे और शहाबुद्दीन। श्री कमीसा मतदानसे इनकार करते हैं।

श्री गॉडफ्रे श्री गांधीके प्रस्तावपर फिरसे आपत्ति करते हैं। श्री अली भी आपत्ति करते हैं।

श्री हाजी हबीब इस अवसरपर अपनेको सत्याग्रही घोषित करते हैं, और इसी शर्तपर वे शिष्टमण्डलमें जायेंगे।

लगभग ३०० भारतीय सभामें उपस्थित हैं।

टाइप किये हुए मूल अंग्रेजी मसविदेकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९३८) से।

परिशिष्ट १४

गांधीजीको लॉर्ड ऍम्टहिलका पत्र

गोपनीय

मिल्टन अर्नेस्ट हॉल
वेडफोर्ड
अगस्त ३, १९०९

प्रिय श्री गांधी,

हाउस ऑफ़ लॉर्ड्सका कामकाज कुछ देरके लिए बन्द है और मैं इस अवकाशका उपयोग करके आपको चन्द पंक्तियाँ लिख रहा हूँ। पहले तो मैं आपको आपके २९ जुलाईके पत्रके लिए और आपके "संक्षिप्त विवरण" की नकलके लिए — जिसे आपने मेरे पास इतनी तत्परतासे तत्काल भेज दिया — धन्यवाद देता हूँ। प्रस्तुत अवसरपर आप मेरे मार्गदर्शनके अनुसार चलना चाहेंगे, इस बातकी सूचना देते हुए आपने मुझे जो अनेक तार भेजे, उनके लिए भी मैं आपका बहुत कृतज्ञ हूँ। मुझे भय है कि आपको ऐसा लगता होगा कि मैं बेकार समय गँवा रहा हूँ, किन्तु असलमें ऐसा नहीं है। अधिकारी लोग दक्षिण आफ्रिका विधेयक और साम्राज्यकी सैनिक सुरक्षा (इम्पीरियल डिफेन्स) के सवालको लेकर व्यस्त हैं ही; इसके सिवा दलके राजनीतिक कार्यका बोझ भी है; अत: मुझे उनकी सुविधाकी प्रतीक्षा करनी पड़ती है। इस बीचमें, जब भी मुझे मौका मिलता है, मैं पत्र लिखकर या बातचीतके द्वारा परिस्थितिको प्रभावित करनेकी कोशिश कर रहा हूँ। अब आपके तारीख २९ के पत्रके बारेमें: इसमें बाकी तो सब बिलकुल स्पष्ट है; एक ही मुद्दा ऐसा है जिसे आप थोड़ा और स्पष्ट करें तो मुझे खुशी होगी। आपने मुझे यह तो साफ-साफ कहा है कि आपको भारतके राजद्रोहात्मक आन्दोलनकारियोंसे कोई आर्थिक सहायता नहीं मिलती, किन्तु आपने मेरे इस प्रश्नका (मेरा खयाल है, मैंने यह प्रश्न किया था) जवाब नहीं दिया कि क्या वे आपको किसी भी तरहकी सहायता आदि दे रहे हैं। मैं चाहता हूँ कि मैं इस आरोपका — जिसमें मैं स्वयं विश्वास नहीं करता — बलपूर्वक खण्डन कर सकूँ और यह कह सकूँ कि आपके अनाक्रामक प्रतिरोधके आन्दोलनके चलते रहनेका, भारतमें जो भी कहा जा रहा है या किया जा रहा है, उससे कतई कोई सम्बन्ध नहीं है। आपके खिलाफ इससे उलटी बात कही जा रही है और स्वाभाविक है कि मैं इस आरोपका खण्डन वैयक्तिक विश्वाससे नहीं, बल्कि ज्यादा प्रभावपूर्ण प्रमाणोंके बलपर करना चाहता हूँ।

आपने उक्त "विवरण" पर टिप्पणी लिखी है कि वह "असंशोधित प्रूफ" है, अत: मैं चन्द सुझाव देनेका साहस करता हूँ।

पैरा १५: पहले दो वाक्योंके सिलसिलेमें मैं यह सुझाना चाहता हूँ कि आप परिशिष्टके रूपमें युद्धसे पूर्वकी और युद्धके बादकी स्थितिपर श्री रिचके द्वारा तैयार किया गया तुलनात्मक विवरण दें। सन् १८८५ के कानून ३ के प्रभावके सम्बन्धमें कुछ संक्षिप्त स्पष्टीकरण दिया जाना चाहिए।

पैरा १७: अन्तिम वाक्यसे पहलेके एक वाक्यमें जो-कुछ कहा जा रहा है, उसे थोड़ा बढ़ाकर स्पष्ट कर देना चाहिए। यह स्पष्ट कर देना ठीक होगा कि शिनाख्तकी पाँच अँगुलियोंकी छापवाली पद्धति, जो भारतमें अपराधियोंकी शिनाख्त तक ही सीमित है, जान-बूझकर अपनाई गई थी, यद्यपि सर ई० हेनरीने अपनी रिपोर्टमें यह कहा था कि केवल अँगूठोंकी छाप काफी है।

पैरा २०: मुझे लगता है कि इस बातको स्पष्ट कर देना अच्छा होगा कि एशियाई कानून और प्रवासी [प्रतिबन्धक] कानून, दोनोंको मिला देनेसे सम्पूर्ण प्रवेश-निषेधकी स्थिति कैसे पैदा हो गई है।

पैरा २१ : "सन् १९०८ का अधिनियम २" की जगह तो "सन् १९०७ का अधिनियम २" होना चाहिए।
पैरा २२ : समझौते की शर्तोंका उल्लेख करना जरूरी है।

इस पैरेके बाद कुछ सम्बन्ध जोड़नेवाले विवरणकी कमी जान पड़ती है। आप यह बताना चाहते हैं कि भारतीयोंने ईमानदारीके साथ समझौतेके विषयमें जैसी कल्पना कर रखी थी वैसी वह नहीं है, यह उन्होंने कैसे समझा।

पैरा २५ : इसकी शब्द-रचना इस प्रकार बदली जाये कि यह स्पष्ट हो जाये कि [एशियाई कानूनको] रद करनेकी बात पूरी नहीं की गई, इसमें दोष भारतीयोंका नहीं है। यह स्पष्ट कर देना भी अच्छा होगा कि जनरल स्मट्स समझौतेकी लिखित और सुस्पष्ट शर्तोंसे भी कहाँ और कैसे मुकर गये।

पैरा २६ : भारतीयोंने अपने प्रमाणपत्र क्यों जला दिये, इस बातका पर्याप्त स्पष्टीकरण नहीं हुआ है। यह याद रखना चाहिए कि यदि इस विवरणका कोई उपयोग किया गया तो वह उन लोगोंकी जानकारीके लिए किया जायेगा जो इस सवालके बारेमें कुछ भी नहीं जानते।

पैरा २९ : मेरा सुझाव है कि उल्लिखित अर्जी परिशिष्टकी तरह छापी जानी चाहिए।

पैरा ३० : (१) क्या यहाँ फिर "१९०८", "१९०७" की जगह भूलसे नहीं छप गया है?

इतना कहकर बाकीके विषयमें मैं यह जरूर कहूँगा कि इस लम्बी कहानीको संक्षेप करने और उसके सारभूत मुद्दोंको सुस्पष्ट करनेमें आपको आश्चर्यजनक सफलता मिली है। मुझे उम्मीद है कि मेरा ये थोड़े-से सुझाव देना आपको खटकेगा नहीं। आप सारी स्थितिसे पूरी तरह परिचित हैं, फिर भी मुझे लगता है कि इस देशके लोगोंको कैसी और कितनी जानकारी देनेकी आवश्यकता है, यह मैं निश्चय ही आपसे ज्यादा अच्छी तरह समझ सकता हूँ।

आपका, विश्वस्त,
ऍम्टहिल

हस्तलिखित मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९७५) से।

परिशिष्ट १५

ट्रान्सवालके भारतीयोंके प्रार्थनापत्र

(१) साम्राज्ञीको प्रार्थनापत्र[1]

महामहिम सम्राज्ञी
लन्दन

अन्तरात्माके हेतु पिछले दो वर्षोंसे ट्रान्सवालकी जेलोंमें सजा भोगनेवाले ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी पत्नियों, माताओं या पुत्रियोंका प्रार्थनापत्र

निवेदन है कि,

हम उन ब्रिटिश भारतीयोंकी पत्नियाँ, माताएँ, या पुत्रियाँ हैं जो ट्रान्सवालमें दुर्भाग्यसे चल रहे एशियाई संघर्षके सिलसिलेमें जेल भोग चुके हैं या अब भी भोग रहे हैं।

---

१. इस बातके कोई प्रमाण नहीं हैं कि इन प्रार्थनापत्रोंका मसविदा गांधीजी द्वारा तैयार किया गया था। तथापि ऐसी सम्भावना है कि प्रार्थनापत्र देनेका सुझाव उन्होंने ही दिया हो। उनके लन्दन रवाना होनेसे पहले ये प्रार्थनापत्र हस्ताक्षर प्राप्त करनेके उद्देश्यसे घुमाये जानेके लिए तैयार कर लिये गये थे। **इंडियन ओपिनियन**में ये इस टिप्पणीके साथ प्रकाशित हुए थे कि ट्रान्सवालमें बहुत-से लोग इनपर हस्ताक्षर कर रहे हैं।

हमारी मान्यता है कि ब्रिटिश भारतीयोंका यह संघर्ष न्यायसंगत है और उनके जातीय सम्मानकी रक्षाके लिए है।

हम लोग इस तथ्य से अवगत हैं कि लगातार जेल जानेवाले भारतीय शपथबद्ध हैं कि जिन शिकायतोंके कारण ऐसी शपथ लेनी पड़ी है वे जबतक दूर नहीं होतीं तबतक वे ट्रान्सवालकी संसद द्वारा बनाये गये एशियाई अधिनियमको स्वीकार नहीं करेंगे।

हमें लगता है कि अपने बेटों, पतियों या पिताओंको उनके दायित्व-निर्वाहमें प्रोत्साहित करना हमारा कर्तव्य है।

उपर्युक्त कारणोंसे इसमें से आपकी अनेकोंको न केवल विछोहका दुःख, बल्कि अन्न-वस्त्रका संकट भी सहना पड़ा है। संघर्षके दौरान अनेक भारतीय परिवार कंगाल बन गये हैं।

हम लोगोंको मालूम है कि ब्रिटिश संविधानके अन्तर्गत आप कष्ट उठानेवालोंके पक्षमें सीधे हस्तक्षेप नहीं कर सकतीं। किन्तु आपकी प्रार्थिकाएँ अपना मामला आदरपूर्वक आपके सामने इस आशासे रख रही हैं कि शायद आप एक माता या पत्नी होनेके नाते [हम] माताओं या पत्नियोंके प्रति करुणाकी भावनासे गैर-सरकारी तौरपर अपने प्रभावका उपयोग और एक अत्यन्त दुःखद परिस्थितिका अन्त करनेमें सहायता कर सकें।

कष्ट भोगनेवालोंकी माँग यह है कि वह कानून रद कर दिया जाये जिसकी जरूरत अब सरकारको नहीं है; और उपनिवेशके प्रवासी कानूनमें जो जाति-सम्बन्धी प्रतिबन्ध है वह हटा दिया जाये, ताकि उच्चतम शिक्षा-प्राप्त भारतीयोंके लिए वैसी ही शर्तोंपर उपनिवेशमें प्रवेश करना सम्भव हो सके जैसी अन्य प्रवासियोंके लिए हैं।

हम आदरपूर्वक आशा करती हैं कि हमारी नम्र प्रार्थनापर आप विचार करनेकी कृपा करेंगी।

और आपके इस न्याय तथा दयाके कार्यके लिए आपकी प्रार्थिकाएँ सदैव दुआ करेंगी, आदि।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-७-१९०९

(२) प्रार्थनापत्र : दादाभाई नौरोजीको

सेवामें
माननीय दादाभाई नौरोजी

महोदय,

ट्रान्सवालमें रहनेवाले हम नीचे हस्ताक्षर करनेवाले ब्रिटिश भारतीय आपको भावी भारतीय राष्ट्रका पिता मानकर आपकी सेवामें इस उपनिवेशमें चलनेवाले अपने महान संघर्षके सम्बन्धमें यह निवेदन कर रहे हैं। हमारी यह अपील आपके द्वारा सम्पूर्ण भारतसे है।

हम इस संघर्षका इतिहास न बताकर केवल वर्तमान स्थितिका ही उल्लेख करेंगे।

ट्रान्सवालवासी भारतीयोंने १९०७ के एशियाई पंजीयन अधिनियम (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) को रद करनेकी माँग की है, ताकि शैक्षणिक योग्यता-प्राप्त भारतीय, उनकी संख्या कितनी ही कम क्यों न हो, चाहे प्रतिवर्ष छः ही हो, उन्हीं शर्तोंपर ट्रान्सवालमें प्रवेश कर सकें जो अन्य प्रवासियोंके लिए हों। आजकी स्थितिके अनुसार पंजीयन अधिनियम और उपनिवेशके प्रवासी अधिनियमके अन्तर्गत जबतक कोई भारतीय इस उपनिवेशका पूर्व-अधिवासी न हो, यहाँ नहीं आ सकता। इस प्रकार उपनिवेशके ये कानून रंग-भेदमूलक प्रतिबन्ध लगानेवाले हैं। किसी अन्य ब्रिटिश उपनिवेशमें ऐसे कानून नहीं हैं। अतः भारतीयोंने उपनिवेशके पंजीयन कानूनोंको स्वीकार न करने और जबतक जातीय कलंक मिट न जाये तबतक कैद तथा अन्य कष्ट बर्दाश्त करनेका सार्वजनिक रूपसे गम्भीर निश्चय किया है।

उक्त निर्णयके आधीन पिछले ढाई वर्षोंमें २,५०० भारतीयोंने कैदकी सजा भोगी है। सजा अधिकांशतः सख्त रही है। कई घर उजड़ गये हैं, कई परिवार संघर्षमें बर्बाद हो गये हैं। रोती हुई पत्नियों और माताओंको अपने पीछे छोड़कर पिता और पुत्र साथ-साथ जेल गये हैं। कई परिवारोंका भरण-पोषण हमारे जमा किये हुए चन्देकी रकमसे किया जा रहा है। इस समय करीब दो सौ भारतीय अन्तरात्माके हेतु जेल भोग रहे हैं।

कठिनाइयाँ इतनी प्रबल हैं कि बहुतोंने तो थक कर घुटने टेक दिये हैं। दूसरोंने उपनिवेश छोड़ दिया है, और आज शायद भूखों मर रहे हैं। तीन सौसे अधिक कृतसंकल्प लोगोंका एक दल सक्रिय संघर्ष जारी रख रहा है। कुछ तो पाँच-पाँच बार ट्रान्सवालकी जेलोंसे हो आये हैं।

निश्चय करनेवाले लोगोंमें भारतीय समाजके सभी वर्गोंके लोग हैं। हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सिख और ईसाई, सभी भारतकी ओरसे लड़ाई लड़ रहे हैं। ऐसे व्यापारी जिन्होंने कभी शारीरिक परिश्रम नहीं किया है और जो सुख-वैभवकी गोदमें पले हैं, [आज] पत्थर तोड़ रहे हैं, या भंगीका काम कर रहे हैं अथवा कूड़ा ढोनेवाली गाड़ीपर मिट्टी ढो रहे हैं, और साधारण मकईका दलिया और उबले आलू अथवा चावल और घी खाकर रह रहे हैं।

हम भारतसे सहायताके लिए आगे आनेका अनुरोध करते हैं और भारत सरकारसे इस कलंकरूप रंगभेदको हटानेकी माँग करते हैं। जबतक ट्रान्सवालके कानूनोंसे रंगभेदका कलंक हटाया नहीं जाता तबतक उपर्युक्त भारतीयोंका दल मृत्युपर्यन्त कष्ट सहन करेगा। हम राहतकी प्रार्थना करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-७-१९०९

(३) प्रार्थनापत्र: बंगाल चैम्बर ऑफ़ कॉमर्सको

सेवामें
अध्यक्ष,
बंगाल चैम्बर ऑफ़ कॉमर्स,
कलकत्ता

महोदय,

हम निम्न-हस्ताक्षरकर्त्ता ट्रान्सवालवासी ब्रिटिश भारतीय भारतके गोरे समाजके नेताकी हैसियतसे आपके सामने अपना निवेदन प्रस्तुत करना चाहते हैं। हमारा यह निवेदन एशियाई संघर्षके विषयमें है, जो इस उपनिवेशमें पिछले ढाई वर्षोंसे चल रहा है।

इस संघर्षका पूरा इतिहास बताकर आपको परेशान करनेकी हमारी इच्छा नहीं है। स्थानीय सरकार और ब्रिटिश भारतीयोंके बीच विवादका मुद्दा यह है कि जहाँतक प्रवासका सम्बन्ध है, उपनिवेशके कानूनोंमें जाति-विषयक निर्योग्यता हो अथवा नहीं। स्थानीय संसदने दो कानून बनाये। एक कानून १९०७ का एशियाई पंजीयन अधिनियम कहलाता है और दूसरा उसी वर्षका प्रवासी अधिनियम। इन कानूनोंके अन्तर्गत कोई भी ब्रिटिश भारतीय, उसकी शैक्षणिक योग्यता चाहे कुछ भी हो, यदि वह पहलेसे यहाँका अधिवासी नहीं है तो, केवल जन्मसे भारतीय होने अथवा भारतीय माता-पिताकी सन्तान होनेके कारण इस उपनिवेशमें प्रवेश करते ही निषिद्ध प्रवासी हो जाता है। यह कानून ब्रिटिश उपनिवेशोंमें कहीं नहीं है। अतः हम लोगोंने, अपने अन्य प्रयत्न विफल होनेके बाद, सार्वजनिक रूपसे गम्भीरतापूर्वक शपथ ली है कि हम उपर्युक्त पंजीयन कानून (रजिस्ट्रेशन लॉ) तथा संघर्षके दौरान १९०८ में बनाया गया दूसरा कानून तबतक स्वीकार नहीं करेंगे जबतक १९०७ का पंजीयन कानून रद नहीं कर दिया जाता और जातिगत कलंक मिट नहीं जाता।

इस शपथके परिणामस्वरूप सभी जातियों, वर्गों और धर्मोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले २,५०० से अधिक भारतीयोंने जेलका कष्ट भोगा है। ट्रान्सवालमें अथवा दक्षिण आफ्रिकाके कुछ अन्य उपनिवेशोंमें रहनेवाले अनेक भारतीयोंको मोजाम्बिक प्रान्तके पुर्तगाली प्रशासनकी सहायतासे एक क्षण नोटिसपर सीधे भारत भेज दिया गया है। यहाँतक कि कुछ लोगोंको अपने परिवार और व्यापारकी देखरेखकी समुचित व्यवस्था किये बिना जाना पड़ा है। अनेक घर उजड़ गये हैं। बहुत-से व्यापारी कंगाल हो गये हैं। बहुत-से परिवारोंको भारतीय समाज द्वारा एकत्र किये गये चन्देकी रकमसे सहायता दी जा रही है।

हम उपनिवेशमें भारतीयोंका निर्बाध प्रवेश नहीं चाहते। हम इस उप-महाद्वीपमें गोरोंकी प्रधानताके सिद्धान्तको स्वीकार करते हैं। हम केवल यह दावा करते हैं कि अन्य उपनिवेशोंके विपरीत ट्रान्सवाल सरकार जाति-भेदपर आधारित परीक्षा लागू करके, श्री चेम्बरलेनके शब्दोंमें, भारतके करोड़ों लोगोंकी भावनाओंको ठेस नहीं पहुँचा सकती।

हम सब पार्टियोंसे, सब ब्रिटिश प्रजाओंसे अपील कर चुके हैं। और उन सबने हमारा समर्थन किया है। यहाँतक कि ट्रान्सवालमें भी यूरोपीय समाजके प्रमुख सदस्योंकी एक यूरोपीय समिति, जिसके अध्यक्ष श्री विलियम हॉस्केन, एम० एल० ए० हैं, हमारा समर्थन करती रही है।

हमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि भारतका सम्मान आंग्ल-भारतीयोंको भी उतना ही प्यारा है जितना कि भारतीयोंको। अतः आपके जरिए हम समस्त आंग्ल-भारतीय समाजसे अनुरोध करते हैं कि इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थितिका अंत करनेमें आप जिस तरह उचित समझें उस तरह हमारी सहायता करें।

संघर्षकी लगभग असहनीय कठिनाइयोंके कारण बहुत-से लोग टूट गये हैं। किन्तु वीरोंका दल बारम्बार अपनेको गिरफ्तार करवा रहा है। वे मृत्युपर्यन्त संघर्ष करनेके लिए दृढ़संकल्प हैं। इस अपीलको लिखते समय ट्रान्सवालकी जेलोंमें २०० सत्याग्रही हैं। सरकारने हमारी आवाज बन्द करनेकी नीयतसे पाँच ऐसे सत्याग्रहियोंको गिरफ्तार कर लिया है जिन्हें शिष्टमण्डलके रूपमें भारत और इंग्लैंड जानेके लिए चुना गया था। हम राहतकी प्रार्थना करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-७-१९०९

परिशिष्ट १६

गांधीजीके नाम लॉर्ड ऍम्टहिलका पत्र

गोपनीय

जुलाई २९, १९०९

प्रिय श्री गांधी,

मैं अभी-अभी घर वापस लौटा हूँ, और लौटते ही आपका कलका पत्र मुझे मिला। मैं एक स्थानीय "तमाशे" के बीच आपके पत्रका शीघ्रतामें उत्तर दे रहा हूँ।

इससे अधिक दुर्भाग्यकी कोई बात नहीं होगी कि सर मंचरजी और मेरे उद्देश्योंमें परस्पर विरोध हो। ऐसी किसी सम्भावनाको हर कीमतपर टालना चाहिए।

आपने मुझे लिखा है कि सर मंचरजी आग्रह कर रहे हैं। मैं तो उस तरह आग्रह नहीं कर सकता। मैं केवल सलाह दे सकता हूँ। मेरी और उनकी सलाहके बीच चुनाव करना आपका काम है।

आपके सामने "कूटनीतिक" और "राजनयिक" तरीकोंमें से कोई एक चुननेका विकल्प है।

यदि आप पहला चुनते हैं, तो आपको सारे मामलेका संचालन-भार ठीक उसी प्रकार मेरे ऊपर छोड़ देना चाहिए, जैसे मन्त्रिमण्डलने कूटनीति-विषयक बातें सर एडवर्ड सीलीपर छोड़ दी हैं। कूटनीति केवल वैयक्तिक साधन और गोपनीय कार्योंके जरिये सम्भव है।

किन्तु यदि आप राजनयिक तरीका ही पसन्द करें तब मैं एक तरफ हट जाऊँगा, ताकि सर मंचरजी स्वतन्त्रतापूर्वक काम कर सकें। मैं ऐसे किसी भी कार्यमें भाग नहीं लूँगा जो मुझे वर्तमान स्थितिमें अनुचित और गलत लगता है।

पिछले दस दिनोंके कामके फलस्वरूप मैं एक ओर लॉर्ड क्रू, लॉर्ड मॉर्ले, लॉर्ड लैंसडाउन और लॉर्ड कर्ज़न, तथा दूसरी ओर लॉर्ड सेल्बोर्न, जनरल स्मट्स और सर जॉर्ज फेरारके सम्पर्कमें हूँ। मैं अगले सप्ताह, शायद बुधवारको, जनरल स्मट्ससे बातचीत करूँगा। जिन लोगोंके नाम मैंने गिनाये हैं, वे सभी समझौतेके इच्छुक हैं।

इस बातको मद्देनजर रखते हुए कि मैं इस मामलेमें कितनी दूरतक जा चुका हूँ, मेरी आपको सलाह है कि आप फिलहाल सारी बातें मुझपर छोड़ दें, और यदि समझौता-वार्ता विफल हो जाये तो आप सर मंचरजी द्वारा सुझाये गये तरीकेको आजमायें।

कृपया यथाशीघ्र मुझे सूचित करें कि आपका क्या निर्णय है।

आपका अत्यन्त विश्वस्त,
ऍम्टहिल

हस्तलिखित मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९६७) से।

परिशिष्ट १७

गांधीजीके नाम लॉर्ड ऍम्टहिलका पत्र

गोपनीय

जुलाई २८, १९०९

प्रिय श्री गांधी,

मैं घरसे दूर हूँ और मुझे आपका पत्र अभी-अभी मिला है। रात आधीसे भी ज्यादा बीत चुकी है और मैं दिन-भरके सख्त कामके कारण थका हुआ भी हूँ, इसलिए इसका जवाब जल्दीमें दे रहा हूँ। मैं कल फिर जल्दी ही निकल जाऊँगा; अगर आज ही जवाब न दूँ तो बहुत देर हो जायेगी। आपको पिछली बार लिखनेके बादसे मैं चुप नहीं बैठा हूँ। लॉर्ड सेल्बोर्न, लॉर्ड क्रू और सर जॉर्ज फेरारसे मेरी लम्बी बातचीत हुई है, और मैं लॉर्ड मॉर्ले, जनरल स्मट्स तथा दूसरे लोगोंसे भी मिला हूँ। लॉर्ड कर्ज़न मेरे साथ-साथ काममें लगे हैं।

उल्लिखित व्यक्तियोंमें से किसीको भी समझौतेके खिलाफ कोई जिद नहीं है, किन्तु उनपर अनुचित दबाव डालने या जनमत उभारनेसे कोई बात नहीं बनेगी। व्यक्तिगत बातचीत और पत्र-व्यवहार ही ठीक उपाय होगा।

आपके प्रश्नके उत्तरमें, आप कृपया पहले अपना वक्तव्य मुझे दिखा दें; तभी मैं ज्यादा ठीक ढंगसे सुझा सकूँगा कि आप उस सम्बन्धमें क्या करें। किन्तु मैं आपसे आग्रह करता हूँ कि आप मुझे बताये बिना न कोई चीज प्रकाशित करें और न लोगोंके पास भेजें। अगर जिम्मेदार राजनीतिज्ञोंमें से किसीको बुरा लग गया या इस अवसरपर उनमें से कोई नाराज हो गया तो खेल बिगड़ जायेगा। शायद यह मेरी अति आशावादिता है, तथापि मुझे सचमुच आशा है कि यदि उन्हींपर छोड़ दिया जाये तो वे किसी समझौतेके लिए राजी हो जायेंगे। अब आप नीचेके प्रश्नका उत्तर भेजनेकी कृपा करें।

यदि १९०७ का अधिनियम रद कर दिया जाये और यदि यह वचन दे दिया जाये कि ट्रान्सवालमें प्रति वर्ष ६ व्यक्तियोंको आपके प्रस्तावके अनुसार प्रवेश दिया जायेगा तो क्या आप संतुष्ट हो जायेंगे? क्या ट्रान्सवालमें भारतीय समाज अन्याय और अपमानकी जिस भावनासे पीड़ित है, वह उसके बाद उसके मनसे बिलकुल हट जायेगी?

यह जोर देकर कहा जाता है कि भारतीय कभी सन्तुष्ट नहीं होंगे और रियायतें देते ही नई माँगें पेश की जाने लगेंगी। कृपया साफ-साफ कहिए कि ऐसी आपत्ति उठनेपर मैं क्या कहूँ। मुझे इसका जवाब देना पड़ेगा।

उक्त अधिकारियोंका विश्वास है कि ट्रान्सवाल सत्याग्रहको भारतका राजद्रोही दल, जो नहीं चाहता कि इस मसलेका कोई हल निकल सके, उत्तेजित करता है और आर्थिक सहायता देता है। इसके कारण उनके मनमें उसके लिए प्रतिकूल भावना है। कृपया मुझे बताइए कि मैं इसके खण्डनमें क्या कहूँ।

निःसन्देह आप यह पत्र अपने सहयोगियोंको दिखा सकते हैं और यदि आप इसे श्री रिचको भी दिखा दें तो बड़ी कृपा होगी, क्योंकि मेरे पास उन्हें अलगसे यह सब लिखनेका समय नहीं है। किन्तु कृपया किसी दूसरेको न दिखायें।

आपका विश्वस्त,
ऍम्टहिल

हस्तलिखित मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४९६५) से।

परिशिष्ट १८

एम० के० गांधी : एन इंडियन पेट्रिअट इन साउथ आफ्रिका

की

लॉर्ड ऍम्टहिल द्वारा लिखित भूमिका

इस पुस्तकके लेखकसे मेरा व्यक्तिगत परिचय नहीं है। परन्तु जिस उद्देश्यकी हिमायत उन्होंने इतने साहस और इतनी निष्ठासे की है उसके सम्बन्धमें उनकी तथा मेरी भावनाएँ एक-जैसी हैं, और हम समान सहानुभूतिके बन्धनसे बँधे हुए हैं।

जो लोग मेरे इस मन्तव्यको स्वीकार करनेके लिए तैयार हों कि यह पुस्तक पढ़ने लायक है, उनसे मैं इसे पढ़नेकी सिफारिश करता हूँ। मैं सादर सुझाव देता हूँ कि दूसरे लोग भी, जो मेरी रायको कोई महत्त्व नहीं देते, इस पुस्तकमें दी गई जानकारीसे लाभ उठा सकते हैं। यह जानकारी एक ऐसे प्रश्नके सम्बन्धमें है जिससे दुर्भाग्यवश इस देशमें बहुत कम लोग परिचित हैं। लेकिन फिर भी वह अत्यन्त महत्त्वका साम्राज्य-सम्बन्धी प्रश्न है।

श्री डोकका दावा यह नहीं है कि उन्होंने इस पुस्तकमें ट्रान्सवालके भारतीय समाजके नेता श्री मोहनदास करमचन्द गांधीकी संक्षिप्त जीवनी और चरित्रके परिचयसे कुछ ज्यादा दिया है। लेकिन पुस्तकका महत्व इन तथ्योंके कारण है कि सब मानवीय कार्योंमें व्यक्ति और मामले गुँथे होते हैं और उन्हें अलग नहीं किया जा सकता; दूसरे, खास तौरसे राजनीतिक मामलोंको ठीक तरहसे तभी समझा जा सकता है जब उन मामलोंको संचालकोंके चरित्र और हेतु जान लिये जायें।

मैं मीमांसा करनेकी स्थितिमें नहीं हूँ, फिर भी इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं कि इन पृष्ठोंमें दिये गये तथ्य सही हैं; और मेरे पास यह विश्वास करनेका भी पर्याप्त आधार है कि सराहना संतुलित है।

चरित्र-नायक, श्री गांधीकी इस देशके उत्तरदायी लोगों तक ने मामूली दर्जेका आन्दोलनकारी कहकर निन्दा की है, उनके कार्योंको भद्दे ढंगका कानून भंग कहकर गलत रूपमें पेश किया गया है, और यह कहनेवाले भी कम नहीं हैं कि उनका हेतु स्वार्थ-सिद्धि और अर्थ-लाभ है।

अगर किसी निष्पक्ष व्यक्तिको ऐसा भ्रम हो गया हो तो इस पुस्तकको पढ़नेसे उसके दिमागमें से ऐसे खयाल निकल जायेंगे। व्यक्तिको अच्छीतरह समझ लेनेका अर्थ घटना क्रमको ठीक-ठीक समझ लेना है।

ट्रान्सवालका भारतीय समाज एक अधिकारकी रक्षा करने और एक अपमानको दूर करानेके लिए लड़ रहा है। क्या हम अंग्रेजोंकी हैसियतसे उन्हें इसके लिए दोषी ठहरा सकते हैं? उन्हें न तो मत देनेका अधिकार प्राप्त है और न प्रतिनिधित्व। ऐसे लोगोंके लिए हिंसा और अराजकताके अतिरिक्त विरोधका जो एक ही तरीका बच जाता है वह अनाक्रामक प्रतिरोध ही है। क्या हम उसके लिए उन्हें दोषी ठहरा सकते हैं? वे स्वार्थ-भावसे करोंका विरोध या चालाकीसे नये राजनीतिक अधिकार लेनेका उद्योग नहीं कर रहे हैं। जो चीज उनसे छीन ली गई है, अर्थात् उनका जातीय सम्मान, उसीको वे फिरसे प्राप्त करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। जो व्यक्ति उन्हें दोषी ठहराता है वही बताये कि अगर वह ऐसी स्थितिमें होता तो क्या करता। क्या हममें कोई भी ऐसा व्यक्ति है जो कानूनकी मर्यादा रखनेके लिए अपने अधिकारोंके अपहरणको और राष्ट्रीय अपमानको विरोध किये बिना चुपचाप स्वीकार कर लेता?

उपनिवेशकी सरकार इन शिकायतोंको दूर कर सकती है। इसमें उसे सिद्धान्त या सम्मानका तनिक भी त्याग नहीं करना पड़ता। क्या वह इस मौकेपर, जब एकीकरणका प्रयत्न किया जा रहा है, संघ बन रहा है और भविष्यके सम्बन्धमें नई आशा उत्पन्न हो रही है, साम्राज्यकी खातिर इन शिकायतोंको दूर करेगी। यही प्रश्न है जिसके उत्तरकी हम इस समय उत्सुकतासे प्रतीक्षा कर रहे हैं। [दूसरे शब्दोंमें] प्रश्न यह है कि जिन भारतीयोंके घर ट्रान्सवालमें हैं, जिन्होंने दक्षिण आफ्रिकाके विकासमें एक वर्गके रूपमें सहायता दी है और जो ब्रिटिश नागरिक हैं और महामहिम सम्राट्के प्रजाजन हैं, उन्हें दक्षिण आफ्रिकी संघ बननेकी आम खुशीमें खुश होने दिया जायेगा या नहीं।

उपनिवेशकी सरकारको केवल एक ऐसे कानूनको रद करना है, जिसका उद्देश्य पूरा हो चुका है, जो अब बेकार और अमलके अयोग्य है और जिसे सरकार स्वयं मुर्दा कानून बता चुकी है। इसके सिवा, उसे एक दूसरे कानूनमें थोड़ा-सा सुधार करना है जिससे इन कानूनोंमें जो स्पष्ट जातीय भेदभाव है वह दूर हो जाये; और जहाँतक अमलका सम्बन्ध है, हकके पुराने सिद्धान्तके आधारपर उपनिवेशमें हर साल ज्यादासे-ज्यादा छः भारतीय आ सकें। बस, इसीसे प्रश्न हल हो जायेगा। तब भारतीयोंके लिए इस संघर्षको, जिसका अर्थ है उनके लिए यन्त्रणाएँ और बर्बादी तथा उपनिवेशके लिए लोकापवाद और कलंक, जारी रखनेका दूसरा कोई कारण न रह जायेगा। इसका अर्थ यह नहीं है कि उनकी और कोई शिकायतें रहती ही नहीं। उनपर पिछले ट्रान्सवाल गणतन्त्रकी लगाई निर्योग्यताएँ तो रहेंगी ही, जिनके कारण उन्हें मताधिकार नहीं दिया जा सकता, वे जमीनें नहीं रख सकते हैं और बस्तियोंमें अलग बसाये जा सकते हैं।

इस देशके लोग यह अनुभव नहीं करते कि भारतीयोंसे ट्रान्सवालमें पिछले तीन वर्षोंमें महामहिम सम्राट्के सभ्य प्रजाजनों-जैसी शर्तोंपर प्रवासका कानूनी अधिकार पहली बार छीना गया है। उन्हें यह अधिकार सिद्धान्त रूपमें ही सही, पहले प्राप्त था और साम्राज्यके दूसरे भागोंमें अब भी प्राप्त है। यह सीधा-सादा, लेकिन चौंकादेनेवाला तथ्य है, जिसे लोगोंको समझना चाहिए। अगर यह तथ्य समझ लिया जाता तो संसदके दोनों सदनोंमें सभी दलोंके लोग इसका विरोध करते, क्योंकि उन्होंने दक्षिण आफ्रिकाके नये संविधानमें रंग-सम्बन्धी भेदभाव रखनेपर अपनी गहरी नापसन्दगी जाहिर की है और उसपर खेद प्रकट किया है। इसमें शक नहीं है कि एक उदार दलकी शासन-व्यवस्थामें रंगके कारण लोगोंके मताधिकारोंका यह अपहरण, प्रजातीय कारणोंसे ब्रिटिश नागरिकताके प्रारम्भिक अधिकारोंसे लोगोंका इस प्रकार वंचित किया जाना सम्राट्के शासनमें एक प्रतिगामी कदम है, जिसकी शायद ही दूसरी मिसाल मिले। जिन सिद्धान्तोंके आधारपर साम्राज्यका निर्माण किया

गया है और जिनके आधारपर हम उसके अस्तित्वका औचित्य सिद्ध किया करते हैं और जो उन सच्चे उदार-वादके सिद्धान्त हैं, जिन्हें अबतक सब दलोंके अंग्रेज मानते आये हैं, उनकी इतनी बड़ी अवहेलना शायद इसके पहले कभी नहीं की गई थी। लेकिन हमारी जातिका राजनीतिक आचार-धर्म जितना नये दक्षिण आफ्रिकाके विधानमें भंग हुआ है उससे ज्यादा हुआ है ट्रान्सवाल द्वारा स्थापित "रंग-प्रतिबन्ध"के मामलेमें। अगर यह बात संसद और अखबारोंको दिखाई नहीं देती और अगर वे ऐसी महत्त्वपूर्ण प्रतिक्रियाको भी ध्यान देने योग्य नहीं समझते, तो ऐसा लगता है कि साम्राज्यके शासनकी हमारी प्रतिभाका ह्रास आरम्भ हो गया है।

अगर अन्तमें यह सिद्ध हो जाये कि हम ब्रिटिश झंडेके नीचे ब्रिटिश भारतीयोंकी रक्षा नहीं कर सकते और अपने बादशाह और राजनीतिज्ञोंके वचनोंको भी पूरा नहीं कर सकते तो इसका नतीजा भारतमें क्या होगा? जो लोग भारतको जानते हैं उन्हें इसके परिणामोंके बारेमें कोई शक नहीं होगा। अगर भारत चिढ़कर, परेशान होकर और अपमानित होकर इस महान साम्राज्य-संस्थामें शामिल न रहना चाहे और बिगड़ उठे तब हम क्या करेंगे? निश्चय ही इससे साम्राज्यका खात्मा शुरू हो जायेगा।

संक्षेपमें ये ही कारण हैं "जिनसे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंका" यह प्रश्न साम्राज्यका एक बड़ा प्रश्न ठहरता है, न कि एक ऐसे स्वशासित उपनिवेशका आन्तरिक प्रश्न-मात्र, जिसमें मातृदेशको हस्तक्षेपका अधिकार या कारण न हो।

यह मामला हमारे प्रजातीय सम्मानको ठेस पहुँचानेवाला है, और सारे साम्राज्यकी एकताको प्रभावित करता है; इसलिए इसका सम्बन्ध साम्राज्यके हर हिस्सेसे है। इसके अलावा, यह निश्चित है कि अगर साम्राज्यके इस केन्द्र-स्थलमें सिद्धान्तको छोड़कर किसी भी बातको स्वीकार किया गया या उसकी उपेक्षा की गई तो उससे दूसरे स्थानोंके लिए बाहर भी और भीतर भी एक बुरी मिसाल कायम होती है, और तब सारी व्यवस्थाको कोई बड़ा आघात नैतिक पतनको रोकना सम्भव लगे बिना नहीं होगा।

इसलिए इस मामलेसे उन सभी लोगोंका सम्बन्ध है जो "साम्राज्यकी दृष्टिसे" सोचते हैं, और इसपर पहलेसे ज्यादा साफ-साफ सोचनेकी जरूरत है।

इस प्रश्नको तात्कालिक लाभकी दृष्टिसे तय नहीं करना चाहिए; इसमें तो अमल मुख्य बन जाता है और सिद्धांतकी उपेक्षा कर दी जाती है इसे तो हमारी प्रजातिकी नैतिकताके मूलभूत सिद्धान्तोंके आधारपर तय किया जाना चाहिए। किसी सिद्धान्तमें, अमल करते वक्त देश और कालकी जरूरतके मुताबिक फेरफार किया जा सकता है; लेकिन अगर सिद्धान्तको ही उठाकर ताकपर रख दें तो अमलपर नियंत्रण रखनेका कोई साधन नहीं रह जाता।

अब भी उम्मीद है कि खतरेको समझा जायेगा और उसे टाला जायेगा; क्योंकि यह लिखते वक्त भी मुझे ज्ञात हुआ है कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय प्रश्नको हल करनेके लिए बातचीत अब भी चल रही है। मेरी हार्दिक कामना है कि श्री गांधी तथा उनके साथी देशभाई अपने उस उद्देश्यकी पूर्तिमें, जिसके लिए उन्होंने इतनी बहादुरीसे संघर्ष किया है और इतना त्याग किया है, इस पुस्तकके प्रकाशनसे पूर्ण सफलता प्राप्त करें।

ऍम्टहिल

मिल्टन अर्नेस्ट हॉल,
बेडफोर्ड,
२६ अगस्त, १९०९

[अंग्रेजीसे]
'एम० के० गांधी: ऐन इंडियन पैट्रियट इन साउथ आफ्रिका'

परिशिष्ट १९

वक्तव्य: नेटाल शिष्टमण्डलकी तरफसे

अगस्त १२, १९०९

मैं और मेरे साथी प्रतिनिधि श्रीमानको धन्यवाद देते हैं कि श्रीमानने आज यहाँ हमें भेंटका अवसर दिया। जिस कारणसे हम लोग यहाँ आये हैं वह यह है कि हम उन कुछ गम्भीर कष्टोंको आपके सामने रखें जिन्हें हम नेटाल उपनिवेशमें भोग रहे हैं।

इस वक्तव्यमें जिन मामलोंका उल्लेख किया गया है, उनमें से तीन सर्वाधिक महत्वके मामलोंकी संक्षेपमें चर्चा आपको पहले भेजे गये एक वक्तव्यमें कर दी गई है।

नेटालकी ब्रिटिश भारतीय आबादी बहुत ही बड़ी है। वह बाकी उपनिवेशोंकी कुल ब्रिटिश भारतीय आबादीसे भी ज्यादा है। उसके निहित अधिकार और स्वार्थ भी बहुत बड़े हैं। जहाँतक १८९७ के परवाना कानूनसे हुई तकलीफोंका सम्बन्ध है, जिस ढंगसे परवाना अधिकारी ब्रिटिश भारतीयोंको परवाना देनेसे इनकार करनेमें अपने विवेकका उपयोग करते रहे हैं, उससे हमारे व्यापारी समाजमें बहुत ही भय उत्पन्न हो गया है। इसलिए यह हमारे लिए जीवन-मरणका प्रश्न है, क्योंकि हम नहीं जानते कि इसके बाद किस अभागे व्यापारीको — चाहे वह कितने ही लम्बे अरसेसे व्यापार क्यों न कर रहा हो — परवानेसे वंचित किया जायेगा। इसका अर्थ हुआ लगभग विनाश, जिसके कुछ ज्वलन्त उदाहरण उक्त वक्तव्यमें दिये गये हैं।

श्री चैम्बरलेनको, जो उस समय उपनिवेश मन्त्री थे, इसके नितान्त एकतरफा प्रयोगके विरुद्ध जोरदार आवाज उठानी पड़ी थी। इस विरोधका भी उक्त वक्तव्यमें थोड़ा हवाला दिया गया है। उपनिवेश कार्यालयमें उनके बादके सभी मन्त्रियोंका यही रुख रहा है। परवाना अधिकारियोंने कुछ ब्रिटिश भारतीयोंको परवाने देनेसे इनकार करनेके कारण ये बताये: (१) "लोगोंकी भावनाको सन्तुष्ट करना," अर्थात्, प्रतिस्पर्धी यूरोपीय व्यापारियोंकी भावनाको (जिनके लिए हमारे चिर-उपार्जित हितोंका बलिदान किया जाता है); और (२) उग्र पूर्वाग्रहके कारण, जो स्वाभाविक न्यायकी अदालतों (कोर्ट ऑफ इक्विटी) में ठीक नहीं माना जायेगा।

कुछ यूरोपीय व्यापारियोंको हमसे यह शिकायत है कि व्यापारमें हम बेईमानीसे होड़ करते रहते हैं। यह शिकायत केवल गलत ही नहीं है, वरन् सभी सुसभ्य देशोंमें प्रतिस्पर्धाको बहुत ही स्वस्थ माना जाता है। हम किस प्रकार रहते व खाते-पीते हैं, इस प्रश्नपर काफी गलतफहमी है। हमारे व्यापारके स्थानोंका निरीक्षण किया जा सकता है। वे यूरोपीय व्यापारिक स्थानोंसे अच्छे ही उतरते हैं।

हम ऐसे प्रतिबन्धक कानूनोंके बोझसे दबे हैं कि हमारा भाग्य करीब-करीब अधरमें लटका हुआ है — खासकर उनका जिनके उपनिवेशमें निहित स्वार्थ हैं।

ब्रिटिश भारतीय व्यापारी जमीन खरीदते हैं, उनपर व्यापारके लिए दूकानें बनाते हैं, कर देते हैं, चुंगी आदि अदा करते हैं, आदि। छोटे सौदागर अपना माल स्थानीय यूरोपीय व्यापारियोंसे खरीदते हैं।

ब्रिटिश भारतीयोंके परवानोंको उसी स्थितिके अन्य लोगोंको हस्तान्तरित करनेसे इनकार करना बहुत ही अन्यायपूर्ण है। परवाना अधिकारी इतने ही से सन्तुष्ट नहीं होते, वे और आगे बढ़कर रिश्तेदारोंके बीच तथा पुत्रोंको या साझेदारोंको भी परवाना हस्तान्तरित करनेसे इनकार करते हैं।

नेटालको हमने अपना देश बना लिया है और हममें से कईके बच्चोंने भारत देखा भी नहीं है। हमें उनके भविष्यकी बड़ी ही चिन्ता है; क्योंकि यहाँतो हमारा ही भविष्य सुरक्षित नहीं है, हालाँकि गुजरे वक्तमें हमने उपनिवेशका व्यापार आगे बढ़ानेमें बड़ी मदद की है।

मैं यह कह दूँ कि हम राजनीतिक मताधिकारपर बहुत जोर नहीं दे रहे हैं, हालाँकि भारतमें हमें यह अधिकार एक भिन्न तरीकेसे मिला हुआ है। उदाहरणके लिए आपका विनम्र निवेदनकर्ता भारतमें म्यूनिसिपल कौंसिलर था, स्थानीय बोर्डका सदस्य था, स्कूल बोर्डका अध्यक्ष था और नगरपालिकाकी ओरसे बम्बईकी विधानसभाके एक सदस्यके निर्वाचनके लिए चुनावमें मतदाता चुना गया था।

आम जनताके हितोंमें हमारी दिलचस्पी अनगिनत अवसरोंपर प्रकट हो चुकी है। बोअर युद्धमें और हालके वतनी विद्रोहके समय हमने डोलीवाहक दल मुहैया किया। इसके अलावा, जब जरूरत हुई, हम हमेशा जनसेवामें आर्थिक या अन्य सहायताके लिए तैयार रहे। पिछले बोअर युद्धके दौरान अनेक नगरपालिकाओंने राहत कोष शुरू किये थे, जिससे बहुत बड़ी संख्यामें गोरोंने और ऐसे लोगोंने भी फायदा उठाया था जो ब्रिटिश प्रजा नहीं थे। सभी भारतीय शरणार्थियोंको हमारे समाजने ही आश्रय दिया था। मैरित्सबर्गमें हमारे एक साथी प्रतिनिधि श्री आमोद भायातने तथा कुछ अन्य लोगोंने उनका भरण-पोषण किया था तथा अन्य लोगोंकी भी मदद की थी। डर्बनमें हमने सहायता-कोष से कोई भी मदद कभी नहीं माँगी, और डर्बनके तत्कालीन मेयर श्री निकोल, सी० एम० जी० ने सार्वजनिक रूपसे इसकी प्रशंसा की थी।

उपनिवेश कार्यालय द्वारा किये गये तमाम विरोधों और न्यायपूर्ण बरताव करनेकी हमारी फरियादोंके बावजूद कोई भी राहत अभी तक नहीं दी गई है।

आन्दोलन करना हमारा धन्धा नहीं है, क्योंकि हम पैदाइश से व्यापारी हैं, और हम जो माँगते हैं वह है केवल न्याय। यदि यह न्याय हमें अब भी नहीं दिया गया तो हमारे लिए यह कठिन होगा कि अपने लोगोंसे कुछ कह सकना कठिन होगा।

हम माने हुए राजभक्त और कानून माननेवाले लोग हैं, और हमारी आकांक्षा है कि १८९७ के विक्रेता परवाना कानून (डीलर्स लाइसेंस ऐक्ट) नं० १८ में एक संशोधन कर दिया जाये। इसके लिए हमारा समाज लॉर्ड महोदयका आभारी होगा।

१८९५ के गिरमिटिया प्रवासी कानूनके संदर्भमें निवेदन है कि भारतीय मजदूरोंके आगमनसे पूर्व नेटालकी दशा दिवालियेकी-सी थी, परन्तु उनके आनेके बाद समृद्धि होने लगी और देशकी आर्थिक नींव मजबूत हो गई। उपनिवेशके मुख्य और लगभग सभी उद्योग अपने अस्तित्वके लिए इस तरहके मजदूरोंपर निर्भर हैं। इसका उल्लेख भी वक्तव्यमें किया गया है। गिरमिटकी समाप्तिके बाद, और अपने जीवनका सबसे अच्छा समय उपनिवेशके हितमें लगा देनेके बाद उम्र तथा लिंगका विचार किये बिना उन्हें सालाना ३ पौंडका कर अदा करके वहाँ बसनेकी अनुमति दी जाती है। बालकों तथा बालिकाओंके लिए उम्रकी सीमा १४ साल है। कुछ लोगोंके साथ जो बरताव किया जाता है वह भयानक होता है। आर्मिटेजका मामला इसका उदाहरण है, उसने अपने भारतीय मजदूरके कान ही काट दिया था और अदालतमें खुल्लमखुल्ला मंजूर किया था कि हाँ, मैंने ऐसा किया है।

इस सम्बन्धमें हम क्या करवाना चाहते हैं, उसका उल्लेख वक्तव्यमें किया गया है।

हालमें नेटाल सरकारने भारतीय बच्चोंकी शिक्षापर एक हास्यास्पद रोक लगा दी है। अब ऐसा कोई बच्चा, जिसने १३ वर्ष पूरे कर लिये हैं, सरकारी स्कूलमें नहीं पढ़ सकता। यह एक जानबूझकर अख्तियार किया गया तरीका है, जिससे शिक्षामें, जो देश तथा समाज दोनोंकी ही भलाईके लिए नितान्त आवश्यक है, रुकावट पड़ रही है। अतएव यह हमारा फर्ज है कि शिक्षाके इस तरह सीमित किये जानेका विरोध करें।

प्रवासी प्रतिबन्धक कानून भी एक अन्याय है। ऐसा कोई भी पिता, माता, भाई, या बहन, जो जन्मसे भारतीय हो, यहाँ बसे हुए किसी आदमीके साथ नहीं रह सकता, और एक निश्चित वयके ऊपर वाले बच्चे भी अपने उन माता-पिताके साथ आकर नहीं रह सकते जो उनके पालन कर्ता हैं। उन बच्चोंकी मौजूदगीसे तो कोई हानि हो ही नहीं सकती।

और भी अनेक अन्याय हैं। परन्तु हमने कुछ बहुत ही हृदय-विदारक मामलोंको ही गिनाया है। मैं तथा मेरे साथी प्रतिनिधि फिर एकबार लॉर्ड महोदयको धन्यवाद देते हैं कि आपने धीरजके साथ हमसे मुलाकात की और हमारी बात सुनी।

निःसन्देह आप उन कठिन परिस्थितियों से परिचित हैं, जिनका हम नेटालमें सामना कर रहे हैं। हम नम्रता-पूर्वक आशा करते हैं कि आप हमें अपने लोगोंके लिए कोई सन्देश देनेकी कृपा करेंगे।

इस प्रस्तावनाके बाद श्री अब्दुल कादिरने नेटालके प्रतिनिधियोंकी तरफ से लॉर्ड महोदयको मेहरबानी करके मुलाकात देनेके लिए धन्यवाद दिया।

नेटालमें हुई एक आमसभा से प्राप्त एक तार भी लॉर्ड महोदयको पढ़कर सुनाया गया। उस तारमें शिष्ट-मण्डलका समर्थन किया गया था।

मुलाकातके अन्तमें श्री अब्दुल कादिरने बताया कि मैं नेटालके लोगोंके बीच २५ वर्षसे भी अधिक समय से रह रहा हूँ, और मुझे अन्देशा है कि संघ-सरकारसे नेटालके ब्रिटिश भारतीयोंको कोई न्याय नहीं मिल सकेगा।

एम० सी० आंगलिया

[अंग्रेजीसे]
इंडिया ऑफ़िस रेकर्ड्स: १७९/०९

परिशिष्ट २०

ऐम्टहिल, क्रू और स्मट्सके बीच पत्र-व्यवहार

(१) जनरल स्मट्सके नाम लॉर्ड ऐम्टहिलका पत्र

अगस्त १०, १९०९

प्रिय जनरल स्मट्स,

मैं कल दोपहर बाद श्री गांधीसे मिलने गया था। मैंने उनसे आपके सुझावोंके अनुसार बात की; लेकिन उन्हें यह नहीं बताया कि वे सुझाव आपके हैं। मैंने पाया कि अपने विचारोंकी दृष्टिसे वे उतने ही स्पष्ट कायल करनेवाले और दृढ़ हैं जितने आप अपनी दृष्टिसे हैं। हमारी बातचीत दो घंटेतक चली उसमें हमने व्यावहारिक, राजनीतिक, कानूनी और नैतिक — प्रत्येक दृष्टिकोणसे प्रश्नपर विचार किया। आखिर मैं समझौते-के बारेमें निराश होकर आ गया।

श्री गांधी ऐसे सिद्धान्तके लिए लड़ रहे हैं, जिसे वे सारभूत मानते हैं और जहाँतक मैं समझ सकता हूँ, जैसे हम अपने जिन्दगी-भरके राजनीतिक या धार्मिक सिद्धान्तोंको नहीं छोड़ सकते वैसे ही वे भी उस कार्यका त्याग नहीं कर सकते, जिसे वे सारभूत और न्यायोचित मानते हैं। दरअसल तो मुझे ऐसा लगता है कि उनके ऐसा करनेकी सम्भावना और भी कम है; क्योंकि हममें बहुत कम लोग ऐसे हैं जो केवल किसी अप्राप्य सैद्धान्तिक और निरर्थक अधिकार प्राप्त करनेके लिए सर्वस्वका बलिदान कर दें। इस मनुष्यकी प्रशंसा किये बिना रहना असम्भव है; क्योंकि स्पष्ट है, वह अपने अन्तरात्माके अलावा अपीलकी कोई दूसरी अदालत मानता ही नहीं।

अब अगर मैं आपको एक सुझाव दूँ तो आशा है, आप उसे मेरी अनधिकार चेष्टा न मानेंगे। आप जो-कुछ करनेके लिए तैयार हैं, उसे अनाक्रामक प्रतिरोधियोंसे कोई सौदेबाजी किये बिना क्यों न कर दें? अगर आप उन्हें साररूपमें ही सही, वह चीज दे दें जिसकी वे माँग कर रहे हैं — अर्थात् १९०७के कानून २ का रद किया जाना और हर साल ज्यादासे-ज्यादा छः भारतीयोंका स्थायी निवासियोंके रूपमें कानूनन प्रवेश — तो क्या आप उन्हें निरस्त्र न कर देंगे? अगर ऐसा करना उचित हो तो किसी भी हालतमें — अर्थात्, चाहे अनाक्रामक प्रतिरोधी सन्तुष्ट हों या न हों — आप कर क्यों न डालें? इस तरहसे आप बाहरके लोगोंकी आलोचनाको बन्द कर देंगे और आपके इस कार्यसे साम्राज्य-सरकारको भारतमें की जानेवाली शिकायतोंका कारगर जवाब भी मिल जायेगा।

क्या मैं एक कदम आगे बढ़कर आपको ऐसा उपाय सुझा सकता हूँ जिससे "रंग-सम्बन्धी प्रतिबन्ध" रखे बिना कानूनमें छः भारतीयोंके प्रवेशकी सीमित व्यवस्था हो सके?

इसके साथ प्रवासी प्रतिबन्धक कानूनके उस संशोधनकी नकल भेज रहा हूँ जो कुछ दिन पहले आपको श्री गांधीने सुझाया था। मैंने इसके अन्तमें एक धारा जोड़ दी है, जिससे मुझे लगता है, यह जरूरत पूरी हो जाती है। मैं आपसे इसपर विचार करनेकी प्रार्थना करता हूँ। आप देखेंगे कि इससे एशियाइयों और दूसरे प्रवासियोंमें ईर्ष्याजनक भेदभाव नहीं होता और प्रकारान्तरसे आपको वह सत्ता मिल जाती है जो शायद भावी स्थितियोंमें उपयोगी हो सकती है। जहाँतक मैं समझता हूँ, इससे आपका उद्देश्य बिलकुल पूरा हो जाता है।

साम्राज्यके दृष्टिकोणसे जो चीज मुझे परेशान और चिन्तित करती है, वह है: अबतक ब्रिटिश भारतीयोंको साम्राज्यके किसी भी भागमें जानेका सैद्धान्तिक हक प्राप्त रहा है। यह सैद्धान्तिक हक पिछले कुछ सालोंसे ट्रान्सवालमें ही छीना और अमलमें सीमित किया गया है। मुझे ऐसा लगता है कि इस निर्योग्यताके स्थायी बनाये जानेसे और इसके फैलावकी सम्भावनासे भारतमें अंग्रेजोंका असर और नाम भारी खतरेमें पड़ जायेगा। इसी कारण मैंने इस मामलेमें इतना आग्रह किया है।

हृदयसे आपका,

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१४१

(२) लॉर्ड क्रूके नाम लॉर्ड ऍम्टहिलका पत्र

अगस्त ११, १९०९

प्रिय लॉर्ड क्रू,

मैं जो-कुछ लिख रहा हूँ वह अगर आपको बेजा हस्तक्षेप लगे तो मुझे क्षमा करेंगे। पत्रको टाइप करवा कर भेजनेके लिए भी क्षमा-प्रार्थी हूँ। गर्मी इतनी है कि शान्तिसे लिखा नहीं जाता।

मैंने कल जनरल स्मट्स और श्री गांधी से लम्बी बातचीत की। मुझे यह देखकर बहुत निराशा हुई कि "अधिकार" के भावात्मक प्रश्नपर दोनोंके विचारोंमें कोई मेल सम्भव नहीं है। आप दोनों पक्षोंके विचारोंको इतनी अच्छी तरह जानते हैं कि मुझे ज्यादा स्पष्ट करनेकी जरूरत नहीं है। लेकिन आपको यह बतानेके उद्देश्यसे कि मैं क्या कर रहा हूँ, इसके साथ एक पत्रकी नकल भेज रहा हूँ। यह पत्र मैंने अभी-अभी जनरल स्मट्सको लिखा है। मैंने इसमें जो सुझाव दिये हैं वे मेरे अपने हैं, अर्थात् वे श्री गांधी और जनरल स्मट्सके बीच मध्यस्थता करनेके तौरपर नहीं दिये गये हैं, क्योंकि ऐसी मध्यस्थता करना तो आपका ही काम है।

अब चूँकि आप अपनी बातचीतको जोरोंसे चला रहे हैं, इसलिए मैं आशा करता हूँ कि शायद मेरे सुझाव विचारके अयोग्य न जान पड़ेंगे।

मैं बहुत चिन्तित हूँ कि यह कठिन प्रश्न तय किया जाना चाहिए। अपने विचार आपके सामने रखनेकी धृष्टताकी मेरे पास यही आड़ है।

मैं चाहता हूँ कि लोकसभामें दक्षिण आफ्रिका विधेयकके तीसरे वाचनके अवसरपर "उपसंहार" के रूपमें जो बात कही जाये वह यह हो कि कर्नल सीली आपकी ओरसे यह घोषणा करें कि ट्रान्सवाल-सरकारने सहज भावसे एक उदारता दिखानेका निश्चय किया है, ताकि भारतीय दक्षिण आफ्रिका संघ बननेकी खुशी मनानेमें हिस्सा ले सकें।

यह एक लांछन होगा कि एक उदार दलीय सरकारके रहते ट्रान्सवालके भारतीय उस अधिकार से वंचित कर दिये गये, जो उन्हें ब्रिटिश साम्राज्यके दूसरे सब भागोंमें, सिद्धान्त रूपमें ही सही, प्राप्त हैं। क्या इस लांछनसे बचना आपकी सरकारके लिए बहुत बड़ी नेकनामीकी बात न होगी और क्या यह कार्य करने योग्य न होगा?

अगर आप यह कार्य करा सकें तो मैं स्वयं इस मामलेमें एक शब्द भी कहना या बीचमें पड़ना बिलकुल नहीं चाहता।

हृदयसे आपका,
ऍम्टहिल

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: २९१/१४१

(३) लॉर्ड ऍम्टहिलके नाम लॉर्ड क्रू का पत्र

गोपनीय

उपनिवेश कार्यालय
अगस्त ११, १९०९

प्रिय एम्टहिल,

मैं भी जनरल स्मट्स और श्री गांधीसे मिला हूँ। मुझे लगता है कि आपने जिस सैद्धान्तिक मतभेदका उल्लेख किया है, वह निश्चय ही मौजूद है, यद्यपि यह कठिनाई, सम्भव है, दुर्निवार न हो।

अगर हम यह मान लें और यह मानना ठीक हो सकता है कि जो भी समझौता होगा उसमें १९०७ के कानून २ की मंसूखी तो रहेगी ही, तो विवादकी बात सिर्फ यह रह जाती है कि जिस तरीकेसे ठीक तरहके छः योग्य आदमियोंको लाना है वह तरीका क्या हो। फिर अगर हम यह मान लें कि समझौता करनेके लिए उनको ऐसे लाइसेंसके अन्तर्गत लाना चाहिए जो वापस न लिया जा सके तो ऐसा लगता है कि इस उद्देश्यको पूरा करनेके लिए कानून बनानेकी जरूरत होगी। उस कानूनमें सीमित संख्यामें लोगोंको आने देनेकी साफ व्यवस्था रहे, या जैसा आपने सुझाया है, शिक्षा परीक्षासे ऐसी व्यवस्था कर ली जाये, चाहे मौजूदा कानूनमें कोई विरोधी विधान ही क्यों न हो। लेकिन जैसा मैंने श्री गांधीसे कहा था, मुझे लगता है कि शिक्षा-परीक्षाके अन्तर्गत प्रवेशके सिद्धान्तका समर्थन करना और फिर यह कहना (जैसा आपकी अन्तिम धारामें कहा गया है) कि परीक्षामें पास होने पर भी सरकार किसी आदमीको आने देनेसे इनकार कर सकती है, तर्कसम्मत नहीं है। और मैं मानता हूँ, मुझे यह भरोसा नहीं हो पाया है कि भारतीय समाज इस हलको मान लेगा और आपकी धाराके अन्तर्गत दी गई आम व्यापक अनुमतिका उपयोग नई माँगें करनेमें न करेगा।

मैं कह नहीं सकता कि जनरल स्मट्स इस बातपर या इससे मिलती-जुलती किसी अन्य बातपर राजी किये जा सकते हैं या नहीं मैं उनके पत्रकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
क्रू

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: २९१/१४१

(४) लॉर्ड क्रूके नाम लॉर्ड ऍम्टहिलका पत्र

गोपनीय

अगस्त १२, १९०९

प्रिय लॉर्ड क्रू,

मैंने दो दिन पहले आपको एक पत्र लिखा था, जिसका उत्तर आपने बहुत कृपापूर्वक जल्दी और अपने हाथसे लिखकर दिया है, अतः आपको धन्यवादस्वरूप दो शब्द।

मैं निश्चयपूर्वक यह नहीं कह सकता कि जो हल मैंने सुझाया है उसे भारतीय इस हद तक मान लेंगे कि आगे और माँग न करनेका वचन दे दें। चूँकि मैं अधिकृत मध्यस्थकी स्थितिमें नहीं हूँ, इसलिए मैं इस प्रश्नको श्री गांधीके सामने न रखूँगा। लेकिन मेरा खयाल यह है कि भारतीय समाज समग्रतः इस बेकारके संघर्षको ससम्मान त्यागनेका एक साधन मानकर मेरे हलको प्रसन्नतासे स्वीकार कर लेगा। लेकिन श्री गांधी जैसे लोग तो उस बातके लिए आखिरी दमतक लड़ते रहेंगे, जिसे वे न्याय और अधिकार मानते हैं।

तथापि, मेरे खयालसे, यदि थोड़े-से तीर-चौकुरोंकी टुकड़ीको सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता, इस कारण आपका बहुसंख्यक लोगोंको सन्तोष देनेसे हाथ खींच लेना आवश्यक नहीं है। अनाक्रामक प्रतिरोधियोंके नेता जाने-पहचाने हैं। ट्रान्सवाल सरकार उनपर मुकदमे चलाना बन्द करके अनाक्रामक प्रतिरोधकी अड़चनोंका अन्त किसी भी क्षण कर सकती है। इसलिए मेरा खयाल है कि अगर आप मेरा सुझाया हुआ समझौता श्री गांधीसे बातचीत किये बिना अपनी मर्जीसे लागू करें तो ऐसी स्थिति पैदा हो जायेगी जिसमें श्री गांधी अपने सिद्धान्तोंको छोड़े बिना सक्रिय संघर्षसे हाथ खींच सकेंगे। ऐसी स्थिति वे स्वीकार कर लेंगे। मैं उनसे ऐसा करनेका आग्रह निश्चय ही करूँगा और आगे कोई [माँग] करनेमें उनको सहायता न दूँगा। दरअसल मैं उनसे कह भी चुका हूँ कि उनका तबतक आगे माँग करना बिल्कुल बेकार है, जबतक ऐसा समय नहीं आ जाता और ऐसी स्थितियाँ पैदा नहीं हो जातीं कि दक्षिण आफ्रिकाके उपनिवेशी इस ओर पूरा ध्यान दे सकें।

हृदयसे आपका,
ऍम्टहिल

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल आफिस रेकर्ड्स, २९१/१४१

परिशिष्ट २१

नेटालके प्रतिनिधियोंकी ओरसे वाइसरॉयको पत्र

वेस्टमिन्स्टर पैलेस होटल
४, विक्टोरिया स्ट्रीट
लन्दन, एस० डब्ल्यू०
अगस्त २७, १९०९

सेवामें
परमश्रेष्ठ वाइसरॉय, महोदय भारत
लॉर्ड महोदय,

हमने पिछली डाकसे आपके निजी-सचिवकी मार्फत अपने नेटालवासी देशभाइयोंकी शिकायतोंके विवरणकी एक प्रारम्भिक नकल भेजनेकी धृष्टता की थी। अब यह विवरण उपनिवेश-मन्त्री और भारत-मन्त्रीको जिस रूपमें दिया गया है और उपनिवेश-मन्त्रीके समक्ष जिस रूपमें पढ़ा गया है, उसकी १२ नकलें सेवामें भेज रहे हैं।

हम आपसे अर्ज करते हैं कि आप इसपर अपनी समितिके साथ सहानुभूतिपूर्वक विचार करें और यह मामला जिस अविलम्ब कार्रवाईकी अपेक्षा रखता है वैसी कार्रवाई करें।

ब्रिटिश भारतीयोंकी आबादी नेटालकी आबादीका एक बहुत महत्त्वपूर्ण हिस्सा है; इस उपनिवेशमें उनकी बड़ी-बड़ी जायदादें और अन्य हित हैं और वे भारतके सभी प्रदेशोंसे आये हुए हैं। उनकी संख्या १००,०००से ज्यादा है, जिनमें से ६०, ००० वे गिरमिटिया मजदूर हैं जिन्हें नेटाल सरकार यहाँ लाई है। और यह एक मानी हुई हकीकत है कि नेटालकी समृद्धि यदि पूरी तरह नहीं तो अधिकांशमें इन्हीं मजदूरोंपर, जिन्हें नेटाल भारतसे प्राप्त करता है, आधारित है।

जैसा कि इस विवरणसे प्रकट होगा, नेटालमें हमारी हस्तीको तीन प्रकारसे नष्ट करनेकी कोशिश की जा रही है। परवाना-कानूनके अन्यायपूर्ण और निरंकुश अमलके द्वारा धीरे-धीरे हमसे हमारा व्यापार छीना जा रहा है। इस कानूनने परवाना अधिकारीको और उसके नियोक्ताओंको, जो खुद ही हमारे व्यापारिक प्रतिस्पर्धी हैं, पुराने या नये व्यापारिक परवाने देने या न देनेके सम्बन्धमें अमर्यादित सत्ता दे रखी है और उसपर उपनिवेशके न्यायालयोंका कोई नियन्त्रण नहीं है। भारतीय मजदूरोंसे नेटालके भौतिक लाभके लिए गुलामोंकी तरह काम लिया जाता और गुलामोंकी ही तरह व्यवहार किया जाता है। लेकिन ज्यों ही वे नेटालके बागान-मालिकों या खानोंके स्वामियोंके साथ, जिन्हें वे सौंप दिये जाते थे, अपनी नौकरीकी अवधि पूरी कर चुकते हैं त्यों ही उनपर, उनकी पत्नियोंपर और उनके बच्चोंपर एक बहुत भारी कर थोप दिया जाता है, जिसका उद्देश्य उन्हें उपनिवेशमें आजाद व्यक्तियोंकी तरह बसने और ईमानदारीसे अपनी जीविका कमानेसे रोकना है। और, हमारे किशोरों और युवकोंकी समुचित शिक्षाके लिए आवश्यक सामान्य सुविधाओंको छीनकर हमारी भावी प्रगतिका रास्ता लगभग पूरी तरहसे बन्द कर दिया गया है।

इसलिए हमारे रक्षकों और अभिभावकोंके रूपमें यदि भारत-सरकार हमारे मामलेको अपने हाथमें नहीं लेती और इस बातका आग्रह नहीं करती कि नेटालके सत्ताधारी हमारे साथ मात्र न्याय करें तो फिर यह निश्चित है कि आगे-पीछे हमें धीरे-धीरे भूखों मारकर उपनिवेश छोड़नेके लिए लाचार कर दिया जायेगा। [इस अन्यायको दूर करानेके लिए] भारत-सरकारके हाथमें एक सीधा उपाय है; और वह है: अगर उपनिवेश भारतीय व्यापारियों और भारतीय मजदूरोंके साथ न्यायका व्यवहार करनेके लिए राजी न हो तो गिरमिटिया मजदूरोंका जो प्रवाह प्रतिवर्ष उमड़ कर यहाँ आ जाता है, उसे रोक दिया जाये। यह कोई नया उपाय नहीं है। कुछ वर्ष हुए, हमने

लॉर्ड कर्जनसे यही प्रस्ताव किया था और उन्होंने उसे स्वीकार कर लिया था; इतना ही नहीं, उन्होंने नेटालके मन्त्रियोंको एक खरीता भी भेजा था, जिसमें उन्हें यह सूचना दी गई थी कि यदि [भारतीयोंकी] शिकायतोंको दूर नहीं किया गया तो [उचित] कार्रवाई की जायेगी। हमें पता नहीं कि इस सारे विचार-विमर्शका क्या नतीजा निकला। शिकायतें दूर करनेका तो कोई आश्वासन हमें नहीं दिया गया; उलटे हमारी स्थिति तबसे और ज्यादा विपन्न हो गई है। कारण, पूर्वोक्त कार्रवाइयाँ और सख्त कर दी गई हैं और उनपर लगभग निर्दयतासे अमल किया जा रहा है। हमारी जीविकाके साधनोंमें बराबर कमी की जा रही है और ब्रिटिश नागरिकताके बिल्कुल प्राथमिक अधिकारोंके उपभोगकी दृष्टिसे भी इस उपनिवेशमें हमारी हस्ती ही खतरेमें पड़ गई है।

इसलिए हम प्रार्थना करते हैं कि आप सपरिषद् ऐसी कार्रवाई करनेकी कृपा करें जिससे हमें नेटालके सत्ताधारियोंके अत्याचारपूर्ण और अन्यायपूर्ण व्यवहारसे राहत मिले। जरूरत हो तो इस उद्देश्यकी सिद्धिके लिए आप साम्राज्य-सरकारके हस्तक्षेपकी भी माँग करें।

परमश्रेष्ठके आज्ञाकारी सेवक,

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ऑफ़िस रेकर्ड्स: १७९/२५४

परिशिष्ट २२

क्रू और गांधीजीके नाम लॉर्ड ऍम्टहिलके पत्र

(१) गांधीजीके नाम लॉर्ड ऍम्टहिलका पत्र

निजी और गोपनीय

अगस्त ३१, १९०९

प्रिय श्री गांधी,

मुझे आपका कलका पत्र मिल गया है और मुझे हर हालतमें आपको आज सुबह पत्र लिख देना था।

आपने रायटरको दिये गये जिस वक्तव्यका जिक्र किया है, वह मैंने नहीं देखा है। लेकिन मैं अखबारोंमें देखूँगा और जरूरत होगी तो इस पत्रमें एक पंक्ति जोड़ दूँगा। तबतक मैं आपको वह बात तो लिख दूँ जो मुझे हर हालतमें आज सुबह लिख देनी थी।

कल सुबह मुझे जनरल स्मट्सका एक पत्र मिला था, जो उन्होंने अपनी रवानगीसे पहले जल्दीमें लिखा था। उन्होंने मुझसे फिर न मिल सकनेपर खेद प्रकट किया है और बहुत संक्षेपमें सूचित किया है कि उन्होंने लॉर्ड क्रू के सामने कुछ प्रस्ताव रखे हैं। मुझे मालूम हुआ है, प्रस्ताव ये हैं कि १९०७ का कानून २ मंसूख कर दिया जाये और हर साल एक सीमित संख्यामें शिक्षित भारतीय प्रवासियोंको स्थायी निवासके सर्टिफिकेट जारी किये जायें। लेकिन जो-कुछ उन्होंने कहा है उससे मुझे भय है कि वे "अधिकार" के प्रश्नपर हमारी बात न मानेंगे। कल मैं लन्दन गया था और मैंने लार्ड सभामें लॉर्ड क्रू से तुरन्त भेंटका समय माँग लिया। मैंने उनसे कहा कि वह वक्त आ गया है जब मैं उनसे वक्तव्य देनेके लिए कह सकता हूँ। लॉर्ड क्रू ने अभी वह पत्र नहीं पढ़ा था, जो उन्हें जनरल स्मट्सने लिखा है। इसलिए उन्होंने संसदमें वक्तव्य देनेमें आपत्ति की। उन्होंने इसका कारण यह बताया (और मेरा खयाल है, यह बिल्कुल ठीक ही है) कि जनरल स्मट्सको शायद दक्षिण आफ्रिका पहुँचकर जो घोषणा करनी पड़ेगी उसपर पहलेसे चर्चा करना ठीक न होगा। मैंने मान लिया कि यह बिल्कुल उचित है, लेकिन यह बताया कि आप उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहे हैं; आपका समय कीमती है और आपको इस देशमें प्रतीक्षामें रोक रखना ठीक नहीं होगा। तब लॉर्ड क्रू ने कहा कि वे आपको सूचित

करेंगे कि आप खुद उनसे या उनकी ओरसे उनके विभागके किसी सदस्यसे मिल लें। मैंने इस बातसे सहमति प्रकट की कि इससे ज्यादा कुछ नहीं किया जा सकता। तब हमने पूरे प्रश्नपर विचार किया और मैंने "अधिकार" के प्रश्नपर चर्चा की। लॉर्ड क्रू मेरे इस कथनसे प्रभावित हुए जान पड़े कि भारतीयोंको साम्राज्यके किसी भी भागमें जानेका अधिकार कमसे-कम सिद्धांत-रूपमें सदा ही प्राप्त रहा है और वह पहली बार ट्रान्सवालमें ही छीना गया है। आपको सन्तुष्ट करनेके लिए वे बहुत चिन्तित हैं और उनका साधारण रुख पहलेसे ज्यादा सहानुभूतिपूर्ण था। इसलिए अगर आप उनसे स्वयं मिलें तो आपके लिए अपनी स्थिति स्पष्ट करनेका बहुत अच्छा अवसर है। यह तय करना आपका काम है कि आप सैद्धान्तिक अधिकारके लिए अनाक्रामक प्रतिरोधको जारी रखनेके लिए बँधे हैं या नहीं। लेकिन मैं तो यह आशा करता हूँ कि आप इसके लिए बँधे हैं, ऐसा आपको न लगेगा; क्योंकि आपकी कौमकी खातिर मैं इस संघर्षकी समाप्तिके लिए चिन्तित हूँ। इसका दूसरा कारण यह भी है कि आप सम्मानकी खातिर अबतक काफी कर चुके हैं। १९०७ के कानून २ की मंसूखीसे आपको एक काफी ठोस चीज़ मिल जायेगी। आप यह बिलकुल स्पष्ट कर सकते हैं कि यद्यपि आपको इस अव्यावहारिक संघर्षको त्यागना उचित मालूम होता है, लेकिन फिर भी अधिकारके प्रश्नपर आपकी राय ज्यों-की-त्यों है।

मैं इस समय आपको इतनी ही सलाह दे सकता हूँ। लेकिन लॉर्ड क्रू या उनके प्रतिनिधिसे आपके मिल लेनेके बाद हमें फिर सलाह करनी होगी।

आशा है, आपने मेरी लिखी डोककी किताबकी भूमिका देख ली होगी। मेरा खयाल है कि उसमें यह बात लेख-रूपमें आ जाती है कि मैं "अधिकार" के प्रश्नपर आपसे बिलकुल सहमत हूँ।[1]

आपका विश्वस्त,
ऐम्टहिल

[अंग्रेजीसे]

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०३६) से।

(२) लॉर्ड क्रू के नाम लॉर्ड ऐम्टहिलका पत्र

अगस्त ३०, १९०९

प्रिय लॉर्ड क्रू,

मुझे अभी-अभी जनरल स्मट्सका एक रुक्का मिला है, जो उन्होंने अपनी रवानगीसे पहले जल्दीमें लिखा है। उसमें उन्होंने मुझे सूचित किया है कि उनका आपसे ब्रिटिश भारतीयोंके प्रश्नपर समझौता हो गया है। उन्होंने ठीक-ठीक यह नहीं बताया है कि क्या समझौता हुआ है; लेकिन मुझे पता चला है कि वह मेरे सुझाये हुए समझौतेसे बहुत कम पड़ता है।

क्या बुधवारको लार्ड सभामें वक्तव्य देना आपके लिए सुविधाजनक रहेगा?

अगर ऐसी बात हो तो क्या मैं बुधवारको ४-३० बजेसे पहले आपसे एक छोटा-सा प्रश्न पूछ सकता हूँ? इसका अर्थ यह है कि वह "निजी सूचनासे" तथा भाषण दिये बिना पूछा जाये।

अगर सार्वजनिक वक्तव्य देनेमें अभी असुविधा हो तो मैं आपपर दबाव डालना नहीं चाहता, लेकिन श्री गांधीको जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी जाने देना अच्छा होगा। मैं समझता हूँ कि वे बातचीतका परिणाम जाननेके लिए ही रुके हुए हैं।

हृदयसे आपका,
ऐम्टहिल

---

१. लॉर्ड ऐम्टहिलकी भूमिकाके लिए, जिसमें इस प्रश्नपर उनका रुख विस्तारसे दिया गया है, देखिए परिशिष्ट १८।

[लॉर्ड क्रू की टिप्पणी]

मैं लॉर्ड ऐम्टहिलसे मिल चुका हूँ और मैंने उन्हें बता दिया है कि इस समय प्रश्न क्यों नहीं पूछना चाहिए।

क्रू

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१४१

परिशिष्ट २३

गांधीजीके नाम लॉर्ड ऐम्टहिलका पत्र

निजी

सितम्बर ११, १९०९

प्रिय श्री गांधी,

मुझे भय है, आप यह पर्याप्त रूपसे स्पष्ट नहीं कर सके कि लॉर्ड मॉर्लेसे आप फिर क्यों मिलना चाहते हैं, नहीं तो आपको ऐसा अनुत्साहित करनेवाला उत्तर नहीं मिल सकता था।

स्पष्ट ही, आपने यह कहा कि आप अपनी स्थिति फिर बताना चाहते हैं। अगर ऐसी बात है तो लॉर्ड मॉर्लेको ज्यादा वक्त देनेके लिए राजी करनेका यह तरीका नहीं था। मेरा खयाल है, आपको "अधिकार" के प्रश्नको नई घटनाओं और भारतके आन्दोलनके प्रकाशमें स्पष्ट करना था, जिससे लॉर्ड मॉर्ले यह देख सकते कि आपको कोई नई बात कहनी है और आप स्थितिपर नया प्रकाश डाल सकते हैं। मेरा खयाल है कि आप अब भी उन्हें एक पत्र लिखेंगे तो ठीक होगा। आप इस पत्रमें उन्हें बतायें कि आपने जनरल स्मट्सके प्रस्तावोंको किन कारणोंसे नहीं माना है। इससे आपके ये कारण पहलेसे ही लिखित रूपमें आ जायेंगे, अन्यथा आपपर यह दोष फिर लगाया जायेगा कि आप एक रियायत मिलनेपर नई माँग रख देते हैं। लॉर्ड मॉर्ले इस प्रश्नको नहीं समझते। इसलिए आपको लिखित रूपमें एक साफ और सीधा-सादा स्पष्टीकरण देनेकी बातकी उपेक्षा न करनी चाहिए। आप बादमें इसका उल्लेख कर सकेंगे और इसे अपने मामलेके निश्चित विवरणके रूपमें बता सकेंगे। क्या आप ऐसे पत्रका मसविदा बनाकर भेजनेसे पहिले ही मुझे दिखा सकते हैं?

अवश्य ही लॉर्ड क्रू लन्दनसे बाहर गये होंगे, अन्यथा आपके पत्रका उत्तर निश्चय ही मिल गया होता। आशा है, इस पत्रके मिलनेके पहले वह आपको मिल जायेगा।

आपका विश्वस्त,
ऐम्टहिल

श्री मो० क० गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०६५) से।

परिशिष्ट २४

लॉर्ड क्रूकी टिप्पणी

[लन्दन,]

श्री गांधी और श्री हबीब आज मुझसे मिलने आये। मैंने उन्हें श्री स्मट्ससे हुई अपनी बातचीतका परिणाम बताया। मैंने उन्हें बताया कि वे दो रियायतें देना चाहते हैं: (क) १९०७के कानून २ की मंसूखी और (ख) हर साल छः पढ़े-लिखे एशियाइयोंका स्थायी निवासीके रूपमें प्रवेश। श्री गांधीने माना कि इन परिवर्तनोंका अर्थ वास्तवमें एक कदम आगे बढ़ आना है, और उन्होंने कहा कि जहाँतक उनके व्यावहारिक प्रभावका सम्बन्ध है, वे उन्हें मंजूर करनेके लिए तैयार हैं। लेकिन उन्होंने और उनके साथीने जो रुख अपनाया है और जिसके लिए भारी कष्ट सहे जा चुके हैं उसको त्यागना सम्भव नहीं है — वह रुख है, कानूनकी निगाहमें समानताका, फिर चाहे वह समानता सैद्धान्तिक ही क्यों न हो। इसलिए वे उन रियायतोंके मिलनेपर भी इस समानताका आन्दोलन बन्द न करेंगे। उन्होंने यह भी कहा कि श्री स्मट्सको भेजे गये लॉर्ड ऍम्टहिल्के १० अगस्त, १९०९ के पत्रमें और उसके सहपत्रमें जो योजना दी गई है वह मंजूर कर ली जायेगी, यद्यपि उसे कुछ लोगोंने, जैसे श्री गोखलेने, अनिच्छापूर्वक ही स्वीकार किया है। मैंने कहा कि प्रस्तावित प्रवेशके स्वरूपकी अवास्तविकताको नापसन्द करनेके अलावा ट्रान्सवाल्के मन्त्री इस प्रस्तावको जिस एक कारणसे नामंजूर भी कर सकते हैं वह है यह सम्भावना कि अगर प्रवेश-निषेध केवल अमली कार्रवाईका विषय रहा तो छः की संख्यामें वृद्धिके लिए सदा आन्दोलन किया जाता रहेगा। श्री गांधीने कहा कि इस संख्यामें वृद्धि कर पाना कठिन बना दिया जाये, उन्हें इसकी कोई परवाह नहीं, केवल सिद्धान्तमें समानता कायम रहनी चाहिए। असलमें अगर छः भारतीयोंको आने दिया जाये तो भारतीय यद्यपि दूसरे मामलोंमें सुधार करानेके लिए हलचल करेंगे, लेकिन प्रश्नका यह पक्ष अन्तिम रूपसे तय माना जायेगा। इसपर मैंने पूछा कि मान लीजिए ट्रान्सवाल्के मन्त्रियोंने जो-कुछ देनेके लिए कहा है, वे उससे आगे नहीं बढ़ते तो भारतीय इस प्रश्नको संघ बननेतक स्थगित करना पसन्द करेंगे या नहीं। श्री गांधीने कहा, कानूनको जैसा मैंने समझा है, उसमें एशियाइयोंका ट्रान्सवालमें प्रवेश सामान्य प्रवासी कानूनसे निषिद्ध किया गया है, भेदभावकारी व्यवहारसे नहीं, इसलिए वे इस मामलेमें संघके अन्तर्गत नहीं आते। मैंने बताया कि संघ द्वारा कोई ऐसा सामान्य प्रवासी कानून बनानेके मार्गमें कोई रुकावट नहीं है, जिसके अन्तर्गत वस्तुतः प्रवेश निषिद्ध हो, लेकिन राजनयिकोंका रुझान हो तो सैद्धान्तिक समानता भी कायम रहे। श्री गांधीने कहा कि इस बीच आन्दोलन महीनों चलता रहेगा।

श्री गांधीने बातचीत खत्म करते हुए कहा कि मैं ट्रान्सवाल्की सरकारको तार दे दूँ कि वे श्री स्मट्सके सुझावोंमें निहित व्यावहारिक प्रगतिको मंजूर करते हैं, लेकिन सैद्धान्तिक समानताका अब वे भी आग्रह रखेंगे।

मेरे मनपर यह प्रभाव पड़ा है कि इसके बावजूद ट्रान्सवाल सरकार दोनों रियायतें दे देगी तो ठीक होगा, क्योंकि इससे सब व्यावहारिक कठिनाइयाँ दूर हो जायेंगी और जनताके खासे बड़े हिस्सेकी राय सरकारके सम्बन्धमें ठीक हो जायेगी।

इसके अनुसार एक तारका मजमून लिख लिया जाये, जिसमें श्री गांधीके वक्तव्यका सार हो। उसमें इसके ऊपरके अन्तिम अनुच्छेदका सार भी जोड़ दिया जाये।

क्रू

१६ सितम्बर

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: २९१/४१

परिशिष्ट २५

गांधीजीके नाम लॉर्ड ऍम्टहिलका पत्र

सितम्बर १७, १९०९

प्रिय श्री गांधी,

आपके कलके पत्रसे, जो मुझे अभी-अभी मिला है, मुझमें नई आशा और नये उत्साहका संचार हुआ है। सरकारका सारा ध्यान इस समय अपने दलके नाजुक भविष्यमें लगा हुआ था, जिससे हमारा मामला खटाईमें पड़ गया था और मैं उसके विषयमें निराश हो चला था। यह सचमुच बड़े संतोषकी बात है कि लॉर्ड क्रू ने जनरल स्मट्सको, हमारा संशोधन मंजूर करनेका आग्रह करते हुए, तार करनेका वादा कर दिया। मैं सर जॉर्ज फेरारसे पत्र-व्यवहार करता रहा हूँ और मैंने स्कॉटलैंडसे लौटनेपर उनसे भेंट करनेकी व्यवस्था कर ली है। इससे आप समझ सकेंगे कि मैंने विरोधका मुकाबला करनेकी जरूरतको नजरअन्दाज नहीं किया है। अब यदि इस समय आप लॉर्ड मॉर्लेसे भेंट कर सकें और लॉर्ड क्रू की तरह यदि आप उनकी सहानुभूति भी प्राप्त कर सकें तो मैं मानता हूँ कि आप सारे सम्भव प्रयत्न कर चुकेंगे और इस देश से विदा होते हुए यह खयाल लेकर जा सकेंगे कि आपने ऐसा कोई उपाय बाकी नहीं छोड़ा है, जिससे किसी लाभकी उम्मीद की जा सकती थी। यदि आप जल्दी ही चले जानेवाले हैं तो मुझे डर है कि मैं आपसे दुबारा मिलनेका मौका न पा सकूँगा। मुझे इस बातका बड़ा अफसोस है। लेकिन काफी समयके बाद अब अन्तमें मुझे कामसे एक अल्पकालिक छुट्टी लेनी पड़ रही है — यह छुट्टी इसी समय सम्भव है — और मैं कल एक पखवारेके लिए स्कॉटलैंड जा रहा हूँ। वहाँ मैं एक तरहसे पहुँचके बाहर हो जाऊँगा, इसलिए यदि आपके पत्रोंका जवाब देनेमें देरी हो तो आपको आश्चर्य न होना चाहिए।

मैं आपको और श्री हाजी हबीबको अपनी सम्पूर्ण शुभकामनाओंके साथ विदाईका नमस्कार करता हूँ और आशा करता हूँ कि हमारा अगला मिलन एक सम्मानजनक और उल्लेखनीय सफलतापर आनन्द मनानेके लिए ही होगा।

आपका विश्वस्त
ऍम्टहिल

श्री मो० क० गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५०८१) से।

परिशिष्ट २६

उपनिवेश-उपमन्त्रीके नाम एम० सी० आंगलियाका पत्र

वेस्टमिन्स्टर पैलेस होटल
४, विक्टोरिया स्ट्रीट
[लन्दन] एस० डब्ल्यू०
सितम्बर २०, १९०९

सेवामें
उपनिवेश — उपमन्त्री
कलोनियल ऑफ़िस [लन्दन,]
एस० डब्ल्यू०
महोदय,

आपके इसी महीनेकी १३ तारीखके पत्रकी प्राप्ति सधन्यवाद स्वीकार करनेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। जो आपने नेटालके उस भारतीय शिष्टमण्डलके जवाबमें लिखा है जो हाल ही में लॉर्ड क्रू और बादमें कर्नल सीलीसे मिला था।

अपने साथियोंकी तथा अपनी ओरसे मैं इस जवाबके आशयके प्रति खेद तथा निराशा व्यक्त करता हूँ। लॉर्ड क्रू ने जो सहानुभूति व्यक्त की है, उसका हम पूरी तरह सम्मान करते हैं और उसके लिए आभारी हैं। परन्तु लॉर्ड महोदयकी तरफ़से किसी भी ऐसे आश्वासनका न मिलना हमें खटकता है कि मौजूदा तकलीफोंके बारेमें सीधे उपनिवेश सरकारसे आगे भी सद्भावनापूर्ण एवं दृढ़ शब्दोंमें अनुरोध किया जायेगा। क्या हम फिर एक बार याद दिला दें कि ये तकलीफें फिलहाल समाजपर बहुत बुरा असर डाल रही हैं और वे ऐसी नहीं हैं कि उनको दूर करनेमें देर करनेकी गुंजाइश हो। व्यापारी समाज डरता और काँपता हुआ अगले वर्षकी प्रतीक्षा कर रहा है, क्योंकि वही समय है जब कि परवाना अधिकारी (लाइसेंसिंग ऑफ़िसर्स) भारतीय परवानोंपर जोर-शोरसे कतरनी चलायेंगे। ऐसा भय उन भारतीयोंको भी है जिन्हें अपने लिए, अपनी पत्नियों तथा बालिग बच्चोंके लिए ३ पौंडका सालाना कर चुकाना होगा, जब कि भारतीय बच्चोंकी शिक्षाकी बुरी तरहसे उपेक्षा हो रही है।

शायद यह नहीं महसूस किया गया कि परवाना कानून (लाइसेन्सिंग लॉ) सबपर लागू होता है, इसलिए वह साउथ आफ्रिका बिलमें कराये गये उस संशोधनके दायरेमें नहीं आता जो महामहिमकी सरकारकी इच्छासे हुआ था और जिसके द्वारा एशियाइयोंपर खास तौरसे तथा भेदभावकारी प्रभाव डालनेवाले मामलोंका नियन्त्रण तथा प्रशासन संघ-सरकारको सौंप दिया गया है। परवाना कानून जातिका विचार किये बगैर सबपर लागू होता है। शिष्टमण्डलकी रायमें वर्तमान नेटाल संसद इसमें संशोधन कर सकती है और जब नेटाल संसद एक प्रान्तीय विधानसभामें परिवर्तित हो जायेगी, तब वैसा होगा भी।

शिष्टमण्डलने सविनय निवेदन किया था कि यदि नेटालके भारतीयोंकी गम्भीर तकलीफें दूर नहीं कर दी जातीं, तो गिरमिटिया मजदूरोंका नेटालमें आना बन्द कर दिया जाये। शिष्टमण्डल खेदके साथ देखता है कि इस नम्र निवेदनका उसे कोई जवाब नहीं मिला।

अतएव, शिष्टमण्डल नेटालके भारतीयोंके मामलेकी निराशापूर्ण अवस्थाकी तरफ लॉर्ड क्रू का ध्यान सादर आकर्षित करनेका साहस कर रहा है और लॉर्ड महोदयसे प्रार्थना करता है कि वे नेटाल सरकारपर राहत देनेकी जरूरीके बारेमें जोर डालें।

[अंग्रेजीसे]

आपका अत्यन्त आज्ञाकारी सेवक,
एम० सी० आंगलिया

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: १६९/२५५।

परिशिष्ट २७

गांधीजीके नाम टॉल्स्टॉयका पत्र

यास्नाया पोल्याना
अक्तूबर ७, १९०९

मो० क० गांधी
ट्रान्सवाल

मुझे अभी-अभी आपका अत्यन्त दिलचस्प पत्र मिला। उससे मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। भगवान हमारे ट्रान्सवालके भाइयों तथा सहयोगियोंकी मदद करें।

कठोरतासे कोमलताका, दर्प तथा हिंसासे विनम्रता व प्रेमका ठीक वही संघर्ष यहाँ हमारे बीच भी प्रतिवर्ष अधिकाधिक जोर पकड़ता जा रहा है। यह जोर धार्मिक आदेश और दुनियवी कानूनोंमें चलनेवाले एक तीव्रतम विरोधके रूपमें, अर्थात् सैनिक सेवासे इनकार करनेके रूपमें, खास तौरसे दिखलाई पड़ता है। सैनिक सेवासे इनकार करनेकी घटनाओंकी संख्या रोज बढ़ती जा रही है।

"एक हिन्दूके नाम पत्र" मैंने लिखा था, और उसका अनुवाद बहुत ही सुन्दर है। कृष्ण-सम्बन्धी पुस्तकका नाम आपको मास्कोसे भेज दिया जायेगा। जहाँतक "पुनर्जन्म" शब्दकी बात है, मैं खुद उसे छोड़ना नहीं चाहूँगा; क्योंकि, मेरी रायमें, पुनर्जन्ममें विश्वास कभी भी उतना दृढ़ नहीं हो सकता जितना कि आत्माकी अमरता तथा ईश्वरके न्याय व प्रेममें। फिर भी आप उस शब्दको छोड़नेके बारेमें जैसा चाहें कर लें। यदि मैं आपके प्रकाशन-कार्यमें मदद कर सकूँ तो मुझे बहुत खुशी होगी। मेरे पत्रके हिन्दू भाषामें अनुवाद तथा प्रचारसे मुझे प्रसन्नता ही होगी।

मेरा खयाल है, कोई प्रतियोगिता, अर्थात् एक धार्मिक विषयके सम्बन्धमें किसी प्रकारका आर्थिक प्रलोभन देना, उचित नहीं होगा।

मैं भ्रातृ-भावसे आपका अभिनन्दन करता हूँ और आपके साथ पत्र-व्यवहार होनेकी मुझे खुशी है।

लिओ टॉल्स्टॉय

टॉल्स्टॉयके हस्ताक्षरयुक्त हस्तलिखित मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१५२ 'बी०') से।

परिशिष्ट २८

गांधीजीके नाम लार्ड ऍम्टहिलका पत्र

अक्तूबर ४, १९०९

प्रिय श्री गांधी,

आपके क्रमशः २१ तथा २२ सितम्बरके दोनों पत्रोंके लिए धन्यवाद। वे मुझे ठीक समयपर, जब मैं स्कॉटलैंडके पर्वतोंको पैदल पार कर रहा था, मिल गये थे। पहले पत्रमें आपने लॉर्ड मॉर्लेसे प्राप्त जवाबकी नकल भेजनेकी कृपाकी है। मैं मानता हूँ कि यह बात बहुत सन्तोषजनक है कि आपने लॉर्ड मॉर्लेसे यह कहलवा लिया कि तात्विक तथा सामान्य कारणोंसे उनकी सहानुभूति आपके साथ है। यह कथन ऐसा है जो आपके लिए आगे मूल्यवान साबित होगा और मेरी सलाह है कि इसका विशेष ध्यान रखें।

दूसरे पत्रमें आपने उस प्रश्नका उल्लेख किया है जो मैंने लार्ड सभाके सूचना-पत्रमें दर्ज करा रखा है। यह कोई नया प्रश्न नहीं; यह वही प्रश्न है जिसकी सूचना मैंने आपके इस देशमें आते ही दे दी थी और जिसे किसी भी आपत्कालीन स्थितिके लिए तैयार रहने तथा सरकारको यह याद दिलानेके लिए कि उक्त सवाल किसी भी समय उठाया जा सकता है, मैंने उक्त सूचना-पत्रपर रख छोड़ा है। आप जानते ही हैं, मैं कई बार लॉर्ड क्रू से पूछ चुका हूँ कि वे अभी इसका उत्तर देनेकी स्थितिमें हैं या नहीं।

अब मैं उत्सुकतासे यह जाननेकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ कि आपके पास मेरे लिए कुछ नई खबर है या नहीं।

आपका विश्वस्त,
ऍम्टहिल

श्री मो० क० गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१०९) से।

परिशिष्ट २९

लन्दनमें गुजरातियोंकी सभा

'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित रिपोर्टका अंश

काठियावाड़के राजकोट शहरमें होनेवाली तीसरी गुजराती साहित्य-परिषद्के लिए प्रोत्साहनकी माँग करते हुए परिषद्के मन्त्री श्री बलवन्तराय ठाकुरकी ओरसे बैरिस्टर श्री जेठालाल परीख तथा दूसरे गुजरातियोंके नाम पत्र आया था। तदनुसार वेस्टमिन्स्टर पैलेस होटलमें सर मंचरजी भावनगरीकी अध्यक्षतामें अक्तूबर ५ को गुजरातियोंकी एक सभा हुई।

अध्यक्षका आसन ग्रहण करनेके लिए अपना नाम सूचित किया जानेपर सर मंचरजी भावनगरीने अपने भाषणमें कहा: "...मैं जब छोटी उम्रका था तब मुझे गुजराती भाषाका शौक था। मैंने महारानी विक्टोरियाके यात्रा-वृत्तान्तका गुजरातीमें भाषान्तर किया था।...यह इस बातका प्रमाण है कि मुझे थोड़ी-बहुत गुजराती आती है। इसलिए मैंने अध्यक्षका स्थान ग्रहण करना स्वीकार किया।"

कुछ वर्ष हुए, गुजराती साहित्य परिषद् नामकी संस्था कायम हुई थी और वह तबसे काम करती आ रही है। हर साल उसकी बैठक होती है। इस संस्थाके काममें राजनीतिको कोई स्थान नहीं है। उसका मुख्य उद्देश्य

गुजराती भाषाकी रक्षा और उसका विकास है। यदि कोई पूछे कि ऐसा करनेका कारण क्या है तो उसका उत्तर यह है कि भारतकी भाषाएँ कुछ विपत्तिमें पड़ गई हैं — सो इसलिए नहीं कि उनपर दुश्मनने आक्रमण किया है; उसका कारण यह है कि आजकल अपनी भाषाओं और दूसरी देशी वस्तुओंके प्रति उपेक्षाका भाव देखा जाता है। सब लोग अंग्रेजी पढ़ने लगे हैं। यह तो ठीक है। जिस भाषामें शासनका कार्य चलता है, जिस भाषामें व्यापार चलता है उसे सीखनेका लोगोंमें उत्साह होता है और होना चाहिए। किन्तु इसीलिए कोई अपनी भाषा छोड़ दे, यह ठीक नहीं है। हम लोगोंमें से कई फ्रेंच, जर्मन आदि सीखते हैं। तब हम अपनी कुदरती भाषा कैसे छोड़ सकते हैं? उस भाषाकी हँसी करना किसी भी तरह उचित नहीं कहा जा सकता। फिर भी कोई इस बातसे इनकार नहीं कर सकता कि भारतमें [अपनी भाषाओंकी] ऐसी उपेक्षा हो रही है। मुझे याद है कि जब मैं बालक था उस समय कुछ युवक अपने घरोंमें भी गुजराती भाषा नहीं बोलते थे। मैं उनमें से कुछके नाम दे सकता हूँ। कुछ तो अंग्रेजोंकी नकल इस हद तक करते थे कि धायाएँ भी उत्तर भारतकी रखते थे जिससे बच्चे जरूरत पड़नेपर [कोई भारतीय भाषा बोलें भी तो] अंग्रेजोंकी तरह केवल हिन्दुस्तानी ही बोलें। यह सब अधूरी शिक्षाके कारण होता था। अब ऐसे उदाहरण कम देखनेमें आते हैं। मैं कई वर्षोंसे यहीं (इंग्लैंडमें) रह रहा हूँ। फिर भी अपनी भाषा बोलनेका अभ्यास मैंने छोड़ा नहीं है। मुझे कोई गुजरातीमें पत्र लिखे तो उसका उत्तर मैं गुजरातीमें ही देता हूँ।... 'रिसेप्शन कमिटी' शब्दका प्रयोग करते हुए मेरे मनमें यह विचार आया कि उसके लिए हमारे पास गुजराती शब्द होना चाहिए। किन्तु परिषद्के विधानका जो मसविदा हमारे पास आया है उसमें उन्होंने भी अंग्रेजी शब्दका प्रयोग किया है, इसलिए मैं भी उसीका उपयोग कर रहा हूँ। इससे प्रकट होता है कि अपनी भाषापर हमारा अधिकार नहीं रह गया है।"

पहला प्रस्ताव

श्री मोहनदास करमचन्द गांधीने निम्नलिखित प्रस्ताव पेश किया?[1]

प्रस्तावका समर्थन करते हुए श्री नसरवानजीने कहा:

"प्रस्तावका मैं सहर्ष समर्थन करता हूँ। पहला गुजराती पत्र निकालनेवाला पारसी था। 'ज्ञानप्रकाश' पत्र एक पारसीने ही निकाला था। 'स्त्री-बोध'का आरम्भ करनेवाले श्री काबराजी पारसी थे। एक पारसी लेखकने ही हास्यरसके लेख लिखना शुरू किया था। 'कौतुक-संग्रह' भी एक पारसीने ही निकाला था। अनेक अंग्रेजी पुस्तकोंका अनुवाद भी पारसियोंने किया है। गुजराती व्याकरणके रचयिता श्री मंचरशा पारसी थे। पहला शब्दकोश भी एक पारसीने तैयार किया। गुजराती नाटक भी पारसियोंने शुरू किये। इस तरह हमारी भाषाको पारसियोंकी ओरसे बहुत अच्छा उत्तेजन मिला है, किन्तु खेदकी बात है कि आजकल वे उसके लिए उतना प्रयत्न नहीं करते।"

दूसरा प्रस्ताव

श्री ईदुलजी खोरीने दूसरा प्रस्ताव पेश किया:

"भारतकी विविध भाषाओंकी प्रगतिके लिए जो प्रयत्न किये जा रहे हैं, यह सभा उनका अभिनन्दन करती है और विश्वास करती है कि समस्त भारतका कल्याण ऐसे प्रयत्नोंपर ही आधारित है।"

प्रस्तावका विवेचन करते हुए श्री खोरीने, जो अपनी युवावस्थासे ही गुजराती लेखकके रूपमें प्रख्यात हैं, कहा: "सच पूछो तो पारसियोंकी भाषा गुजराती है।... गाँवोंमें रहनेवाले पारसी शहरके पारसियोंकी अपेक्षा ज्यादा अच्छी गुजराती बोलते हैं। पारसियोंका लेखन रसपूर्ण है, किन्तु वे हिन्दुओंकी तरह शुद्ध भाषा नहीं लिखते। ... इससे मैं इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि हम गुजराती भाषाका विकास कर सकते हैं। माणेकबाई पारसी हैं, फिर भी अपनी जो रचना उन्होंने पढ़कर सुनाई वह बहुत प्रांजल थी...।"

१. प्रस्तावके पाठ और गांधीजीके भाषणके लिए, जो इसके बाद आते हैं, देखिए पृष्ठ ४५६-५९।

इस प्रस्तावपर भावनगरके श्री जोरावरसिंहजी, नागपुरके श्री खापरडे, दक्षिण आफ्रिकाके श्री हाजी हबीब और श्री आंगलिया भी बोले।

श्री हाजी हबीबने कहा: "हमारी मातृभाषाकी रक्षाके ये प्रयत्न स्वागत-योग्य हैं। . . ."

श्री आंगलियाने कहा: "मुझे इस बातका अभिमान है कि मेरा जन्म गुजरातमें हुआ। . . ."

तीसरा प्रस्ताव

डॉ० घडियालीने तीसरा प्रस्ताव पेश किया:

"यदि गुजराती भाषाके विकासके लिए ऐसी संस्था स्थापित की जाये जिसका हरएक काम गुजरातीमें चले तो यहाँ उपस्थित गुजराती उसमें खुशीसे शामिल होंगे।" तीन व्यक्तियोंने इस प्रस्तावका विरोध किया इसलिए वह बहुमतसे पास हुआ।

अन्तमें श्री परीखने अध्यक्षका आभार माना, जिसके बाद ६-३० बजे सभा समाप्त हुई।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-११-१९०९ और १३-११-१९०९

परिशिष्ट ३०

'साउथ आफ्रिका' में प्रकाशित समाचार

भारतीयोंकी एक और मनगढ़न्त कहानीका भेद खुल गया। कुछ सप्ताह पहले दक्षिण आफ्रिकाके इस भागसे तार दे-देकर लन्दनके लोगोंके गले यह बात उतारी जा रही थी कि एक गरीब भारतीय युवक उपनिवेशके सामान्य कानूनको जान-बूझकर तोड़नेके जुर्ममें थोड़े दिनकी कैदकी सजा भोगता हुआ दुर्व्यवहारके कारण मारा गया है। ब्रिटिश जनताके भोले-भाले वर्गपर इस कहानीका कुछ भी असर हुआ हो, ऐसे वक्तव्योंके सम्बन्धमें सरकारी जाँच हुए बिना नहीं रह सकती थी। नागप्पन जेलसे छूटनेके थोड़े दिन बाद मर गया। उसके प्रति व्यवहारके सम्बन्धमें परिस्थितियोंकी जाँचके लिए मजिस्ट्रेट मेजर डिक्सन नियुक्त किये गये थे। उन्होंने अपनी रिपोर्टमें कहा है कि नागप्पनको एक चिकित्सा-अधिकारीने स्वस्थ बताया था। यह साफ नहीं मालूम हो सका है कि जेलमें उक्त मृत व्यक्तिके पास दो कम्बल थे या नहीं। और यह राय किसी भी बातसे ठीक सिद्ध नहीं होती कि टाट-पट्टियोंपर सोनेका हानिकारक प्रभाव हुआ होगा। यद्यपि चावल नहीं दिया जाता था, फिर भी पानी काफी दिया जाता था। मेजर डिक्सनने अभियुक्तपर हमला किया जानेका, और चूँकि वह शिविर-जेलसे स्पष्टतः स्वस्थ निकला था इसलिए वहाँ उसके बीमार होनेका आरोप भी बेबुनियाद पाया है। वे मानते हैं कि भारतीय गवाहोंके आरोपोंका पूरी तरह खण्डन हो गया है। उक्त व्यक्तिको शेष सजाके अनुपातमें जुर्माना देकर किसी भी वक्त जेलसे चले जानेका अधिकार था। जेलकी स्थितियोंकी जाँच कमिश्नरने की है। उन्होंने दो-तीन छोटे-छोटे सुधार सुझाये हैं। लेकिन उनका इस मामलेसे कोई सम्बन्ध नहीं है। एशियाइयोंके इस शोरगुल और इस मनगढ़न्त कहानीकी जाँचके नतीजेसे यह सिद्ध हुआ है कि उनका साथी अपना पुराने ढंगका जीवन आरम्भ करनेके समयकी अपेक्षा जेलमें और जेलसे छूटनेपर ज्यादा स्वस्थ था।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१०-१९०९

परिशिष्ट ३१

उपनिवेश कार्यालय और ऍम्टहिलकी ओरसे पत्र

(१) गांधीजीके नाम उपनिवेश कार्यालयका पत्र

डाउनिंग स्ट्रीट
नवम्बर ३, १९०९

महोदय,

लॉर्ड क्रू के निर्देशानुसार मैं आपके पिछले माहकी तारीख १९ के पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करता हूँ। आपका यह पत्र उन प्रस्तावोंके बारेमें है जिनका उल्लेख इस विभागके पिछले माहकी तारीख ४ के पत्रमें ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंके सवालपर चल रहे विवादसे सम्बन्धित कानूनके सम्भाव्य आधारके रूपमें हुआ था।

मुझे आपको यह सूचित करनेके लिए कहा गया है कि ये प्रस्ताव वही हैं जो लॉर्ड महोदयने आपके सामने १६ सितम्बरको यह जताकर रखे थे कि वे श्री स्मट्सकी ओरसे आये हैं। प्रस्ताव ये थे: सन् १९०७ का अधिनियम २ रद कर दिया जायेगा; और प्रतिवर्ष ६ शिक्षित भारतीयोंको निवासके स्थायी अधिकारके प्रमाण-पत्रके आधारपर उपनिवेशमें प्रवेश दिया जायेगा। आपकी भी राय यह थी कि ये प्रस्ताव प्रगतिकी दिशामें उठाये गये ठोस कदम हैं और व्यावहारिक परिणामोंकी दृष्टिसे वे मौजूदा कठिनाईका हल पेश कर सकेंगे। इन प्रस्तावोंका आपके द्वारा पेश किये गये प्रस्तावोंसे कोई सम्बन्ध नहीं है; यह उनसे भिन्न हैं। आपके प्रस्तावोंमें प्रवेशके सैद्धान्तिक अधिकारका दावा अन्तर्निहित है; उसे स्वीकार करा सकनेके आश्वासन देनेमें लॉर्ड महोदय असमर्थ हैं। १६ सितम्बरकी भेंटमें लॉर्ड महोदयने आपको समझाया ही था कि श्री स्मट्स यह दावा स्वीकार नहीं कर सकते कि एशियाइयोंको प्रवेशाधिकारके सम्बन्धमें या अन्यथा यूरोपीयोंके साथ समान दर्जा दिया जाये। इसलिए लॉर्ड महोदय आपकी इस बातको नहीं मान सकते कि उक्त भेंटमें उन्होंने श्री स्मट्सकी स्वीकृतिके लिए उनके सामने आपका प्रस्ताव रखनेका वादा किया था। लॉर्ड महोदयने आपकी बातचीतसे इतना ही समझा था कि आपकी इच्छा है कि वे ट्रान्सवालकी सरकारको तार द्वारा यह सूचित कर दें कि यद्यपि आप यह स्वीकार करते हैं कि श्री स्मट्सके ये सुझाव [अभीष्ट दिशामें व्यावहारिक] प्रगतिके सूचक हैं तथापि आप सैद्धान्तिक समानताकी अपनी माँग छोड़नेके लिए तैयार नहीं हैं। लॉर्ड महोदयने उक्त आशयका तार कर दिया है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
फ्रांसिस जी० एस० हॉपवूड

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१५७) से।

(२) गांधीजीके नाम लॉर्ड ऍम्टहिलका पत्र

गोपनीय

४२, फैटन स्क्वेयर, एस० डब्ल्यू०
नवम्बर ५, १९०९

प्रिय श्री गांधी,

आपके इसी ४ तारीखके पत्रमें लिखी बातोंसे मुझे बहुत सदमा पहुँचा है। उपनिवेश कार्यालयके पत्रसे प्रकट होता है कि आपने लॉर्ड क्रू के साथ अपनी भेंटसे जो खयाल बनाया वह बिल्कुल गलत था, या लॉर्ड क्रू ने आपसे जो-कुछ कहा उसके बारेमें उनकी याददाश्त कसूरवार है।

अगर पहली बात ठीक हो तो बहुत-सा वक्त फिजूल बरबाद हो गया है; अगर दूसरी बात हो तो उसका कोई इलाज ही नहीं है, क्योंकि इसमें सवाल आपकी बातके मुकाबले लॉर्ड क्रू की बातका है। इन स्थितियोंमें आप जो जवाब देना चाहते हैं उसे भेजनेमें मुझे कोई आपत्ति नहीं दिखाई देती। वह शोभास्पद और संयत तो है ही। अगर आपकी स्थितिमें मैं होता और अपनी बातका मुझे निश्चय होता तो मैं खुद इससे ज्यादा कहता।

अगर हो सकेगा तो हम सोमवारको इस मामलेमें बातचीत करेंगे।

आपका विश्वस्त,
ऍम्टहिल

हस्तलिखित मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ५१६३) से।

परिशिष्ट ३२

उपनिवेश कार्यालयकी टिप्पणी

[लन्दन
नवम्बर १५ १६, १९०९]

इसमें नई बात कम, या कुछ भी नहीं है। यह साररूपमें वही है जिसे श्री गांधी हर जगह (जैसे, १३ नवम्बरको वेस्टमिंस्टर पैलेस होटलकी बैठकमें) कहते आ रहे हैं और जो संक्षेपमें उनके इस कथनमें आ गई है कि ब्रिटिश भारतीय प्रवेशके मामलेमें समानता चाहते हैं, भले ही कभी एक भी आदमी प्रवेश न करे। (सी० एफ० ३६६३१)

यह एक जोरदार मामला है और भलीभाँति पेश किया गया है। इसलिए जब संघ सरकारका संगठन अच्छी तरह हो जायेगा तब, मेरा खयाल है, हमें नेटाल और आस्ट्रेलियाके कानूनके आधारपर एक प्रवासी कानून बनवानेका प्रयत्न करना होगा। समय आनेसे पहले गवर्नर जनरलको इसके अनुसार निर्देश दे दिया जाना चाहिए। लेकिन फिलहाल हमें ट्रान्सवाल सरकार जो रियायतें देती है, उन्हें ले लेना चाहिए। (३६६३१ के तारका उत्तर अभी नहीं मिला है)।

लॉर्ड क्रू कल दोपहरसे पहले इसे देख लें।

ह० एच० एल०

हमें ट्रान्सवाल सरकारका उत्तर अभीतक नहीं मिला है, लेकिन कलकी बहससे पहले आ जानेकी आशा है मुझे मालूम हुआ है कि लॉर्ड ऍम्टहिल केवल बातचीतके प्रश्नको उठाना चाहते हैं।

ह०

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१४१

परिशिष्ट ३३

उपनिवेश कार्यालयकी टिप्पणी

[लन्दन,
नवम्बर ९, १९०९]

देखिए आजका 'टाइम्स', पृष्ठ ५, शीर्षक "वार्ता विफल"[1] — हमें ट्रान्सवालसे मालूम करना चाहिए कि उनका क्या करनेका इरादा है। मैं मसविदा विचारार्थ प्रस्तुत करता हूँ।

यह सचमुच ही बहुत सख्त पत्र है। यदि श्री गांधीका आशय वही है जो वे कहते हैं— अर्थात् यह कि भारतमें होमरूल्का कोई औचित्य नहीं है— तो वे ठीक इन्हीं शब्दोंमें तो नहीं, पर घुमाकर लगभग यही बात कहते हैं। कानूनके सम्मुख समानता प्राप्त करनेमें उनके दावेके औचित्यसे हम इनकार नहीं कर सकते। वस्तुतः यह तो एक बुनियादी सिद्धान्त है। जिसके विषयमें हमें कोई शंका नहीं है, ऐसे उस सिद्धान्तको मान्य करानेके लिए बस जोर डालनेसे हम इनकार करते हैं, क्योंकि इस समस्याका हल जिन लोगोंके हाथमें है उनपर अपनी राय थोपनेका हमें कोई अधिकार नहीं है। जब किसी उपनिवेशको उत्तरदायी शासन सौंपा जाता है, तब ऐसे प्रश्नोंके निर्णयका अधिकार भी अनिवार्यतः उपनिवेशकी सरकार और संसदके हाथोंमें चला जाता है, और यद्यपि ट्रान्सवाल सरकारने तफसीलके मामलेमें हमारी बात स्वीकार करनेकी तत्परता प्रकट की है, तथापि सिद्धान्तके प्रश्नपर उन्होंने जैसा आग्रह दिखाया है (जिसका कारण निस्सन्देह गोरों और रंगदार लोगोंमें समानताके प्रति डच लोगोंकी प्रसिद्ध घृणाके कारण है) वह ठीक भारतीयोंके आग्रह-जितना ही है। यदि वे हमारा सिद्धान्त स्वीकार नहीं करते, तो साम्राज्यकी वर्तमान मर्यादाओंको ध्यानमें रखते हुए हम उन्हें विवश नहीं कर सकते।

सम्भवतः कुछ इसी प्रकारका एक उत्तर प्रकाशित करना वांछनीय होगा।

ह० एच० एल०

"रंगभेद-मूलक प्रतिबन्ध" शब्दोंका प्रयोग करनेमें श्री गांधीका लक्ष्य दक्षिण आफ्रिका विधेयकपर संसदमें होने-वाली बहस है, और महामहिम [सम्राट्] की सरकारकी स्थिति दोनों मामलोंमें एक ही है, अर्थात् वह स्थानीय दृष्टिकोणको, जो बहुत दृढ़ है, स्वीकार करनेको विवश हो गई है।

श्री पोलकके नाम श्री गांधीके तारमें जो बात कही गई है (और जिसे 'टाइम्स'ने स्थितिका संक्षिप्त विवरण प्रकाशित करते हुए उद्धृत किया है) वह निःसन्देह लॉर्ड क्रू के साथ [उनकी] भेंट और हमारे ३ नवम्बरके पत्रपर आधारित है।

पत्रका उत्तर देनेसे पहले हमें तारका जवाब आनेकी प्रतीक्षा करनी चाहिए।

ह० एच० डब्ल्यू० जे०

१. **टाइम्स** में मूल अंग्रेजी शीर्षक था "फेल्योर ऑफ़ द नेगोसिएशन्स"।

तार फौरन जाना चाहिए — प्राप्त होनेवाले उत्तरमें शायद हमें पत्रकी बातका कोई जवाब मिल जाये। किसी भी दशामें सही जवाब तो साम्राज्यीय सरकारकी सहानुभूतिपूर्ण कार्रवाईको विस्तारपूर्वक बताने, और साथ ही ऐतिहासिक दृष्टिसे — द्वेष-भावके साथ नहीं, दक्षिण आफ्रिकाकी वर्तमान नीतिका उल्लेखके साथ अनुबंधित करनेपर ही मिल सकता है।

(ह०)

[तार]

गांधीने अखबारमें वक्तव्य प्रकाशित किया है जिसमें कहा है कि ट्रान्सवाल सरकारने १९०७ का अधिनियम रद करना मंजूर कर लिया है लेकिन वह प्रवासी कानून (इमिग्रेशन लॉ) में प्रतिवर्ष आनेवाले एशियाइयोंकी संख्या सीमित करनेवाली एक धारा जोड़ना चाहती है। अगले सप्ताह लार्ड सभामें मुझसे एक प्रश्न पूछा जायेगा। अतः कृपया मन्त्रियोंसे कहें कि मेरे १० अक्तूबरके तार, संख्या १, का उत्तर भेज दें।

क्रू

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स: २९१/१४२

सामग्रीके साधन सूत्र

'वापूना वाने पत्रो': १९४८ में फीनिक्सके इन्टरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस द्वारा प्रकाशित।

'केप टाइम्स': केपसे प्रकाशित दैनिक पत्र।

कलोनियल ऑफ़िस रेकर्ड्स: उपनिवेश कार्यालय, लन्दनके पुस्तकालयमें सुरक्षित कागजात; देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

'इजिप्टनो उद्धारक अथवा मुस्तफा कामेल पाशानुं जीवनचरित्र तथा वीजा लेखो': गांधी साहित्य मंदिर, सूरत द्वारा १९२२ में प्रकाशित।

गांधी स्मारक, नई दिल्ली: गांधीजी-सम्वन्धी साहित्य और कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय, देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३५९।

'गांधीजीना पत्रो': डाह्याभाई पटेल द्वारा सम्पादित; सेवक कार्यालय, अहमदावाद, १९२१।

'गांधीजीनी सावना": रावजीभाई पटेल, नवजीवन प्रकाशन, अहमदावाद, १९३९।

गवर्नर्स फाइल: प्रिटोरिया आर्काइव्ज़, प्रिटोरियामें दक्षिण आफ्रिकाकी सरकारके कागजात।

'गुजराती': वम्वईसे गुजराती और अंग्रेजीमें प्रकाशित साप्ताहिक पत्र।

'इंडिया' (१८९०-१९२१): भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ब्रिटिश समिति, लन्दन द्वारा हर शुक्रवारको प्रकाशित पत्र; देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४१०।

इंडिया ऑफ़िस रेकर्ड्स: भूतपूर्व इंडिया ऑफ़िसके पुस्तकालयमें सुरक्षित भारतीय मामलोंसे सम्वन्वित कागजात और प्रलेख, जिनका सम्वन्व भारत-मन्त्रीसे था।

'इंडियन ओपिनियन' (१९०३–६१): हर शनिवारको प्रकाशित होनेवाला साप्ताहिक पत्र, जिसका प्रकाशन डर्वनमें आरम्भ किया गया, किन्तु जो वादमें फीनिक्स ले जाया गया था। इसके पहले चार विभाग थे—अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी और तमिल; वादमें हिन्दी और तमिल विभाग वन्द कर दिये गये थे।

'जीवननुं परोढ': प्रभुदास गांधी, नवजीवन प्रकाशन, अहमदावाद, १९४८।

'महात्मा': मोहनदास करमचन्द गांवीका जीवन चरित्र, डी० वी० तेंडुलकर; झवेरी और तेंडुलकर, वम्वई, १९५१–५४; आठ खण्ड।

'एम० के० गांधी: ऐन इंडियन पेट्रिअट इन साउथ आफ्रिका, (मो० क० गांधी: दक्षिण आफ्रिकामें एक भारतीय देशभक्त): जे० जे० डोक; अखिल भारत सर्व सेवा संघ, वाराणसी, १९५६।

'एम० के० गांधी ऐंड साउथ आफ्रिकन इंडियन प्रॉब्लम' (मो० क० गांधी और दक्षिण आफ्रिकाकी भारतीय समस्या): डॉ० प्रा० जी० मेहता, नटेसन ऐंड कम्पनी, मद्रास।

'नेटाल मर्क्युरी' (१८५२): डर्वनका दैनिक पत्र।

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़: प्रिटोरियामें दक्षिण आफ्रिकी सरकारके कागजात। इसमें प्रधान-मन्त्री और ट्रान्सवाल-गवर्नरके अभिलेख-संग्रह भी हैं।

'रैंड डेली मेल': जोहानिसबर्गका दैनिक पत्र।

साबरमती संग्रहालय: पुस्तकालय और संग्रहालय, जिसमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल और १९३३ तक के भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात सुरक्षित हैं। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३६०।

'स्टार': जोहानिसबर्गसे प्रकाशित सान्ध्य दैनिक पत्र।

'टॉल्स्टॉय ऐंड गांधी': डॉ० कालिदास नाग, पुस्तक भण्डार, पटना।

'ट्रान्सवाल लीडर': जोहानिसबर्गसे प्रकाशित दैनिक पत्र।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(सितम्बर १९०८ – नवम्बर १९०९)

सितम्बर २: एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम (एशियाटिक्स रजिस्ट्रेशन अमेंडमेंट ऐक्ट) सरकारी 'गजट' में प्रकाशित।

सितम्बर ५: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में कर्नल सीलीके जुलाई ३१ को संसदमें दिये गये इस वक्तव्यकी प्रशंसा की कि जिन्हें उपनिवेशोंमें रहनेका हक है उन्हें गोरोंके बराबर अधिकार दिये जाने चाहिए और पूर्ण नागरिक माना जाना चाहिए।

थम्बी नायडू, नादिरशा कामा और अन्य व्यक्तियोंने हलफिया बयान देकर कहा कि ट्रान्सवालके अधिकारियोंने इस बातका वचन दिया था कि यदि भारतीय व्यापारी स्वेच्छापूर्वक पंजीयन कराना स्वीकार कर लेंगे, तो एशियाई पंजीयन अधिनियम रद कर दिया जायेगा।

सितम्बर ७: गांधीजीने वकालत बन्द कर दी थी, इसलिए उन्होंने ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन) की एक सभामें पोलकके खर्च, ब्रि० भा० संघ-कार्यालयके किराये और 'इंडियन ओपिनियन' का घाटा पूरा करनेके लिए आर्थिक सहायताकी माँग की।

गांधीजी चन्दा करनेके लिए प्रिटोरिया रवाना हुए।

सितम्बर ९: दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति (साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी) को तार द्वारा यह सूचना दी कि अबतक १७५ भारतीय जेल जा चुके हैं। उसमें यह आशा व्यक्त की गई है कि लॉर्ड ऍम्टहिल और अन्य सज्जन राहत दिलानेका प्रयत्न करेंगे।

'स्टार' के प्रतिनिधिसे भेंटमें कहा कि भारतीय अपने ही घरोंमें अजनबी बने हुए हैं। उन्हें कानूनी समानता दी जानी चाहिए।

ब्रिटिश भारतीय संघने उपनिवेश-मन्त्रीको १९०७के कानून २के रद किये जाने और शिक्षित भारतीयोंको उचित दर्जा दिये जानेके लिए अर्जी दी।

एच० एस० एल० पोलक और ए० एम० ऍंड्रूज ने हलफिया बयान देकर कहा कि अधिकारियोंने पंजीयन अधिनियम (रजिस्ट्रेशन कानून) रद करनेका वचन दिया था।

ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन) ने गांधीजीकी आर्थिक जिम्मेदारियाँ अपने ऊपर ले लीं। उनका अपना खर्च तो कैलेनबैक सम्भाले हुए ही थे।

सितम्बर १०: गांधीजीने जोहानिसबर्गकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया।

काछलिया ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष हुए।

सितम्बर १२के पूर्व: गांधीजीने जोहानिसबर्गकी अदालतमें राँदेरीकी पैरवी की।

सितम्बर १३: कोंकणी और कानमिया समुदायके मतभेदोंको दूर करानेके लिए बुलाई गई सभाकी अध्यक्षता की।

सितम्बर १४: ट्रान्सवालके पठानों और पंजाबियोंकी ओरसे उपनिवेश-मन्त्रीको भेजनेके लिए एक प्रार्थनापत्रका मसविदा तैयार किया जिसमें एशियाई कानूनको रद करनेकी माँग की। भूतपूर्व भारतीय सिपाहियोंने उपनिवेश-मन्त्रीसे प्रार्थना की कि एशियाई कानून रद किया जाये।

सितम्बर १५: वली बगस और उन अन्य व्यक्तियोंकी प्रिटोरिया अदालतमें पैरवी की जिनपर बिना पंसारी परवानों (ग्रॉसर्स लाइसेन्स) के व्यापार करनेका आरोप लगाया गया था।

सितम्बर १६: रायटरके प्रतिनिधिसे भेंटमें भारतीयोंके लिए कानूनी समानतापर जोर दिया। जेल-निदेशक (डायरेक्टर ऑफ प्रिजन्स) ने ब्रिटिश भारतीय संघको सूचित किया कि स्वास्थ्य अधिकारीकी रायमें कैदियोंको दिया जानेवाला भोजन पूरी तरह स्वास्थ्यप्रद है और सिर्फ रोगियोंके लिए ही उसे बदला जा सकता है।

सितम्बर १७: ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन) ने जेल-निदेशकको सूचित किया कि यदि भोजनमें सुधार नहीं किया गया, तो उसका यह अर्थ माना जायेगा कि भारतीय समाजको भूखों मारकर कानूनके आगे झुकनेके लिए बाध्य किया जा रहा है।

हरिलाल गांधीको ट्रान्सवालसे देश-निकाला दिया गया।

शैक्षणिक जाँचके सम्बन्धमें स्पष्टीकरण देते हुए गांधीजीने 'स्टार' को लिखा और उसमें स्मट्सपर पंजीयन अधिनियम (रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) के रद करनेके वचनका भंग करनेके सम्बन्धमें आरोप लगाया।

सितम्बर १८: इस आशयके समाचार मिले कि नये एशियाई कानूनको शाही मंजूरी मिल गई है, और दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति (साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी) ने लॉर्ड ऍम्टहिलको ट्रान्सवालके भारतीयोंकी शिकायतोंको साम्राज्यीय सरकारके सामने पेश करनेका अधिकार देनेका निर्णय किया है।

ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन) ने भारतीय कैदियोंके भोजनमें जानवरोंकी चरबी दी जानेका विरोध किया और माँग की कि उन्हें फिरसे घी देना शुरू किया जाये।

सितम्बर १९: भारतीय और चीनी नेताओंके साथ गांधीजी हॉस्केनसे मिले और उन्हें समझौतेकी शर्तोंसे अवगत कराया।

गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में लिखकर नेटालके भारतीयोंसे आग्रह किया कि वे नेटाल सरकारके उस विधेयक (बिल) का विरोध करें जिसका मन्शा नगरपालिकाओं द्वारा कतिपय परवाने (लाइसेंस) दिये जानेपर प्रतिबन्ध लगाना था।

ब्रिटिश भारतीय संघने जेल-निदेशक (डायरेक्टर ऑफ प्रिजन्स) का ध्यान वॉक्सव्रर्ग जेलमें सैयद अलीके ऊपर किये गये अत्याचारोंकी ओर आकर्षित किया और जाँचकी माँग की।

लॉर्ड ऍम्टहिलने 'टाइम्स' में लिखा कि वैधीकरण कानून (वैलिडेशन ऐक्ट) से समझौता भंग हो गया है और भारतीयोंपर पंजीयन कानूनके अपमान फिरसे लाद दिये गये हैं।

ब्रिटिश भारतीय संघकी कलकत्ता स्थित शाखाने उपनिवेश मन्त्रीको तार दिया कि साम्राज्य सरकार ट्रान्सवालके भारतीयोंकी रक्षा करे।

सितम्बर २१ : ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन) ने उपनिवेश-सचिवसे सैयद अलीके मामलेमें राहतकी माँग की और कैदियोंके भोजनमें सुधार करनेको कहा।
हरिलाल गांधी और अन्य व्यक्तियोंके खिलाफ दायर किये गये मुकदमे उठा लिये गये और फोक्सरस्ट जेलसे रिहा कर दिया गया।
नया एशियाई कानून अमलमें आ गया।

सितम्बर २२ : नेटालके सर्वोच्च न्यायालयने फैसला दिया कि प्रवासियोंके बच्चोंको प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम, १९०७ (इमिग्रैंन्ट्स रिस्ट्रिक्शन ऐक्ट, १९०७) के अन्तर्गत सजा दी जा सकती है।
हरिलाल गांधी जोहानिसबर्ग पहुँचे।

सितम्बर २३ : स्मट्सने समझौतेके लिए भारतीयों द्वारा रखी गई शर्तोंको अस्वीकार कर दिया।
जेल-निदेशक (डायरेक्टर ऑफ प्रिजन्स) ने सैयद अलीके प्रति दुर्व्यवहार किये जानेकी बात गलत बताई।

सितम्बर २४ : ब्रिटिश भारतीय संघने सैयद अलीका हलफिया बयान जेल-निदेशकको भेजा।
उपनिवेश-सचिवने ट्रान्सवालकी जेलोंमें भोजन-सम्बन्धी विनियमोंके बारेमें हस्तक्षेप करनेमें असमर्थता प्रकट की।

सितम्बर २५ : ब्रिटिश भारतीय संघने जेल-निदेशकको लिखा कि सभी भारतीय कैदियोंको एक ही तरहका भोजन दिया जाना चाहिए और चरबीकी जगह उन्हें घी मिलना चाहिए।

सितम्बर २६ : गांधीजीने डर्बन पहुँचकर नेटालके नेताओंको सलाह दी कि वे भारतीयोंको अँगूठोंकी छाप देकर नेटालमें आनेसे रोकें; उन्होंने ट्रान्सवालके संघर्षमें नेटालने जो हिस्सा लिया, उसकी प्रशंसा की।

सितम्बर २८ : ब्रिटिश भारतीय संघने उपनिवेश-सचिवसे भारतीय कैदियोंकी भोजन-तालिकाके बारेमें जानकारी माँगी।
पोलकने 'प्रिटोरिया न्यूज' द्वारा भारतीयोंपर लगाये गये इस आरोपका खण्डन किया कि उन्होंने समझौतेसे सम्बन्धित अपना काम पूरा नहीं किया।

सितम्बर ३० : डर्बनमें 'नेटाल मर्क्युरी' के प्रतिनिधिको एक लम्बी भेंटके दौरान गांधीजीने इस बातपर जोर दिया कि भारतीय निर्बाध प्रवेश अथवा व्यापारकी इच्छा नहीं करते; वे कानूनकी दृष्टिमें भेदभाव रखा जानेपर अवश्य आपत्ति करते हैं।
ब्रिटिश भारतीय संघने दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिको पुराने कानूनके अन्तर्गत भारतीयोंकी गिरफ्तारी और सजाके विरोधमें तार दिया और कानूनके रद किये जानेकी माँग की।

अक्तूबर २ : जोहानिसबर्गके पादरियोंकी ओरसे भारतीयोंके प्रति किये जानेवाले दुर्व्यवहारके विषयमें एक ज्ञापनका मसविदा तैयार किया।
नेटाल भारतीय कांग्रेसने उपनिवेश-सचिवको तार देकर सूचित किया कि प्रवासी अधिकारीने भारतीय यात्रियोंको डर्बनमें उतरने नहीं दिया है। दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिको भी कोमाटीपूर्टमें भारतीयोंके गिरफ्तार होनेका समाचार तारसे दिया।

अक्तूबर ३: गांधीजीने नेटालके भारतीयोंसे अनुरोध किया कि वे गिरमिटिया पद्धतिको खत्म करानेके लिए आन्दोलन करें।

अक्तूबर ५: दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिको कोमाटीपूर्टमें ८० भारतीयोंको एक छोटे और गन्दे कमरेमें ठूस दिया जानेका समाचार तारसे दिया।

अक्तूबर ६: डर्बनसे ट्रान्सवाल रवाना हुए।

अक्तूबर ७: बिना पंजीयन प्रमाणपत्रों (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) के ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके अपराधमें अन्य १५ भारतीयोंके साथ फोक्सरस्टमें गिरफ्तार किये गये।

अक्तूबर ८: उक्त १५ व्यक्तियोंके साथ मजिस्ट्रेटके सामने पेश किये गये। जमानतपर छूटनेसे इनकार किया; एक हफ्तेके लिए हवालातमें भेज दिये गये।

अक्तूबर ९: ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन) ने उपनिवेश-सचिव, प्रिटोरिया, को लिखा कि डेलागोआ-बेसे लौटनेवाले भारतीयोंके साथ किये गये कथित दुर्व्यवहारकी सार्वजनिक जाँच की जाये।

अक्तूबर ११: फोक्सरस्ट जेलमें अपर्याप्त भोजन दिया जानेके बारेमें आवासी (रेज़िडेन्ट) मजिस्ट्रेटके नाम प्रार्थनापत्रका मसविदा बनाया।

अक्तूबर १२: बारबर्टनसे भारतीयोंके एक दलको, जिसमें नाबालिग बच्चे भी शामिल थे, देशसे बाहर पुर्तगाली क्षेत्रमें भेजा गया।

डर्बनमें राष्ट्रीय परिषदकी सभा हुई।

अक्तूबर १३: गांधीजीने, भारतीयोंको हवालातसे सन्देश भेजा कि वे मातृभूमिके लिए जेल जाना स्वीकार करें।

अक्तूबर १४: दावजी आमद और अन्य व्यक्तियोंकी ओरसे सहायक मजिस्ट्रेट डी' विलियर्सके सामने पैरवी की। मुकदमेसे पहले भारतीय तरुणोंके नाम सन्देश भेजा।

दो महीनेकी सख्त सजा मिली।

जेल जाते समय भारतीयोंके नाम संदेश दिया कि वे अन्ततक दृढ़ रहें।

डर्बनमें हुई नेटाल भारतीय कांग्रेसकी सभामें प्रस्ताव पास किया गया कि सरकारसे शैक्षणिक जाँच सम्बन्धी आज्ञाको वापस लेनेकी माँग की जाये।

अक्तूबर १५: गांधीजीसे मार्केट स्क्वेयरमें सड़क बनानेका काम लिया गया।

रायटरके फोक्सरस्ट-स्थित संवाददाताने लिखा: "गांधीजीने अपने-आपको ट्रान्सवालका सबसे सुखी आदमी कहा।"

अक्तूबर १६: ब्रिटिश भारतीय संघ और नेटाल भारतीय संघने रिचको तार देकर इस बातपर क्षोभ प्रकट किया कि गांधीजीसे सड़क बनानेका काम लिया गया।

लन्दनमें सर मंचरजी भावनगरीकी अध्यक्षतामें सभा हुई जिसमें लाला लाजपतराय और विपिनचन्द्र पाल भी बोले। सभामें गांधीजीके कारावास-दण्डका विरोध किया गया।

गांधीजीको सजा दी जानेपर जिन लोगोंने सहानुभूति प्रदर्शित की थी और बधाई दी थी, कस्तूरबाने उन्हें धन्यवाद दिया।

अक्तूबर १७ के पूर्व: फीरोजशाह मेहताने लॉर्ड ऍम्टहिलको तार दिया कि दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके प्रति होनेवाले दुर्व्यवहारके कारण भारतीय जन-मानस बहुत क्षुब्ध हुआ है। उन्होंने इस प्रकारके अत्याचारोंसे भारतीयोंको बचानेके लिए ब्रिटिश सरकारसे हस्तक्षेप करनेका आग्रह किया।

अक्तूबर १७ : रिचने उपनिवेश कार्यालयको ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन) और नेटाल भारतीय कांग्रेसके तारोंकी प्रतियाँ भेजीं।

अक्तूबर १८ : फोर्ड्सवर्गकी हमीदिया मस्जिदमें सार्वजनिक सभा हुई।

अक्तूबर २१ : हाउस ऑफ लॉर्ड्समें ऍम्टहिलके प्रश्नका जवाव देते हुए अर्ल ऑफ क्रू ने कहा कि उन्होंने गांधीजीकी गिरफ्तारीके वारेमें तथ्य जाननेके विचारसे ट्रान्सवाल सरकारको तार किया है। उन्होंने यह भी वताया कि गांधीजी सत्याग्रह संघर्षमें भाग ले रहे हैं और यह वाजिव ही है कि उन्हें उसकी सजा मिले।

अक्तूबर २२ : भारतके वाइसरॉयने भारत-कार्यालयको ट्रान्सवालमें सत्याग्रहियोंके प्रति किये जानेवाले व्यवहारपर भारतीयोंके क्षोभसे अवगत कराया और सिफारिश की कि उनके प्रति उदारताका वरताव किया जाना चाहिए और प्रतिवर्ष छः शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशकी माँग स्वीकार की जानी चाहिए।

अक्तूबर २५ : गांधीजीको फोक्सरस्ट जेलसे कैदीकी पोशाकमें डाह्या लालाके मुकदमेमें गवाही देनेके लिए जोहानिसवर्ग लाया गया; उन्होंने गाड़ीमें वैठनेसे इनकार कर दिया और पार्क स्टेशनसे फोर्ट तक कैदियोंका थैला लटकाये हुए वे पैदल ही गये।

अक्तूबर २७ : जोहानिसवर्ग जेलसे उच्च-न्यायालय ले जाया गया।

अक्तूबर ३१ : उपनिवेश-मन्त्रीने ट्रान्सवालके गवर्नरको तार देकर अनुरोध किया कि सीमित संख्यामें शिक्षित व्यक्तियोंका ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेका अधिकार अस्थायी तौरपर मान लिया जाये।

नवम्बर ३ : ट्रान्सवाल सरकारने उपनिवेश कार्यालयको तार दिया कि गांधीजीसे फोक्सरस्टमें होनेवाली कृषि-प्रदर्शनीके मैदानमें ढ़ाई दिन गड्ढे खोदनेका काम और वादमें नगरपालिकाके खेतों और जेलके वगीचोंमें भी काम लिया गया।

नवम्बर ४ : गांधीजीको कैदियोंके कपड़ोंमें फोक्सरस्ट जेल ले जाया गया।
हमीदिया मस्जिदमें ट्रान्सवालकी स्थितिपर विचार करनेके लिए सार्वजनिक सभा हुई, जिसमें यूरोपीयोंने भी भाषण दिये। सभामें छः शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशके अधिकारकी माँग की गई।

नवम्बर ५ : ट्रान्सवालकी सरकारने उपनिवेश कार्यालयके अक्तूवर १३ के तारके जवावमें कहा कि शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशके वारेमें की गई भारतीय माँग अस्वीकृत की गई है। यह भी कहा कि वर्तमान कानूनमें इसकी व्यवस्था है किन्तु भारतीय आन्दोलन करनेके विचारसे कानूनकी अवज्ञा कर रहे हैं।

नवम्वर ९ : गांधीजीने वेस्टको पत्रमें लिखा कि सत्याग्रह एक धर्म-युद्ध है। यद्यपि, कस्तूरवा वहुत अधिक वीमार थीं, फिर भी उन्होंने जुर्माना देकर जेलसे छुटकारा पाना स्वीकार नहीं किया; कस्तूरवाको पत्र लिखा।

नवम्वर १४ : अन्य कैदियोंके साथ गांधीजीको नगरपालिकाके जलप्रदायों (वॉटर वर्क्स) पर काम कराया गया, कब्रिस्तान और फौजियोंकी कब्रें साफ कराई गईं।

नवम्वर १९ : सर्वोच्च न्यायालयके इस फैसलेपर कि उपनिवेशमें लौटकर आनेवाले अधिवासी भारतीयोंको पंजीयन करानेकी अनुमति मिलनी चाहिए, अपील दायर करनेवाले वारवर्टन और फोक्सरस्टके ५० कैदियोंको छोड़ा गया।

नवम्बर २२ : कलकत्तामें सार्वजनिक सभा हुई जिसमें १९०७ के कानून २ को रद न करनेके लिए ट्रान्सवाल सरकारकी निन्दा की गई। सुरेन्द्रनाथ बनर्जीने इस बातपर क्षोभ प्रकट किया कि गांधीजी जैसे व्यक्तिके साथ जोहानिसबर्गकी सड़कोंमें अपमानजनक व्यवहार किया गया है।

नवम्बर २४ : पोलकने अदालतके सामने गांधीजी और अन्य कैदियोंके छुटकारेकी पैरवी की। जोहानिसबर्ग व्यापार संघ (चैम्बर ऑफ कॉमर्स) ने प्रस्ताव पास किया कि सरकार भारतीय समाजके दबावमें आकर कानून लागू करनेसे पीछे नहीं हटेगी।

नवम्बर २५ : शाही उपनिवेशोंमें प्रवास-सम्बन्धी जांचके लिए लॉर्ड सैंडर्सन-कमीशनकी नियुक्ति।

नवम्बर २७ : महान्यायवादी (अटर्नी जनरल) ने गांधीजी और अन्य कैदियोंको फोक्सरस्ट जेलसे छोड़ना नामंजूर कर दिया।

नवम्बर २८ : जनरल बोथाके इस वक्तव्यका मुसलमानोंने तार भेजकर खण्डन किया कि "अभीतक ज्यादातर मुसलमानोंने सत्याग्रह संघर्षमें भाग लेनेसे इनकार कर दिया है।" ब्रिटिश भारतीय संघ (ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन) ने महान्यायवादी, प्रिटोरियाको लिखा कि जोहानिसबर्ग जेलमें भारतीय कैदियोंके साथ दुर्व्यवहार किया जा रहा है।

नवम्बर २९ : ब्रिटिश भारतीय संघने एक सभा करके सरकारसे भारतीयोंकी माँगको पूरा करनेके लिए कहा और यह भी कहा कि यदि ऐसा न किया गया, तो सत्याग्रह जारी रखा जायेगा।

गांधीजीने फोक्सरस्ट जेलसे सन्देश भेजा कि भारतीयोंको अपनी प्रतिज्ञापर अटल रहना चाहिए। सन्देश जोहानिसबर्गकी सार्वजनिक सभामें पढ़ा गया।

नवम्बर ३० : लन्दनके 'न्यू रिफार्म क्लब' में भाषण देते हुए श्री गोखलेने दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंको होनेवाले कष्टोंका उल्लेख किया और कहा कि ब्रिटिश राज्यके प्रति अविश्वास फैलनेके कारणोंमें यह भी एक है।

कर्नल सीलीने कॉमन्स सभामें कहा कि जहाँतक उन्हें मालूम है, गांधीजीसे आम सड़कोंपर कभी कोई सख्त काम नहीं लिया गया।

दिसम्बर १ : ब्रिटिश भारतीय संघने दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समितिको तार किया कि "गांधीजीके साथ किये गये व्यवहारके सम्बन्धमें कर्नल सीलीकी जानकारी बिल्कुल गलत है। हलफनामे भेजे जा रहे हैं।"

फोक्सरस्ट मजिस्ट्रेटने पोलक द्वारा की गई भारतीय पैरवीको ठीक मानकर उस भारतीयको छोड़ दिया जिसने शिनाख्त करानेसे इनकार कर दिया था।

गांधीजी और उनके सहयोगियोंको एनी बेसेंटने शुभ-कामनाओंका सन्देश भेजा।

दिसम्बर १० : लॉर्ड सेल्बोर्नने जनरल बोथाको शाही सरकारके इस विचारसे अवगत कराया कि ट्रान्सवाल सरकारको उन भारतीयोंके साथ उदार व्यवहार करना चाहिए जिन्हें युद्धसे पहले अधिकार मिल चुके हैं; निश्चित संख्यामें शिक्षित भारतीयोंको प्रवेश दिया जाना चाहिए; १९०७ के कानून २, और १९०८ के कानून ३६, को रद किया जाना चाहिए और कुछ समयके बाद प्रवासके सम्बन्धमें कोई सख्त कानून बना देना चाहिए।

दिसम्बर १२ : गांधीजी फोक्सरस्ट जेलसे छूटे। जोहानिसबर्ग जाते हुए फोक्सरस्टमें संवाददाताओंको जेलमें किये जानेवाले दुर्व्यवहारके विषयमें बताया।

जोहानिसबर्गमें स्वागत सभामें भाषण दिया।

दिसम्बर १३ : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनने गांधीजी और इमाम अब्दुल कादिर बावजीरके सम्मानमें सभा की।

दिसम्बर १४ : तमिल समाजमें बोले। उसके बाद तमिल कल्याण सभा [तमिल बेनिफिट सोसाइटी] द्वारा दिये गये भोजमें शामिल हुए।

दिसम्बर १५ : जनरल बोथाने लॉर्ड सेल्बोर्नको सूचित किया कि सरकार अपनी नीति बदलनेमें असमर्थ है।

ट्रान्सवालके उपनिवेश-सचिवने ट्रान्सवालके गवर्नरके पत्रका जवाब देते हुए कहा कि १९०७ के कानून २ को रद करनेका वचन कभी नहीं दिया गया था।

दिसम्बर १८ : गांधीजीने जोहानिसबर्गमें नायडू और अन्य धरनेदारोंकी पैरवी की।

ट्रान्सवालके प्रमुख यूरोपीयोंकी सभामें बोले।

दिसम्बर २१ : रिचने उपनिवेश-कार्यालयको वे हलफिया बयान भेजे जिनमें कहा गया था कि गांधीजीसे जेलमें सख्त शारीरिक काम लिया गया।

दिसम्बर २३ : फोक्सरस्ट जेलके अधिकारी नेल्सनको गांधीजीने टॉल्स्टॉयकी पुस्तक 'किंगडम ऑफ गॉड इज़ विदिन यू' भेंट की।

दिसम्बर २४ : प्रिटोरियाकी अदालतमें ट्रान्सवालके एशियाइयोंके परीक्षात्मक मुकदमेकी अपील खारिज कर दी गई।

दिसम्बर २६ : गांधीजी डर्बन पहुँचे; भव्य स्वागत किया गया; रोग-शय्यापर पड़ी कस्तूरबासे मिलनेके लिए फीनिक्स रवाना हुए।

दिसम्बर २८ : मगनलाल गांधीको पत्र लिखा, जिसमें आध्यात्मिक विकासपर जोर देते हुए कहा कि यह देश और धर्मकी उन्नतिमें सहायक है।

दिसम्बर ३० : हरिलाल गांधी और राँदेरी निषिद्ध प्रवासी होनेके अपराधमें जोहानिसबर्गमें गिरफ्तार करके जनवरी ५ तक के लिए हिरासतमें रखे गये।

'प्रिटोरिया न्यूज' ने गांधीजी और उनके देशभाइयोंके अध्यवसाय और उत्तम स्वभाव तथा उद्देश्यकी प्रशंसा करते हुए सरकारसे आग्रह किया कि भारतीयोंकी माँगें मंजूर की जायें।

ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके अपराधमें ८ मद्रासियोंको निर्वासित किया गया।

थम्बी नायडू और अन्य व्यक्तियोंको ५० पौंड जुर्माने अथवा ३ महीनेकी सख्त कैदकी सजा दी गई। बचाव पक्षके वकील पोलकने अपील दायर की।

नेटाल सरकारने १४ सालसे अधिक उम्रके भारतीय बालकोंकी उच्च शिक्षापर प्रतिबन्ध लगानेवाली अपनी विज्ञप्ति फिरसे जारी की। कॉमन्स सभामें इसपर प्रश्न किया गया।

दिसम्बर ३१ के पूर्व : पाँच और व्यक्ति गिरफ्तार किये गये और १९०८ के कानून ३६ के अन्तर्गत उनपर कार्रवाई की गई। आमद मियाँ और उनके भाईपर बिना परवानोंके व्यापार करनेके अपराधमें रस्टेनबर्गमें २५ पौंड जुर्माना किया गया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसने दक्षिण आफ्रिकासे सम्बन्धित प्रस्ताव पास किया और उसमें ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति किये गये अपमानजनक और क्रूर व्यवहारको साम्राज्यके लिए हानिकर बताया।

१९०९

जनवरी १, १९०९: नेटाल भारतीय कांग्रेसके संयुक्त मन्त्री दादा उस्मानके घर प्रीति-भोजमें गांधीजीका स्वागत किया गया। गांधीजी सभामें बोले।

जनवरी २ के पहले: अँगूठेकी छाप न देनेके कारण प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम (इमिग्रेशन रिस्ट्रिक्शन ऐक्ट) के अन्तर्गत दादा उस्मान, पारसी रुस्तमजी और एम० सी० आंगलिया नजरबन्द किये गये।

जनवरी २: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में अपने नव-वर्षके सन्देशमें देशवासियोंसे स्वदेशीका व्रत लेनेकी प्रार्थना की।

'इंडियन ओपिनियन' में गांधीजीकी दूसरी जेल-यात्राके अनुभव प्रकाशित हुए, जिसमें उन्होंने कहा कि जेल जाना राजनीतिक निर्योग्यताओंके विरुद्ध लड़नेका सबसे कारगर उपाय है।

१८९४ के कानून ६, खण्ड ३ के अन्तर्गत प्रिटोरियामें धरना देनेवालोंकी गिरफ्तारी।

जनवरी ४: प्रिटोरियाके धरनादारोंको सूचित किया गया कि उनपर नये कानूनके खण्ड ७ के अन्तर्गत मुकदमा चलाया जा रहा है और उन्हें निर्वासित किया जा सकता है।

जनवरी ५: गांधीजीने 'नेटाल मर्क्युरी' को भेंट देते हुए कहा कि भारतीय विशुद्धतम तरीकेसे संघर्ष कर रहे हैं।

फोक्सरस्टमें हरिलाल गांधी और दूसरे लोग हवालातमें।

रूडीपूर्टमें तीन भारतीयोंपर पंजीयन प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) पेश न करनेका आरोप लगाया गया।

जनवरी ६: हमीदिया मस्जिदके मौलवी अहमद मुख्तियारने फिरसे अनुमतिपत्र नया कराना मंजूर नहीं किया। उन्हें ट्रान्सवाल छोड़नेका आदेश दिया गया। वे केप रवाना हो गये।

दाउद मुहम्मद और ३१ अन्य व्यक्तियोंपर पंजीयन प्रमाणपत्र (रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट) पेश न कर सकनेका आरोप लगाया गया।

जनवरी ७: 'स्टार' ने गांधीजीपर यह आरोप लगाया कि पहले ही एशियाई कानूनके उल्लंघनके जो मामले हुए हैं और जिन्हें अब कानूनी मान्यता दे दी गई है, उन्हीं मामलोंको वे उक्त कानूनको रद करनेकी दलीलके रूपमें पेश कर रहे हैं।

बॉक्सबर्गके भारतीय व्यापारियोंको बस्तीकी दुकानदारीके अलावा और किसी तरहके व्यापारिक परवाने देनेसे इनकार किया गया।

जनवरी ९ के पहले: बहुत-से भारतीयोंपर, जिनमें कुछ उपनिवेशमें जन्मे हुए भारतीय भी शामिल थे और जिन्हें ट्रान्सवालसे नेटालको निर्वासित कर दिया गया था, कानून ३६ के विनियमोंके अन्तर्गत मुकदमा चलाया गया और उन्हें नेटालमें प्रवेशके लिए बरायनाम सजा दी गई।

जनवरी ९: गांधीजीने डर्बनके भारतीय व्यापार संघ (इंडियन चैम्बर ऑफ कॉमर्स) की सभामें भाग लिया और उसके नियमोंके बारेमें कुछ सुझाव दिये।

रिचने उपनिवेश कार्यालयको नेटाल सरकारकी इस विज्ञप्तिके विरुद्ध लिखा कि जनवरी २३ से १४ सालसे ऊपरके भारतीय विद्यार्थी उच्च शालाओंमें भर्ती नहीं किये जायेंगे।

जनवरी १०: डॉ० नानजीने डर्वनमें कस्तूरवाका ऑपरेशन किया। गांधीजी, जो उन्हें देखने वहाँ गये थे, जोहानिसवर्ग रवाना हुए।

जनवरी १२: उन तीन भारतीयोंको, जिनपर १९०८ के अधिनियम ३६ के खण्ड ७ का उल्लंघन करनेका आरोप लगाया गया था, आठ दिनके अन्दर पंजीयन करानेकी आज्ञा दी गई।

जनवरी १६: गांधीजी पंजीयन प्रमाणपत्र पेश न करनेके अपराधमें जोहानिसवर्ग जाते हुए फोक्सरस्टमें गिरफ्तार। निर्वासन दण्ड देकर उन्हें सीमाके वाहर छोड़ दिया गया। लेकिन, वे फिर लौटे, और फिर गिरफ्तार। अपनी जमानत आप देकर छूटे और जोहानिसवर्ग गये।

सर्वोच्च-न्यायालयने पंजीकृत नागरिकोंके निर्वासनको गैरकानूनी करार दिया।

जनवरी २०: गांधीजीने समाचारपत्रोंको लिखा कि भारतीयोंका संघर्ष तीसरी और अन्तिम अवस्थामें पहुँच गया है।

जोहानिसवर्ग नगर-परिषदने सरकारसे आग्रह किया कि एशियाई प्रश्नपर सख्ती वरती जाये और पंजीयन कानून (रजिस्ट्रेशन ऐक्ट) लागू किया जाये।

जनवरी २१: गांधीजीने 'नेटाल मर्क्युरी' को भेंट दी, जिसके दौरान कहा कि यह वताना मुश्किल है कि भारतीय व्यापारी अपनी सारी सम्पत्ति साहूकारोंके सुपुर्द करनेमें छिपी जोखिम उठानेको तैयार हो जायेंगे।

'इंडियन ओपिनियन' के जोहानिसवर्ग-स्थित संवाददाताने खवर दी कि ३० व्यापारी काछलियाके पदचिह्नोंपर चलनेके लिए तैयार हैं।

'रैंड डेली मेल' ने काछलियाके साहूकारोंकी सभापर टिप्पणी लिखते हुए कहा कि तथाकथित सत्याग्रह संघर्षने जोर-जवरदस्तीका रूप धारण कर लिया है। सरकारसे धरना देनेपर पावन्दी लगानेका अनुरोध किया।

'नेटाल मर्क्युरी' में एक तार प्रकाशित किया गया, जिसमें जोहानिसवर्ग व्यापार-संघ (चैम्वर ऑफ कॉमर्स) ने भारतीयोंपर सरकारको लाचार करनेके प्रयत्नका आरोप लगाते हुए उनकी इस कार्रवाईके प्रति क्षोभ व्यक्त किया था। उग्रवादियोंने व्यापारियोंकी सम्पत्ति जब्त करने और पेढ़ियोंपर धरना देनेकी कार्रवाईको वन्द करनेके लिए उठाये गये कदमका समर्थन किया।

जनवरी २२: गांधीजीने काछलियाके यूरोपीय साहूकारोंकी सभामें हिसाव पेश किया।

'रैंड डेली मेल' के इस कथनकी आलोचना की कि सत्याग्रहमें जोर-जवरदस्ती की जा रही है।

सर्वोच्च न्यायालयने एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम (एशियाटिक रजिस्ट्रेशन अमेंडमेंट ऐक्ट) के अन्तर्गत दी गई सजाके विरोधमें नायडूकी अपील खारिज की।

जोहानिसवर्ग व्यापार-संघ (चैम्वर ऑफ कॉमर्स) के वस्त्रादि विभागने सरकार द्वारा एशियाई पंजीयन कानून लागू किये जानेके समर्थनमें प्रस्ताव पास किया।

वुलावायो नगर-परिषदने भारतीयोंको नये व्यापारिक परवाने देनेसे इनकार कर दिया।

जनवरी २३: सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नायडूकी अपील खारिज करनेका 'स्टार' ने स्वागत किया और कहा कि कुछ पागल व्यापारियोंको छोड़कर कोई भी श्री गांधी और

श्री काछलियाकी बात मानकर अपने व्यापारको दाँवपर लगाना पसन्द नहीं करेगा।

ई० आई० अस्वात और अन्य भारतीय व्यापारियोंने काछलियाका अनुसरण किया।

जनवरी २५: गांधीजीने 'रैंड डेली मेल' को भेंट दी, जिसमें कहा कि जबतक एशियाई व्यापारियोंको दक्षिण आफ्रिकामें उनका अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता, मैं सन्तुष्ट नहीं होऊँगा।

'रैंड डेली मेल' ने लिखा कि यदि सत्याग्रहियोंके तरीके दक्षिण आफ्रिकाकी रंगदार और वतनी आबादीमें भी फैल गये, तो अराजकताकी स्थिति उत्पन्न हो जायेगी।

जनवरी २६: गांधीजीने तमिल समाजकी सभामें भाषण दिया।

डॉ० क्राउज़को लिखा कि काछलियाने जो कदम उठाया है उसके विरुद्ध लगाया गया आरोप ठीक नहीं।

साहूकारोंने काछलियाको सूचित किया कि उनका इरादा काछलियाकी सम्पत्ति अस्थायी तौरपर जब्त करनेका है।

अनेक भारतीयोंको निर्वासित करके डेलागोआ-बे भेज देनेकी आज्ञा दी गई। इनमें १४ साल पुराने अधिवासी भारतीय भी शामिल थे।

जनवरी २७: गांधीजीने लॉर्ड कर्ज़नको भारतीय स्थितिके सम्बन्धमें अपना वक्तव्य भेजा और आशा व्यक्त की कि यदि वे हस्तक्षेप करें, तो संघर्षका मंगलमय अन्त हो सकता है।

काछलिया और अन्य ३० व्यक्ति खण्ड ९ के अन्तर्गत गिरफ्तार करके मजिस्ट्रेटके सामने पेश किये गये।

खोलवाड़में भारतीयोंकी सभा हुई, जिसमें निर्णय किया गया कि न परवाने लिये जायें और न फिरसे पंजीयन प्रमाणपत्रको नया कराया जाये।

जनवरी २८: जोहानिसबर्गके भारतीय व्यापारियोंने बिना परवाना व्यापार करके जेल जानेका निश्चय किया।

जनवरी २९. गांधीजीको कस्तूरबाका स्वास्थ्य सुधरनेकी सूचना मिली, और वे डरबन रवाना हुए।

काछलिया, नायडू और अन्य व्यक्तियोंको तीन महीनेकी कैद या ५० पौंड जुर्मानेकी सजा दी गई; शेलतको २ महीनेकी सजा दी गई।

ट्रान्सवाल सरकारने उपनिवेश-मन्त्रीको सूचित किया कि गांधीजीसे आम रास्तोंपर काम लिये जानेकी खबर झूठी है, भारतीय कैदियोंके साथ दुर्व्यवहार नहीं किया गया है और न ही उनकी धार्मिक भावनाको ठेस पहुँचाई गई है।

फरवरी १: काछलियाकी कारावास अवधिमें ई० आई० अस्वात सर्वसम्मतिसे ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष चुने गये।

फरवरी २: लॉर्ड कर्ज़नने गांधीजीको सूचित किया कि बोथा और स्मट्ससे उनकी बातचीत हुई है और वे भारतीयोंके साथ उदारता और न्यायका बरताव करनेके लिए उत्सुक हैं।

फरवरी ३: निर्वासनके हुक्मकी अवज्ञा करनेके अपराधमें पारसी रुस्तमजी और अन्य व्यक्ति गिरफ्तार किय गये।

फरवरी ४: गांधीजी कस्तूरबाको ऑपरेशनके बाद स्वस्थ होनेपर फीनिक्स ले गये।

फरवरी ५: ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयने राँदेरियाकी अपील खारिज कर दी। हरिलाल गांधी, दाउद मुहम्मद और अन्य प्रमुख भारतीयोंको निर्वासनका हुक्म दिया गया।

फरवरी ९ : सरकारी 'गजट' में संघीकरण-कानूनका मसविदा प्रकाशित हुआ।

दाउद मुहम्मद और काछलियाने अदालतमें महाजनोंको अपनी सम्पत्तिपर अस्थायी अधिकार देना मंजूर किया।

फरवरी १० : हरिलाल गांधी और अन्य अनेक व्यक्तियोंको फोक्सरस्टमें तीनसे लेकर छः महीने तक की सजा सुनाई गई।

साम्राज्यीय सरकारने रोडेशियाके एशियाई कानूनको मंजूरी नहीं दी।

फरवरी ११ : निर्वासनकी सजाके बाद ट्रान्सवालमें पुनः प्रवेश करनेके अपराधमें पारसी रुस्तमजी और अन्य व्यक्तियोंको तीन-तीन महीनेकी सजा दी गई।

फरवरी १५ के पूर्व : राष्ट्रीय सम्मेलन (नेशनल कन्वेंशन) ने दक्षिण आफ्रिका कानूनका मसविदा पेश किया।

फरवरी १६ : वी० ए० चेट्टियरको तीन महीनेकी सजा दी गई।

जनरल बोथाने गवर्नरको एक पत्र लिखा, जिसमें १९०७ के कानून २ के रद किये जानेकी माँगके विषयमें सरकारकी स्थितिका ब्योरा देते हुए इस बातसे इनकार किया कि ऐसी किसी मंसूखीका वचन दिया गया था। उन्होंने यह भी कहा कि एशियाई अधिवासियोंमें ९७ प्रतिशत लोगोंने पंजीयन करा लिया है और अनाक्रामक प्रतिरोधकी हालत डाँवाँडोल है।

फरवरी १७ : कुछ और सत्याग्रहियोंको तीनसे छः महीने तककी सजा दी गई; अन्य लोग हिरासतमें वापस भेज दिये गये; प्रिटोरिया, हाइडेलबर्ग, जर्मिस्टन आदिसे गिरफ्तारियोंकी खबरें मिलीं।

फरवरी १८ : एम० ए० कामाको तीन महीनेकी सजा। और भी अनेक प्रमुख भारतीय निर्वासित किये गये या जेल भेजे गये।

फरवरी १९ : शिनाख्त न देने अथवा पंजीयन प्रमाणपत्र न पेश करनेके अपराधमें छः भारतीय स्टैंडर्टनमें गिरफ्तार।

फरवरी २० : शिनाख्तके निशान देनेसे इनकार करने और पंजीयन प्रमाणपत्र पेश न करनेके अपराधमें लिअंग क्विन गिरफ्तार किये गये।

फरवरी २२ : गांधीजी फीनिक्ससे जोहानिसबर्ग रवाना हुए।

फरवरी २५ : पोलक और व्यासके साथ फोक्सरस्टमें गिरफ्तार।

पंजीयन प्रमाणपत्र पेश न करनेके अपराधमें तीन महीनेकी कैद अथवा ५० पौंड जुर्मानेकी सजा दी गई।

तमिल समाजको संघर्ष जारी रखनेका सन्देश दिया।

फरवरी २८ : फ्रीडडॉर्पके हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके तत्त्वावधानमें आयोजित ब्रिटिश भारतीयोंकी सभामें गांधीजी, काछलिया, पारसी रुस्तमजी और अन्य लोगोंको जेल जानेपर बधाई दी गई। और संघर्ष जारी रखनेका निश्चय किया गया।

मार्च २ : गांधीजीको फोक्सरस्ट जेलसे प्रिटोरिया जेल ले जानेका हुक्म जारी हुआ; और शामकी गाड़ीसे वे सन्तरीके साथ रवाना हो गये।

मार्च ३ : प्रिटोरिया सेन्ट्रल जेल पहुँचे।

'इंडियन ओपिनियन' के फोक्सरस्ट-स्थित संवाददाताने तार किया : "गांधी प्रशासनिक कारणोंसे प्रिटोरिया ले जाये गये हैं। मेरा विश्वास है कि यह कदम उन्हें सब लोगोंसे

बिलकुल अलग कर देनेके लिए उठाया गया है। निकट भविष्यमें समझौता होनेकी खबर ब्रिटिश भारतीय संघकी कार्यकारिणी बिलकुल गलत बताती है।"

पोलकने सजायाफ्ता सत्याग्रहियोंकी पत्नियों और रिश्तेदारोंकी सभाका उद्घाटन किया।

ई० आई० अस्वात और लिअंग क्विनको तीन-तीन महीनेकी सजा दी गई।

मार्च ४ : गांधीजीको जेलके दरवाजे और फर्श साफ करनेका काम दिया गया।

मुख्य धरनेदार के० के० सामीको, जो तमिल कल्याण समिति (तमिल बेनिफिट सोसाइटी) के मन्त्री भी थे, तीन महीनेकी सजा दी गई।

दो महीनेकी सजा पूरी हो जानेपर रांँदेरिया मुक्त किये गये।

मार्च ५ : रांँदेरिया फिर गिरफ्तार।

केपके रंगदार लोगोंकी सभामें संघीकरण कानूनके मसविदेपर चर्चा हुई और संघकी संसदमें प्रतिनिधित्व तथा राजनीतिक अधिकारोंकी माँग की गई।

श्री काछलिया और अस्वातके कैदमें होनेके कारण ई० एस० कुवाड़िया ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यकारी अध्यक्ष नियुक्त।

मार्च ६ : गोरोंने बारबर्टन, वॉक्सबर्ग, क्रूगर्सडॉर्प आदि स्थानोंमें बस्तियाँ स्थापित करानेके लिए आन्दोलन शुरू किया।

मार्च ७ : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें ब्रिटिश भारतीयोंकी सभा हुई, जिसमें अन्य लोगोंके अतिरिक्त कुवाड़िया, कैलेनबैक और पोलक भी बोले।

मार्च ८ : गांधीजीके कारावाससे सम्बन्धित अपने वक्तव्यमें कर्नल सीलीने कहा कि श्री गांधीको सजा इसलिए दी गई है कि उन्होंने ट्रान्सवाल कानूनका पालन करनेसे इनकार किया, और शाही सरकार ट्रान्सवाल सरकारको पंजीयन प्रमाणपत्रसे सम्बन्धित कानूनको लागू करनेसे नहीं रोक सकती।

मार्च १० : गांधीजीको हथकड़ी डालकर अदालतमें गवाही देनेके लिए पेश किया गया।

सत्याग्रहियोंने कस्तूरबाको गांधीजीकी तीसरी जेल-यात्रापर बधाई दी।

चीनी सत्याग्रहियोंने गांधीजी और लिअंग क्विनके जेल जानेपर बधाई दी और निर्णय किया कि न्याय और आत्माभिमानके लिए संघर्ष जारी रखा जायेगा।

भारतीय सत्याग्रहियोंको निर्वासितकर डेलागोआ-बेके रास्ते भारत भेजना आरम्भ।

ब्रिटिश भारतीय संघने, ट्रान्सवाल और पुर्तगालकी सरकारोंने भारतीयोंके निर्वासनके लिए आपसमें जो प्रबन्ध किया था, उसका विरोध करते हुए ट्रान्सवाल गवर्नरको लिखा।

मार्च ११ : जोहानिसबर्गमें भारतीय महिलाओंने सभा की। कस्तूरबाने पत्र भेजा कि यदि मुझे पंख होते, तो मैं उड़कर सभामें आ जाती।

कस्तूरबा और अन्य चार महिलाओंके हस्ताक्षरसे ट्रान्सवालके अखबारोंके नाम पत्र भेजा गया।

डोकने जोहानिसबर्गके अखबारोंके नाम पत्र लिखा, जिसमें गांधीजीको हथकड़ी डालनेकी बातका उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि श्री गांधी-जैसे आदमीके इस अनावश्यक अपमानसे उपनिवेशके अधिकांश व्यक्ति लज्जाका अनुभव करते हैं।

मार्च १२ : 'इंडियन ओपिनियन' के विशेष संवाददाताने तार द्वारा खबर दी कि गांधीजी दुबले और बीमार दिखाई पड़ते हैं।

न्यासालैंडके भारतीयोंकी सभामें ट्रान्सवालके भारतीयोंके प्रति किये जानेवाले दुर्व्यवहार और साम्राज्यीय सरकारकी कमजोरियोंकी निन्दा की गई।

किम्बर्लेकी अश्वेत जातियोंकी सभामें इस बातपर चिन्ता प्रकट की गई कि प्रस्तावित संविधानमें उनके हितोंकी रक्षाकी समुचित व्यवस्था नहीं है।

मार्च १३: 'इंडियन ओपिनियन' ने गांधीजीके फोक्सरस्टसे प्रिटोरिया सेंट्रल जेल भेज दिये जानेके सम्बन्धमें इस सरकारी वक्तव्यकी आलोचना की कि ऐसा केवल प्रशासनिक सुविधाके खयालसे किया गया है; और लिखा कि इसका मन्शा केवल यह है कि श्री गांधीको अन्य लोगोंसे बिल्कुल अलग रखा जाये, ताकि उनके देश-भाइयोंको उनसे किसी तरहकी प्रेरणा और प्रोत्साहन न मिल सके।

ब्रिटिश भारतीय संघने हाई कमिश्नरसे प्रार्थना की कि वे निर्वासन नीतिके सम्बन्धमें एक शिष्टमण्डलसे मिलनेकी कृपा करें।

मार्च १४: डर्बनमें आयोजित नेटाल भारतीय कांग्रेसकी सभाने ट्रान्सवालके सत्याग्रहियोंका समर्थन किया और ट्रान्सवाल तथा डेलागोआ-बेके अधिकारियोंके बीच हुई निर्वासन-सम्बन्धी व्यवस्थाकी निन्दा की।

जोहानिसबर्गमें आयोजित ब्रिटिश भारतीय संघकी सभामें निश्चय किया गया कि जबतक सरकार भारतीयोंकी माँगोंको स्वीकार नहीं करती, तबतक पूरी शक्तिके साथ सत्याग्रह जारी रखा जायेगा।

मार्च १५: दक्षिण आफ्रिका अधिनियम (साउथ आफ्रिका ऐक्ट) का मसविदा दक्षिण आफ्रिकी संसदके सामने पेश किया गया; इस सम्बन्धमें कॉमन्स सभामें प्रश्न उठाया गया।

हाई कमिश्नरने निर्वासनके प्रश्नको लेकर मिलनेवाले ब्रिटिश भारतीय संघके शिष्टमण्डलको मुलाकात देनेसे इनकार कर दिया।

मार्च १६: डेलागोआ-बेमें भारतीयोंकी सभा; ट्रान्सवालकी स्थिति और निर्वासनके प्रबन्धके बारेमें अब्दुल्ला हाजी आदम और पोलक बोले; पुर्तगाली गवर्नर-जनरलके पास शिष्ट-मण्डल भेजनेका निश्चय किया गया।

मार्च १७: किम्बर्लेके भारतीयोंकी सभामें ट्रान्सवालमें भारतीयोंके साथ होनेवाले अन्यायपूर्ण व्यवहारके प्रति विरोध प्रकट किया।

ट्रान्सवालके गवर्नरने उपनिवेश-कार्यालयको तार दिया कि ऐसा कोई भी भारतीय देशसे निर्वासित नहीं किया गया जिसने अपना पंजीयन प्रमाणपत्र दे दिया हो। केवल वे ही एशियाई देशके बाहर निकाले गये हैं जिन्हें अधिवासका अधिकार नहीं था और जिन्हें मजिस्ट्रेटने निर्वासनका हुक्म दिया था।

ब्रिटिश भारतीय संघकी पोर्ट एलिजाबेथ शाखाने तार देकर वाइसरायसे आग्रह किया कि वे ट्रान्सवालके भारतीयोंके पक्षमें हस्तक्षेप करें।

मार्च १९: ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयने फैसला दिया कि खनिज क्षेत्रोंमें व्यापारिक परवाने प्राप्त करनेके सम्बन्धमें भारतीयोंपर कोई बन्दिश नहीं है।

मार्च २२: नेटाल नगर-पालिका संघने नगरपालिका कानून एकीकरण विधेयक (म्यूनिसिपल लॉ कंसॉलिडेशन बिल) में विवेक-सम्बन्धी धाराओंको अस्वीकृत करनेके लिए साम्राज्य सरकारकी आलोचना की।

मार्च २४: ईस्ट लंदनके ब्रिटिश भारतीय संघकी सभाने ट्रान्सवाल सरकारकी निर्वासन-नीतिकी निन्दा की।

मार्च २५: हमीदिया अंजुमनके हालमें भारतीय महिलाओंकी सभा हुई जिसमें श्रीमती थम्बी नायडू, श्रीमती पोलक और कुमारी श्लेसिनने भाषण दिये तथा भारतीय महिला समाजकी स्थापना की गई।

ईस्ट लन्दनके ब्रिटिश भारतीय संघने हाई कमिश्नर, उपनिवेश कार्यालय और भारतके वाइसरॉयके पास भारतीयोंके साथ किये जानेवाले दुर्व्यवहारके प्रति विरोध पत्र भेजे।

लॉर्ड सभामें लॉर्ड ऍम्टहिलके प्रश्नका उत्तर देते हुए लॉर्ड क्रू ने ट्रान्सवालकी निर्वासन-नीतिका समर्थन किया।

सूरती मसजिदके मौलवी अहमद खाँसे श्री जॉर्डनकी अदालतमें जिरह की गई। सूचना मिली कि प्रिटोरियामें पंजीयनका काम ठप है।

मार्च २६: केप टाउनमें भाषण देते हुए श्राइनरने रंग-भेदको संघके विधानका कलंक कहा। पोर्ट एलिजाबेथके ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा १७ मार्चको भेजे गये तारके जवाबमें भारत सरकारने आश्वासन दिया कि वह ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति होनेवाले व्यवहारको सुधारनेके प्रयत्न करती रहेगी; साथ ही यह भी कहा कि कानूनका उल्लंघन करनेकी सजामें हस्तक्षेप करना उसके वशकी बात नहीं है।

मार्च २७: जोहानिसबर्ग, वेरीनिगिंग और फोक्सरस्टमें और अधिक लोगोंके गिरफ्तार किये जाने, सजा दिये जाने और निर्वासित किये जानेका समाचार मिला।

खबर मिली कि ६५ कैदियोंको खानोंमें काम करनेके लिए फोक्सरस्टसे हाइडेलबर्ग ले जाया गया।

मार्च २८: ब्रिटिश भारतीय संघकी सभामें लॉर्ड क्रू के उस भ्रामक वक्तव्यके प्रति विरोध प्रकट किया गया, जो उन्होंने भारतीयोंको डेलागोआ-बेके रास्ते ट्रान्सवालसे निर्वासित करनेके सम्बन्धमें संसदमें दिया था।

दिलदारखाँ ब्रिटिश भारतीय संघके कार्यकारी अध्यक्ष चुने गये।

सत्याग्रहियोंके साथ ट्रान्सवाल सरकारके दुर्व्यवहारके प्रति हमीदिया इस्लामिया अंजुमन द्वारा विरोध प्रकट करनेका निश्चय।

मार्च २९: तीन महीने बाद जेलसे छूटनेपर थम्बी नायडू तथा अन्य लोगोंका ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा अभिनन्दन १५० से अधिक भारतीयोंके अभीतक जेलमें होनेकी खबर।

शेलत और १३ अन्य सत्याग्रही बारबर्टनमें रिहा किये गये, लेकिन निर्वासनके लिए पुर्तगालियोंके साथ प्रबन्ध होने तक उन्हें रोक रखा गया।

ट्रान्सवाल गवर्नरने उपनिवेश-मन्त्रीको सूचित किया कि पुर्तगाली अधिकारियोंने भारतीयोंको अपने सामान्य प्रवासी विनियमोंके अधीन निर्वासित किया।

ब्रिटिश भारतीय संघने ९ सितम्बर, १९०८ को जो प्रार्थनापत्र दिया था, उसके उत्तरमें ट्रान्सवालके गवर्नरने उपनिवेश-मन्त्रीका जवाब संघको भेजा। कहा गया कि ट्रान्सवाल सरकार पंजीयन अधिनियम रद नहीं करना चाहती और साम्राज्यीय सरकार उसे रद करवानेके लिए दबाव डालनेकी स्थितिमें नहीं है। प्रतिवर्ष ६ शिक्षित भारतीयोंके प्रवेशके सवालपर दोनों पक्षोंमें मतभेद केवल प्रवेशके तरीके और नियमको लेकर है।

अप्रैल १ : काछलियाके साहूकारोंकी तीसरी बैठकमें देनदारीका पूरा-पूरा भुगतान किया गया।

अप्रैल ३ : जर्मिस्टनकी महिलाओंने अपना संघ स्थापित किया।

'इंडियन ओपिनियन' के संवाददाताने सूचना दी कि वे सत्याग्रही, जो नेटालके अधिवासी हैं और जिनको निर्वासनका आदेश हुआ है, सिर्फ फोक्सरस्टकी सीमाके पार छोड़ दिये जायेंगे।

वारवर्टनकी सभामें निर्वासनकी नीतिका विरोध किया गया और गांधीजीने कष्टों और अपमानोंको जिस साहसके साथ सहन किया, उसकी सराहना की गई।

अप्रैल ५ के पहले : ब्रिटिश भारतीय संघ और ह० इ० अंजुमनने गांधीजी तथा अन्य लोगोंको धर्म और देशभाइयोंके लिए जेल जानेपर बधाई दी और संघर्ष जारी रखनेका निर्णय किया।

अप्रैल ६ : ब्रिटिश भारतीय संघने हाई कमिश्नरको पत्र लिखा, जिसमें उसने संघके निवेदन-पत्रको तार द्वारा उपनिवेश मन्त्रालयके पास न भेजनेके लिए उसकी निन्दा की।

ट्रान्सवालके चार भारतीय निर्वासित किये गये तथा वारवर्टनमें १० अन्य निर्वासित किये जानेकी प्रतीक्षामें।

अप्रैल ७ : पोलकने हमीदिया अंजुमनके हालमें जोहानिसवर्गके हिन्दुओंकी एक सभामें डीप-क्लूफ और हाइडेलवर्गकी जेलोंमें वन्द सत्याग्रहियोंकी स्थितिके वारेमें वताया। ब्रिटिश भारतीय संघने कार्यवाहक जेल-निदेशकको पत्र लिखकर वन्दियोंके साथ होनेवाले दुर्व्यवहारकी शिकायत की।

नेटालके प्रधान मंत्रीने संसदमें इस वातको गलत वताया कि गिरमिटिया एशियाई मजदूरोंका प्रवास जारी रखनेके लिए नेटाल सरकारने अन्य उपनिवेशोंसे समझौता किया है।

अप्रैल ११ : जोहानिसवर्गमें भारतीयोंकी आम सभा हुई, जिसमें वोथा द्वारा लॉर्ड क्रू के समक्ष दिये गये इस वक्तव्यका खण्डन किया गया कि वहुत-से एशियाई अपनी वर्तमान स्थितिसे सन्तुष्ट हैं। सभाने साम्राज्यीय सरकारसे अनुरोध किया कि वह हस्तक्षेप करके संघर्षको समाप्त करवाये।

अप्रैल १२ : गांधीजीको हथकड़ी पहनाकर पैदल ले जानेके वारेमें ब्रिटेनकी लोकसभामें प्रश्न उठाया गया।

२९ चीनी सत्याग्रहियोंको, जिनपर अँगूठोंकी छाप देनेसे या हस्ताक्षर करनेसे इनकार करनेका आरोप था, वरी कर दिया गया।

अप्रैल १४ : डॉ० अब्दुर्रहमानने केप टाउनमें आफ्रिकी राजनीतिक संगठनके सातवें वार्षिक सम्मेलनका उद्घाटन किया।

१६ भारतीयोंको, जो जोहानिसवर्गके पुराने निवासी थे, डेलागोआ-वेके रास्ते निर्वासित करके भारत भेज दिया गया।

अप्रैल १७ : 'इंडियन ओपिनियन' के संवाददाताने खबर दी कि गांधीजी प्रिटोरिया सेंट्रल जेलमें जेल विनियमोंके अन्तर्गत भारतीयोंके साथ वतनियों-जैसा व्यवहार किये जानेके विरोध-स्वरूप पूरा भोजन नहीं ले रहे हैं, और उन्होंने तवतक घी लेनेसे इनकार कर दिया है, जवतक कि सभी भारतीय कैदियोंको घी नहीं दिया जाता।

अप्रैल २२ : लॉर्ड सभामें लॉर्ड क्रू ने गिरमिटिया मजदूरों और शाही उपनिवेशोंमें भारतीयोंके प्रवासके बारेमें एक लम्बा वक्तव्य दिया।

अप्रैल २४ : चीनी सत्याग्रहियोंके संगठनने चीनियों द्वारा अँगुलियोंकी छाप देनेसे इनकार करनेकी सराहना की।

अप्रैल २६ : पोलकने 'रैंड डेली मेल' को पत्र लिखकर उसके सम्पादकीयमें संघर्षके बारेमें कही गई गलत बातोंका जोरदार खण्डन किया।

अप्रैल २७ : 'सरकारी गज़ट' में १८९४ के अधिनियम ५ के खण्ड ९ के अन्तर्गत बनाये गये जो नये विनियम प्रकाशित हुए उनके द्वारा यूरोपीय स्कूलोंमें वतनी, भारतीय या रंगदार बच्चोंका प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया।

अप्रैल २९ : तीन माहकी कैदकी सजा पूरी होनेपर काछलिया और १८ अन्य भारतीय रिहा किये गये।

अप्रैल ३० : मुहम्मद मकदाके मामलेमें सर्वोच्च न्यायालयने फैसला किया कि पंजीयन करनेसे इनकार करनेपर एशियाई पंजीयकके विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती।

मई १ : बोथाके इस कथनके सम्बन्धमें कि ट्रान्सवालके ९७ प्रतिशत एशियाई पहले ही पंजीयन करा चुके हैं, 'इंडियन ओपिनियन' ने स्पष्टीकरण देते हुए बताया कि इन एशियाइयोंने सत्याग्रह आन्दोलनके नेताओंके प्रयत्नोंके फलस्वरूप ही स्वेच्छया पंजीयनके अन्तर्गत पंजीयन कराया था।

मई ४ : ट्रान्सवालकी जेलोंमें कैद, भारतीय सत्याग्रहियोंको भोजनमें घी मिलना शुरू।
पी० के० नायडूको वेरीनिगिंगमें बिना परवाने व्यापार करनेपर ३ महीनेकी सजा दी गई।

मई १० : पंजीयकने जिन ९२ एशियाइयोंका पंजीयन करनेसे इनकार कर दिया था, उन्हें जोहानिसबर्गकी अदालतने निर्वासित करनेका आदेश दिया।

मई १५ : नेटाल भारतीय कांग्रेसने १८९४ के अधिनियम ५ के खण्ड ९ के अन्तर्गत बनाये गये विनियमोंको भारतीय छात्रोंके प्रति भेदभाव करनेवाला बताकर उनके विरुद्ध उपनिवेश सचिवको लिखा।

मई १९ : ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयने निर्णय दिया कि सरकारको १९०८ के नोटिसके अन्तर्गत पृथक बस्तियोंके निर्धारणको रद करनेका कोई अधिकार नहीं है।

मई २४ : प्रातः साढ़े सात बजे गांधीजीको प्रिटोरिया सेंट्रल जेलसे रिहा किया गया; मुस्लिम मस्जिदके हॉलमें आयोजित सभामें भाषण दिया।
'प्रिटोरिया न्यूज' के प्रतिनिधिको बताया कि १६ वर्षीय बालकको निर्वासित करके भारत भेजना निन्दनीय है। इस तरह भारतीयोंकी हिम्मत नहीं तोड़ी जा सकती।
पार्क-स्टेशन पहुँचनेपर उनका शानदार स्वागत किया गया। मस्जिदके अहातेमें आयोजित सभामें बोलते हुए उन्होंने भारतीयोंसे अन्यायी कानूनोंका मुकाबला करनेको कहा।
'प्रिटोरिया न्यूज' ने साम्राज्य दिवसपर गांधीजीकी रिहाईका स्वागत करते हुए अपने सम्पादकीयमें गांधीजीके ध्येयोंकी सराहना की।

मई २६ : अपने जेलके अनुभवोंके बारेमें जोहानिसबर्गके समाचारपत्रोंमें लिखा।

मई २९ : 'इंडियन ओपिनियन' में लिखे गये लेखमें सत्याग्रहके अर्थ और उसके परिणामों-पर विस्तारपूर्वक विचार व्यक्त किये। जेलके अनुभवोंके ऊपर एक लेख-माला शुरू की।
गैर-सत्याग्रहियों द्वारा ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय समझौता समिति स्थापित।

मई ३१: मद्रास नगरके भारतीयोंने ब्रिटिश संसदको एक प्रार्थनापत्र भेजकर १९०७ के अधिनियम २ को रद करने और ६ शिक्षित भारतीयोंको प्रवेश करनेका अधिकार देनेकी प्रार्थना की।

जून २: वेस्ट एण्ड हॉलमें आयोजित स्वागत-समारोहमें, और बादमें अस्वात और क्विनकी रिहाईपर आयोजित एक चाय-पार्टीमें गांधीजी बोले।

जून ३: प्रिटोरियाकी नगर-परिषदने रंगदार लोगों द्वारा नगरपालिकाके धुलाई-घरों (वाश हाउसेज़) का उपयोग करनेपर लगाये अपने प्रतिबन्ध उठा लिये।

जून ६: गांधीजी ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय समझौता समितिकी बैठकमें बोले। समितिने उपनिवेश-सचिवको प्रार्थनापत्र भेजनेका निर्णय किया।

जून ७: जर्मिस्टनकी साहित्यिक और वादविवाद समितिमें "सत्याग्रहकी आचार-नीति" विषयपर बोले।

जून ८: ट्रान्सवाल विधानसभामें उपनिवेश-सचिवने जी० सी० मनिक, संसद सदस्यकी माँगपर सन् १९०९ के दौरान ट्रान्सवालमें एशियाइयोंके प्रवेशका ब्योरा प्रस्तुत किया।
प्रचार-कार्यके लिए पोलक केप कालोनी रवाना।

जून ८ के बाद: 'ट्रान्सवाल लीडर' में पत्र लिखकर गांधीजीने माँग की कि मनिकने एशियाइयों-पर अवैध रूपसे ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेका जो आरोप लगाया है, उसे वापस लें।

जून १३: ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिने इंग्लैंड और भारत जानेवाले शिष्टमण्डलोंके सदस्योंका चुनाव किया।

जून १४: उपनिवेश-सचिवने नेटाल भारतीय कांग्रेसकी यह प्रार्थना अस्वीकृत कर दी कि १९०९ की सरकारी विज्ञप्ति संख्या २०१ के अन्तर्गत भारतीय शिक्षापर जो प्रतिबन्ध लगाया गया है उसे वापस ले लिया जाये।

जून १५: इमाम अब्दुल कादिर बावज़ीर रिहा किये गये। थम्बी नायडू, जी० पी० व्यास, एन० ए० कामा और यू० एम० शेलत जोहानिसबर्गमें गिरफ्तार कर लिये गये।
प्रिटोरियामें कुछ और तमिल भारतीय गिरफ्तार।

जून १६: गांधीजीने थम्बी नायडू तथा अन्य लोगोंकी पैरवी की।
इंग्लैंड और भारत जानेवाले शिष्टमण्डलोंके सदस्योंका चुनाव करनेके लिए आयोजित जोहानिसबर्गकी आम सभामें भाषण दिया। सभाने अ० मु० काछलिया, हाजी हबीब, बी० ए० चेट्टियार और गांधीजीको इंग्लैंडके लिए तथा एन० ए० कामा, एन० जी० नायडू, ई० एस० कुवाड़िया और एच० एस० एल० पोलकको भारतके लिए प्रतिनिधि चुना।
अ० मु० काछलिया, बी० ए० चेट्टियार और ई० एस० कुवाड़िया गिरफ्तार कर लिये गये।
काछलिया और चेट्टियारको ३ महीनेकी कैद या ५० पौंड जुर्मानेकी सजा दी गई।
ब्रि० भा० सं० के अध्यक्षने उपनिवेश-सचिवको तार देकर प्रार्थना की कि शिष्टमण्डलके सदस्योंकी सजा मुल्तवी कर दी जाये।

जून १७: गोपाल नायडू और भारत जानेवाले तमिलोंके अन्य प्रतिनिधि गिरफ्तार।
केप टाउनकी हमीदिया मुस्लिम अंजुमनने ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय मुसलमानोंके साथ होनेवाले दुर्व्यवहारके विरोधमें प्रस्ताव पास किया।

जून १८: उपनिवेश-सचिवने ब्रि० भा० संघ की यह प्रार्थना अस्वीकार कर दी कि मनोनीत प्रतिनिधियोंकी सजा मुल्तवी कर दी जाये। ये लोग शिष्टमण्डलके सदस्य होकर स्वदेश जानेवाले थे, इसकी जानकारीसे उन्होंने इनकार किया।
गांधीजीने 'स्टार' में एक पत्र लिखकर उपनिवेश-सचिवके इस दावेका खण्डन किया।
बहरामपुरमें आयोजित मद्रास प्रान्तीय सम्मेलनमें एक प्रस्ताव पास किया गया, जिसमें दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंके साथ होनेवाले अन्यायपूर्ण व्यवहारकी निन्दा की गई।

जून १९: गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में लेख लिखकर शिष्टमण्डल बाहर भेजना उचित बताया। यह सुझाव भी दिया कि आन्दोलनके बारेमें सही जानकारी देकर संघर्षको शीघ्र समाप्त करनेके उद्देश्यसे जानेवाले शिष्टमण्डलोंको समर्थन प्रदान करनेके लिए दक्षिण आफ्रिका-भरमें सभाएँ की जायें।
ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय समझौता समितिके प्रतिनिधिमण्डलने स्मट्ससे भेंट की।

जून २१ के पहले: ट्रान्सवालके भारतीयोंके नाम एक अपीलमें गांधीजीने जेल-यात्राको "रामबाण" बताया।
हबीब मोटनको पत्र लिखते हुए गांधीजीने वाइसरॉयकी परिषदमें मुसलमानकी नियुक्तिको उचित बताया और हिन्दू तथा मुसलमानोंके बीच सगे भाइयों-जैसा सम्बन्ध होनेकी आवश्यकतापर जोर दिया।

जून २१: इंग्लैंड जानेके लिए गांधीजी और हाजी हबीब केप टाउनको रवाना।
सत्याग्रही सामी नागप्पनको १० दिनकी सख्त कैदकी सजा दी गई।

जून २३: गांधीजीने 'केप टाइम्स' और 'केप आर्गस' के प्रतिनिधियोंको भेंट देते हुए इस बातकी आशंका प्रकट की कि यदि साम्राज्यीय सरकारने कुछ संरक्षण सुलभ न करवाये तो दक्षिण आफ्रिका संघ बननेपर एशियाई तबाह हो जायेंगे।
इंग्लैंडके लिए जहाजपर सवार हुए।
स्मट्सने ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय समझौता समितिके प्रार्थनापत्रको अस्वीकृत कर दिया।
कुवाड़िया और सोराबजीको तीन-तीन महीनेकी सजा।

जून २५: ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय समझौता समितिने स्मट्सको एक पत्र लिखकर इसपर खेद प्रकट किया कि उन्होंने प्रतिनिधिमण्डलको जो आश्वासन दिया था वे उससे मुकर गये हैं।
भारत जानेके लिए पोलक नेटाल रवाना।

जून २६: 'इंडियन ओपिनियन' में खबर छपी कि ब्रि० भा० सं० की समितिने अपनी बैठकमें कैलेनबैकको संघका अवैतनिक मन्त्री नियुक्त किया है।
पोर्ट एलिजाबेथके ब्रि० भा० संघने भारत सरकारको इस आशयका प्रार्थनापत्र लिखा कि उन कानूनोंको रद कर दिया जाना चाहिए जो सम्पूर्ण भारतके लिए अपमानजनक, साम्राज्यमें निरन्तर कटुताके कारण और दक्षिण आफ्रिकाके अन्य भागोंमें रहनेवाले भारतीयोंके लिए खतरनाक हैं।

जून ३०: नागप्पनको "मरणासन्न अवस्था" में जोहानिसबर्ग जेलसे रिहा कर दिया गया।

जुलाई २: लन्दनमें मदनलाल धींगरा नामक युवकने सर कर्ज़न वाइलीकी हत्या कर दी। डॉ० लालकाका भी मारे गये।

जुलाई ३: लन्दनमें भारतीय छात्रोंकी सभाने सुरेन्द्रनाथ बनर्जीके सभापतित्वमें वाइलीकी हत्याकी भर्त्सना की।

'इंडियन ओपिनियन' में छपा कि कानूनमें रंगभेद और जातीयताके कलंकको दूर कराने तथा एशियाई अधिनियमको रद करानेके लिए ट्रान्सवालके भारतीयोंकी ओरसे साम्राज्ञी, दादाभाई नौरोजी और बंगाल व्यापार संघ (चैम्बर ऑफ कॉमर्स) को जो प्रार्थनापत्र भेजे जानेवाले हैं, उनपर लोगोंके हस्ताक्षर कराये जा रहे हैं।

जुलाई ४: प्रिटोरियाकी भारतीय बस्तीमें भारतीय महिलाओंकी एक सभामें प्रिटोरियाके ७० भारतीयोंकी गिरफ्तारीपर क्षोभ व्यक्त किया गया।

जुलाई ६: नागप्पनकी मृत्यु।

जुलाई ७: भारतीय समाजकी ओरसे नागप्पनका सम्मानपूर्वक दाह संस्कार।

जुलाई ८: सरकारने एक वक्तव्यमें कहा कि नागप्पनकी मृत्युके लिए जेल-अधिकारी दोषी नहीं हैं।

जुलाई ९ के पूर्व: जहाजपर नेटालके मन्त्रिमण्डलके सदस्यों और रंगदार लोगोंके शिष्टमण्डलके सदस्योंसे भेंट।

जुलाई ९: बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके आगामी अधिवेशनके सभापति-पदके लिए गांधीजीका नाम भी प्रस्तावित किया।

जुलाई १०: गांधीजी और हाजी हबीब साउदैम्पटन पहुँचे। रायटरके प्रतिनिधिको भेंट दी। प्रातः साढ़े १० बजे लन्दन पहुँचे।

साउथ आफ्रिका असोशिएटेड प्रेस एजेंसीके प्रतिनिधिको भेंट दी।

रिच और अब्दुल कादिरसे मिले। सर मंचरजी भावनगरीसे मिलने गये। लॉर्ड ऍम्टहिलको पत्र लिखकर मुलाकातका समय माँगा।

६ भारतीय ट्रान्सवालसे निर्वासित।

ब्रि० भा० संघने जेल-निदेशकको पत्र लिखकर भारतीय बन्दियोंको भोजनमें फिरसे घी दिये जानेकी माँग की।

नेटालके भारतीयोंने उपनिवेश-मन्त्रीको गिरमिट मताधिकार तथा व्यापार-सम्बन्धी शिकायतोंके बारेमें प्रार्थनापत्र भेजा और संघीकरण कानूनके मसविदेमें संशोधनकी माँग की।

जुलाई ११: हबीबिया मुस्लिम अंजुमन द्वारा आयोजित आम सभामें ट्रान्सवाल और नेटालके शिष्टमण्डलोंके साथ सहानुभूति प्रकट की गई। केप टाउनकी ब्रिटिश भारतीय लीगने प्रस्ताव पास किया जिसमें साम्राज्यीय सरकारसे ट्रान्सवालके शिष्टमण्डलकी बातोंको सहानुभूतिके साथ सुननेका आग्रह किया।

जोहानिसबर्गमें हमीदिया मस्जिदके मैदानमें भारतीयोंकी आम सभा; जिसमें साम्राज्यीय सरकारसे ट्रान्सवालके शिष्टमण्डलके निवेदनपर सहानुभूतिपूर्वक विचार करने और नागप्पनकी मृत्युके कारणोंकी जाँच करवानेकी माँगके प्रस्ताव पास।

जुलाई १२: ब्रि० भा० संघने गांधीजीको तारसे नागप्पनकी मृत्यु और अस्वस्थताके कारण दाउद मुहम्मदके रिहा किये जानेकी खबर दी।

विलियम हॉस्केन तथा १५ अन्य प्रमुख यूरोपीयोंने ट्रान्सवालके महान्यायवादी अटर्नी

जनरलको प्रार्थनापत्र दिया कि नागप्पन तथा गिवन नामक गोरे कैदीकी मृत्युके कारणोंकी खुली जाँच कराई जाये।

जुलाई १४ के पूर्व: गांधीजीने न्यायमूर्ति अमीर अली।

जुलाई १४: 'इंडिया' के सम्पादक एच० ई० कॉटन, सर रिचर्ड और लॉर्ड ऍम्टहिलसे भेंट की। साम्राज्ञीके नाम ट्रान्सवालकी भारतीय महिलाओंका प्रार्थनापत्र प्रेषित।

जुलाई १६: सर विलियम ली-वार्नर गांधीजीसे मिलने आये।
१४ भारतीयोंको ट्रान्सवालसे निर्वासितकर भारत भेज दिया गया।

जुलाई १८: प्रिटोरियाकी आम सभामें साम्राज्यीय सरकारसे अनुरोध किया गया कि वह शिष्टमण्डलके निवेदनोंपर सहानुभूतिपूर्वक विचार करे।

जुलाई १९: मेजर डिक्सनकी अध्यक्षतामें नागप्पनकी मृत्युके कारणोंकी खुली जाँच की कार्रवाई शुरू।

जुलाई २०: गांधीजीने लॉर्ड क्रू को पत्र लिखकर निजी तौरपर मुलाकातका समय माँगा।

जुलाई २१: गांधीजीने न्यायमूर्ति अमीर अली, सर विलियम ली-वार्नर और थियोडोर मॉरिसनसे भेंट की।

जुलाई २२: 'साउथ आफ्रिका' में पत्र लिखकर उस समाचारपत्रके इस आरोपका खण्डन किया कि लॉर्ड ऍम्टहिल और दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति भारतके उग्रवादी आन्दोलनसे सम्बन्धित है।
डॉ० अब्दुर्रहमान और श्राइनरके नेतृत्वमें रंगदार लोगों और वतनियोंके शिष्टमण्डलने लॉर्ड क्रू से भेंट की।

जलाई २३: गांधीजीने गोखलेको पत्र लिखकर अनुरोध किया कि पोलक जिस कामसे भारत गये हैं उसमें वे उनकी मदद करें।

जुलाई २६: गांधीजी और हाजी हबीब निजी तौरपर लॉर्ड मॉर्लेसे मिले।
गांधीजीने लॉर्ड मॉर्लेको पत्र लिखकर १९०७ के अधिनियम २ और शिक्षित भारतीयोंके प्रवासपर प्रतिबन्धसे सम्बन्धित शिकायतोंके अलावा भू-स्वामित्व और ट्रामगाड़ीमें यात्रा करनेपर लगे प्रतिबन्धोंके विरुद्ध शिकायत की।

जुलाई २७: लॉर्ड सभामें दक्षिण आफ्रिका संघ विधेयकका द्वितीय वाचन।

जुलाई २८: कॉमन्स सभामें कर्नल सीलीने बताया कि ट्रान्सवालके भारतीयोंके बारेमें जनरल बोथाको निश्चित सुझाव भेजे गये थे, और वे सचमुच समस्याका कोई हल निकालनेको उत्सुक हैं।

जुलाई २९: गांधीजीने लॉर्ड ऍम्टहिलको पत्र लिखकर इस बातसे इनकार किया कि ट्रान्सवालके सत्याग्रह आन्दोलन और भारतके "राजद्रोही दल" के बीच किसी प्रकारका कोई सम्बन्ध है।
प्रवासी कानूनमें संशोधन करनेका सुझाव दिया ताकि प्रवासी अधिकारीको केवल ६ भारतीयोंको उपनिवेशमें प्रवेश देनेका अधिकार मिल सके।
लॉर्ड ऍम्टहिलको "ट्रान्सवालके भारतीयोंके मामलेका विवरण" के प्रूफ भेजे।
जेम्स हॉलमें गांधीजीने मताधिकार आन्दोलन चलानेवाली महिलाओंकी सभामें भाग लिया।
श्रीमती पैंकहर्स्टसे भेंट की।

रंगदार लोगों और वतनियोंके शिष्टमण्डलने श्राइनरके नेतृत्वमें कॉमन्स सभाके उदार-दलीय और मजदूरदलीय सदस्योंसे भेंट की और संघ विधेयकमें संशोधन पेश करनेका अनुरोध किया।

जुलाई ३१ : नेटालका शिष्टमण्डल लन्दन पहुँचा। गांधीजी और दूसरे लोगोंने अगवानी की। पोलक बम्बई पहुँचे।

अगस्त २ : प्रिटोरियाकी महिलाओंने भारतीय महिला संघकी स्थापना की।

अगस्त ३ : 'इंग्लिशमैन' को पत्र लिखकर गांधीजीने पंजीयन अधिनियम, गिरमिट प्रथा आदिके बारेमें छपी भ्रामक बातोंका जवाब दिया, और कहा कि ब्रिटिश भारतीय १५ वर्षोंसे गिरमिट प्रथा बन्द करानेके लिए आन्दोलन कर रहे हैं।

अगस्त ४ : लॉर्ड ऍम्टहिलको एक पत्र लिखकर इस आरोपका पूरी तरह खण्डन किया कि ट्रान्सवालके सत्याग्रह आन्दोलनको भारतसे सहायता या उत्तेजन मिलता है, और कहा कि सत्याग्रह आन्दोलनका भारतकी हिंसावादी पार्टीसे कोई सम्बन्ध नहीं है।

मेजर डिक्सनने नागप्पनकी मृत्युकी जाँचकी रिपोर्ट प्रकाशित की।

यूरोपीय समितिके अध्यक्ष विलियम हॉस्केनने जेलोंकी खुराकमें सुधारकी माँगका समर्थन करते हुए जेल-निदेशकसे पत्र-व्यवहार शुरू किया।

अगस्त ६ : लॉर्ड ऍम्टहिल द्वारा सुझाये गये परिवर्तनों आदिको शामिल करनेके बाद गांधीजीने अपने "वक्तव्य" की प्रतियाँ उन्हें भेजीं।

अगस्त ९ : गांधीजी और लॉड ऍम्टहिलने स्मट्सके सुझावोंपर विचार-विमर्श किया। गांधीजीने स्मट्सको प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके सम्बन्धमें संशोधन भेजा, जिसके अनुसार गवर्नरको यह अधिकार दिया जाता कि वह किसी भी जातिके प्रवासियोंकी संख्या सीमित कर सकता है।

डोक-लिखित (स्वयं गांधीजीकी) जीवनीके प्रूफ लॉर्ड ऍम्टहिलको भेजे।

नेटालके भारतीय शिष्टमण्डलने लॉर्ड क्रू के पास प्रार्थनापत्र भेजा।

हरिलाल गांधी तथा अन्य लोग हाइडेलबर्गमें रिहा किये गये, और सोराबजी शापुरजी डीपक्लूफ जेलसे छोड़े गये।

अगस्त १० : गांधीजी और हाजी हबीबने लॉर्ड क्रू से भेंट की। गांधीजीने प्रवासी अधिनियममें अपने सुझाये संशोधनके बारेमें ब्रि० भा० संघ और पोलकको तार दिया।

श्राइनरके नेतृत्वमें रंगदार लोगों और वतनियोंके शिष्टमण्डलने कॉमन्स सभाके मजदूर-दलके सदस्योंकी बैठकमें भाग लिया। दलने संघ विधेयकमें संशोधनका समर्थन करनेका आश्वासन दिया।

लॉर्ड ऍम्टहिलने स्मट्स और गांधीजीसे बातचीत की।

बादमें स्मट्सको प्रवासी अधिनियममें संशोधनका मसविदा भेजते हुए अधिनियमको रद करने और प्रतिवर्ष छः शिक्षित भारतीयोंको प्रवेशकी अनुमति देनेका अनुरोध किया।

अगस्त ११ : गांधीजीने लॉर्ड क्रू से अनुरोध किया कि वे हस्तक्षेप करके १०० ब्रिटिश भारतीयोंका आसन्न निर्वासन रोकें।

लॉर्ड ऍम्टहिलको पत्र लिखा कि प्रवासी अधिनियममें प्रस्तावित संशोधनसे "किसी महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तका हनन" नहीं होता।

लॉर्ड ऍम्टहिलने लॉर्ड क्रू को यह अनुरोध करते हुए पत्र लिखा कि वे गांधीजी द्वारा जनरल स्मट्सको सुझाये गये फार्मूलेके आधारपर समझौता करानेमें मदद करें।

पारसी रुस्तमजीको ६ महीनेकी कैदकी और सजा दी गई।

जोहानिसबर्गमें भारतीयोंकी आम सभामें सोराबजी शापुरजी, हरिलाल गांधी और अन्य लोगोंका स्वागत किया गया। शिष्टमण्डल भेजनेके विचारका समर्थन किया गया; साम्राज्यीय सरकारसे हस्तक्षेप करनेका अनुरोध किया गया और नागप्पनकी मृत्युके बारेमें जाँच आयोगके निष्कर्षोंपर असन्तोष व्यक्त किया गया।

अगस्त १२: लॉर्ड क्रू ने नेटालके भारतीय शिष्टमण्डलको सूचित किया कि वर्तमान कानूनोंको रद नहीं किया जा सकता, और संघकी स्थापनाके बाद हालतमें सुधार होगा।

अगस्त १३: नेटालके शिष्टमण्डलने भारतके वाइसरॉयको अपनी शिकायतोंका विवरण प्रेषित करते हुए उन्हें एक पत्र लिखा।

अगस्त १६: गांधीजीने जेलमें मुहम्मद खाँके साथ किये गये दुर्व्यवहारके सम्बन्धमें उसका शिकायतपत्र लॉर्ड क्रू को प्रेषित करते हुए उन्हें चिट्ठी लिखी।

लॉर्ड ऍम्टहिलको पत्र लिखा कि नागप्पनकी मृत्युके सिलसिलेमें लगाये गये आरोप जाँचसे काफी हदतक सिद्ध हो गये हैं।

अगस्त १७: मदनलाल धींगराको फाँसी दे दी गई।

अगस्त १८: डर्बनमें हुई नेटाल भारतीय कांग्रेसकी सभामें इंग्लैंड जानेवाले शिष्टमण्डलका समर्थन किया गया और ट्रान्सवालके भारतीयोंके प्रति होनेवाले दुर्व्यवहारकी आलोचना की गई।

अगस्त १९: गांधीजीने फीनिक्सके पुस्तकालयके लिए पुस्तकें खरीदीं।

अगस्त २०: 'इंडियन ओपिनियन' को भेजे गये अपने साप्ताहिक संवादपत्रमें इस बातपर जोर दिया कि सत्याग्रह ही नेटालके भारतीयोंकी मुक्तिका एकमात्र मार्ग है।

अगस्त २१: गांधीजी श्राइनरसे मिले।

विटवॉटर्सरैंड चर्च कौंसिलने एक प्रस्ताव पास करके वतनियोंके लिए प्रतिनिधित्वकी माँग की।

अगस्त २२: गांधीजी व्हाइटवेका ग्रामीण क्षेत्र देखने गये।

अगस्त २५: पोलकको सत्याग्रह आन्दोलनके सहायतार्थ पैसा-चन्दा शुरू करनेका सुझाव देते हुए पत्र लिखा।

अगस्त २९: रायटरके प्रतिनिधिको भेंट देते हुए स्मट्सने कहा: "अपने कुछ अतिवादी प्रतिनिधियों द्वारा चलाये जा रहे आन्दोलनसे ट्रान्सवालके अधिकांश भारतीयोंका जी पक चुका है . . .।"

अगस्त ३०: गांधीजीने स्वामी शंकरानन्द द्वारा की गई इस्लामकी आलोचनाकी निन्दा करते हुए उन्हें पत्र लिखा।

स्मट्सने लॉर्ड ऍम्टहिलको उन सुझावोंके बारेमें लिखा जो उन्होंने (ऍम्टहिलने) १९०७ के अधिनियम २ को रद करने और एक सीमित संख्यामें शिक्षित भारतीय प्रवासियोंको स्थायी निवासके प्रमाणपत्र देनेके बारेमें लॉर्ड क्रू को भेजे थे।

लॉर्ड ऍम्टहिलने लॉर्ड क्रू से संसदमें ट्रान्सवालकी समस्याके बारे में वक्तव्य देनेका अनुरोध किया; बादमें उनसे मिले भी और "अधिकार" के प्रश्नपर विचार किया।

सितम्बर १ : गांधीजीने लॉर्ड ऍम्टहिलको सूचित किया कि स्मट्सके सुझावोंसे तो जातीय अपमान और भी गम्भीर हो जाता है; उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि "अधिकार" के प्रश्नपर वे अपने मौजूदा रवैयेमें कोई परिवर्तन नहीं कर सकते।

सितम्बर २ : गांधीजीने पोलकको स्मट्सके सुझावके बारेमें तार भेजा, और सलाह दी कि बम्बईमें शेरिफके सहयोगके बिना, स्वतन्त्र रूपसे, आम सभा आयोजित की जाये।

स्मट्सने रायटरको मुलाकात देते हुए समझौतेका जो उल्लेख किया था, गांधीजीने लॉर्ड क्रू से उसके बारेमें सही जानकारी देनेका अनुरोध किया।

गांधीजीने लॉर्ड ऍम्टहिलको एक पत्र लिखा जिसमें भारतीयों और चीनियोंकी गिरफ्तारी फिरसे शुरू करके ट्रान्सवाल सरकारने जो जेहाद बोला था, उसका स्वागत किया।

सितम्बर ६ : उपनिवेश कार्यालयको पत्र लिखकर इस बातपर जोर दिया कि मैंने "समझौता वार्तापर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े, इस खयालसे सार्वजनिक गतिविधियोंसे अपनेको बिल्कुल अलग कर रखा है।"

अमीर अलीको पत्र लिखा कि मेरे जीवनका उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि हिन्दू-मुस्लिम सहयोग भारतकी मुक्तिकी अनिवार्य शर्त है।

सितम्बर ७ : खुशालचन्द गांधीको लिखा कि फीनिक्समें होनेवाले सभी काम धार्मिक हैं।

सितम्बर ९ : ब्रि० भा० संघने जोहानिसबर्गके जेल-निदेशकसे अनुरोध किया कि रमजानके महीनेमें मुसलमान कैदियोंको विशेष सुविधाएँ दी जायें।

सितम्बर १० : गांधीजीने उपनिवेश कार्यालयको पत्र लिखकर स्मट्स द्वारा रायटरको दिये गये इस वक्तव्यका खण्डन किया कि अधिकांश भारतीयोंने पंजीयन अधिनियम स्वीकार कर लिया है; और इस बातका दावा किया कि अधिनियमके खिलाफ भारतीयोंका विरोध अब भी पहले-जैसा ही प्रबल है।

इंग्लैंडमें मताधिकारकी माँग करनेवाली महिलाओंकी हिंसात्मक कार्रवाइयोंकी निन्दा करते हुए कहा कि भारतीयोंको "सत्याग्रहकी तलवार कभी नहीं छोड़नी चाहिए।"

ब्रि० भा० संघने 'स्टार' में एक पत्र लिखकर सुपरिन्टेन्डेन्ट वरनॉन द्वारा अदालतमें दिये गये इस वक्तव्यके प्रति विरोध प्रकट किया कि एशियाइयोंको देशसे निकाल बाहर करना चाहिए।

'टाइम्स'में प्रकाशित नेटाल शिष्टमण्डलके पत्रमें नेटालके भारतीयोंकी तिहरी निर्योग्यताओंकी ओर ध्यान आकर्षित किया गया और साम्राज्यीय सरकारसे अनुरोध किया गया कि यदि ये शिकायतें दूर नहीं की जातीं तो भारतसे गिरमिटिया मजदूरोंको लाना बन्द कर दिया जाये।

सितम्बर ११ : 'टाइम्स ऑफ नेटाल' में समाचार प्रकाशित हुआ कि नेटाल विधान सभाने भारतीयोंकी उच्चशिक्षाके अनुदानोंमें कटौती कर दी है।

सितम्बर १३ : गांधीजी लन्दनमें आयोजित पटेटी-उत्सवमें सम्मिलित हुए; प्रमुख पारसी सत्याग्रहियोंका अभिनन्दन किया।

सितम्बर १४ : बम्बईमें आयोजित सार्वजनिक सभामें शाही सरकारसे दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके प्रति किये जानेवाले अन्यायको रोकनेकी अपील और नेटालमें गिरमिटिया प्रथाके बन्द किये जानेकी माँग।

सितम्बर १५ : काछलिया, चेट्टियार और थम्बी नायडूके जेलसे छूटनेपर जोहानिसबर्गमें उनके अभिनन्दनके लिए सार्वजनिक सभा आयोजित; डोक, हॉवर्ड और अन्य यूरोपीयोंके भाषण।
८० चीनी सत्याग्रही गिरफ्तार।

सितम्बर १६ : गांधीजी और हाजी हबीब लॉर्ड क्रू से मिले और कहा कि यदि प्रवेशका सैद्धान्तिक अधिकार स्वीकार कर लिया जाये तो वे भविष्यमें आन्दोलन न चलानेका वचन देनेको तैयार हैं।
६७ चीनियोंपर जोहानिसबर्गमें पंजीयन प्रमाणपत्र पेश न करनेका आरोप लगाया गया।
जेल-निदेशकने रमजानमें मुसलमान कैदियोंको कुछ विशेष सुविधाएँ देनेके बारेमें ब्रि० भा० संघकी प्रार्थनाको अस्वीकार कर दिया।
सूरत सार्वजनिक सभामें पोलकका भाषण।

सितम्बर १७ : गांधीजीने शरीरको आत्मासे अधिक महत्त्व न देनेकी सीख देते हुए मणिलाल गांधीको पत्र लिखा, जिसमें यह विचार भी व्यक्त किया कि कस्तूरबाके इनकार करनेपर वे उन्हें कदापि गोमांसका सूप नहीं देते, भले ही इसके बिना उनकी मृत्यु हो जाती।

सितम्बर १८ : से पहले : नेटालके शिष्टमण्डलने अखिल भारतीय मुस्लिम लीगके अली इमामसे भेंट की।

सितम्बर १८ : लॉर्ड मॉर्लेसे निवेदन किया कि मुसलमान कैदियोंको रमजानमें सुविधाएँ न देना धर्मपर आघात होगा।
लॉर्ड ऍम्टहिलको पत्र लिखा, जिसमें स्मट्ससे प्रतिकूल उत्तर न मिले इस दृष्टिसे सर जॉर्ज फेरारकी सहानुभूति प्राप्त करनेका अनुरोध किया, और स्मट्ससे प्रतिकूल उत्तर मिलनेकी दशामें शिष्टमण्डलके द्वारा सार्वजनिक कार्रवाईको आवश्यक बताया।

सितम्बर २२ : जोहानिसबर्गमें चीनी सत्याग्रहियोंने अपनी बैठकमें सत्याग्रह संग्रामको समर्थन देते रहनेका प्रण किया और विदेश भेजे गये शिष्टमण्डलके प्रयत्नोंके प्रति हमदर्दी जाहिर की।
ई० एस० कुवाड़िया और उमरजी साले डीपक्लूफ जेलसे छूटे।

सितम्बर २३ : गांधीजीने उपनिवेश कार्यालयसे पूछा कि उनके संशोधनके सम्बन्धमें लॉर्ड क्रू जो तार भेजनेवाले थे उसका स्मट्सकी ओरसे कोई जवाब आया है या नहीं।
पोलकको भारतमें सत्याग्रह-संघर्षपर एक निबन्ध प्रतियोगिताका आयोजन करनेका सुझाव दिया।

सितम्बर २४ : दोपहरका भोजन रेवरेंड एफ० बी० मायरके साथ किया।

सितम्बर २७ : पूनाकी सार्वजनिक सभामें पोलक और गोखलेने भाषण दिये।

सितम्बर २८ : गांधीजीने 'ऍडवोकेट ऑफ इंडिया' द्वारा पोलकपर लगाये गये आरोपोंका खण्डन करते हुए उक्त समाचार पत्रको एक चिट्ठी लिखी।

सितम्बर २९ : स्मट्सने अपने एक कार्य-विवरणमें इस बातसे इनकार किया कि ऑरेंज रिवर कालोनीमें अधिकृत रूपसे बसे किसी भी एशियाईको ट्रान्सवालसे निर्वासित कर भारत भेजा गया है।
पोलकने पूनामें महिलाओंकी सभामें भाषण दिया; सभाकी अध्यक्षता रमाबाई रानडेने की।

सितम्बर ३० : ट्रान्सवाल सरकारने एक कार्य-विवरणमें भारतीय कैदियोंके साथ दुर्व्यवहारकी शिकायतका खण्डन करते हुए अपनेको नागप्पनकी मृत्युके लिए जिम्मेदार माननेसे इनकार किया।

अक्तूबर १ : गांधीजीने टॉल्स्टॉयको सत्याग्रह आन्दोलन और उनके द्वारा लिखे "एक हिन्दूके नाम पत्र" के बारेमें लिखा।

अली इमामके सम्मानमें दिये गये भोजमें भाषण दिया।

अक्तूबर ४ : उपनिवेश कार्यालयने गांधीजीको सूचित किया कि स्मट्सके सुझावोंके अनुसार नया कानून बनाने-न-बनानेके बारेमें पहल करना उपनिवेश सरकारका काम है।

अक्तूबर ५ : गांधीजीने प्रभावशाली व्यक्तियोंको ट्रान्सवालकी स्थितिसे अवगत करानेके लिए सार्वजनिक कार्रवाई प्रारम्भ करनेकी इच्छा व्यक्त करते हुए लॉर्ड ऍम्टहिलको पत्र लिखा।

लन्दनमें गुजरातियोंकी सभामें भाषण दिया और उन्हें अपनी मातृभाषाके प्रति अनुराग वृत्तिका विकास करनेकी सलाह दी।

अक्तूबर ६ : पोलकके नाम एक पत्रमें इस बातपर जोर दिया कि भारतको चाहिए कि वह ट्रान्सवालके संघर्षको अपनी स्वतन्त्रताके आन्दोलनका ही एक हिस्सा समझे और उसमें मदद करे।

लॉर्ड ऍम्टहिलसे आगामी कार्यक्रमके बारेमें विचार-विमर्श किया।

द० आ० ब्रि० भा० संघने नेटालके शिष्टमण्डलके स्वागतका आयोजन किया।

अक्तूबर ७ : गांधीजी महिला मताधिकारके सिलसिलेमें आयोजित सभामें गये।

डोकने 'रैंड डेली मेल' को जेलमें काफिरों द्वारा गांधीजीपर किये गये हमलेके बारेमें लिखा।

टॉल्स्टॉयने गांधीजीके अक्तूबर १ के पत्रका उत्तर दिया।

अक्तूबर ८ : गांधीजीने 'गुजराती पंच' को भेजे सन्देशमें कहा कि वे ट्रान्सवालमें चल रहे "जीवन मरणके संघर्ष" में पूरी तरह रत हैं।

उपनिवेश कार्यालयसे स्मट्सके बारेमें ठीक-ठीक रवैयेकी जानकारी माँगी "ट्रान्सवालके भारतीयोंके मामलेका विवरण" नामकी पुस्तिकाकी २००० प्रतियाँ मुद्रित करनेका आर्डर दिया।

इमर्सन क्लबकी सभामें कष्ट-सहनका गुण-गान किया।

जिन ६७ चीनियोंपर एशियाई अध्यादेशके अन्तर्गत आरोप लगाया गया था, वे बरी कर दिये गये।

सैंडर्सन समितिकी भारतीय प्रवास सम्बन्धी जाँच पूरी होनेकी खबर; समितिके मतमें भारतसे मजदूर लाना बन्द करना गोरोंके लिए बहुत हानिकर।

अक्तूबर ११ : मद्रासमें तुर्की वाणिज्यदूतकी अध्यक्षतामें सार्वजनिक सभा; पोलकने भाषण दिया।

अक्तूबर १२ : मणिलाल गांधीको लिखे गये पत्रमें गांधीजीने कहा कि सुन्दर जीवन बिताना सीखना ही सच्ची शिक्षा है।

निर्वासित भारतीयोंकी मददके लिए कोष स्थापित।

अक्तूबर १३ : गांधीजीने हैम्पस्टेडकी शान्ति और पंच फैसला समिति [पीस ऍंड आर्बिट्रेशन सोसाइटी] में "पूर्व और पश्चिम' पर भाषण दिया।

अक्तूबर १४ : लॉर्ड ऍम्टहिलके नाम पत्रमें लिखा कि यदि अधिकार सिद्धान्तरूपमें स्वीकार नहीं किया जाता तो सत्याग्रह बन्द नहीं होगा।

पोलकके नाम पत्रमें आधुनिक सभ्यतापर अपने वे विचार व्यक्त किये, जिन्हें आगे चलकर 'हिन्द स्वराज्य' में विस्तारसे लिखा।

अक्तूबर १५: उपनिवेश कार्यालयने गांधीजीको सूचित किया कि जिन प्रस्तावोंको ट्रान्सवालके कानूनका सम्भाव्य आधार कहा गया था वे स्मट्स द्वारा प्रस्तुत सुझाव थे, न कि गांधीजी द्वारा प्रस्तुत।

अक्तूबर १७: भारतीय एकता समिति [इंडियन यूनियन सोसाइटी] की बैठकमें भाषण देते हुए अली इमामने हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यपर जोर दिया।

थम्बी नायडू और अन्य व्यक्ति जोहानिसबर्गमें गिरफ्तार; ३-३ महीनेकी सजा।

अक्तूबर १९: गांधीजीने उपनिवेश कार्यालयको स्थितिकी सही-सही जानकारी देनेको लिखा। और भी भारतीय गिरफ्तार; ३-३ महीनेकी सजा। सोराबजी शापुरजी तथा एस० बी० मेढ़ निर्वासित।

अक्तूबर २०: ब्रि० भा० संघके कार्यवाहक अध्यक्ष ई० आई० अस्वातको तीन महीनेकी सजा। सोराबजी शापुरजी और एस० बी० मेढ ट्रान्सवाल लौटते हुए फोक्सरस्टकी सीमापर गिरफ्तार।

अक्तूबर २४: गांधीजीने लन्दनमें विजयादशमी समारोहकी अध्यक्षता की और उक्त अवसर-पर भाषण दिया।

अक्तूबर २५: नेटाल विधान सभामें भारतीय प्रवासी कानून संशोधन विधेयकका तीसरा वाचन। सोराबजी शापुरजी और एस० बी० मेढको निषिद्ध प्रवासी होनेके अपराधमें ६-६ महीनेकी सजा।

अक्तूबर २६: पोलक द्वारा पूरे मद्रास अहातेमें सफल सभाओंकी सूचना।

अक्तूबर २९: गांधीजीने लॉर्ड ऐम्टहिलको दक्षिण आफ्रिका लौटनेके निर्णयकी सूचना दी और ट्रान्सवालकी सीमापर गिरफ्तार होनेका इरादा भी बताया।

ऐलमर मॉडसे सत्याग्रहके बारेमें विचार-विमर्श करनेके लिए मुलाकातका समय माँगा, और टॉल्स्टॉय द्वारा लिखे "एक हिन्दूके नाम पत्र" के प्रकाशनके सम्बन्धमें सलाह देनेको कहा।

गांधीजीको पोलकका तार मिला कि भारतकी यात्रा करें।

वापस लौट आनेके लिए दक्षिण आफ्रिकासे तार।

अक्तूबर २९ के बाद: भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसको सन्देश भेजा।

अक्तूबर ३०: भारतीय एकता समिति [इंडियन यूनियन सोसाइटी] की सभामें भाषण दिया। लॉर्ड ऐम्टहिलके नाम पत्रमें भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन और आधुनिक सभ्यतापर अपने विचार व्यक्त किये।

नवम्बर १: हरिलाल गांधी फोक्सरस्टमें गिरफ्तार; फिर ६ महीनेकी कैदकी सजा दी गई।

नवम्बर २: गांधीजीने लन्दनकी एक सभामें भाषण किया; कई भारतीयों और कुछ अंग्रेजोंने स्वयंसेवकोंकी सूचीमें अपने नाम लिखवाये।

नवम्बर ३: उपनिवेश कार्यालयने गांधीजीको सूचित किया कि लॉर्ड क्रू प्रवासके मामलेमें सैद्धान्तिक समानताको मान्यता दिलानेका कोई आश्वासन नहीं दे सकते।

नवम्बर ५: गांधीजीने "ट्रान्सवालके भारतीयोंके मामलेका विवरण" और अखबारोंके लिए तैयार किया गया उसका सार-संक्षेपमें प्रकाशनार्थ भेज दिया।

नवम्बर ६ : ट्रान्सवालके भारतीयोंसे सहानुभूति रखनेवाले अंग्रेजोंकी एक सभामें गये।
विदा लेते हुए उपनिवेश कार्यालयको पत्र लिखकर आशा व्यक्त की कि ट्रान्सवालके प्रवासी कानूनोंसे रंगभेदपर आधारित प्रतिबन्धोंको हटवानेके लिए लॉर्ड क्रू अब भी अपने प्रभावका उपयोग करेंगे।

नवम्बर ७ : टोंगाटमें आयोजित भारतीयोंकी एक सभामें निर्णय हुआ कि गिरमिटिया मजदूरोंका नेटाल भेजना रुकवानेके लिए एक शिष्टमण्डल भारत भेजा जाये।

नवम्बर ९ : गांधीजीने रायटरके प्रतिनिधिको भेंट दी। 'टाइम्स' ने लिखा कि ट्रान्सवालके एशियाई कानूनोंसे सम्बन्धित वार्ता विफल हो गई है।
उपनिवेश कार्यालयने एक कार्य-विवरणमें लिखा : "हम कानूनकी दृष्टिमें समानताके उनके [गांधीजीके] दावेके औचित्यसे इनकार नहीं कर सकते। यह एक बुनियादी सिद्धान्त है।"

नवम्बर १० : 'डेली एक्सप्रेस' के प्रतिनिधिको भेंट देते हुए गांधीजीने कहा कि सत्याग्रह आन्दोलन "पूरे जोरसे" जारी रहेगा।
टॉल्स्टॉयके पत्रकी प्राप्ति सूचित करते हुए उन्हें एक चिट्ठी लिखी; डोक-लिखित अपनी जीवनीकी एक प्रति भी भेजी।
पोलकसे प्राप्त वह तार लॉर्ड क्रू को भेजा, जिसमें ट्रान्सवालके भारतीयोंकी सहानुभूतिमें होनेवाली सभाका संक्षिप्त विवरण दिया गया था।

नवम्बर ११ : 'डेली टेलीग्राफ' को एक पत्र लिखकर ब्रिटेनके समाचारपत्रोंसे अनुरोध किया कि वे ट्रान्सवालके संघर्षका समर्थन करें।
गोखलेको पत्र लिखकर दक्षिण आफ्रिका आने और संघर्षमें भाग लेनेका निमन्त्रण दिया।
उपनिवेश कार्यालयको पत्र लिखा कि ट्रान्सवालकी जेलोंकी दशाके खिलाफ की गई शिकायतें बहुत हद तक सच हैं।

नवम्बर १२ : अपना "वक्तव्य" भारतीय समाचारपत्रोंमें प्रकाशनार्थ भेजा।
रेवरेंड मायर द्वारा आयोजित विदाई-सभामें भाषण दिया। सभामें अन्य लोगोंके अलावा डॉ० रदरफोर्ड, सर रेमंड वेस्ट, सर फ्रेड्रिक लेली, सर मंचरजी भावनगरी, मोतीलाल नेहरू और रिच भी उपस्थित थे।

नवम्बर १३ : 'एस० एस० किल्डोनान कैसिल' नामक जहाजसे गांधीजी और हाजी हबीब इंग्लैंडसे दक्षिण आफ्रिकाके लिए रवाना।
'इंडियन ओपिनियन' में समाचार छपा कि ट्रान्सवालसे निर्वासित करके भारत भेजे जानेवाले प्रवासी भारतीयोंकी सहायताके लिए भारतमें चन्दा करनेके लिए एक प्रभावशाली समिति बनाई गई है जिसके सदस्योंमें सर फीरोजशाह मेहता, गोपाल कृष्ण गोखले, मुहम्मद अली जिन्ना, और जे० बी० पेटिट भी हैं।

पारिभाषिक शब्दावली

अखिल इस्लामी संघ — पेन इस्लामिक सोसाइटी
अधिवासी प्रमाणपत्र — रेजिडेंशियल सर्टिफिकेट्स
अधिवासी एशियाई — रेजिडेंट एशियाटिक्स
अधीक्षक — सुपरिंटेंडेंट
अध्यादेश — ऑर्डिनेंस
अनाक्रामक प्रतिरोध — पैसिव रेज़िस्टेंस
अनुमतिपत्र — परमिट
अन्तिम चेतावनी — अल्टिमेटम
अपंजीकृत — अनरजिस्टर्ड
अस्थायी अनुमतिपत्र — टेम्परेरी परमिट
आंग्ल भारती — ऐंग्लो-इंडियन
आफ्रिकी राजनीतिक संघ — आफ्रिकन पोलिटिकल ऑर्गेनाइज़ेशन
आहार तालिका — डाइटरी
उच्चतर भारतीय विद्यालय — हायर ग्रेड इंडियन स्कूल
उपनिवेश मन्त्री — सेक्रेटरी ऑफ् स्टेट फॉर कॉलोनीज़
उपनिवेश सचिव — कलोनियल सेक्रेटरी
एशियाई अधिनियम — एशियाटिक ऐक्ट
एशियाई कानून संशोधन अधिनियम — एशियाटिक लॉ अमेंडमेंट ऐक्ट
एशियाई पंजीयन अधिनियम — एशियाटिक रजिस्ट्रेशन ऐक्ट
एशियाई पंजीयन संशोधन अधिनियम — एशियाटिक रजिस्ट्रेशन एमेंडमेंट ऐक्ट
एशियाई पंजीयन संशोधन विधेयक — एशियाटिक रजिस्ट्रेशन अमेंडमेंट बिल
एशियाई पंजीयक — रजिस्ट्रार ऑफ़ एशियाटिक्स
कानूनकी किताब, विधि पुस्तक — स्टेच्यूट बुक
कानूनी सलाहकार — लीगल ऐडवाइज़र
कार्यकारिणी परिषद् — एक्ज़िक्यूटिव कौंसिल
काल कोठरी — सॉलिटरी सेल
कुर्क अमीन — मैसेंजर
खण्ड — सेक्शन
खरीता — डिस्पैच
गिरमिट-प्रथा — सिस्टम ऑफ़ इन्डेंचर
गिरमिटिये — इन्डेंचर्ड लेबरर्स
गिरमिटिया प्रवासी कानून — इन्डेंचर्ड इमिग्रेशन लॉ
गिरमिटिया प्रवासी कानून संशोधन अधिनियम — इन्डेंचर्ड इमिग्रेशन लॉ अमेंडमेंट ऐक्ट
गुजरात भारतीय संघ — गुजरात इंडियन एसोसिएशन
जेलकी भोजन-तालिका — प्रिज़न डाइटरी
जेल-निदेशक — डाइरेक्टर ऑफ़ प्रिज़न्स
डचेतर गोरे — यूट लैंडर्स
डोलीवाहक दल — स्ट्रेचर बियरर कोर
दक्षिण आफ्रिका ब्रिटिश भारतीय समिति — साउथ आफ्रिका ब्रिटिश इंडियन कमिटी
दक्षिण आफ्रिकी अधिनियमका मसविदा — साउथ आफ्रिकन ड्राफ्ट ऐक्ट
दस्तावेज — डाक्युमेंट
नगरपालिका निगम अधिनियम — म्युनिसिपल कॉर-पोरेशन ऐक्ट
नया वैधीकरण कानून — न्यू वैलिडेशन ऐक्ट
निरसन विधेयक — रिपीलिंग बिल
निर्देशिकाएँ — डायरेक्टरीज़
नीली पुस्तिका — ब्लू बुक
नैतिकता समिति — एथिकल सोसाइटी
नैतिकता समिति संघ — यूनियन ऑफ एथिकल सोसाइटीज़
न्यासी — ट्रस्टी
न्यासी मण्डल (-निकाय) — ट्रस्ट बोर्ड
पंजीयन — रजिस्ट्रेशन
पंजीयन अधिनियम — रजिस्ट्रेशन ऐक्ट
पंजीयन कार्यालय — रजिस्ट्रेशन ऑफिस
पंजीयन प्रमाणपत्र — रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट
पंसारी परवाना — ग्रोसर्स लाइसेंस
परवाना — लाइसेंस
परवाना अधिकारी — लाइसेंसिंग ऑफिसर
परवाना कार्यालय, परवाना दफ्तर — लाइसेंसिंग ऑफिस
पृथक्करणकी नीति — पॉलिसी ऑफ़ एक्सक्लूज़न
पेढ़ी — फर्म
प्रगतिवादी दल, प्रगतिशील दल — प्रोग्रेसिव पार्टी
प्रगतिवादी नेता — प्रोग्रेसिव लीडर्स
प्रजातीय प्रतिबन्ध — रेशियल बार

प्रमाणपत्र – सर्टिफिकेट
प्रवासी अधिकारी – इमिग्रेशन ऑफिसर
प्रवासी आयोग – इमिग्रेशन कमिशन
प्रवासी कानून – इमिग्रेशन लॉ
प्रवासी न्यास – इमिग्रेशन ट्रस्ट
प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम – इमिग्रेशन रिस्ट्रिक्शन ऐक्ट
प्रशासनिक भेदभाव – एडमिनिस्ट्रेटिव डिफरेंस
ब्रिटिश भारतीय समझौता समिति – ब्रिटिश इंडियन कॉन्सिलिएशन कमिटी
ब्रिटिश भारतीय समिति – ब्रिटिश इंडियन कमिटी
ब्रिटिश भारतीय संघकी समिति – ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन कमिटी
ब्रिटिश लोकसभा, कामन्स सभा – हॉउस ऑफ कॉमन्स
ब्रिटिश संविधान – ब्रिटिश कांस्टिट्यूशन
भारतीय प्रवासी प्रतिबन्धक अधिकारी – इंडियन इमिग्रेशन रिस्ट्रिक्शन ऑफिसर
भारतीय समाज संघ – इंडियन सोशल यूनियन
भारतीय स्वयंसेवक आहत सहायक दल – इंडियन वॉलंटियर एम्बुलेंस कोर
भेदजनक कानून – डिस्क्रिमिनेटरी लेजिस्लेशन
मकईका दलिया – पूपू
मजदूर दल – लेबर पार्टी
मताधिकार – फ्रैंचाइज़
मसविदा रूप अध्यादेश – ड्राफ्ट आर्डिनेंस
मसविदा रूप एशियाई अधिनियम संशोधन अध्यादेश – ड्राफ्ट एशियाटिक लॉ अमेंडमेंट ऑर्डिनेंस
महाद्वीपी पारपत्र – कांटिनेंटल पासपोर्ट
महामहिम – हिज़ मैजेस्टी
महाविभव – हिज़ हाइनेस
महिला संघ – लीग ऑफ़ विमन
मुक्ति सेना – साल्वेशन आर्मी
मुद्दा – प्वाइंट
मूल निवासी संरक्षण संघ – एबारिजिन्स प्रोटेक्शन सोसाइटी
रसायन उद्योग समिति – सोसाइटी ऑफ़ कैमिकल इंडस्ट्री
राष्ट्रीय भारतीय संघ – नेशनल इंडियन एसोसिएशन
लौकिक शिक्षा – सेकुलर एजुकेशन
वतनी – नेटिव
वास्तुकार – आर्किटेक्ट
विक्रेता परवाना अधिनियम – डीलर्स लाइसेंसेज़ ऐक्ट
विधान परिषद् – लेजिस्लेटिव कौंसिल
विधेयक – बिल
विधेयकका मसविदा – ड्राफ्ट बिल
विनियम – रेगुलेशन
विश्वकोष – इनसाइक्लोपीडिया
व्यक्ति-कर – पोल टैक्स
व्यापार संघ – चैम्बर ऑफ़ कामर्स
व्यापारिक परवाना – ट्रेड लाइसेंस
व्यापारी न्यास – मर्चेन्ट्स ट्रस्ट
शराब परवाना कानून – लिकर लाइसेंसिंग लेजिस्लेशन
शराब सम्बन्धी धारा – लिकर क्लॉज़
शाकाहारी भोजनालय – वेजिटेरियन रेस्ट्राँ
शान्ति और पंच फैसला समिति – पीस ऐंड ऑर्बिट्रेशन सोसाइटी
शान्ति रक्षा अध्यादेश अनुमतिपत्र – पीस प्रिज़र्वेशन ऑर्डिनेंस परमिट
शैक्षणिक कसौटी – एजूकेशन टेस्ट
शैक्षणिक योग्यता – एजूकेशनल क्वालिफिकेशन
संघ अधिनियमका मसविदा – ड्राफ्ट ऐक्ट ऑफ़ यूनियन
संरक्षक – प्रोटेक्टर
संविधान – कांस्टिट्यूशन
संसद – पार्लियामेंट
सर्वोच्च न्यायालय – सुप्रीम कोर्ट
सहायक आवासी मजिस्ट्रेट – असिस्टेंट रेज़िडेंट मजिस्ट्रेट
सामान्य विक्रेता परवाना – जनरल डीलर्स लाइसेंस
साम्राज्य-सरकार – इम्पीरियल गवर्नमेंट
साहित्य और वाद-विवाद समिति – लिटरेरी ऐंड डिबेटिंग सोसाइटी
स्थानीय सरकार – लोकल गवर्नमेंट
स्थायी अधिवास प्रमाणपत्र – परमानेंट रेजिडेंशियल सर्टिफिकेट्स
स्वशासन – सेल्फ गवर्नमेंट
स्वेच्छया पंजीयन – वॉलंटरी रजिस्ट्रेशन
हमीदिया इस्लामिया अंजुमन – हमीदिया इस्लामिक सोसाइटी
हरी पुस्तिका – ग्रीन पैम्फलेट
हलफिया बयान, हलफनामा – एफिडेविट

शीर्षक-सांकेतिका

सांकेतिका

अ

ई

उ

ए

ओ

क

ख

ग

घ

च

छ

ज

ट

ठ

ड

ढ

त

थ

द

ध

न

प

भ

म

य

र

ल

श

स

ह